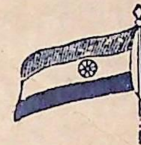
❀ ॐ तत्सत् ❀

(जय भारत)





आत्मकथा

अर्थात्

आपबीती जगबीती

"उर्ध्वबाहुर्विरौम्येष, न च कश्चिच्छृणोति मे ।
धर्मादर्थश्च कामश्च, स किमर्थं न सेव्यते ॥"
(सौति–महाभारत)

"कुरु कर्म त्यजेति च"— (युधिष्ठिर)

नरदेवशास्त्री (वेदतीर्थ)

❀ जय भारत ❀

कालेन सर्वं लभते मनुष्यः ।

(भीष्मपितामह)

(१)

समय पर ही सब कुछ मिलता है—

समय पर ही सब कार्य सिद्ध होते हैं—

समय पर ही बीज बोया जाता है—

समय पर ही अंकुर फूटता है—

समय पर ही अंकुर महावृक्ष बन जाता है—

समय पर ही वृक्ष के फल लगते हैं—

समय ही किसी को सबल, अबल अथवा निर्बल कर देता है—

समय एव करोति, बलाबलम् (माघ)

(२)

मनुष्य जन्मते हैं और मरते भी हैं—

समुद्र की लहरें उठती हैं और शान्त भी हो जाती हैं—

वालुका (रेती) में पदचिह्न उठते हैं और शीघ्र ही मिट भी जाते हैं—

(३)

मनुष्य भी क्या है ? एक मिट्टी का पुतला—

मरने के पश्चात् भी क्या है ? एक राख का ढेर—

भस्मान्तं शरीरम् (ईशोपनिषद्)

हमने अपना हिसाब पूरा कर लिया

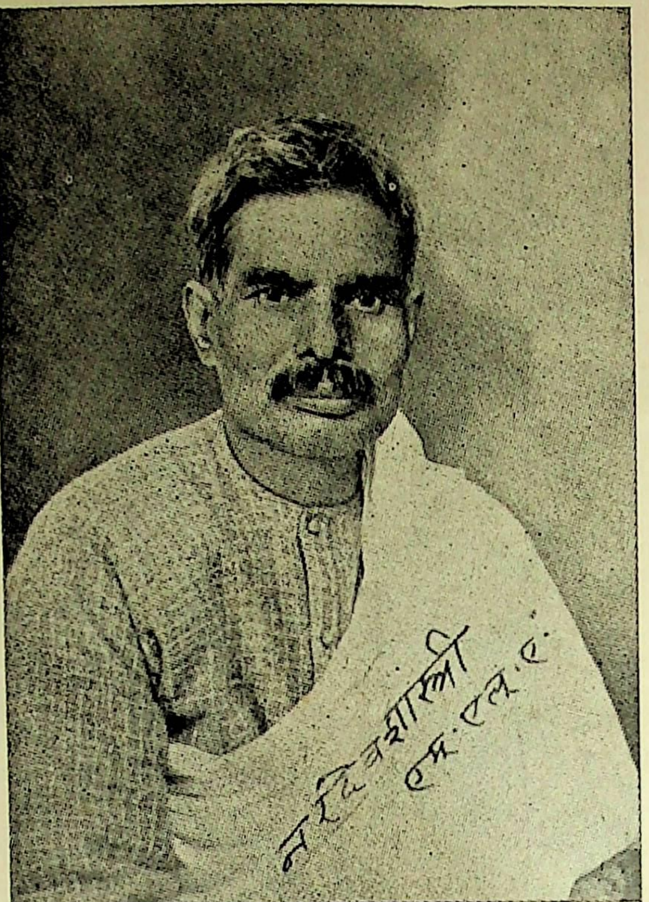
हमारा ७८वाँ वर्ष समाप्त होने वाला है, ७९वें वर्ष में जाने को हैं—
८०वें वर्ष में न जाने क्या होता है—हम तैयार बैठे हैं—

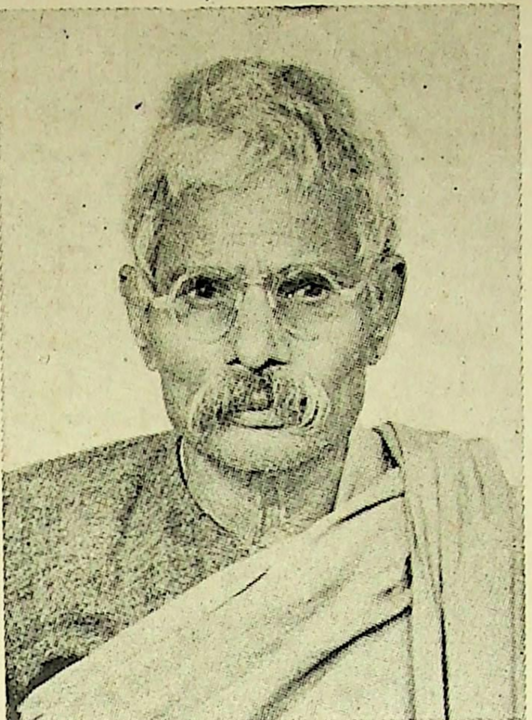
प्रेमोपहार

श्री डॉ. धर्मानन्दजी

भरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ

ज्ये० शु० १ - २०१५





नरदेवशास्त्री (१९५२)

❀ ॐ ❀

आत्मकथा

अर्थात्

* आपबीती जगबीती *

[संकट-संघर्ष-साहस की रामकहानी]

लेखक—
श्री आचार्य नरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ
कुलपति, महाविद्यालय-ज्वालापुर (हरिद्वार)
भूतपूर्व सदस्य विधानसभा, उत्तरप्रदेश इत्यादि, इत्यादि

प्रकाशक—
स्नातकबन्धु,—
[श्री नन्दकिशोर शास्त्री, वेदान्ताचार्य एम्० ए०, मुख्याधिष्ठाता]
[श्री लक्ष्मीनारायण शास्त्री, चतुर्वेदी, साहित्याचार्य एम्० ए०, आचार्य]
महाविद्यालय-ज्वालापुर ।

प्रकाशन—
कार्तिक शुक्ला ११ नवम्बर शालिवाहन शक
२०१४ (देवोत्थान) १९५७ १८७९

मुद्रक—
महर्षि सच्चिदानन्द व्यवस्थापक
शहन्शाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर (देहरादून)

प्राप्ति-स्थान—
महाविद्यालय-ज्वालापुर (हरिद्वार)

प्रथमावृत्ति
१०००

यत्करोमि, यदश्नामि, यज्जुहोमि, ददामि यत् ।
यत्तपस्यामि हे देव, तत्करोमि त्वदर्पणम् ॥

मूल्य
लागतमात्र ५)

नैराश्यं परमं सुखम् ।

निराशा की भी एक आशा होती है

निराशा में भी आशा रहती है !

—"अब हमारे तरण-तारण का एक ही उपाय शेष है। वह यह कि निराशा की आशा।
इसी निराशा की आशा के बल पर बहुतों ने भवसागर को पार किया है
और ईश्वर के साक्षात् दर्शन किये हैं—

—"प्राप्त संकटों के पार जाने के लिए यह निराशा की आशा ही
परमसहायक होगी। इसी से शक्ति आयेगी।
इस शक्ति का अभ्यास करते रहोगे तो,—

नैराश्यं परमं सुखम् ।

इस व्याजोक्ति का बीज हमारे हाथ लग सकता है—

—"तब हम शीघ्र ही दुःसह वर्तमान स्थिति को
पार कर जायँगे।

(लोकमान्य) बाल गङ्गाधर तिलक

(विश्ववृत्त, मरहटी मासिक)

अप्रैल १६०६.

॥ ॐ तत्सत् ॥

मङ्गलाचरणम्

सत्य संकल्पाचा दाता,

भगवान (मरहटी अभंग)

मनमें सत्य संकल्प के देनेवाला भगवान् ही है, और—

वही

इस संकल्प का पूरा करानेवाला भी है,—

36
नार-आ

इसलिए, प्रारम्भ में

उसीका

स्मरण करते हैं, क्योंकि

'इस पार उसी के हाथों में,
उस पार उसी के हाथों में।'

पश्चात्

गुरुजनस्मरणम्

जिनके चरणों में बैठकर इस योग्य हुए,
जिनकी कृपासे जीवन सफल हुआ,
उन गुरुओं को बार-बार नमस्कार।

नमो गुरुभ्यो नमो गुरुभ्यः।

—नरदेवशास्त्री

भगवान् कहाँ रहते हैं ?

जे का रंजले गांजले ,
त्यासी म्हणें जो आपुले ।
तोचि साधु ओलखावा ,
देव तेथेंचि जाणावा ॥

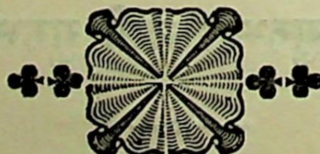
(मरहटी अभंग)

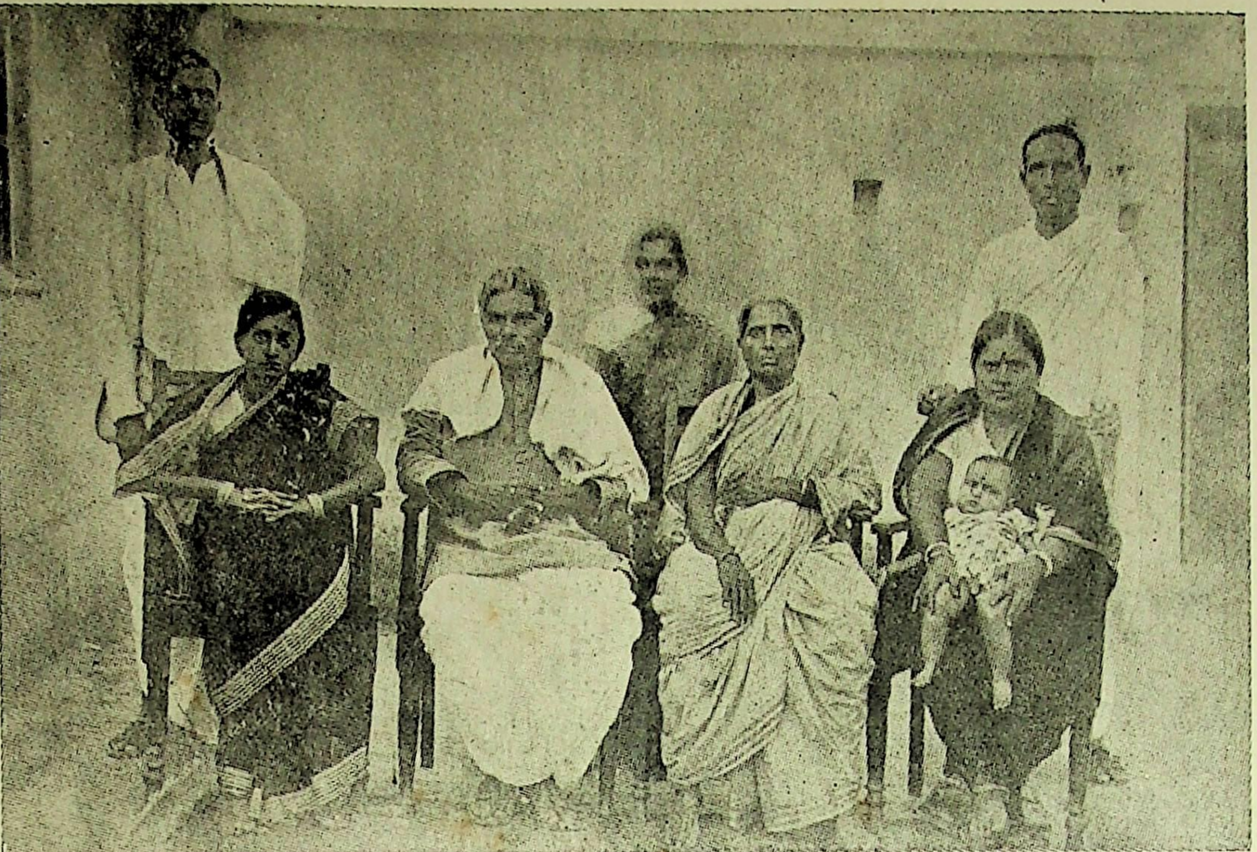
जो दुःखी हो, संत्रस्त हो, जिसको सबने छोड़ दिया हो, उसको जो अपनाता है वही सच्चा साधु है, देव वहीं उसके घर पर रहते हैं ।

सन्त कौन है ?

तुका म्हणें तोचि संत ,
सोशि जगाचे आघात ।

हे लोगो, तुकाराम कहता है कि वही पुरुष संत है जो संसार के आघातों को सहता हुआ भी संसार के कल्याण में ही मग्न और संलग्न रहता है ।





बाईं ओर से खड़े—(१) नारायणराव (छोटा भाञ्जा), (२) (बीचमें) गिरिजाबाई (रामेश्वरराव की पुत्री), (३) रामेश्वरराव (बड़ा भाञ्जा)

बाईं ओर से बैठे—(१) रुक्मिणीबाई (नारायणराव की स्त्री), (२) नरदेवशास्त्री, (३) रमाबाई (शास्त्री जी की बहन), (४) इन्दिराबाई (रामेश्वरराव की स्त्री)

❀ ॐ तत्सत् ❀

(जय भारत)

शङ्कर छोड़ेंगे नहीं,
जो परहित की टेव,
बन जायंगे वे सुधी,
देशभक्त नरदेव।

(स्व० कविवर नाथूराम शङ्कर शर्मा 'शङ्कर')



प्रकाशकों का नम्र-निवेदन

इस आत्मकथा में क्या है, क्यों लिखी गयी है, किसने लिखी है, किस उद्देश्य से लिखी गयी है इत्यादि बातें इतनी सुस्पष्ट हैं कि उनके विषय में कुछ भी लिखने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। हाँ हम यह अनुभव कर रहे थे कि हमारे माननीय कुलपति इस प्रकार की कथा अवश्य लिख रखें तो अच्छा है।

वे इस कार्य को चुपचाप ही करते रहे और किसी को इस बात का पता भी नहीं चला। लिखी-लिखायी यह कथा वर्षों पड़ी रही। उनको समय-समय पर इस में परिवर्तन, परिवर्द्धन एवं परिबृंहण करने पड़े। संभ्रान्त लेखक के मन में इसके प्रकाशन के विषय में अनेक-विध संकल्प भी उठते ही रहे। अन्त में अन्तःप्रेरणा ने उनको विवश कर दिया कि इस कथा को प्रकाशित किया जावे। और अब यह इसके प्रकाशन का भार हमारे ऊपर डाल कर संमाननीय लेखक मुक्त हुए हैं, यह हम अपना सौभाग्य ही समझते हैं। मूल ग्रन्थ में फुल स्केप साइज के हस्तलिखित १४०० पृष्ठ थे। उनका संक्षेप-विक्षेप करते-करते यह कथा इस रूप में प्रस्तुत है। यह भी अच्छा हुआ कि यह कथा स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् अब १९५७ में छप रही है, और छप कर तैयार होने के दिन तक की मुख्य-मुख्य घटनाओं का इसमें उल्लेख आ गया है।

संमाननीय लेखक ने १९५५ में एक छोटीसी 'आपबीती-जगबीती' प्रकाशित की थी। उसको पढ़ कर सैंकड़ों वाचकों ने प्रेरणा की कि बड़ी 'आपबीती-जगबीती' भी प्रकाशित की जावे। उस प्रेरणा का भी यह फल है कि यह कथा इस रूप में वाचकों के संमुख उपस्थित है, नहीं तो न जाने यह कथा कभी छपती भी अथवा न छपती अथवा कहीं बन्द की बन्द पड़ी रहती, कौन जाने। इस प्रकार के चरित्रात्मक ग्रन्थ देखने को कम मिलते हैं जो इतने सरस और सहृदय लेखनी से लिखे गये हों—जो इतने मनोरञ्जक, उद्बोधक एवं प्रबोधक हों। जो इतने शिक्षाप्रद हों। और नपी-तुली संयत, सरल, सुबोध भाषा में लिखे गये हों।

इस आत्मकथा में क्या है इस प्रश्न का उत्तर यहीं है कि यह पूछिये कि इस में क्या नहीं है। इस में देवदर्शन के साथ-साथ देशदर्शन भी होते जाते हैं—एक प्रकार से,

इति+ह+आस (यह ऐसा था)

अर्थात् इतिहास है। एक प्रकार से,

इति ह ऊचुर्वृद्धाः (बड़े बूढ़े ऐसा कह गये हैं) का साक्षात् दिग्-दर्शन हैं।

इस में देशधर्म है, धर्म है, वेद हैं, शास्त्र हैं, पुराण-इतिहास हैं, उपनिषद् हैं। इस में लेखक के अपने जीवन के अनुभवों का सुन्दर विचित्र चित्रण है और उन अनुभवों की शास्त्र-संगति बैठाने के लिए यत्र तत्र प्रमाणों की रेल-पेल है। इस में पौरस्त्य और पाश्चात्य संस्कृति का सुन्दर दिग्-दर्शन है। वर्तमान युग की दृष्टि से इस में आर्यसमाज, गुरुकुल, कांग्रेस तथा अन्य धार्मिक, शैक्षिक, सामाजिक राजनैतिक आन्दोलनों का भी ऊहापोह है।

प्रत्येक विषय का ऐसा सुन्दर, साङ्गोपाङ्ग, सोपपत्तिक, मनोरञ्जक विवेचन है कि वाचकवृन्द इस को पढ़ते-पढ़ते प्रमुदित हो उठेंगे, और ग्रन्थ में कहीं न कहीं और ऐसी कोई न कोई बात पायेंगे जिस से उनकी आत्मा ऊपर उठ सके। आशा है वाचकवृन्द इस कृति का हार्दिक स्वागत ही करेंगे। आशा है इस कथा से उनको स्फूर्ति ही मिलेगी। आशा है वे कोई न कोई दिव्यसन्देश देखेंगे। इस में व्यष्टि के व्याज से समष्टि के कर्तव्य का प्रबोधन किया गया है—

तदेतन्नरराष्ट्रमिव (निरुक्त)

नरों से ही राष्ट्र हैं, नरों से ही राष्ट्र बनते हैं—बिगड़ते हैं। नरों में ही बीजरूपेण राष्ट्र हैं,—इस तत्व को जो समझते हैं वे ही बुद्धिमान् नर हैं। करनी ठीक-ठीक हो तो नर ही दरिद्रनारायण, लक्ष्मीनारायण और साक्षात् किसी अंश में नारायण का छोटा प्रतिनिधि हो सकता है।

इस कथा की मूल प्रति १ जून १९५७ को प्रेस में दी गयी थी। इतने में श्रीमती फ्ल्यू आ विराजीं। मार्ग में विघ्नरूपा बन कर, अड़ कर खड़ी हो गईं। एक मास तक दिल्ली से नया टाईप ही न आसका। टाईप आया तो कागज की दिक्क़त पड़ गई, इस तरह विघ्न पर विघ्न आते गये, बाधा डालते गये और निकल जाते रहे हैं। ठीक ही कहा है—

श्रेयांसि बहुविघ्नानि।

शुभकार्यों में विघ्न आते ही रहते हैं, आने भी चाहिएँ। ये विघ्न कर्ता पुरुष की परीक्षा के लिए ही होते हैं। उस में कितनी श्रद्धा है, कितनी आस्था है, वह अपने कार्य के लिए कितने कष्ट उठा सकता है, कितनी हानि उठा सकता है इत्यादि बातों की परीक्षा हो जाती है।

हम को हर्ष है कि सभी प्रकार की विघ्न बाधाओं में से यह कथा पार हो कर इस रूप में आप के संमुख आरही है, जिस रूप में भी है, जैसी भी है, उसका समादर होगा, ऐसी पूर्ण आशा है।

यह आपबीती, व्यापार-बुद्धि से न तो लिखी गई है और न ही व्यापार-बुद्धि से प्रकाशित हो रही है। केवल, 'स्वान्तः सुखाय' अपने अन्तःकरण के सुख के लिए लिखी गयी थी और बहुजन-हिताय, बहुजन-लाभाय प्रकाशित की जा रही है। संमान्य लेखक का अपना चिर-संकल्प पूरा हो रहा है इससे अधिक लाभ क्या हो सकता है।

बहुत स्मरण करने पर भी जिन के नाम लेखक को याद नहीं आरहे हैं अथवा प्रसंगवश छपने से रह गये हैं, लेखक की ओर से उन सब से क्षमा-याचना। साथ ही ग्रन्थ में जिनके उल्लेख हैं पर अब कालवश हो कर दिवंगत हो चुके हैं, भगवान् उनकी आत्माओं को सद्गति देवे, यही प्रार्थना।

सज्जन पाठक, अनेक बार के उलट-फेर में कहीं विसंगतता प्रतीत होती हो तो उसे सुसंगत कर लेंगे। कहीं औचिती-भंग अथवा क्रम-भङ्ग हो गया हो तो उसको भी ठीक कर लेंगे। सीसकाक्षर-नियोजक दोष अथवा संशोधक-दोष आदि के कारण कोई त्रुटि रह गई हो तो समाधान कर लेंगे। घटनाओं की तिथि-तारीख संवत्-सन् आदि में कहीं-कहीं संगति ठीक न बैठती हो तो उसको भी ठीक लगा लेंगे, ऐसी आशा है।

मनुष्य के हाथों में क्या है ?

यह सब कुछ होगया पर मनुष्य के हाथों में ही क्या है। वह भले ही अपने आपको कर्त्ता-धर्त्ता समझ बैठे पर उसका यह अहङ्कार व्यर्थ है। वही भगवान् मनुष्यों के कर्मानुसार चक्र घुमाता रहता है और उसी में मनुष्य का अच्छा बुरा जो कुछ निकालना है, निकल आता है।

गच्छतः स्खलनं क्वापि,
भवत्येव प्रमादतः ।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र ,
समादधति सज्जनाः ॥

चलते-चलते कहीं न कहीं पैर फिसलता ही है, तब गिरते हुये पुरुष की खिल्ली उड़ाने में कौन बड़ाई है। बड़ाई इस बात में है कि उस गिरे हुए को संभालें। सज्जनों का काम संभालना ही है। केवल दोषैकदृक् नहीं होना चाहिए, गुणों पर भी दृष्टि रहनी चाहिए क्योंकि बुद्धिमान पुरुष गुणगृह्य अर्थात् गुणैकपक्षपाती होते हैं :—

हम हैं, आपके विनम्र स्नातकबन्धु—

नन्दकिशोर शास्त्री वेदान्ताचार्य एम० ए०

लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी शास्त्री एम० ए०

महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार)

※ धन्यवाद ※

(लेखक की ओर से)

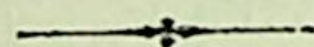
१—श्री स्वा० गोविन्दानन्दजी अध्यक्ष शहन्शाही सर्वहितकारी संघ—आश्रम में उत्तम स्थान प्रदान के लिए।

२—श्री सन्त छोटेलाल मन्त्री—मुद्रण-प्रबन्ध के लिये।

३—श्री शिवबालक फोरमैन प्रेस—मुद्रण सम्बन्धी तत्परता के लिए।

४—श्री धर्मानन्दशास्त्री संशोधन कार्य के लिये।

५—श्री पं० शीशराम शर्मा (कैरवाँ कर्णपुर, राजपुर) अन्य ऊपरी प्रबन्ध के लिये।



और

धन्यवाद निम्न महानुभावों को

(जिन्होंने इसकी सहायता की और हाथ बटाया)

१—श्री दानवीर पन्नालाल भल्ला–हरिद्वार।
२—श्री राजकुमार रणंजयसिंह, रामनगर–अमेठी–सुलतानपुर।
३—श्री डॉ० चमनलाल धींगड़ा, राँची–हाऊस हरिद्वार।
४—श्री भीमसिंह एम० ए०, ए०–जी (भूतपूर्व एम० एल० ए० विदर्भ) पातूर–अकोला।
५—श्रीमती इन्दिरादेवी (मैंचेस्टर–इंगलैएड निवासिनी) ११६ माननगर, नई दिल्ली।
६—श्री चौधरी रघुराज सिंह (महाविद्यालय के भूतपूर्व प्रधान) पृथ्वीपुर–दारानगरगंज (बिजनौर)
७—श्री डॉ० सूर्यकान्त शास्त्री एम० ए० डी० लिट् हिन्दूविश्वविद्यालय, वाराणसी।
८—श्री ला० बिन्दालाल धनौरा मएडी–मुरादाबाद।
९—श्री पं० नन्दकिशोर शास्त्री वेदान्ताचार्य एम० ए० महाविद्यालय-ज्वालापुर।
१०—श्री ओमप्रकाश मित्तल वकील चकरौता रोड, देहरादून।
११—श्री ओमप्रकाश वेदप्रकाश, चूहड़पुर-जि० देहरादून।
१२—श्री पं० रेवतीप्रसाद शर्मा बेलोन जि० बुलन्दशहर।
१३—श्री डॉ० श्यामसुन्दरगुप्त ,, ,,
१४—श्री ला० शंकरलाल आर्य, शाहजहाँपुर।
१५—श्री आयुर्वेदाचार्य धर्मदेव आत्रेय रत्नगढ़ (बिजनौर)
१६—श्री डॉ० हरिश्चन्द्र नहटौर (बिजनौर)
१७—श्री ला० ज्योतिःप्रसाद पहासू (जि० बुलन्दशहर)
१८—श्री बा० केशवचन्द्र डिप्टी कलेक्टर (सेटलमेएट ऑफीसर) बदायूँ।
१९—श्री स्वा० सत्यदेवजी परिव्राजक, सत्यज्ञाननिकेतन ज्वालापुर। (प्रबल प्रेरणा के लिए)
२०—श्री स्व० रामनारायणमिश्र-काशी (आदि प्रेरक)
२१—श्री पं० हरिशङ्कर शर्मा कविरत्न, लोहामएडी आगरा (सत्परामर्श के लिए)
२२—श्री लक्ष्मणदेव सर्राफ, बाजार धामावाला देहरादून (हमारे प्रबल जागरूक चेतक–व्हिप)
२३—श्री महेन्द्रशास्त्री, मुरारि फाइन आर्ट कम्पनी दर्यागंज देहली (सदैव के भक्त सहायक)
२४—श्री बा० जयन्तीप्रसाद वकील लक्ष्मण चौक देहरादून (सभी बातों में परामर्श के लिए)

विषय—सूची

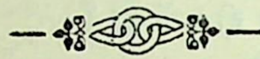
-: प्रथम भाग :-

[सिंहावलोकन]

द्वितीय-भाग

कारावास

[कृष्ण मन्दिर के वृत्तान्त]



तृतीय-भाग

प्रकीर्णक—१

[भिन्न भिन्न विषय]

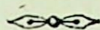
चतुर्थ भाग

प्रकीर्णक—२

[भिन्न भिन्न विषय]

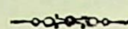
पञ्चम भाग

संस्मरण





कुछ पिछला
विशिष्ट पत्रव्यवहार



सन् १९५२, १९५३, १९५४, १९५५, १९५६, १९५७, घटनाओं का संक्षिप्त उल्लेख ।

[इन्हीं पांच वर्षों में हम विधान सभा में रहे]



ॐ सत्सत्

॥ वन्दे मातरम् ॥

जय हिन्द

मेरी आत्मकथा

लेखन प्रारम्भ—संवत् १९९८ अक्षय-तृतीया

लेखन समाप्त—संवत २०१४ अक्षय-तृतीया

[कई बार लिखी, कई बार बदली]

स्वप्नेऽपि यदसंभाव्यम् ।
यत्र भग्ना मनोरथाः ॥
हेलया तद्विदधतो ।
नासाध्यं विद्यते विधेः ॥

(राजतरङ्गिणी, सप्तम तरङ्ग)

जो बात स्वप्न में भी असंभव थी, और जिसके करने में अनेक मनोरथ भग्न हो गये, उसको विधि सहज ही में कर डालता है। विधाता के लिए असाध्य ही क्या है ?

नरदेवशास्त्री

आत्म—कथा

भाग प्रथम

-: गीत :-

मेरे जीवन के क्षण बोलो।
स्मृतियों की बात पुरानी,
जीवन की करुण कहानी,
कहते जाओ, चलते चलते—
मेरे पथ के कण-कण बोलो,

'हेमन्त'
'आलोक'—नागपुर

लिये चलो ❀

लिए चलो, ज्योतिर्मय, मुझको,
सघन तिमिर से लिये चलो !
रात अन्धेरी, गेह दूर है,
मुझे सहारा दिये चलो !!

थामो ये मेरे डगमग पग,
दूर दृश्य चाहे न लखे दृग–
मुझे अलं है, देव एक डग।
कभी न मैंने निःसहाय हो, मांगा 'मुझको लिये चलो'
निज पथ आप खोजता–लखता ! पर तुम अब तो लिये चलो !
लिये चलो० ॥ १ ॥

प्यारा था मुझको जगमग दिन,
हेय मुझे थे, ये भय अन–गिन,
अहंकार से गया सभी छिन,
मेरे पिछले जीवन को प्रिय, मनमें रखकर अब न छलो !
लिये चलो० ॥ २ ॥

जबतक है तेरा बल सिर पर,
हूँगा मैं गतिशील निरन्तर,
बीहड़–दलदल शैल प्रलय पर,
तबतक जबतक रात अन्धेरी, रम्य उषा में आ बदलो !
चिर प्रिय खोये देवदूत वे, मुसकाते फिर मुझे मिलो !!
लिये चलो० ॥ ३ ॥

❀ यह गीत "Lead Kindly light lead thou me on" का किसी कवि का हिन्दी पद्यानुवाद है—अत्यन्त भावपूर्ण है—जीवन भर इसका अनुभव मिलता रहा है। —नरदेव शास्त्री,

मनुष्य के कर्म फल

कैसे कैसे मिलते हैं

यस्माच्च, येन च, यथा च, यदा च, यच्च ।
यावच्च, यत्र च, शुभाशुभमात्मकर्म ॥
तस्माच्च, तेन च, तथा च, तदा च, तच्च ।
तावच्च, तत्र च, विधातृवशादुपैति ॥

(पंचतन्त्र)

माननीय श्रीनिवासशास्त्री ने क्या ही सुन्दर भावपूर्ण अनुवाद किया है—

From whatever source, through whatever cause, in whatever manner, at whatever time, whatever thing, to whatever extent, in whatever place. whatever good or evil—from that same source, through that same cause, in that same manner, at that same time, that same thing, to that same extent, in that same place, one's deeds come in rebound by Fate's decree ❀

मनुष्य जिस हेतु से, जिस भाव से, जिस प्रकार से, जहाँ, जिन परिस्थितियों में, जितना, जो भी शुभाशुभ कार्य करता है, उसी हेतु से, उसी भाव से उसी प्रकार से वही, उन्हीं परिस्थितियों में, उतना ही शुभाशुभ फल पाता है,—प्रारब्ध की डिगरी के कारण।

लेखन—प्रारम्भ सोलह वर्ष पूर्व से

वह कथा सन् १६४२ से ही लिखी जाने लगी थी। पर सार्वजनिक जीवन के पचड़े के कारण अब तक पूर्ण न हो सकी थी। इन पन्द्रह वर्षों में कई बार आद्योपान्त परिवर्तन करना पड़ा। क्योंकि उस समय का 'वर्तमान' पीछे पीछे 'भूत' होता गया। और पचासों "हैं" को "थे" करना पड़ा। (सन् १६४४ मार्च) में मैं अपने देश गया, जितने भी इष्ट-मित्र बन्धु-बान्धवों से मिल सकता था, मिला। संभवतः यह दक्षिण की यात्रा अन्तिम ही थी। हैदराबाद से लौट कर फिर मैंने इस कथा की पड़ताल की तो फिर बदलना पड़ा। अब अन्तस्तोष है कि कथा ठीक हो गयी—संवत् २०१४ समाप्ति तक का वृत्त फिर जोड़ा गया है।

विक्टर ह्यूगो नामक प्रसिद्ध फ्रेंच विद्वान् ने लिखा है कि (१) जब तक अत्यन्त आवश्यक और अपरिहार्य न समझा जावे लिखा ही न जावे। लेखक किसी बात को लिखने की चिन्ता में ही न पड़े—। (२) पुस्तक किसी के समर्पण न करे (३) अपने विषय में जहाँ तक संभव हो विनम्रता से लिखे, आत्म-प्रशंसा न आने देवे—मेरी तो करुण-कहानी है, आत्म प्रशंसा को अवकाश कहाँ? मैंने यथाशक्ति तीनों बातों का ध्यान रक्खा है।

नरदेव शास्त्री

❀मदरास में किसी प्रसंग पर व्याख्यान देते हुए दिवंगत माननीय श्रीनिवासशास्त्री ने इस श्लोक का व्याख्यान किया था। Indian Review से हमने आगरा सेन्ट्रल जेल में उतार लिया था—

॥ ॐ तत्सत् ॥

जन्म से अब तक

(जैसा भी याद आरहा है)

१८८० अक्तूबर ता० २१ जन्म दिवस।

१८८१-१८८६ हैदराबाद, शेडम, यलारड्डी, रायचूर, उस्मानाबाद जहाँ जहाँ भी पिता जी रहे उनके साथ। मरहटी तीन कक्षा तक की शिक्षा धाराशीव में।

१८८६-१८६४ पूने में—शनिवार पेठ रंगनाथराव अंकलीकर के वाडे में रहते थे। शिक्षा दीक्षा नूतन मराठी विद्यालय में। यहाँ मरहटी की छह श्रेणी की शिक्षा समाप्त की और अंग्रेजी का पञ्चम श्रेणी का कोर्स। मराठी विभाग के प्रमुख थे श्री सिनकर। अंग्रेजी विभाग के प्रमुख कभी श्री कुलकर्णी, कभी श्री हरि नारायण आपटे बी० ए० रहे। मरहटी भाषा के अध्यापक श्री बापट थे।

१८६४ लाहोर के लिए प्रयाण, मार्ग में बम्बई ४ दिन, अजमेर ३ दिन, जयपुर दो दिन ठहरे। गये थे डी० ए० वी० स्कूल में भर्ती होने परन्तु होगये दयानन्द हाई स्कूल में। वहाँ दो वर्ष रहे।

१८६६ मिडिल पास।

१८६७ यूनियन एकेडेमी में प्रविष्ट। हेडमास्टर श्री रजनीकान्त मुकर्जी एम० ए०, गणिताध्यापक श्री सेन एम० ए०, श्री कृपाराम बी० ए०, इतिहासाध्यापक श्री घोष बी० ए०। यह स्कूल अब दयाल सिंह कालेज हो गया है।

१८६८ एण्ट्रन्स परीक्षा में उत्तीर्ण। आगे के वर्षों में प्राईवेट तौर पर एफ० ए० की तैयारी की परीक्षा न दे सके।

१८६६ जालंधर, श्री गंगादत्त शास्त्री जी के पास।

१६०० गुजरानवाला में।

१६०० २६ जून श्री गंगादत्त शास्त्री जी के साथ हरद्वार आये।

१६०१ वैदिक प्रेस अजमेर में हेड संशोधक।

१६०२ ग्वालियर में, श्री महामहोपाध्याय रघुपतिशास्त्री जी के पास।

१६०३ शास्त्रिपरिक्षा में उत्तीर्ण, डिप्लोमा प्राप्त।

१६०२-१६०३ मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल सिकन्दराबाद।

१६०३-१६०५ काशी में संस्कृत साहित्य का विशेष अध्ययन, श्री महामहोपाध्याय अम्बादास शास्त्री के पास।

१६०५-१६०७ कलकत्ते में गुरुवर श्री सत्यव्रत सामश्रमीजी फेलो एशियाटिक सोसाईटी बंगाल की सेवा में—

१६०६ वेदतीर्थ परीक्षा में उत्तीर्ण।

१६०७ कांगडी गुरुकुल में निरुक्ताध्यापक।

१६०८ गुरुकुल फरुखाबाद में आचार्य।

१६०८से१६१५ मुख्याधिष्ठाता महाविद्यालय ज्वालापुर।

१६०६-१६५७ महाविद्यालय में विविध समय में मुख्याध्यापक, मुख्याधिष्ठाता, मन्त्री, उपप्रधान, आचार्य कुलपति।

१६१५ गंगोत्री की यात्रा।

१६१६-१६१६ भोगपुर (देहरादून) में एकान्तवास, ग्रन्थ लेखन आदि—

१६१६-१६५७ देहरादून में समय समय पर कांग्रेस कार्य। इसी अवसर पर समस्त उत्तराखण्ड हमारा राजनैतिक कार्यक्षेत्र बना। बीच बीच में आकर महाविद्यालय को संभालना पड़ा— पाँच बार जेल यात्रा देहरादून से की। १६२१ से १६३० ऑलइण्डिया कांग्रेस कमेटी के मेम्बर रहे।

१६२१ क्रिमिनल लॉ--एमेण्डमेन्ट एक्ट के अनुसार पन्द्रह मास का कठोर कारावास, २०० रु० दण्ड।

१६३० निमक सत्याग्रह ६, मास सादी कैद।

१६३२ शराब की भट्टी पर सत्याग्रह, ६ मास का कठोर कारावास ५० रु० दण्ड, दण्ड न देने पर डेढ़ मास का और कारावास।

१६४० व्यक्तिगत सत्याग्रह लछमनझूला-हृषीकेश, एक वर्ष का कठोर कारावास।

१६४२ भारतरक्षा कानून का वार, धारा २६—डेढ़ वर्ष रहे।

१६२० स्वागताध्यक्ष राजनैतिक कानफ्रन्स देहरादून, श्री पं० जवाहरलाल नेहरू सभापति थे।

१६२३-१६२५ मुख्याधिष्ठाता महाविद्यालय ज्वालापुर—

१६२५ स्वागताध्यक्ष अखिल भारतवर्षीय हिन्दीसाहित्य सम्मेलन देहरादून। श्री माधवराव सप्रे सभापति थे।

१६२६ स्वागताध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त का बृहदधिवेशन। यह डी० ए० बी० कॉलेज में हुआ था। श्री घासीराम जी वकील एम० ए०, एल० एल० बी० प्रधान थे।

१६२६-१६२७ भयंकर वातरोग से पीडित। वैद्यराज पं० रामचन्द्र शर्मा के उपचार से आराम हुआ। एक वर्ष बीमार रहे—

१६२७-१६४३ बीच बीच में कारावास, बीच बीच में महा विद्यालय के आचार्य कुलपति आदि।

१६४४ दक्षिण यात्रा (मार्च १ से ५ अप्रैल तक)।

१६४४ फिर महाविद्यालय का आचार्य (१० अप्रैल के चुनाव में)।

१६४६ प्रधान जिला कांग्रेस कमेटी देहरादून।

१६४७ महाविद्यालय के भार से मुक्त, सेवानिवृत्त।

१६०४ ताऊ हणमन्तराव का स्वर्गवास ।
१६०६ ज्येष्ठ बन्धु नारायणराव का स्वर्गवास ।
१६०७ माता कृष्णा बाई का स्वर्गवास ।
१६१२ पिता श्रीनिवासराव का स्वर्गवास ।
१६४४ श्री ठा० गोविन्दसिंह मनसबदार (पिता जी के परम स्नेही) का स्वर्गवास ।
१६४४-१६५२ आगे के भाग में देखिए ।

जीवन भर में तीन वार गढ़वाल की यात्रा । द्वितीय वार ४० व्यक्तियों के साथ । तृतीय वार १६४६ में कांग्रेस चुनाव के समय सात पट्टियों में दौरा । द्वितीय यात्रा एक सहस्र मील की हुई थी ।

एक वार काश्मीर की यात्रा हुई ।
एक वार लंका की यात्रा हुई ।
एक वार आसाम की यात्रा हुई ।
एक वार गुजरात काठियावाड की यात्रा ।
एक वार सिन्ध की यात्रा । साथी के बीमार हो जाने के कारण ब्रह्मदेश की यात्रा न हो सकी ।
एक वार फ्राण्टियर (तक्षशिला) तक की यात्रा ।

१६५२ से १६५७ सदस्य विधान सभा, उत्तर प्रदेश ।

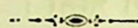


" सर्वं यस्यवशादगात्स्मृतिपथं कालाय तस्मै नमः "

(भर्तृहरि)

जिस काल के कारण किसी समय के साक्षात् दृश्य, अब केवल स्मरण कर-करके कभी विस्मय करने योग्य, कभी स्मरण कर-करके सुख दुःख के आँसू बहाने योग्य होगये हैं—

उसी सर्वभक्षक काल को बार बार नमस्कार है।



दाँत गये घर आपने,
रहा न काला बाल।
मौत निशानी आगई,
तू अपना आप संभाल॥

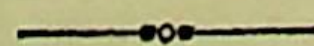
(एक महात्मा)

बाल्ये येन समस्तशास्त्रनिचये,
प्राप्ता परा शेमुषी।
तारुण्यं विविधैर्महद्भिरथवा,
लोकोपकारैर्गतम्॥
कीर्तिर्यस्य हराट्टहासधवला,
लोकान्तरव्यापिनी।
तस्य श्रीनरदेवशास्त्रिविदुषः,
स्थाविर्य्यमुज्जृम्भते॥

(किसी शिष्य की कृति)

इस अवसर पर हमको कवितार्किककेसरी वेङ्कटाचार्य की यह बात भी याद आती है—

निर्विष्टं यतिसार्वभौमवचसामावृत्तिभिर्यौवनं।
निर्धूतेतरपारतन्त्र्यनिरया नीताः सुखं वासराः॥
अङ्गीकृत्य सतां प्रसक्तिमसतां गर्वोऽपि निर्वापितः।
शेषायुष्यपि शेषिदम्पतिदयादीक्षामुदीक्षामहे॥



सार्वजनिक जीवन का तत्व

यथा काष्ठं च काष्ठं च,
समेयातां महोदधौ ।
समेत्य च व्यपेयातां,
तद्वद्भूतसमागमः ॥

(शान्ति पर्व)

यद्यपि यह श्लोक सांसारिक प्राणियों के जीवन गति पर लागू होता है तथापि सार्वजनिक जीवन पर भी लागू होता है। जैसे नदियों और सागर में भिन्न भिन्न दिशाओं से बहकर, आकर काष्ठ आपसमें मिल जाते हैं और फिर तरंगों के साथ बहकर पृथक् चले जाते हैं, यही गति संसार में आने जाने वाले प्राणियों की है। यही गति सार्वजनिक कार्य करनेवालों की है। कार्यप्रवाह में बहकर न जाने कितने आ मिलते हैं और कितनों का बिछोह हो जाता है। इसमें विस्मय करने की क्या बात है—

॥ ॐ तत्सत् ॥

मैं हूँ अब कल्याण मार्ग का पथिक

कहाँ १८६४ जब कि घर से चले थे और कहाँ आज मैं हूँ अब १६५७में, पिछली बातों से क्या लेना है, लाभ भी क्या है ? हम हरद्वार से ही चलते हैं। हरिद्वार से हमारा सम्बन्ध १६०० से है जब से कि गंगापार गुरुकुल काँगड़ी की स्थापना हुई थी। १६०६-१६०७ में हम काँगड़ी में निरुक्त तथा साहित्य के अध्यापक भी रहे। फिर एक वर्ष हम गुरुकुल फर्रुखाबाद के आचार्य रहे और १६०८ में हमने गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर को संभाला था। तब से अब तक उससे अव्याहत सम्बन्ध किसी न किसी रूप में चला ही जा रहा है। बीच में १६१६ से १८ तक हम भोगपुर (देहरादून) में रहे। तभी से इधर के लोगों के साथ हमारा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। १६२० में हमने देहरादून जिले की राजनैतिक बागडोर संभाली और इस जिले के संपर्क के साथ ही टिहरी गढ़वाल और गढ़वाल से भी बराबर संपर्क रहा है। इस प्रकार एक ओर आर्यजगत् का क्षेत्र, दूसरी ओर राजनैतिक क्षेत्र, तीसरी ओर महाविद्यालय का क्षेत्र के काम का भार हमारे सिर पर रहा है। चौथी ओर अन्य छोटे-छोटे कार्यक्षेत्र रहे हैं।

मैं कहाँ दक्षिणापथ का वासी था। कहाँ उत्तरापथ का यात्री बन गया हूँ। राम को चौदह वर्ष का ही वनवास रहा था। पाण्डवों को बारह वर्ष का वनवास और एक वर्ष का अज्ञातवास रहा। दोनों के वनवास के वर्ष मिलाकर २७ वर्ष होते हैं। और मुझे उत्तर-प्रदेश में पैर रक्खे हुए ५७ वर्ष होते हैं। इससे पूर्व पंजाब के ६ वर्ष गिनिए। इस प्रकार दक्षिणापथ को छोड़े हुए मुझे पूरे ६४ वर्ष होते हैं, १४ वर्ष की किशोर अवस्था में मैं पंजाब आया था। २० वर्ष की कुमार अवस्था में उत्तर-प्रदेश के तीर्थस्थान हरिद्वार में पैर रक्खा मैंने।

जब पंजाब में पैर रक्खा था दक्षिण देश को स्मरण करके लम्बे-लम्बे साँस लेता रहा। जब उत्तर-प्रदेश में प्रवेश किया तब शनैः शनैः कार्य-क्षेत्र व्यापक होता गया। अब तो समस्त भारतवर्ष ही मेरा हो गया है। अब दक्षिणापथ का मोह गया न जाने कहाँ।

कालाय तस्मै नमः

काल के जाते क्या देर लगती है। बातों बातों में आयु के ७७ वर्ष निकल गये। ७८ वें वर्ष में हूँ मैं इस संवत् २०१४ में, इस सन् १६५७ में। इस सुदीर्घ काल में न जाने कितने सुख-दुःख आये और डरा-धमका-पुचकार कर चले गये। न जाने कितने संघर्ष देखने पड़े-न जाने कितने ऊँच-नीच देखने पड़े-न जाने कितने संयोग-वियोग के दृश्य देखने पड़े-न जाने कितने आशा जालों में फँसे और कितने निराशा-जालों में से निकले-न जाने कितनी संकट-परम्पराओं में फँसकर अधमरे हो गये। न जाने कितने मानापमान के चक्रव्यूहों को काटना पड़ा, बस उन सब बातों का स्मरण न करना ही अच्छा। और ये सब सुख-दुःख परम्पराएँ, ये मानापमानों के चक्र अन्त में, परिणाम में, यत्र तत्र सर्वत्र हमारा प्रकाश करने में ही सहायक हुए। ये सब जीवन को ठोक-पीटकर व्यापक बनाने में कारण बने-क्या हमारी जन्मपत्री में ऐसा ही लिखा

॥ ॐ तत्सत् ॥

वन्दे मातरम्

* वयं येभ्यो जाताः, चिरपरिगता एव खलु ते।
समं यैः संवृद्धाः स्मृतिविषयतां तेऽपि गमिताः ॥
इदानीमेते स्मः प्रतिदिवसमासन्नपतनाः ।
गतास्तुल्यावस्थां सिकतिलनदीतीरतरुभिः ॥

(वैराग्यशतक)

जिन्होंने हमको जन्म दिया वे न जाने किस लोक-लोकान्तर में हैं । जिनके साथ पले, बढ़े उनका भी पता नहीं, कहाँ हैं। जिनके साथ सार्वजनिक कार्य किया उनमें से बहुत से चल बसे। अब तो हमारी दशा रेतीली नदी के किनारे के वृक्ष के तुल्य है। जिस प्रकार उसका कोई निश्चय नहीं कि कब रौ आजावे और कब बह जावे। इसी प्रकार हमारे शेष अस्थिर जीवन का भी क्या पता। यह आत्म-कथा केवल आत्ममनोरञ्जनार्थ लिख डाली है। इससे आपको आनन्द मिलता हो तो आप भी उठाइये।

—नरदेव शास्त्री

[जीवन में जिन श्लोकों ने सहारा दिया और जिनके मनन से यह शरीर बड़ी से बड़ी विपत्तियों का सामना कर सका—]

सुखं वा यदि वा दुःखं,
प्रियं वा यदि वाऽप्रियं।
प्राप्तं प्राप्तमुपासीत,
हृदयेनापराजिता— (योग वाशिष्ठ)

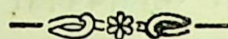
कार्यक्षेत्र में अथवा जीवन यात्रा में सुख आवे अथवा दुःख, प्रियों से समागम हो अथवा अप्रियों से, जो कुछ भी प्राप्त हो उसको अपराजित हृदय से (जिन्दा दिली) भुगते।

अधिष्ठानं तथा कर्त्ता,
करणं च पृथग्विधं ।
विविधाश्च पृथक्चेष्टाः,
दैवं चैवात्र पञ्चमम् ॥
तत्रैवं सति कर्त्तारं,
आत्मानं केवलं तु यः ।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वात्,
न स पश्यति दुर्मतिः ॥ (गीता १८-१४,१६)

---

* जो जन्मे हम-संग, उतौ सब स्वर्ग सिधारे ॥
जो खेले हम-संग, काल तिनहूँ को मारे ॥
हम हूँ जर-जर-देह, निकटहू देखत मरिबो ।
जैसे सरिता-तीर-वृक्ष, तुच्छ उखरिबो ॥

आधिष्ठान, कर्त्ता, विविध साधन-सामग्री, विविध प्रयत्न, ये चार और पाँचवा दैव मिलकर कार्य-सिद्धि होती है । जब यह बात है तो जो पुरुष केवल अपने आपको कर्त्ता-धर्त्ता समझ बैठता है वह दुर्मति अच्छी तरह नहीं देखता अर्थात् उसको तत्त्व का बोध नहीं हुआ —वह अभी अज्ञान में ही पड़ा हुआ है ।



॥ ॐ तत्सत् ॥

मलाबार (केरल) के ज्योतिषी की भविष्यवाणी

जिस मलाबार के ज्योतिषी द्वारा हमारी जन्मपत्री बनवाई गई थी उसने जन्मपत्री में जो कुछ लिखा अक्षरशः सत्य निकला —

(१) लड़के के भाग्य में परदेश है । लड़का प्रवासी रहेगा ।

(२) यह लड़का विद्वान् और यशस्वी होगा ।

(३) इसके पास विपुल धन आयगा, इसका कोई काम नहीं रुकेगा किन्तु यह जीवनभर दरिद्र-नारायण का ही प्रतिनिधि बना रहेगा ।

(४) संघर्षमय जीवन रहेगा । और इसका प्रकाश संघर्ष में ही होगा ।

(पिता जी की डायरी से)

(१) १८६४ नवंबर में दक्षिण से चला था, आजतक बराबर उत्तर भारत में विशेषतः संयुक्तप्रान्त में रहा—

(२) इसके विषय में हम इतना ही लिख सकते हैं कि जीवन काल में बड़े-बड़े विद्वान् गुरुओं के शिष्य होने व कहलाने का सौभाग्य मिला । और निःसाधन और निःसहाय होते हुए भी इस विदेश में जिस कार्य में भी हमने हाथ डाला प्रायः कृतकार्य ही हुए—

(३) इस बात का पदे पदे अनुभव मिला और भगवान् की परम कृपा कि सावजनिक जीवन का असिधाराव्रत निभता ही चला जा रहा है ।

(४) सार्वजनिक जीवन में पदे-पदे इस संघर्ष जीवन का प्रत्यक्ष अनुभव मिला है ।

[जब पिताजी ने अपनी डायरी लिखी थी, वे कट्टर सनातनी थे—जब माताने ये बातें सुनीं उसको बड़ा दुःख हुआ था, पर भवितव्यता को कौन टाल सकता है । ज्योतिषी ने पिता जी से पहिले ही कह दिया था कि सच सच लिखूँगा चाहे आपको कष्ट हो, पिता जी ने इस बात को मान लिया था—घरवालों से पता चला कि ज्योतिषी १००) ले गया । इस समय मैं इस बहस में नहीं पड़ता कि फलित ज्योतिष ठीक है कि नहीं । मैं इतना ही कहता हूँ कि यह बात ऐसी थी]



था। क्या अघटित-घटना-पटीयसी भगवती भवितव्यता के खेल इसी प्रकार के नहीं होने थे।

अब हमको किसी प्रकार की चाह नहीं, अब हमको किसी प्रकार की चिन्ता नहीं है। अब बेपरवाही बढ़ती जा रही है-शेष जीवन इसी प्रकार देश-धर्मसम्बन्धी कार्यों में निकल जाय तो समझ लीजिये कि आगे के लिये कुछ कमा लिया। इस जीवन का अच्छा बुरा जैसा भी था निकल गया।

निश्चय है कि आगे मनुष्य जन्म तो मिलेगा ही। पर वह जन्म किसी विद्वान् धार्मिक तपस्वी के यहाँ हो तो कितना अच्छा हो। अच्छा तो हो पर यह क्या अपने हाथ में है ? :—

"स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः"

इस संसार में अपने कर्मानुसार आना पड़ता है, जाना पड़ता है, सुख दुःख के चक्र देखने पड़ते हैं।

अपने हाथ में क्या है ?

सब कुछ उस करुणानिधान भगवान के हाथ में है। मनुष्य व्यर्थ ही अपने कर्मों पर घमण्ड करता है और अपने किये कराये का नाश कर डालता है।

सब कुछ उसी के हाथ में है

कर्मों का फल उस भगवान् के हाथ में है। किस कर्म का किस रूप में, किस समय कितना फल देना यह सब उसी के हाथ में है। इसलिए कर्मफल की आकांक्षा को छोड़कर केवल कर्तव्य-बुद्धि से अपना कर्तव्य करते रहना चाहिए।

क्योंकि

वही इस चक्र को घुमाने वाला है। गीता ने कहा भी है—

ईश्वरः सर्वभूतानां ।
हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ॥
भ्रामयन् सर्वभूतानि ।
यन्त्रारूढानि मायया ।

वही इस संसार चक्र को घुमाता रहता है। फिर उसी पर क्यों न हम सब कुछ छोड़ें। उसी को क्यों न सब कुछ अर्पण करें। हम तो परिणामवादी हैं इसलिये जिन कर्मों का परिणाम दुःख हैं वे सब कर्म दुःखद और जिन कर्मों का परिणाम सुख है वे सब कर्म सुखदायी, यही तत्त्व है।

वेधा (विधाता) मानो प्राणियों के साथ गेंद की सी क्रीड़ा करता है। जैसे गेंद को पटकने पर ऊपर उछलती है, फिर नीचे आती है, इसी प्रकार वेधा किन्हीं को नीचे पटकता है, किन्हीं को ऊपर उछालता है, इसी प्रकार प्राणियों के जीवन-रूपी कन्दुकों (गेंद) के साथ उसकी क्रीड़ा चलती रहती है।

उच्चैरुत्थापयन् कांश्चित् ।
काँश्चिदन्याँश्च पातयन् ॥
स वेधा विदधे नूनम् ।
कन्दुकक्रीडितभ्रमम् ॥
(राजतरङ्गिणी)

जो अनुभवी लोग इस तत्व को जानते हैं वे हानि-लाभ, सुख-दुःख, यश-अपयश, मान-अपमान, सिद्धि-असिद्धि, हार-जीत, आदि द्वन्द्वों में समबुद्धि रहते हैं, अपने तोल को संभाले रखते हैं। भगवान् कृष्ण कहते हैं कि ऐसा समबुद्धि व्यक्ति ही विशेष वन्दनीय व्यक्ति होता है।

"समबुद्धिर्विशिष्यते"

आज हम कहाँ हैं ?

जिन्होंने हमें जन्म दिया था वे माता-पिता न जाने किस लोकान्तर में हैं। और हमारी मातृकुल

तथा पितृकुल की परम्परा का भी पता नहीं है, किस लोक में है अथवा न जाने इसी लोक में किस रूप में विचर रही है। किसी का भी तो पता नहीं चल रहा, कहीं भी तो पता नहीं चल रहा है। वे हमारे बालसखा, वे हमारे किशोरावस्था के सहकारी सहचारी क्रीड़ासंगी किशोर, वे युवावस्था के साथी संगी न जाने कहाँ हैं, अब तो हम स्वयं ही नदी के किनारे के उस वृक्ष की भाँति अकेले खड़े हैं, जो कि नदी में बाढ़ आते ही न जाने जड़ मूल सहित कहाँ पहुंच जायगा। पीछे देखते हैं तो शून्य ही शून्य, आगे देखते हैं तो शून्य ही शून्य, इस प्रकार दो शून्यों के बीच में हम अवाक् खड़े हैं।

हम क्या हैं ?

जब छोटे थे समझ नहीं थी, जब बड़े हो गये, कुछ अक्षर सीख गये तो हमारे अभिमान का पारा कहीं का कहीं चढ़ गया था किन्तु अब जब कि विवेकिनी बुद्धि परिपक्व दशा में पहुँच गई है तो समझ में आ रहा है कि हम वह नहीं हैं जैसा कि अपने आपको समझते रहे हैं। हम उतने भी नहीं हैं जितना कि अपने आपको समझते रहे हैं।

फिर हैं क्या ?

जिसके मस्तिष्क का अन्धकार दूर हो गया है और जिसके आंखों की धुन्ध उतर गई है और जो संसार को किसी नवीन ही दृष्टि से नवीन ही रूप में देख रहा है ऐसे प्राणी बन गये हैं हम अब।

अपनी त्रुटियों और दोषों के लिए दूसरों को दोष देते देते मर गये किन्तु कभी अपने दोषों पर दृष्टिपात करने की हिम्मत ही नहीं हुई। ऐसे प्राणियों की आँखों की धुन्ध जब दूर हो जाती है तब उसकी जो दशा हो जाती है, वही हमारी है।

अब आगे क्या ?

आगे का मार्ग स्वच्छ है। यदि ठीक-ठीक संभलते रहे, फिर अन्धकार के गड्ढे में न जा पड़े, फिर विवेकिनी तमसा से आछन्न न हो जाय। यदि सावधान होकर शनैः शनैः मार्गक्रमण किया जाय—

ओ हो क्या लिखने बैठा था,
क्या लिखने लगा हूँ यह,
मैं किधर चला था और किधर
पहुँच गया हूँ—अब।

लिखने लगा था, सार्वजनिक जीवन की बात— लिखने लगा था अपनी बात—लिखने लगा था कुछ संस्मरण—इसी लिए <u>सिंहावलोकन</u> की दृष्टि से कुछ लिखने के लिए उद्यत हुआ था—सिंह जब स्वस्थान से चलता है तब आगे चलता जाता है और पीछे गर्दन मोड़ कर इधर और उधर देखता जाता है।

मनुष्य को भी अपनी जीवन-यात्रा में सिंह-गति से चलना चाहिए जिससे पिछले और अगले का ज्ञान रहे—

मनुष्य का जीवन ही क्या है ?

ईश्वर ने क्या ही यह विचित्र नश्वर बनाया है—कैसा नश्वर है यह ! कैसा क्षणभंगुर है यह ! क्षण भर का भी तो भरोसा नहीं है इसका। हो जाय तो क्षण भर में नष्ट—नहीं तो चला जा रहा है सौ वर्ष तक-कहीं कहीं इससे अधिक काल भी। मनुष्य का शरीर जैसे जेब की घड़ी है। चलती रहे तो बराबर। नहीं तो खड़ी की खड़ी है। विचित्र ऐसा कि इसी अनित्य नश्वर शरीर से नित्य (परमात्मा) को प्राप्त कर सकते हैं, ठीक यथा-विधि गुरूपदेश के अनुसार चलें तो। यम ने नचिकेता को यही कहा है कि—

"अनित्यैर्द्रव्यैः,
आप्तवानस्मि नित्यम्"

हे नचिकेतस् ! देखो मैंने इन सांसारिक अनित्य पदार्थों से ही इस नित्य परब्रह्म तत्व को जाना है ऊपर उठते उठते। तुम इन नश्वर पदार्थों के पीछे नहीं पड़ रहे हो इससे मैं समझ रहा हूँ कि नचिकेता तुम विवेकी हो, बुद्धिमान हो।

भगवान् कृष्ण ने गीता में स्पष्ट कहा है कि यदि मेरे बतलाये हुए अनासक्ति मार्ग पर कोई चले तो वह अनासक्ति धर्म बड़े भारी भय से रक्षा कर देता है।

स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य।
त्रायते महतो भयात्॥

मनुष्य तीन गुणों का पुतला है।

मनुष्य तीन गुणों का पुतला है—सत्व—रज—तम। तीन गुणों का पुतला है क्योंकि यह शरीर प्रकृति (त्रिगुणात्मिका) ही की तो विकृति है। इस लिए इन गुणों से ऊपर उठने की बात करो—मनुष्य में तीन गुण सदैव रहते हैं—कभी किसी का जोर बढ़ जाता है, कभी किसी का। सात्विक बुद्धि राजस और तामस गुणों को दबाये रक्खे तो ही कल्याण। जहाँ रजोगुण बढ़ा कि सुख-दुःख का पुछल्ला लगा समझिए—एक क्षण में सुख, दूसरे क्षण में दुःख इसी चक्कर में पड़े रहोगे। जहाँ तमोगुण उभरा कि संमुख अन्धकार ही अन्धकार रहेगा। सत्व गुण भी रजोगुण और तमोगुण से ऊपर उठ कर शुद्ध सात्विक बने तब कल्याण।

बहिर्मुख होकर

यदि विषयों के पीछे, वासनाओं के पीछे पड़े रहोगे तो कल्याण कहाँ—जो व्यक्ति बहिर्मुख रहता है अथवा हो जाता है वह "जायस्व म्रियस्व" जन्ममरण के चक्र में पड़ जाता है। जो निःसंग हो कर अन्तर्मुख हो जाता है वह आनन्द पाता है—

आनन्द और सुख में बड़ा अन्तर है।

आनन्द आत्मावबोध का,
आनन्द आत्मस्वरूप के ज्ञान का।
आनन्द परमात्म-दर्शन का।
सुख—इन्द्रियों की वासना की आंशिक तृप्ति का।
सुख—इन्द्रियों को जो अच्छा लगे। इन्द्रियों को जो सुहाये उसका।

ये हि संस्पर्शजा भोगाः।
दुःखयोनय एव ते॥
(गीता)

शरीर से सम्बन्ध रखने वाले जितने भी संस्पर्शज भोगा हैं वे सब दुःख के कारण हैं। जब तक वस्तु है तब तक सुख अथवा वस्तुओं के रहते भी सुख कहाँ? आज तक मिला है किसी को?

अरे कहाँ मैं इस तत्वज्ञान की विवेचना में पड़ गया—मेरे लिए तो इस विचारतरङ्ग में यह संसारही शून्यसा भास रहा है?

मैं लिखने बैठा था कुछ और लिख गया हूँ कुछ किन्तु मेरे वाचक यदि मेरे वक्तव्य को ध्यान पूर्वक पढ़ेंगे तो उनके हृदय की गुत्थी भी सुलझ सकती है—

हमारे प्राचीन साहित्य में मनुष्य को मनुष्य बनाने के, नहीं नहीं—मनुष्य को मनुष्यता से ऊपर उठा कर देव बनाने के, उसको नश्वर से ईश्वर अथवा अमर बनाने के क्या क्या उपाय नहीं बतलाये हैं—सब कुछ है, पर कोई देखे तब न? जब मेरी अंग्रेजी छूटी थी और संस्कृत-विद्या गले में पड़ गयी तब मुझे अंगरेजी के छूटने का बड़ा भारी दुःख हुआ था—किन्तु मेरा प्रवेश संस्कृत प्राचीन साहित्य में जैसे जैसे बढ़ता गया तब मुझे अवर्णनीय आनन्द मिला। उस आनन्द के संमुख, उस संतोषरूपी धन के संमुख संसार के अच्छे से

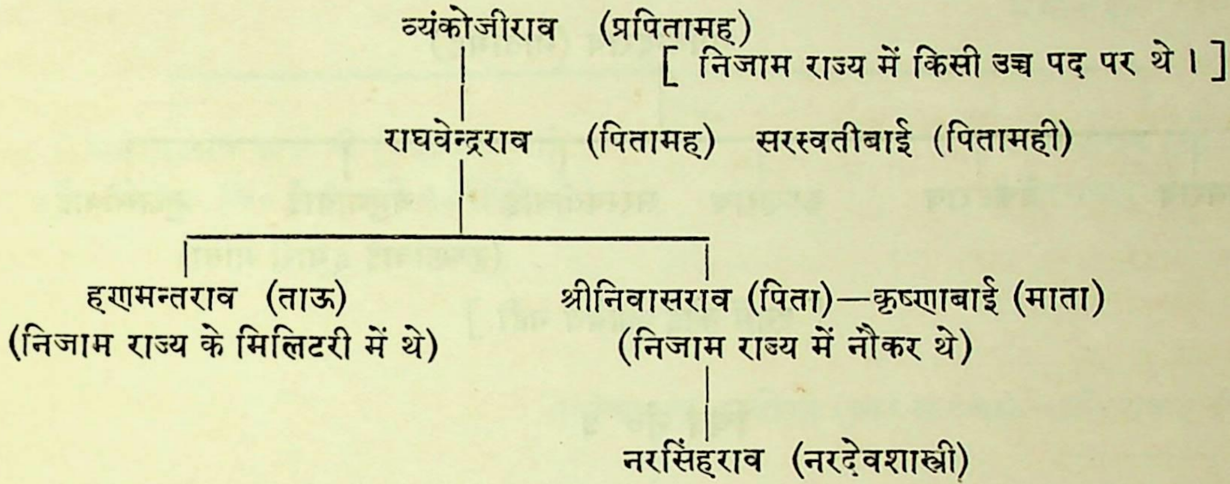
अच्छे पदार्थ, उत्तम से उत्तम वस्तु भी हेय है। अब मैं आत्मवित् होने का, शोक मोह से तरने का कुछ कुछ आनन्द उठा रहा हूँ क्योंकि स्वरूप को कुछ कुछ पहचानने लगा हूँ—

ईश्वर की कृपा और पूर्व जन्म के शेष पुण्य कि १९४७ में भारतवर्ष को अपनी आँखों स्वतन्त्र देख लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उस सौभाग्य को लाने में इस नश्वर शरीर ने भी अपनी अपनी अल्प-स्वल्प शक्त्यनुरूप योग दिया—इतना होने के पश्चात् भी जीवन के एक अंश में अपूर्णता ही बनी रहती यदि हमको वर्तमान प्रजातन्त्र शासन-चक्र किस प्रकार चलता है इसका भीतरी ज्ञान न हो पाता। अब भगवत्कृपा से गत पाँच वर्षों में विधान सभा में हमको यह भी अनुभव मिला, और यथा-संभव, यथाशक्ति लोककल्याण के हेतु हम जो कुछ कर सकते थे वह कर चुके हैं। हम जैसा और जितना चाहते थे वैसा और उतना नहीं सही। परिस्थितियों में जितना हो सका, बन सका वही तो हो सका, वही तो बन सका। हमारी आत्मा सन्तुष्ट है कि हम प्रजावर्ग की अल्प-स्वल्प सेवा कर सके—हमारा अपना विचार है कि जिस जिस प्रकार अनुभव होता जायगा भारतीय संविधान में भारतीय ढंग के, भारतीय वातावरण के अनुरूप परिवर्तन करने पड़ेंगे। वैसे तो १० वर्षों में बहुत कुछ हुआ—और १० वर्ष में होता भी कितना। आजकल ऐसी दशा है, आगे की राम जानें। ये मन के उद्गार हैं, वर्षों से इकट्ठे हो रहे थे। आज बलात् बाहर आगये हैं।

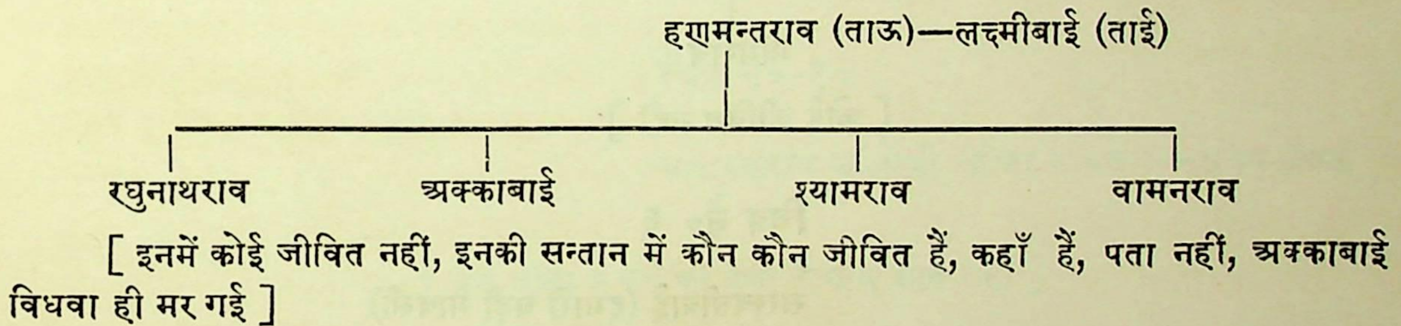


(पितृकुल)

चित्र नं० १

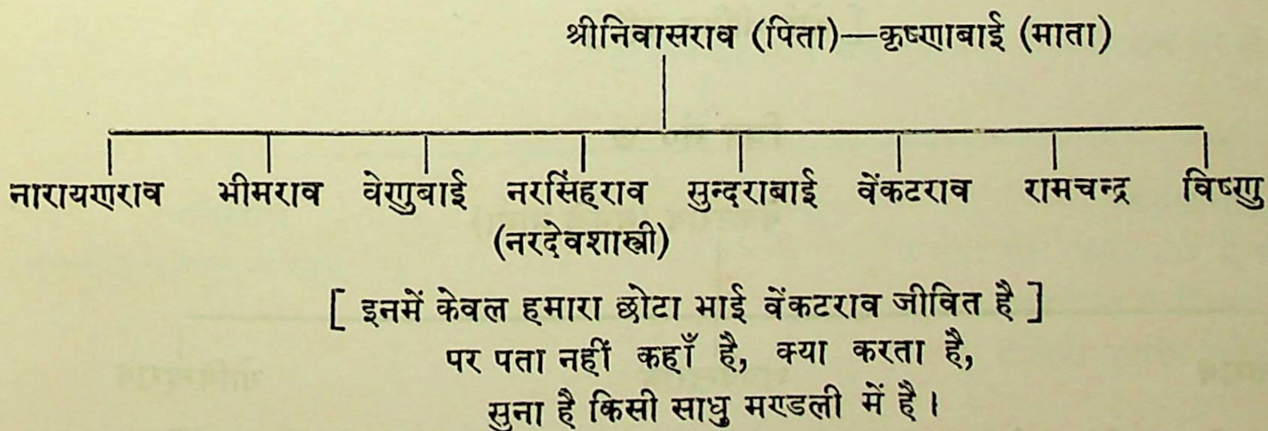


चित्र नं० २



[इनमें कोई जीवित नहीं, इनकी सन्तान में कौन कौन जीवित हैं, कहाँ हैं, पता नहीं, अक्काबाई विधवा ही मर गई]

चित्र नं० ३

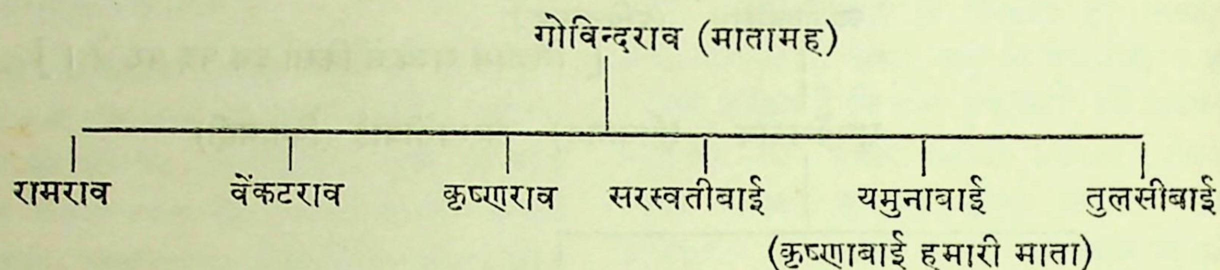


[इनमें केवल हमारा छोटा भाई वेंकटराव जीवित है]
पर पता नहीं कहाँ है, क्या करता है,
सुना है किसी साधु मण्डली में है।

(मातृकुल)

चित्र नं० ४

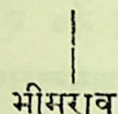
गोविन्दराव (मातामह)



[इनमें कोई जीवित नहीं]

चित्र नं० ५

कृष्णराव (मावसा)—तुलसीबाई (मावसी)

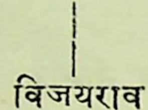


भीमराव

[कोई जीवित नहीं]

चित्र नं० ६

सरस्वतीबाई (हमारी बड़ी मावसी)

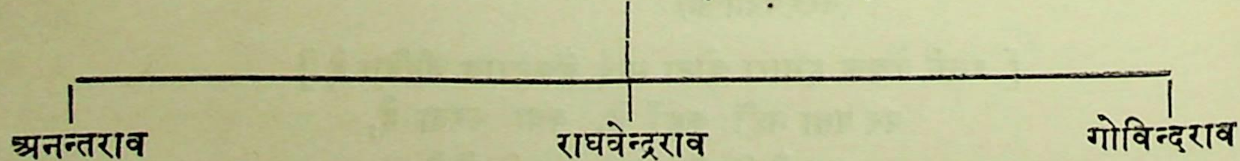


विजयराव

[कोई जीवित नहीं]

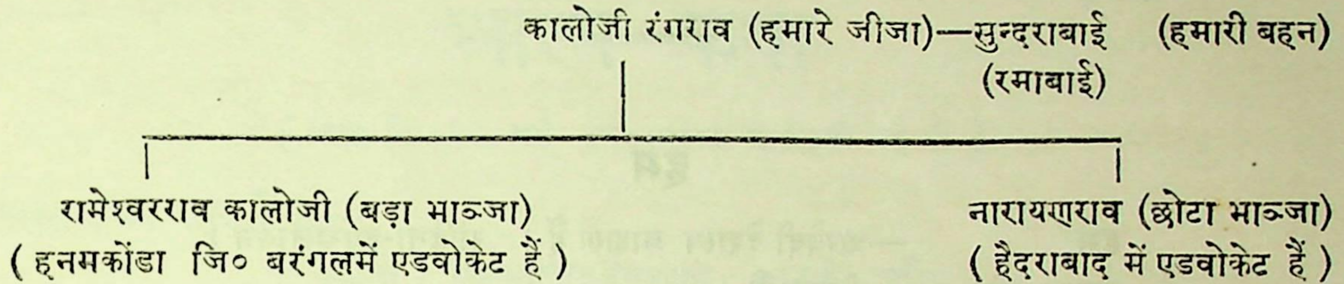
चित्र नं० ७

वेंकटराव (मझले मामा)

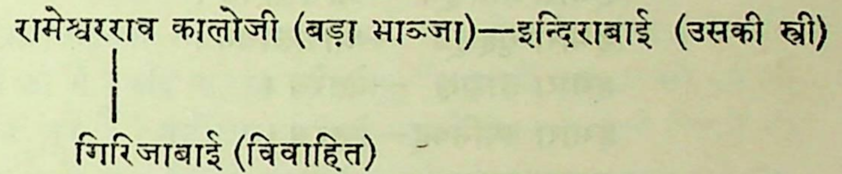


[इनमें केवल गोविन्दराव जीवित हैं, धारवाड में किसी कॉटन मिल में नौकर हैं]

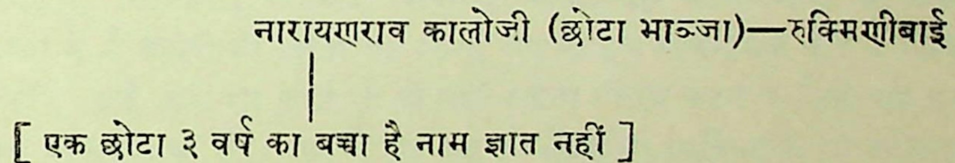
चित्र नं० ८



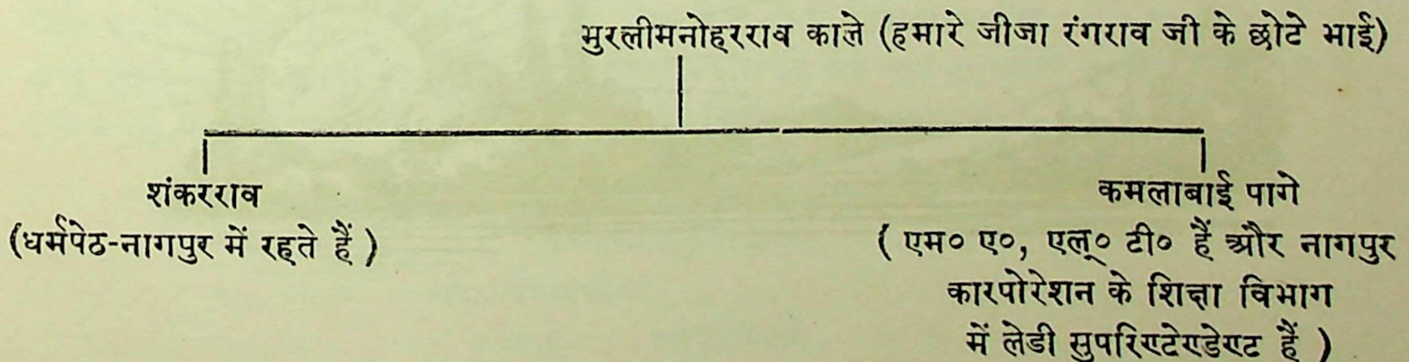
चित्र नं० ९



चित्र नं० १०



चित्र नं० ११

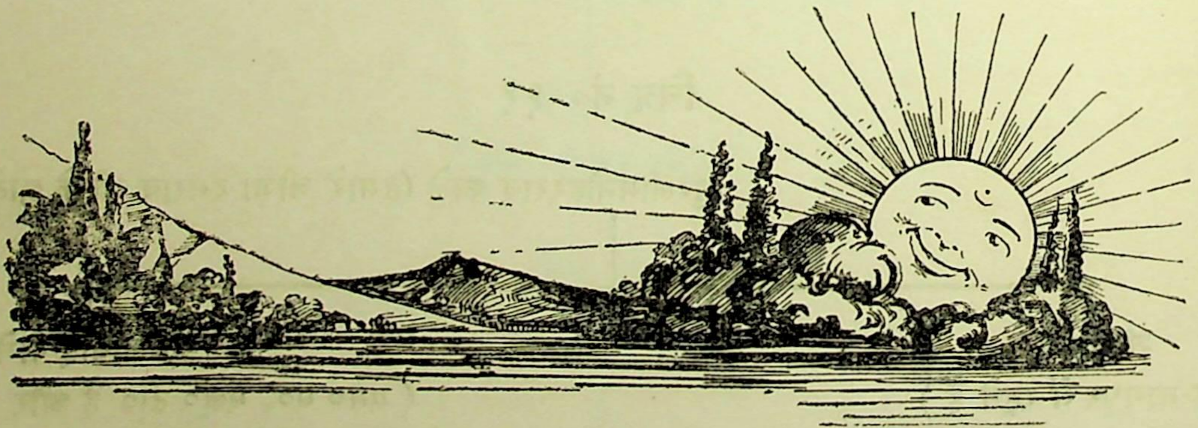


हमारे पूर्वज महाराष्ट्र से कब रायचूर (पूर्व निजाम राज्य, अब कर्नाटक) में जा बसे पता नहीं। महाराष्ट्र के किस प्रदेश से गये पता नहीं। रायचूर से फिर हैदराबाद में जा बसे।

हम

हम —ऋग्वेदी देशस्थ ब्राह्मण हैं। संहिता-आश्वलायन।
हमारा गोत्र —श्रीवत्स है।
हमारे पञ्चप्रवर —आप्लव, और्व, जामदग्न्य; पाराशर, च्यवन।
हमारी शाखा —आश्वलायन।
हमारा श्रौतसूत्र —आश्वलायन।
हमारा गृह्यसूत्र —आश्वलायन।
हमारा ब्राह्मण —ऐतरेय।
हमारा उपनिषद्—ऐतरेय।
हमारा आरण्यक—ऐतरेय।

हमारा वंश मध्व संप्रदाय को मानने वाला वैष्णव है। फिर पिता जी स्व० पण्डित लेखराम जी का भाषण सुन कर आर्यसमाजी बने। यह बात सन् १८८६ की प्रतीत होती है। ठीक कह नहीं सकते।



वन्दे मातरम्

आत्म-कथा

[जैसा कि १६ वर्ष पूर्व प्रारम्भ में लिखी गई थी]

हमारा जीवन क्या है ? —

देहिनो व्यसनापातवैवश्याद् भ्रमतो पथि,
अकार्यं कुर्वतः कार्यं, सिद्धिं संसाधयेद्विधिः ॥

[राजतरङ्गिणी]

अर्थात् जब मनुष्य संकट परम्परा में फँसे और उस समय उलटा-सुलटा जो कुछ सूझे करने लगे तब जिस प्रकार अनुकूल विधि प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उसका कार्य साध देता है वही हमारी गति हुई। इस समय हमारी अवस्था ६२ वर्ष की है। यदि मनुष्य की आयु "शतायुर्वै पूरुषः" सौ वर्ष की मानी जाय तो हम आधे से ऊपर नम्बर ले चुके हैं। मनीराम यह कह रहा है कि अब आगे जितने भी वर्ष मिलेंगे वे रुंगे में ही समझिये। इन वर्षों में आँखों के सामने से जो जो भी दृश्य गुज़र गये उन स्मृतियों को शृङ्खला में बाँधकर क्रमबद्ध कुछ भी लिखना असंभव कार्य है। सहस्रों लक्षों प्रकार की छोटी बड़ी स्मृतियाँ ऊपर तले दबी पड़ी हैं। किन्हीं किन्हीं स्मृतियों का तो कचूमर ही निकल गया है। सैकड़ों भग्नावशेष हैं,—इसीलिये, तिथिवार, क्रमवार, सन्‌वार, संवत्-वार आत्म-गाथा का लिखना है कठिन बात। पहली अवस्था में मैं डायरी भी रखता था किन्तु जब से हम राजनैतिक क्षेत्र में आये हैं डायरी तो दूर रही, चिट्ठी-पत्री, कोई ज़रा सा पुर्जा भी तो नहीं रखता। ऐसा करने के लिये कई प्रबल कारण हुए जिनका उल्लेख अनावश्यक है। अब मैं जो कुछ भी लिखूँगा स्मृतिपटलों को टटोलकर, उनको ऊपर नीचे करके जिस विषय में जहाँ ध्यान आयगा उसको वहीं कहीं लिखूँगा। ऐसा करने में क्रम-संकर हो जाय तो भले ही हो जाय किन्तु इस प्रकार के संमिश्रित क्रम में भी वाचकों को अपूर्व आनन्द मिलेगा। यह ध्यान रहे कि भीतर की चौथी और मनुष्यों द्वारा बाहर बोली जाने वाली वैखरी भाषा जिस प्रकार भीतर व बाहर बोलती जायगी ठीक वैसा ही मैं लिखता जाऊँगा। जैसे तार बाबू जो जो शब्द दूसरी ओर से आता जाता है, जिस-जिस प्रकार कट्ट कड़ कड़ कट्ट होती जाती है लिख लेता है, इसी प्रकार मैं भी शब्द योजना करके आपके सामने लिख रहा हूँ। आप भी :-

उपक्रमोपसंहारा-
वभ्यासोऽपूर्वताफलम ।
अर्थवादोपपत्ती च
लिङ्गं तात्पर्यनिर्णये ॥

इन छह तात्पर्य-निर्णायक लिंगों को (चिन्हों को) जहाँ मिलें जोड़कर तात्पर्य निकाल लीजिये और

"यस्य येनार्थसम्बन्धः
दूरस्थस्यापि तस्य सः"

जिस शब्द का जिसके साथ सम्बन्ध है, वह चाहे दूर ही क्यों न पड़ा रहे, सम्बन्धी शब्द के साथ मिल कर अर्थ देगा ही। इसका भी ध्यान रहे कि आप हमारी हिन्दी वाक्यरचना अथवा मुहावरे की ओर भी बहुत ध्यान न देवें। आप जानते ही हैं कि अनेक भाषाभिज्ञ होने के कारण उन उन भाषाओं का हमारी लेखन-शैली पर भी प्रभाव पड़ा ही है। संस्कृत है, मरहटी है, अंग्रेजी है, हिन्दी है, गुजराती है, कुछ कर्नाटक भाषा के भी संस्कार हैं, कुछ उर्दू से भी हेल मेल है। हमारी भाषा में इन सबका सुन्दर संमिश्रण देखने को मिलेगा।

हमारे पूर्वजों के पूर्वज किसी समय महाराष्ट्र से कर्नाटक में जा बसे थे। मेरा जन्म आन्ध्र प्रदेश का। पूर्वज दक्षिण भारत में,निज़ाम हैदराबाद की रियासत में रायचूर नामक सदर्न मरहटा रेलवे जंकशन है, वहाँ से दस पन्द्रह मील पर हचोली नामक ग्राम है, वहाँ के, अर्थात कर्नाटक प्रदेश के। किशोर अवस्था में शिक्षा दीक्षा महाराष्ट्र प्रदेश की–पुण्य पवित्र पूने की। फिर १८६४ से १६०० तक छह वर्ष पंजाब में गये, १६०० से आज तक के वर्ष संयुक्त प्रान्त में व्यतीत हुए। बीच में ढाई वर्ष बंगाल में समझिये। इन समस्त परिस्थितियों का प्रभाव हम पर पड़ता ही। कई बार मैंने सोचा था कि आत्म–कथा लिख डालूँ पर जीवन का अनुभव बतला रहा है कि जबतक जिस बात का समय नहीं आता वह बात नहीं बनती चाहे कोई कितना भी यत्न कर लेवे।

'प्रभुरत्र कालः'

यह बात सोलह आने ठीक है। (१६३२ मई १८) जेल जाने के पूर्व महाविद्यालय में बैठकर मैंने कुछ लिख डाला था और जेल जाते–जाते सब काग़ज़ात एक मित्र को देगया था कि इसको देखकर ठीक करके रख देवें पर मेरे जेल जाने के पश्चात् यह ऐसी ही पड़ी रह गई। जेल में जेलवालों ने इस बात का ध्यान रक्खा कि मुझे लिखने के उपकरण न मिलने पायें। नहीं तो वहीं बैठा बैठा बहुत कुछ लिख डालता। जब जेल–समाप्ति में दो मास रह गये तब एक छोटी सी पेन्सिल मिली थी इसलिये इधर–उधर की कुछ बातों के विषय में नोट कर सका। बाहर आकर इस कथा को देखा तो आवश्यकता प्रतीत हुई कि इसको दुबारा नये ढंग से लिखी जाय। यह जीवन तो एक संकटमय जीवन रहा है, यह जीवन तो कंटकाकीर्ण पथ का जीवन रहा है, यह जीवन प्रवासि–जीवन रहा है। भगवान रामचन्द्र को चौदह वर्ष का वनवास रहा। पाण्डवों को बारह वर्ष का वनवास व एक वर्ष का अज्ञातवास, कुल मिलाकर तेरह वर्ष मिले। भगवान् रामचन्द्र के चौदह और पाण्डवों के तेरह मिलाकर सत्ताईस वर्ष होते हैं और मुझे घर से निकले ४८ वर्ष हो रहे हैं। हमारा जीवन सुखी गृहस्थिति से निकल कर एकदम दुःख–परम्परा में पड़कर किसी प्रकार जीवित रहकर साँस लेते रहने का जीवन है। यह जीवन राव से रंक बनकर दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि होकर कार्य क्षेत्र में आने का है। मैं अपनी कथा क्या लिख रहा हूँ, अपनी पड़ताल कर रहा हूँ। देख रहा हूँ कि जमा खर्च क्या हुआ। इस और परलोक किस किस अंश में सधा। इससे मेरा मनोरंजन तो हो ही रहा है किन्तु वाचक वृन्द का मनोरञ्जन भी होगा और

उनको कई नसीहतें भी मिलेंगी। पूर्वजन्म के सुकृत-दुष्कृत के लेखे का भुगतान किस प्रकार करना पड़ता है, इसका भी पूर्ण बोध हो जायगा। इसके लिखते हुये मैं अपने इष्ट-मित्र, बन्धु-बान्धव, की ऐसी बातों का उल्लेख कदापि नहीं आने दूँगा जिससे किसी प्रकार के उद्वेग के होने की संभावना हो-चलिये तो फिर आगे मेरे साथ।

—नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ

पूर्व पुरुष

हमारे पूर्व पुरुषों में से दो के ही नाम याद हैं, श्री अण्णाजीराव, और श्री स्वामीराव। ये निजाम राज्य में प्रतिष्ठित पद पर आधिष्ठित थे। श्री स्वामीराव जी सूबेदार थे। हमारे प्रपितामह का नाम व्यंकोजी राव था। हमारे दादा का नाम श्री राघवेन्द्रराव, दादी का नाम सरस्वती बाई। हमारे पिता दो भाई थे। बड़े हनुमन्तराव और छोटे हमारे पिता श्रीनिवासराव। हमारे ताऊ हैदराबाद दक्षिण में रॉक हणमन्तराव नाम से प्रसिद्ध थे। आप निजाम राज्य में फौज में कप्तान थे। आप अंगरेजों की संगति में अधिक रहे इसलिए कट्टर पौराणिक होने पर भी फ्रीमेसन थे। जब मूसानदी में बाढ़ आई थी तब हमारा मकान भी बह गया था। उसी में हमारे ताऊ जी की सहस्रों पुस्तकें बह गईं, गल गईं, उसी में "फ्रीमेसन" का साहित्य भी नष्ट हुआ। हमारा यह मकान हैदराबाद के सिध्यम्बर बाजार में उस्मानगंज के ठीक सामने है पर, तयेरे भाइयों ने उसे बेच डाला और अन्यत्र रहते हैं।

हणमन्तराव (ताऊ) लक्ष्मीबाई (ताई)

रघुनाथराव (ज्येष्ठ)	अक्काबाई	श्यामराव (मध्यम)	वामनराव उर्फ अप्पाराव (कनिष्ठ)

रघुनाथराव असिस्टेंण्ट कोतवाल व ट्रैन्सलैटर (दुभाषिये) थे। वामनराव पैतृक सम्पत्ति पर निर्वाह करते थे, बीच में कई वर्ष करोडगिरी (चुँगी) में नौकर भी रहे। ये दोनों महानुभाव इस लोक में नहीं हैं। बन्धु श्यामराव पहले तोपखाने में नौकर थे, अब वे भी नहीं हैं। बन्धु श्यामराव का एक ही पुत्र है कृष्णराव। एक पुत्री सरस्वती व एक पुत्र पहले ही कालवश हुआ प्लेग में। श्यामराव की स्त्री का नाम श्रीमती जानकीबाई, बड़े अच्छे अमीर घराने की लड़की है। रघुनाथराव का एक लड़का है और एक लड़की रंगुबाई, दक्षिण में अन्नेगिरी रियासत में व्याही है। वामनराव की तीन लड़कियाँ थीं, तीनों का विवाह हो चुका है। वामनराव की स्त्री गोदावरीबाई जीवित है। हमारे तयेरे भाई श्यामराव निजाम राज्य के फीलखाने अर्थात् हाथीखाने में नौकर थे। हमारी मावसी तुलसीबाई मैसूर की सरहद पर रट्टेहली नामक ग्राम में रहती है। मावसा जी का नाम श्री कृष्णराव कुडुप्ली। आपके एकमात्र पुत्र भीमराव कुडुप्ली का देहवसान हो गया। कई वर्ष हो गये। श्रीकृष्णराव जी ग्राम के पटेल हैं और आपके पास खूब खेती बाड़ी है। हमारे कृष्णराव मामा के कुल में रंगनाथराव नामक एक हमारे ममेरे भाई लगते हैं। व आरभोरी अग्रिकलचरल डिपार्टमेन्ट में नौकर थे। यह सरकारी फार्म धारवाड़ जिले में है।

स्वभाव–परिचय

इस प्रकार संक्षेप से मातृ-पितृ-कुल का परिचय देने के पश्चात् अपने वंश का थोड़ासा स्वभाव परिचय देना अत्यावश्यक है। हमने अपने दादा राघवेन्द्रराव को कभी देखा नहीं। दादी सरस्वतीबाई को देखा है। यह कभी ताऊ जी के यहाँ और कभी हमारे यहाँ पिता जी के पास आकर रहती थी। ताऊ और पिताजी में कब मनमुटाव हुआ यह पता नहीं किन्तु वह हमारी ताई लक्ष्मीबाई के कारण हुआ ऐसा किसी समय पिताजी की बातचीत में सुना था। तब से पिताजी ने हैदराबाद का मकान छोड़ ही दिया था। सरस्वती दादी अत्यन्त क्रोधशीला देवी थी। संभवतः इसीलिये हमारे ताऊ और पिता जी में यह गुण अथवा अवगुण प्रधानरूप से आया हो। इतना प्रभावशाली और संपत्तिशाली खानदान, क्रोध से ही हीन गति को प्राप्त हुआ। हमारी माता बड़ी हठीली थीं। जिस बात पर अड़ जाती थी उसको करा कर ही चैन लेती थी। इस प्रकार पितृकुल से क्रोध व मातृ कुल से हठ यह हमारी पैतृक सम्पत्ति है। अब हमारा वह क्रोध शुद्ध सात्त्विक स्वरूप का होता जा रहा है। इस क्रोध ने भी हमको युवावस्था में बहुत हानि पहुँचाई। हठवृत्ति ने भी अनेक काम बिगाड़े। अब विवेकद्वारा हम शत्रुओं की चलने नहीं देते हैं। कई वार जीवन में अपने से अधिक हठी व क्रोधी जनों से पाला पड़ने पर ये दोनों दुर्गुण स्वयं ही ढीले पड़ते रहे हैं। जहाँ तक मेरा अनुभव है हमारे वंश में ये दो ही दुर्गुण थे, शेष गुणों की खान समझिये।

पिताजी परिश्रमी, दक्ष, स्वाध्यायशील थे। माता गृहकार्य-दक्ष और धृति की साक्षात् प्रतिमूर्त्ति थी। हमारे बड़े भाई नारायणराव मैट्रिक तक पढ़े थे। आपकी मृत्यु के पश्चात् बन्धु भीमराव जी व पिता जी में नहीं बनती थी। पिताजी हमारे छोटे भाई व्यंकटराव से प्रसन्न रहते थे और वह लाड़ में ही बिगड़ गया और पिता जी के पीछे उसको एक बहुत अच्छी नौकरी मिली थी किन्तु वह छोड़ बैठा, कहीं स्कूल मास्टर रहा, कहीं कुछ किया, कहीं कुछ, एक स्थान पर नहीं रहा। श्रीमती तुलसीबाई मावसी के यहाँ रहता था तब वहाँ उसको सब प्रकार से आनन्द था। किन्तु वहाँ भी उसकी नहीं बनी। अब न जाने कहाँ है। बन्धु भीमराव इंजिनियरिंग डिपार्टमेन्ट में हैं किन्तु अत्यन्त तीव्र स्वभाव के कारण नौकरी छोड़नी पड़ी। वर्षों पुलिस विभाग में भी रहे। भोपाल में अब आप क्या करते हैं इसका कुछ पता नहीं। कभी हैदराबाद व कभी उस्मानाबाद रहते हैं। चतुर शिक्षित पुरुष हैं, साहसी हैं, इसलिये उन्हें किसी बात की कमी नहीं रहती होगी, वर्ष भर में कभी कभी दो एक पत्र आजाते हैं। हमारी कनिष्ठ भगिनी सुन्दराबाई के पति श्री रंगराव कालोजी का देहावसान १५ अगस्त १९३२ को हुआ। यह दुःखद समाचार हमको जेल में ही मिला था। हमारा भाञ्जा रामेश्वरराव कॉलोजी हनमकोण्डा (जि० वरंगल) में वकील है। छोटा भाञ्जा नारायणराव भी वकील है। रामेश्वरराव की स्त्री का नाम इन्दिराबाई है और उसकी लड़की का नाम गिरिजाबाई। हमारे जीजा रंगराव कालोजी रेवेन्यू डिपार्टमेन्ट में प्रतिष्ठित पद पर अधिष्ठित थे। इनका वेतन तीन सौ रु० मासिक था। इनके अफसर मिस्टर डेनलॉप इनसे बहुत प्रसन्न रहते थे। इनके छोटे भाई मुरली-मनोहरराव उसी विभाग में काम करते थे, अब पेन्शनर हैं। नागपुर में शेष जीवन किस प्रकार व्यतीत कर रहे हैं, पता नहीं। अपने सम्बन्धियों के विषय में

इससे अधिक परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। पूज्य पिता जी के विषय में आगे सविस्तार लिखा जायगा।

मैं यह लिख चुका हूँ कि ताई लक्ष्मीबाई के कारण ताऊ और पिताजी में मनमुटाव हुआ और पिताजी पृथक् हो गये। इस झमेले में छत्तीस सहस्र की जायदाद का सन्तोष-जनक निपटारा न हो सका और पिताजी ने उसमें से एक पाई भी नहीं ली। ताऊ जी कभी-कभी धाराशिव और पूने में आकर हमारे यहाँ ठहरते थे, दादी सरस्वतीबाई भी। इस प्रकार दोनों भाइयों के पृथक् होने के पश्चात् भी हमको क्लेश किसी का अनुभव नहीं हुआ। क्योंकि पिताजी भी खूब कमाते थे। बन्धु नारायणराव और भीमराव के मौञ्जी-बन्धन (जनेऊ) समारम्भ में तीन सहस्र रु० और मेरे उपनयन संस्कार में एक सहस्र रु० से अधिक व्यय हुआ, इसी से पता चलता है कि आमदनी काफी थी। नारायणराव भीमराव का मौञ्जी-बन्धन इस शान से हुआ कि हमारे सम्बन्धी कहते थे, उसमें वेश्याओं का शानदार नृत्य भी हुआ था, ऐसा पता चला है। और पिता जी ने भी इस बात की पुष्टि की थी। घर से रूठने के पश्चात् पिताजी बम्बई गये, वहाँ पुलिस डिपार्टमेन्ट में प्रविष्ट हुये। वहाँ इनकी कार्यदक्षता से इनका अफसर जॉनसन अत्यन्त प्रसन्न हुआ और इनको तीन सौ रु० वेतन मिलने लगा। भत्ता इससे अलग। पिताजी बम्बई प्रान्त में सर्वत्र जाते थे। उधर कभी-कभी अजमेर तक का धावा बोल देते थे। बड़े-बड़े नामी डाकुओं और चोरों को पकड़लाने में सिद्धहस्त थे। पुलिस का महकमा और पिता जी जैसा सुदक्ष अधिकारी फिर किस बात की कमी रहती। हमारे ताऊ जी को यह बात पसन्द नहीं थी। चाहते थे कि निज़ाम राज्य में ऐसी जगह काम करें जो भविष्य में उन्नतिशाली हो। जब पिता जी का अफसर विलायत जाने लगा तब उसने पिता जो से अपने साथ चलने के लिए बहुत आग्रह किया और ताऊ जी ने यह कहकर विघ्न डाला कि समुद्रपार इतनी दूर जाओगे, भ्रष्ट हो जाओगे। थोड़े दिनों के पश्चात् पिताजी हैदराबाद लौटे और इनको तहसीलदारी मिली। इस राज्य में शेडम नामक तहसील है, वहीं आपको तहसीलदारी मिली। यह शेडम स्टेशन वाड़ी जंकशन (जी० आई० पी०) से हैदराबाद जाने वाली लाईन पर तीसरा अथवा चौथा स्टेशन है। वहाँ से कभी गुलबुर्गा, कभी कहीं और कभी कहीं इस प्रकार धाराशिव (उस्मानाबाद) को बदल गये। जिस पहाड़ी इलाक़े में धाराशिव है उसका नाम है बालाघाट। इसी के पास हतलादेवी और दस मीलपर तुलजा भवानीदेवी का प्रसिद्ध मन्दिर है। यह भवानी छत्रपति शिवाजी की अभीष्ट देवता रही है। धाराशीव बारसी लाइट रेलवे के एडसी स्टेशन से दस मील और शोलापुर से चावीस मील पर है।

हाँ एक बात शेडम तहसील की भूलता हूँ। इस जगह साँप थे इतने कि रातदिन साँपों में ही रहना पड़ता था। ये काटते तो किसी को नहीं थे किन्तु—

ससर्पे च गृहेवासो,
मृत्युरेव न संशयः।

इस प्रकार सन्देह में रहना भी तो एक मौत ही है। किन्तु रहते रहते कुछ काल में निडर हो गये थे। इस निर्भयता के कारण मैं सर्पों के विषय में सर्वत्र निःशंक रहा हूँ। इस जीवन में लगभग ढाई सौ छोटे

बड़े साँप मारे होंगे। किसी किसी को बिल से खींचकर मारा। पर अब बहुत ग्लानि हो गई है और समझ रहा हूँ कि उन प्राणियों को भी संसार में रहने वा पूर्ण स्वतन्त्रता-पूर्वक विचरने का पूण अधिकार है।

धाराशिव में

तब हमारी कोई छह सात वर्ष की आयु होगी जब कि पिता जी यहाँ बदल कर आ गये। यहीं हम छोटे स्कूल में मरहटी पढ़ते रहे। हमारे दो गुरु थे श्री मास्टर बाबूराव और श्री मास्टर गणपतराव। श्री गणपतराव जी इस लोक में नहीं हैं किन्तु बाबूराव जी अब बड़े अच्छे वकील बन गये हैं। हमारे दो बड़े भाई नारायणराव और भीमराव फर्ग्यूसन कॉलेज पूना की शाखा न्यू इंगलिश स्कूल में भेजे गये। पूने में नारायण पेठ में रा० रा० रंगनाथराव अंकलीकर के वाडे में उन्हीं की संरक्षता में रहते थे। रा० रा० अंकलीकर पिता जी के परम स्नेही थे और इसीलिये वे मकान का भाड़ा नहीं लेते थे। धाराशिव में पिता जी सेकण्ड तालुकेदार के कार्यालय में हेड थे। इन्हीं दिनों पातूर बरार के प्रसिद्ध रईस ठा० गोविंदसिंह जी यहाँ रहते थे। गोविंदसिंह जी के पिता और हमारे पिता का बहुत स्नेह सम्बन्ध था। इसलिये गोविंदसिंह जी भी घरेलू आदमी के से हो गये थे। गोविंदसिंह जी के पिता की मृत्यु के पश्चात् स्वयं गोविंदसिंह जी को इनके पिता जी की मनसबदारी मिली।—हाँ—मैं एक बात भूल गया। मैं स्कूल में मरहटी पढ़ता ही था किन्तु घर पर पिता जी हिन्दी भी सिखलाते थे, क्यों? इसका भेद फिर खुला। इस बात का हमको तनिक भी गन्ध नहीं था, और उस समय हम अधिक समझते भी क्या, कि पिता जी सामाजिक विचार के हो गये हैं। वे अवकाश के समय में स्वा० जी के ग्रन्थों का स्वाध्याय करते देखे गये। गोविंदसिंह जी द्वारा ही इन ग्रन्थों के देखने की प्रेरणा हुई। फिर किसी समय कार्यवश पिता जी उत्तर भारत की ओर आये थे तब कहीं पण्डित लेखराम जी से भेंट हुई और तभी से पिताजी आर्यसामाजिक विचार के हुये। पंजाब से दो एक उर्दू के अखबार आते थे, एक अखबार मेरठ से स्व० डा० रामचन्द्र जी का भी आता था। पिता जी आर्यसमाजी बन गये थे।

हमारी माता कट्टर पुराणमताभिमानिनी थी और घर में सब प्रकार की पूजा-अर्चना और सब रीति रिवाज़ पूर्ण रीति से पालन किये जाते थे। पिता जी भी हृदय से आर्यसमाजी थे किन्तु कभी भी घर के इन कामों में उन्होंने दखल नहीं दिया। हाँ सामाजिक ढंग की संध्या करते हुए तो देखे जाते थे। उस समय सेठ बालाचन्द नामक एक नामी सेठ धारशिव में थे। उनके साथ भी पिता जी का स्नेह सम्बन्ध था। इन सेठ जी के पुत्रों में सेठ नानचन्द मर गये, शेष सेठ नेमचन्द वकील हैं, सेठ मानकचन्द भी मर गये। इनके भतीजे सेठ हीराचन्द भी नामी सेठ हैं, और इन्हीं के भतीजों में सेठ शिवलाल अपनी खेती वाड़ी देखते हैं। इन सबका बड़ा कुनबा है। सेठ हीराचन्द जी के ज्येष्ठ पुत्र सेठ मोतीचन्द विद्याव्यसनी हैं और उन्होंने जैनधर्म का अच्छा अभ्यास किया है। जैनधर्म के विषय की दो एक अच्छी पुस्तकें भी लिखी हैं। पिता जी के घनिष्ठ मिलने वालों में से

रा० रा० रंगनाथराव किरकशे वकील भी थे। कई वर्ष हुए उनका देहावसान हो गया। पिता जी के अत्यन्त मिलने वालोंमें एक मराठे भाऊ शिवराजे नामक सद्गृहस्थ भी चल बसे। भाऊ शिवराजे का सम्बन्ध कोल्हापुर से है। बड़े होने पर जब से मैं उत्तर भारत हो आया हूँ, जहाँ २ पिता जी रहते थे वहाँ २ सब जगह हो आया और मैं भर्तृहरि के श्लोक में यही कह सकता हूँ कि—

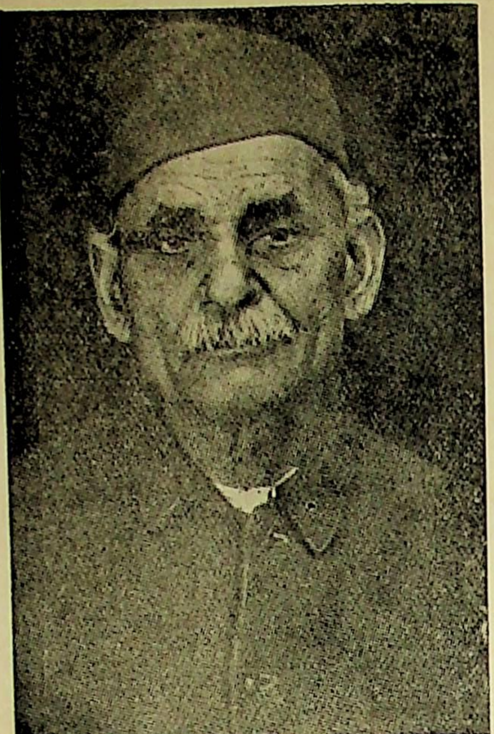
स्थानानि तानि खलु सन्ति,
न ते मनुष्याः।

स्थान तो वे ही हैं पर वे मनुष्य नहीं हैं। मद्रास गया था तब शेडम, गुलबुर्गा, धाराशिव; तुलजापुर, सोलापुर, पूना आदि सभी स्थानों में गया। पर सब कुछ बदला हुआ देखा, दो एक बार गया तो पिताजी के अनन्यभक्त दो एक सेवक मिले। पुरानी बातों को याद कर करके कभी आनन्दाश्रु, कभी दुःखाश्रु बहाने के अतिरिक्त वहाँ क्या था। रावसाहब श्रीनिवासराव के नाम को समस्त हैदराबाद की रियासत जानती है पर वह भौतिक कलेवर न जाने कहाँ गया।—

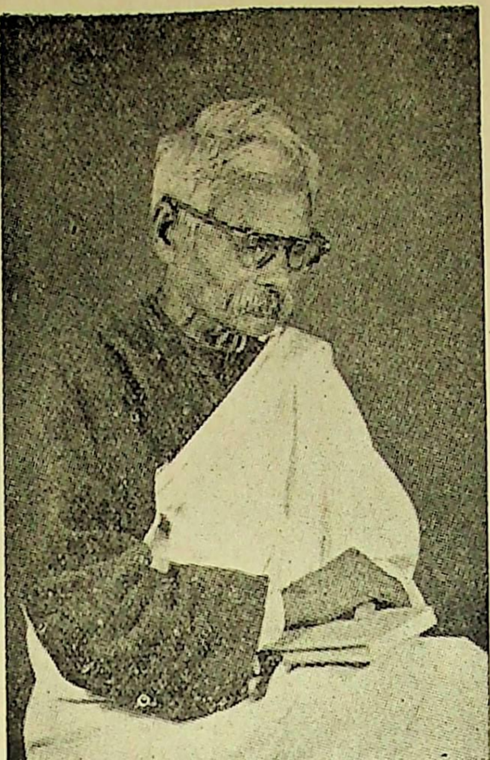
धाराशिव की एक घटना मुझे अच्छी तरह याद है। जब मैं स्कूल में पढ़ता था तो पहिली तारीख को फीस देनी पड़ती थी। श्री गणपतराव मास्टर ने कहा कि कल सबको फीस लानी चाहिये, कल तारीख पहिली है। मैंने पिता जी से कहा तब उन्होंने उत्तर दिया कि जल्दी क्या है, ले जाना। फिर दूसरे दिन मैंने कहा तब नाराज़ होकर बोले कि हम नौकर के हाथ स्वयं भेज देंगे तुम हमसे मत कहो। मैंने मूर्खता से वैसे ही कह दिया कि मास्टर तंग करता है। पिता जी ने मास्टर गणपतराव को बुलाया और कहा कि तुम लड़के को क्यों तंग करते हो। बेचारे मास्टर ने कहा कि मैंने तो लड़के को कुछ भी नहीं कहा। बस फिर क्या था पिता जी ने मुझे खूब पीटा। एक बार घर में कहीं दो पैसे पड़े थे मैंने उठाये और पिता जी के पास देने गया, बस इसी बात पर मार पड़ी कि वहाँ से क्यों उठाये, वहीं पड़े रहने देते। खूब पीटते थे। मैंने तो उपर्युक्त दो अवसरों पर ही मार खायी थी।—पिताजी बहुत ही अतिथिप्रिय व्यक्ति थे। ज़रा भी कोई कहीं का परिचित व्यक्ति मिला कि घर ले आते थे और अच्छा आतिथ्य करते थे। हमारे यहाँ चूल्हा चढ़ा ही रहता था। दो बातें पिताजी में विचित्र देखी गयीं। एक तो उन्होंने कभी भी फोटो नहीं उतरवाया। दूसरी बात यह कि वे कभी भी छाता नहीं लगाते थे। डायरी लिखने का बड़ा शौक था। माताजी की रुग्णावस्था के समय (१६०७) में मैं गया था तब मैंने पचासों डायरियों को पढ़ा था। उन्हीं से मुझे पिताजी के जीवन के बहुत से समाचार ज्ञात हुये थे। पिता जी के पास एक अरबी घोड़ा था वे उससे बहुत प्यार करते थे। बाहर दौरे में उसी पर जाते थे। पिता जी की एक विचित्र बात यह थी कि समाचार-पत्रों में छपे हुये वैद्यों के विज्ञापनों पर बहुत विश्वास रखते थे। दो चार दिन में कोई न कोई पार्सल आ ही जाता था। कोई न कोई पाक, कोई चूर्ण, कोई अवलेह मंगाया जाता था। सालम मिश्री पाक बहुत मँगाया जाता था। इसके अतिरिक्त कुटुम्ब में धाराशिव के प्रसिद्ध वैद्य श्री रावजी वैद्य का उपचार चलता ही रहता था। यदि मंगाई हुई दवाई से लाभ हुआ तो फिर आर्डर जाता था, यदि लाभ न हुआ तो दोष अपना ही बतला कर फिर आर्डर जाता था। प्रायः यह कहते सुना गया कि उस दिन मैंने दही खाई इसी

लिये लाभ नहीं हुआ। दवाई का क्या दोष। उस दिन मैं सोया, धूप में निकला अधिक खा गया, अधिक जल पी गया, इस तरह सब दोष अपने ऊपर लेकर वैद्यों को और उनसे मंगायी हुई औषधियों को निर्दोष बताने में पिता जी सिद्धहस्त थे। मैं भी समस्त भारतवर्ष में फिर आया हूँ किन्तु वैद्यों पर इतना अन्धविश्वास रखने वाला व्यक्ति मैंने आज तक दूसरा नहीं देखा। उनके पैर में छाजन की बीमारी थी, अक्सर दही लगवा कर उस जगह को "गोल्डी" नामक पालतू कुत्ते से चटवा देते थे अथवा जब अवकाश होता तब घण्टों तक किसी मल्हम को लेकर मलते रहते थे। उनसे मज़ेदार बातों व घटनाओं को सुनने का यही अवसर रहता था। वैद्यों के विषयों में अन्धविश्वास की और एक बात सुनिये। माताजी को पुराना गठिया था; बहुत इलाज किये गये, सहस्रों रुपये व्यय किये गये, इर्द-गिर्द का कोई वैद्य, कोई हकीम, कोई डाक्टर नहीं छोड़ा जिसका इलाज न किया गया हो। पूने में तो एक फैमिली डाग्टर भी रक्खा गया था, वह मदरासी था। वह होमियोपेथिक डाक्टर था। प्रति मास तीस चालीस रुपये लेता था और दवाई के दाम उससे पृथक्। एक वार कहीं से एक वैद्य आया। उसने पिता जी को विश्वास दिलाया कि एक मास में माता जी का रोग जाता रहेगा। बस देर क्या थी उपचार शुरू हुआ। ज़रा ख्याल कीजिये माता जी को तूम्बे बांध कर बावड़ी में छोड़ा जाता था और वह जल में तीन तीन घण्टे रहती थीं, तैरती थीं। दिन भर में डेढ़ सौ तक पान के बीड़े खिलाये जाते थे। बेचारी तंग आ गयी थी पर करती क्या। पतिव्रता साध्वी स्त्री चुप चाप वैद्य के इस अत्याचार को सहन करती रही क्योंकि वह पिता जी को कभी नाराज़ नहीं करना चाहती थी। अन्त में इसी कष्ट-परम्परा का यह प्रभाव रहा कि १६०७ में चल बसीं।

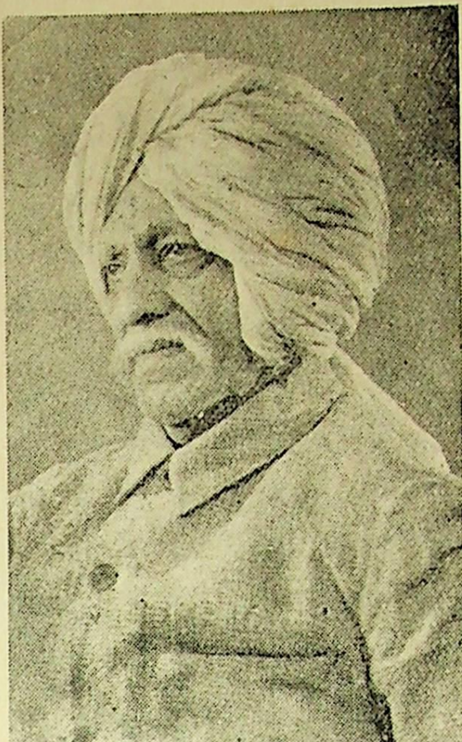
धाराशिव में रहते थे तब पिता जी ने कई मकान बदले। सबसे पहले पत्की के मकान में रहते थे। वहाँ से गणपतराव सुनार के मकान में आये। जब हम लाहोर में पढ़ते थे तब पिता जी कलंब या न जाने किस तहसील में तहसीलदार थे। घर पर माता व बहन के अतिरिक्त कोई न था। इसी मकान में चोरी हो गई और माता जी का कई सहस्र रु० का ज़ेवर चुराया गया। यह निश्चय ही है और पीछे हो गया था कि मकान मालिक सुनार की ही कर्तूत थी। तो भी पिता जी ने कुछ नहीं, कहा। पिता जी को ताज़ी आर्यसमाज की हवा लग गयी थी। सत्यहरिश्चन्द्र के अवतार बन रहे थे। पुलिस ने बहुत कहा कि आप ज़रा कह दीजिये कि मकान मालिक पर सन्देह है, फिर हम देख लेंगे। पर पिता जी यही कहते रहे कि मैंने देखा नहीं मैं कैसे कहूँ। बस किस्सा खतम। जब हमने लाहोर में यह खबर सुनी तब हमको बड़ा क्लेश हुआ। माता जी को बहुत कष्ट हुआ। एक तो उनकी इच्छा के विरुद्ध हम उत्तर भारत भेजे गये थे, दूसरे कर्म-धर्म-संयोग देखिये जब से पिता जी सामाजिक विचार के हो गये थे तभी से, पिता जी ने उत्कोच (रिश्वतादि) से संकोच कर लिया था। तीसरी बात तभी से हम लोग बाहर विद्याध्ययनार्थ भेजे गये थे। माता जी को यह ख्याल बैठ गया कि घर में आर्यसमाज घुस गया इसीलिये बरबादी आ रही है। मृत्यु-समय तक उनकी यही पक्की धारणा रही। हमारी माता ने हम से यह बात बहुत बार कही कि "अब क्या है, अब तो खर्च ही को पूरा नहीं पटता, पहले बड़ी २ आमदनी थी। लोग बड़ी २ भेटें चढ़ाते थे। रुपयों के



स्व० पं० शंकरदत्तशर्मा
(परम सहायक)
मुरादाबाद



नरदेवशास्त्री
(१९५७)



स्व० ठा० गोविन्दसिंह
मनसबदार
(परम सहायक)
पातूर अकोला (बरार)

ढेर आ पड़ते थे।" पिता जी ने जब से सत्य हरिश्चन्द्र का व्रत धारण किया तब से वेतन का आधा भाग औषधोपचार में ही जाता रहा। अस्तु अब इस किस्से को यहीं छोड़ कर चलिये पूने की ओर। हमारा कुनबा दो जगह बँटा था। दो बड़े भाई पूने में पढ़ते थे और शेष हम धाराशिव में रहते थे। पिताजी ने यही उचित समझा कि हम सबको पूने में ही छोड़ा जावे। जब उन्होंने निश्चय किया तब विलम्ब क्यों होता। १८६१ की बात हम सब पूने भेजे गये और रहे जाकर उसी अंकलीकर के वाड़े में। यह अंकलीकर का वाड़ा, गायकवाड़ के वाड़े के पास ही है। अब यह लोक मान्य तिलक का स्थान है। इसी में केसरी मरहटा का कार्यालय है। पूने में हम माता जी की संरक्षता में रहते रहे। इसके अतिरिक्त मकान मालिक रा० अंकलीकर, श्री लोकमान्य तिलक, व फर्ग्यूसन कॉलेज के प्रिन्सिपल गोपाल गणेश आगरकर एम० ए० हमारी देखभाल करते रहते थे। उस्मानाबाद (धाराशिव) और पूने में अन्तर है केवल १४० मील का। किन्तु हमको पूना ऐसा प्रतीत हुआ जैसे विलायत में आगये, माता जी एकाध वर्ष वहाँ हमारे साथ रहीं किन्तु फिर बीमार होकर पिता जी के पास चली गयीं। गर्मियों की छुट्टी में हम धाराशिव में माता जी के पास चले जाते थे। परदेश में आने के पश्चात् एक बार १६०० में और एक बार १६०७ (मृत्यु के समय) केवल दो बार ही माता के दर्शन कर सके। पूने में जाकर अभी कुछ दिन ही हुए थे कि एक घटना हुई जिसको स्मरण करके कभी कभी मन की विचित्र दशा हो जाती है। पिता जी हम सबको लेकर शोलापुर आये थे वहाँ से सेकण्ड का एक डिब्बा रिजर्व करा कर उसमें बैठे और पूने आये, पूने में सब प्रबन्ध कराने के लिये सात आठ दिन तक ठहर गये। हमारा एक बालू नामक पुराना नौकर था उसको भी साथ लाये थे। एक और पुराना नौकर था माधव उसको पिता जी ने अपने पास ही रख लिया। यह माधव बहुत पुराना नौकर था, इतना कि इसने पिता जी को बचपन में खेलता कूदता देखा था। वह जब चाहे पिता जी को धमका दिया करता था। कोई काम उसकी समझ में न आवे तो उसको करने नहीं देता था। बड़ा ईमानदार नौकर था। पिताजी इसकी बात को चुपचाप सुन कर मुस्करा दिया करते थे।

मैं दूसरे नौकर बालू की बात कह रहा था। मेरे जेब खर्च के पैसे इसी के पास रहते थे। इसका काम यह था कि मुझे समय पर स्कूल में पहुंचाना, छुट्टी होते ही ले आना। कभी कभी, जब मैं स्कूल नहीं जाना चाहता था, जबरदस्ती ले जाता था। किन्तु स्कूल पहुँचने में देरी हो जाने पर जब मास्टर पीटने लगता तब यह कह कर छुड़ा लेता कि इसकी तबीयत अच्छी नहीं थी, आज यह था, आज वह था, कह कर मार से बचा देता किन्तु मास्टर तो मास्टर ही ठहरा। इतनी बातचीत के बीच में ही वह दो चार बेंत जमा ही देता था। यह बालू अब हैदराबाद में ठेकेदारी करता है। जब मैं एक बार हैदराबाद गया था तब मिला था। तब उसने मुस्करा कर पूछा था कि कहो वे दिन याद हैं या नहीं। कभी कभी यह भी मेरे कान ऐंठ दिया करता था तब मैं माता जी अथवा बड़े भाइयों से शिकायत कर देता था। तब वे उसको डपट देते थे, पर बालू भी कैसा उस्ताद नौकर! यह कह कर पीछा छुड़ा लेता था कि रास्ते में घोड़ा गाड़ी से बचने को कहता हूँ तो यह नहीं मानता तब खेंचना ही पड़ता है। इस बात को सुन कर माता और भाई उलटे ही मेरे सिर हो जाते थे। ख़ैर मेरे जेब खर्च के पैसे

इसके पास रहते थे इस लिये मुझे यह प्यारा था। एक दिन मेरी इच्छा हुई कि मैं बाज़ार जाकर पेड़े लाऊँ। मैंने बालू से कहा चलो बाज़ार। उसने कहा ठहरो, थोड़ी देर में चलेंगे। मैंने कहा अच्छा चार पैसे तो दो, वह वैसे ही दिन में रोटी खाकर लम्बा पड़ा था, ऊँघ रहा था। उसने सहज स्वभाव से चार पैसे मुझे दे दिये और कहा थोड़ी देर में चलेंगे तुम इधर उधर मत जाना। मैंने उत्तर में 'अच्छा' तो कहा पर दृष्टि बचाकर चुपचाप चल दिया। मकान से बाहर निकल कर मकान का रंग वगैरे देखा जिससे मकान को पहिचानने में सुभीता रहे। मकान का रंग पीला था। सामने ही म्युनिसिपैलिटी की लालटैन लगी थी। ये दो निशान मन में रख कर मैं बाज़ार की ओर चल पड़ा। मकान नम्बर मैंने देखा नहीं, नया ही मकान में आया था, पेंठ का नाम भी मैं नहीं जानता था और न मैंने किसी से पूछा। सीधे बाज़ार चल ही तो दिया। मैंने मन में ठान लिया कि सीधा रास्ता पकड़ूंगा और सीधे ही लौट आऊँगा। इधर उधर कहीं नहीं मुड़ूँगा। पीला मकान है, पास लालटैन है, झट मकान को पहिचान लूंगा। मैं सीधे सीधे बहुत दूर तक गया, बहुत दूर तक जाने पर एक हलवाई की दूकान मिली, छोटे छोटे चार पेड़े लिये, चार पैसे दिये, तीन पेड़े जेब में रक्खे और एक मुंह में दिया और लौटा। मार्ग में क्या देखता हूँ कई पीले मकान मिले, कइयों के सामने लालटेनें थीं, घबरा गया, कभी आगे, कभी पीछे गया पर कुछ पता न चला, निराश होकर दूसरी तरफ आगे बढ़ गया—पहुँचते पहुँचते रास्ते के पेंठ नामक प्रसिद्ध स्थान में पहुँचा। वहाँ भी एक स्कूल था, वहाँ जा बैठा, पेड़े समाप्त होने पर हाऊज से भरपेट पानी पिया। सोचने लगा किधर जाऊँ, क्या करूँ, कैसे करूँ इत्यादि। रोया मैं तनिक नहीं। अपने जीवन में बड़ी २ विपत्तियाँ आ पड़ीं पर मैं कभी रोया नहीं। इष्ट-मित्र बन्धु-बान्धवों के वियोग हुये पर मैंने कभी आंसू ढाले नहीं। मेरे कानों में सोने की बालियां थीं और हाथ में था एक सोनेका कड़ा। पूना उचक्कों और चोरों के लिये भी बदनाम है। इन चोरों और उचक्कों को भामटे कहते हैं। ईश्वर की दया ही थी कि मेरी ओर किसी का ध्यान नहीं गया क्योंकि मैं धृष्टता से फिरता रहा और तनिक भी नहीं रोया। बारह बजे दिन के घर से निकला था, सायंकाल के साढ़े पांच बजे का समय आया। चिन्ता हुई कि रात को कहाँ रहूँगा, क्या होगा। एक रास्ते से लौट रहा था कि सामने से दो पुलिसवालों के साथ मकान मालिक आरहे थे। उन्होंने मुझे देखते ही पकड़ लिया और कहा कि "यही नटखट लड़का है, सारे घर वालों को परेशान कर रक्खा है। सब इधर उधर तलाश में फिर रहे हैं" इत्यादि। मुझसे पूछा कि 'हमको पहिचाना भी'। मैंने कहा 'हाँ'। उन्होंने कहा चलो घर को। उन्होंने मेरे कान देखे, हाथ देखा और कहा जेवर तो सब ठीक हैं, इसके पिता जी से और पता चल जायगा। मैं इनके साथ चुपचाप चल दिया। सबसे पहिले ये मुझे फरासखाने ले गये जहाँ भूले भटके लाकर रक्खे जाते हैं। मुझे वहाँ पुलिस की निगरानी में छोड़ कर रा० अंकलीकर यह कह कर चले गये कि 'मैं तुम्हारे पिता को लेकर आता हूँ घबराना मत'। मैंने कहा अच्छा। फरासखाना क्या था एक प्रकार का सीखचेदार कटघर था, उस कमरे में मुझे बन्द करके पुलिसवाला बाहर बैठ गया। वाचकवृन्द यह मेरी पहिली जेल समझिये। मैं इसमें दो घण्टे अथवा तीन घण्टे बन्द रहा क्योंकि पिताजी

भी कहीं बाहर मेरी तलाश में गये थे। वे लौटे तब रंगनाथराव जी उनको लेकर मेरे पास फरासखाने में आये। पुलिस ने मुझे कहा कि तुम्हारी तलाश में कोई बम्बई गया है, कोई बार्शी की गाड़ी में, कोई पर्वती व कोई चतुःशृङ्गी की ओर, कोई मूलामूठा नदी के संगम की ओर गये हैं। पुलिस के सब नाकों में सूचना दी गयी है इत्यादि। उसने मेरा सब हाल सुना और खिलखिला कर हँस पड़ा। मुझे अब केवल यह चिन्ता थी कि पिता जी मेरी बुरी गत बनायेंगे। क्योंकि बालू नौकर की तो उन्होंने खूब मरम्मत कर डाली थी। पिता जी व रंगनाथराव जी आये, वहाँ कुछ लिखा पढ़ी हुई। पिता जी ने कहा आभूषण ठीक हैं और उस पुलिस को और म्युनिसिपैलिटी के क्लर्क को दो-दो रु० इनाम देकर, मुझे लेकर चल दिये। मार्ग में पिताजी ने कोई बातचीत नहीं की। केवल रंगनाथराव जी ही सब हाल पूछते रहे। बीच में पिता जी बोल उठे "घर चल तेरी मरम्मत करता हूँ"—"व्यर्थ का इतना खर्च उठा, परेशानी अलग रही" इत्यादि। रंगनाथराव जी वयोवृद्ध पुरुष थे उन्होंने पिता जी को धमकाया कि "बच्चा है उसको समझ कहाँ, जो होना था सो होगया, ईश्वर को धन्यवाद दो जीता मिल गया। किसी चोर के हाथ लगता तो बस सदा के लिये गया था"--इस बात को सुन कर पिता जी चुप रहे। पिताजी, रंगनाथराव और मैं घर पहुंचे। माता ने एक ही आक्रोश कर रक्खा था। मुझे देखा तब उसके जी में जी आया। मुझे गोद में बिठा कर बहुत प्यार किया खुशी में घर घर पेड़े बांटे गये, अड़ोसी पड़ोसी तक के घर में भेजे गये। मुझे दुःख केवल उस बालू का रहा जिसको मेरे अपराध के कारण मार खानी पड़ी। किन्तु उस बेचारे ने मुझसे एक शब्द भी नहीं कहा। प्यार ही करता रहा। इस प्रकार पेड़े से प्रारम्भ हुई कथा पेड़ों से ही समाप्त हुई। पर दूसरे ही दिन मेरा प्रायश्चित्त हो गया। पिता जी ने सुनार को बुलवाकर मेरी कान की बालियां और सोने का कड़ा निकलवा डाला और तब से हमारे बालियों से शून्य कर्ण व कङ्कण से शून्य कर वैसे ही विराजमान हैं। इसी समस्त घटना में मुझे घर लौटने की इतनी प्रसन्नता नहीं हुई जितनी कि पिता जी के मार से बचने की। बड़े भाई नारायणराव ने यह कह कर हल्का सा चपत जमा दिया कि "कोई मार डालता और जेवर निकाल लेता तो"। इसका उत्तर मैं उस समय क्या देता। इस समय मैं यही उत्तर दे सकता हूँ कि "फिर उत्तराखण्ड कौन आता और जन्मपत्री की बात कैसे पूरी उतरती ?"

धाराशिव अर्थात् उस्मानाबाद में मैं मरहटी तीसरी श्रेणी में पढ़ता था। इसके अतिरिक्त श्री लक्ष्मण घनश्याम करंदीकर मुझे अङ्गरेजी पढ़ाते रहते थे। पूने में आकर मैं म्युनिसिपैलिटी के स्कूल नं० ३ तीसरी क्लास में ही भरती हो गया। उस समय इसी क्लास में और इसी स्कूल में लोकमान्य तिलक का ज्येष्ठ पुत्र विश्वनाथ पढ़ता था। वह हमारे क्लास में फर्स्ट रहता था और एक पारितोषिक वितरण समारम्भ में सबके सब इनाम यही ले गया था। इस स्कूल में एक वर्ष रहकर फिर मैं नूतन मराठी विद्यालय की चतुर्थ क्लास में भर्ती हुआ। अब यह स्कूल न्यू पूना कॉलेज नाम से प्रसिद्ध है। इसी वर्ष हमारा मौञ्जी-बन्धन (जनेऊ) संस्कार बड़ी धूमधाम से हुआ। दक्षिण भारत में मौञ्जी-बन्धन संस्कार बड़े धूम से मनाये जाते हैं। इसमें लगभग एक सहस्र रु० से अधिक व्यय हुआ। मेरी झोली में साढ़े तीन सौ से अधिक रु० आये। हमारे गुरु थे श्री कृष्णाचार्य। इस संस्कार के पश्चात् वे बराबर

एक मास तक घर आकर "केशवाय नमः, 'गोविन्दाय नमः',नारायणाय नमः" इत्यादि सब सन्ध्याविधि सिखलाते रहे । अब तो उस सन्ध्या का स्थान 'शन्नोदेवीरभिष्टये' ने ले लिया है। उस विधि में पचासों आचमन करने पड़ते थे, इस विधि में तीन आचमनों से ही छुटकारा है। वह भी करो करो, न करो न करो, कोई पूछने वाला नहीं । मैं जब उस समय की अपनी आकृति पर दृष्टि डालता हूँ तो एक प्राचीनतम समय का दृश्य सामने आता है। लंगोटी, कमण्डलु, यज्ञोपवीत, मृगचर्म, दण्ड एक ठाठ था। मुझे क्या पता था कि हमारे जीवन का उत्तम से उत्तम भाग इसी प्रकार के ब्रह्मचारियों की शिक्षा दीक्षा में व्यतीत होगा। आयु का उत्तम भाग प्राचीन रीति की शिक्षा प्रणाली में जायगा, जिसमें से उसी टाईप के ब्रह्मचारी निकलने चाहिये थें, पर अनुभव बतला रहा है कि राष्ट्रीय शासन के बिना राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धार, पूर्णोद्धार, सागोंपाँग उद्धार नहीं हो सकता। कर्म धर्म संयोग से गुरुकुल सिकन्दराबाद, गुरुकुल फर्रुखाबाद (जो वृन्दावन गुरुकुल में परिणत हुआ), गुरुकुल काँगड़ी गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के संगठन, नियमन व संचालन में हमारा भी हाथ रहा ही है।

पूने में

हम पूने में १८९१ से १८९४ तक रहे। यह तो मानना ही पड़ेगा और मानना क्या पड़ेगा कि मन पर पुण्यभूमि की परिस्थितियों का विशेष प्रभाव पड़ा। यहीं सार्वजनिक जीवन का बीजारोपण हुआ। जहाँ लोकमान्य तिलक, श्री गोपालकृष्ण गोखले, श्री धारप, श्री पाटनकर, श्री नामजोशी, श्री आपटे, श्री गोले जैसे महानुभावों के दर्शन मिलते हों, जहाँ महात्मा रानडे की सौम्य मूर्त्ति को देखकर सात्त्विकभावों का उद्रेक होता हो, जहाँ इनके तथा अन्य महाराष्ट्रीय विद्वानों के भाषण व विचार सुनने के अवसर नित्यप्रति मिलते हों, जहाँ श्री परांजपे, प्रो० भानु, श्री भोपटकर, श्री केलकर, श्री जिनसीवाले जैसे तात्त्विक लेखकों के लेखों व गम्भीर विवेचनाओं द्वारा कोई न कोई ज्ञान-सामग्री मिलती रहती हो, जो पुण्यभूमि बम्बई प्रान्त का बड़ा शिक्षा केन्द्र है, जो मरहटा और पेशवाओं की क्रीड़ाभूमि रह चुकी है, उस पुण्यभूमि का प्रभाव न पड़ता तो और किसका पड़ता। इन चार वर्षों में हमने नूतन मराठी विद्यालय में मरहटी का समस्त कोर्स अर्थात् छह श्रेणियाँ और चतुर्थ क्लास तक इंगलिश-शिक्षा समाप्त की। पहले इस विद्यालय के हेडमास्टर थे श्री कुलकर्णी, इनके पश्चात् हेडमास्टर हुये श्री हरि नारायण आपटे बी० ए०। ये सुपरिण्टेण्डेण्ट कहलाये जाते थे। श्री आपटे महाराष्ट्र के प्रसिद्ध कादम्बरीकार थे। आपकी 'उषःकाल' 'पण लक्षांत कोण घेतो' (लेकिन कौन सुनता है) 'हे जग असे आहे' (यह संसार ऐसा है) इत्यादि कादम्बरियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। कुलकर्णी जी 'करमणूक' नामक एक मनोरंजक साप्ताहिक के संपादक थे। श्री हरि नारायण आपटे के बड़े भ्राता ने अन्तिम समय में संन्यास लिया था। आपने संस्कृत साहित्य के उद्धारार्थ सवा लक्ष रु० छोड़ा था। उसी से आनन्द-आश्रम संस्था स्थापित हुई थी। इस संस्था ने अनेक विलुप्त ग्रन्थों का उद्धार किया है। अब भारतवर्ष में आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थमाला का नाम प्रसिद्ध है। नूतन मराठी विद्यालय में प्रतिवर्ष ग्रीष्मावकाश के पूर्व रसपान समारम्भ होता था, जिसमें अध्यापकवृन्द विद्यालय के समस्त छात्रों को

रसपान कराया करते थे। सभा होती थी और उपदेशप्रद एक लघुपुस्तिका प्रत्येक छात्र को मिलती थी। एक घटना मुझे अच्छी तरह याद है कि एक बार डेक्कन कालेज पूना के प्रिन्सिपल सेल्बी हमारा विद्यालय देखने के लिये आये थे और श्री कुलकर्णी जी उनको प्रत्येक क्लास में लेजा कर दिखलाते थे। इनके आने के उपलक्ष में उस दिन विद्यालय में आधे दिन की छुट्टी हुई थी। मरहटी विभाग के हेड मास्टर थे श्री सिनकर जो महाराष्ट्र भाषा के प्रवीण पण्डित थे। हमारे गुरुओं में इनके अतिरिक्त श्री बापट, श्री कानिटकर इन दो का नाम उल्लेख योग्य है। श्री बापट मेरे लेख से बहुत संतुष्ट रहते थे। श्री कानिटकर इंगलिश मास्टर थे। गुरु-पूर्णिमा के दिन इस विद्यालय में प्राचीन ढंग की ही पूजा होती थी और विद्यार्थी अपने गुरुजनों को जो चाहे भेंट कर सकता था। मैं नूतन मराठी विद्यालय में पढ़ता था किन्तु सायंकाल के समय पूने के प्रसिद्ध रईस श्री नातू के मन्दिर में गायन सीखने जाया करता था। पूने में उस समय यह प्रथा थी कि प्रत्येक प्रसिद्ध मन्दिर में मन्दिर के स्वामी की ओर से एक अच्छा गायक रहता था। उसका यह कर्त्तव्य था कि वह सायंकाल को जितने भी बालक एकत्रित हों उन सबको सा-रे-ग-म-प-ध-नी-सा की शिक्षा देता था। अब तो उस गायन के संस्कार मात्र शेष हैं। पूने में प्रतिवर्ष बसन्तव्याख्यानमाला हुआ करती थी जहाँ भाषण सुनने को मिलते थे। एक और सभा थी, अब भी है, वक्तृत्त्वोत्तेजक सभा। इसमें वक्तृत्वकला में प्रोत्साहन दिलाया जाता है। जो अच्छा वक्ता होता है उसको पारितोषिक मिलता है। इसमें श्रोताओं को एक आना टिकट लेना पड़ता था। चार आने का भी टिकट था। इसी सभा में 'समुद्र यात्रा के लिये प्रायश्चित्त' विषय पर वक्तृताएँ हुईं थीं। महात्मा रानडे, महामना गोखले, व लोकमान्य तिलक ने भी अपने विचार प्रकट किये थे। श्री रानडे व गोखले ने कहा कि प्रायश्चित्त निरर्थक है। श्री तिलक ने विवेचन किया कि विदेश जाकर कोई कितना ही परहेज रक्खे, संसर्ग-दोष से बच नहीं सकता, इसीलिये संसर्ग-दोष का प्रायाश्चित्त होना चाहिये। लोकमान्य तिलक लोक-संग्रही व्यक्ति थे इसलिये जनता को साथ लेकर चलने में निपुण थे। जब आप विलायत गये थे तब लौटने पर आपने प्रायश्चित्त करा लिया था। एक बार मैंने एक जैनी महाशय की बरात में उन लोगों के हाथ का एक लड्डू खा लिया था तो हमारे मण्डल में खलबली मच गई थी। पिताजी तक रिपोर्ट गई किन्तु पिता जी ने यह कहकर टाल दिया कि बच्चा है उसको भूख लगी थी, खा लिया। मैं गोमूत्रादि सेवन के प्रायश्चित्त से बच गया। माता को बड़ा गुस्सा था पर वह भी कुछ नहीं बोली। केवल सौम्य रूप से इतना कहा कि 'बेटा आगे ऐसा मत करना, ब्राह्मण जैनियों के हाथ का छुआ नहीं खाते"। ऊपर बड़े आदमियों का जिक्र करते हुये मैं एक बात भूल गया। बड़े भाई नारायणराव जी के साथ प्रतिदिन भाँबुर्डा की ओर भ्रमणार्थ जाया करता था। उधर से श्री प्रो० भण्डारकर भी टहलने आते थे। वहीं उनके दिव्य दर्शन हो जाते थे। भाई ने मुझसे कहा था कि संस्कृत में जिस 'मार्गोपदेशिका' को पढ़ते हो उसके निर्माता यही हैं। पूना में नाटक कम्पनियों की धूम रहती थी। किर्लोस्कर मण्डली, ललितकलादर्श मण्डली और मुझे सब मण्डलियों का नाम याद नहीं, इन सबके गद्य और पद्य नाटक हुआ करते थे। पिता जी की ओर से नाटक देखने की छुट्टी थी। मैंने संगीत सौभद्र, शाकुन्तल, अभिमन्युवध, वत्सला-हरण, मुद्राराक्षस, घटोत्कच, दुर्योधनवध, द्रौपदी-वस्त्रहरण, शापसंभ्रम, मृच्छकटिक, सुदामा आदि अनेक नाटक कई कई बार देखे। हमारे एक दूर के

सम्बन्धी श्री बाला साहेब भी प्रायः मुझे अपने साथ ले जाया करते थे। ये फौज में यूरोपियनों को अश्वारोहण-कला सिखाया करते थे। मैंने स्त्री नाटक मण्डली की 'मार-कूट कर वैद्य' और रासलीला भी देखी थी। इसके अतिरिक्त गद्य नाटकों में शेक्सपियर के नाटकों (जो मरहटी ग्रन्थकारों ने मरहटी में अपने ढंगपर रचे थे) में हैमलेट, अथेलो, (झूंझारराव) त्राटिका, सगलाच घोटाला (कामेडी ऑफ एरर्स) इत्यादि नाटक देखे थे। यदि नाटकों में अधिक नग्न अश्लीलता न होतो नाटक एक शिक्षाप्रद व पथ-प्रदर्शक वस्तु है। पारसी कम्पनी के 'अलीबाबा और चालीस चोर' आदि नाटक भी देखे। छत्रे कम्पनी की सरकस भी देखी। इस छत्रे कम्पनी के मालिक के एक सम्बन्धी जिनकी सर्कस है, देहरादून में सर्कस लेकर आये थे तब मिले थे। पूने में हरिकीर्त्तन की सुन्दर प्रथा है जिसमें पुराण, रामायण, महाभारत के कथानक संकीर्तन रूप में होते रहते हैं। इनमें सामाजिक, धार्मिक, नैतिक जीवन पर प्रकाश पड़ता रहता है। यह संकीर्त्तन की प्रथा महाराष्ट्र में ही है। मैं माता जी के साथ इन संकीर्तनों में जाया करता था। यहाँ भी बिना पढ़े ही पुराण, रामायण, महाभारत की सुन्दर सुन्दर शिक्षायें मिलती रहती हैं। इसके अतिरिक्त हमारे कुलदेवता विष्णु के मन्दिर में भी कथा सुनने जाया करता था। इन सब के मन पर संस्कार पड़े ही थे। जिन थियेटरों में नाटक देखने जाते थे उनमें से एक थियेटर का नाम अब भी याद है। उसका नाम था आर्यभूषण नाटकगृह। मैंने पहले कहा है कि राजनैतिक दोनों दल नरम व गरम, यहीं से चले। सामाजिक दो दल भी कट्टर और सुधारक यहीं से चले। सुधारक पक्ष के समाचार पत्र का नाम 'ज्ञानप्रकाश' और कट्टर मत का पत्र 'केसरी' ये दोनों अब भी चल रहे हैं। एक बार पूने में एक छोटी लड़की का विवाह एक बूढ़े अमीर व्यक्ति के साथ हुआ। इस बात की हँसी उड़ाने के लिये सुधारक पक्ष के लोगों ने एक छोटी गधी के साथ बड़े गधे का विवाह रचा। इस तमाशे को देखने के लिये हज़ारों मनुष्य गये, बड़ी भारी भीड़ थी। दोनों पक्षों में खूब खेंचातानी व ऐंचातानी रहती थी। इस विषय में तो लाहोर अथवा पंजाब में, महात्मा और कल्चर्ड पार्टी का जो हाल रहा है, वही हाल वहाँ समझिये। मैं अपने स्कूल में, नूतन मराठी विद्यालय में, क्लास में कभी पहले नम्बर व कभी दूसरे नम्बर पर रहता था। एक दूसरा लड़का मल्हारराव भी बड़ा तीव्रबुद्धि छात्र था। हम दोनों गणित में एक दूसरे से बढ़कर थे। एक वार एक गणित का प्रश्न मुझसे नहीं सुलझा। मैंने मल्हार से कहा भाई देखो तो सही यह मामला कहाँ अटक गया है, उसने देखने से इन्कार कर दिया। इसी बात पर मुझे क्रोध आया और मैंने इसकी कॉपी फाड़कर दो टुकड़े करके फेंक दिये। मामला मास्टर तक पहुँचा। दोनों को अपराधी देखकर मास्टर ने दोनों के कान खेंच डाले। कभी कभी यह बात याद आती है तो उस समय की मूर्खता पर दुःख होता है। महाराष्ट्र कवि स्व० श्री फडके मेरे सहाध्यायी भी थे। एक बार खेल में बापूराव (जो मुझे तंग किया करता था) नामक एक साथी को मैंने खूब पीटा, और स्वयं ही जाकर शिकायत की जिससे मास्टर साहब ने भी उसके कई तमाचे जमाये। पीछे हम दोनों में सुलह हुई। मैं गणित में प्रवीण था, सौ नम्बरों में से ९६,९७ तक नम्बर ले जाता था। अन्य विषयों में कम नम्बर आते थे, सो सबकी कसर गणित में व संस्कृत में निकाल लेता था। मुझे कई वार पारितोषिक मिले थे। पारितोषिक में दो पुस्तकों का नाम याद है। एक "हरि आणि त्र्यम्बक" और दूसरी "मराठी पंचतंत्र" ये दोनों नीतिग्रन्थ हैं और छात्रों के काम की पुस्तकें हैं। उत्तरभारत में बैठकर जब पूने की याद करते

हैं तो वह पर्वती, वह चतुःशृङ्गी, वह गणेशखिण्ड वह खड़की, वह फर्ग्यूसन कालेज, वह विश्राम बाग, वह डेक्कन कॉलेज, वह मूला और मूठा नदी का संगम, वह बंडगार्डन,वह बुधवार का बाड़ा (पेशवाओं का किला), वह नाना फड़नवीस वाड़ा, वह भावे स्कूल, वह रेमार्केट, वह रामबाग, वह तुलसीबाग, वह पूना जिमखाना, वह यरवदा, वह कबूतरखाना, (न्यू इंगलिस स्कूल के छात्रों का विस्तृत क्रीड़ाङ्गण) वह गायकवाड का वाड़ा (लो० तिलक का स्थान), वह बेलबाग, किस किस की बात कहूँ। चित्रपट की भान्ति आँखों के सामने से निकलते व आते जाते हैं। पूने में मुझे क्रिकेट का बड़ा शौक चढ़ा था। जहाँ जहाँ भी मैच होते थे वे सब क्रीड़ास्थल मैं जब दक्षिण गया था, देख आया हूँ। कई बार बम्बई गया था तथा नाटकों में शाकुन्तल, सौभद्र आदि देख आया हूँ। एक वार सब जगह हो आया हूँ जहाँ-जहाँ कि मैं बाल्यावस्था में था और यही कहते बनता है कि—

स्थानानि तानि खलु सन्ति, न ते मनुष्याः

हम इधर पूने में थे और उधर उस्मानाबाद में हमारी शिक्षा दीक्षा के लिये नयी स्कीम पक रही थी। वहाँ ठा० गोविंदसिंह जी के परामर्श से हमको लाहोर डी० ए० वी० कॉलेज में भरती कराने का आयोजन हो रहा था। यह हमको विदित हो गया था कि हमारी माता इस स्कीम का घोर विरोध कर रही है। यह भी विदित हो गया था कि बम्बई के किसी बैंक में दस सहस्र रुपया जमा कर दिया गया है उसके सूद से लाहोर में हमारे पठन-पाठन का प्रबन्ध होगा और कभी आवश्यकता पड़े तो ऊपर से और भेजा जाया करेगा। मैं तो कह ही चुका हूँ कि हमारा जीवन एक विपत्ति-परम्परा का जीवन रहा है, एक संघर्ष का जीवन रहा है, अब जीवन का काँटा फिरने को ही है, रेल दूसरी पटरी पर जाने को ही है। मैं लिख चुका हूँ कि मैं अत्यन्त क्रोधी व हठी लड़का था, इसमें सबको हरा देता था। जब जिस वस्तु को मांगा लेकर छोड़ी। भोजन में भी किसी वस्तु की कमी पड़ी और न मिली तो थाली छोड़ कर चल देता था। माता को लाहोर की स्कीम का पता था पर उसने हमारे सामने कभी भी जिक्र नहीं किया। कभी २ मेरे हठ व क्रोध को देख कर कह दिया करती थी कि "हिमालय की तरफ जाओगे तो सब क्रोध व हठ भूल जाओगे।" सत्यवादिनी माता का कथन अक्षरशः सत्य निकला। अब मैंने क्रोध व हठ सर्वथा वश में कर रक्खे हैं। एक वार पूने में न जाने किस मामले में मैंने हठ किया और दादी सरस्वतीबाई ने मुझे खूब मारा। मैने उनसे कहा कि अब मैं इस घर में नहीं रहूँगा। मैंने जाने के लिये अपनी वस्तुएँ संभालीं। दादी बहुत मनाती रही मैंने नहीं माना। हमारे मास्टर तुकाराम जीवन दीक्षित वहीं थे, उन्होंने दादी से कहा कि यह झूठी धमकी दे रहा है, जाने दो जहाँ जाता है। मैं बालकृष्ण नामक एक अपने साथी के यहाँ चला गया आर वहीं कई घण्टे रहा। मेरे भाई नारायणराव गये और मुझे घसीट कर ले आये।

भगवती भवितव्यता के खेल देखिये। हम ऋग्वेदी ब्राह्मण, गोत्र हमारा श्रीवत्स, शाखा हमारी आश्वलायन। हमारे पूर्वजों के पूर्वजों से ही हमारे वंश में निज़ाम रियासत की नौकरी चली आरही है। इस कुल में मैं अकेला ही भिक्षुक बन कर अपनी शाखा के ग्रन्थ व अपना वेद पढ़ सका।

हमारा संप्रदाय माध्वसंप्रदाय जो कट्टर द्वैतवादी वैष्णव संप्रदाय है। एक वार जब मैं मामा व्यंकटराव से गदग (धारवाड़) में मिलने गया था तब उन्होंने माध्वभाष्य की एक प्रति दी थी और मुझे अच्छी तरह समझा दिया था—समझा क्या दिया था धमका दिया था कि मैं कभी भी अद्वैतवादियों के फन्दे में न फंसू। हमारे पिता जी आर्यसमाजिक विचार के थे इसलिये हमारे संप्रदाय में तप्तमुद्रा लगाने की जो प्रथा है उससे हम बचे रहे।—हमारे लाहोर चलने से पूर्व ही हमारी भगिनी सुन्दराबाई का विवाह हो गया था। वह विवाह घर पर न होकर तिरुपति (मद्रास) जहाँ हमारे अभीष्ट कुल-देवता का प्रसिद्ध मन्दिर है, वहाँ हुआ था। उभयपक्ष के लोग वहीं गये और वहीं सब विधि-विधान हुआ। विवाह के पूर्व रंगराव जी (हमारे जीजा) हमारी बहन को देखने आये थे। साथ आनागुंदी राज्य के हमारे रामराव मामा जी भी थे। रंगराव जी ने बहन की परीक्षा ली और प्रसन्न हुये। तिथि निश्चित हुई और नियत तिथि पर सब काम तिरुपति मन्दिर में निर्विघ्न समाप्त हुये। पितृकुल और मातृकुल के सब लोग वहाँ अधिक संख्या में एकत्रित हुये थे। हमारी बहन सुन्दराबाई (पतिकुल का नाम रमाबाई) मराठी छह श्रेणी तक पढ़ चुकी थी, कसीदे के काम में निपुण थी इसलिये रंगराव जी प्रसन्न हुये। इस विवाह के पश्चात् ही हम लाहोर की ओर रवाना हुये फिर मैं बारह वर्ष पश्चात उस्मानाबाद में सुन्दराबाई से मिल सका।—विधि का विधान और क्या कहें।

चलिये लाहोर को

१८६४ नवम्बर का अन्तिम सप्ताह, तारीख याद नहीं, उस्मानाबाद से बम्बई रवाना हुये। बड़े भाई भीमराव, मैं, छोटा भाई व्यंकटराव, पिता जी व ठा० गोविंदसिंह इस प्रकार पाँच व्यक्ति चल दिये। घर से वियोग के समय हमारी और पुत्रवियोग से हमारी माता की दशा देखने योग्य थी। अब भी कभी वह दृश्य सामने आ जाता है तो जी भर आता है। बेचारी माता को कल्पना ही नहीं थी कि लाहोर कितनी दूर है। जी कड़ा करके चल दिये, माता छूटी, घर छूटा, गांव छूटा, हतलादेवी का पहाड़ पीछे रह गया, बार्सी जंकशन भी आया और गया, पूने का स्टेशन भी आया और पीछे छूट गया। अब हमारे लिये नया मार्ग था—बम्बई पहुंचे, चार दिन रहे। आर्यसमाज में पिता जी व ठाकुर गोविंद सिंह के भाषण हुये। सब ने पिता जी की प्रशंसा की कि लड़कों को अच्छी जगह भेज रहे हैं। यहीं हमारे भगिनीपति रंगराव के भाई मुरली मनोहरराव आ मिले। ये भी लाहोर हमारे साथ रहने के लिये आये थे। यहां से अजमेर पहुँचे। मार्ग में सूरत, भडौच, बड़ौदा, अहमदाबाद, पंचमहल, आबू आदि स्टेशन आये थे। वहाँ अजमेर डी० ए० वी० स्कूल के हेडमास्टर बा० कन्हैयालाल बी० ए० ने अपना स्कूल दिखलाया। मास्टर वजीरचन्द जी (महात्मा पार्टी के स्तम्भ) उस समय वहीं रहते थे। उन्होंने जब सुना कि लड़के लाहोर जा रहे हैं तब पिता जी को लाहोर की 'मांसपार्टी' का विस्तृत वर्णन सुनाया। डी० ए० वी० कॉलेज मांसपार्टी का है यह सुन कर पिता जी घबरा गये और हम सबको वापस घर ले जाने की ठान चुके थे। यदि हम उस समय घर वापस जाते अथवा लाहोर न जाते तो न जाने आज हम क्या होते किन्तु जन्मपत्री पूरी होनी थी। ठा० गोविंदसिंह जी ने पिता जी को समझाया कि अब इतनी दूर आये हैं, लाहोर चल कर अपनी

आँखों सब दशा देखेंगे फिर सोचेंगे। अब इस समय लौटोगे तो लोक हँसी होगी। पिता जी लाहोर की ओर चल दिये, साथ हम भी। जयपुर, फुलेरा, हिसार, फिरोजपुर, रायविंड होकर लाहोर पहुँचे। मार्ग में २ दिन जयपुर भी ठहरे थे। इतनी बड़ी यात्रा और उत्तरोत्तर शीतप्रधान प्रदेश, तबीयत घबरा गई। हम लाहोर क्या आये दूसरी विलायत आये। पंजाब तो गर्मी और सर्दी दोनों के लिये प्रसिद्ध है। छोटे थे तब भूगोल में पढ़ा था कि Punjab the hottest and coldest part of India पंजाब भारतवर्ष का सबसे अधिक उष्ण व सबसे अधिक शीत प्रदेश है। इसका अनुभव हमको लाहोर व पंजाब में मिला। हम १८९४ नवम्बर मास के अन्तिम सप्ताह में लाहोर पहुँचे थे और पंजाब से निकले जून २६ सन् १९०० को। जालंधर से सीधे हरिद्वार आये थे। इसी को यू० पी० में प्रथम प्रवेश समझिये। तब से जो यहाँ आये अभी तक यहीं हैं आज ३३ वर्ष होने आये। पहले पंजाब की कथा सुनिये—

लाहोर में
१८९४—१८९८

लाहोर को भी पंजाब का पूना ही समझना चाहिये। पूना भी शिक्षा केन्द्र है और लाहोर भी। वहाँ भी दो दल काम कर रहे थे यहाँ भी दो दल थे जो कल्चर्ड और महात्मा नाम से प्रसिद्ध थे। एक के प्रमुख महात्मा मुन्शीराम तो दूसरे के नेता महात्मा हंसराज माने जाते थे। एक पक्ष के हाथ में डी० ए० वी० कॉलेज था तो दूसरे पक्ष के हाथ में आर्य प्रतिनिधि थी। वच्छोवाली सेक्शन महात्मा पार्टी का था और अनारकली समाज डी० ए० वी० कॉलेज वालों का। दोनों विभागों के महोत्सव, नगरकीर्त्तन समारोह नवम्बर में ही एक ही तारीख को होते हैं। हम जब पहुँचे तब भी हो रहे थे। आज कल भी वही हाल है। स्टेशन पर दोनों दलों के स्वयं सेवक खड़े थे। प्रश्न यह हुआ कि किधर जाना चाहिये। बहुत ननु नच के पश्चात् पिता जी ने वच्छोवाली समाज में जाने का निश्चय किया। वहाँ पहुंचे, उत्सव में सम्मिलित हुये, दोनों ओर के समारोह देखे—महात्मा मुन्शीराम, पं० भीमसेन शर्मा इटावा-निवासी आदि के वहाँ दर्शन हुये। कॉलेज वालों के उत्सव में लाला लाजपत राय व महात्मा हंसराज के व्याख्यान सुने। दोनों ओर अच्छा जमघट था। हमको तो वच्छोवाली की अपेक्षा अनारकली समाज का महोत्सव अधिक शानदार प्रतीत हुआ। वच्छोवाली में उत्साह था, सब कुछ था पर अनारकली में रुपये अधिक थे। वच्छोवाली में मास्टर आत्माराम व पण्डित लेखराम जी के भी व्याख्यान हुये थे। महोत्सवों के धूम-धड़ाके के पश्चात पिता जी और ठा० गोविंदसिंह जी ने न जाने किस किस से क्या क्या बातें कीं कुछ पता नहीं। तारीख २ दिसम्बर १८९४ को हम आर्य विद्यार्थी आश्रम में लाये गये। मास्टर तोलाराम आश्रम के सुपरिण्टेण्डेण्ट थे। उनसे बातचीत होने के पश्चात् हम बोर्डिंग में प्रविष्ट किये गये। पिता जी व ठाकुर साहब ५-६ दिन रह कर वापस देश चले गये। स्टेशन तक हम भी गये थे। गाड़ी उधर छूटी और हम बोर्डिंग में वापस आये। चार वर्ष लाहोर में वही देखा जो प्रायः समाजों में हुआ करता है और अब भी

हो रहा है। दयानन्द हाई स्कूल में हमारे नाम लिखे गये। और डी० ए० वी० स्कूल जिसमें प्रविष्ट होने के लिये चले थे उसकी बात चीत ही जाती रही। उस समय उस दयानन्द हाई स्कूल के हेड मास्टर थे श्री मास्टर दुर्गाप्रसाद जी जो स्वामी थे विराजानन्द प्रेस के। मास्टर दुर्गाप्रसाद "हार्बिंजर ऑफ हेल्थ" के भी सम्पादक थे। आपने पचासों ट्रैक्ट और कई पुस्तकें अंग्रेज़ी में लिखी हैं। इसी स्कूल में मास्टर लम्बूराम बी० ए०, मास्टर कर्मचन्द बी० ए०, मास्टर बनवारी लाल बी० ए० आदि थे। इसी स्कूल से १८६६ में हमने मिडिल पास किया। फिर इस स्कूल की हीन दशा हुई इसलिये हम सरदार दयालसिंह मजीठिया के 'यूनियन एकैडेमी' नामक स्कूल में प्रविष्ट हुये। यह स्कूल अब सरदार दयाल सिंह कॉलेज के नाम से प्रसिद्ध है। लाहोर की प्रसिद्ध संस्था 'ट्रिव्यून प्रेस व समाचार पत्र' इन्हीं सरदार साहब की सम्पत्ति अथवा ट्रस्ट का सुन्दर फल है। इस एकैडेमी के प्रथम रेक्टर थे श्री नन्दलाल सेन एम० ए०। ये कट्टर ब्रह्मसमाजी थे। श्री बैनर्जी एम० ए०, श्री सेन एम० ए०, श्री बी० घोष बी० ए० आदि सभी अध्यापक बंगाली थे। प्रथम रेक्टर के चले जाने के पश्चात् श्री रजनीकान्त मुकर्जी एम० ए० हमारे हेडमास्टर हुये। अब ये पंजाब गवर्नमेन्ट में बड़े उच्च पद पर हैं। श्री घोष पंजाब युनिवर्सिटी में हैं। इस स्कूल में दो वर्ष पढ़े। नाइन्थ क्लास में फर्स्ट आने के कारण मुझे "निल डिस्पेरैण्डम्" तथा अन्य कई वस्तुएँ पारितोषिक रूप में मिली थीं। पारितोषिक समारम्भ श्री प्रतुलचन्द्र चटर्जी जज चीफ कोर्ट के हस्त से हुआ था। सन् १८६८ में हम एण्ट्रेन्स पास हुये। इस वर्ष हम बहुत बीमार रहे थे फिर भी परीक्षा में बैठ गये और परमेश्वर की कृपा से समुत्तीर्ण हुये। यह १८६८ का वर्ष हमारे लिये बड़ा विपत्ति का वर्ष रहा। उधर देश में ठाकुर गोविंद सिंह व पिता जी में किसी बात पर मनोमालिन्य हो गया, इधर बम्बई में बैंक फेल हुआ और रुपयों का आना बन्द हो गया। घर में बड़ी भारी चोरी हो गई। परिणाम यह हुआ कि पिता जी ने सबको वापस बुला लिया। मुरलीमनोहरराव बीमार होकर पहिले ही चले गये थे। बन्धु भीमराव व चि० व्यंकटराव भी चले गये। अब मैं अकेला रहा और रहा मेरे साथ मेरा प्रारब्ध! उस समय मुझे यही कहते बना कि —

' नमस्तत्कर्मभ्यो,
विधिरपि न येभ्यः प्रभवति '

उन कर्मों को नमस्कार जिन पर विधि का भी कुछ बस नहीं
स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः

सुख दुःख में किसी का क्या दोष ? वह तो कर्मों का ही खेल है, संसार अपने कर्मसूत्र में ही बँधा है।—

ऐसे समय में घबराहट का होना स्वाभाविक बात थी। मास्टर तोलाराम हमारे सुपरिण्टेण्डेण्ट दयालु पुरुष थे, उन्होंने ढाढस बँधाया। पिताजी बहुत नाराज़ रहे कि मैं वापस क्यों नहीं आया। किन्तु जब मेरी दृढ़ता देखी तब चुप रह गये। हमारे ताऊ हणमन्तराव जी को जब मेरी दशा का

पता चला तब उन्होंने भी पत्र लिखा व सहायता भी भेजी। ताऊ जी से सहायता लेने की बात जब पिता जी जान गये तब उनको कष्ट हुआ। इस बात का अनुभव करके मैंने फिर ताऊ जी को कभी नहीं लिखा।—इस प्रकरण को यहीं छोड़ कर वहाँ की सामाजिक स्थिति के विषय में कुछ लिखना आवश्यक है। मैं ऊपर कह चुका हूँ कि वहाँ दो पार्टियां थीं, दो ही स्कूल थे, दो ही बोर्डिङ्ग, दो ही समाचार पत्र एक पार्टी की "आर्यपत्रिका" (महात्मा पार्टी की) और दूसरी पार्टी का "आर्यमेसेंजर"। आर्यपत्रिका के सम्पादक थे बाबा अर्जुन सिंह और मेसेंजर के सम्पादक थे उनके बड़े भाई बाबा छज्जूसिंह। सारांश कौरव और पाण्डवों की तरह कोई सम्बन्धी इधर तो कोई उधर थे। श्री रामदास भल्ला महात्मा पार्टी में तो महात्मा हंसराज उधर की पार्टी में। ये ही रामदास भल्ला फिर रामदेव बी० ए० बन गये। फिर पहुँचते २ गुरुकुल के आचार्य तक हो गये। लाला तोलाराम महात्मा पार्टी में थे और इनके भाञ्जे ला० गोवर्द्धनदास कल्चर्ड पार्टी में। दोनों पार्टियों में खूब नोक झोंक रहती थी। यहाँ तक कि कभी २ डी० ए० बी० स्कूल बोर्डिङ्ग हाऊस के लड़के आर्य विद्यार्थी आश्रम के बोर्डरों से झगड़ बैठते थे। एक बार दोनों ओर के छात्रों में बहुत बड़ा झगड़ा होने लगा था किन्तु भक्त रेमलदास जी (जो थोड़े दिनों के लिये हमारे सुपरिण्टेण्डेण्ट होकर आये थे) की बुद्धिमत्ता से झगड़ा टला, नहीं तो बड़ी खून खराबी हो जाती। १८९६ में मार्च की छह तारीख को लेखराम आर्य मुसाफिर की किसी क्रूर यवन ने हत्या की थी। उस दिन स्मशान यात्रा में दोनों दल के लोग सहस्रों की संख्या में एकत्रित हो गये थे। प्रेत को अग्नि देने के पूर्व महात्मा हंसराज, महात्मा मुन्शीराम, चौ० रामभजदत्त आदि के स्मशान में व्याख्यान हुए थे। श्री मुन्शीराम जी ने यहाँ तक कह डाला था कि यदि दोनों दल नहीं मिलेंगे तो वे समाज का कार्य नहीं करेंगे। इसके पश्चात् ही रविवार के दिन दोनों पक्ष के लोग वच्छोवाली समाज के अधिवेशन में सम्मिलत हुए। महात्मा मुन्शीराम, महात्मा हंसराज, मास्टर सुन्दरलाल बी० ए०; मास्टर आत्माराम अमृतसरी, चौ० रामभजदत्त, ला० लाजपतराय इनके व्याख्यान हुये। महात्मा हंसराज ने—

'अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि'

इस मन्त्र पर सुन्दर भावपूर्ण सरमन धर्मोपदेश दिया। लाला लाजपतराय ने कहा "आज वच्छोवाली समाज के प्लेटफॉर्म पर मेरा खड़ा होना ही बतला रहा है कि क्या इनकलाब होने वाला है"—मास्टर सुन्दरलाल ने "गर राम फिर यहाँ पै तशरीफ लावें, हिमालय से लंका तक आँखें उठायें" इस गीत को गाया और अत्यन्त आवेशपूर्ण भाषण दिया। मास्टर आत्माराम अमृतसरी ने कहा कि अबतक दोनों दल आपस में तीर चला कर युद्ध-विद्या को सीखते रहे थे, अब दोनों एक हो गये हैं और देखेंगे कि विपक्षी जन हमारा मुकाबला कैसे करते हैं" चौ० रामभजदत्त जी का भी आवेशपूर्ण भाषण हुआ। महात्मा मुन्शीराम शान्त व गम्भीर भाव से बोले। और कौन-कौन बोले याद नहीं। जब यहसुना गया कि दोनों समाज एक हो गईं और महात्मा हंसराज प्रधान व लाला तोलाराम मन्त्री बनाये गये तब हर्षध्वनि व करतलध्वनि की बात मत पूछिये। डी० ए० बी० स्कूल कम्पाउण्ड में दोनों दलों की सम्मिलित विराट सभा हुई जिसमें लेखराम मेमोरियल फण्ड के लिये अपील की गई थी। म० हंसराज

ने पाँच रुपये दिये उस पर करतल ध्वनि हुई। इस सभा में दस सहस्र जनता एकत्रित थी। यह मेल एक वर्ष तक रहा, भीतर ही भीतर कुछ अलग अलग खिचड़ी पकती गई, फिर अलग हुये फिर दो समाजें लगने लगीं, फिर वही झगड़े, फिर वही नोंक झोंक। अब तो गुरुकुल पार्टी के पास एक बड़ा गुरुकुल है। डी० ए० बी० कॉलेज मैनेजिंग सोसाइटी के आधीन भी कई कॉलेज हैं। कॉलेज वालों ने अपनी प्रतिनिधि सभा अलग बना ली है जिसका नाम आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब सिन्ध बलुचिस्तान है। अब भी सब काम पार्टी लाइन पर हो रहा है। अब पार्टियों के पुराने नाम नहीं हैं। कॉलेज विभाग व गुरुकुल विभाग नाम से सर्वत्र सभाओं में काम चलता है। सब प्रतिनिधियों के ऊपर भारतवर्ष की सार्वदेशिक सभा भी बन गई है पर उसमें कॉलेज वालों को संमिलित नहीं किया गया है, इससे स्पष्ट है कि भेद-भाव नहीं गया और न जायगा। भेद केवल इतना ही हो गया है कि कभी-कभी किसी किसी मामले में जिसमें दोनों दलों के मिलकर कार्य करने में हानि नहीं समझी जाती, मिलकर कार्य कर लेते हैं। मथुरा की दयानन्द शताब्दी इसी प्रकार का संमिलित समारोह था। देहली की प्रथम आर्य कांग्रेस भी सम्मिलित रूप में हुई। महात्मा हंसराज इसके सभापति थे। द्वितीय आर्य कांग्रेस में जो बरेली में हुई थी कॉलेज वालों ने कोई भाग नहीं लिया। पंजाब वालों ने भी कोई भाग नहीं लिया। महर्षि स्वा० दयानन्द के पश्चात् कुछ काल तक आर्यसमाज एक ही था। फिर डी० ए० बी० कॉलेज के कारण पक्ष–विपक्ष होकर महात्मा व कल्चर्ड दल बने। फिर महात्मा दल में, गुरुकुल दल में ही दो विभाग होकर राय रलाराम और राय ठाकुरदत्त धवन आदि का गुरुकुल पृथक् गुजरान वाले में रहा, और गुरुकुल काँगड़ी महात्मा मुन्शीराम के हाथ में रहा। इसके संचालन में भी मतभेद होकर श्री आचार्य स्वा० शुद्धबोध तीर्थ जी (गुरुकुल काँगड़ी के प्रथमाचार्य) गुरुकुल में पांच वर्ष काम करके चले आये। श्री पं० भीमसेन जी साहित्याचार्य, श्री पं० पद्मसिंह शर्मा, इन पंक्तियों का लेखक, श्री पं० विनायक गणेश साठे एम० ए०, श्री सियाराम एम० ए० (पश्चात् योगीराज सियाराम नाम से प्रसिद्ध), श्री पं० यज्ञेश्वर जी ज्योतिषी आदि सभी चले आये। श्री स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी (उस समय के पं० गंगादत्त शास्त्री) महाविद्यालय ज्वालापुर के आचार्य बने, श्री पं० भीमसेन जी मुख्याध्यापक रहे, श्री पं० पद्मसिंह शर्मा "भारतोदय" के संपादक हुये और लेखक को व्यवस्थापक पद दिया गया। तब से अब तक दोनों ओर क्या क्या हुआ और कैसे कैसे परिवर्तन हुये आर्य जगत् जानता है। श्री महात्मा मुन्शीराम जी, स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी, स्वा० दर्शनानन्द जी, श्री पं० भीमसेन जी साहित्याचार्य, श्री पं० पद्मसिंह जी शर्मा, प्रो० रामदेव जी आज इस लोक में नहीं हैं। गुरुकुल काँगड़ी भी अपना स्थान छोड़कर महाविद्यालय ज्वालापुर के पास ही आगया है और अपने विशुद्ध सात्त्विक शरीर को छोड़कर राजसी बाने में दिखाई दे रहा है। महाविद्यालय ज्वालापुर भी अपने विशुद्ध सात्त्विक रूप से किसी अन्य मिश्रित रूप में जा रहा है। हम लिख रहे थे लाहौर की बात, जा पहुँचे कहीं के कहीं। पूने की परिस्थिति का वह प्रभाव, लाहोर की परिस्थिति का यह प्रभाव, हमको तो एक नई दुनियाँ दिखलाई पड़ने लगी। हेड मास्टर श्री रजनीकान्त मुकर्जी मुझ पर बड़ी कृपा दृष्टि रखते थे। उनका एक सिफारशी पत्र लेकर मैं महात्मा हंसराज जी के पास पहुंचा। इसमें लिखा था कि इसकी फीस मॉफ की जावे। महात्मा जी ने उत्तर दिया कि 'अच्छा मैं सोचूँगा, फिर आकर मिलियें" मैं चला आया और

फिर कभी भी मिलने नहीं गया । सीधे जाकर युइंग ख्रिश्चन कालेज के प्रिन्सिपल वेल्टी से मिला, श्री मुकर्जी का पत्र दिखलाया । उन्होंने वायदा किया कि कालेज में दाखल कर लेंगे, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई । पर इस कार्य में भी आगे बाधा पड़ी और कालेज का विचार छोड़ देना पड़ा । यही सोच लिया कि जब मौका लगेगा तब प्राइवेट रूप में एफ० ए० आदि की परीक्षा देते रहेंगे । मैंने विचार किया कि प्राइवेट रूप में एफ० ए० करके मेडिकल कालेज में दाखल होंगे । परन्तु गाड़ी को काँटेवाला फिर दूसरी लाईन पर ले जाने वाला था इसलिये यह स्कीम भी फेल हुई । कई पंजाबी अफ्रीका जाने वाले थे । उन्होंने कहा चलो अफ्रीका चलें, वहीं से धनोपार्जन कर लायेंगे । केवल स०वा सौ रुपये की आवश्यकता थी । शालीनता के कारण मैं किसी से मांग नहीं सकता था । मुँह खोलकर बात किये बिना, कुछ कहे बिना कोई किसी के दुःख-दर्द को न जानता है और न समझ पाता है । इधर पिता जी से भी कहने लायक नहीं रहा था क्योंकि उनकी आज्ञानुसार देश वापस नहीं गया था, वे क्रुद्ध थे । इसी सोच विचार में रहा कि क्या करूँ । मास्टर तोलाराम जी के घर पर रहता रहा । मुझे बड़ा दुःख रहा कि मेरे अन्य साथी कालेज में प्रविष्ट हो गये और मैं पिछड़ गया । मेरे साथी जब मिलते और पूछते क्या हो रहा है, क्या कर रहे हो तब क्या उत्तर देता । मैं धीरे से यही उत्तर देता कि अभी कुछ समझ में नहीं आ रहा है, कुछ सोचा नहीं है । ऐसे मानसिक कष्ट के दिन जीवन भर में कभी नहीं देखे । सम्बन्धियों से दूर, पास इष्ट मित्र कोई नहीं, एक पैसा भी पास नहीं, जिधर जाते हैं उधर कोई काम नहीं बनता, चहुं ओर निराशा, चहुँ ओर अन्धकार क्या किया जावे । मैंने पहले लिखा है कि मुझे पारितोषिक में 'निल डिसपरैण्डम्' (Nil Despairandum) (निराश मत होओ) नामक पुस्तक मिली थी । खाली बैठे मैंने उस पुस्तक को कई वार पढ़ा और मेरा मन कहने लगा कि निराश होकर दुःखी मत बनो, कोई न कोई मार्ग निकल आयगा । एक दिन सहज स्वभाव से ला० जीवनदास जी प्रधान आर्य समाज (वच्छोवाली विभाग) मिले उन्होंने कहा कि क्या सोच रहे हो । यहाँ से सीधे जालन्धर जाकर महात्मा मुन्शीराम से मिलो व मशवरा करो । वे तुम्हें अच्छा मार्ग बतलायेंगे । मास्टर तोलाराम जी से पूछकर मैं जालन्धर गया मुन्शीराम जी से मिला । अपने सब विचार सुनाये । मेरी बातों को शान्ति-पूर्वक सुनकर मुन्शीराम बोले 'लड़के बहुत चिन्ता नहीं किया करते, चलो मेरे साथ मैं प्रबन्ध करता हूँ' महात्मा मुन्शीराम जी के मकान के सामने ही एक आश्रम था जिसका नाम वैदिक आश्रम था । वहाँ मुझे ले गये और वहाँ एक भव्य मूर्त्ति पण्डित बैठे थे उनसे कहा कि 'पं० जी आपके लिये एक चतुर शिष्य लाये हैं, इसको अपनी सेवा में रखिये" इतना कहकर चले गये । तब से १८६८ जून से श्री पं० गंगादत्त शास्त्री जी के पास क्या रहा वह तो एक जन्मभर का किस्सा हो गया । कुछ दिन जालन्धर रहा, पीछे यह आश्रम गुजरानवाले चला गया । वहाँ आश्रम के अधिष्ठाता राय रलाराम (परमनण्ट रेलवे इनस्पेक्टर) थे । इन्हीं दिनों गुरुकुल की स्कीम बनी । इन्हीं दिनों महात्मा मुन्शीराम जी ने गुरुकुल के लिये तीस सहस्र रु० की प्रतिज्ञा की । इन्हीं दिनों श्री रलाराम जी ने अंगरेजी में गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली पर सुन्दर पुस्तक लिखी, श्री सत्यार्थी जी (राय ठाकुरदत्त धवन) ने भी अपनी लेखमाला प्रारंभ की । किन्तु महात्मा मुन्शीराम व ला० रलाराम व राय ठाकुरदत्त धवन इनमें मतभेद गुरुकुल के स्थान सम्बन्ध में था । वे चाहते थे गुरुकुल गुजरानवाले में रहे । म० मुन्शीराम व आचार्य गंगादत्त जी

हरिद्वार की सोच रहे थे। कर्म-धर्म संयोग से ला० अमनसिंह नजीबाबादी ने गुरुकुल के लिये काँगड़ी ग्राम दान में दे दिया और हरद्वार का पक्ष अत्यन्त प्रबल हुआ। लाहोर में पक्ष-विपक्ष भी देखे और जी ऊब गया। जब मैंने आचार्य गंगादत्त जी से सुना कि वे गुजरानवाला छोड़ रहे हैं और यू० पी० जा रहे हैं तब मुझे भी प्रसन्नता हुई और जून २६-१६०० को हम जालंधर आये और जून २६ को हरद्वार पहुँचे। तब से हरिद्वार से हम चिपटे हैं और हरद्वार हमसे चिपटा है। पहिली वार गंगा भागीरथी के दर्शन हुये, रम्यतम प्रदेश देखने को मिला। संयुक्त प्रान्त मेरा दूसरा घर बन गया। हम आये और भारामल के बगीचे में ठहरे। जैसे पंजाब में आने पर पूने की याद आती थी अथवा पूने में आने के पश्चात् घर की याद आती थी इसी प्रकार हरद्वार में आते ही पंजाब की बातें बारबार याद आने लगीं। 'इधर सन्तों के अखाड़े में आपड़े, अब पंजाब की वह चहल पहल देखने को कहाँ मिलेगी, वे साथी कहां मिलेंगे' इत्यादि विचार आते रहे। अब आर्य विद्यार्थी आश्रम के विषय में दो शब्द लिखकर हम इस पंजाब प्रकरण को समाप्त करेंगे। फिर पंजाब की बात तब करेंगे जब १६०३ में डिप्लोमा (शास्त्री परीक्षा) लेने पंजाब जायेंगे।

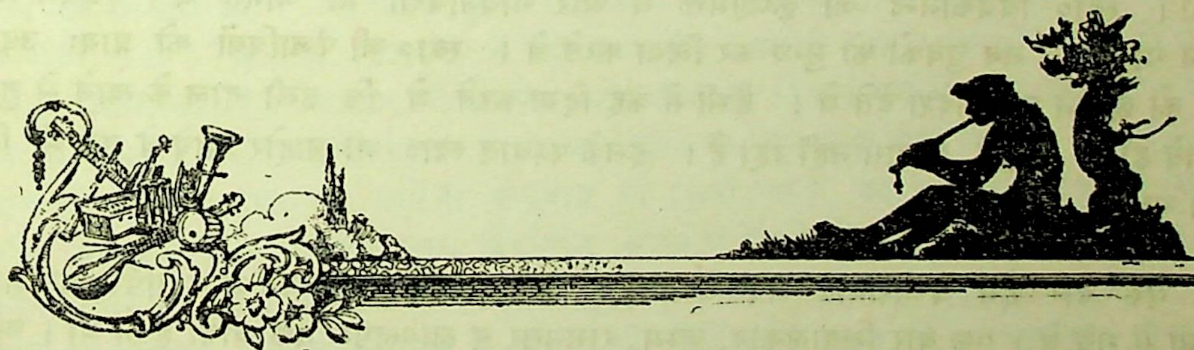
आर्य विद्यार्थी आश्रम लाहोर में पंजाब के प्रत्येक ज़िले के छात्र रहा करते थे। उनमें केवल हम ही दक्षिण के छात्र थे और एक मदरास के दीनदयालसिंह नामक छात्र थे। उस समय के छात्र अब पंजाब तथा अन्यप्रान्तों में बड़े बड़े ओहदों पर हैं। उस समय के छात्र ला० ज्ञानचन्द सी. पी. में इंजीनियर हैं। आज के हाईकोर्ट के जज जस्टिस जियालाल तब एट्रन्स में पढ़ते थे। स्व० डा० धर्मवीर तब नवनिधिराय थे। मैं एक वार शिमले गया था तो बहुत से उस समय के बोर्डर मिले थे। १६०३ में जब लाहोर गया था तब स्कूल के पुराने साथी भी अपने बी० ए० आदि का डिप्लोमा लेने गये थे। प्रायः सभी मिले और बड़ा आनन्द रहा। उनमें से हरिश्चन्द्र बी० ए० आज इस लोक में नहीं हैं। झंग मधियाने के गुरुदित्ताराम वकील भी इस लोक में नहीं हैं। बहुत से ओवरसियर हैं, बहुत से डॉक्टर। प्रकाश के सम्पादक कृष्ण उस समय ताज़े बी० ए० हुये थे। श्री विश्वम्भरनाथ जी हमारे ही बोर्डिंग में रहते थे। एक कर्मचन्द्र भल्ला थे न जाने कहाँ हैं। हम इस आर्य विद्यार्थी आश्रम में चार वर्ष रहे। पं० रामभजदत्त जी बी०ए० ने भी एल० एल० बी० की परीक्षा की तैयारी के ४-५ मास इसी आश्रम में व्यतीत किये थे। नहटोर बिजनौर के बहुत से छात्र उस समय वहीं थे। श्री शिताबसिंह, श्री भगवन्तसिंह, श्री बलबन्तसिंह अपनी ज़मींदारी करते हैं। अक्सर मिलते रहते हैं। डॉ कल्याणसिंह एक वार मिले। शिताबसिंह मर गये। श्री पं० पद्मसिंह शर्मा साहित्याचार्य व पं० चिरंजीलाल शर्मा (ज्येष्ठ पुत्र श्री पं० जीवाराम शर्मा ताजपुरनिवासी) उस समय इसी बोर्डिङ्ग में रहते थे। दो वर्ष रहकर वे यू० पी० लौट गये। ये लाहोर के ओरियण्टल कॉलेज में विशारद में पढ़ते थे। जब मैं जालन्धर गया था तब मुझे मालूम हुआ कि पं० पद्मसिंह जी शर्मा आचार्य गङ्गादत्त जी शास्त्री के पास भी पढ़ गये हैं। फिर शर्मा जी मुझे यू०पी० में ही मिले। इनके विषय में आगे विस्तृत रूप में आयगा। पंजाब के संस्कृत के साथियों में श्री पं० विष्णुमित्र जी का नाम उल्लेखयोग्य है। नूरमहल के पं० दीनानाथ यू० पी० में भी हमारे साथ रह चुके हैं। नरवर (राजघाट) के श्री० पं० जीवनदत्त जी शर्मा पंजाब व यू० पी० में हमारे सहाध्यायी रहे हैं। यू० पी० के सहाध्यायियों की बात यू० पी० प्रकरण में लिखेंगे। रायकोट के पं० नन्दलाल व्यास

गुजराती और पं० भानुदत्त वैद्य का नाम भी उल्लेखयोग्य है। मालेर कोटले के एक पं० कृष्णदत्त थे वे इस लोक में नहीं हैं। हुशियारपुर ज़िले के एक फौजी पेन्शनर साहबासिंह थे, अब न जाने कहाँ है। इन्होंने अपना नाम विश्वामित्र रख लिया था। एक पं० सर्यू दत्त थे, एक जैनियों के पूज्य (साधु) थे। संसार के किस कोने में हैं पता नहीं। हमारे स्मृति-पटलों में कहाँ दबे पड़े हैं ज्ञात नहीं। रेवाड़ी की ओर के ला० ठाकुरदास, अम्बाले के ला० शंकरलाल (कनिष्ठ भ्राता राय मक्खनलाल इंजिनियर) ला० मेहरचन्द इंजिनियर आदि सब विद्यार्थी आश्रम में थे। मेहरचन्द जी इन्दोर रियासत में इंजिनियर हैं, ला० ठाकुरदास सहारनपुर में व्यापार करते हैं। ला० कश्मीरीलाल और ला० कल्लूमल का पता नहीं। इतने काल में सैकड़ों से संयोग वियोग हुआ। कोई याद भी रक्खे तो किस किस के नाम याद रक्खे।:—

स्मृतिविषयतां तेऽपि गमिताः।

यही कथन यथार्थ प्रतीत होता है—

सर्वं यस्यवशादगात स्मृतिपथं,
कालाय तस्मै नमः॥



आर्य विद्यार्थी आश्रम

आर्य विद्यार्थी आश्रम में कभी २ कोई बड़ा आदमी आवे तो व्याख्यान कराने की प्रथा थी। पं० लेखराम, म० मुन्शीराम प्रायः आते रहते थे। हम जब इस आश्रम में थे तब लाहोर में कीकरसिंह और गुलाम की प्रसिद्ध कुश्ती हुई थी। प्रतिवर्ष हम सब वसन्त पंचमी के अवसर पर हकीकतराय के मेले में भी जाते थे। हमारे मित्र विश्वम्भरनाथ जी के साथ मैं एक वार लुधियाना समाज के उत्सव पर गया था। उत्सव के अवसर पर पं० लेखराम जी के तीव्र उदर शूल उठा तो भी आश्चर्य की बात कि उन्होंने उसी दशा में तीन घण्टे तक व्याख्यान दिया। एक वार गर्मियों की छुट्टियों में हमने भागसू (धर्मशाला) की यात्रा की। साथ मास्टर तोलाराम जी भी गये थे। उस समय वहाँ रामकृष्ण परमहंस के प्रसिद्ध प्रमुख शिष्य स्वा० विवेकानन्द जी बख्शी सोहनलाल वकील के यहाँ टिके हुये थे। एक मास तक वहीं रहे। प्रतिदिन पर्वत-भ्रमण के लिये निकलते और स्वा० जी की अमरीका सम्बन्धी लच्छेदार बातें सुनते थे। इनके साथ एक अमरीकन लक्षपति व उसकी स्त्री भी थी। स्वा० विवेकानन्द जी कृष्णभक्त थे और गायनविद्या भी जानते थे। अपने भक्तिरस प्रधान गान से वे नव युवको को मुग्ध कर लिया करते थे। स्वा० जी पंजाबियों को प्रायः उड़द की दाल को छोड़ने का उपदेश देते थे। हँसी में कह दिया करते थे कि इसी दाल के खाने से तुम बैल हो गये हो। तुम्हारे दिमाग नहीं रहा है। इसके पश्चात् स्वा० जी लाहोर आये थे तब भी मिलना हुआ था।—

एक वार हम वजीराबाद गये थे। एक वार गुरुदासपुर के जिले में बड़ापिंड, बटाला आदि स्थानों में गये थे। एक वार सियालकोट, जम्मू, रामनगर व लायलपुर तक धावा हुआ था। अमृतसर तो कई वार गये। सिक्खों का सुवर्ण मन्दिर देखना ही इस यात्रा का हेतु था।—यह विद्यार्थी आश्रम पहले रैटिगन के बंगले के पास की कोठी में था। फिर उसी के पीछे की लाइन में एक सिक्ख सरदार की बड़ी कोठी में चला गया था। बीच में ३-४ मास के लिये जब मास्टर तोलाराम छुट्टी पर गये थे तब भक्त रेमलदास जी आश्रम के निरीक्षक बनकर आगये थे। ये ही पहले डी० ए० वी० स्कूल बोर्डिङ्ग के सुपरिण्टेण्डेण्ट थे। भक्त रेमल व पण्डित दौलतराम जी वैसे तो डी० ए० वी० स्कूल में पढ़ाते थे किन्तु महात्मा पार्टी के थे। प्रायः इन दोनों के सरमन (धर्मोपदेश) आर्यसमाज वच्छोवाली में हुआ करते थे। पंडित दौलतराम जी कथा के लिये प्रसिद्ध हो गये थे। आप प्रतिदिन प्रातः रावी नदी की ओर जाया करते थे। आप गुरुकुल कांगड़ी में भी कुछ काल रहे। फिर अनूपशहर

की ओर चले गये और उन्होंने उधर ही संन्यास लिया। आप श्री अच्युतस्वामी नाम से प्रसिद्ध हुए हैं और पहुँचे हुये योगी समझे जाते रहे हैं। अनूपशहर में आपका अपना दिव्य आश्रम था।

लाहोर के दो अन्य व्यक्तियों का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है। एक राय पैंडाराम एक्स्ट्रा असिस्टेंएट कमिश्नर, दूसरे राय ठाकुरदत्त धवन। ये दोनों भाई अपनी दिनचर्या में अत्यन्त नियमित रहते थे। घड़ी के कांटे के साथ सब काम हुआ करते थे। व्यायाम तो इनका कभी चूकता ही नहीं था। आर्य विद्यार्थी आश्रम में डंबेल की प्रथा इन्होंने ही चलाई थी। दोनों महात्मा पार्टी के स्तम्भ थे। राय पैंडाराम चुपचाप काम करते थे और राय ठाकुरदत्त धवन सत्यार्थी नाम से आर्य-पत्रिका में खूब लिखते थे। बाबा अर्जुनसिंह के पश्चात् श्री कृष्ण बी० ए० आर्य पत्रिका के सम्पादक बने। भेरे (पंजाब) के शिवदयाल एम० ए० में भी महात्मा पार्टी के प्रमुख समझे जाते थे। श्री रामदेव जी को हमने पहले सेण्ट्रल मॉडेल स्कूल के मैदान में देखा था। हम भी मैच देखने पहुँचे थे और ये भी। बड़े चुलबुले स्वभाव के प्रतीत हुए। इनकी बैठे २ टाँग हिलाने की आदत अन्त तक रही। हमारे मित्र विश्वम्भरनाथ जी का भी वह अक्खड़पन अब भी चलता रहा। लाहोर में जिस प्रकार आर्यसमाज के दो विभागों में संघर्ष चलता रहता था, इसी प्रकार सनातनधर्मी व आर्य-समाजियों में भी खूब रगड़ा-रगड़ी रहती थी। इधर वच्छोवाली के आर्य-समाज में पं० लेखराम जी का व्याख्यान हुआ नहीं कि उधर व्याख्यानवाचस्पति पं० दीनदयाल जी के व्याख्यान का ऐलान हो जाता था। दोनों के व्याख्यानों में बड़ी भीड़ रहती थी। एक बार श्री मुन्शीराम जी व पं० गोपीनाथ जी कश्मीरी में ला० मथुरादास पुरी के हिन्दू-होटल के विस्तृत प्राङ्गण में 'वेद और ब्राह्मण' विषय पर कई दिन तक शास्त्रार्थ रहा। श्री गोविंदपुर के स्व० डा० चिरंजीव भारद्वाज भी आर्यविद्यार्थी आश्रम के एक बोर्डरों में थे। ये आर्य विरादरी के संस्थापक थे। इनकी कृपा से पचासों नवयुवकों ने सिर और मूंछे मुंडवा ली थीं। डाक्टर जी भी फिर बडोदे रियासत में चले गये थे। इन्होंने और मास्टर आत्माराम राज्यरत्न जी ने बड़ोदे राज्य में अन्त्यजोद्धार का बहुत बड़ा कार्य किया। डा० चिरंजीव भारद्वाज ने सत्यार्थप्रकाश का अंग्रेजी अनुवाद भी किया था। यह बात माननी पड़ेगी कि डा० चिरंजीव भारद्वाज जैसे उत्साही पुरुष वर्तमान समय में देखने को नहीं मिल रहे हैं। उस समय स्वर्गीय डा० धर्मवीर जी इसी आश्रम में रहते थे। उस समय इनका नाम नवनिधिराय था। लाला हरदयाल जी बी० ए० (लाला रलाराम के पुत्र) भी बोर्डिङ्ग में रहते थे। आजकल पंजाब के शिक्षा विभाग में हैं। लाला बजीरचन्द, बी० ए,० एल् ० एल् ० वकील (हरदयाल जी के बड़े भ्राता) रावलपिण्डी में वकील हैं, कभी २ मिलते रहते हैं। ज्ञानचन्द जी (इनके छोटे भ्राता) तब से अब तक कभी नहीं मिले—चौ० रामभजदत्त जी का लड़का वीरसेन जो पहले गुरुकुल कांगड़ी में हमारे पास पढ़ता था, दो बार मिला है। वह कहीं पुलिस डिपार्टमेंट में हैं। श्री चौधरी रामभज दत्त जी का देहावसान मसूरी में हुआ था तब अर्थी हरद्वार ही लाई गई थी। उसी दिन मैं हैदराबाद से वापस लौट कर आया था और मेरे नाम मसूरी से तार आया कि ब्रह्मचारियों को लेकर हरद्वार पहुंचो। हम स्मशान यात्रा में सम्मिलित हो सके थे। श्री चौधरी रामभजदत्त जी व श्रीमती सरलादेवी जी

महाविद्यालय में भी कई वार आई थीं। श्री राय ठाकुरदत्त धवन भी महाविद्यालय के महोत्सव में और वैसे कई वार महाविद्यालय में आये थे। आज उस महात्मा पार्टी के स्तम्भ महात्मा मुन्शीराम, राय पैडाराम, राय ठाकुरदत्त धवन, मा० आत्माराम, राय रलाराम, चौ० रामभजदत्त, स्वा० दर्शनानन्द, मास्टर वज़ीरचन्द्र, पं० पूर्णानन्द, स्वा० योगेन्द्रपाल, पं० लेखराम, लाला जीवनदास, लाला खुशीराम जी, इस लोक में नहीं हैं। लाला खुशीराम जी अपनी पश्चिम अवस्था में देहरादून रहे और शान्त रीति से अपना जीवन व्यतीत करते रहे। देहरादून की खुशीराम लायब्रेरी आपकी अमूल्य स्मृति है। लुधियाने के प्रधान मास्टर उमरावसिंह जी भी देहरे में आ बसे थे और महादेवी कन्या पाठशाला में संस्कृताध्यापक थे।

इसी वर्ष (१६३२) हृदयक्रिया बन्द होने से आपका देहावसान हुआ। जेल में ही हमको यह समाचार मिल गया था। मास्टर तोलाराम जी कई वार गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव में, दो एक वार विद्यालय में और एक वार देहली में मिले थे। १६२६ में लाहोर कांग्रेस के अवसर पर मैं लाहोर गया था किन्तु मुझे अन्यत्र एक अभियोग में आवश्यक कार्य था इसलिये आपसे मिल न सका। कांग्रेस में लाला गोवर्द्धनदास तो मिले थे। हमारे पुराने मेलियों में डा० सत्यपाल प्रायः कांग्रेस में मिलते रहे हैं। पं० विश्वम्भरनाथ, प्रो० रामदेव, श्री महाशय कृष्ण यू० पी० में मिलते ही रहे हैं। हाँ रावलपिंडी के कविराज सीतारामशास्त्री जी उत्साही कार्यकर्त्ता थे। आपने उन दिनों सामाजिक प्रचार में जितना भाग लिया व जितना प्रशंसनीय उद्योग किया वह भूलने की बात नहीं है। आप प्रायः महाविद्यालय के महोत्सव में आते रहे थे। मास्टर आत्माराम जी ने महाविद्यालय की प्रारम्भिक स्थिति में बहुत योग दिया। प्रायः कहीं न कहीं यू० पी० में अथवा बम्बई में मिलते ही रहते थे। महाविद्यालय के महोत्सवों के अवसर पर आपके दिये गये करारे व्याख्यानों को जनता अब भी याद करती है। अमृतसर के चौ० जयकृष्ण जी को कोई कैसे भुलावें। आप तो महाविद्यालय के प्राणसंचार करने वालों में एक रहे हैं। आपका समस्त कुटुम्ब ही महाविद्यालय का सहायक व रक्षक रहा है।

संयुक्त प्रान्त में

हरिद्वार आने की बात मैं पहले ही लिख चुका हूँ। यहाँ आकर कनखल में भारामल के बगीचे में ठहरे। यहीं पं० काशीराम वजीराबादी, पं० गंगादत्त शास्त्री जी से मिले। यह गंगा पार कांगड़ी में गुरुकुल के लिये झोपड़ियां बँधवा रहे थे, यहाँ कुछ दिन रह कर पं० गंगादत्त जी सिकन्दराबाद रवाना हुये। हम भी साथ गये। वहाँ उन दिनों में बहुत बीमारी थी। गुरुकुल में (जो कि आर्य-समाज में संस्थापित प्रथम गुरुकुल है) पचासों छात्र बीमार थे। स्वा० दर्शनानन्द जी भी बीमार थे। हमारे पंडितजी भी जाकर बीमार हो गये। एक मास में सीधे हुये और बेलोन (आचार्य पं० गंगादत्त जी शास्त्री की जन्म भूमि) चले गये। साथ मैं; श्रीधर (आचार्य जी का भतीजा) दीपचन्द (बेलोन के पं० शालीग्राम जी का भाञ्जा) थे। जब हमने पंजाब छोड़ा था तब पं० गोपीनाथ काश्मीरी ने 'सद्धर्म-प्रचारक' में कई आपत्तिजनक लेख छापने के कारण लाहोर में मान हानि का अभियोग चलाया था।

लहोर में इस मुकदमे की बड़ी चहल-पहल रही। सिकन्दराबाद से चलते २ हमको म० मुन्शीराम जी का तार मिला कि honourably acquitted अर्थात् सम्मानपूर्वक बरी किये गये। बेलोन जाकर ३-४ मास रहे। मैं आचार्य जी से नवाह्निक पढ़ता रहा। नवाह्निक को मैंने आद्योपान्त कण्ठस्थ कर डाला था। लोग चकित थे कि इतना बड़ा पोथा कैसे कण्ठस्थ कर डाला।—म० मुन्शीराम जी का पत्र आने से आचार्य जी कनखल चले गये और हम बेलोन ही रहे। आचार्य जी कनखल आकर भारामल के बगीचे में ही ठहरे। पंजाब से हरिश्चन्द्र, इन्द्रचन्द (म० मुन्शीराम के पुत्र) जयचन्द्र (पं० काशीराम के पुत्र) ये तीनों जो गुजराँवाले में थे यहीं आगये और आचार्य जी के पास पढ़ने लगे। उधर कांगड़ी में जंगल साफ किया जा रहा था, झोपड़ियां बनवाई जा रही थीं, मार्ग बनाये जा रहे थे। भारामल के बगीचे की अब वह बात नहीं है। वह तो तीन चौथाई गंगाजी के भेंट हो गया है। उस समय रम्य वाटिका थी। गेट के भीतर बहुत विस्तृत मैदान था। पहले २ जब गुरुकुल को काँगड़ी ग्राम नहीं मिला था तब बस्तीराम की पाठशाला की जगह पसन्द की गई थी। अब वहाँ इसी नाम की पाठशाला है। इसका भी बहुत बड़ा भाग गंगा जी में बह गया। बा० ज्योतिःस्वरूप जी की कोठी अब जहाँ है (खड़खड़ी) उस जगह को भी देखा गया था, बाबू जी जगह देने के लिये तैयार भी थे पर कांगड़ी ग्राम क मिल जाने से वह विचार जाता रहा। एक दिन बा० ज्योतिःस्वरूप जी ने कनखल में आचार्य जी के पास आकर शिकायत भी की थी कि आप लोगों ने हमको सूचना भी नहीं दी और कांगड़ी का निश्चय कर लिया। आचार्य जी ने कहा कि महात्मा मुन्शीराम ने उसी जगह को पसन्द किया है, मैंने उस जगह को अभी नहीं देखा, प्रतिनिधिसभा के निश्चय को तो मानना ही पड़ेगा इत्यादि।

१६३० में कनखल उजाड़ था, भारामल के दरवाजे से बाज़ार में जाना हो तो दिन ही में ऐसा लगता था कि कितनी दूर आ गये। रात को तो डर लगना ही था—अब तो कनखल हरद्वार की बात ही और है। कनखल से आचार्य जी का पत्र बेलोन में हमारे पास आया कि हम तत्काल कनखल आ जावें। मैंने श्रीधर, दीपचन्द आदि को भेज दिया और मैं वहीं बेलोन रहा। पन्द्रह बीस दिन बाद आया। इस पर हमारे आचार्य जी दुर्वासा बन गये। कई दिन तक मुझसे बोले नहीं, बोले तो क्रोध से ही बोले। मैंने कहा मुझे संस्कृत नहीं पढ़ना है कृपया छुट्टी दीजिये। मैं भी ज़िद पर अड़ गया। फिर कुछ ढीले पड़े। इतने में अजमेर से श्री बा० रामबिलास शारदा का पत्र आया कि हम शतपथ छपाना चाहते हैं, किसी पंडित को भेजिये जो ठीक २ संशोधन कर सके। इस कार्य के लिये मेरी ड्यूटी बोली गई। मैं अजमेर पहुंचा और वहाँ ७-८ मास हेड संशोधक रहा। जब कभी अवकाश मिलता तब उधर ही टहलने जाता जिधर महर्षि स्वा० दयानन्द जी का शरीर-संस्कार किया गया था। कभी पुष्कर जाता। पंडित भीमसेन जी इटावा निवासी जब सिकन्दराबाद गये थे और शास्त्रार्थ की बात ठहरी थी तब मैं अजमेर से गया था और कई व्याख्यान दे डाले थे। स्व० पंडित तुषाराम जी ने इस कार्य में उस समय हमारी बहुत सहायता की थी।

इसी वैदिक प्रेस में मैंने स्वामी जी का पत्र व्यवहार पढ़ा था जिससे स्वामी जी के समय की प्रेस की दशा, पं० भीमसेन जी (इटावा) पं० ज्वालाप्रसाद जी (कासगंज) पं० यज्ञदत्त जी, पं० समर्थदान जी, पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा, भक्त रेमलदास जी आदि (जो उस समय स्वा० जी के साथ रहे थे) के समाचार ज्ञात हुये थे। उस समय केशवदेव शास्त्री वैदिक प्रेस के मैनेजर होकर आये थे। वहीं हम दोनों की मित्रता हुई थी। अजमेर से हम कांगड़ी आये और आचार्य जी से मिले और ग्वालियर चले गये। कांगड़ी में ३-४ मास रहे होंगे इस अवसर में लड़कों को पढ़ाते रहे। उस समय वहाँ ४ श्रेणियाँ थीं। ३३ ब्रह्मचारी थे। म० मुन्शीराम जी का कार्यालय एक बड़े डेरे में था। ब्रह्मचारिगण झोपड़ियों में रहते थे। अध्यापकों में मास्टर सुन्दरसिंह जी बी० ए०, बी० टी० (ये भी आर्य विद्यार्थी आश्रम में बोर्डर थे), प० विष्णुमित्र जी, पं० भीमसेनजी साहित्याचार्य आदि थे। गुरुकुल कांगड़ी के प्रथम आचार्य श्री गंगादत्त शास्त्री जी ही बनाये गये थे। उस समय के वे दृश्य अरण्य में रहने वाले ऋषियों व बाल ऋषियों के से दृश्य थे। गंगा जी की रेती में एक झोपड़ी डाल रक्खी थी। पं० भीमसेन जी व मैं दिन में वहीं कई २ घण्टे रहते थे। पं० जी गुरुकुल में पढ़ाते थे व गुरुकुल के लिये संस्कृत का कोर्स भी बनाते रहते थे।

श्री आचार्य गंगादत्त जी ने अष्टाध्यायी का भाष्य यहीं तैयार किया। पंडित जी ने भी कई पुस्तकें लिखीं। पं० जी ने भोजवृत्ति योगभाष्य यहीं लिखा। मेरे ग्वालियर चले जाने के पश्चात् पं० पद्मसिंह शर्मा भी यहीं बुलाये गये और पं० भीमसेन जी को कोर्स तैयार करने में सहायता देते रहे। ग्वालियर जाकर मैं महामहोपाध्याय पं० रघुपति शास्त्री प्रिन्सिपल संस्कृत कॉलेज, पं० विद्यापतिशास्त्री, पं० निशापति शास्त्री आदि से, किसी से कादम्बरी, किसी से साहित्यदर्पण, किसी से नलचम्पू सातवार पढ़ा। संस्कृत साहित्य का ज्ञान मुझे ग्वालियर में ही हुआ। मेरे सतीर्थ्य पं० गणपतिविश्वरूप शास्त्री, श्री सीतारामशास्त्री न जाने कहाँ हैं। कई वर्ष हुए जब हम ठा० मनजीतसिंह के विवाह में ग्वालियर गये थे तब पुराने साथियों में से कोई नहीं मिला। ग्वालियर के महाराज श्री माधवराव सिंधिया के प्राईवेट सेक्रेटरी श्री शिवबक्स जी ने हमको अपने घर में रहने के लिये स्थान दे रक्खा था और हम इनके कृतज्ञ हैं कि इन्होंने किसी प्रकार का कष्ट नहीं होने दिया। मैं इनके यहाँ घर का सा रहा। आपके कारण मैंने सब राजमहल देख डाले थे। कई जगह मेरा अव्याहत प्रवेश रहता था।

आर्यसमाजियों के आग्रह करने पर मैंने मुरैना व ग्वालियर में तीन चार व्याख्यान दे डाले थे। जब गुरुजी (श्री रघुपतिशास्त्री जी) को इस बात का पता चला तब उन्होंने मुझे समझाया कि जब तक मैं उनके पास हूँ तब तक ऐसी बातों से बचा रहूँ। फिर मैंने कोई व्याख्यान नहीं दिया। ठा० सूर्यकुमार वर्मा, जो इस समय वक्फ डिपार्टमेंट के सेक्रेटरी थे, उस समय समाज के उत्साही कार्यकर्त्ता थे। उसी परिचय से वे हमारे पास अपनी लड़की के लिये वर की तलाश में देहरादून आये थे। हमने ठा० मनजीतसिंह से परिचय करा दिया और वह सम्बन्ध होगया। ग्वालियर रियासत के एक पुराने पेशकार महाशय तोताराम जी का भी परिचय आवश्यक है। आप वे व्यक्ति हैं जिन्होंने सबसे पहले

अपने पुत्र शंकर को गुरुकुल के लिये अर्पण किया था। म० मुन्शीराम जब अपनी प्रतिज्ञापूर्त्ति के लिये निकले थे तब शंकर दो-चार स्थानों में उनके साथ गया था। गुरुकुल की प्रारम्भिक दशा में कई वर्ष तक तोताराम जी भी गुरुकुल में रहे फिर किसी बात पर अनबन होकर गुरुकुल से चले गये और शंकर को भी ले गये। शंकर ने गुरुकुल से निकल कर एफ० ए० पास किया था। अत्यधिक परिश्रम के कारण उसको क्षय हो गया था। यहीं ज्वालापुर में बा० सीताराम जी के मकान पर उसका देहावसान हुआ। प्रिय इकलौते पुत्र के मरने से तोताराम जी कुछ विक्षिप्त हो गये थे। कहते थे "१६ वर्ष तक हम बराबर हवन सन्ध्योपासन करते आ रहे हैं। नित्य विधि में कभी नागा नहीं हुआ। रियासत की नौकरी में भी, जब से आर्यसमाजी बने एक पैसे की भी रिश्वत नहीं ली। क्या ईश्वर को लेने के लिये हमारा ही लड़का रह गया था, बस जी धर्म-कर्म कुछ नहीं, हम पर सर्वथा ईश्वरीय अन्याय है"—मैंने समझाया कि 'तुम बावले हो रहे हो, जिसकी वस्तु थी उसने उठा ली, तुम्हारा उसमें क्या है। अपनी २ कर्मगति अपने २ साथ, इसमें ईश्वर क्या करे। तुमने अपना कर्त्तव्य पालन किया और अच्छी तरह निभाया बस हो गया"—तब जाकर तोताराम जी कुछ समझे। श्मशान में कांगड़ी गुरुकुल और महाविद्यालय ज्वालापुर दोनों स्थानों के लोग एकत्रित हुये थे। महात्मा मुन्शीराम जी भी उपस्थित थे। शंकर तीव्रबुद्धि छात्र था। जीवित रहता तो बहुत कार्य करता पर जिसमें अपना बस नहीं उसमें कोई कहे भी क्या और करे भी क्या। शंकर जब छोटा था तब अत्यन्त सुन्दर भाषण दिया करता था। बड़ा होकर और भी खुल गया था। गुरुकुल कांगड़ी के ब्रह्मचारियों में प्रारम्भ से अब तक दो ही ब्रह्मचारी ब्र० शंकर व ब्र० हरिश्चन्द्र अच्छे वक्ता थे—स्वाभाविक वक्ता थे। प० बुद्धदेव विद्यालंकार में भी वक्तृत्वशक्ति है—अस्तु १६०३ मार्च मास में देहली सेण्टर से हमने शास्त्री परीक्षा दी। समस्त पंजाब में केवल २६ व्यक्ति शास्त्री परीक्षा में सम्मिलित हुये थे। इनमें केवल दस उत्तीर्ण हुये। इनमें चार को लाहोर में डिप्लोमा मिला क्योंकि हम एण्ट्रन्स परीक्षोत्तीर्ण थे। इन चारों में 'मैं' एक था ही, शेष तीनों का नाम विस्मृतिपथ के किस भाग में है, पता नहीं।

दिसम्बर के बड़े दिनों की छुट्टी के पूर्व ही लाहोर में कनवोकेशन समारम्भ हुआ करता है। हम उसमें सम्मिलित हुये। उस अवसर पर पुराने कतिपय मास्टरों व सहाध्यायियों से मेल मिलाप हुआ था। वहाँ दो सप्ताह रह कर और खूब घूम-घाम कर हम वापस आये। परीक्षा देने के पश्चात् और पूर्व भी कुछ काल सिकन्दराबाद में रहे और गुरुकुल वालों के प्रबन्ध में सहायता देते रहे पर परीक्षा एफ० ए० (इंगलिश में) देने की तैयारी करते रहे, पर परीक्षा नहीं दी। काव्यतीर्थ की भी तैयारी की थी किन्तु ताऊ हणमन्तराव जी के देहावसान की खबर उन्हीं दिनों मिली, जी उदास हो गया और मैं कलकत्ते नहीं गया। १६०४ का वर्ष काशी में ही गया और हम महामहोपाध्याय अम्बादास शास्त्री जी आदि से वहीं रसगंगाधरादि ग्रन्थों का अध्ययन करते रहे। १६०५ सिकन्दराबाद में गया और दिसम्बर मास में हम कलकत्ते में श्री आचार्य पं० सत्यव्रत सामश्रमी जी के पास वेदाध्ययनार्थ पहुँचे। १६०५-१६०६ दो वर्ष और कुछ मास कलकत्ते में रहे। कलकत्ते का जीवन ज्ञानसंग्रह के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ। बड़े बड़े विद्वानों के दर्शन, बड़े बड़े पुस्तकालय, फिर ज्ञान-साधन में न्यूनता क्यों रहती। वहां गुरुवर श्री सामश्रमी जी से अध्ययन करते रहे और ईस्ट इण्डिया कम्पनी

की इम्पीरियल लायब्रेरी में प्रतिदिन जाकर विविध विषयों के पुस्तकावलोकन द्वारा ज्ञान सामग्री बढ़ाते रहे।

सिकन्दराबाद में श्री पं० मुरारीलाल शर्मा, श्री पं० गंगासहाय शर्मा, ठा० गंगासहाय महेपा, पं० राधेलाल तथा धूम (दादरी) के ठा० जयरामसिंह, ठा० राजारामसिंह, ठा० पृथ्वीसिंह, ठा० हरबक्त सिंह जी (सावतगढ़) और बुलन्दशहर जिले के पचासों पुरुषार्थी भाइयों से परिचय हुआ। हमारे ही उद्योग का फल था कि सिकन्दराबाद गुरुकुल को आर्यप्रतिनिधि सभा ने अपनालिया था। जब हम कलकत्ते चले गये पीछे यह गुरुकुल फर्रुखाबाद चला गया। फिर वहां से वृन्दावन गया। गुरुकुल सिकन्दराबाद वालों ने पीछे उसी स्थान पर नया गुरुकुल खोल लिया। पं० मुरारीलाल जी शर्मा अच्छे कवि, विनोदी, व्याख्याता और चतुर सभा-पण्डित थे। शास्त्रार्थ भी खूब कर लेते थे। इनका एक पैर सदैव रेल में ही रहता था। इन्होंने जीवनकाल में समाज के प्रचार में कितने सहस्र मीलों की यात्रा की होगी भगवान् ही जाने। आप अपने ढंग के एक ही थे। आपके तीनों पुत्र श्री देवेन्द्रशास्त्री सांख्यतीर्थ, श्री महेन्द्रशास्त्री, श्री धर्मेन्द्रशास्त्री बड़े विनयशील व विद्वान् व्यक्ति हैं। इन तीनों ने गुरुकुल सिकन्दराबाद व महाविद्यालय में शिक्षा-दीक्षा पाई है। श्री देवेन्द्रशास्त्री जी गुरुकुल सिकन्दराबाद के वर्षोंतक मुख्याधिष्ठाता रहे। खेद कि गत वर्ष लखनऊ में व्याख्यान देते देते आपका शरीर छूट गया। महेन्द्रशास्त्री मुरारी आर्ट कम्पनी को चला रहे हैं। धर्मेन्द्रशास्त्री वैद्यक कर रहे हैं। पं० गंगासहाय के ज्येष्ठ पुत्र श्री सुरेन्द्र शर्मा का देहावसान हो गया। अन्य पुत्र पं० विष्णु शर्मा, देवशर्मा, गुरुदत्त शर्मा आदि जमींदारी का कार्य कर रहे हैं।

गुरुकुल बृन्दावन के आचार्य श्री बृहस्पतिशास्त्री व बम्बई के श्री द्विजेन्द्रनाथ जी महोपदेशक इस समय सिकन्दराबाद में अध्ययन करते थे। आगरा समाज के प्रचारक श्रीराम शर्मा भी छात्र थे। गुरुकुल सिकन्दराबाद में पं० नन्दलाल व्यास गुजराती, पं० धनीराम शास्त्री, साहित्याचार्य, पं० जीवाराम शर्मा, श्री पं० नारायणदत्त जी सिद्ध, श्री पं० मधुसूदनाचार्य (म० म० पं० जयदेव मिश्र के कनिष्ठ भ्राता) आदि ने भी कार्य किया। श्री पं० नन्दलाल व्यास जी गुरुकुल कांगड़ी व महाविद्यालय ज्वालापुर में भी रहे। पं० विष्णुदत्त जी बी० ए०, एल० एल० बी० वकील सहारनपुर (मुजफ्फर-नगर निवासी) के व्योवृद्ध विद्वान पिता पं० गोविंदसहाय व पहासू (बुलन्दशहर) के पं० श्यामलाल शर्मा भी रहे। जिस जमाने में हम वहां थे गुरुकुल में एक सौ बीस ब्रह्मचारी थे। उपर्युक्त सब महानुभावों ने उसको उन्नतिशील बनाने में हमारा साथ दिया था। खूब अन्न व धन आता था। खूब प्रचार होता था और खूब काम चलता था। श्री पं० भीमसेन साहित्याचार्य ने प्रारम्भिक दशा में गुरुकुल की रक्षा की। आपके सच्छिष्य पं० दिलीपदत्त शर्मा उपाध्याय साहित्य के अच्छे पण्डित व कवि हैं। इन्हीं गुरु शिष्यों ने महाविद्यालय के संकट के दिनों में (१९०७-१९०८) महाविद्यालय की सर्वतोमुखी रक्षा की। स्वा० दर्शनानन्द जी संस्थापित गुरुकुलों के विषय में चाहे कोई कुछ कहे, ये सहस्रों गरीब छात्रों का उद्धार करने में समर्थ हुये हैं।

कलकत्ते में

हम जब कलकत्ते पहुँचे थे तब बंगाल के दो टुकड़े हो गये थे। सरकार की इसी कार्यवाही के विरुद्ध बंगालियों का तीव्र आन्दोलन चल रहा था। स्वदेशी का बड़ा जोर था। विदेशी बहिष्कार की बात तो पूछिये ही नहीं। विदेशी वस्त्रों के ढेरों की सहस्रों होलियाँ देखने में आती थीं। कहीं रेलवालों की हड़ताल, कहीं क्रान्तिकारियों के उपद्रव, कहीं स्वदेशी की सभायें, चहुँ ओर वन्देमातरम् की गर्जनायें, कहीं श्री सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, बिपिनचन्द्रपाल आदि के भाषण, कहीं स्वदेशी मेला, कहीं शिवाजी महोत्सव बस देखने की बात थी। बंगाल का बच्चा-बच्चा विदेशी के बहिष्कार में सम्मिलित था। दुर्गापूजा की छुट्टियों में बंगाली जनता का अपूर्व उत्साह उमड़ रहा था। शिवाजी महोत्सव में लो० तिलक पधारे थे इसलिये सारा बंगाल ही कलकत्ते की ओर चल पड़ा था। लोकमान्य तिलक के बाईस व्याख्यान हुये। लो० तिलक के आगमन के समय का जलूस व गंगास्नान का समारोह एक देवताओं को भी लालायित करने वाला दृश्य था। लो० तिलक, श्री खापर्डे, श्री डॉ मूंजे इसी त्रिमूर्त्ति की सर्वत्र धूम थी। मैं गुरूजी (आचार्य सामश्रमी जी) के घर पर ही रहा। वहीं अध्ययन होता था। वहीं बंगाल के पण्डितों के दर्शन हो जाते थे। गुरूजी से प्रतिदिन कोई न कोई विद्वान् मिलने आते थे। उस समय दो जापानी वैशेषिक दर्शन के विषय में कुछ बात चीत करने, कुछ पूछने के लिये, गुरूजी के पास आये थे। कभी कभी कान्यकुब्ज सामवेदियों का भी जमघट हो जाता था तब सामवेद का गान सुनने को मिलता था। गुरूजी की लायब्रेरी बहुत बड़ी थी, इस पुस्तकालय से मुझे प्रायः वैदिक साहित्य का व्यापक ज्ञान मिला, गुरूजी का सत्यप्रेस भी था जिसमें वे अपने ग्रन्थों को छपवाते रहते थे। वैदिक प्रेस में मुझे प्रेसकार्य का पूर्ण ज्ञान हो चुका था इसलिये प्रेस व वैदिक ग्रन्थों के संशोधन का कार्य मुझे ही सौंपा गया। मेरे कार्य को देखकर गुरूजी बहुत प्रसन्न हुये। आपने एक बार यह कहा कि आर्यसमाजी लोग गुरू बनकर पढ़ने आते रहे हैं, तुम शिष्य बनकर आये हो, यह प्रसन्नता की बात है। निरुक्तालोचन, ऐतरेयालोचन, शतपथ (सायणभाष्य), सामवेद के कई ग्रन्थों का संशोधन मैंने ही किया था। मैं जब वहाँ था तभी ये ग्रन्थ छपे थे। श्री गुरूजी से समस्त बंगाल व कभी-कभी बंगाल के बाहर से भी अनेक धार्मिक विषयों में व्यवस्थाएँ पूछी जाती थीं। गुरूजी व्यवस्थाओं को लिखाने का काम मुझसे ही कराते थे। वे बोलते जाते थे और मैं लिखता जाता था। इम्पीरियल लायब्रेरी में आपने ही प्रवेश कराया, आपसे मैंने निरुक्त ऐतरेय ब्राह्मण समग्र, आश्वलायन श्रौतसूत्र, मन्त्र ब्राह्मण, ऋग्वेद के दो अष्टक सभाष्य, यज्ञ सम्बन्धी पद्धति इत्यादि विषयों का अध्ययन किया। सामवेद का भी अच्छा परिचय प्राप्त किया। गुरूजी जब ऋग्वेद पढ़ाते थे तब अन्य वेद सम्बन्धी विशेष विशेष बातों को भी बतलाते थे। श्रौतसूत्रों में बोधायन व आपस्तम्ब का भी परिज्ञान कराया था। सारांश वैदिक साहित्य के अगाध साहित्य में मेरा अच्छी तरह प्रवेश हो गया। १६०६ में हमने ऋग्वेद में वेदतीर्थ की परीक्षा दी। बंगाल क्या, समस्त भारतवर्ष में ऋग्वेद में तीर्थ देनेवाला मैं ही था। पं० भक्तराम शास्त्री प्रो० डी. ए. वी. कॉलेज ने यजुर्वेद में तीर्थ परीक्षा दी थी। उस वर्ष नदिया शान्तिपुर के एक वृद्ध ब्राह्मण की चौदह वर्ष की कन्या ने मीमांसा की परीक्षा दी थी। हमको इस विषय में बड़ा आश्चर्य हुआ और हमने उस वृद्ध पण्डित को श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया। हमारे गुरूजी परीक्षाओं से विरुद्ध थे, हमने उनकी अनुमति

के बिना ही परीक्षा दी थी इसलिये कुछ असन्तुष्ट से हो गये थे। पीछे उत्तीर्ण होने के पश्चात् हमने गुरू जी को प्रसन्न कर लिया था। जब कलकत्ता में थे तब यंग मेन्स खिश्चन एसोसियेशन में व्याख्यान सुनने जाया करता था। इस संस्था में प्रति सप्ताह किसी न किसी विद्वान् का भाषण हुआ करता था। इसके अतिरिक्त बंगाल के नेताओं के राजनीति सम्बन्धी कितने व्याख्यान सुने होंगे इसका कोई हिसाब नहीं। सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी के तो सप्ताह में दो एक व्याख्यान हो ही जाते थे। यहीं कलकत्ते में बिहार के बड़े-बड़े आदमियों से परिचय हुआ, ये उस समय कलकत्ते में छात्रावस्था में थे। विहारभूषण बा० राजेन्द्रप्रसाद, चम्पारण्य के श्री जगन्नाथप्रसाद पाण्डे, राँची के श्री काशीप्रसाद एम. ए. काव्यतीर्थ इत्यादि। यहीं रहते रहते ब्राह्मसमाज (नवविधान), रामकृष्ण परमहंस मिशन का अच्छा परिचय मिला। ब्राह्मसमाज का कुछ परिचय लाहोर में मिला था जबकि हम वहाँ रहते थे। प्रो० रुचिराम साहनी एम. ए. के व्याख्यान कई बार सुने थे। एक बार दक्षिण से प्रो० नगरकर नामक प्रसिद्ध व्यक्ति लाहोर पधारे थे उन्होंने कई दिन तक वहाँ ब्राह्मसमाज के विविध अङ्गों पर व्याख्यान दिये थे। उनके व्याख्यान का एक वाक्य अच्छी तरह याद है। "सत्य न उस सिरे पर है न इस सिरे पर, सत्य तो मध्य बिन्दु में विद्यमान है" इत्यादि। उस समय 'भारतमित्र' समाचार पत्र की बड़ी धूम थी। प्रो० बालमुकुन्द गुप्त उसके तेजस्वी व यशस्वी संपादक थे। उनके पश्चात् श्री पं० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी व पं० बाबूराव पराड़कर सम्पादक रहे। फिर श्री गर्दे जी सम्पादक बने। अब भारतमित्र और ढंग से चल रहा है। वाजपेयी जी 'स्वतन्त्र' सम्पादक हो गये हैं। श्री गर्दे जी भी श्री कृष्णसन्देश के सम्पादक रहे और अब काशी में और किसी पत्र के सम्पादक हैं। हिन्दी बंगवासी का ढर्रा अबतक वैसा ही चला जाता है। वही टाइप, वही आकार, वही प्रकार। १६०६ फरवरी में हमने कलकत्ते की बड़ी प्रदर्शिनी देखी थी। कलकत्ता विश्वविद्यालय का कनवोकेशन समारम्भ भी देखा था। श्री आशुतोष मुकर्जी वाइस चैन्सलर का भाषण भी सुना था। लॉर्ड कारमाईकल (बंगाल के लाट) भी पधारे थे। आपने बंगाली में लिखित भाषण पढ़ा था। यह संस्कृत परीक्षोत्तीर्ण छात्रों के लिये प्रथम ही कनवोकेशन था। इसी कनवोकेशन के अवसर पर श्री थीबो, (प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् जिन्होंने वेदान्त का उल्था किया है) श्री गुरुदास बैनर्जी तथा बंगाल के अन्य वयोवृद्ध नेताओं के दर्शन हुये थे। श्री महामहोपाध्याय गणनाथ सेन जी का परिचय तभी का है। मैंने ऊपर लिखा है कि हम जब बंगाल गये थे तब बंगाल के दो विभाग हो गये थे। पूर्व बंगाल के गवर्नर सर बैंफाइल्ड फुल्लर थे। एक दिन युनिवर्सिटी हॉल की ओर से हम निकल रहे थे तो एक बड़ा पोस्टर चिपका हुआ देखा जिसमें मोटे अक्षरों में दो ही शब्द छपे हुये थे। Fuller resigned अर्थात् फुल्लर साहब ने परित्यागपत्र दे दिया। उस दिन कलकत्ते में बंगाली जनता हर्ष से नाच रही थी। हमारे गुरु जी पक्के राजभक्त थे, इसलिये जनता में अप्रिय हो गये थे।

आपने नौकरशाही के पिट्ठुओं के कहने से स्वदेशी के विरुद्ध एक पुस्तक (ट्रेक्ट) लिखी थी। मैंने गुरुजी को समझाया कि इससे आपकी अपकीर्ति होगी, तब वे छपाने से रुके। गुरुजी संस्कृत विशेषतः वैदिक साहित्य के प्रगाढ़ पण्डित थे तो भी एशियाटिक सोसाइटी में पाश्चात्यप्रणाली के विद्वानों के सम्पर्क में रहने के कारण पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान का पूर्ण परिचय प्राप्त कर चुके थे। सायण, महीधर, उव्वट, दयानन्द तथा अन्य भाष्यों का खूब खण्डन करते रहते थे। इतना अवश्य मानने लग गये थे कि स्वामी

दयानन्द ने धार्मिक व सामाजिक क्षेत्र में बहुत क्रान्ति कर दी है। इसीलिये ऐतरेयालोचन में प्रसंगवश आपने स्वा० जी को आचार्य दयानन्द लिखा है। हमारी प्रेरणा से वे एक बार गुरुकुल कांगड़ी के महोत्सव में आये थे। गुरूजी की दिनचर्या बड़ी विचित्र थी। बहत्तर वर्ष के बूढ़े होने पर भी दस दस घण्टे काम करते रहते थे। प्रातः ३ बजे ही उठते थे। प्रातःकाल के समस्त कृत्य समाप्त करके व खा पीकर ८ बजे प्रेस में आते थे। सायंकाल ७, कभी कभी ७॥–८ तक वहीं रहते थे। इसमें तीन घण्टे तो अध्यापन के समझिये। पढ़ाने की शैली अद्वितीय थी। सबसे पूर्व मूलग्रन्थ का भाव बतलाकर, मूल की संगति लगा देते थे। पश्चात् कहते थे अब भाष्य पढ़ो, कोई बिशेष बात हुई कहदी नहीं तो आगे चल दिये। वेदमन्त्रों को काव्य की भान्ति पढ़ाते थे। गुरुजी की लायब्ररी में मैंने सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेद भाष्य भूमिका को देखा था। जब ऋग्वेद भाष्य–भूमिका को मैंने उठाकर देखा तो विषयसूची के प्रत्येक विषय पर गुरूजी ने अपनी टिप्पणी दी थी। किसी पर "सत्यम्" किसी पर "मुग्धबोधायैव" इत्यादि लिखा हुआ था। स्वा० दयानन्द जी के काशी शास्त्रार्थ में आप मध्यस्थ थे। तब का हाल आप विस्तृत रूप में मनोरंजक ढंग से सुनाया करते थे। आपकी सम्पादित पुरानी पत्रिका का नाम 'उषा' था। उसके अङ्कों में हमने काशी शास्त्रार्थ का विस्तृत विवरण छपा देखा। आप स्वतन्त्र लेखक थे। आपने श्री लोकमान्य तिलक के "उत्तर ध्रुव में आर्यवसति (आर्किटिक होम इन दी वेदाज) का भी खण्डन किया था। आपका मत था कि आर्यों के पूर्वज भारतवर्ष के ही निवासी थे, उत्तर ध्रुव से नहीं आये थे। यहीं से अन्य स्थानों में गये। इन्होंने ऐतरेयालोचन में इस विषय में विस्तृतरूप से लिखा है। आप वेदों को ऋषि–प्रणीत मानते थे। कलकत्ते में बंगालियों में रहकर बंगाली स्वभाव का अच्छा परिचय मिला। बंगाली बहुत बुद्धिमान् होते हैं। जब इन पर विपत्ति पड़ती है तब सब एक हो जाते हैं,क्या नरम क्या गरम क्या क्रान्तिकारी। अन्य प्रान्तों के लोगों से वे अच्छी तरह मिलते जुलते नहीं। श्री बालमुकुन्द गुप्त आदि यही कहते थे। बंगाली जब भी कोई बात उठाते हैं, संगठन करते हैं अन्य प्रान्त के लोगों को (जो बंगाल के ही निवासी हो चुके हैं) भी सम्मिलित नहीं करते। बस यही एक बात खटकती है शेष उनका स्वदेश प्रेम, स्वसाहित्य प्रेम, संगठन-कौशल आदि की कितनी प्रशंसा की जावे। बंगला साहित्य केवल बंगाल का ही नहीं है समस्त भारत के गौरव की वस्तु है। बंगाल शक्ति-उपासक है, बंगाल भक्तिप्रधान देश है इसीलिये बंगालियों की शक्ति और भक्ति का परिचय मिलता रहता है। श्री गौरांग, श्री चैतन्य, श्री रामकृष्ण परमहंस, श्री स्वा० विवेकानन्द, श्री देशबन्धुदास व श्री टैगौर की जन्म भूमि में है करामात। बंकिम बाबू की जन्मभूमि में है कुछ चमत्कार। हमारा सौभाग्य कि हमारे गुरुओं में बंगाली गुरु भी हैं। इसको हम स्वाभिमान का विषय समझते हैं। कलकत्ते के निवास के दिनों में श्री सत्याचरण शास्त्री रिषडानिवासी से हमारी घनिष्ठ मित्रता हो गई थी। आप इतिहासज्ञ पुरुष थे। हम बंगाल में "वन्देमातरम्" सुना करते थे। कांग्रेस में आये तब से इसी को परिवर्त्तितरूप सुनने लगे अर्थात् मैं समझता हूँ बंगालियों की उस युग की वह संकुचित वृत्ति जाती रही है और बंगाल स्वयं बंगाल में व बंगाल से बाहर भी 'वन्देमातरम्' गीत को नये रूप में अन्यों के साथ स्वर में स्वर मिलाकर गा रहा है। यह हर्ष व सौभाग्य का विषय है। विचित्र योगायोग देखिये बाल्यावस्था में महाराष्ट्र गुरु, किशोर अवस्था में पंजाबी व बंगाली गुरु, युवावस्था में यू० पी० व

बंगाल के गुरु और प्रत्येक देश व उसकी परिस्थिति का प्रभाव हमारे मन पर पड़ा। शनैः शनैः समस्त भारतवर्ष ही मेरा घर बन गया। राष्ट्रीय आन्दोलन में पड़कर समस्त भारत ही मेरा क्रीडाङ्गण हो गया। इन समस्त परिस्थितियों में मैं कट्टर प्रारब्धवादी बन गया। अब मुझे तनिक भी चिन्ता नहीं होती कि किस समय क्या विपत्ति आ पड़ेगी और क्या होगा। मैं अपना पुरुषार्थ करता जाता हूँ किन्तु मेरा भरोसा उसी अघटित-घटना-पटीयसी-भगवती-भवितव्यता पर है। नहीं तो पहले अज्ञान में इसी बात का बहुत क्लेश होता रहता था कि हम इतना पुरुषार्थ करते रहते हैं, हम जैसा चाहते हैं वैसा क्यों नहीं होता, कभी कभी जैसा चाहते हैं सर्वथा उससे उलटा क्यों हो जाता है। गीता ने इस समस्त सन्देह को दूर कर दिया है और कार्यसिद्धि में जो पाँच हेतु बतलाये हैं उनमें "दैवं चैवात्रपञ्चमम्" यह पाँचवा दैव स्पष्ट रूप में बतलाया है। मनुष्य 'दैव' का ध्यान न रखकर अज्ञान से केवल अपने आपको 'कर्त्ता' समझ बैठता है, दुःख उठाता है, यह उसकी मूर्खता है। मनुष्य को सब शुभकर्म कर्त्तव्य बुद्धि से, फलाकांक्षा छोड़कर करते रहने चाहियें, ईश्वर फल देवे, न देवे, थोड़ा देवे, सर्वथा उलटा देवे यह उसके हाथ की बात है। मनुष्य के अज्ञान की एक और बात है, वह कर्त्तव्य क्षेत्र में आता है उससे पूर्व कर्म-अकर्म-विकर्म के तत्त्व को अच्छी तरह समझकर कार्य-क्षेत्र में नहीं आता, इसीलिये बात-बात पर ठोकरें खाता है। कर्म-अकर्म-विकर्म की गहन मीमांसा है।

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं,
बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं,
गहना कर्मणो गतिः॥

यही जानने की बात है, यही तत्त्व है। क्या इस प्रकार स्वदेश को छुड़ाना, फिर अपने ही ढंग से विभिन्न विभिन्न प्रदेशों में पहुंचाकर ऐसे ऐसे महानुभावों से मिलाना, और इस तरह समस्त भारतवर्ष को ही (छोटा घर, छोटा दक्षिण प्रदेश छुड़ाकर) विस्तृत घर बना देना उसी दैव की लीला नहीं है। क्या इसमें पूर्वजन्मों के संस्कारों व कर्मों का हाथ नहीं है। कौन कहेगा कि नहीं है। मैं तो सोलह आने प्रारब्धवादी बन गया हूँ।

कांगड़ी गुरुकुल में

(१९०६ — १९०७)

श्री आचार्य गंगादत्तजी शास्त्री ने कलकत्ते एक तार भेजा जिसका आशय था 'तत्काल चले आओ, एक आवश्यक कार्य है, मैं कांगड़ी चला गया। गुरुकुल-विषयक बातचीत हुई। उन्होंने कांगड़ी में रहकर उच्चश्रेणी को निरुक्तादि पढ़ाने की बात कही। मैंने मना कर दिया क्योंकि मैं कलकत्ते में और कई वर्ष रहना चाहता था। किन्तु क्या देखा कि चौथे दिन 'सद्धर्मप्रचारक' में छप गया कि "नरदेवशास्त्री कलकत्ते से आ गये और गुरुकुल में उच्चश्रेणी को निरुक्त पढ़ाने लगे" इत्यादि। मैं

महात्मा जी के पास गया और कहा कि मेरी अनुमति के बिना यह कैसे छपा। मुन्शीराम जी ने कहा, मुस्कराकर कहा, 'अपने गुरू जी से पूछो।' मैंने यहाँ से निकलने का बहुत यत्न किया पर निकल न सका। उस समय उच्चश्रेणी में श्री इन्द्र, श्री हरिश्चन्द्र व श्री जयचन्द्र ये तीन ही ब्रह्मचारी थे। इसके अतिरिक्त आठवीं श्रेणी में जिसमें विश्वनाथादि थे, उनको महाभाष्य आदि पढ़ाना पड़ता था। श्री रामदेव जी भी हेडमास्टर की हैसियत से गुरुकुल में आ गये थे।

जिन रामदेव जी ने एक बार गुरुकुल के विषय में आर्यपत्रिका में लिखते हुये श्री आचार्य गंगादत्त जी की प्रशंसा के पुल बांधे थे, अब उनकी आचार्य जी के साथ नहीं बनती थी। मतभेद यह था कि उस समय अंगरेज़ी नवम श्रेणी में पढ़ाई जाती थी। रामदेवजी वगैरे उसको छठी श्रेणी में लाना चाहते थे, मुख्य बात तो इतनी थी। दूसरी बात यह थी कि रामदेव जी सीधे कॉलेज से निकल कर आ गये थे और दिमाग़ में उधर की बातें बहुतायत से भरी थीं। और आचार्य गंगादत्त जी कट्टर पुरानी प्रथा के उपासक थे, इसलिये भी प्रबन्ध सम्बन्धी बातों में मतभेद बढ़ने लगा था। महात्मा मुन्शीरामजी बीच में पड़कर स्थिति को संभाल लेते थे। जब टाइमटेबल बना और अंगरेज़ी ढंग से घण्टे बजने लगे तब आचार्य जी को बहुत अखरने लगा। वे पुरातन ढंग से पढ़ाते थे। अभी सूत्र का अर्थ समझाने नहीं पाये थे कि ४५ मिनिट का घण्टा समाप्त और चले छात्र दूसरे अध्यापक के पास। धीरे-धीरे अंगरेज़ी ढंग प्रचलित होने लगा। नये ढंग की लालटैनें आयीं और कड़वे तेल की जगह मिट्टी का तेल आया। इसका कारण यह बतलाया गया कि पुराने ढंग के दीपकों के प्रकाश में पढ़ने से ब्रह्मचारियों की आँखों पर ज़ोर पड़ता है इत्यादि। धीरे-धीरे इनमें अन्य छोटी मोटी बातें मिलती रहीं और प्रतिदिन मामला उग्ररूप पकड़ता गया। यह सब बातें मेरे गुरुकुल में आने के पूर्व ही होने लगी थीं। मेरे आने पर आचार्य जी का पक्ष प्रबल हुआ। क्योंकि मैं यथार्थ बातों में आचार्य जी के साथ ही रहा। चाहे और औपरिष्टिक प्रकार कितने ही बदलें किन्तु गुरुकुल जैसी प्राचीन पद्धति की संस्था में संस्कृत का ही प्राधान्य रहे, यह मैं चाहता था। अंगरेज़ी के लिये सरकारी और गैर सरकारी स्कूल और कॉलेज क्या थोड़े थे। महात्मा मुन्शीराम जी व आचार्य पं० गंगादत्त जी की क्या-क्या बातें हुईं, कौन जाने। एक रात्रिको दस बजे के समय एक नौकर मेरे पास मेरी अपनी आनन्दाश्रम की कुटिया में आया और उसने कहा कि आचार्यजी बुला रहे हैं। मुझे आश्चर्य हुआ कि इस समय ऐसी क्या बात आ पड़ी जो बुलाया जा रहा हूँ। आचार्य जी गुरुकुल बाटिका के चक्कर में मेरी प्रतीक्षा में खड़े थे। मैं गया और प्रणाम करके पूछा कि कहिए क्या बात है—

आचार्यजी—मैं हृषीकेश जा रहा हूँ।

मैं—क्यों ?

आचार्यजी—वैसे हो आऊँगा, यहाँ पड़े-पड़े बहुत दिन हो गये।

मैं—कब आयेंगे ?

आचार्यजी—अभी तो कह नहीं सकता।

मैं—क्यों, ऐसी क्या बात है ?

आचार्यजी—बस इतना ही कह सकता हूँ कि तुम सावधानी से रहना, अपना कार्य दक्षता से करते रहना ।

मैं—अच्छी बात है ।

इतना कहकर मैं कुटिया में वापस चला गया। दूसरे दिन ऊपर पर्वत में वर्षा पड़ने के कारण गंगा जी में जल बढ़ गया था। आचार्य जी को बहुत रोका गया कि आज न जाँय किन्तु आचार्यजी चले ही गये। बा० प्रतापसिंह व मैं पहुँचाने के लिये गंगा जी तक गये थे। फिर मुझे पता चला कि आचार्य जी व महात्मा मुन्शीराम जी में कोई ऐसी बातचीत हुई है जिससे आचार्य जी जा रहे हैं। और इधर उधर खोदने-खादने से पता चला कि आचार्य जी ने जब आश्रम व गुरुकुल की अनेक बातों के सुधार पर अत्यधिक बल दिया तब महात्मा मुन्शीरामजी ने कहा कि आप तीन मास के लिये इधर उधर घूम आइये, तब तक मैं स्थिति को क़ाबू में लाकर ठीक कर रक्खूँगा। रामदेव जी के उद्धत व्यवहार से भी आचार्य जी तंग थे। तीसरे दिन गुरुकुल में हृषीकेश से आचार्य जी का पत्र आया (म० मुन्शीरामजी के पास) जिसमें तीनचार ही शब्द थे—

श्रीमान् जी नमस्ते ।

गुरुकुल को मेरी अन्तिम नमस्ते है ।

इस पत्र को देखते ही मुन्शीरामजी बेचैन हुये प्रतीत होते हैं। उन्होंने तत्काल एक चपरासी मेरे बुलाने के लिये भेजा। मैं कार्यालय में आया और महात्माजी ने मेरे हाथ में वह चिट्ठी "देखिये यह क्या है" कह कर देदी। मैंने उसको पढ़ा और वापस उनके हाथ में देदी।

मुन्शीरामजी—आप से कुछ कह गये हैं ?

मैं—कल रात उन्होंने मुझे बुलाया था तब उन्होंने कहा हृषीकेश जा रहा हूँ ।

मुन्शीरामजी—देखिये, इस तरह, कैसे काम चलेगा, यह संस्था है, सबको ही संभालना पड़ता है।

मैं—आप जानें और वे जानें ।

मुन्शीरामजी—आप उनको लिखिये ।

मैं—मैं उनका स्वभाव जानता हूँ, मैं नहीं लिखूँगा। बातें तो आपकी और उनकी हुई होंगी। आप ही को लिखना चाहिये ।

आचार्य जी के पत्रवाहक थे श्रीधर जी (आचार्य जी के भतीजे)—मुन्शीरामजी जब मुझसे बात कह रहे थे तब वह यह समझ रहे थे कि मुझे उनकी व आचार्य जी की बातों का पता नहीं है। उनकी बातों को केवल बा० प्रतापसिंह जानते थे। आचार्य जी उनसे कह गये और बहुत सिर होने पर ही बा० प्रतापसिंह ने मुझे सब बातें बतलाई थीं। गुरुकुल में और कोई भी इस बात को नहीं जानते थे। स्वर्गीय रामदेव जी को भी यह पता नहीं था कि आचार्यजी क्यों चले गये। जब धीरे-धीरे पण्डित-मण्डली

को इस बात का पता चला तब उनको क्लेश हुआ कि आचार्य जी ने बिना कुछ कहे-सुने ऐसा निश्चय क्यों किया। मुन्शीराम जी की बात पर भी क्रोध आया कि उन्होंने आचार्य जी को ऐसी सलाह क्यों दी। पण्डित मण्डली ने निश्चय किया कि तब जिसका मौका लगे तब गुरुकुल से निकल चलना चाहिये। मैं कई मास तक रहा और अपना कार्य दक्षता से करता रहा। महात्मा मुन्शीराम जी पंजाब में इबिटसन के ज़माने में आर्यसमाज पर घोर अत्याचार हो रहा था, तब छुट्टी पर पंजाब चले गये थे। जालन्धर के ला० रामकृष्ण जी अधिष्ठाता बनकर आये थे। उनके समय में त्यागपत्र दिया और उन्हीं के समय में संमानपूर्वक चला आया। सम्मान में सभा हुई थी, भोज मिला था, ब्रह्मचारियों ने अभिनन्दन पत्र दिया था। वैदिक मैगेज़ीन में जिसके सम्पादक रामदेव जी थे, इस वियोग के विषय में बहुत अच्छे शब्दों में लिखा गया था। सबसे पहले श्री आचार्य जी गये। थोड़े दिनों के पश्चात् श्री पं० भीमसेन जी चले आये। तीसरा नम्बर मेरा था। पं० पद्मसिंह जी तो आचार्य जी से पहले ही परोपकारी के सम्पादक बनाकर अजमेर भेज दिये गये थे। मेरे चले आने के पश्चात् पं० यागेश्वर जी ज्योतिषी कनखलवासी, श्री प्रो० सियाराम जी एम. ए. चले आये। बा० प्रतापसिंह जी आचार्य जी के चले जाने के पश्चात् ही सकुटुम्ब चले आये। ब्र० ऋषिदेव (बा० जी का पुत्र) हृषीकेश में आचार्य जी के पास रहने लगा और वहाँ बेलोन के चन्द्रगुप्त, सोमगुप्त, आचार्य जी का भतीजा श्रीधर रहने लगे। फिर ये सब भोगपुर चले गये। वहीं पं० भीमसेन जी भी पहुँचे। बाबू जी भी सकुटुम्ब वहीं आगये और वहीं एक अच्छा जमघट हो गया। बीच में एक बार मुन्शीराम जी ने मायापुर वाटिका से भोगपुर आदमी भेजा था तब आचार्य जी और बा० प्रतापसिंह गये थे। उस समय समझौता हो चुका था किन्तु श्री रामदेव को यह समझौता पसन्द नहीं था इसलिए मुन्शीराम जी भी विवश हो गये और इधर महाविद्यालय के बाबू सीताराम जी ने आचार्य जी को महाविद्यालय में ला बिठाया। इससे पूर्व स्वा० दर्शनानन्द जी की प्रबल प्रेरणा से पं० भीमसेन जी महाविद्यालय में आ गये थे। जिन रामदेव जी के हाथों में मुन्शीराम जी खेल रहे थे उन्हीं हाथों ने पश्चिम अवस्था में मुन्शीराम जी को भी उसी प्रकार के क्लेश पहुँचाये यह एक विचित्र योगायोग की बात है। मुन्शीराम जी ने कृष्णपार्टी अथवा प्रकाशपार्टी को हाथ में लेकर कई प्रतिस्पर्द्धी व प्रतिरोधी विरोधी दलों को दबाया था, उसी प्रकाशपार्टी के हाथों महात्मा मुन्शीराम को अर्द्धचन्द्र मिलने वाला था किन्तु प्रारब्ध के बली मुन्शीराम ने संन्यास लेकर इनसे अपना पिण्ड छुड़ाया, अपना संकुचित कार्य-क्षेत्र बदला और संसार में वह अपूर्व यश प्राप्त किया जिसके लिये बड़ों बड़ों को भी ईर्ष्या हुई। जब हम गुरुकुल में थे तभी मुन्शीराम जी ने अपने विरोधियों के उत्तर में 'दुखी दिल की पुरदर्द दास्ताँ' लिखी थी। मुन्शीराम में बार-बार त्याग पत्र देने की आदत थी पर ये त्यागपत्र बार-बार लौटा दिये जाते थे क्योंकि आर्य जनता मुन्शीराम जी के साथ थी। और क्यों न होती जब उन्होंने गुरुकुल के लिये तन,मन,धन स्वजन और स्वार्थ तक का त्याग कर डाला था। १९०६ में एक और बात हुई थी। महात्मा मुन्शीराम जी और स्वा० दर्शनानन्द जी की इस बात पर ठन गई थी कि इन्होंने ज्वालापुर में महाविद्यालय क्यों खोला। दो गुरुकुल इतने समीप नहीं होने चाहियें इत्यादि। बड़े बड़े बीभत्स व भयङ्कर काण्ड हुये उनका उल्लेख अनावश्यक है। अब समझ में आ रहा है कि महाविद्यालय के यहाँ खुलने में ईश्वरीय

हाथ था। और "दो गुरुकुल इतने समीप नहीं होने चाहिएँ" उस समय इस बात को बलपूर्वक कहने वाले लोग और उनका प्रिय गुरुकुल स्वयं महाविद्यालय के पास आ बैठे हैं। यह भी अघटित-घटना पटीयसी–भगवती–भवितव्यता के ही खेल हैं। मैं तो गुरुकुल छोड़कर महात्मा भगवानदीन जी की प्रेरणा से गुरुकुल फर्रुखाबाद चला गया था। वहाँ एक वर्ष आचार्य रहा।

फर्रुखाबाद में

१९०७—१९०८

यह गुरुकुल पन्नालाल के बाग में था। बा० गुलराज गोपाल गुप्त, बा० रामदीन चौबे रामदुलारे-लाल वकील, बा० सूर्यप्रसाद जी,पं० गणेशदत्त शर्मा सम्पादक भारतसुदशा प्रवर्त्तक इत्यादि के सहयोग से बहुत काम हुआ। उस समय पं० देवदत्त जी शास्त्री कासगंज-निवासी (आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान्) भी गुरुकुल में आ गये थे। अब उनका पुत्र गुरुकुल वृन्दावन में अध्यापक है। उनका नाम पण्डित तेजोनारायण शर्मा है। हमारे चले आने के पश्चात् यह गुरुकुल वृन्दावन चला गया क्योंकि राजा महेन्द्रप्रताप ने वर्त्तमान स्थान गुरुकुल को दान किया था। मैं और स्व० कु०हुक्मसिंह जी आंवई-निवासी राजा महेन्द्रप्रताप से इस विषय में भी मिले थे। और एक डेपूटेशन भी गया था। जब तक गुरुकुल फर्रुखाबाद में रहा तब कुछ काल तक पं० महेशप्रसाद जी (म० भगवानदीन के ज्येष्ठ भ्राता), फिर कुंवर हुक्मसिंह जी व गुरुकुल के वृन्दावन जाते समय महात्मा भगवानदीन मुख्या-धिष्ठाता रहे। महात्मा भगवानदीन तेजस्वी पुरुष थे। सबसे पहला परिचय शाहजहाँपुर की प्रतिनिधि के अधिवेशन में हुआ था, यह बात १९०४ की है। पत्रव्यवहार तो बहुत दिनों से हो रहा था। गुरुकुल महाविद्यालय में भी आप एक वार पधारे थे। फर्रुखाबाद में घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ। यू० पी० व पंजाब के गुरुकुलों को मिलाने की बात एक वार चली थी तब आपने ही अपनी दक्षता से वैमनस्य की मात्रा को घटाया था।

मेरे अनुरोध व घोर प्रयत्न के पश्चात् ही आपने गुरुकुल सिकन्दराबाद को अपनाने का निश्चय किया था और १९०६ में यह गुरुकुल सिकन्दराबाद से फर्रुखाबाद चला गया। गुरुकुल फर्रुखाबाद में रहने से हमको संयुक्त प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा की कार्यप्रणाली व प्रान्त के समस्त प्रमुख कार्यकर्त्ताओं का परिचय मिला। संयुक्तप्रान्त की सब समाजों में अव्याहत प्रवेश हो गया। मैं जब तक फर्रुखाबाद में रहा प्रायः उन स्थानों में जाकर कभी-कभी घंटों बैठा रहता था, जहाँ कि कभी स्वा० जी रहे थे। कभी-कभी घटियाघाट की विश्रान्तों में चला जाया करता था। यहाँ के साध लोग बड़े श्रद्धालु भक्त होते हैं, दानी भी बड़े हैं। इसी फर्रुखाबाद में स्वा० जी ने अपनी संस्थापित संस्कृत की पाठशाला को तोड़ दिया था क्योंकि स्वा० जी उससे कोई लाभ नहीं समझते थे। स्वा० जी की पाठशाला उसी पन्नालाल के बाग में थी जिसमें गुरुकुल था। फर्रुखाबाद स्वा० जी की प्रियभूमि रही है।

जिन आँखों ने पूने में गोखले-तिलक दल की झोड़ें देखीं, जिन आँखों ने पंजाब में महात्मा और कल्चर्ड पार्टी के खेल देखे, जिन आँखों ने महात्मा दल में भी फिर दो दल देखे, फिर जिन आँखों ने

गुरुकुल में म० मुन्शीराम व आचार्य गंगादत्त जी इन दो मित्रों का परस्पर वियोग देखा उन्हीं आँखों ने अभी और बहुत से दृश्य देखने हैं। कांग्रेस में भी इन आँखों ने नरम-गरम, सहयोगी प्रतिसहयोगी के दृश्य देखे हैं। परिवर्तनवादी अपरिवर्तनवादी के दृश्य देखे हैं। सब जगह मैंने—

मनस्ते महदस्तु च

(महाभारत)

'तेरा मन बड़ा हो उदार हो,' इसी का अभाव पाया। महात्मा गांधी की संसारव्यापी विजय इसी 'मनस्ते महदस्तु' च का विपक्व परिणाम है। उनकी विजय इसी तत्त्व में ओतप्रोत है। आर्य-समाज में मैंने जितने झगड़े देखे वे सब व्यक्तिगत झगड़े थे। जितने झगड़े देखे वे सब सिद्धांत की आड़ लेकर किये गये। ये व्यक्तिगत झगड़े आगे जाकर संस्थाओं के झगड़ों में परिवर्त्तित हो गये और इन्हीं संस्थाओं के प्रश्नों में आर्यसमाज में काम भी खूब हुआ, झगड़े भी खूब हुये और नेताओं की शक्ति का दुरुपयोग भी खूब हुआ। आर्यसमाज का वह सुन्दर प्रचारकार्य संस्थाओं के कारण सीमित होगया है और—

'बत्ती बहुत है मोटी
रोगन बहुत है कम'

यह उक्ति सर्वथा चरितार्थ हो रही है।

गुरुकुल फर्रुखाबाद से चले आने के पश्चात् कलकत्ते से श्री गुरुजी का पत्र आया, जिसमें मुझे कलकत्ते बुलाया था। गुरुजी चाहते थे कि कलकत्ता विश्वविद्यालय में वेद-व्याख्याता का स्थान मुझे दिलाया जावे। गुरुजी अपने स्थान में मुझे कराना चाहते थे। श्री आशुतोष मुकर्जी (विश्वविद्यालय के वाइस चैन्सलर) से उन्होंने बात चीत कर ली थी। किन्तु मुझे नौकरी से घृणा थी इसलिये मैं नहीं गया और हमारे गुरुजी अत्यन्त रुष्ट हुये। उनकी बहुत इच्छा थी कि मैं आर्यसमाज के मण्डल से निकल कर कलकत्ते में रहूँ और अन्य क्षेत्र में कार्य करूँ। खेद है मैं उनकी इस इच्छा को पूर्ण न कर सका। फर्रुखाबाद से चल कर सीधे शिमला पहुँचा और वहां कई मास रहा। शिमले में सभी देश के विशेष २ व्यक्तियों से परिचय हुआ। स्व० श्री पं० बलदेवसहाय व्यास (महाविद्यालय के मन्त्री) का परिचय वहीं हुआ था। भारतवर्ष के शासन की बागडोर शिमले के शिखर से हिलती है यह मैं सुना करता था। तब क्या अब भी शिमले से ही हिलाई जाती हैं। यद्यपि भारत सरकार का स्थायी केन्द्र देहली है तथापि शिमले के शीतल वातावरण में गौराङ्गमहाप्रभु अधिक प्रसन्न रहते हैं और प्रत्येक महत्त्वयुक्त बात की रूपरेखा वहीं खींची जाती है यह बात तो दिन में सूर्यप्रकाश की तरह स्पष्ट है।

शिमले में रहकर मैंने भविष्य के विषय में विचार किया। मन में आया चलो कलकत्ते वहीं रहेंगे। पर कभी यह भी ख्याल आता रहा कि जिन अदृश्य हाथों ने मुझे पूने से लाहोर में, लाहोर से संयुक्त प्रान्त में, कभी हरद्वार में, कभी ग्वालियर में, कभी काशी कलकत्ते में, कभी कांगड़ी और

फर्रुखाबाद में धकेला वही अदृश्य हाथ जहाँ मेरी आवश्यकता होगी वहीं धकेलेगा। ऐसा विचार इसलिये आया कि मैं पक्का प्रारब्धवादी बन चुका था। हमारे साथ हमारे मित्र श्री मुनिदेव जी भी थे। वे भी कहते रहे कि सोचने से क्या होता है। अब तक जो बातें सोची वह कौनसी होगईं। मैंने कहा बात तो ठीक कहते हो। जब २ हम निराश्रित हुये उसने ही अपने अदृश्य हाथों से सहायता पहुँचाई व रक्षा की। जब २ आंखों के सामने अन्धकार आया तभी उसी ने चमक दिखला कर मार्ग बतलाया। उस भगवान् की अनुपम लीला देखिये कि बाल्यावस्था में घर छुड़ा कर धीरे धीरे समस्त भारतवर्ष को ही मेरा बड़ा घर बना दिया। मेरा मोह जाता रहा, समस्त भारतवर्ष ही मेरा देश है। समस्त भारतवर्ष ही मेरा कुटुम्ब है। पिताजी मुझे इंजीनियर बनाना चाहते थे, जब विघ्न पड़ा तब मैंने डॉक्टर बनने की सोची; पर भगवान् चाहते थे कि मैं सच्चे अर्थों में देश भिक्षुबनूँ। जब स्कूल छूटा, कॉलेज में अध्ययन में भी बाधा पड़ी तब बहुत दुःखी था कि क्या होगा, कैसे होगा। अब समझ में आरहा है कि ऐसा होना था, यही होना था—जबसे मैंने शरीर को प्रारब्ध के सुपुर्द किया है तब से मैं सुखी रहने लगा, मस्त बन गया। तब से किसी घटना पर आश्चर्य नहीं होता, किसी प्रकार के संयोग-वियोग में विस्मय नहीं होता, किसी दुर्घटना अथवा क्लेश के लिये मैं किसी अन्य पर दोषारोपण नहीं करता। मैं भगवान् से प्रार्थना कर रहा हूँ कि वह मेरे शेष जीवन को दरिद्रता में ही क्यों न हो सरलता से व्यतीत करने की शक्ति देवे। मैं अर्थदरिद्र भले ही रहूँ पर धीदरिद्र कभी न बनूं। क्यों कि—

जीवत्यर्थदरिद्रोपि
धीदरिद्रो न जीवति।

भगवान् से मेरी दो ही प्रार्थनाएँ हैं—एक

"धर्मे मे धीयतां बुद्धिः,
मनो मे महदस्तु च—'

मेरी बुद्धि धर्म में लगी रहे—और
मेरा मन बड़ा हो, विशाल हो, उदार हो।—दूसरी
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु

मेरा मन शुभसंकल्प वाला हो। इन दो प्रार्थनाओं के अतिरिक्त मैं भगवान् से कुछ भी नहीं मांगता। मुझे अब इन्हीं दो तत्त्वों का सुन्दर बोध हो गया है, मेरे जीवन का बोधसार यही है।

हम लिख रहे थे शिमले की बात, लेख लिखने के प्रवाह में किधर कि किधर जा पहुँचे। अभी तो तब से अब तक की कथा शेष है—और एक बात लिख कर दूसरी तरफ चलेंगे। मेरा यह अनुभव है कि भगवान् देना चाहें तो छप्पर फाड़ कर देता है। जब से लाहौर छोड़ा बराबर इसी बात के अनुभव मिलते रहे हैं। उसके अदृश्य हाथों की लीला की बात को योगी जन ही जान सकें तो जान सकें। सामान्य मनुष्य क्या जाने।

महाविद्यालय में
(१६०८ जनवरी)

शिमले की सैर कर ही रहे थे। ज्वालापुर से पत्र पहुँचा कि आचार्य जी सख्त बीमार हैं। एक तार भी पहुँचा। हम शिमला से ज्वालापुर आये। वस्तुतः आचार्य जी की दशा शोचनीय थी। मैंने म० मुन्शीराम जी को पत्र लिखा कि "आपके मित्र आचार्य जी इतने अधिक रुग्ण हैं तो भी आपने खबर नहीं ली।"—उधर देहरादून के डॉक्टर श्रीराम जी को बुलवा कर आचार्य जी की परीक्षा करायी गई। बा० प्रतापसिंह जी, चौ० अमीरसिंह जी, श्री कर्मचन्द्र विद्यार्थी, चौ० जयकृष्ण जी, आदि ने आचार्य जी का पूरा पूरा ध्यान रक्खा। श्री पं० रविशंकर शर्मा, डाक्टर हरद्वारीसिंह आदि सज्जन भी आये थे। आचार्य जी को कुछ आराम होने पर मैं कार्यवश मुरादाबाद गया। वहां से फिर एक पत्र श्री मुन्शीराम जी को लिखा। ज्वालापुर से फिर मेरे पास पत्र पहुँचा जिसमें आचार्य जी के रोग के बढ़ जाने का उल्लेख था। बा० प्रतापसिंह जी ने अर्जेण्ट तार भेजा। तब मैं मुरादाबाद से फिर ज्वालापुर आया, आचार्य जी की दशा देखी। मन में विचार हुआ कि इनको कांगड़ी क्यों न भेज दिया जाय, जहाँ सब प्रकार का सुविधा रहेगी। यदि इनका शरीर छूट गया तो और यदि वहाँ स्वस्थ हुये तो दोनों दशा में ठीक ही है।

हमारे मित्र ठाकुर मुलायमसिंह हमारे साथ थे, उनको हमने रात्रि में ही कांगड़ी भेज दिया और दूसरे दिन प्रातःकाल म० मुन्शीराम लगभग ६०–७० ब्रह्मचारियों के समेत आ गये। आचार्य जी महाराज को लिवा ले जाने के लिये साथ पालकी भी लाये थे। चिरकाल में दोनों मित्र मिले यह देख कर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। म० मुन्शीराम जी ने श्री आचार्य जी से कांगड़ी चलने की प्रार्थना की किन्तु वे हिचकिचा रहे थे। बा० प्रतापसिंह जी व मैं आचार्य जी के जाने के पक्ष में थे। चौधरी जयकृष्ण जी, चौ० अमीरसिंह जी आदि इस बात को उचित नहीं समझते थे। आचार्य जी इसलिये हिचकिचाते थे कि उन्होंने महाविद्यालय के मेम्बरों से कह रक्खा था कि वे महाविद्यालय में ही रहेंगे और इसको समुन्नत बनाने की चेष्टा करेंगे। चौ० अमीरसिंह यही कहते रहे कि आचार्य जी को कांगड़ी किसी दशा में भी नहीं जाना चाहिये पर हम कब सुनने वाले थे। हम यह अच्छी तरह जानते थे कि यदि आचार्य जी यहीं रहे और स्वस्थ हो गये तो इनके साथ हम लोगों को भी महाविद्यालय में मरना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त हमको इस बात का बड़ा खेद था कि आचार्य जी ऐसी जगह क्यों आ बैठे जिसमें कोई व्यवस्था ही नहीं। मेरे मन ने तो स्पष्ट कह दिया था कि यह स्थान आचार्य जी के अनुरूप नहीं है इसलिये दोनों मित्रों के सम्मेलन के इस अपूर्व योग को मैं हाथ से नहीं छोड़ना चाहता था। म० मुन्शीराम जी ने आकर कहा कि आचार्य जी तो नहीं मान रहे हैं जाओ समझाओ। मैं कमरे में आया और मैंने स्वामी जी से बातचीत की—

मैं—क्या बात है, आप क्यों नहीं जाते ?

आचार्य जी—कैसे जाऊँ, मैं तो मेम्बरों से प्रतिज्ञा कर चुका हूँ कि महाविद्यालय से कहीं नहीं

जाऊँगा। इसी वायदे पर महाविद्यालय सभा की रजिस्टरी करवा दी गई है।

मैं— इस समय आप मृत्यु मुख में हैं। जब प्राण शेष रहेंगे तब आप फिर यहाँ लौट सकते हैं। आप कांगड़ी जाइये आपके स्वस्थ होकर लौटने तक मैं यहाँ बैठा हूँ।

आचार्य जी—अच्छी बात है, मुन्शीराम जी से कह दो।

जब से आचार्य जी महाविद्यालय में बैठे थे तब से इन्होंने कई बार बुला कर महाविद्यालय में रहने के विषय में कहा था। मैंने इनकी बात पर कभी ध्यान नहीं दिया। कांगड़ी को छोड़ने के पश्चात् मैंने मन में करीब करीब निश्चय कर लिया था कि भविष्य में आर्यसमाज के संस्थावाद में नहीं पड़ूँगा। जब मैंने आचार्य जी को आश्वासन दिलाया कि उनके लौट कर आने तक मैं महाविद्यालय में रहूँगा तब उनको अत्यन्त प्रसन्नता हुई। मैंने बाहर आकर मुन्शीराम जी से कहा 'ले जाइये'— म० मुन्शीराम बहुत प्रसन्न हुये और बड़े आदरभाव व सावधानता से आचार्य जी को पालकी में लिटाया और ब्रह्मचारियों से सावधानता से ले जाने को कहा। ब्रह्मचारिगण आचार्य जी को लेकर चले गये और म० मुन्शीराम यहीं रह गये और बा० प्रतापसिंह व मुझसे भी चलने को कहते रहे। हमने मना कर दिया तब उन्होंने कहा 'आज तो चलो, कल लौट आना' तब हम उनके साथ हो लिये। मार्ग में पुराने किस्सों की, जो स्वप्नवत् प्रतीत हो रहे थे, पुनरावृत्ति हुई। पञ्चपुरी में इस प्रकार मुन्शीराम जी के आने व आचार्य जी को ले जाने की बात बिजली की तरह फैल गई। लोग बड़े प्रसन्न थे। हमने समाचार पत्रों में भी समस्त घटना का वृतान्त भेज दिया था। लोग चकित थे कि यह बात कैसे हुई। वैसे आर्यमण्डल इस वृत्तान्त को सुन कर प्रसन्न हुआ था। म० मुन्शीराम जी, बा० प्रतापसिंह जी, ठा० मुलायमसिंह जी व मैं कांगड़ी पहुँचे (ता० ३ फरवरी १९०८) वहाँ आचार्य जी की सब व्यवस्था देख कर और सबसे मिलकर हम उसी सायंकाल महाविद्यालय लौट आये। हम समझ रहे थे कि दो वियुक्त मित्रों को चिरकाल के पश्चात् इस प्रकार फिर मिलाने का विधि का कोई विशेष हेतु है।

उस समय महाविद्यालय में ग्यारह विद्यार्थी थे, तीन बीघे ज़मीन थी। बीच का शान्ति-निकेतन का बंगला और जिसको देवाश्रम कहा जाता है ये स्थान थे और गृहस्थियों के खपरैल के मकान भी थे। इसी में ब्रह्मचारी रहते थे। देवाश्रम के स्थान पर गृहस्थी लोग रहते थे। श्री पं० भीमसेन जी, श्री बा० प्रतापसिंह जी और लाला चिम्मनलाल वैश्य तिलहर निवासी इन तीनों का परिवार यहीं रहता था। चौ० जयकृष्ण जी जहाँ अब गृहस्थियों के मकान हैं वहाँ एक कोने के कमरे में रहते थे। उस समय के ब्रह्मचारियों में श्री विश्वनाथशास्त्री (आचार्य गुरुकुल भैंसवाल), श्री हरिशंकर शास्त्री (महोपदेशक महाविद्यालय) स्व० श्री चन्द्रदत्त शास्त्री, श्री जयदेवगुप्त वैद्यभूषण नजीबाबादी (संगरिया-मण्डी राज्य बिकानेर) इनके ही नाम मुझे याद हैं और शेष भूल गये। (ता० ८ फरवरी १९०८ के) सद्धर्म प्रचारक में महाविद्यालय की स्थिति के विषय में मैंने एक लेख छपवाया था जिसमें स्वा० दर्शनानन्द जी ने किस प्रकार महाविद्यालय की स्थापना की थी, व अब तक क्या विघ्न बाधाएँ

आपड़ी और भविष्य में श्री पं० भीमसेन जी शर्मा की निरीक्षकता व मुख्याध्यापकत्त्व में किस प्रकार सुन्दर कार्य की संभावना है इत्यादि बातों का उल्लेख किया गया था। यह भी लिख दिया गया था कि स्वा० जी के हाथ में काम नहीं है। रजिस्टर्ड सभा के हाथ में काम सौंप कर स्वा० जी पंजाब चले गये हैं इत्यादि उस लेख के नीचे स्थानापन्न कार्यकर्त्ता की हैसियत से मैंने हस्ताक्षर किये थे।

महात्मा मुन्शीराम जी को भी उनकी सद्भावना के लिए धन्यवाद दिया गया था। मार्च तक (महाविद्यालय के महोत्सव तक) मेरा यहाँ रहना अपरिहार्य हो गया। उन दिनों दोनों के महाविद्यालय व गुरुकुल के जलसे एक साथ होली की छुट्टियों में ही हुआ करते थे। मैंने मन में विचारा कि महोत्सव में महाविद्यालय की सभा स्वयं किसी व्यक्ति को मुख्याधिष्ठाता चुन लेगी और मैं स्वतन्त्रता-पूर्वक कहीं चला जाऊँगा। बीच में एक और घटना हुई। श्री म० मुन्शीराम जी और पूज्य पिताजी का सदैव पत्र-व्यवहार रहता था। पिताजी ने मुझे लिखा कि तुम्हें महात्मा मुन्शीराम जैसे आर्यसमाज के श्रेष्ठ नेता के पास रहना चाहिये और वे जिस-जिस बात को कहें उसको मान लेना चाहिये। एक तार भी आया जिसमें दो ही शब्द लिखे थे "Join Kangri" कांगड़ी में काम करो। अचानक इस प्रकार के पत्र और तार के आने से मैं समझ गया कि म० मुन्शीराम जी व पिताजी का कोई विशेष पत्र-व्यवहार हो रहा है। महात्मा मुन्शीराम जी ने मुझे बुलाया और कहा कहाँ इधर उधर जाते फिरोगे, कांगड़ी के लाइफ मेम्बर बनकर यहीं रहो। मैंने लाइफ मेम्बरी के नियम पूछे। नियमों को पढ़कर मैंने दो चार दिन का अवकाश मांगा और कहा कि सोच विचार कर उत्तर दूँगा। महाविद्यालय लौटकर कई दिन तक सोचता रहा। इसी अवसर पर कलकत्ते से गुरुजी का भी पत्र आया जिसका आशय यह था कि आर्य-समाज जैसे संकुचित कार्य-क्षेत्र को छोड़कर कलकत्ते चले आने से भविष्य में बहुत कल्याण होगा, तुम्हारे लिये हमने स्थान की आयोजना कर रक्खी है इत्यादि। आप ही की कृपा से मैं ७–८ वर्ष तक कलकत्ता संस्कृत कॉलेज की तीर्थ, मध्यमा, प्रथमा परीक्षा का परीक्षक रहा। जब मैं कई दिन तक कांगड़ी नहीं गया और न कोई उत्तर दिया तब म० मुन्शीराम का नौकर चिन्ता एक पत्र लेकर मेरे पास आया जिसमें मुन्शीराम जी ने मेरे निश्चय के विषय में पूछा था। मैंने उसी समय उत्तर लिख दिया, उसके शब्द मुझे अभीतक याद हैं,—

"श्री प्रधान जी (उस समय हम महात्मा जी को प्रधान जी ही कहते थे)

सादर नमस्ते।

मैंने पूर्ण विचार किया किन्तु वहाँ आने की बात मेरी समझ में नहीं आ रही है। नौकरी से मुझे अत्यन्त घृणा है। पिताजी भी मुझे कांगड़ी जाने को ही लिख रहे हैं किन्तु विवश हूँ। अन्तरात्मा नहीं मान रहा है। मैं महाविद्यालय के उत्सव तक यहीं हूँ—क्षमा।

—नरदेवशास्त्री

पिताजी को लिख दिया कि मैं कांगड़ी नहीं जासकता। गुरूजी को लिखा कि मार्च के पश्चात् उधर के विषय में सोचूँगा। बस यह बात यहीं समाप्त हुई। पिताजी को मैंने कांगड़ी के पहले वृत्तान्त लिख भेजे और लिख दिया कि जब एक वार वहाँ से चले आये अब जाना ठीक नहीं। सच पूछो तो

मुझे महात्मा मुन्शीराम जी के पास ही रहना चाहिये था किन्तु आचार्य जी का साथ छोड़ना कृतघ्नता की बात समझता था। कांगड़ी में जो लोग आचार्य जी से मिलने जाते थे, वे यही आकर कहते रहते थे कि आचार्य जी महाविद्यालय अवश्य आवेंगे। वे वहाँ प्रसन्न नहीं हैं। यह भी पता चल गया था कि रामदेव जी की कही हुई कई बातें आचार्य जी के कानों तक पहुँच चुकी हैं इसलिये वे अप्रसन्न हैं। इस प्रकार आचार्य जी और रामदेव जी का गोत्र न मिल सका। उस समय मुन्शीराम जी की यह स्थिति थी कि रामदेव जी के बिना वे कुछ भी नहीं कर सकते थे। श्री आचार्य गंगादत्त जी यहाँ से जो गये बराबर हस्पताल में ही रहे और महाविद्यालय के मेम्बर लोग जाकर गुरुकुल कांगड़ी व महाविद्यालय के उत्सव के दिनों में ही उनको ले आये। महात्मा मुन्शीराम आचार्य जी का महाविद्यालय आना नहीं चाहते थे पर भगवती भवितव्यता की बात को वे भी कैसे टालते ?

फिर महाविद्यालय में

महाविद्यालय के महोत्सव में खूब जमघट रहा। मास्टर आत्माराम जी, पं० गणपति शर्मा, पं० अखिलानन्द जी, पं० जगन्नाथ निरुक्तरत्न, पं० सीताराम शास्त्री कविरत्न आदि समाज के जितने भी प्रमुख पण्डित व्याख्याता थे, आये। जो भी कांगड़ी गया वह यहाँ अवश्य आया। इस उत्सव की सफलता का श्रेय अधिकतर चौ० जयकृष्ण जी को देना चाहिये। आर्यजगत् में एक तहलका-सा था। लुक्सर स्टेशन पर तीस सहस्र विज्ञापन बाँटे गये थे। दक्ष के मन्दिर पर उधर से यात्रियों को लाने के लिये बैलगाड़ियों का प्रबन्ध किया गया था। गणपतिशर्मा व मास्टर आत्माराम जी के व्याख्यानों ने आर्य जनता को हिला दिया। जब आचार्य जी कांगड़ी से लौट आये उस दिन तो महाविद्यालय में अपूर्व उत्साह रहा। पं० अखिलानन्द ने टोपी उतार उतार कर खूब धन मांगा। पाँच सहस्र रु० (नक़द और प्रतिज्ञा रूप में) प्राप्त हुआ। कई नये ब्रह्मचारी प्रविष्ट हुये। उनमें स्व० पं० वासुदेव शर्मा भजनोपदेशक (ऊमरी निवासी) के भतीजे पं० सत्यव्रत शास्त्री अध्यापक महाविद्यालय भी थे। ये गये थे वहाँ कांगड़ी प्रविष्ट होने, पर वहाँ प्रवेश नहीं हुआ। फर्रुखाबाद गुरुकुल के महोत्सव के पश्चात् यह पहला ही इतना बड़ा समारोह देखने को मिला व यह कार्य हमारे हाथों से सम्पन्न हुआ इस बात की बड़ी प्रसन्नता रही। पण्डित पद्मसिंह जी शर्मा भी उत्सव से पूर्व आ गये थे, उनके कारण भी मोद-आमोद-प्रमोद की प्रचुर मात्रा रही।

मैंने पद्मसिंह जी को म० वि० के महोत्सव का निमन्त्रण भेजा था साथ ही लिख दिया था कि 'अतर्कित गति से यहाँ फँस गया हूँ। महोत्सव करा कर चला जाऊँगा।' पद्मसिंह शर्मा ने लिखा कि मैं आ रहा हूँ, वहीं विचार होगा पर स्मरण रखिये —

भयाद्रणादुपरतं मंस्यते त्वां महारथाः,
येषां च त्वं बहुमतो, भूत्वा यास्यसि लाघवम्।
अवाच्यवादाँश्च बहून्, वदिष्यन्ति तवाहिताः,
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं, ततो दुःखतरं नु किम्॥ (गीता)

मैंने उत्तर दिया कि दूर बैठे बैठे ही बातें बना रहे हो, आओ देखो तो पता चले किस मुसीबत का सामना है। शर्मा जी लाहोर आर्यविद्यार्थी आश्रम में पढ़ते थे तभी का हमारा इनका परिचय। था। दो वर्ष एक साथ रहे। १८६६ में शर्मा जी लाहोर से चले गये फिर १६०१ में बिजनौर के उत्सव पर मिले थे। जब ये कांगड़ी में थे (मेरे वहाँ जाने के पूर्व) तब हम दोनों में पत्र व्यवहार रहता था। पत्र व्यवहार प्रायः संस्कृत में होता था। वैसे सामाजिक क्षेत्र में यत्रतत्र मिलते ही रहते थे। जब महाविद्यालय के महोत्सव में भेंट हुई तब से आमरण घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। बीच में कई वार मनमुटाव हो गया था, पर उनके सुपुत्र स्व० काशीनाथ की बुद्धिमत्ता से बात बढ़ी नहीं।

इस उपर्युक्त महोत्सव की समाप्ति पर महाविद्यालय की महासभा हुई। उसमें सबने सर्वसम्मति से लेखक को ही मुख्याधिष्ठाता चुना। श्री आचार्य जी, पं० पद्मसिंह शर्मा, चौ० जयकृष्ण जी के अत्याग्रह के कारण मेरा सत्याग्रह (म० वि० से चले जाने का) फेल हुआ। पं० पद्मसिंह शर्मा भारतोदय के सम्पादक बने। श्री पं० भीमसेन शर्मा मुख्याध्यापक बनाये गये। आचार्य जी, जो कहीं भी जाँय आचार्य ही रहते हैं, महाविद्यालय के आचार्य रहे। तब से अब तक मेरा महाविद्यालय से किसी न किसी रूप में सम्बन्ध चला ही जाता है। क्या प्रतिष्ठित सदस्य,क्या अन्तरंग सभा के सदस्य, क्या विद्या सभा के सदस्य,मंत्री,उपप्रधान,प्रधान(एक वर्ष पाँच घण्टे के लिये प्रधान भी रह चुका हूँ।)मुख्याध्यापक, व्यवस्थापक, आचार्य, कुलपति, भारतोदय सम्पादक, किस किस बात को लिखा जाय प्रायः सभी पदों का काम करना पड़ा। प्रथम पाँच वर्ष अर्थात् १६०८ से १६१३ तक लेखक ही महाविद्यालय का मुख्याधिष्ठाता रहा। फिर लगभग दो वर्ष मन्त्री रहा। फिर तब से कभी कभी एक हाथ से महाविद्यालय व दूसरे हाथ से देहरादून-गढ़वाल-संभालना पड़ा। आज श्री स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी स्वा० दर्शनानन्द जी (संस्थापक) श्री बा० सीताराम जी (भूमिदाता) श्री पं० पद्मसिंह शर्मा, श्री पं० भीमसेन शर्मा, प्रधान महाराजसिंह, चौ० अमीरसिंह, ला० केवलकृष्ण, चौ० जयकृष्ण जी, सेठ सीताराम (अहार), पं० रामस्वरूप (अहार) डॉ हरद्वारीसिंह जी (रुड़की), पं० गणपति शर्मा, पं० सीताराम शास्त्री कविरत्न श्री पं० तुलसीराम जी (सामवेद–भाष्यकार मेरठ), श्री बाबू ज्योतिस्वरूप जी रईस देहरादून, श्री पं० बलदेवसहाय व्यास, चौ० मानसिंह रईस मुडलाना, ला० मुसद्दीलाल जी कोषाध्यक्ष, ला० शिवदयालसिंह रईस जानसठ, पं. वासुदेव शर्मा ऊमरी, आदि-आदि महाविद्यालय के प्राण-प्रतिष्ठापक गण इस असार संसार में नहीं हैं। इन्होंने जिस लगन से, जिस श्रद्धा से किसी ने तन से, किसी ने मन से, किसी ने तन मन धन से सेवा की उसको आर्यजगत् जानता है। महाविद्यालय के इतिहास में इनके नाम सुवर्णाक्षरों में लिखे जाने चाहियें। और साथ ही नाम लिखा जाना चाहिये, सबसे मोटे अक्षरों में आचार्य स्वामी शुद्धबोधतीर्थ जी महाराज का;जिन्होंने चौबीस वर्ष तक शान्त गम्भीर भाव से कार्य किया और कार्यकर्त्ताओं को भी सूत्र में बाँध रक्खा।

हम पाँचों में (श्री पं० रविशंकर जी को मिलाकर) एक बात विशेष थी, वह यह कि जब एक ने कोई काम कर डाला तो बस, इच्छा पूर्वक हो अथवा अनिच्छापूर्वक सब उस काम में जुट जाते थे। हानि-लाभ, यश-अपयश का लेखा सबमें समान रूप से बँट जाता था। परस्पर उग्र मतभेद भी रहते थे

पर गुरु-शिष्य-सम्बन्ध-परम्परा के कारण घर में ही मामले सुलझा लिये जाते थे। रूठा-राठी भी हो ही जाती थी पर शीघ्र ही मिट भी जाती थी। सन् १६१६ से मेरा ध्यान राजनैतिक क्षेत्र में लगा और सम्पादक पं० पद्मसिंह शर्मा घर की उलझनों में फँसे। और इसी वर्ष से दोनों के कार्यक्षेत्र भिन्न-भिन्न हुये। वे साहित्य क्षेत्र में अवतीर्ण हुये, मैं राष्ट्रीय क्षेत्र में उतर पड़ा। हमारे पीछे महाविद्यालय का समस्त भार श्री आचार्य जी व पं० भीमसेन शर्मा जी, पं० रविशंकर जी, ब्र० आनन्दप्रकाश जी व स्नातक मण्डल पर जा पड़ा। पं० काँचीदत्त जी शर्मा भी खूब काम करते रहे। इनके सुयोग्य पुत्र विद्याभास्कर पं० वासुदेव शर्मा काव्यतीर्थ होनहार व्यक्ति हैं।

१६१६ से १६३२ इस अवसर में एक बार १६२३ में जेल से आने के पश्चात् और एक बार १६२८ में मुख्याधिष्ठातृपद का भार लेना पड़ा। महाविद्यालय में हम चारों तो थे ही किन्तु गुरुकुल कांगड़ी छोड़ने के पश्चात् गुरुवर श्री पं० काशीनाथ शास्त्री भी छह वर्ष तक महाविद्यालय में रह गये। भाष्याचार्य श्री पं० हरनामदत्त जी भी दो वर्ष रहे। आपके आने से महाविद्यालय की ख्याति उत्तरोत्तर बढ़ती गई। १६०८ में ग्यारह विद्यार्थी और निराकार फण्ड का चार्ज लेकर जो कार्य चलाया गया था आज उसी महाविद्यालय में दो सौ छात्र विद्याध्ययन कर रहे हैं। जिसके पास केवल तीन बीघे ज़मीन थी उस महाविद्यालय के पास अब चार सौ बीघे ज़मीन व डेढ़ लक्ष की लागत के आश्रम तथा अन्य भवन हैं। सैकड़ों स्नातक व उपाधिधारी सुयोग्य ब्रह्मचारी यहाँ से निकलकर स्वशक्त्यनुरूप देश व धर्म की सेवा कर रहे हैं। महाविद्यालय में, जिस जिस प्रकार वृद्धि होती गई उस उस प्रकार गृह-कलह भी बहुत रहे। और आर्यसमाज में कौन सी संस्था है जो इस रोग से बची है। उन सबके विषय में मौन साधन ही श्रेष्ठ है। तीन प्रकार के दान राजस, तामस, सात्त्विक, तीन प्रकार के कार्य कर्त्ताओं की तीन प्रकार की राजसी, सात्त्विकी, तामसी बुद्धि, उनकी तीनों प्रकार की मिश्रित प्रवृत्तियाँ, फिर उनके तीन प्रकार के मिश्रित फल—इन सब झमेलों में यही आश्चर्य है कि इतना कार्य कैसे हो सका। जितना चाहते थे और जैसा चाहते थे वैसा और उतना नहीं हो सका, इसका आश्चर्य नहीं।

जीवन भर का अनुभव है कि आर्य समाज रजोगुणी सोसाइटी है। इसमें भी तामस का अँश अधिक व सात्त्विक अंश थोड़ा इसलिये मिश्रित फल मिलना ही चाहिये। अकारण अथवा निष्कारण धर्म समझकर केवल कर्त्तव्य-बुद्धि से कार्य करने वालों की संख्या बहुत न्यून। इस प्रकार राजसी प्रकृति के लोगों में चुनकर बनाई हुई कमेटियों द्वारा प्रवर्त्तित, संचालित संस्थाएँ दुःख, उद्वेग, परिताप और परिहास का कारण बन गईं तो फिर आश्चर्य करने की क्या बात है। आर्यसमाज की संस्थाओं का सूक्ष्म निरीक्षण करने से यह बात स्पष्ट समझ में आ सकती है। आर्यसमाज का इतिहास ही दो पार्टियों का इतिहास है। फिर आर्यसमाज व उसकी संस्थाएँ पार्टी स्पिरिट से किस प्रकार बच जातीं, कारण के गुण कार्य में आते ही रहते हैं।

महाविद्यालय के प्रारम्भिक दिनों में स्व० श्री वैद्यराज रामचन्द्र जी ने खूब पुरुषार्थ किया और जब से वे स्वतन्त्र रूप से कनखल में रहने लगे तब से अब तक अपनी अनुपम चिकित्सा द्वारा

महाविद्यालय की सेवा करते रहते हैं। स्व० श्री पं० योगेश्वर जी की सहायता भी प्रशंसनीय है और शतमुख से प्रशंसनीय है।

स्वर्गीय लोगों के अतिरिक्त अब तक जिन्होंने महाविद्यालय के कार्य में सहायता दी है और जिनके सम्बन्ध अक्षुण्ण रूप से बने हुये हैं उनके नामों का उल्लेख करना भी हमारा कर्त्तव्य है—

श्री बा० मथुरादास जी रईस रुड़की—तन, मन, धन से महाविद्यालय के सहायक रहते हैं। इनमें आर्य धर्म के लिये अपार श्रद्धा है। चौ० भगीरथ लाल महेवड़ श्रद्धालु व्यक्ति हैं। पच्चीस वर्षों में अनेक बार महाविद्यालय में उलट-पुलट अर्थात् क्रान्ति हुई किन्तु आप एकरस चले आते हैं। स्व० ला० जमनादास रईस जसपुर, आपने महाविद्यालय को अच्छी आर्थिक सहायता दी। श्री पं० शंकरदत्त शर्मा (मुरादाबाद), आप तो महाविद्यालय में जीवन-रस डालने वालों में अथवा नवरस उत्पन्न करने वालों में से एक है। चौ० रघुराजसिंह जी पृथ्वीपुर-विजनौर—दस वर्ष से अधिक वर्ष तक प्रधान पद को अलंकृत कर चुके हैं—

इसके अतिरिक्त—स्व० स्वा० ब्रह्मानन्द जी सरस्वती भी पूर्ण सहयोग देते रहे। आप मांगने के कार्य में सिद्धहस्त थे। हमारे पुराने प्रेमियों में चौ० लालसिंह नारसन खेड़ा, चौ० तुलसीराम बडसू, चौ० हुक्मचन्द लिबरहेडी, स्व० चौ० मामराजसिंह जी रईस शामली, चौ० झण्डूसिंह जी बलहेडी, स्वा० सदानन्द जी (लाला सुन्दरलाल वानप्रस्थी, म० शीतलप्रसाद विद्यार्थी (शान्ति प्रेस सहारनपुर) इत्यादि का नाम भी उल्लेख योग्य है।—बहादरपुर के चौ० रघुवीरसिंह व स्व० चौ० सतराम को भी हम नहीं भूल सकते। स्वा० मुक्तानन्द जी, (बा० मोतीराम) ने भी महाविद्यालय के लिये बहुत कष्ट सहे। पुराने भक्त अत्रिवर्मा (कटारपुरी) को भी कोई कैसे भुलाये। ला० इन्द्रराजसिंह (सलेमपुरी) महाविद्यालय के एकरस भक्त चले आ रहे हैं, कनखल के स्व० लाला कृष्णचन्द्र जी व लाला बेनीप्रसाद जी इनका भी अटूट प्रेम सम्बन्ध याद आ रहे हैं। बाबू जगदम्बाप्रसाद (स्व० बाबू सीताराम जी के भाञ्जे) के स्नेह के विषय में मैं क्या वर्णन करूँ। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारा इनका कोई पूर्व जन्म का ही सम्बन्ध है। पं० वासुदेव शर्मा भजनोपदेशक के शिष्य कुंवर नरेन्द्रसिंह जी ने भक्ति-भाव पूर्वक महाविद्यालय की बराबर सेवा की है। चौ० ऋषिराम भजनोपदेशक को भी हम भुला नहीं सकते, इनके सुयोग्य पुत्र प्रिय बलजीत पंजाब में प्रोफेसर हैं।

महाविद्यालय के स्वर्गीय स्नातकों व ब्रह्मचारियों में श्री विद्याभास्कर विश्वनाथशर्मा (रत्नगढ़), श्री विद्याभास्कर रुद्रदत्तशर्मा (उन्नाव), श्री भगवद्दत्त शर्मा (उन्नाव), श्री बलवीरशर्मा (पुत्र पं० मूलराजसिंह—करनाल), श्री सरस्वतीभूषण मानपाल वर्मा (मुख्याधिष्ठाता), श्री सत्यव्रत शास्त्री (मतलबपुर), श्री विश्वानन्द, श्री चारुदत्त शास्त्री, फिजीवासी रामदेव गुप्त, ब्र० अर्थपति, ब्र० सत्यपाल, ब्र० सहदेव वर्मा आदि की स्मृति आती है तो बहुत क्लेश हो जाता है। पर क्लेश करने की बात ही क्या है, संसार की गति ही ऐसी है। जो जन्मा सो मरा, जो आया सो गया। ईश्वरीय नियम टाले

नहीं जा सकते। श्री श्रीधर (श्री आचार्य स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी का भतीजा) श्री दीपचन्द (बेलोन) ये दोनों अत्यन्त होनहार छात्र थे किन्तु असमय उठ गये। श्रीधर जी अमृतसर शास्त्री परीक्षा देने गये थे वहीं समाप्त हुये। परीक्षा भी पूरी न दे सके। श्री ब्र० शुकदेव (भोगपुरनिवासी) प्रो० माणिकराव जी के पास बड़ौदा व्यायाम सीखने गया था, वहाँ से बम्बई गया और वहीं उसका अकस्मात् देहावसान हो गया। प्रियवाचक मैं महाविद्यालय का इतिहास लिखने नहीं बैठा हूँ। महाविद्यालय का इतिहास लिखेंगे महाविद्यालय के अधिकारी। मैं तो आत्मकथा में उन्हीं का उल्लेख कर सकता हूँ, और यह उचित भी है कि जिनका मुझसे घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है।

यहाँ आर्यसमाज पर एक दृष्टि डाल कर आर्यसमाज व आर्य संस्थाओं के विषय में सामान्य विवेचन आवश्यक प्रतीत होता है। महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना संसार के उपकार की दृष्टि से की, क्योंकि वैदिकधर्म में ही इतनी शक्ति है कि वह सार्वभौम धर्म बन सके। आर्यसमाज के प्रवर्तक के पश्चात् आर्यसमाज के उद्देश्यों के प्रचारार्थ ही डी० ए० वी० कॉलेज की स्थापना की गई थी। किन्तु उस संस्था के संचालकों ने संसार की गति-विधि के साथ चलना स्वीकार किया। इसलिये उस विषय में वह संस्था कृतकार्य हुई। इसके पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना हुई। नहीं नहीं, इससे पूर्व सिकन्दराबाद गुरुकुल की स्थापना स्वा० दर्शनानन्द ने की। इस विषय में तीसरा नम्बर महाविद्यालय ज्वालापुर का है। जब हमने पहले पहल कार्य प्रारम्भ किया केवल ये तीन ही गुरुकुल थे। पहिली पहिली बात थी, पहिली पहिली श्रद्धा थी। संचालकों के नये नये पुरुषार्थ थे। दान भी खूब आता था, काम भी खूब होता था, जनता में उत्साह भी खूब था और श्रद्धा भी। उसी नई उमंग व नये उत्साह में कांगड़ी गुरुकुल आशातीत उन्नति कर गया, महाविद्यालय ज्वालापुर भी सौगुना बढ़ा। गुरुकुल कांगड़ी की शाखा-प्रशाखाएँ भी फूटीं। विना शुल्क शिक्षा के गुरुकुल भी बढ़े। गुरुकुल सिकन्दराबाद, गुरुकुल बरालसी, गुरुकुल पोठोहार, गुरुकुल बदायूं इन चार गुरुकुलों ने भी खूब काम किया।

स्व० स्वामी दर्शनानन्द जी वीतराग निरीह संन्यासी थे। गुरुकुल खोलते जाते थे और जहाँ जरा सम्भालने वाला मिला कि उसको सौंप जाते थे। जो भी व्यक्ति स्वा० दर्शनानन्द जी के गुरुकुलों में फँसे मरमिटे तब कुछ काम हो सका। गुरुकुल सिकन्दराबाद को पं० मुरारीलाल शर्मा के पुत्र स्व० देवेन्द्रशास्त्री चलाते रहे, बिरालसी को स्व० श्री सुमेरसिंह सम्भालते रहे हैं, पोठोहार को श्री पं० मुक्तिराम जी उपाध्याय के अथक परिश्रम ने जीवित रक्खा था पर अब वह स्कूल बन कर रावलपिण्डी में चल रहा है। और मुक्तिराम जी बनगये स्वा० आत्मानन्द जी सरस्वती। पोठोहार की एक शाखा झेलम में भी खुल गई है। गुरुकुल बदायूं को कौन संभाल रहा है पता नहीं। उसके पुराने संचालक श्री पं० रामजीलाल शर्मा किसी अन्य लोक में हैं। और उनके भतीजे पं० प्रसन्न-कुमार ने बहुत दिन तक काम चलाया ऐसा पता लगा है। संयुक्त प्रान्त में संयुक्त प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा का अपना गुरुकुल वृन्दावन है। पर क्या है ? बावन जिले का गुरुकुल और फिर भी आर्थिक हीन दीन दशा। संयुक्त प्रान्त में प्राण होते तो गुरुकुल को उच्च शिखर पर पहुंचा देते। यह वही

गुरुकुल है जो सिकन्दराबाद से फर्रुखाबाद गया, फिर फर्रुखाबाद से वृन्दावन जाकर वर्त्तमान रूप में पहुँचा है। बम्बई का गुरुकुल शुक्लतीर्थ (नर्मदा) में था, अब घाटकूपर (बम्बई) में मिश्रित ढंग से चलाया जा रहा है। सी० पी० का गुरुकुल हुशंगाबाद में है और कोई अच्छी दशा नहीं है। महाविद्यालय के स्नातक श्रीरामचन्द्र विद्यारत्न ही कुछ पुरुषार्थ करते रहते हैं। बिहार का गुरुकुल वैद्यनाथ धाम में है। वहाँ भी महाविद्यालय के स्नातक पं० विश्वनाथशास्त्री व्याकरणाचार्य काम करते रहे थे, अब अपना स्वतन्त्र गुरुकुल चला रहे हैं। बिहार में एक और गुरुकुल है हरपुरजान-राजापट्टी-छपरा में। मुस्तफापुर (दानापुर) में वेदरत्न विद्यालय है पर वह सरकारी ढर्रे पर चल निकला है। राजपुताना मेवाड़ में श्री स्वा० व्रतानन्द ने चित्तौड़ में गुरुकुल खोला है। कांगड़ी की शाखाएँ मुलनात, रायकोट, कुरुक्षेत्र, इन्द्रप्रस्थ, भटिंडा, माटिण्डू, झज्झर आदि में है। महाविद्यालय के बहुत से ब्रह्मचारी शास्त्री तीर्थ, आचार्य परीक्षा करके बी० ए०, एम्० ए० हो गये और विविध स्थानों में कार्य कर रहे हैं।

गुरुकुल युग में गरुकुलों की बड़ी धूम रही किन्तु अब इनका यह युग अब समाप्त हो चाला ऐसा प्रतीत होता है। निःशुल्क शिक्षा वालों के सिर पर तो बड़ी विपत्ति है। सशुल्क संस्था वालों को इतनी दिक़त नहीं है तो भी जनता को बहुत आशाएँ दिलायीं गई थीं पर उसके अनुपात से उनकी पूर्त्ति न हो सकी इसलिये लोगों में निराशा सी छाती जा रही है। श्रद्धा की न्यूनता हो रही है। देश का दान स्थानिक कार्यों और देश के अन्य अत्यन्त महत्त्वयुक्त कार्यों में बँटता जा रहा है। जिन स्कीमों को लेकर गुरुकुल संस्थाएँ चलीं थीं उनमें बहुत परिवर्तन हो गया है अथवा करना पड़ा है। प्राचीन आर्षग्रन्थों की प्रणाली बड़े ज़ोर से चली किन्तु अब उसका नाममात्र शेष है। साधारणतया नाम प्राचीन का और विशेषतः ढंग नया यह बात है। वेदों की उद्धार वी ओर न ध्यान है और नये स्नातकों की रुचि।

वर्त्तमान गुरुकुल शिक्षा प्रणाली पर दृष्टि डालकर और अपने चालीस वर्ष के अनुभवों की पड़ताल करके मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि यदि इस शिक्षा-प्रणाली को जीवित रखना है, यदि इसके महत्त्व को सुरक्षित रखने की चिन्ता है तो निम्नालिखित उपायों का अनुष्ठान करना चाहिये। नहीं तो नाम तो रहेगा 'गुरुकुल' का और न सच्चे अर्थों में 'गुरु' रहेंगे और न सच्चे अर्थों में 'कुल' (शिष्य)—वैसे तो काम चलता ही रहेगा, संस्थाएँ चलती ही रहेंगी, दानदाताओं में व कार्यकर्त्ताओं में पुराने २ लोग उदासीन होते जायेंगे व नये नये आते जायेंगे। वे पुरानी रीति को स्थिर न रख सकेंगे व नई पद्धति का आश्रय लेंगे और जैसे गंगोत्री से चलते २, बहते २ गंगा जी का असली स्वरूप विकृत होता गया और आगे बहुत दूर जाकर नाम केवल गंगा जी का शेष रह गया है यही दशा इन संस्थाओं की हो रही है और भविष्य में भी होगी। इतनी बात लिखने में मुझे तनिक भी संकोच नहीं हो रहा है।

आर्यसमाज में वेद प्रचार का इतना हो-हल्ला है। व्याख्यानों व समाचार पत्रों में 'वेद-वेद' का शंखनाद करते करते साठ सत्तर वर्ष बीत गये पर अब भी आर्यसमाज का जितना रुपया अंग्रेजी शिक्षा-में खर्च हो रहा है उतना संस्कृतशिक्षा के उद्धार में नहीं हो रहा। मैं ऊपर उपाय की बात लिख आया हूँ—वह उपाय यह है—

आर्यसमाज को कई प्रकार के गुरुकुल रखने चाहियें। कई गुरुकुल केवल व्याकरण व साहित्य के लिये। कई गुरुकुल केवल दर्शनशास्त्र के लिये। एक बड़ा गुरुकुल केवल वेद के लिये। एक गुरुकुल केवल कला-कौशल के लिये। इस प्रकार ब्रह्मचारियों की रुचि व प्रवृत्ति देखकर उनको विभिन्न गरुकुलों में परिवर्तन किया जा सके। सभी गरुकुलों में सभी विषयों का न प्रबन्ध हो सकता है और न सभी गुरुकुल विश्वविद्यालय बन सकते हैं। कहने को कोई गुरुकुल अपने नाम के साथ 'विश्व-विद्यालय' पद भले ही लगाया करे। गुरुकुलों में उन्हीं ब्रह्मचारियों को प्रविष्ट कर लिया जाया करे जिनके माता पिता अपने पुत्रों को इसलिये संस्थाओं के सुपुर्द कर दिया करें कि बड़े होकर, अध्ययन समाप्ति के पश्चात् वे समाज, देश व धर्म की सेवा करें। इसी तरह हम कामयाब हो सकते हैं। बौद्धधर्म इसीलिये आजतक जीवित है कि लोग अपने पुत्रों को विहारों की भेंट चढ़ाते हैं। लंका में मैंने यही देखा है। अब तो गुरुकुल प्रणाली से चाहे वह सशुल्क प्रणाली हो अथवा निःशुल्क आर्य-जनता अनुचित फायदा उठा रही है। जिनके पास देने को पैसा है वे गुरुकुलों में अपने लड़कों को भर्ती करा कर, फिर बड़ा होने पर, अपने काम का होने पर, बीच में ही उठा लेते हैं, सरकारी परीक्षाएँ दिलाते हैं। वेदों की श्रेणी तक कोई पहुँच पाता है। अधिकतर रुचि कविराज बनने की ओर चल पड़ी है। कांगड़ी में वैद्यकशास्त्र पढ़ने वाले छात्रों की संख्या ६०–७० है। गुरुकुल वृन्दावन अब तो आयुर्वेद-शिरोमणियों को ही निकाल रहा है। महाविद्यालय ज्वालापुर तथा अन्य निःशुल्क संस्थाओं का समस्त बल शास्त्री, आचार्य, तीर्थ की संख्या बढ़ाने में लग रहा है। स्वयं गुरुकुल के छात्रों को गुरुकुलों की दी हुई उपाधियों में आस्था नहीं है—ये बातें हैं तो ज़रा कड़वी किन्तु कर्त्तव्यवश लिखना पड़ रहा है क्या करें। इन संस्थाओं में चाहे सशुल्क हों अथवा निःशुल्क गुरुओं को 'भिक्षां देहि' करनी पड़ती है और शिष्यगण सानन्द भिक्षा का अन्न खाकर मौज़ उड़ाता रहता है यह शिष्यों का सौभाग्य है किन्तु गुरुओं का दुर्भाग्य कि उनका शास्त्र-परिशीलन-जन्य-बुद्धि-प्रकर्ष 'भिक्षां देहि' में ही समाप्त हो चला है। अतिप्राचीन समय की गुरुकुल–प्रणाली में शिष्यों ने 'भिक्षां देहि' की और गुरुओं ने बैठ कर खाया इसी का शायद यह घोर प्रायश्चित्त मिल रहा है जो गुरुओं को सब प्रकार दान मांग कर शिष्यों की रक्षा-दीक्षा करनी पड़ रही हैं। आर्यसमाज के मांगने वालों ने हिन्दुओं के महाब्राह्मणों को भी मात कर दिया। आर्यसमाज की रजोगुणी व तामसी दानपद्धति ने गुरुकुल प्रणाली को चौपट कर दिया।

आर्यसमाज में एक और बड़ी संस्था की आवश्यकता है। उस संस्था का नाम चाहे जो हो किन्तु उसमें केवल वे ही विद्वान्, वे ही प्रचारक, उपदेशक, साधु, सन्त, संन्यासी रह सकें जो भण्डार में भोजन करें, उनके केवल अन्न-वस्त्र का प्रबन्ध उस संस्था की ओर से रहे और इन लोगों का काम केवल निःस्वार्थ भाव से, सौम्यरूप से आर्यसमाज का प्रचार करना हो। जहाँ भी समाज के लिये अथवा वैदिक धर्म के प्रचार के लिये बुलावा आवे सबको यहीं से भेजा जाया करे। वहाँ वहाँ काम किया और फिर आश्रम को लौट आये, यहीं रहे और स्वाध्याय करते रहे। इनके स्वाध्याय के लिये एक बृहत् पुस्तकालय आश्रम में रहना चाहिये। विद्यया विद्या, विद्या से विद्या इस न्याय से भी विद्याभ्यास बढ़ाया जा सकता है। ऐसी संस्था गुरुकुलों से भी अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकेगी।

केवल भोजन वस्त्र की चिन्ता न रहे और रहने के लिये स्थान मिले तो, आर्यसमाज को कौडी-मोल से अनमोल रत्न मिल सकेंगे जिससे आर्यसमाज के कार्य में सहस्र गुण बल बढ़ सकता है। गुरुकुल चाहे सशुल्क हो अथवा निःशुल्क हो, है महंगा सौदा और है ऐसा सौदा जो बहुत देर में बहुत थोड़ा फल देता रहा है। आर्यसमाज पर (समष्टिरूप पर) दृष्टि डाल कर सिंहावलोकन द्वारा मैं यही कह सकता हूँ कि वह समुद्र का किनारा जहाँ से कि हम चले थे कहाँ हैं, कहाँ हैं। उत्तर यही है बहुत दूर पीछे रह गया, किनारा बहुत दूर पीछे रह गया, नजर नहीं आ रहा। अच्छा जिस उद्दिष्टस्थल पर पहुँचना है वह स्थान कितनी दूर है, कितनी दूर है। उत्तर यही है कि अब भी बहुत दूर, अभी बहुत दूर।—

आर्यसमाज ने स्वामी जी के पीछे जितना भी कार्य किया, प्रचार में जितना भी बल लगाया, जितनी भी समाजें कायम कीं, जितनी भी संस्थाएँ चलायीं, हिन्दुओं की रक्षा की, अन्य मतावलम्बियों का मुख बन्द किया, धर्मप्रचार किया, समाजसुधार चलाया, शुद्धि का द्वार खोला, सब कुछ किया किन्तु संसार का उपकार जैसे महान् संसारव्यापी कार्य के संमुख अब तक के समस्त प्रयत्न दरिया में खस खस के तुल्य हैं।

१९१५ में मैं गंगोत्री की यात्रा में गया। यात्रा से लौटते समय मसूरी में आर्यसमाज के अरबी, फारसी के विद्वान् पं० भोजदत्त शर्मा सम्पदक आर्य-मुसाफिर से जो आर्यसमाज में अत्यन्य रुग्ण दशा में थे, मिला। खेद है दूसरे दिन ही उनका देहावसान हुआ। उसी दिन प्रातः सेठ रघुमल जी के दो कोठियों का प्रवेश समारम्भ था। उसको कराकर पं० भोजदत्त जी का अन्त्योष्टिसंस्कार कराया। आचार्य पं० गंगादत्त जी ने हमारे पीछे पण्डित स्वामी (श्री सुब्रह्मण्यदेवतीर्थ) जी से संन्यास ले लिया था। मास्टर हरद्वारीसिंह जी ने तार देकर हमको बुलाया। हम यहाँ आये, मिले, कुछ दिन ठहरे। महाविद्यालय के महोत्सव के पश्चात् (१९१६) भोगपुर पहुँचे—

भोगपुर की बात कहने के पहले आर्यसमाज में जिनसे घनिष्ठ सम्बन्ध रहा, उनकी नामावली लिखना कर्त्तव्य है। महात्मा मुन्शीराम, महात्मा भगवानदीन, श्री नारायण स्वामी, श्री मास्टर तोलाराम (पंजाब), स्व० पण्डित लेखराम, श्री स्वा० दर्शनानन्द सरस्वती, श्री पं० गणपतिशर्मा, श्री पं० तुलसीराम स्वामी, श्री पं० नन्दकिशोर देवशर्मा, श्री पं० प्रयागदत्त, श्री पं० भोजदत्तशर्मा, श्री पं० नाथूराम शंकरशर्मा कविसम्राट्, श्री पं० विश्वम्भरनाथ जी (भूतपूर्व अधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी, जो हमारे लाहोर के पुराने साथी हैं), श्री पं० शंकरदत्तशर्मा (मन्त्री महाविद्यालय, इनकी हमारी मित्रता सिकन्दराबाद के दिनों से है) रायबहादुर रामबिलास शारदा (अजमेर से सम्बन्ध) श्री बालकृष्णशर्मा बम्बई। श्री प० पद्मसिंह शर्मा, श्री प० भीमसेन शर्मा, श्री पं० मुरारीलालशर्मा, श्री स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी महाराज, श्री पं० रविशंकर शर्मा (१९०३ में हम जब देहली शास्त्री परीक्षा देने गये थे तब परिचय हुआ था) श्री पं० रामचन्द्र वैद्य, श्री प्रो० विनायक गणेश साठे (बम्बई) श्री प्रोफेसर सियाराम (योगीराज सियाराम), श्री पं० देवदत्तशर्मा (आगरे में पं० भीमसेनशर्मा इटावा निवासी के साथ शास्त्रार्थ हुआ तब से परिचय)

स्व० श्री मास्टर वजीरचान्द्र जी । प्रिन्सिपल लक्ष्मणप्रसाद एम. ए. (खुर्जे में प्रथम परिचय), चौधरी जयकृष्ण जी, (अमृतसर), महाशय खुशालचान्द्र जी सम्पादक मिलाप, श्री कृष्ण बी. ए. (लाहोर से ही घनिष्ट सम्बन्ध), श्री पं० शिवशर्मा (महोपदेशक संयुक्त प्रान्त) श्री पं० बसन्तलाल शर्मा महोपदेशक, श्री पं० हरिशंकर शर्मा कविरत्न (सम्पादक आर्यमित्र) (बुलन्द शहर में प्रथम परिचय मिला) स्वा० ओंकार सच्चिदानन्द महोपदेशक बम्बई प्रतिनिधि), बा० ज्योतिःस्वरूप जी रईस देहरादून, पण्डित इन्दुशर्मा । महाविद्यालय के अध्यापक तथा महोपदेशक थे । श्री पं० बदरीदत्त जोशी, पं० मुक्तिराम जी उपाध्याय (काशी से परिचय), बा० मथुरादास जी रईस रूड़की, चौधरी रघुराजसिंह जी (गुरुकुल कांगड़ी के द्वितीय महोत्सव में पं० पद्मसिंहशर्मा के साथ मिले थे) । श्री पं० जीवाराम शर्मा सरस्वती प्रेस मुरादबाद (मुरादाबाद में ही प्रथम परिचय मिला) बा० प्रतापसिंह भैरोवाल पंजाब (जालन्धर में प्रथम भेंट हुई),बाबा राघवदास गोरखपुरी महाविद्यालय में रहे थे तभी से अबतक राजनैतिक क्षेत्र में भी सहयोग है । पं० रामरक्षशर्मा छपरा निवासी, प्रो० मनोरञ्जनप्रसाद एम. ए. हिन्दू विश्वविद्यालय काशी, अब सब नामों का याद आना भी असम्भव और उनका उल्लेख जी असम्भव है ।

भोगपुर में

भोगपुर चलने के पूर्व एक विशेष व्यक्ति से परिचय कराना मैं अपन कर्त्तव्य समझता दूँ । उस व्यक्ति का, उस महानुभाव का नाम है पं० घनानन्द मालदार । आप गढ़वाल के प्रसिद्ध व्यक्ति थे और हरद्वार में लकड़ी का कारोबार करते थे । हमारे 'भारतोदय' के 'प्रवासी' नास से लिखे हुये लेखों को पढ़कर आप हमारे परम मित्र हो गये । इन्हीं के द्वारा मुझे गढ़वाल, टिहरी राज्य व कमायूँ का पूर्ण परिचय मिला था । जब मैं गंगोत्री गया था उत्तरकाशी में आपके ही मकान पर ठहरा था और गंगोत्री तक का सब प्रबन्ध एं० घनानन्द जी ने ही कराया । सार्वजनिक कार्यों में इन्होंने मुझे जितनी आर्थिक सहायता दी उतनी किसी अन्य व्यक्ति ने नहीं दी । आप ही के दान के सव्वालक्ष रु. से गढ़वाल का चन्द्रबल्लभ ट्रस्ट चल रहा है । आपके कनिष्ठ भ्राता श्री पं० राधाबल्लभ जी हमको वैसा ही मानते हैं जैसा कि वे मानते थे । पं० राधावल्लभ जी के दान व सदुपयोग से मसूरी का घनानन्द हाई स्कूल उन्नतिपथ पर चल रहा है । अब वह स्कूल कॉलेज बनने को है । चलिये अब भोगपुर की ओर—

सन् १९०५ में हम एक बार हृषीकेश गये थे । सन् १९०७ में फिर गये । भोगपुर देहरादून के स्व. ला. मुसद्दीलाल का वहीं परिचय हुआ था । फिर ये कभी हरद्वार, कभी ज्वालापुर म. वि. के उत्सव में मिलते रहे । मैं फर्रुखाबाद से भी एक वार श्री आचार्य जी से मिलने भोगपुर गया था । १९१६ की ग्रीष्म ऋतु में हम भोगपुर पहुँचे । हमने निवास के लिये एक किराये का मकान लेना चाहा किन्तु इनके ज्येष्ठ पुत्र श्री ला० शिवचरणदास जी ने इतना अत्यधिक आग्रह किया कि उन्हीं की दुमंजली दुकान में ऊपर के दो कमरों में मुझे रहना पड़ा । उत्तराखण्ड में मेरा यह दूसरा घर बन गया । ला. शिवचरणदास एक भक्त व शक्त व्यक्ति थे । इन्होंने मेरा तो प्रबन्ध किया ही किन्तु जितने भी हमारे छात्र थे उन सबका प्रबन्ध किया । श्री पद्मसिंह नेगी ने भी छात्रों को भोजन दिया । हम तीन वर्ष तक वहाँ रहे, घर जैसे

रहे। किसी वस्तु की कमी नहीं थी नौकर-चाकर, सवारी, हमारे प्रतिदिन के अतिथियों का सत्कार, समय पड़े पर रुपये-पैसे की सहायता, किस-किस बात का उल्लेख करूँ। पता नहीं इन्होंने मेरा पूर्वजन्म का ऋण चुकाया अथवा पूर्वजन्म के कोई संस्कार थे पता नहीं। इनके भाई ला० कुन्दनलाल, ला० राधेलाल ला० यादोलाल सब हमको गुरुतुल्य मानते हैं और भोगपुर की भूमि हमको अत्यन्त प्रिय है क्योंकि ऐसा सुन्दर, रमणीक, सब ऋतुओं में सुखावह स्थान देहरे जिले में और कोई नहीं है। यह कसबा टिहरी राज्य की सरहद पर है इसलिये टिहरी राज्य में भी हमारा प्रवेश यहीं से हुआ। देहरे के कार्यक्षेत्र में प्रवेश यहीं से हुआ। महन्त परशुराम जी (हृषीकेश) का ग्राम कोडसी यहाँ से एक मील पर है। तीन वर्षों में (१९१६ से १९१९) इस प्रदेश में बहुत कुछ कर सके। जहाँ तप स्वाध्याय ग्रन्थलेखन में समय व्यतीत करते थे वहाँ पर्वतीय प्रदेश के लोगों की दशा सुधारने की ओर भी हम पूरा पूरा ध्यान देते रहे। भोगपुर की शराब की दुकान हमने ही उठवायी, भोगपुर के इलाके में सब प्रकार की जागृति के कारण ही हमारा नाम सरकारी नीले पुस्तक में लिखा गया। इधर के प्रदेश में ईसाइयों का बल घटाने में भी हमने पूर्ण उद्योग किया। सारांश हमारा तीन वर्ष का परिश्रम इतना सफल हुआ कि हम पूर्व दून प्रदेश के, मालकोट, गढ्डूड, प्रदेश के धार्मिक राजनैतिक गुरु समझे जाने लगे। १९१९ में भारतोदय सम्पादक होकर मुरादाबाद गये। और फिर देहरादून पोलिटीकल कानफरन्स के स्वागताध्यक्ष बनकर देहरे पहुँचे, तभी से केदारखण्ड में प्रवेश समझिये। देहरादून में गत पच्चीस वर्षों में बड़े-बड़े कार्य हुये। तीन बड़ी-बड़ी पोलिटिकल कानफरन्सें हुईं। हिन्दू कानफरन्स हुई, साहित्य सम्मेलन हुआ। आर्यप्रतिनिधि सभा का महोत्सव हुआ। महात्मा गांधी द्वारा श्रद्धानन्द अनाथ वनिताश्रम की स्थापना व श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन जी द्वारा उसका उद्घाटन हुआ। महात्मा गान्धी के यू० पी० के दौर में, जब वे देहरे आये थे तब देहरादून, मसूरी व सहारनपुर ज़िले में देवबन्द तक मैं महात्मा जी के साथ रहा। देहरा जिले से महात्मा जी को चौदह सहस्र मिले थे। १९२० में तिलक स्वराज्य फण्ड में हमने सोलह सहस्र रुपये एकत्रित किये थे। इनमें से छह सहस्र रु० प्रान्त को दिये गये। शेष दस सहस्र देहरे के राष्ट्रीय स्कूल आदि में व्यय हुये। द्वितीय कानफरन्स का शेष रु० लगभग दो सहस्र प्रान्तीय कमेटी को दिया गया। तृतीय कानफरन्स में महात्मा जी पधारे थे। आर्यप्रतिनिधि सभा के महाधिवेशन में प्रान्तभर के सामाजिक आये थे। हम ही स्वागताध्यक्ष थे। निखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन में, श्री टण्डन जी, श्रीरामजीलाल शर्मा, श्री शिवप्रासाद गुप्त, श्री माधवराव सप्रे, श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल श्री द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी, श्री पद्मसिंहशर्मा, आदि आये थे। महाराज रिपुदमनसिंह (नाभा) ने पूर्ण योग दिया था। सारांश सामाजिक, राजनैतिक, साहित्यक, शैक्षिक कोई ऐसा कार्य नहीं था जिसमें हमारा हाथ नहीं था। १९२१ में (दिसम्बर ६) हम पर १४४ धारा लगी थी, दस दिसम्बर को हम पकड़े गये। १३ दिसम्बर को पन्द्रह मास का कठोर दण्ड मिला। १९३० में (ता० २८ अप्रैल) प्रथम डिक्टेटर के नाते हमको छह मास दण्ड मिला। १९३२ में ता० २० मई हमको फिर छह मास दण्ड व पचास रु० जुरमाना हुआ। इससे पूर्व जनवरी २४ ता० को मिस्टर एक्टन ने अजबपुर में हमारे नाम आर्डिनन्स नं० ११ की धारा नं० ४, १९३२, के अनुसार एक हुक्म भेजा था। वह इस प्रकार है—

Under section 4 of Ordinance no, 11 of 1932, I direct you not to enter reside or remain within the Dehradun district.

P. Action,
I. C. S.
24/1/32. District Majistrate, Dehradun.

आप देहरादून की हद में आ नहीं सकते, रह नहीं सकते। इसका उत्तर यथोचित दे दिया था और ज्वालापुर चले आये थे। ता० ४ जून को एक जिला कानफरन्स होने वाली थी। हम ही उसके प्रधान नियत थे। किन्तु यह न हो सकी। और ता० १८ को धर्मपुर की शराब की दुकान पर पिकेटिंग करते हुये हम और हमारे मित्र रावत घनश्यामसिंह पकड़े गये थे। राजनैतिक जीवन के विषय में अन्यत्र विस्तृत रूप में लिखा गया है। देहरादून में जब समाज में दो दल हो गये थे तब दो वर्ष तक हम प्रधान (सर्वसम्मति से) बनाये गये थे। फिर बड़े प्रयत्न से हमने बहुत झगड़े मिटाये। प्रिन्सिपल लक्ष्मणप्रसाद जी के सहयोग से हम बहुत कुछ कर सके! वैसे प्रिन्सिपल साहब ने हमारे प्रत्येक काम में पूर्ण सहयोग दिया। डी० ए० वी० स्कूल व कॉलेज के छात्रों की तत्परता व सहयोग भी प्रशंसनीय रहा है।

श्री अमरनाथ जी वैद्यशास्त्री

देहरादून के एक व्यक्ति का यदि मैं उल्लेख न करूँ तो कृतघ्नता का पाप मेरे सिर पर चढ़ेगा। जबसे हम भोगपुर गये तभी से आपका हमारा परिचय है। आज पच्चीस वर्ष से मैं उनके ही कुटुम्ब का सा हो रहा हूँ। वहीं ठहरता हूँ, वहीं से सब सार्वजनिक कार्य करता हूँ और वैद्य जी सब प्रकार से सहयोग देते रहे हैं। आप की सज्जनता सद्भाव, सहयोग की मैं कितनी प्रसंशा करूँ। गत पच्चीस वर्ष से हम दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध चला आ रहा है। एक दिन भी तो ऐसा नहीं आया कि जब मनोमालिन्य हुआ हो। जब चाहे आओ, जब चाहे जाओ, जब तक चाहे ठहरो, जो चाहे करो। किसी बात की कमी नहीं रही। मैं जब वैद्य जी के यहाँ ठहरता हूँ मेरे अतिथि भी वैद्य जी के अतिथि बन जाते हैं। परस्पर के सुख-दुःख आपस में बँटते रहते हैं। आपके स्व० मामा पं० शंकरदास जी एस० डी० ओ० हमारे परम मित्र थे। आपने अपने मृत्यु-पत्र में डी० ए० वी० कॉलेज लाहोर के लिये दस सहस्र रुपया दान लिखा था।—

वनस्पति भवन हमारा तीसरा घर है। देहरादून के पं० निरंतरदेव वैद्य हमारे पुराने शिष्यों में से हैं और आपने एक सच्छिष्य की भाँति अपना कर्त्तव्य पूर्णरूप से पालन किया है। लोग प्रायः पूछा करते हैं कि 'शास्त्री जी आपका इतना बड़ा खर्च कैसे चलता है। आपका खुला हाथ चलता ही रहता है पर आपको किसी वस्तु की कमी नहीं रहती।'—इसका उत्तर यही है कि हमारा कुनबा

'वसुधैव कुटुम्बकम्' इतना अधिक बढ़ गया है कि हमको किसी बात की कमी नहीं रहती। और कांग्रेस में आने के पश्चात् हमारा जीवन एक संन्यासी का सा ही जीवन रहा है। मनु ने लिखा है कि—

सर्वस्वं ब्राह्मणस्येदं

संसार में जो कुछ है वह सब ब्राह्मण का ही तो है फिर मुझे किस बात की कमी रहती। जिन २ महानुभावों ने सहायता दी वे अब भी देते रहते हैं उनके नामों का उल्लेख मैं कर नहीं सकता क्योंकि ऐसा करने से उनको दुःख पहुंचने की सम्भावना है और उन महानुभावों की मुझे सख्त हिदायत भी है कि मैं उनके विषय में कुछ भी न लिखूं। मैं इस विषय में इतना ही लिखना पर्याप्त समझता हूँ कि जन्मपत्री के लेखानुसार प्रतिवर्ष मेरे पास प्रचुर धन आता है। मैं भी खुले हाथों खर्च कर डालता हूँ और मुझसे भी मांगने वाले बहुत आते रहते हैं और जब कोई मुझसे मांगता है तब मेरे पास हो तो मैं तुरन्त दे देता हूँ अथवा भक्तजनों से सहायता करा देता हूँ। मेरा अधिक व्यय देशाटन रेलवे व डाक में होता है। कांग्रेस की कृपा से डाकव्यय तो बहुत घट गया, नाम मात्र रह गया। शेष,—

'हरि के हाथ निवाह'—

इससे अधिक कोई मुझसे कुछ न पूछे और पूछ बैठे तो मैं बतलाने वाला भी नहीं हूँ।

देहरादून में रहते रहते गढ़वालियों से भी पूरा सम्बन्ध हो गया। और आज ब्रिटिश गढ़वाल, टिहरी गढ़वाल, देहरादून, अलमोड़ा और नैनीताल के लोग मुझसे इतना अधिक प्रेम करते हैं कि मैं क्या लिखूं और किस प्रकार इनके प्रेम से उऋण हो जाऊँ। महाविद्यालय ज्वालापुर जहाँ कि आयु का उत्तम भाग गया, अब मेरा कार्यक्षेत्र नहीं है तथापि अवश्य ही वह मेरा विश्रामस्थान है। देवाश्रम की वह कुटिया जिसमें मेरे इतने वर्ष व्यतीत हुये, अब भी मेरी कहलाती है। मैं आर्यसमाज में दो नामों से प्रसिद्ध हूँ। एक "रावजी" अथवा "रावसाहब" व दूसरा 'शास्त्री जी'। जिनसे मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है वे सब मुझसे 'रावजी' नाम से ही व्यवहार करते हैं। गुरुकुल कांगड़ी, गुरुकुल सिकन्दराबाद, फर्रुखाबाद वगैरों में 'रावजी' नाम से ही व्यवहार रहा है। महाविद्यालय मण्डल में भी इसी नाम से व्यवहार होता है और मुझे यह 'रावजी' नाम ही परम प्रिय है। क्यों कि मेरा असली नाम तो 'नरसिंहराव' है और इसी का 'रावजी' यह संक्षिप्त विकर्ष है। महाविद्यालय में मैं किसी पद पर रहा 'रावजी' ही रहा और अब भी 'रावजी' ही हूँ। जब मैं पहले २ आचार्य स्वामी शुद्ध बोध तीर्थ जी के पास आया था तब उन्होंने मुझे पूछा—

आचार्य जी—क्या नाम है ?
मैं— नरसिंहराव।
आचार्य जी—आधा पशु और आधा मनुष्य का नाम है। हम तुम्हारा नाम नरदेव किये देते हैं।

बस तभी से हम नरसिंहराव के नरदेव हुये। यद्यपि नाम बदल गया था तब भी हमने 'शास्त्री' 'वेदतीर्थ' ये दोनों परीक्षाएँ पूर्व नाम से ही दी थीं। पहले २ यह नाम विचित्र-सा जान पड़ा किन्तु

रामायण, महाभारत तथा अन्य ग्रन्थों में 'नरदेव' शब्द का यत्र-तत्र बहुत अच्छा प्रयोग देखा तब सन्तोष हुआ। एक जगह रघुवंश में,—

'मनुष्यदेवः पुनरुप्युवाच'

ऐसा भी प्रयोग देखा। परन्तु जहाँ जहाँ भी 'नरदेव' शब्द के प्रयोग देखे वे सब 'क्षत्रिय' राजा-महाराजओं के लिये प्रयुक्त हुये देखे। तुलसी रामायण में भी यह प्रयोग मिलता है। मैंने यही मान कर सन्तोष कर लिया कि मरहटा ब्राह्मणों में क्षत्रियों के गुण होते ही हैं। नरदेव नाम ठीक ही है। ब्राह्मण होने पर भी मैंने आज तक अपने नाम के साथ कभी भी 'शर्मा' उपपद नहीं लगाया। दक्षिण देश में इस प्रकार 'शर्मा' आदि लगाने की प्रथा भी नहीं है। नाम ही ऐसे ढंग के रक्खे जाते हैं जिससे वर्ण का पता चल जाता है। चाहे कोई जन्म से वर्ण माने, गुण कर्म से माने, गुण कर्म स्वभाव से माने सभी दृष्टि से हम ब्राह्मण हैं। और भागवत् के—

"ते ब्राह्मणास्तारयितुं समर्थाः"

अर्थात् संसार को वे ब्राह्मण ही (शमी, दमी, शान्त-दान्त-तितिक्षु) तार सकते हैं इत्यादि वचनों को खूब गाँठ में बाँध रक्खा है। भगवान् से प्रतिक्षण प्रार्थना करते हैं कि वह हमको सदैव 'ब्रह्मतेज' देता रहे जिससे शेष जीवन में भी हम लोक सेवा का कार्य तत्परता से करते रहें। लोकसेवा, जनसेवा का कार्य न बन सके तो उसी भगवान् के ध्यान में ही शरीर गल जावे। आज तक जिसकी कृपा कटाक्ष से जीवन सम्मानपूर्वक कटा, आगे भी उसी को चिन्ता होगी।

पिताजी की विचित्र मृत्यु

१६१२ की बात है। निज़ाम राज्य में सोलापुर से २४ मील पर तुलजा भवानी इस्टेट है। इसी के अधीन तुलजा भवानी का मन्दिर है। इस मन्दिर के पण्डे मरहटे क्षत्रिय हैं। इनमें अनबन रहने लगी तब निज़ाम सरकार ने पिताजी को इस इस्टेट व मन्दिर का मैनेजर बनाकर भेजा। क्योंकि वहाँ ब्राह्मण ही मैनेजर रह सकता था। मन्दिर की व्यवस्था के लिये पिताजी को मैजिस्ट्रेटी के अधिकार भी मिले थे। पिताजी ने इस मन्दिर की इतनी सुन्दर व्यवस्था की कि निज़ाम सरकार बहुत प्रसन्न हुई। यह 'भवानी देवी' शिवा जी महाराज की अभीष्ट देवता थी। इसलिये समस्त महाराष्ट्र प्रान्त से यहाँ प्रतिवर्ष लक्षों यात्री आते रहते हैं। निज़ाम राज्य व कर्नाटक प्रदेश से भी यात्रियों की भीड़ लगी रहती है। मन्दिर के आँगन में फरश में, सहस्रों रुपये नीचे फरश में जड़े हैं इसलिये मन्दिर का आँगन चाँदी की चमक से चमकता रहता है। देवी के आभूषणादि भी पाँच छह लक्ष रु० से अधिक के हैं। नवरात्रि में यहाँ बड़ा मेला लगता है। तब मन्दिर के बड़े कुण्ड में (जिसमें हवन होता है) यात्री गण बकरे चढ़ाते थे। पिताजी मन से तो सामाजिक विचार के थे किन्तु उन्होंने अपने देशाचार और जाति के आचार नहीं छोड़े थे। बराबर पालते रहते थे। उन्होंने इस अजा-हवन को बन्द कर दिया। अब उसमें केवल नारियल पड़ने लगे। किन्तु वर्ष भर में दशहरे के दिन एक बलि चढ़ाने की प्रथा को बन्द न कर सके क्योंकि ऐसा करते तो उनका घोर विरोध होता। मन्दिर में 'देवदासी' प्रथा थी अर्थात् कुमारी

लड़कियों को मन्दिर के भेंट चढ़ाने की भी भयंकर कुप्रथा थी। पिताजी ने निज़ाम सरकार व बम्बई सरकार दोनों से पत्रव्यवहार करके बड़ा आन्दोलन किया था। अब वह देवदासी-प्रथा बन्द है।

इसके अतिरिक्त ब्रिटिश भारत से जो जो लोग आते थे उन सब पर निगरानी रखना भी पिताजी का काम था। पिताजी की सुन्दर व्यवस्था से ब्रिटिश व निज़ाम सरकार दोनों प्रसन्न थे। आप जाकर राव साहब श्रीनिवासराव जी का नाम लीजिये और लोग बड़े आदर व भक्ति के साथ उनका नाम लेते दिखलाई देंगे। पिताजी चाहते तो सहस्रों रु० जमा कर सकते थे किंतु पिताजी ने एक पाई की भी रिश्वत नहीं ली। मन्दिर में अधिकार के लिये दो पक्षों में प्रबल विरोध था। प्रत्येक पक्ष पिताजी को अपने पक्ष में कर लेने के लिये दश दश सहस्र रु० देने को तैयार था किन्तु पिताजी ने अपनी बुद्धिमत्ता से भोपे नामक राजपूतों को ही मन्दिर का अधिकार दिलाया। भोपे राजपूत आजतक पिताजी को श्रद्धापूर्वक स्मरण करते रहते हैं।

इनकी मृत्यु बड़े ही विचित्र ढंग से हुई। एक दिन सायंकाल चार बजे कचहरी से घर लौटे और पाचक से कहने लगे आज बड़ी भूख लग रही है शीघ्र भोजन तैयार करो। पाचक ने शीघ्र ही रसोई बनाई। सायं पाँच बजे का समय था। पिताजी भोजन करने बैठे। पाचक ने जो उनके स्वभाव से परिचित था, रसोई परोसी। पिताजी अधिक से अधिक पावभर चावल खाया करते थे। उस दिन तीन आदमियों के लिये जितना भात बनाया था खा गये और साथ खा गये पावभर घृत। भोजन से उठते समय पाचक से बोले 'आज बहुत दिनों में मैं तृप्त हुआ हूँ।' पिताजी भोजन के पश्चात् लेटते व बापू नामक अपने प्रिय नौकर से पैर दबवाते। उनको पैर दबवाने की आदत पड़ गई थी। थोड़ी देर लेटने के पश्चात् उन्होंने बापू से कहा 'पाचक से कहो पानी लावे बड़े जोर से प्यास लग गई है।' बापू पाचक से कहने गया और इधर पिता जी को एक ज़ोर की उल्टी हुई और साथ ही प्राण निकल गये। छोटा भाई व्यंकटराव, नौकर बापू पिता जी को देखने गये तो वहाँ प्राण निकल गये थे। बिजली की तरह यह खबर सर्वत्र पहुँच गई। सहस्रों लोग घर के सामने एकत्रित हुये। सम्बन्धियों को सन्देह हुआ कि किसी ने विष दिया है। डॉक्टरों द्वारा उल्टी की परीक्षा की गई। तहसीलदार आये, तालुकेदार आदि बड़े बड़े अफसर आये। तहक़ीक़ात से पता चला कि विष वगैरा नहीं दिया गया किन्तु वैसे ही अचानक मृत्यु हो गई है। दूसरे दिन दश सहस्र मनुष्यों के समुदाय के साथ श्मशान यात्रा हुई। वहाँ विधिपूर्वक दाह किया गया। बूढ़े-बूढ़े लोग कहते थे कि उन्होंने अपने जीवन में इतनी बड़ी श्मशान-यात्रा कभी नहीं देखी। पिताजी जैसे बड़े थे, जैसा उनका नाम था, उसी शान से उनकी श्मशान यात्रा हुई। सरकारी फौजी अफसर भी इस अवसर पर विद्यमान थे। लोग अपने शोक में थे, किसी से यह नहीं हुआ कि उनका चित्र ले लेते। जीवनकाल में उन्होंने अपना फोटो कभी खिचवाया नहीं। पिताजी की मृत्यु से ऊपरी छत्रच्छाया जाती रही। हम अनाथ रह गये। जिनके भरोसे पर परदेश में कूदा करते थे वे भी न रहे। पिताजी की मृत्यु के पश्चात् पिताजी के पेन्शन के ६००) रु० बड़े भाई को मिले थे। उन्होंने उसमें ५००) मेरे पास भेजे जिसके व्यय से मैंने महाविद्यालय में अन्नपूर्णा भण्डार (माता जी की स्मृति में) बनवा दिया। विद्यालय का भण्डार इसी में है। पिताजी विद्याव्यसनी व स्वकार्यदक्ष थे। आपकी प्रसिद्धि

और एक बात में थी। हैदराबाद की रियासत भर में आप प्रथम श्रेणी के शतरंज-पटु थे। यहाँ तक कि उनको किसी कमरे में बन्द करके खेलने के लिये कहने पर बाहर एक व्यक्ति उनके कथनानुसार प्यादे आदि चलाता रहता था और दूसरे पक्ष की चाल बतलाता रहता था। पिताजी बाजी ले जाते थे। मैंने दो एक वार यह दृश्य देखे हैं।

माता जी की मृत्यु
(१६०७)

१६०७ की ग्रीष्म ऋतु में जब मैं गुरुकुल कांगड़ी में निरुक्त पढ़ाता था, एक दिन एक रजिस्टर्ड-पत्र आया जिसमें पिता जी ने लिखा था कि तुम्हारी माता बहुत बीमार हैं। तुम ही एक परदेश में हो, वह तुम्हारे मिलने के लिये अत्यधिक आग्रह कर रही है। तुम विदेश में क्यों रहने लगे, अपने सम्बन्धियों से भी मिलना तुम्हें अखरता है। मेरी यह आज्ञा है कि यदि तुम न आओगे तो फिर तुम्हारा हमारा कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा।"—दूसरे दिन एक डबल तार भी दिया। सब मित्रों ने सलाह दी कि जाना चाहिये। मैंने कहा मेरे जाने से पूर्व ही माता का देहावसान होगया नो फिर व्यर्थ का खर्च होगा, मुफ्त की परेशानी उठानी पड़ेगी। खैर महात्मा मुन्शीराम जी से छुट्टी लेकर मैंने दक्षिण की ओर प्रस्थान किया। चौथे दिन एडसी स्टेशन (B L. Railway) पहुँचा। हरद्वार से मैंने तार दिया था कि अमुक दिन पहुँच जाऊँगा। उन दिनों वहाँ प्लेग था इसलिये क्वारण्टीन की भी व्यवस्था थी। पिताजी ने डॉक्टर को कह दिया था कि हमारा लड़का आवेगा उसको तुरन्त छोड़ देना, क्वारण्टीन में मत रखना।

पिता जी ने पत्र में एक और मार्के की बात लिखी थी वह यह कि तुम जब तक यहाँ न पहुँचोगे तुम्हारे आने की खबर तुम्हारी माता को न दी जायगी। पिता जी ने तार पत्र सब अपने पास ही दबा रक्खे। माता जब मेरे विषय में पूछती तब यह उत्तर देते कि 'देखें क्या होता है, आता है कि नहीं आता', इत्यादि। एडसी से उस्मानाबाद पहुँचा। वहाँ डॉक्टर ने मुझे पाँच मिनिट भी नहीं रोका। सीधे पहले मकान में गया जहाँ पिता जी रहते थे। वहाँ पता चला कि मकान दूसरा है, वहाँ पहुंचा। दरवाजे में घुसते ही हमारा कुत्ता 'गोल्डी' मुझे देख कर भौंकने लगा। पिता जी बाहर आये, मुझे देखा, मैंने सादर प्रणाम किया। मैं घर की बैठक में जा पहुँचा और पिता जी के पास बैठ कर लम्बी यात्रा का समाचार सुनाने लगा। मेरी भगिनी सुन्दराबाई ने मुझे देखा और तत्काल खुशी में नारियल फोड़ा और खोपा बाँटा। माता ने पूछा क्या बात है नारियल क्यों फोड़ा, क्या कोई आया है? बहिन ने मेरे आने का वृत्तान्त सुनाया और मेरी माता को अपार हर्ष हुआ। मैंने जाकर प्रणाम किया, पास बैठा, बात-चीत होती रही। उस दिन से उनका ज्वर, उनकी खाँसी, उनके बदन की पीड़ा न जाने कहाँ जाती रही।—दो दिन पश्चात् उन्होंने मुझसे कहा कि ये आभूषण चुभते हैं इनको निकालो। मैंने एक मंगलसूत्र (जो कि सौभाग्य का चिन्ह माना जाता है) छोड़ कर सब जेवर निकाल कर सन्दूक में बन्द किये। तीसरे दिन प्रातः भाई भीमराव ने माता जी से कहा कि

छत्तीस मील पर कोई अफसर आ रहे हैं मुझे वहाँ जाने का हुक्म हुआ है, क्या करूँ। माताजी ने कहा जाओ, नौकरी का मामला है जल्दी लौटना। सैकड़ों मील की दूरी से तो मैं वहाँ जा पहुँचा और पास रहने वाले भाई दैवयोग से दूर चले गये। बस उसी दिन ग्यारह बजे देहावसान हुआ। कोई आठ बजे होंगे माता जी ने अच्छे २ आम मंगवाये और मुझसे खाने के लिये आग्रह करने लगी। मैंने कहा स्नान करके आता हूँ और फिर खाऊँगा। बहिन को माता जी के पास छोड़ कर स्नानगृह में मैं स्नान कर रहा था कि बहिन एक दम चिल्ला उठी। मैं दौड़ा, देखता हूँ तो क्या एक—दो—तीन, प्राण-पखेरु उड़ गये। पिता जी कचहरी गये थे, कई सम्बन्धी और हमारी ताई तुलजापुर में थीं, सबके सब आ गये और सायंकाल चार बजे के समय मैंने चिता में अग्नि दी। और सबसे पीछे मुख में तिलाञ्जलि दी। तिलाञ्जलि देने के अर्थ मैं उसी दिन ही समझ सका था।

जीवनभर का संकलित अनुभव

इस जीवन में दो-एक बातों का पश्चात्ताप रहा। उनमें से एक यह बात है कि पूज्य पिता जी चाहते थे कि मैं वैद्यकशास्त्र में प्रवीण बनूं। उत्तर भारत में भेजते समय पिताजी ने मेरे लिये इंजीनियर बनाने की स्कीम सोची थी। बी० ए० हो जाने पर वे चाहते थे कि मुझे अमरीका इसी कार्य के लिये भेजा जावे। पर अघटित-घटना-पटीयसी-भगवती-भवितव्यता के कल्पित और अतर्कित खेलों के कारण उसमें बाधा पड़ी—और मैंने विवश होकर अपनी ही स्कीम बनायी—मैं कलकत्ते में रहा तब वैद्यकशास्त्र में प्रवीण हो सकता था किन्तु हमारे वेदगुरु श्री आचार्य सत्यव्रत सामश्रमी जी (फेलो एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, युनिवर्सिटी लेक्चरार कलकत्ता युनिवर्सिटी) वैद्यकशास्त्र के घोर विरोधी थे और कहते थे कि ब्राह्मण के लिये वैद्यक करना मना है। इसीलिये हारकर वैद्यक शास्त्र का अध्ययन बन्द करना पड़ा। वैसे मैंने इस शास्त्र के कई ग्रन्थ पढ़ डाले थे। चरक-सुश्रुत के मुख्य २ स्थल भी पढ़ लिये थे। यदि मैं कविराज बनता तो सम्भवतः सार्वजनिक जीवन में मुझे बड़ी सहायता मिलती। यह भी हो सकता था कि वैद्यराज का जीवन इस प्रकार के व्यापक सार्वजनिक जीवन में बाधा डालता, मैं लोभी और स्वार्थी बन जाता। मुझे इस विषय में इतना ही पश्चात्ताप है कि मैंने इस विषय में गुरुजी की आज्ञा का पालन किया।

दूसरी पश्चात्ताप की बात यह है कि कलकत्ते में मैं जब था तब एक बंगाली डॉक्टर अपने व्यय से मुझे जापान ले जा रहा था, सब तैयारी हो चुकी थी, जहाज भी निश्चित होगया था किन्तु पिताजी ने यह कह कर रोका कि "तुम्हारी माता बहुत रुग्ण है, यदि तुम ऐसे समय में चले जाओगे तो वह शीघ्र ही मृत्यु का ग्रास बनेगी"—मुझे रह रह कर खेद होता है कि उस समय पिता जी की आज्ञा क्यों मानी। इस प्रकार विदेश यात्रा का सुन्दर अवसर हाथ से जाता रहा। एक बार १९२३ में फिर जापान, जावा, बालीद्वीप आदि जाने का प्रयत्न किया किन्तु उस समय पासपोर्ट न मिल सका-यू० पी० सरकार ने पुलिस की रिपोर्ट पर विश्वास करके पासपोर्ट देने से इन्कार किया। देहरादून के श्रीमान् ठा० मनजीतसिंह जी भूतपूर्व सदस्य लेजिस्लेटिव कौन्सिल ने कौन्सिल में इस विषय में प्रश्न भी किया था

तब सरकार की ओर से उत्तर मिला था कि भविष्य में कभी फिर प्रार्थनापत्र आयेगा तो विचार किया जायगा। श्री बा० बुलाकीराम जी बैरिस्टर काबुल जाना चाहते थे, उनको भी पासपोर्ट नहीं मिला।

इस जीवन में भूलें भी अनेक हुईं। कभी अज्ञान में, कभी सहचारी किंवा सहकारियों को समझने में, कभी पक्ष-विपक्ष की बातों में, कभी सहसा किसी कार्य के कर बैठने में—जिन २ बातों का स्मरण आया उन उन बातों का मैंने स्वयं ही प्रायश्चित्त कर डाला। और जिन बातों को मैं सर्वथा उचित समझता था, और इसीलिये निर्भय होकर मैंने कर डाला था किन्तु भगवान् की दृष्टि में वह मेरी भूल थी, उसका दण्ड भगवान् ने मुझे स्वयं दे डाला और मुझे सावधान किया। तभी से मेरा ध्यान आत्म-निरीक्षण की ओर अधिक हुआ और तब से वह बलदाता भगवान् सार्वजनिक जीवन में मुझे बल देता रहा है। उसी बल के भरोसे पर मैं अपनी स्वल्पमति के अनुसार बड़े से बड़ा साहस कर बैठता हूँ। उसी बल के बूते पर बड़े से बड़ा कष्ट सहन कर लेता रहा हूँ—

मुझे जग का यह अनुभव मिला है कि मनुष्य जहाँ २ से भी किसी प्रकार की आशा रखता है, यह आवश्यक नहीं कि वह आशा उन्हीं स्थानों से, उन्हीं व्यक्तियों से पूर्ण हो। भगवान् की इच्छा हुई तो वह उन आशाओं को ऐसे स्थानों व व्यक्तियों से पूर्ण करा देता है जिसका मनुष्य को स्वप्न में भी ध्यान नहीं आता।

यह भी एक अनुभव हुआ कि एक ही उद्देश्य से एक ही स्थान पर संलग्न हुये कार्य-कर्त्ताओं में, चाहे उनमें कितना ही घनिष्ठ सम्बन्ध हो किसी समय में मतभेद की मात्रा अपरिहार्य होकर इतना तीव्ररूप पकड़ जाती है कि उनका परस्पर वियोग अनिवार्य हो जाता है। ऐसा होने में 'अदृष्ट' भी कारण बन जाता है इस बात को मैं मानता हूँ। सार्वजनिक जीवन में सबसे अधिक दुःखप्रद यही समय होता है पर क्या किया जाय, जो बात टालने से नहीं टाली जा सकती उसको सहन करने के अतिरिक्त और गति भी क्या है। यह भी अनुभव हुआ कि प्रत्युपकार बुद्धि से किये गये कार्य का फल प्रत्युपकार रूप में ही मिले यह बात नहीं। मिले भी, न भी मिले, सर्वथा उलटा मिले यह बात है। उपकार के बदले में भयङ्कर अपकार के दृश्य भी देखने के लिये तैयार रहना चाहिये। सबसे अच्छी बात यह होगी कि प्रत्युपकार की आशा के विना ही अपना कार्य किया जाय। सार्वजनिक जीवन में यह भी एक अनुभव हुआ कि सच्चे अर्थों में गुरुकुल चलाने हों तो तपस्वी गुरुओं को चाहिये कि ईश्वर-विश्वास और आत्मविश्वास के बल पर कहीं रम्य अथवा समुचित स्थान में बैठें। उसमें कमेटी का पचड़ा न लगाया जाय। इस प्रकार थोड़े से भक्त और शक्त शिष्योपशिष्यों-द्वारा विद्या अधिकारी के पास पहुँचकर सफल हो सकेगी। सिर पर अपने हाथों से वर्त्तमान ढर्रे की कमेटियों को लाद लेना और फिर भी पुरातन दृश्यों के सुख स्वप्न देखते रहना परस्पर विरोधी बातें हैं। यदि संस्थाओं को कमेटियों द्वारा चलाना अभीष्ट हो तो फिर समय की गति को समझना अपरिहार्य हो जाता है। मेरा यह भी अनुभव है कि आर्यसमाज का वर्त्तमान संगठन जिस प्रकार का है वह धर्मसभा के योग्य नहीं है। आर्यसमाज का कार्य तभी पूर्ण सफल हो सकता है जब कि विद्यासभा, धर्मसभा, राजसभा-द्वारा पृथक्

पृथक् कार्यों का संचालन हो। आर्यसमाज को अज्ञों के बहुमत ने चौपट कर डाला और अज्ञों तथा विज्ञों के मिश्रित बहुमत के कारण उसके अनेक आवश्यक कार्य अधूरे रह गये हैं और अधूरे रहेंगे। मेरा एक अनुभव है कि खास कोई देश व धर्म पर आपत्ति की बात न हो तो बाईस वर्ष के पूर्व सार्वजनिक कार्यों में नहीं पड़ना चाहिये। लेखक तो सत्रह वर्ष की अवस्था से ही सार्वजनिक कार्यों में पड़ा और सार्वजनिक जीवन की चिन्ताओं से उसकी शारीरिक अवस्था पर विपरीत परिणाम पड़ा। यह भी अनुभव हुआ कि सार्वजनिक जीवन में पड़कर जो व्यक्ति उपहासकाल और विरोधकाल को सहन करने के लिये तैयार नहीं है, अच्छा है कि वह सार्वजनिक जीवनपथ में पग ही न रक्खे। उसके लिये यही अच्छा है कि वह स्वशक्ति के अनुरूप जितना बन सके व्यक्तिगत रूप में करे। अधिक झमेले में न पड़े। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं को उचित है कि वे सांसारिक वासनाओं को, जहाँ तक संभव हो कम करें। सार्वजनिक कार्य करते हुये, धन, मान, यश के मिलने की संभावना तो रहती है पर इसके विपरीत, आशा से सर्वथा विरुद्ध, बातों का सामने आना भी संभव है। कभी थोड़ी सेवा का बहुत फल, कभी बहुत सेवा का अत्यल्प अथवा विपरीत फल भी देखा गया है इसलिये कर्त्तव्य बुद्धि से ही काम करते रहना अच्छा है। फल को ईश्वरार्पण करके काम करना सबसे अच्छा। उस भगवान् की इच्छा है कर्मफल का जैसा चाहे, जब चाहे, जिस रूप में चाहे भुगतान करा देवे।

यह भी अनुभव हुआ कि अच्छा से अच्छा और बड़े से बड़ा कार्य करके भी मनुष्य अभिमान को पास न फटकने देवे। ऋजुता, विनम्रता आदि भाव सदैव साथ रहें। प्रत्येक कार्य में भावशुद्धि अत्यन्त आवश्यक है। जितनी भावशुद्धि होगी सफलता भी उसी रूपमें, उसी अंश में मिलेगी।

वेदास्त्यागाश्च, यज्ञाश्च,
नियमाश्च तपांसि च।
न विप्रदुष्टभावस्य,
सिद्धिं गच्छन्ति कर्हिचित्॥ (मनु)

जिसके भाव शुद्ध नहीं होते उसके वेद, उसका त्याग, उसके यज्ञ, उसके यम-नियम, उसका तप सब वृथा है।

यह भी अनुभव मिला कि किसी धार्मिक कार्य को भी रागद्वेष से प्रारम्भ नहीं करना चाहिये। इस प्रकार का रागद्वेष-समन्वित प्रारम्भ भविष्य में हानिकर होगा। वर्त्तमान में तो वह चित्त को सदैव अशान्त रखने का कारण बन जाता है। धार्मिक कार्य भी सात्त्विक बुद्धि से ही करने चाहियें। जिस कार्य को जिस भाव से करोगे प्रायः वैसा ही फल मिलेगा। यह भी अनुभव की बात है कि जब किसी वस्तु अथवा संस्था का त्याग करना हो स्वेच्छा से करे। ऐसा समय कदापि न आने देवे जिससे विवश होकर त्याग करना पड़े। ऐसा राजसी त्याग निष्फल है। परिणाम पर दृष्टि रखकर कार्य करते रहने से सात्त्विक त्याग का अभ्यास हो जायगा। मैं मानता हूँ कि कभी-कभी कम्बल बुरी तरह चिपटता है और छोड़े नहीं छूटता पर यह भी राजसी भाव की बात है। कार्यप्रणाली में सात्त्विक शुद्धभाव

हो तो कम्बल स्वयं छूट जायगा और उसके वियोग का दुःख भी न होगा। सार्वजनिक कार्य भी एक अनुभवशाला है जिसमें शिक्षा पाये बिना मनुष्य एक प्रकार से अपूर्ण रह जाता है। सैकड़ों एवं सहस्रों भिन्न भाव वालों के साथ काम करते हुये कार्यक्षेत्र को पारकर जाना कोई हँसी ठठ्ठे की बात नहीं है। "योगः कर्मसु कौशलम्" यह बात तो सार्वजनिक जीवन में ही सीखने को मिलती है। यह भी अनुभव की बात है कि गृहजनों और कुटुम्बियों का मोह तभी तक सताता है जब तक कि व्यापक दृष्टि नहीं होती अथवा बनती। धीरे धीरे व्यापक सम्बन्ध होता जाय तो फिर कुटुम्बी जन भी साधारण जन से प्रतीत होने लगेंगे और मिथ्या मोह हट जायगा। यह भी अनुभव हुआ कि जिनको हम सुहृद् मित्र कहते हैं वे कहीं उलटे न पड़ते हों और हानि पहुंचाने के लिये कटिबद्ध न होते हों सो यह बात नहीं। सच पूछो तो ऐसे सुहृद् व ऐसे मित्र ही जब विरुद्ध हो जाते हैं सबसे अधिक हानि पहुँचा देते हैं। सार्वजनिक जीवन में जन्मान्तर के अनुभव साक्षात् देखने को मिलते हैं। मुद्राराक्षस नाटक में इस बात का क्या ही अच्छा दिग्दर्शन कराया गया है —

मित्राणि शत्रुत्त्वमुपानयन्ती,
मित्रत्वमर्थस्य वशाच्च नित्यम्।
नीतिर्नयत्यश्रुतपूर्वभावम ,
जन्मान्तरं जीवत एव पुंसः ॥

अभी वह मित्र है,अभी वह शत्रु बना। वह शत्रु है और फिर मित्र बना, ऐसे दृश्य कितने ही बार देखने को मिलते हैं। मानो मनुष्य जीते जी जन्मान्तरों के दृश्य देख लेता है। ये दृश्य विचित्र अश्रुतपूर्व व अदृष्टपूर्व होते हैं। यह भी अनुभव हुआ कि अपकार करने वालों की हितकामना रखते रहने से अथवा उसका उपकार करने से मानसिक शक्ति का संवर्द्धन होता है। फल यह होता है कि किसी समय वह अहितकर जन भी पूर्ण हितकर बन जाता है। कार्यनीति की अथवा "योगः कर्मसु कौशलम्" की यही बात है। शान्तिपर्व (महाभारत) में मार्जार-मूषक की कथा आती है उसमें किस सुन्दरता से इस प्रकार की वस्तुस्थिति का दिग्दर्शन कराया गया है—

अद्यैव मे रिपुर्भूत्वा,
पुनरद्यैव मे सुहृद्।
पुनश्च रिपुरद्यैव,
युक्तीनां पश्य चापलम् ॥
शा० प० अ० १३८ श्लो० १६०

आज ही तुम मेरे शत्रु बन गये और आज ही मित्र भी हो गये। और देखो, फिर आज ही शत्रु। देखा युक्तियों का चापल।

यह भी अनुभव की बात है कि जब मनुष्य का मन किसी कारण से उद्विग्न हो जावे तब जप करने से वह उद्विग्नता हट जाती है। हमारे गुरु स्व० श्री पं० हरनामदत्तजी भाष्यचार्य जी ने मुझे

बतलाया था कि जब चित्त उद्विग्न हो जावे तब अकेले भ्रमणार्थ निकल जाने से स्वस्थान को लौटने तक कोई न कोई भीतरी प्रकाश मिल जाता है जिससे मन उत्साहयुक्त हो जाता है। तब से मैं इस बात पर अमल करता रहता हूँ और मुझे एकाकी भ्रमण की प्रथा से बहुत लाभ पहुँचा है। मैं तो समझता हूँ कि संसार में प्रतिदिन के अनुभव में आने वाले सुख दःख किसी न किसी कर्म के विपाक हैं इसलिए इनका स्वागत करते हुए, यदि इनका भुगतान किया जाय तो फिर ये इतने दुःखदायक नहीं होते। मनुष्य से जब-जब कोई भूल हो जाय तब तब मनुष्य उचित रूप में स्वयं ही अपने आपको उचित दण्ड दे डाले और प्रायश्चित्त कर डाले तो उस प्रकार की भूलें न फिर होती हैं और न ही मार्ग में बाधा डाल सकती हैं। मनुष्य अल्पज्ञ है, उससे अज्ञानवश अथवा स्वल्पज्ञानवश, बुद्धिपूर्वक अथवा अबुद्धि-पूर्वक भूल होना अपरिहार्य है। व्यवहारकाल में मित्र उदासीन शत्रु उपजीवी व उपजीव्य इन पांचों से नित्य पाला पड़ता रहता है। इनसे छुटकारा कहाँ,जहाँ चाहे जाइये, इन पाँचो का सामना करना पड़ता है। कभी मित्रजन उदासीन, कमी उदासीनजन मित्र, कभी मित्र शत्रु और शत्रु मित्र बन जाते हैं। इसीलिये युक्तिपूर्वक मार्ग आक्रमण करना चाहिये। "आ बैल मुझे मार" की नीति कभी भी नहीं वर्तनी चाहिये। समभाव रखने से पहले तो कोई हानि होती ही नहीं और कदाचित् कोई हानि होगी तो वह नाममात्र की ही हानि समझिये। सार्वजनिक कार्य करने वालों को सब परिस्थितियों में मधुर स्वभाव रखना अत्यावश्यक है। विदुर जी ने क्या ही अच्छा कहा है—

यश्चक्षुषा, मनसा, वाचा च कर्मणा।
प्रसादयति यो लोकं, तं लोकोऽनुप्रसीदति॥

जो पुरुष (१) चक्षु (२) मन (३) वचन (४) कर्म से लोगों को प्रसन्न रक्खेगा लोग भी उसको प्रसन्न रक्खेंगे। यह मेरा सैकड़ों वार का अनुभव है कि यदि मैं मुस्कराता हुआ निकल गया तो लोग मुझे, विपरीत भावना रखने वाले लोग भी, मुझे मुस्कराते हुए मिले। मैं इस श्लोक को अपना मार्ग-दर्शक ही समझता रहा और मुझे इस पर आचरण करने से जितना लाभ हुआ वह कोई लिखने की बात नहीं है। जो इस पर आरूढ़ होगा वह स्वयं अनुभव कर लेगा। यह भी अनुभव की बात है कि समर्थ अथवा असमर्थ अर्थात् इन दोनों दशाओं में भी क्षमा—सहनशीलता से कभी हानि नहीं होती। मैंने अपने कई शत्रुओं को, जिनको मैं शत्रु समझता था केवल क्षमा के बल पर पछाड़ा। इसी क्षमा के कारण,मुझसे डाह रखने वाले जन भी परास्त हुये और फिर मित्र बन गये। अब तो मेरा कोई शत्रु नहीं है, अब तो मैं प्रत्येक घटना को, प्रत्येक मिलने वाले व्यक्ति को वेदान्त की व्यापक दृष्टि से देखता हूँ—

सुहृन्मित्रार्य्युदासीन—
मध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु।
साधुष्वपि च पापेषु
समबुद्धिर्विशिष्यते॥ (गीता)

इस श्लोक के अनुसार मुझे अब समबुद्धि का आनन्द आ गया है और अब जहाँ तक मुझसे बन पड़ता है मैं इस समभाव का प्रयोग करता रहता हूँ।

यह भी अनुभव मिला कि यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि शुभाशुभ कर्मों का फल शीघ्र मिले, हम जब चाहें तभी मिले अथवा जीतेजी ही मिले। ईश्वर की प्रेरणा अथवा अभिध्यान से जब जब जिस जिस की कर्म-ग्रन्थि खुलेगी तभी उसका फल मिलेगा। इसीलिये मन में कभी भी नास्तिक-भाव नहीं लाना चाहिये। प्रत्येक बुरी से बुरी घटना का अच्छा से अच्छा अभिप्राय लगा कर मनुष्य उसका स्वागत करता रहे, साथ २ आत्मपरीक्षण द्वारा आत्मशुद्धि करता रहे तो निश्चय से ही उस व्यक्ति का अनन्त कल्याण होगा। जीवनकाल में समय समय पर उपस्थित होने वाली संकट-परम्परा को एक प्रकार से परीक्षाकाल ही समझ कर धैर्य से वर्तना चाहिये। क्रोध बहुत बुरी बला है, इसके वश में पड़ कर मनुष्य क्या कुछ अनर्थ नहीं कर डालता। मेरा अनुभव यह कह रहा है कि यदि क्रोध को जीत लिया जाय तो यह क्रोध जीवनकाल में बड़ी बड़ी सहायता पहुँचाता है। यह एक और अनुभव हुआ कि मनुष्य को चाहिये कि जीवनकाल में मनुष्य कहीं का कहीं क्यों न पहुँच जावे अपनी प्राचीन दशा को सदैव अपनी आँखों के सामने रक्खे जिससे व्यर्थ का अभिमान अथवा दुरभिमान उत्पन्न न हो सके।

अभिमान सर्व गुणों पर पानी फेर देता है। स्वाभिमान पवित्र वस्तु है जो इन अभिमानों से सर्वथा पृथक् है। समझिये मैं पूर्वावस्था में दरिद्र था, कर्म-धर्म-संयोग से लक्षपति हो गया। यदि मैं उस दशा में भी पूर्वस्थिति पर दृष्टि देकर चलता हूँ तो लक्ष्मीमद के भाव से मैं बच जाऊँगा और अनेक अनर्थों से बचूंगा। लक्ष्मी का सदुपयोग करके उपकार कर सकूंगा। यह भी अनुभव हुआ कि ढिंढोरा पीट कर किसी को सहायता देने, किसी का भला करने की अपेक्षा चुपचाप सहायता देने से अपूर्व मानसिक अथवा आत्मिक शान्ति मिलती है। मेरे जीवन में अनेक वार ऐसी घटनाएँ हुईं हैं कि जिन लोगों ने मुझसे सिरतोड़ विरोध किया वे ही लोग एकान्त में मुझसे सहायता मांगने आये और मैंने किसी पहिली बात का ध्यान न करते हुये उनको सहायता दी। उन घटनाओं का मैं कभी उल्लेख नहीं करूँगा। कभी उल्लेख नहीं करूँगा। यह भी अनुभव की बात है कि जीवनकाल में दो-चार कृतघ्न व्यक्तियों से पाला पड़ना भी अपरिहार्य है—मैंने अनेक सज्जन महात्माओं से पूछा कि क्या आपको भी कभी कृतघ्नों से पाला पड़ा है? उन्होंने कहा कि यह बात अपरिहार्य है। तब हमने भी सन्तोष कर लिया कि चलो पूर्व-जन्म के किन्हीं कर्मों का प्रायश्चित्त ही सही। हम झूठ नहीं लिखेंगे। दो-चार कृतघ्न पुरुषों को हमने अच्छी तरह कुचल भी डाला पर अब इस वृद्धावस्था में वह बात एक अज्ञान की बात जँचने लगी है, पर अब उसका उपाय भी क्या है।

यह भी प्रधान अनुभव की बात है कि संसार में यदि किसी का सबसे पवित्र कार्य है तो वह 'गुरु' का कार्य है। गुरु निरपेक्षभाव से विद्यादान करता रहे तो जन्मभर में कोई एकाध सच्चा भक्त और शक्त शिष्य मिल ही जायगा जो उस गुरु के जन्मभर के परिश्रम को सफल करेगा। स्वा० विरजानन्द

को एक दयानन्द ने अमर कर दिया। श्री रामकृष्ण परमहंस को अकेले विवेकानन्द ने विश्वविख्यात कर डाला—समर्थ रामदास ने छत्रपति शिवाजी और शिवाजी ने समर्थ रामदास को अजर-अमर कर दिया। गुरुशिष्य परम्परा पर दृष्टि डालने से यही बात सिद्ध होती है। केवल विद्यादान से कोई किसी का गुरु हो जाता है सो यह बात नहीं। बस, जिसकी किसी बात से जिसका कल्याण हो जाता है, जिसकी बात से जिसके पट खुल जाते हैं उसको वह गुरु मानता चला आ रहा है। चाहे वह अक्षर-ज्ञान के कारण हो, चाहे अन्य किसी बात के कारण हो। श्री गोखले महामना रानडे को गुरु मानते रहे। लोकमान्य तिलक श्री विष्णुशास्त्री चिपलूनकर को गुरु मानते रहे। महात्मा गांधी गोपाल कृष्ण गोखले को अपना राजनैतिक गुरु मानते रहे हैं। सच्चा गुरु और सच्चा शिष्य मिलकर क्या कुछ नहीं कर सकते? उनके लिये असाध्य ही क्या है? शिष्यों को गुरु बड़े भाग्य से मिलता है पर गुरु को भी शिष्य बड़े ही भाग्य से मिलता है और गुरु को कोई तेजस्वी शिष्य मिले तो समझना चाहिये कि उसके पूर्व पुण्य का उदय हुआ। पूर्व जन्म का सुकृत फला। यह भी अनुभव हुआ कि सार्वजनिक जीवन में कभी २ स्वेच्छा से प्रसन्नतापूर्वक अपमान व निरादर का घूंट पी लेने से भविष्य में बड़ा लाभ होता है। ब्राह्मण को तो अपमान का सदा स्वागत करना चाहिये, इससे उसका तेज बुझने नहीं पाता। स्वागत और सम्मान से ब्राह्मण मर जाता है। स्वागत और सम्मान द्वारा लोगों ने ब्राह्मणों से सैकड़ों स्वार्थ सिद्ध करा लिये और अपने किये अनर्थों में ब्राह्मणों को भी समभागी बनाया। आँखें खोलकर देखने से इस प्रकार के पचासों दृष्टान्त मिलेंगे।—

सार्वजनिक जीवन फुटबाल का-सा जीवन है। जब तक फुटबाल में हवा भरी रहेगी तब तक किक् करने वालों अथवा खेलने वालों को भी आनन्द देगा। किक् खाते २ कभी वह आकाश में बहुत ऊँचा जायगा, फिर नीचे आयगा, फिर ऊपर उठेगा, फिर किक् खाकर दूर जा पड़ेगा। प्रतिक्षण उभयपक्ष के खिलाड़ियों द्वारा दोनों ओर से ठुकराया जायगा। कभी खिलाड़ियों के पैरों में ही इधर उधर लुड़काया जायगा और धक्के खाता रहेगा। सार्वजनिक कार्यकर्त्ता में स्पिरिट हो तो ऐसे दृश्य देखने ही पड़ेंगे। फुटबाल में हवा न रहेगी अथवा पंचर (छेद) हो जायगा अथवा फट जायेगा तो फिर उसको कौन पूछेगा? सारी बात हवा की है चाहे फुटबाल की हो अथवा सार्वजनिक कार्यकर्त्ता की। सारी बात भीतरी स्पिरिट की है। सार्वजनिक कार्यकर्त्ता को सदैव सब प्रकार के आक्षेप व कटाक्ष सुनने व शान्ति व धैर्यपूर्वक उनका (यदि वे सत्य हों तो) निरसन करने के लिये उद्यत रहना चाहिये। यह स्मरण रहे कि पक्षिगण मीठे फलों पर ही अधिक चोंच मारते रहते हैं। नेक-नियति से काम करते रहने पर भी जब ईर्ष्यालु स्वार्थी जन आक्षेप करने लगे तो समझ लेना चाहिये कि फल मीठा होने लगा, फल में मधुरता का प्रवेश होने लगा। एक बार मैंने पण्डित मुरारीलाल शर्मा जी से कहा कि लोग दिक़ करते रहते हैं, काम नहीं करने देते, तब मुरारीलाल जी मुस्करा कर बोले 'रावजी, घबराओ मत, फल पकने लगा है, कौव्वे मीठे फलों पर ही अधिक चोंच मारते हैं"—स्वर्गीय स्वा० दर्शनानन्द जी ने भी एक बार इसी प्रकार का उत्तर दिया था। एक बार मैंने उनसे कहा कि लोग व्यर्थ की डाह करते हैं, तब आपने महाभाष्य का एक वचन याद दिलाया जिसका अभिप्राय यह है

कि जूओं के भय से गुदड़ी नहीं छोड़ दी जाती, भिक्षुकों के भय से कोई अपनी रसोई बनाना बन्द नहीं करता, हरिण खेत में चुग जायेंगे इस भय से किसान अन्न बोना नहीं छोड़ता—वह भाष्य वचन इस प्रकार है—

"न हि यूकाभयात्कन्था परित्यज्यते, न हि भिक्षुकाः सन्तीति स्थाल्यो नाधिश्रीयन्ते, न हि मृगाः सन्तीति यवा नोप्यन्ते"—

एक और अनुभव और बस। छोटे २ अनुभवों के विषय में अन्यत्र विवेचना रहेगी ही। यहाँ केवल स्थूलमान से विवेचना है। सबसे लाभदायक यह अनुभव मिला कि सच्चे हृदय से ईश्वर की शरण लेने से वह अवश्य ही प्रार्थना को स्वीकार कर लेता है। कठिन प्रसङ्गों पर आन्तरिक शब्दों द्वारा सावधान कर देता है। मुझे प्रार्थना पद्धति से बहुत लाभ पहुँचा—मेरे अनुभव का सारांश यह है—

(१) सच्चे हृदय से ईश्वर प्रार्थना, उपासना ।
(२) क्षमा अर्थात् सहनशीलता—
(३) अपकार के बदले उपकार—
(४) कर्म-अकर्म-विकर्म मीमांसा पर गहन दृष्टि ।
(५) समबुद्धि का आंशिक प्रयोग व उसमें आशातीत सफलता ।
(६) "उदारा सर्व एवैते" इस गीता श्लोक का आश्रय ।
(७) प्रत्येक घटना का वेदान्त की व्यापक दृष्टि से विचार—आत्मपरीक्षण का अभ्यास—
(८) प्रायश्चित्त—ब्रह्मजप, गायत्रीजप इत्यादि ।

गुरुओं का परिचय

(किनसे किन २ विषयों का अध्ययन हुआ)

१—श्री १०८ स्वामी शुद्धबोधतीर्थ जी महाराज—

(बेलोन-राजघाट)

अष्टाध्यायी (तीनों आवृत्तियाँ) काशिका, नवाह्निक, योगदर्शन, न्यायदर्शन दो अध्याय।

२—श्री ६ पं० नारायणसिद्ध जी—

(नगर-भरतपुर राज्य)

आप दर्शन व उपनिषदों के पंडित थे। सब दर्शन व उपनिषद् आपको हस्तामलकवत् उपस्थित थे।

वृत्तरत्नाकर, पिंगल, प्रशस्तपादभाष्य, शंकरोपस्कार, लौगाक्षीमीमांसा, वेदान्त परिभाषा, चतुःसूत्री (वेदान्त) भाष्य, पञ्चदशी, ईशादि छः उपनिषद्, सांख्य, सांख्यतत्त्वकौमुदी, योग (भोजवृत्ति)।

३—श्री महामहोपाध्याय पण्डित रघुपति शास्त्री—

प्रिन्सिपल संस्कृत कॉलेज लश्कर (ग्वालियर) भींड, राज्य ग्वालियर निवासी — कादम्बरी, नलचम्पू साहित्यदर्पण।

आप ग्वालियर राज्य के अद्वितीय विद्वान् व प्रतिभाशाली कवि थे। आप की सम्पादित "विद्वत्कला" पण्डितों के अभिमान की वस्तु थी।

४—श्री विद्यापति शास्त्री साहित्याचार्य—

आप साहित्य के इतने प्रगाढ़ पण्डित थे कि पुस्तक के देखे बिना ही साहित्य के सब ग्रन्थ पढ़ा देते थे। — अनेक साहित्य-ग्रन्थ व काव्य।

५—महामहोपाध्याय श्री पं० अम्बादास शास्त्री—

(बाँस का फाटक—काशी) — रसगंगाधर, व्युत्पत्तिवाद, शक्तिवाद, न्यायमुक्तावली आदि।

आप काशी के सुप्रसिद्ध जगद्विख्यात श्री पं० सीताराम शास्त्री के प्रधान शिष्य थे।

६—श्री आचार्य पं० सत्यव्रत सामश्रमी—

फेलो एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, लेकचरर कलकत्ता युनिवर्सिटी। — ऋग्वेद दो अष्टक, ऐतरेय ब्राह्मण, आश्वलायन श्रौतसूत्र, निरुक्त तथा अन्य वेदों के विषय में सामान्यज्ञान—

७—महामहोपाध्याय श्री पं० रामरत्न झा —

(काशी) — लीलावती, गोलाध्याय, गणिताध्याय।

आप महामहोपाध्याय श्री पं० सुधाकर द्विवेदी जी के प्रधान शिष्य व ज्योतिष के प्रकाण्ड पंडित हैं।

८—आचार्य श्री पं० परमेश्वरीदत्त जी—

(नवाबगंज—दुर्गाघाट काशी) — याज्ञवल्क्य-स्मृति (मिताक्षरा)।

आप धर्मशास्त्रों के प्रगाढ़ पण्डित थे। व्यवस्था खूब लगाते व देते थे।

कि जूओं के भय से गुदड़ी नहीं छोड़ दी जाती, भिक्षुकों के भय से कोई अपनी रसोई बनाना बन्द नहीं करता, हरिण खेत में चुग जायेंगे इस भय से किसान अन्न बोना नहीं छोड़ता—वह भाष्य वचन इस प्रकार है—

"न हि यूकाभयात्कन्था परित्यज्यते, न हि भिक्षुकाः सन्तीति स्थाल्यो नाधिश्रीयन्ते, न हि मृगाः सन्तीति यवा नोप्यन्ते"—

एक और अनुभव और बस। छोटे २ अनुभवों के विषय में अन्यत्र विवेचना रहेगी ही। यहाँ केवल स्थूलमान से विवेचना है। सबसे लाभदायक यह अनुभव मिला कि सच्चे हृदय से ईश्वर की शरण लेने से वह अवश्य ही प्रार्थना को स्वीकार कर लेता है। कठिन प्रसङ्गों पर आन्तरिक शब्दों द्वारा सावधान कर देता है। मुझे प्रार्थना पद्धति से बहुत लाभ पहुँचा—मेरे अनुभव का सारांश यह है—

(१) सच्चे हृदय से ईश्वर प्रार्थना, उपासना ।
(२) क्षमा अर्थात् सहनशीलता—
(३) अपकार के बदले उपकार—
(४) कर्म-अकर्म-विकर्म मीमांसा पर गहन दृष्टि ।
(५) समबुद्धि का आंशिक प्रयोग व उसमें आशातीत सफलता ।
(६) "उदारा सर्व एवैते" इस गीता श्लोक का आश्रय ।
(७) प्रत्येक घटना का वेदान्त की व्यापक दृष्टि से विचार—आत्मपरीक्षण का अभ्यास—
(८) प्रायश्चित्त—ब्रह्मजप, गायत्रीजप इत्यादि ।

गुरुओं का परिचय

(किनसे किन २ विषयों का अध्ययन हुआ)

१—श्री १०८ स्वामी शुद्धबोधतीर्थ जी महाराज—

(बेलोन-राजघाट)

आष्टाध्यायी (तीनों आवृत्तियाँ) काशिका नवाह्निक, योगदर्शन, न्यायदर्शन दो अध्याय

२—श्री ६ पं० नारायणसिद्ध जी—

(नगर-भरतपुर राज्य)

आप दर्शन व उपनिषदों के पंडित थे। सब दर्शन व उपनिषद् आपको हस्तामलकवत् उपस्थित थे।

वृत्तरत्नाकर, पिंगल, प्रशस्तपादभाष्य, शंकरोपस्कार, लौगाक्षीमीमांसा, वेदान्त परिभाषा चतुःसूत्री (वेदान्त) भाष्य, पञ्चदशी, ईशादि छः उपनिषद्, सांख्य, सांख्यतत्त्वकौमुदी योग (भोजवृत्ति)।

३—श्री महामहोपाध्याय पण्डित रघुपति शास्त्री—

प्रिन्सिपल संस्कृत कॉलेज लश्कर (ग्वालियर) भींड, राज्य ग्वालियर निवासी

आप ग्वालियर राज्य के अद्वितीय विद्वान् व प्रतिभाशाली कवि थे। आप की सम्पादित "विद्वत्कला" पण्डितों के अभिमान की वस्तु थी।

कादम्बरी, नलचम्पू साहित्यदर्पण।

४—श्री विद्यापति शास्त्री साहित्याचार्य—

आप साहित्य के इतने प्रगाढ़ पण्डित थे कि पुस्तक के देखे बिना ही साहित्य के सब ग्रन्थ पढ़ा देते थे।

अनेक साहित्य-ग्रन्थ व काव्य।

५—महामहोपाध्याय श्री पं० अम्बादास शास्त्री—

(बाँस का फाटक—काशी)

आप काशी के सुप्रसिद्ध जगद्विख्यात श्री पं० सीताराम शास्त्री के प्रधान शिष्य थे।

रसगंगाधर, व्युत्पत्तिवाद, शक्तिवाद, न्याय-मुक्तावली आदि।

६—श्री आचार्य पं० सत्यव्रत सामश्रमी—

फेलो एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, लेकचरर कलकत्ता युनिवर्सिटी।

ऋग्वेद दो अष्टक, ऐतरेय ब्राह्मण, आश्वलायन श्रौतसूत्र, निरुक्त तथा अन्य वेदों के विषय में सामान्यज्ञान—

७—महामहोपाध्याय श्री पं० रामरत्न झा —

(काशी)

आप महामहोपाध्याय श्री पं० सुधाकर द्विवेदी जी के प्रधान शिष्य व ज्योतिष के प्रकाण्ड पंडित हैं।

लीलावती, गोलाध्याय, गणिताध्याय।

८—आचार्य श्री पं० परमेश्वरीदत्त जी—

(नवाबगंज—दुर्गाघाट काशी)

आप धर्मशास्त्रों के प्रगाढ़ पण्डित थे। व्यवस्था खूब लगाते व देते थे।

याज्ञवल्क्य-स्मृति (मिताक्षरा)।

हो तो कम्बल स्वयं छूट जायगा और उसके वियोग का दुःख भी न होगा। सार्वजनिक कार्य भी एक अनुभवशाला है जिसमें शिक्षा पाये बिना मनुष्य एक प्रकार से अपूर्ण रह जाता है। सैकड़ों एवं सहस्रों भिन्न भाव वालों के साथ काम करते हुये कार्यक्षेत्र को पारकर जाना कोई हँसी ठठ्ठे की बात नहीं है। "योगः कर्मसु कौशलम्" यह बात तो सार्वजनिक जीवन में ही सीखने को मिलती है। यह भी अनुभव की बात है कि गृहजनों और कुटुम्बियों का मोह तभी तक सताता है जब तक कि व्यापक दृष्टि नहीं होती अथवा बनती। धीरे धीरे व्यापक सम्बन्ध होता जाय तो फिर कुटुम्बी जन भी साधारण जन से प्रतीत होने लगेंगे और मिथ्या मोह हट जायगा। यह भी अनुभव हुआ कि जिनको हम सुहृद् मित्र कहते हैं वे कहीं उलटे न पड़ते हों और हानि पहुंचाने के लिये कटिबद्ध न होते हों सो यह बात नहीं। सच पूछो तो ऐसे सुहृद् व ऐसे मित्र ही जब विरुद्ध हो जाते हैं सबसे अधिक हानि पहुँचा देते हैं। सार्वजनिक जीवन में जन्मान्तर के अनुभव साक्षात् देखने को मिलते हैं। मुद्राराक्षस नाटक में इस बात का क्या ही अच्छा दिग्दर्शन कराया गया है —

मित्राणि शत्रुत्वमुपानयन्ती,
मित्रत्वमथेस्य वशाच्च नित्यम्।
नीतिर्नयत्यश्रुतपूर्वभावम्,
जन्मान्तरं जीवत एव पुंसः॥

अभी वह मित्र है, अभी वह शत्रु बना। वह शत्रु है और फिर मित्र बना, ऐसे दृश्य कितने ही बार देखने को मिलते हैं। मानो मनुष्य जीते जी जन्मान्तरों के दृश्य देख लेता है। ये दृश्य विचित्र अश्रुतपूर्व व अदृष्टपूर्व होते हैं। यह भी अनुभव हुआ कि अपकार करने वालों की हितकामना रखते रहने से अथवा उसका उपकार करने से मानसिक शक्ति का संवर्द्धन होता है। फल यह होता है कि किसी समय वह अहितकर जन भी पूर्ण हितकर बन जाता है। कार्यनीति की अथवा "योगः कर्मसु कौशलम्" की यही बात है। शान्तिपर्व (महाभारत) में मार्जार-मूषक की कथा आती है उसमें किस सुन्दरता से इस प्रकार की वस्तुस्थिति का दिग्दर्शन कराया गया है—

अद्यैव मे रिपुर्भूत्वा,
पुनरद्यैव मे सुहृद्।
पुनश्च रिपुरद्यैव,
युक्तीनां पश्य चापलम्॥

शा० प० अ० १३८ श्लो० १६०

आज ही तुम मेरे शत्रु बन गये और आज ही मित्र भी हो गये। और देखो, फिर आज ही शत्रु। देखा युक्तियों का चापल।

यह भी अनुभव की बात है कि जब मनुष्य का मन किसी कारण से उद्विग्न हो जावे तब जप करने से वह उद्विग्नता हट जाती है। हमारे गुरु स्व० श्री पं० हरनामदत्तजी भाष्यचार्य जी ने मुझे

बतलाया था कि जब चित्त उद्विग्न हो जावे तब अकेले भ्रमणार्थ निकल जाने से स्वस्थान को लौटने तक कोई न कोई भीतरी प्रकाश मिल जाता है जिससे मन उत्साहयुक्त हो जाता है। तब से मैं इस बात पर अमल करता रहता हूँ और मुझे एकाकी भ्रमण की प्रथा से बहुत लाभ पहुँचा है। मैं तो समझता हूँ कि संसार में प्रतिदिन के अनुभव में आने वाले सुख दुःख किसी न किसी कर्म के विपाक हैं इसलिए इनका स्वागत करते हुए, यदि इनका भुगतान किया जाय तो फिर ये इतने दुःखदायक नहीं होते। मनुष्य से जब-जब कोई भूल हो जाय तब तब मनुष्य उचित रूप में स्वयं ही अपने आपको उचित दण्ड दे डाले और प्रायश्चित्त कर डाले तो उस प्रकार की भूलें न फिर होती हैं और न ही मार्ग में बाधा डाल सकती हैं। मनुष्य अल्पज्ञ है, उससे अज्ञानवश अथवा स्वल्पज्ञानवश, बुद्धिपूर्वक अथवा अबुद्धिपूर्वक भूल होना अपरिहार्य है। व्यवहारकाल में मित्र उदासीन शत्रु उपजीवी व उपजीव्य इन पांचों से नित्य पाला पड़ता रहता है। इनसे छुटकारा कहाँ,जहाँ चाहे जाइये, इन पाँचो का सामना करना पड़ता है। कभी मित्रजन उदासीन, कमी उदासीनजन मित्र, कभी मित्र शत्रु और शत्रु मित्र बन जाते हैं। इसीलिये युक्तिपूर्वक मार्ग आक्रमण करना चाहिये। "आ बैल मुझे मार" की नीति कभी भी नहीं वर्तनी चाहिये। समभाव रखने से पहले तो कोई हानि होती ही नहीं और कदाचित् कोई हानि होगी तो वह नाममात्र की ही हानि समझिये। सार्वजनिक कार्य करने वालों को सब परिस्थितियों में मधुर स्वभाव रखना अत्यावश्यक है। विदुर जी ने क्या ही अच्छा कहा है—

यश्चक्षुषा, मनसा, वाचा च कर्मणा।
प्रसादयति यो लोकं, तं लोकोऽनुप्रसीदति॥

जो पुरुष (१) चक्षु (२) मन (३) वचन (४) कर्म से लोगों को प्रसन्न रक्खेगा लोग भी उसको प्रसन्न रक्खेंगे। यह मेरा सैकड़ों वार का अनुभव है कि यदि मैं मुस्कराता हुआ निकल गया तो लोग मुझे, विपरीत भावना रखने वाले लोग भी, मुझे मुस्कराते हुए मिले। मैं इस श्लोक को अपना मार्गदर्शक ही समझता रहा और मुझे इस पर आचरण करने से जितना लाभ हुआ वह कोई लिखने की बात नहीं है। जो इस पर आरूढ़ होगा वह स्वयं अनुभव कर लेगा। यह भी अनुभव की बात है कि समर्थ अथवा असमर्थ अर्थात् इन दोनों दशाओं में भी क्षमा— सहनशीलता से कभी हानि नहीं होती। मैंने अपने कई शत्रुओं को, जिनको मैं शत्रु समझता था केवल क्षमा के बल पर पछाड़ा। इसी क्षमा के कारण,मुझसे डाह रखने वाले जन भी परास्त हुये और फिर मित्र बन गये। अब तो मेरा कोई शत्रु नहीं है, अब तो मैं प्रत्येक घटना को, प्रत्येक मिलने वाले व्यक्ति को वेदान्त की व्यापक दृष्टि से थेखता हूँ—

सुहृन्मित्रार्य्युदासीन—
मध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु।
साधुष्वपि च पापेषु
समबुद्धिर्विशिष्यते॥ (गीता)

इस श्लोक के अनुसार मुझे अब समबुद्धि का आनन्द आ गया है और अब जहाँ तक मुझसे बन पड़ता है मैं इस समभाव का प्रयोग करता रहता हूँ।

यह भी अनुभव मिला कि यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि शुभाशुभ कर्मों का फल शीघ्र मिले, हम जब चाहें तभी मिले अथवा जीतेजी ही मिले। ईश्वर की प्रेरणा अथवा अभिध्यान से जब जब जिस जिस की कर्म-ग्रन्थि खुलेगी तभी उसका फल मिलेगा। इसीलिये मन में कभी भी नास्तिक-भाव नहीं लाना चाहिये। प्रत्येक बुरी से बुरी घटना का अच्छा से अच्छा अभिप्राय लगा कर मनुष्य उसका स्वागत करता रहे, साथ २ आत्मपरीक्षण द्वारा आत्मशुद्धि करता रहे तो निश्चय से ही उस व्यक्ति का अनन्त कल्याण होगा। जीवनकाल में समय समय पर उपस्थित होने वाली संकट-परम्परा को एक प्रकार से परीक्षाकाल ही समझ कर धैर्य से वर्तना चाहिये। क्रोध बहुत बुरी बला है, इसके वश में पड़ कर मनुष्य क्या कुछ अनर्थ नहीं कर डालता। मेरा अनुभव यह कह रहा है कि यदि क्रोध को जीत लिया जाय तो यह क्रोध जीवनकाल में बड़ी बड़ी सहायता पहुँचाता है। यह एक और अनुभव हुआ कि मनुष्य को चाहिये कि जीवनकाल में मनुष्य कहीं का कहीं क्यों न पहुँच जावे अपनी प्राचीन दशा को सदैव अपनी आँखों के सामने रक्खे जिससे व्यर्थ का अभिमान अथवा दुरभिमान उत्पन्न न हो सके।

अभिमान सर्व गुणों पर पानी फेर देता है। स्वाभिमान पवित्र वस्तु है जो इन अभिमानों से सर्वथा पृथक् है। समझिये मैं पूर्वावस्था में दरिद्र था, कर्म-धर्म-संयोग से लक्षपति हो गया। यदि मैं उस दशा में भी पूर्वस्थिति पर दृष्टि देकर चलता हूँ तो लक्ष्मीमद के भाव से मैं बच जाऊँगा और अनेक अनर्थों से बचूंगा। लक्ष्मी का सदुपयोग करके उपकार कर सकूंगा। यह भी अनुभव हुआ कि ढिंढोरा पीट कर किसी को सहायता देने, किसी का भला करने की अपेक्षा चुपचाप सहायता देने से अपूर्व मानसिक अथवा आत्मिक शान्ति मिलती है। मेरे जीवन में अनेक वार ऐसी घटनाएँ हुईं हैं कि जिन लोगों ने मुझसे सिरतोड़ विरोध किया वे ही लोग एकान्त में मुझसे सहायता मांगने आये और मैंने किसी पहिली बात का ध्यान न करते हुये उनको सहायता दी। उन घटनाओं का मैं कभी उल्लेख नहीं करूँगा। कभी उल्लेख नहीं करूँगा। यह भी अनुभव की बात है कि जीवनकाल में दो-चार कृतघ्न व्यक्तियों से पाला पड़ना भी अपरिहार्य है—मैंने अनेक सज्जन महात्माओं से पूछा कि क्या आपको भी कभी कृतघ्नों से पाला पड़ा है? उन्होंने कहा कि यह बात अपरिहार्य है। तब हमने भी सन्तोष कर लिया कि चलो पूर्व-जन्म के किन्हीं कर्मों का प्रायश्चित्त ही सही। हम झूठ नहीं लिखेंगे। दो-चार कृतघ्न पुरुषों को हमने अच्छी तरह कुचल भी डाला पर अब इस वृद्धावस्था में वह बात एक अज्ञान की बात जँचने लगी है, पर अब उसका उपाय भी क्या है।

यह भी प्रधान अनुभव की बात है कि संसार में यदि किसी का सबसे पवित्र कार्य है तो वह 'गुरु' का कार्य है। गुरु निरपेक्षभाव से विद्यादान करता रहे तो जन्मभर में कोई एकाध सच्चा भक्त और शक्त शिष्य मिल ही जायगा जो उस गुरु के जन्मभर के परिश्रम को सफल करेगा। स्वा० विरजानन्द

को एक दयानन्द ने अमर कर दिया। श्री रामकृष्ण परमहंस को अकेले विवेकानन्द ने विश्वविख्यात कर डाला—समर्थ रामदास ने छत्रपति शिवाजी और शिवाजी ने समर्थ रामदास को अजर-अमर कर दिया। गुरुशिष्य परम्परा पर दृष्टि डालने से यही बात सिद्ध होती है। केवल विद्यादान से कोई किसी का गुरु हो जाता है सो यह बात नहीं। बस, जिसकी किसी बात से जिसका कल्याण हो जाता है, जिसकी बात से जिसके पट खुल जाते हैं उसको वह गुरु मानता चला आ रहा है। चाहे वह अक्षर-ज्ञान के कारण हो, चाहे अन्य किसी बात के कारण हो। श्री गोखले महामना रानडे को गुरु मानते रहे। लोकमान्य तिलक श्री विष्णुशास्त्री चिपलूनकर को गुरु मानते रहे। महात्मा गांधी गोपाल कृष्ण गोखले को अपना राजनैतिक गुरु मानते रहे हैं। सच्चा गुरु और सच्चा शिष्य मिलकर क्या कुछ नहीं कर सकते? उनके लिये असाध्य ही क्या है? शिष्यों को गुरु बड़े भाग्य से मिलता है पर गुरु को भी शिष्य बड़े ही भाग्य से मिलता है और गुरु को कोई तेजस्वी शिष्य मिले तो समझना चाहिये कि उसके पूर्व पुण्य का उदय हुआ। पूर्व जन्म का सुकृत फला। यह भी अनुभव हुआ कि सार्वजनिक जीवन में कभी २ स्वेच्छा से प्रसन्नतापूर्वक अपमान व निरादर का घूंट पी लेने से भविष्य में बड़ा लाभ होता है। ब्राह्मण को तो अपमान का सदा स्वागत करना चाहिये, इससे उसका तेज बुझने नहीं पाता। स्वागत और सम्मान से ब्राह्मण मर जाता है। स्वागत और सम्मान द्वारा लोगों ने ब्राह्मणों से सैकड़ों स्वार्थ सिद्ध करा लिये और अपने किये अनर्थों में ब्राह्मणों को भी समभागी बनाया। आँखें खोलकर देखने से इस प्रकार के पचासों दृष्टान्त मिलेंगे।—

सार्वजनिक जीवन फुटबाल का-सा जीवन है। जब तक फुटबाल में हवा भरी रहेगी तब तक किक् करने वालों अथवा खेलने वालों को भी आनन्द देगा। किक् खाते २ कभी वह आकाश में बहुत ऊँचा जायगा, फिर नीचे आयगा, फिर ऊपर उठेगा, फिर किक् खाकर दूर जा पड़ेगा। प्रतिक्षण उभयपक्ष के खिलाड़ियों द्वारा दोनों ओर से ठुकराया जायगा। कभी खिलाड़ियों के पैरों में ही इधर उधर लुढ़काया जायगा और धक्के खाता रहेगा। सार्वजनिक कार्यकर्त्ता में स्पिरिट हो तो ऐसे दृश्य देखने ही पड़ेंगे। फुटबाल में हवा न रहेगी अथवा पंचर (छेद) हो जायगा अथवा फट जायेगा तो फिर उसको कौन पूछेगा? सारी बात हवा की है चाहे फुटबाल की हो अथवा सार्वजनिक कार्यकर्त्ता की। सारी बात भीतरी स्पिरिट की है। सार्वजनिक कार्यकर्त्ता को सदैव सब प्रकार के आक्षेप व कटाक्ष सुनने व शान्ति व धैर्यपूर्वक उनका (यदि वे सत्य हों तो) निरसन करने के लिये उद्यत रहना चाहिये। यह स्मरण रहे कि पक्षिगण मीठे फलों पर ही अधिक चोंच मारते रहते हैं। नेक-नियति से काम करते रहने पर भी जब ईर्ष्यालु स्वार्थी जन आक्षेप करने लगे तो समझ लेना चाहिये कि फल मीठा होने लगा, फल में मधुरता का प्रवेश होने लगा। एक बार मैंने पण्डित मुरारीलाल शर्मा जी से कहा कि लोग दिक़ करते रहते हैं, काम नहीं करने देते, तब मुरारीलाल जी मुस्करा कर बोले 'रावजी, घबराओ मत, फल पकने लगा है, कौव्वे मीठे फलों पर ही अधिक चोंच मारते हैं"—स्वर्गीय स्वा० दर्शनानन्द जी ने भी एक बार इसी प्रकार का उत्तर दिया था। एक बार मैंने उनसे कहा कि लोग व्यर्थ की डाह करते हैं, तब आपने महाभाष्य का एक वचन याद दिलाया जिसका अभिप्राय यह है

कि जूओं के भय से गुदड़ी नहीं छोड़ दी जाती, भिक्षुकों के भय से कोई अपनी रसोई बनाना बन्द नहीं करता, हरिण खेत में चुग जायेंगे इस भय से किसान अन्न बोना नहीं छोड़ता—वह भाष्य वचन इस प्रकार है—

"न हि यूकाभयात्कन्था परित्यज्यते, न हि भिक्षुकाः सन्तीति स्थाल्यो नाधिश्रीयन्ते, न हि मृगाः सन्तीति यवा नोप्यन्ते"—

एक और अनुभव और बस। छोटे २ अनुभवों के विषय में अन्यत्र विवेचना रहेगी ही। यहाँ केवल स्थूलमान से विवेचना है। सबसे लाभदायक यह अनुभव मिला कि सच्चे हृदय से ईश्वर की शरण लेने से वह अवश्य ही प्रार्थना को स्वीकार कर लेता है। कठिन प्रसङ्गों पर आन्तरिक शब्दों द्वारा सावधान कर देता है। मुझे प्रार्थना पद्धति से बहुत लाभ पहुँचा—मेरे अनुभव का सारांश यह है—

(१) सच्चे हृदय से ईश्वर प्रार्थना, उपासना ।
(२) क्षमा अर्थात् सहनशीलता—
(३) अपकार के बदले उपकार—
(४) कर्म-अकर्म-विकर्म मीमांसा पर गहन दृष्टि ।
(५) समबुद्धि का आंशिक प्रयोग व उसमें आशातीत सफलता ।
(६) "उदारा सर्व एवैते" इस गीता श्लोक का आश्रय ।
(७) प्रत्येक घटना का वेदान्त की व्यापक दृष्टि से विचार—आत्मपरीक्षण का अभ्यास—
(८) प्रायश्चित्त—ब्रह्मजप, गायत्रीजप इत्यादि ।

गुरुओं का परिचय

(किनसे किन २ विषयों का अध्ययन हुआ)

१—श्री १०८ स्वामी शुद्धबोधतीर्थ जी महाराज—

(बेलोन-राजघाट)

अष्टाध्यायी (तीनों आवृत्तियाँ) काशिका, नवाह्निक, योगदर्शन, न्यायदर्शन दो अध्याय।

२—श्री ६ पं० नारायणसिद्ध जी—

(नगर-भरतपुर राज्य)
आप दर्शन व उपनिषदों के पंडित थे। सब दर्शन व उपनिषद् आपको हस्तामलकवत् उपस्थित थे।

वृत्तरत्नाकर, पिंगल, प्रशस्तपादभाष्य, शंकरोपस्कार, लौगाक्षीमीमांसा, वेदान्त परिभाषा, चतुःसूत्री (वेदान्त) भाष्य, पञ्चदशी, ईशादि छः उपनिषद्, सांख्य,सांख्यतत्त्वकौमुदी, योग (भोजवृत्ति)।

३—श्री महामहोपाध्याय पण्डित रघुपति शास्त्री—	
प्रिन्सिपल संस्कृत कॉलेज लश्कर (ग्वालियर) भींड, राज्य ग्वालियर निवासी आप ग्वालियर राज्य के अद्वितीय विद्वान् व प्रतिभाशाली कवि थे। आप की सम्पादित "विद्वत्कला" पण्डितों के अभिमान की वस्तु थी।	कादम्बरी, नलचम्पू साहित्यदर्पण।
४—श्री विद्यापति शास्त्री साहित्याचार्य—	
आप साहित्य के इतने प्रगाढ़ पण्डित थे कि पुस्तक के देखे बिना ही साहित्य के सब ग्रन्थ पढ़ा देते थे।	अनेक साहित्य-ग्रन्थ व काव्य।
५—महामहोपाध्याय श्री पं० अम्बादास शास्त्री—	
(बाँस का फाटक—काशी) आप काशी के सुप्रसिद्ध जगद्विख्यात श्री पं० सीताराम शास्त्री के प्रधान शिष्य थे।	रसगंगाधर, व्युत्पत्तिवाद, शक्तिवाद, न्याय-मुक्तावली आदि।
६—श्री आचार्य पं० सत्यव्रत सामश्रमी—	
फेलो एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, लेकचरर कलकत्ता युनिवर्सिटी।	ऋग्वेद दो अष्टक, ऐतरेय ब्राह्मण, आश्वलायन श्रौतसूत्र, निरुक्त तथा अन्य वेदों के विषय में सामान्यज्ञान—
७—महामहोपाध्याय श्री पं० रामरत्न झा —	
(काशी) आप महामहोपाध्याय श्री पं० सुधाकर द्विवेदी जी के प्रधान शिष्य व ज्योतिष के प्रकाण्ड पंडित हैं।	लीलावती, गोलाध्याय, गणिताध्याय।
८—आचार्य श्री पं० परमेश्वरीदत्त जी—	
(नवाबगंज—दुर्गाघाट काशी) आप धर्मशास्त्रों के प्रगाढ़ पण्डित थे। व्यवस्था खूब लगाते व देते थे।	याज्ञवल्क्य-स्मृति (मिताक्षरा)।

श्री स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी

श्री० स्वा० जी का पूर्वनाम श्री गंगादत्तशास्त्री था। आप बेलोन जि० बुलन्दशहर के निवासी थे। बेलोन राजघाट नरौरा से तीन मील है। आप जैसे छात्रवत्सल गुरु शायद ही कहीं देखने को मिलें। आप प्राचीन नवीन दोनों पद्धति से पढ़ाते हैं। व्याकरण शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित थे। इस विषय का नवीन अथवा प्राचीन शायद ही कोई ग्रन्थ आपके देखने से बचा हो। आपने आर्यसमाज में चालीस वर्ष से अनवरत अध्यापन का ही कार्य किया है। इस विषय में आपकी एकतानता और प्रवणता को स्वयं आर्यजगत् जानता है। आपके सैकड़ों शिष्य-प्रशिष्य विद्यमान हैं। आप १९०० से १९०५ तक गुरुकुल कांगड़ी के प्रथमाचार्य रहे फिर १९०७ से १९३२ तक महाविद्यालय के आचार्यपद को सुशोभित करते रहे। कुछ काल तक सब कार्यों से मुक्त होकर स्वप्रतिष्ठापित मुक्तिपीठ में विश्राम सौख्य को अनुभव करते रहे हैं। वैसे आप महाविद्यालय के कुलपति रहे। संवत् १९९० में आपका देहावसान हुआ। सामाजिक क्षेत्र में धर्म के धक्के आपको भी खाने पड़े हैं। इसलिये कि आपने समय की गति की ओर तनिक ध्यान नहीं दिया। इसीलिये समय भी आपको न सम्भाल सका। इस अंश को छोड़कर शेष सब अँशों में वे पूर्णगुरु सिद्ध हो चुके हैं।

आचार्य श्री सत्यव्रत सामश्रमी

आप भारतवर्ष के एकमात्र वैदिक साहित्य के व्यापक पण्डित थे। पाश्चात्य विद्वान् भी आपका आदर करते थे। वैदिक साहित्य सम्बन्धी शायद ही कोई महत्व का ग्रन्थ बचा हो जिस पर आपकी टिप्पणी न हुई हो। एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बेंगाल अथवा इम्पीरियल लायब्रेरी में जाकर वैदिक साहित्य सम्बन्धी ग्रन्थों को देखने से इस बात की पुष्टि हो सकती है। आपके दो आलोचनात्मक ग्रन्थ निरुक्तालोचन और ऐतरेयालोचन अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। आप एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बेंगाल व युनिवर्सिटी लेक्चरार थे। आपके पूर्वज विठूर जिला कानपुर के निवासी थे किन्तु बंगाल में जा बसे थे। श्री सामश्रमी जी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। सामवेदी होने से और सामवेद के विशेषज्ञ होने से आपका नाम सामश्रमी पड़ा था। आपके दो पुत्र हैं श्री हितव्रत चट्टोपाध्याय और शिवव्रत चट्टोपाध्याय। पोते का नाम है इन्द्रव्रत चट्टोपाध्याय। श्री हितव्रत जी सामगान में निपुण हैं। श्री शिवव्रत जी कलकत्ता आर्टस कॉलेज में प्रोफेसर भी हैं। आप सब कलकत्ते में शिमला घोषेस लेन नं० १९/१ के मकान में रहते हैं, आप एकवार गुरुकुल कांगड़ी के महोत्सव में भी पधारे थे। जब आप उत्तर भारत की यात्रा करके लौटे (यह है सन् १९०५ की बात) तब आपने हमसे कहा कि "स्वा० दयानन्द ने तो बड़ी भारी क्रान्ति कर दी है। चालीस वर्ष पूर्व जब हम जम्मू गये थे तब तो आर्यसमाज का इतना प्रचार, प्रसार तथा बल नहीं था"—

इसके अतिरिक्त :—

गुरुवर श्री पं० हरनामदत्त जी भाष्याचार्य

भी गरुओं के गुरु होने से हमारे गुरु रहे हैं। आप जगाधरी (अम्बाला) के निवासी थे। भारतवर्ष भर में आप ही एक महाभाष्य के पण्डित थे। महाभाष्य के बल पर ही सब शास्त्रों का बल रखते थे। आपके पुत्र पौत्र बीकानेर राज्य में रहते हैं। सुयोग्य ज्येष्ठ पुत्र का नाम है पं० देवीदत्त जी शास्त्री, आप बड़े विद्वान् हैं आपके पौत्र बीकानेर कॉलेज में प्रोफेसर हैं, श्री विद्याधर शास्त्री एम०ए०।

गुरुवर श्री पं० काशीनाथशास्त्री जी

आप भी गुरुओं के गुरु हैं। आप काशी के सबसे बड़े वयोवृद्ध माननीय पण्डित हैं। आपके जोड़ का शायद ही कोई षट्शास्त्री देखने को मिले। श्री स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी, श्री महात्मा मुन्शीराम जी और हमारे प्रयत्न से ही आप १६०२ में गुरुकुल कांगड़ी आये थे। आपने गुरुकुल कांगड़ी में १५ वर्ष तक अध्यापन का कार्य किया और तदनन्तर छह वर्ष तक महाविद्यालय में भी रहे। आपकी दर्शनशास्त्रों की अध्यापन शैली को देखकर कौन मुग्ध नहीं होगा। आप पस्तक को देखे बिना ही छोटे से छोटे ही क्या समस्त आकर ग्रन्थों को भी पढ़ाते रहते हैं। आपके दो विद्वान् पुत्र भी श्री पं० हरिनाथ जी शास्त्री व पं० रघुनाथ जी शास्त्री व्याकरणाचार्य काशी में ही अध्यापन कार्य करते हैं। श्री गुरूजी छाता जिला बलिया के निवासी हैं। आप काशी में पहले नगवा में रहते थे और मैथिलस्वामी की पाठशाला में पढ़ाते थे। वहीं से गुरुकुल कांगड़ी आये थे। कालिकागली में ब्रह्मविद्यालय में पढ़ाते रहे। काशी में ही आपका देहावसान हुआ। यही उनकी इच्छा थी।

हमने किनसे क्या सीखा

स्वा० दयानन्द— आस्तिकभाव।

महात्मा गान्धी— अहिंसात्मक सत्याग्रह।

लो० तिलक — राजनीति।

महात्मा मुन्शीराम—- सामाजिक कार्य-प्रणाली।

श्री पं० श्रीनिवासराव (पज्य पिता) —धैर्य।

श्रीमती कृष्णाबाई (माता)—सहनशीलता।

हमारे अंगरेजी के गुरु

दयानन्द हाई स्कूल में (मिडल तक)—मास्टर दुर्गाप्रसाद, मास्टर कर्मचन्द्र, मास्टर लब्बूराम, मास्टर जमनादास बी.ए. (जो पीछे मेहता जैमिनी बने, फिर स्वा० ज्ञानानन्द हुए। एक और मास्टर बनवारीलाल भी थे। मास्टर कर्मचन्द्र और मास्टर लब्बूराम फिर एल०एल०बी० होकर वकालत करने लगे थे।

यूनियन एकेडेमी में— अंगरेजी—श्री रजनीकान्त मुकर्जी एम० ए० (हेडमास्टर)
(एण्ट्रन्स तक)　इतिहास—श्री० बी० घोष बी० ए० ।
गणित—श्री बी० सेन बी० ए० ।
गणित—श्री कृपाराम बी० ए० ।

श्री मुकर्जी पीछे पंजाब ऑडिट ऑफिस में नौकर हुए । श्री घोष पंजाब युनिवर्सिटी में गये ।

श्री पं० नारायणसिद्ध जी

(विशेष परिचय)

आप नगर (भरतपुर) के निवासी थे। जब आचार्य पं० गंगादत्त जी काशी में पढ़ते थे तब ये भी वहाँ थे और भाष्याचार्य जी से आपने सम्पूर्ण भाष्य पढ़ा था। आप छह शास्त्र, नव्य व पुरातन न्याय, वेदान्त और उपनिषद् के प्रगाढ़ पण्डित थे। इनके भ्राता स्व० पं० चिरंजीलाल शर्मा हमारे सहाध्यायी रहे हैं। जब चिरंजीलाल का विवाह होने वाला था तब हम और पं० नन्दलाल व्यास (पं० मुरारीलाल शर्मा के परामर्श से) साढे तीन सौ रुपये लेकर नगर गये थे। आप कट्टर सनातनी पण्डित थे। गुजरानवाला में भी एक वर्ष रहे थे। आपका देहावसान नगर में ही हुआ। जब मैं और व्यास जी मिलने गये थे तो पहले आपने हमको पहिचाना ही नहीं। मैंने उसी समय व्यास जी से कहा कि इनकी मृत्यु समीप है, सो ऐसा ही हुआ। आपकी अध्यापन-शैली उत्तम हृदयाकर्षक थी। पुस्तक को हाथ में लिये बिना ही धारा प्रवाह से पढ़ाते थे। प्रतिदिन दशोपनिषद् का पाठ किया करते थे। अपनी पुस्तक किसी को नहीं देते थे, प्रायः कहा करते थे कि 'तुम नये युग के लड़के हो, तुम पुस्तकों की क़द्र क्या जानो, उनका पुस्तकालय अति विस्तृत था किन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात् पुस्तकें जिसके हाथ पड़ीं वह उठा ले गया—

उनके कई प्रिय श्लोकों का मुझे अब तक स्मरण है।

करोति योऽशेषजनातिरिक्तां
संभावनामर्थवतीं क्रियाभिः।
संसत्सु जाते पुरुषाधिकारे
न पूरणी तं समुपैति संख्या ॥
(किरात)

समय एव करोति बलाबलं
प्रणिगदन्त इवेति शरीरिणाम्।
शरदि हंसरवाः परुषीकृत—
स्वरमयूरमयूरमणीयताम् ॥
(माघ)

अनुप्रविश्य पश्यामि,
याबच्चर्मं च दारु च।
(पंचतन्त्र)

कहा करते थे कि आजकल के छात्र लाठी से दूध दूहना चाहते हैं अर्थात् गौ की लात खाये बिना ही थन के साथ लाठी का एक सिरा छुआ कर दूध निकालना चाहते हैं। सारांश यह कि गुरुशुश्रूषा नहीं करते। निम्नलिखित श्लोक भी उनका प्रिय श्लोक था—

"विद्यानवद्या, विदुषा न हेया
निरक्षरे वीक्ष्य, महाधनत्त्वम्।
....
कुलाङ्गना किं कुलटा भवन्ति॥

मुझे तीसरा चरण याद नहीं है किन्तु इसका अभिप्राय यह है कि वेश्या के पास धन आभूषण की प्रचुर मात्रा रहती है इसलिये क्या सती स्त्रियाँ अपने सतीत्त्व को छोड़कर कुलटा बन जाती हैं ? कदापि नहीं, कदापि नहीं। इसी प्रकार निरक्षर पुरुषों के पास धन-धान्य सामग्री देखकर विद्वान् पुरुष को अपनी विद्या का तिरस्कार नहीं करना चाहिये। विद्या को नहीं छोड़ बैठना चाहिये।

उपनिषदों में निम्नालिखित वाक्य उनके प्रिय थे और प्रसंग प्रसंग पर कहा करते थे—

'इह' चेदवेदीदथ सत्यमस्ति
न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः,
(केन)

'मृत्युधावति पंचमः'

आत्मा वारे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः
(बृहदारण्यक)

तरति शोक मात्मवित्

शतं ज्ञानिनामेको बली कंपयते
(छान्दोग्य)

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः,
न मेधया न बहुना श्रुतेन।

आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति
(बृहदारण्यक)

किरात के एक और श्लोक को बहुत कहा करते थे—

स पुमानर्थवज्जन्मा, यस्य नाम्नि पुरः स्थिते।
नान्यामङ्गुलिमभ्येति, संख्यायामुद्यतांगुलिः॥

इत्यादि—

आप पक्के अद्वैतवादी थे। आचार्य गंगादत्त जी व इनमें इस विषय पर बहुत वादविवाद रहा करता था। हमको तो सिद्ध जी का पक्ष ही प्रबल प्रतीत होता था। आचार्य गंगादत्त जी कभी २ वादसंवाद में 'शेषं' कोपेन 'पूरयेत्' से काम लिया करते थे।

श्रीसिद्ध जी के साथ एक ब्रह्मचारी रहता था। उसको आता जाता कुछ नहीं था—हाँ बहुश्रुत था। एक दिन उसने एक परस्मैपदी धातु के आत्मनेपदी रूप बना डाले। मैंने कहा यह क्या किया तब ब्रह्मचारी ने उत्तर दिया, 'फिर ये रूप बन कैसे गये'—इसका उत्तर मेरे पास क्या था सिवाय मुस्कराने के।

सिद्धजी बड़े विद्वान्, त्यागी ब्राह्मण थे। 'निष्कारण धर्म' समझ कर ही पढ़ाते रहे। हमारे आचार्य जी से अधिक व्यापक पण्डित थे। वैसे साहित्य में दोनों ही

शुष्को वृक्षस्तिष्ठत्यग्रे

थे इस कोटि के। आचार्यजी वज्र वैय्याकरण, और सिद्ध जी वज्र वेदान्ती थे। इनसे साहित्यिक ज्ञानविज्ञान की अपेक्षा करना समुचित भी नहीं था।

श्री भाष्याचार्य जी

श्री पं० हरनामदत्त जी भाष्याचार्य महाभाष्य के बल पर ही सब शास्त्रों का मर्म कह डालते थे। महाभाष्य के बल पर ही, किसी प्रकार का भी शास्त्रार्थ क्यों नहो, उसमें अड़ जाते थे। इन्हीं को देखकर महाभाष्य का यह वचन कि—

'प्रधानं च षडङ्गेषु व्याकरणं, प्रधाने च कृतो यत्नः फलवान् भवति'

सफल जान पड़ता था। एकवार आप एक मुकदमे में गये थे। वहाँ किसी इकरारनामे पर बहस थी। मुन्सिफ के कोर्ट में मामला था।

मुन्सिफ—महाराज आप इस इकरारनामे को जानते हैं।

भाष्याचार्य—इकरारनामे का अर्थ क्या है। इसमें लिखे शब्दों का नाम इक़रारनामा है, शब्दों के अर्थों का नाम इक़रारनामा है, अथवा काग़ज़ विशिष्ट जो कुछ लिखा है उसका नाम इकरारनामा है। यह पहले बतलाओ तो, तब उत्तर दूँगा।

मुन्सिफ बेचारा चकराया, उसको ऐसे पण्डित से कभी पाला नहीं पड़ा था। उसने कहा 'महाराज पता नहीं, अब आप जाइये, आपका काम हो गया'—भाष्याचार्य जी मुस्कराते हुये कोर्ट से बाहर निकल आये।

एकवार लाहोर चीफ कोर्ट के वकील भगत ईश्वरदास एम० ए० यहाँ आये थे। आप तो इनकी बातें सुनकर चकरा गये। जाते समय उन्होंने मुझसे कहा कि यदि ऐसे तगड़े पण्डित मिलने लगें तो फिर कल्याण है। भाष्याचार्य जी महाविद्यालय में दो वर्ष रहे, फिर ऋषिकुल में चले गये थे। जबतक यहाँ रहे बहुत प्रसन्न रहे। उनके पूजा पाठ में प्रतिदिन बहुत समय व्यय हो जाता था। एक अखण्ड घृतदीप बराबर जलता रहता था। कट्टर सनातन धर्मी थे किन्तु हम लोगों को पूछने पर पौराणिक-मत खण्डन की युक्तियाँ बतला दिया करते थे। एक जगह शास्त्रार्थ में (जब वे ऋषिकुल में थे) तब वे पौराणिक दल की ओर से आये थे। समाज की ओर से महाविद्यालय के पण्डित पहुँचे थे। शायद वह दाबकी लक्सर की बात है। अच्छा महाभारत का सादृश्य रहा। यह बात अच्छी रही कि आप अपना बड़ा पग्गड़ बाँधकर दूसरे प्लेटफार्म पर चुपचाप सुनते रहते थे, कभी मुस्करा पड़ते थे। शास्त्रार्थ के पश्चात् गुरूजी (भाष्याचार्य जी) व महाविद्यालय वाले एक ही गाड़ी से हरद्वार लौटे। भाष्याचार्य जी कहने लगे मुझे इस बात पर बड़ा आश्चर्य होता है कि ये आर्यसमाज के बेपढ़े-लिखे उपदेशक भी इतना कैसे बोल लेते हैं। हमने मुस्कराकर उत्तर दिया 'गुरूजी आर्यसमाज में यही चमत्कार है' उत्तर सुनकर बहुत हँसे।

भाष्याचार्य जी के सामने कोई अनर्गल वैसे ही कुछ कहने लगता तो वे—

'दश दाडिमानि, षडपूपाः, कुण्डमजाजिनं पललपिण्डाः' महाभाष्य के इस बचन को बोलकर उसकी खिल्ली उड़ाया करते थे। तात्पर्य यह कि जैसे इन शब्दों का परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं और मिलकर भी कोई अर्थ नहीं निकलता तद्वत् तुम्हारी बात निरर्थक है' इत्यादि —

कभी कभी

'निगदेनैव शब्यते'

इस वाक्य का भी प्रयोग किया करते थे।



आचार्य स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी

(विशेष परिचय)

आपकी जन्मभूमि बेलोन (राजघाट–नरौरा)। में है आपके पिता पं० हेमराज वैद्यक किया करते थे, इसीलिये वैद्यक आपकी पैतृक संपत्ति रही थी। और आप निपुण वैद्य भी थे। आपके ज्येष्ठ भ्राता

पं० कन्हैयालाल मन्दिर के पुजारी थे । बेलोन के हलके में आप पुजारी जी नाम से ही प्रसिद्ध थे । आप तेजस्वी ब्राह्मण थे । वहाँ के रईस ठाकुर जब जब पुजारी जी उनके घर पर जाते थे, बैठे बैठे ही 'पुजारी जी पालागे' कर दिया करते थे । इस अपमान को आपने अनुभव किया और कहीं से मनुस्मृति लेकर उसको पढ़ा । उसमें यह लिखा देखा कि ब्राह्मण का बालक चाहे पाँच वर्ष का क्यों न हो क्षत्रियादियों को चाहिये कि अभ्युत्थानादि से उसका सत्कार करें । फिर क्या था मनुस्मृति लेकर ठाकुर रईस के यहाँ पहुँचे और जब ठाकुर ने बैठे बैठे ही 'पालागे' की तब मनुस्मृति को उसके ऊपर फेंककर कहा कि या तो इस मनुस्मृति को झूठा साबित करो नहीं तो हम जब आवें खड़े होकर 'पालागे' किया करो । उस दिन से पुजारी जी की धाक सर्वत्र फैल गई । ठाकुर रईस भी आदरपूर्वक अभ्युथानादि विधि करने लगे । आचार्य जी की बाल्यावस्था में शिक्षा दीक्षा खुर्जे में हुई । वहाँ पण्डित किशोरीलाल ज्योतिषी से ज्योतिष का भी अध्ययन किया था और कुछ कमाने भी लग गये थे । खुर्जे में जब रहते थे तब एक सप्ताह में एकवार तो घर अवश्य आते थे । पुजारी जी बहुत नाराज़ रहते कि इस तरह शीघ्र शीघ्र क्यों आता है । उन्होंने खूब खबर ली । एक दिन आचार्य जी अपने भाई से बोले 'मुझे काशी भेज दो, वहीं पढ़ूँगा ।' पुजारी जी ने ज़रा चुभती सी बात कही 'क्यों नहीं वहाँ से तू ज़रूर महाभाष्य पढ़कर आयेगा' बस इतना सुनना था कि गंगादत्त जी उलटे पाँव वहाँ से लौट आये । मनमें ही सोचने लगे कि क्या करना चाहिये । आचार्य गंगादत्त जी बड़े क्रोधी जीव थे ! इनको 'रिस' बड़ी आती थी । इसलिये बेलोन में इनका नाम 'रिसीजी' (क्रोधी) पड़ा । दूसरे दिन बिना किसी से पूछे-गछे घर से चल पड़े । पास केवल दो पैसे थे । दो-चार दिन अलीगढ़, फिर मेंडू, फिर मथुरा पहुंचे । वहाँ श्री पं० उदयप्रकाश जी (स्वा० दयानन्द के सहाध्यायी) से अष्टाध्यायी पढ़ते रहे । गुरुपत्नी इन पर पुत्रवत् स्नेह करती थीं । डेढ़ वर्ष वहाँ बिताकर आप कानपुर पहुँचे । वहां से काशी आये । वहाँ सात वर्ष तक घोर परिश्रम करके आपने कौमुदी, मनोरमा, शेखर, न्याय, वेदान्त महाभाष्य आदि का अध्ययन किया । घरवालों को किसी तरह इनका पता चल गया और उन्होंने इनको बीच में कईवार बुलाया किन्तु आपने यही उत्तर भेजा कि 'महाभाष्य' अभी समाप्त नहीं हुआ । आपकी माता अत्यन्त दयावती, श्रद्धालु देवी थीं । मुझे बेलोन में उनके पास रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था । महाविद्यालय में आचार्य जी बहुत रुग्ण थे इसलिये इनकी माता यहाँ आकर कुछ काल रही थीं । आपने काशी में पं० हरनामदत्त जी भाष्याचार्य से संपूर्ण महाभाष्य पढ़ा । श्री गुरुवर काशीनाथ जी से अन्य ग्रन्थ पढ़े । श्री सीतारामशास्त्री द्रविड़ से न्याय पढ़ा । सात बर्ष पश्चात् घर लौटे । जब आचार्य जी घर से निकले थे तब अवस्था कोई १८ वर्ष की थी । विवाह तो पूर्व बाल्यावस्था में ही हुआ था । पर गृहसौख्य आपके भाग्य में नहीं था ।

आपका काशी में स्वा० दर्शनानन्द (पं० कृपाराम शर्मा) जी से बहुत परिचय हुआ । श्री पं० भीमसेन जी शर्मा मुख्याध्यापक महाविद्यालय काशी के ही आपके शिष्य हैं । पंजाब में प्रतिनिधि सभा ने एक वैदिक आश्रम खोला था । उसके लिये एक विद्वान् पण्डित की आवश्यकता थी । पं० कृपाराम जी की प्रेरणा व महात्मा मुन्शीराम जी के आग्रह से आप जालन्धर पहुँचे तब से मृत्युदिन

तक आप बराबर आर्यसमाज में निरीहभाव से अध्ययनाध्यापन के कार्य में संलग्न रहे हैं। आपने अपूर्व (शिक्षा प्रणाली में) कार्य किया और आपके ही प्रयत्न से आर्यसमाज में विद्वानों की संख्या बढ़ी इस बात को आर्यजगत् जानता है। आप अपने ढंग के एक ही थे। आप जब काशी से बेलोन लौटे तब आपका नाम 'ऋषि जी' हुआ और अपने इलाके में इसी नाम से प्रसिद्ध थे। बेलोन से एक और व्यक्ति घर से भाग गये थे । उनका नाम 'कल्याण' था। वे भी इसी तरह गये और जाकर इतने विद्वान हुये कि जगन्नाथ पुरी के शंकराचार्य बन गये। ऋषिकुल के (बड़े कुम्भ के अवसर पर) महोत्सव में हमने इन शंकराचार्य जो के दर्शन किये थे । इसी अवसर पर (तबसे घरसे निकले हुये) गंगादत्त जी व कल्याण जी मिले। इन्हीं शंकराचार्य के प्रधान शिष्य श्री सुब्रह्मण्य देवतीर्थ जी (पण्डितस्वामी नाम से प्रसिद्ध) से आचार्य जी ने (१६१८) संन्यास लिया। आचार्य जी जालन्धर वैदिक आश्रम में चार वर्ष, गुजरानवाला में दो वर्ष, कांगड़ी में पाँच वर्ष, महाविद्यालय ज्वालापुर में पच्चीस वर्ष रहे। आप कुछ काल निश्चिन्त होकर कनखल के पुल के पास अपने मुक्तिपीठ नामक आश्रम में रहे यही और कहते रहे कि —

'दिन तो हरीभजन के आयें'

मद्रास में पञ्चमों का अत्याचार का किस्सा उठा था तब आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब ने श्री शिवदयाल एम० ए० और आचार्य गंगादत्त जी को वहाँ भेजा था, तब आप दक्षिण की यात्रा कर आये थे। बड़ी पुरानी बात है।

श्री स्वा० जी (अब हम 'स्वा० जी' नाम से लिखेंगे) छात्रवत्सल गुरु थे। ऐसे गुरु इस क्रूर ज़माने में कहाँ देखने को मिलते हैं। स्वा० जी इस ज़माने को सत्ययुग का ज़माना समझते रहे और जिन जिन से उनका सम्बन्ध पड़ा उन उनसे सत्ययुग का सा व्यवहार करते रहे। यह नहीं समझ सके कि ज़माना किधर का किधर गया। यही कारण है कि वह कांगड़ी में समय की गति को न समझ सके। महाविद्यालय में पच्चीस वर्ष इसलिये बिता सके कि उनके सहयोगी शिष्य कृतज्ञता के भाव से, पुरानी प्रणाली से उनको निभा लेते रहे । आपका शिष्यमण्डल इतना बड़ा है कि कोई कहाँ तक गिनावे। आर्यसमाज में आकर आपने जिस निःस्वार्थ भाव से सेवा की उनका उल्लेख कोई किन शब्दों में करे। आपने अपने कर्त्तव्य को पूर्णरूप से निभाया। कांगड़ी छोड़ने के पश्चात, इनके पुराने मित्र स्वा० श्रद्धानन्द जी व ये कभी कभी मिलते रहा करते थे। अब कोई उन पुरानी बातों को सोचे कि किधर से आये, कहाँ मिलें, क्या हुआ, कैसे बिछड़े, फिर कैसे मिले तो एक सुखदुःख-मिश्रित विचार-माला प्रवृत्त होगी। बस इतना ही कहकर संतोष कर लेना अच्छा कि—

'हरी की इच्छा ऐसी ही थी ।'

पण्डितदर्शन

जीवन भर में जिन महापण्डितों के दर्शन हुये और जिनके साथ सत्संग का लाभ हुआ उनकी नामावली। —महामहोपाध्याय पं० शिवकुमारशास्त्री, म० म० गंगाधरशास्त्री, श्री सीतारामशास्त्री

द्रविड, श्री रामशास्त्री (गोपाल मन्दिर काशी) श्री हरिहरनाथशास्त्री उर्फ स्वा० मनीष्यानन्द जी, श्री म० म० राखालदास भट्टाचार्य, श्री म० म० अम्बादासशास्त्री, श्री म० म० रघुपतिशास्त्री (ग्वालियर), श्री म० म० जयदेवशस्त्री, श्री म० म० हरप्रसादशास्त्री (कलकत्ता) श्री म० म० सतीशचन्द्र विद्याभूषण (कलकत्ता) श्रीरावजी शास्त्री (ग्वालियर) श्री विद्यापति शास्त्री, श्री निशापतिशास्त्री (ग्वालियर), श्री विधुशेखर भट्टाचार्य (शान्तिनिकेतन) श्री गुरुवर सत्यव्रत सामश्रमी जी (कलकत्ता)—श्री काशीनाथशास्त्री (गुरूजी) बलिया, श्री हरनामदत्त जी भाष्याचार्य, (जगाधरी), श्री रमापतिमिश्र (बम्बई)—कांची व नदिया के अनेक वृद्ध पण्डितराज, लंका के धर्माभिरामैय्या के बौद्ध महन्त, श्री म० म० पं० गौरीशंकर हीराशंकर ओझा (अजमेर), श्री म० म० गिरधरशर्मा चतुर्वेदी, श्री म० म० मधुसूदन मिश्र (जयपुर) श्री म० म० दुर्गाप्रसाद (जयपुर) सम्राट् पण्डित (जयपुर) श्री म० म० शिवदत्तशास्त्री (प्रिन्सिपल ओरियण्टल कॉलेज लाहोर) इत्यादि।

देशाटन

हमारा नियम रहा है कि जब हम किसी कांग्रेस अधिवेशन में जाते हैं तब उधर के पसिद्ध २ तीर्थ व ऐतिहासिक स्थलों का दिग्दर्शन कर आते हैं। एक बार अवसर मिला तो काश्मीर की यात्रा कर आये थे। एक बार मेवाड़ के जयसमुद्र तक पहुँचे थे। गोहाटी कांग्रेस में गये थे तो उधर के आसाम के रम्य प्रदेश देख आये। कलकत्ता कांग्रेस गये तो जगन्नाथ जी तक हो आये। मद्रास कांग्रेस गये तब लंका गये और सत्रह दिन तक भ्रमण करके कोलम्बो, कैण्डी, न्यूवारा एलिया, पैरेडोनिया, आनुराधापुर आदि सभी प्रसिद्ध स्थलों को देख आये। एक बार फ्राण्टियर स्थित तक्षशिला को देख आये। एक बार समस्त गढ़वाल घूम आये। भारतवर्ष में अब कुछ देखना शेष है तो वह है ब्रह्मदेश—मित्रों ने कई बार बुलाया अभी तक न जा सके। भगवान् की इच्छा हुई तो यह भी यात्रा कभी पूरी होगी ही। एक बार ब्रह्मदेश जाने के लिये कलकत्ते तक पहुँचे पर साथी बीमार हो गये—कलकत्ते से लौटना पड़ा। विदेश यात्रा के कई अवसर मिले थे किन्तु इच्छा पूर्ण न हो सकी। जब साधन थे, इच्छा थी तब विघ्न उपस्थित हुये। अब तो साधन भी नहीं, इच्छा भी नहीं। अब तो—

प्रारब्धाय समर्पितं निजवपुः

यह बात हो रही है। उसने जो कुछ कराना है वह करना ही पड़ेगा। उसकी इच्छा में जो बात नहीं है वह सहस्र प्रयत्न करने पर भी नहीं हो सकेगी क्यों कि—

तादृशी जायते बुद्धिः
यादृशी भवितव्यता—

लोकमान्य तिलक के प्रिय वाक्य

स्थितिं नो रे दध्याः,
क्षणमपि मदान्धेक्षणसखे ।
गजश्रेणीनाथ,
त्वमिह जटिलायां वनभुवि ॥
असौ कुम्भि-भ्रान्त्या,
खर-नखर-विद्रावितमहा—
गुरुग्रावग्रामः,
स्वपिति गिरिगर्भे हरिपितिः
(भामिनिविलास)

वदन्तु कतिचिद्धठात,
खफछठेति वर्णच्छटान् ।
घटः पट इतीतरे,
रटन्तु वाक्पाटवात ॥
वयं बकुलमंजरी—
गलदलीनमाध्वीझरी—
धुरीणपदरीतिभिः,
भणितिभिः प्रमोदामहे ॥
(कस्यचित्)

सुखं वा यदि वा दुःखं,
प्रियं वा यदि वाऽप्रियं ।
प्राप्तं प्राप्तमुपासीत,
हृदयेनापराजिता ॥
(योगवासिष्ठ)

यदि समरमपास्य नास्ति मृत्योः,
भयमिति युक्तमितोऽन्यतः प्रयातुं ।
अथ मरणमवश्यमेव जन्तोः,
किमिति मुधा मलिनं यशः कुरुध्वे ॥
(वेणीसंहार)

एका केवलमेव साधन विधौ,
सेनाशतेभ्योऽधिका ।
नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा,
बुद्धिस्तु मागान्मम ॥
(मुद्राराक्षस)

नाभिषेको न संस्कारः
सिंहस्य क्रियते वने ।
विक्रमार्जितसत्त्वस्य
स्वयमेव मृगेन्द्रता ॥
(सुभाषित)

गुरोरप्यवलिप्तस्य
कार्याकार्यमजानतः ।
उत्पथप्रतिपन्नस्य,
परित्यागो विधीयते ॥
(महाभारत)

इसी का अन्य पाठान्तर इस प्रकार है—

उत्पथप्रतिपन्नस्य,
न्याय्यं भवति शासनम् ॥

राजा कालस्य कारणम्
(शान्तिपर्व)

ये यथा मां प्रपद्यन्ते,
ताँस्तथैव भजाम्यहम् ।
(गीता)

इस गीता श्लोक पर महात्मा गांधी व लोकमान्य तिलक में बड़ा वाद-विवाद हुआ था। तिलक कहते थे 'शठं प्रति शाठ्यं' और महात्मा कहते थे 'शठं प्रत्यपि सत्यं'—

लोकमान्य तिलक कहते रहे कि—

यस्मिन् यथा वर्त्तते यो मनुष्यः,
तस्मिँस्तथा वर्त्तितव्यं स धर्मः ।
(उद्योगपर्व)

लोकमान्य तिलक का मत था कि राजनीति में जैसा मौका पड़े वर्त्तना चाहिये। राजनीति कोई साधु-सन्तों का खेल नहीं है। यह भी कहा करते थे कि महात्मा गांधी ने अपना मरण अपने आप बतला दिया है। जहाँ ज़रा हिंसा हुई, जहाँ रक्त की दो बूंदें टपकीं कि आन्दोलन बंद। सरकार को ऐसा कराने में क्या देरी लगती है। महात्मा गांधी ने चौराचौरी काण्ड के कारण आन्दोलन स्थगित किया था किन्तु समय की गति के साथ अब महात्मा जी भी पक्के हो गये हैं। चाहे भारतवर्ष में कुछ भी हो अपने आन्दोलन से काम—पिछले कई सत्याग्रह संग्रामों में यही बात दिखलाई पड़ी।

सिंहावलोकन

प्रिय वाचकवृन्द, जहाँ तक सम्भव हुआ हमने स्थूल रूप से सब बातें लिख दी हैं। जितनी बातें आवश्यक समझीं लिख डाली हैं। जब हम छोटे थे तब जानते ही नहीं थे कि आर्यसमाज क्या बला है। जब कुछ कुछ समझ आई तब इसलिये समाज को मानते रहे कि पिता जी भी समाज को मानते हैं। जब स्वयं समाज की धारा में पड़े और प्रवाह के साथ बहने लगे तब समाज की प्रत्येक बात का, प्रत्येक दल की रीति-नीति का पता चला।—'आत्मकथा' को पढ़ कर वाचक स्वयं अनुमान लगा लेंगे कि भिन्न भिन्न अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण किस प्रकार एक मार्ग से दूसरे और तीसरे से चौथे मार्ग में जाना पड़ा।—हमको संतोष है कि अब हम आर्यसमाज की किसी दलबन्दी में नहीं हैं। सब समाज, सब दल अपने ही हैं। सबने यथाशक्ति आर्यसमाज का ही काम किया है और कर रहे हैं। यह तो मानना ही पड़ेगा कि दलबन्दियों के कारण आर्यसमाज की समष्टि शक्ति का बहुत कुछ दुरुपयोग हुआ है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यसमाज के संगठन में कोई त्रुटि है जिसके कारण शक्ति का सम्मिलित सदुपयोग नहीं हो रहा है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यसमाज के नियमोपनियमों में परिवर्त्तन की आवश्यकता है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि जब तक विद्यासभा, राजसभा, धर्मसभा इस नाम की तीन स्वतन्त्र सभाओं का निर्माण होकर कार्य नहीं किया जायगा, संसार भर के उपकार की बात दूर ही रहेगी। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यसमाज में मूर्खों के बहुमत ने नाश और अज्ञ और विज्ञों के मिश्रित मत के कारण सब काम अधूरे रह गये हैं। जब तक सभा में उस उस विषय में उस उस विषय के तज्ज्ञ पुरुषों के बहुमत द्वारा निर्णय होकर कार्य न होगा समाज की यथार्थ उन्नति नहीं होगी। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यसमाज जमानेसाज़ समाज बनता जा रहा है और धर्म की अपेक्षा धन को प्रधनता देरहा है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि समाज में रजोगुण की प्रधानता है और आध्यात्मिकता का प्रवेश अतिन्यून। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यसमाज ने तर्क-वितर्क द्वारा संसार के अन्य मत-मतान्तरवादियों का मुख तो बन्द कर दिया किन्तु संसार भर के हृदय को आकर्षित करने का साधन उसके पास नहीं है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यसमाज ने संसार भर को भोजन का निमन्त्रण तो दे दिया पर घर में आकर बैठने वालों के लिये न तो पर्याप्त स्थान है, न ही प्रयाप्त भोजन-सामग्री। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यों का

अधिक व्यय, संस्कृत-विद्या की अपेक्षा, अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा पर हो रहा है और आर्य लोग 'वेद-वेद' की दुन्दुभि तो बजाते रहते हैं किन्तु अपने बच्चों को देते—दिलाते हैं वही जमाने की तालीम,— प्राचीन प्रणाली की संस्थाओं में भी अब और ही प्रकार का वायु बह रहा है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यों के बच्चे आर्य नहीं बन रहे हैं। यह तो मानना ही पड़ेगा कि जिनकी आयु वानप्रस्थ व संन्यास के योग्य हो चुकी है वे भी संसार के मोह को नहीं छोड़ रहे हैं और आर्यसमाज का संन्यासी मण्डल भी सांसारिक पद-लोलुपता, लोकैषणा, वित्तैषणा से रहित नहीं है। आर्यसमाज में शिक्षित सुयोग्य नवयुवकों की अधिकता होने पर भी वे त्यागभाव से समाज के प्रचारक उपदेशक बनने के लिये आगे नहीं आ रहे हैं। यह तो मानना ही पड़ेगा कि आर्यमण्डल में आतिथ्य धर्म का नाश हो गया है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि गृहकलहों के कारण समझदार शान्तिप्रिय लोग आर्यसमाज से दूर रहने लगे हैं। यह भी मानना ही पड़ेगा कि आर्यसमाज से कृतज्ञता के परमाणु निकलते जा रहे हैं और शुष्क वैर और विवाद के परमाणु बढ़ते जा रहे हैं।

इन समस्त रोगों का उपाय हो इस बात को गंभीरतापूर्वक सोचने का अवसर आया है। आर्य समाज के नेता किसी तरह अपने समय को बिताने की चिन्ता में हैं किन्तु धैर्य को दोनों मुट्ठियों में पकड़कर विचार करने का साहस नहीं कर रहे हैं। यह 'जबतक निभे तबतक' की नीति विघातक है। समाज में तो साधारण रूप में —

"बहवो यत्र नेतारः,
सर्वे पण्डितमानिनः।
सर्वे महत्त्वमिच्छन्ति,
तद्वृन्दमवसीदति" —

यह और कहीं कहीं —

अनायका विनश्यन्ति,
नश्यन्ति बहुनायकाः।
स्त्रीनायका विनश्यन्ति,
नश्यन्ति बालनायकाः —

यह उक्ति सर्वांश में चरितार्थ हो रही है।

समाज के नेतृगण मेरी बात पर ध्यान देवें न देवें उनकी इच्छा। समाजसेवा की दृष्टि से कभी कभी अप्रिय होकर भी मैंने समय समय पर क्रान्तिकारक लेख लिखे हैं, और जनता हमारी बात को अब मानने लगी है, हमारे क्रान्तिकारी लेखों की सत्यता को अब अनुभव कर रही है समाज के ही उत्साही आर्यपुरुष कार्यकर्त्ता समाज में अयोग्य समझे जाते हैं किन्तु वे ही अन्यत्र कार्यक्षेत्र में अद्भुत कार्य कर डालते हैं इसी से स्पष्ट है कि आर्यसमाज का क्षेत्र संकुचित है और आर्यसमाज के संगठन में

घोर क्रान्ति की आवश्यकता है। नहीं तो वर्त्तमान भ्रान्ति बढ़ती ही जायगी। कहीं किसी दिन ॐ शान्तिः शान्तिः हो ही जायगी। समय ही बतलायेगा कि क्या होगा ?

वैसे तो स्वा० दयानन्द को अपूर्व सफलता मिली इस बात को कौन भुला सकता है। स्वा० दयानन्द तो अब जगद्गुरुओं की चित्रावली में आ गये हैं, इस बात को सब कोई जानता है। स्वा० दयानन्द अब आर्यसमाज की संपत्ति नहीं है। स्वा० दयानन्द का मिशन भी आर्यसमाज द्वारा नहीं अपितु अन्यों द्वारा सफल होता जाता है। ऐसे व्यक्तियों द्वारा सफल होता जारहा है जो स्वा०दयानन्द के मिशन को नहीं मान रहे हैं, जो उनको प्रबल "समाजसुधारक" से अधिक उच्च पद पर नहीं बैठा रहे हैं। अस्तु स्वा० दयानन्द का मिशन चाहे किन्हीं द्वारा सफल हो इसमें ईर्ष्या- द्वेष का काम नहीं है। इस समय संसार जिस वेग से जा रहा है यदि आर्यसमाज उसके आगे जाकर, खड़ा होकर रोकेगा तो संसार रुककर समाज की बातों को सुन भी लेगा, नहीं तो आर्यसमाज की बातों को सुनने के लिये संसार के पास न समय है न इच्छा—

आर्यसमाज में तप की अत्यधिक मात्रा रहेगी तो संसार उसकी बातों को सुनेगा। वेद, शास्त्र, उपनिषद्, आर्यधर्म, आर्यसंस्कृति का ठेकेदार आर्यसमाज अकेला थोड़े ही है। आर्यसमाज न कर सकेगा तो हिन्दुसमाज करेगा। आर्यसमाज के प्रवर्तक की यह कभी इच्छा नहीं थी कि आर्यसमाजी लोग हिन्दुओं से पृथक् होकर पृथक् मत बनायें। उनका यही अभिप्राय था कि आर्यों द्वारा हिन्दुओंमें और हिन्दुओं द्वारा समस्त संसार में आर्यसंस्कृति का उद्धार हो। सो मुझे तो यही बात स्पष्टरूप से दिखलाई दे रही है। कुछ भी हो हिन्दू बड़े उदार हैं,हिन्दूधर्म बड़ा उदार है। इसका घर इतना विस्तृत रहा है कि संसार भर के लोग इसमें बैठ सकते हैं। जब से भारतवर्ष में परचक्र का प्रवेश होने लगा तब से। ऊपर रक्षक रूप में कोई हिन्दूसाम्राज्य आर्यसाम्राज्य नहीं रहा था इसलिये हिन्दुओं ने कौर्मी वृत्ति का आश्रय लेकर दिन काटे। उसी वृत्ति में हिन्दू स्वस्वरूप व स्वधर्म को भूल बैठे। स्वा० दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना हिन्दुओं को स्वस्वरूप के बोध कराने के लिये,

तत्त्वमसि श्वेतकेतो,

कहकर स्वरूप बतलाने के लिए की थी। आर्यसमाज हिन्दूधर्म का रक्षक है। और 'खेत की काँटेवाली बाड़' के सदृश अभी खेत को सुरक्षित रखने के लिये उसकी (आर्यसमाज की) वर्षों तक आवश्यकता रहेगी। न्यायशास्त्र की परिभाषा में बोलना हो तो हम यह कह सकते हैं कि 'बीजप्ररोहसंरक्षणार्थ कण्टक शाखावरणवत्' आर्यसमाज की आवश्यकता रहेगी ही।

वेदों का प्रचार होगा, शास्त्रों का समुद्धार होगा, आर्यसंस्कृति का पुनरुद्धार होगा, भारतीय भव्य भवन का जीर्णोद्धार होगा। पुरातत्त्व का पूरा पूरा अनुसंधान होगा। राष्ट्रनिर्माण भी होगा, स्वराज्य, अधिराज्य, महाराज्य की झाँकियाँ भी देखने को मिलेंगी किन्तु कब, किसके द्वारा, किसरूप में, काल ही बतलायेगा ? क्योंकि —

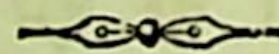
'प्रभुरत्रकालः'

हम पर आर्यसमाज का, स्वा० दयानन्द का उपकार है कि समाज के बनने में हमारा घरबार तो सर्वस्व बिगड़ गया किन्तु हम मनुष्य बने, आस्तिक बने, नास्तिक बनने से बचे, हमने भी कृतज्ञतापर्वक जीवनभर आर्यसमाज के प्रत्येक विभाग में प्राणपण से कार्य किया। हमारी अल्प स्वल्प सेवा से जनता व परमात्मा प्रसन्न है ऐसा हमारी मनोदेवता कह रही है। हमारा अन्तरात्मा भी इसकी पुष्टि कर रहा है। मार्ग-संक्रमण करते हुये हमसे जो भूलें हुई, ज्ञानपूर्वक अथवा अज्ञानपूर्वक, हम उनका प्रायश्चित्त कर चुके हैं, कर रहे हैं और करेंगे। बस जैसे हैं आपके सामने हैं।

क्रूरा कृतोञ्जलिरयं,
बलिरेष दत्तः।
कायो मया, प्रहरतात्र,
यथाभिलाषम् ॥
अभ्यर्थये वितथवाङ्मय–
पांशुवर्षैः।
मा माऽऽविलीकुरुत,
कीर्त्तिनदीः परेषाम् ॥

वाचस्पति मिश्र के इस उपर्युक्त सुन्दर वचन को उद्धृत करके मैं इस आत्मकथा, अथवा आत्मगाथा के इस अँश को समाप्त करता हूँ। यह 'आत्मकथा' जिनके भी हाथों में पड़े आशा करता हूँ, वे उसका आदर ही करेंगे। यह 'कथा' अब हमारे हाथ से पृथक् होती जा रही है। शिवास्ते पन्थानः सन्तु। ॐ

—नरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ



आत्मकथा

द्वितीय भाग

कारावास

तुम लिखते ही क्यों हो ?

हमारी भी यही दशा है

Why do I write. For whom do I write. I cannot seperate these two questions. Allow me to answer together, simultaneously.

मैं क्यों लिखा करता हूँ और किन के लिए लिखा करता हूं—इन दो प्रश्नों को मैं पृथक् नहीं कर सकता, इसलिए एक साथ इन दो प्रश्नों का उत्तर देने की अनुज्ञा दीजिये—

Why do I Write ?

मैं क्यों लिखता हूँ ?

Because I cannot do otherwise. Because even if I did not write on paper I should be writing in my mind, in my thonghts, so as to get them clear. Because for me writing is the highest mode of thinking and of acting. Because to write is, for me to breathe and live.

मैं क्यों लिखता हूँ ? इसलिए कि—

- ❀ (१) मैं लिखे बिना रह नहीं सकता।
- ❀ (२) यदि मैं कागज पर न लिखूं तो भी मन में लिखता रहूँगा, विचारों में लिखता रहूँगा जिससे विचार स्पष्ट हो जाँय।
- ❀ (३) मेरे लिये लिखना सोचने विचारने एवं क्रियाशील होने का उत्तम साधन है।
- ❀ (४) मेरे लिये लिखना ऐसा ही है जैसे साँस लेना और जीवित रहना।

रोमाँ रोलाँ 'Epilogue'

जेल-जीवन

कैसे कैसे हुआ, संक्षेप में

१६२१—क्रिमिनल लॉ अमेण्डमेण्ट एक्ट में एक वर्ष का कठोर कारावास और २००) रु० जुर्माना, दण्ड न देने पर तीन मास का और कठोर कारावास। देहरादून, मुरादाबाद, बरेली, लखनऊ और रायबरेली जेल में रहे। रायबरेली से भी प्रयाग को भेजने का आर्डर आ गया था, पर न जाने क्यों नहीं भेजा गया।

१६३०—नमक सत्याग्रह में ६ मास की सादी कैद हुई, देहरादून तथा फैजाबाद जेल में रहे। परेड में लाइन लगा कर नहीं खड़े हुए इसलिये 'बी' से 'सी' क्लास में किये गये। ५०) रु० दण्ड भी था, उसके बदले में १ मास की सादी क़ैद भुगतनी पड़ी।

१६३२—मैं और मास्टर रामस्वरूप दोनों धारा १०६ में भेजे जाने वाले थे पर न जाने क्यों धारा नहीं लगी।

१६३२—में डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट एक्ट ने देहरादून से निकल जाने का हुक्म दिया था मैं ज्वालापुर चला गया था फिर आकर धर्मपुर की भट्टी पर पिकेटिङ्ग किया।

१६३२—धर्मपुर की भट्टी पर पिकेटिङ्ग के कारण छह मास की सख्त क़ैद हुई। देहरादून जेल में ही रहे। ५०) रु० जुर्माना भी रहा। कभी बान बटा, कभी बाग का काम करते रहे।

१६४०-१६४१—ऋषिकेश में व्यक्तिगत सत्याग्रह में एक वर्ष की सादी क़ैद हुई। अधिक समय बरेली जेल में कटा। एक वर्ष की क़ैद रही।

१६४२-१६४३—'अंग्रेजो, भारत छोड़ो' आन्दोलन में। इसकी कोई अवधि ही नहीं थी। अधिकतर आगरा सेण्ट्रल जेल में रहे। भारत रक्षा कानून का वार था।

उड़ जा पंछी, उड़ जा आज !

उड़ जा पंछी, उड़ जा आज।
एक पींजरे से तू निकला,
किन्तु दूसरे में है बन्द।
यहाँ पवन के झोंके कैसे,
कैसा सुख स्वच्छन्द ॥
॥ उड़ जा ॥

उड़ जा पंछी आज गगन में,
तोड़ बन्धनों की कारा।
जाना है तो जीवित रह तू,
कहता है अधिकार हमारा ॥
॥ उड़ जा ॥

इस बन्धन में क्या है पंछी,
जी-जीकर मरते जाना।
बन्धन तोड़ राह ले अपनी,
नभ में गा अपना गाना ॥
॥ उड़ जा ॥

हमारा राजनैतिक जीवन

राजकारण में पड़ने के पश्चात शायद ही भारतवर्ष का कोई नेता रहा होगा जिससे पूर्ण परिचय न हुआ हो। दस वर्ष १६२० से १६३० तक ऑल इंडिएया कांग्रेस कमेटी के सदस्य रहने के कारण राजनैतिक क्षेत्र में प्रतिदिन अनुभव में आने वाली भिन्न भिन्न कार्यप्रणाली का खूब परिचय मिला। वैसे तो किशोरावस्था से ही हमारे राजनैतिक विचार हैं किन्तु १६१५ से हम प्रकटरूप में कांग्रेस में आये। लखनऊ कांग्रेस से लेकर अब तक समस्त कांग्रेसों में भाग लिया। वैसे हमारा केन्द्र मेरठ डिविजन व गढ़वाल रहा। देहरादून को गढ़वाल में ही समझिये पहले वह गढ़वाल का प्रधान द्वार था ही। देहरादून में १६२० में जिला कानफ्रेन्स हुई थी। हम ही स्वागताध्यक्ष थे। श्री पं० जवाहरलाल जी थे कानफ्रेंस के सभापति। श्री लाला लाजपतराय, श्री स्टोक्स (काठगढ़-शिमला), श्री बैरिस्टर आसफअली (देहली) श्री पं० नेकीराम जी शर्मा (भिवानी), श्री डॉक्टर किचलू, श्री भारती-कृष्ण तीर्थ (वर्त्तमान शंकराचार्य गोवर्द्धन मठ पुरी) आदि पधारे थे। इस कानफ्रेंस से हिमालय का यह प्रदेश हिल गया, बड़ी चहल-पहल रही। १६२१ से १६२३ तक कारावास में रहे। देहरादून, मुरादाबाद, बरेली, लखनऊ, रायबरेली इन पांच जेलों में रहना पड़ा। पूरे ४५५ दिन काट कर हम बाहर आये—फिर कांग्रेस का कार्य तो होता रहा, किन्तु १६३० में फिर द्वितीय सत्याग्रह आन्दोलन चला—प्रथम डिक्टेटर के नाते हम को छः मास का दण्ड मिला और एक मास देहरादून व शेष मास फैजाबाद जेल में कटे। प्रथम सत्याग्रह-संग्राम में केवल ६ व्यक्ति जेल गये थे। हमारे साथियों में चौ० हुलास वर्मा डांडा लखौंड के पं० ब्रजलाल फरासी और जाखन के ठाकुर मान सिंह के नाम उल्लेख योग्य हैं। दूसरे सत्याग्रह संग्राम में श्री महावीर त्यागी, पं० नारायणदत्त डंगवाल (कौलागढ़) चौ० हुलास वर्मा, चौधरी विहारीलाल, स्वा० विचारानन्द और हम एक साथ पकड़े गये, सबको एकसा ही दण्ड अर्थात् छः मास मिले, और सबको बी क्लास मिली। पर सबने बी क्लास लेने से इन्कार किया—विस्तृत वृतान्त गढ़वाल देहरादून नामक पुस्तक में छाप दिया है। प्रथम सत्याग्रह—संग्राम का वृत्तान्त धकापेल उर्फ कारावास की राम कहानी नामक पुस्तक मेंसुन्दर रीति से दिया गया है। पहलीवार हम सेकण्ड क्लास, फिर फर्स्ट क्लास व अन्त में मैजिस्ट्रेट हरचनरोडर की इच्छानुसार सी में अर्थात् थर्ड क्लास में रक्खे गये थे। पर यू० पी० के गवर्नर श्री बटलरने हमारी सख्त क़ैद को 'सहज' कर दिया था इसलिये इतनी दिक्कत नहीं हुई। खूब पढ़ते—लिखते रहे। 'गीताविमर्श' वहीं रायबरेली जेल में लिखा गया। १६३२ में तृतीय सत्याग्रह-संग्राम छिड़ा। इसमें भी धर्मपुर की शराब की दुकान पर पिकेटिंग करने के कारण हमको व हमारे मित्र श्रीरावत घनश्याम सिंह जी (मेम्बर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड देहरादून को छः मास की सख्त सजा हुई। इस सजा के अतिरिक्त मुझे पर ५०) रु०

व रावत घनश्यामसिंह जी पर २५०) रु० जुर्माना हुआ। यह सजा देहरादून जेल में ही कटी। "बी" क्लास आई पर बहुत देर में इसीलिये फैजाबाद बी क्लास जेल में नहीं भेजे गये। ता० १६ नवम्बर १६३२ को हम देहरादून जेल से छूटे। विशेष विवरण अन्यत्र है। इस प्रकार हम तीनों सत्याग्रह में सम्मिलित हुये और प्रथम संग्राम में नौ, द्वितीय संग्राम में लगभग दो सौ, तृतीय संग्राम में ६०-७० सत्याग्रही जेल गये।

महाविद्यालय-ज्वालापुर सहारनपुर जिले में है। यह हमारा प्रधान केन्द्र रहा है इस लिये महाविद्यालय की हितदृष्टि से हमने इस जिले में सौम्यरूप से ही कार्य किया। १६३० के सत्याग्रह संग्राम में महाविद्यालय ज्वालापुर के अध्यापकों और ब्रह्मचारियों ने यहां के स्नातकों के साथ मिलकर बहुत कार्य किया। दो-सौ ग्रामों में कांग्रेस का प्रचार किया और कई कानफ्रेन्सें कराईं। राजनैतिक क्षेत्र में प्रवेश करने के पश्चात् महाविद्यालय तो हमारा विश्रान्ति-स्थान बन गया। जब इधर-उधर थके कि पहुँचे महाविद्यालय में और विश्राम लिया कि चलते बने। महाविद्यालय में जब हम रहते हैं तब अधिकतर लिखने का काम करते रहते हैं। दो शब्दों में कहना हो तो महाविद्यालय हमारा धर्मक्षेत्र व देहरादून-गढ़वाल कुरुक्षेत्र है। १६२१ में जब हम को जेल हुई तब कारावास के दिनों में हमने निम्नलिखित पुस्तकों का अध्ययन किया जिससे कारावास सुदीर्घ काल तक सानन्द कट सका—गीताविमर्श और धकापेल ये दो ग्रन्थ भी लिखे, ऋग्वेदालोचन के लिये सामग्री भी एकत्रित की।

ऋग्वेद, राजतरङ्गिणी भाग १-२, सुभाषितावली, गीतारहस्य, ज्ञानेश्वरी, दासबोध, महाभारत सम्पूर्ण षड्दर्शन-संग्रह, षड्दर्शन मूल, योगभाष्य, कवीन्द्र रवीन्द्र की गीताञ्जलि तथा अन्य ग्रन्थ श्री शंकरन् नायर रचित 'गांधी एण्ड अंनर्की' हिस्टरी, ऑफ दी फिलॉसफी, दशोपनिषद्।

१६३० की जेल में निम्नलिखत ग्रन्थों का पर्यालोचन हुआ।

महाभारत, स्वा० विवेकानन्द जी के ग्रन्थ, महाभारतसार-संग्रह, राजतरङ्गिणी भाग १-२ षड्दर्शन, उपनिषत्संग्रह।

इन छः मासों में हमने राजतरङ्गिणी के आधार पर बहुत कुछ लिखा, किन्तु देश की परिस्थिति को देख कर उसको छपवाना उचित नहीं समझा। "देहरादून गढ़वाल का राजनैतिक इतिहास" लिखा जो प्रकाशित हो चुका है।

इस बार हम दो ही जेलों में रहे—एक देहरादून जेल व दूसरी फैजाबाद। १६३२ की जेल में निम्नलिखित पुस्तकों का अध्ययन किया।

महाभारत वनविराट-उद्योग पर्व, ज्ञानेश्वर (मरहटी), गीता (अनेक भाष्य) वेदान्ते चतुःसूत्री (शंकर, रामानुज मध्व और वल्लभ भाष्य) बोधसारादि अन्य अनेक वेदान्त ग्रन्थ, लोकमान्य तिलक का लेखसंग्रह, श्रीदत्तरहस्य, (दत्तसम्प्रदाय के ग्रन्थ), क्वेकर-साहित्य देहरादून जेल में नैनी सेण्ट्रल जेल

से जॉर्ज ड्यूक नामक एक चोर युरोपियन बदल कर आगया था, उसके पास इस विषय के बहुत ग्रन्थ थे उससे लेकर पढ़े। जैसे हिन्दुओं में आर्यसामाजिक लोग तर्कप्रधान लोग हैं इसी प्रकार ईसाइयों में एक फ़िरका है जो ईसाइयों के प्रत्येक सिद्धान्त का अर्थ व विवेचना तर्कदृष्टि से ही करते है। ये लोग क्वेकर नाम से प्रसिद्ध हैं, इन्होंने कट्टर ईसाइयों द्वारा किये गये बहुत अत्याचार सहे और अब वहीं इनकी संख्या अधिक है। श्री थामस पेन नामक एक प्रसिद्ध उग्र लेखक ने 'एज ऑफ रीज़न' (Age of reason) नामक ग्रन्थ में अमरीका में लिखा जिसमें बहुत हलचल मच गई थी]।

Religion is realization, not talk nor doctrine, nor theories however beneficial they may be. This is being & becoming and not hearing and acknowledging.

"धर्म अनुभव करने की वस्तु है, बोलने बतलाने किन्हीं नियमों, सिद्धान्तों के घड़ने की वस्तु नहीं है, चाहे वह कितनी ही लाभदायक क्यों न हो। वह तो आचरण में लाकर ठीक वैसे ही बनने की वस्तु है।" यह वाक्य मुझे इतना स्फूर्त्ति देने वाला हुआ कि इसको मैंने तत्काल लिख लिया और कण्ठ कर लिया। मैं जब पंजाब में पढ़ता था तब गर्मियों की छुट्टियों में भागसू (धर्मशाला) (ज़िला कांगड़ा) गया था। उन दिनों में स्वा० विवेकानन्द जी वहीं ठहरे हुये थे। मैं भी उन्हीं के पास एक मास तक ठहरा। उनके सहवास से मुझे बहुत लाभ हुआ। लाहोर में भी मैंने आपके कई भाषण सुने। आपकी वक्तृत्त्व-शक्ति अद्भुत थी। आप जब बोलने के लिये खड़े होते थे तों पचास पचास सहस्र समुदाय को मन्त्र-मुग्ध कर देते थे। लाहोर में राजा ध्यानसिंह की हवेली में आपका एक व्याख्यान हुआ था। उस सभा को मैं कभी नहीं भूल सकता। वह अपूर्व जनसमुदाय, वह अपूर्व व्याख्यान भूलने भुलाने की वस्तु नहीं है। मैं कलकत्ते में जबतक रहा, दक्षिणेश्वर (श्री रामकृष्ण परमहंस का समाधिस्थान) बराबर जाता रहता था। श्री रामकृष्ण परमहंस स्वामी विवेकानन्द के गुरु थे। भारतवर्ष में रामकृष्ण मिशन ने सेवा भाव की सुन्दर प्रथा प्रचलित की है। इस मिशन का प्रधान केन्द्र बेलूर है। बेलूर कलकत्ते के समीप है। रामकृष्ण मिशन की शाखायें प्रायः भारत के सभी केन्द्रों में हैं। इस मिशन में बड़े बड़े विद्वान् हैं जो सेवाभाव से मिशन में आते हैं और निरीह भाव से सेवा कार्य में लगे रहते हैं।

सेवाधर्मः परमगहनो—
योगिनामप्यगम्यः।

एकान्त में जाकर योग-साधना इतना कठिन कार्य नहीं है जितना कि जनता में रहकर निरीह भाव से सेवा करने का कार्य। भर्तृहरि कहते हैं कि योगिराज भी ईश्वर तक का साक्षात्कार कर लेते हैं किन्तु सेवाभाव के गहन तत्त्व को वे भी नहीं समझ सकेंगे। हम इन जनतात्मा के सेवकों को सहस्रशः प्रणाम करते हैं। जो लोग परमात्मा की सेवा करना चाहते हैं किन्तु असफल होकर यह कहने लगते हैं कि —

मनः सेवाकार्ये,
हरिचरणयोर्नैव रमते —

अर्थात् क्या करें जी नहीं लगता, कुछ समझ नहीं पड़ता उनको उचित है कि वे जनतात्मा की सेवा करें। जनतात्मा में भी परमात्मा है और उसकी सेवा से वह भी प्रसन्न होगा। निवृत्तिपथ में जाने का जो फल है वही फल कर्म योग के सिद्धान्तों पर आरूढ़ रहने से प्रवृत्ति-पथ में भी मिलता है। जिसको I ractical Vedant कहते हैं उस की कुछ शिक्षा हमको स्वा० विवेकानन्द जी से ही मिली। इस विषय को यहीं छोड़कर यह बतलाना चाहते हैं कि हमारे मन में राजनैतिक विचारों का बीजारोपण कैसे और कब हुआ और फिर अंकुर कैसे बढ़ा और शाखा-प्रशाखाएँ कैसे फूटीं। पूने में (१६६४) जब मैं नूतन मराठी विद्यालय नामक स्कूल में पढ़ता था तब वह स्कूल जिस विशाल मकान में था उसी के एक भाग में आर्यभूषण प्रेस भी था जिसमें कि केशरी छपता था। केशरी का कार्यालय बाहर बड़े दरवाजे पर था। केसरी मंगलवार के दिन प्रकाशित होता था। सोमवार के दिन प्रायः कई घण्टे और मंगलवार को प्रातः लोकमान्य तिलक इस कार्यालय में आकर बैठते थे और लिखते थे कई आदमी बैठकर लिखते थे। सम्भवतः ये लोकमान्य सहकारी थे। प्रथम बीजारोपण लोकमान्य तिलक के इन दर्शनों से हुआ। लोकमान्य हमारे पिताजी के मित्र थे इसलिये पिताजी ने हमको आज्ञा दे रक्खी थी कि जब कोई दिक्कत हुआ करे तब तिलक महाराज से कह दिया करो। इसी आज्ञानुसार कभी सात दिन में कभी दस दिन में कभी पन्द्रह दिन में हमारे ज्येष्ठ भ्राता नारायणराव लोकमान्य के पास जाते रहते थे और सब समाचार कह आते थे। हमारे बड़े भाई नारायणराव व भीमराव न्यू इंगलिश स्कूल (फर्ग्यूसन कॉलेज की शाखा जिसको तिलक गुरू विषड शास्त्री चिपलून करने संस्थापित किया था और जिसको तिलक, आगरकर, नाम जोशी, धारप और पाटणकर इन पाँच मूर्त्तियों ने चलाया था) में पढ़ते थे। मैं भी नारायणराव जी के साथ लोकमान्य तिलक के घर पर जाता रहता था जब हम पूने में रहते थे तब नैशनल कांग्रेस का एक महाधिवेशन भी हुआ था। उसके संस्कार अब तक विद्यमान हैं। बच्चे थे पौलिटिक्स को क्या समझ सकते थे। किन्तु लोकमान्य तिलक, श्री गोपालकृष्ण गोखले, श्री प्रिन्सिपल आगरकर, प्रिन्सिपल आपटे, श्री प्रिन्सिपल गोले, श्री परांजपे, महात्मा महादेव रानडे इत्यादि की कार्यक्षेत्र की पवित्र भूमि में रहकर इन दर्शनों का कुछ तो प्रभाव मन में पड़ना ही था मैं कह ही चुका हूँ कि मैं नूतन मराठी विद्यालय में पढ़ता था। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध कादम्बरीकार हरिनारायण आपटे (संस्थापक आनन्दाश्रम संस्था) हमारे हेडमास्टर थे। मरहटी सेक्सन के मुख्याध्यापक थे श्री सिनकर पूने में दो दल थे समाज सुधारक व कट्टरपन्थी। हमारे स्कूल के प्रायः सभी अध्यापक व संचालक समाजसुधारक दल के थे। लोकमान्य तिलक कट्टरपन्थियों के अगुवा समझे जाते थे। उन सब परिस्थितियों का हमारे मन पर बहुत प्रभाव पड़ा। लातूर (हैदराबाद दक्षिण) में लोकमान्य तिलक व उनके एक साझी की जिनिंग फैक्टरी थी। जब लोकमान्य लातूर आते थे तब धाराशिव (उस्मानाबाद) जहाँ हमारे पिता जी नौकर थे पिताजी से मिलने आते थे व हमारे यहाँ ही ठहरते थे। इस प्रकार बीजारोपण हुआ और अन्त में लोकमान्य ही मेरे राजनीति के गुरु बने। पूना छूटने के पश्चात् लखनऊ काँग्रेस में ही लोकमान्य के दर्शन हुये। तब पिताजी का स्वर्गवास हो गया था। लोकमान्य ताज़े ही मांडले से आये थे। जब मैं मिला तभी पहले पिताजी का क्षेम पूछा। जब उनकी निधन वार्त्ता सुनी तब उनको बहुत दुःख हुआ। मैं भूलता हूँ सन् १६०५ में लोकमान्य तिलक कलकत्ते में आये थे।

शिवाजी महोत्सव के निमित्त आये थे। कलकत्ते में उनके बाईस व्याख्यान हुये थे। डा० मूंजे और खापर्डे उनके साथ थे। तब भी कई बार मिलने का सौभाग्य हुआ। अमृतसर (१६१६) कांग्रेस में भी दर्शन हुये—इस प्रकार मेरा राजनैतिक गुरु बाल्यावस्था से लेकर बराबर मुझे मिलता व शिक्षा देता रहा। कभी-कभी पत्रव्यवहार द्वारा भी बातचीत होती रहती थी। महाविद्यालय से अवकाश ग्रहण कर मैं जब देहरादून जिले में पहुँचा (१६१५) तब वही बीज अंकुरित होकर प्रस्फुटित हुआ। १६१६ में शाखायें फूटने लगीं और १६२० में देहरा जिला कानफ्रेन्स के कारण प्रशाखाओं का भी विस्तार हुआ। दस वर्ष तक ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के मेम्बर रहने और १६२१, १६३० और १६३२ में सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेने के कारण समस्त भारतवर्ष ही मेरा विशाल गृह बन गया। और अब मानसिक भावना यह है कि राजनैतिक क्षेत्र को छोड़कर किसी अन्य क्षेत्र में कार्य करने को जी नहीं चाहता–यदि मनुष्य छोटे२ क्षेत्रों में आस्थापूर्वक कार्य करता रहे और मन में उच्चभावना रक्खे तो समय समय पर उसको ऐसे विस्तृत क्षेत्र मिलेंगे जिससे उसके संकुचित भाव नष्ट होकर वह व्यापक दृष्टि से व्यापक क्षेत्र में कार्य करने योग्य हो जायगा। दक्षिणापथ का एक बालक उत्तराखण्ड में आकर यथाशक्ति सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक, साहित्यिक व राजनैतिक क्षेत्रों में कार्य कर सका यह उस भगवती भवितव्यता के ही खेल हैं।

राजनैतिक जीवन में पंचतन्त्रोक्त निम्नलिखित वचन का पदे पदे अनुभव मिलता गया।

"नरपतिहितकर्त्ता द्वेष्यतां याति लोके।
जनपदहितकर्त्ता त्यज्यते पार्थिवेन्द्रैः॥
इति महति विरोधे वर्त्तमाने समाने।
नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्त्ता॥

यदि राजा का हित साधते हैं तो जनता द्वेष करने लगती है। यदि जनता का साथ देते हैं तो राजा अथवा शासकवर्ग विगड़ बैठता है। इस प्रकार बड़े किन्तु समान विरोध के रहते ऐसा कार्यकर्त्ता अथवा नेता कठिनता से ही देखने को मिलेगा जो दोनों कार्य साधकर दोनों को सन्तुष्ट कर रख सकते हों।

श्री महामना गोपालकृष्ण गोखले इस टाइप के नेता थे। इनके गुरू महात्मा महादेव गोविन्द रानडे इसी नमूने के नेता थे। लोकमान्य तिलक केवल प्रजापक्षीय थे और सोलह आने जनता का कार्य साधने वाले थे। श्री सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी व श्री विपिनचन्द्रपाल दोनों कट्टर प्रजापक्ष के थे। श्री सुरेन्द्रनाथ जी की अन्तिम अवस्था में वह दशा नहीं थी। विपिनपाल जी की भी अब वह बात नहीं है। महामना मालवीय जी अपने नमूने के एक ही नेता हैं। महात्मा गांधी की नीति वाशिष्ठ नीति है। श्री० सी० आर० दास लोकमान्य के अनुयायी थे। लाला लाजपतराय कहा करते थे कि राजनैतिक क्षेत्र में एक ही चाल चलना भूल है। शतरंज की चाल की तरह कभी आगे पीछे होना ही पड़ता है।

जब से राजनैतिक क्षेत्र में पड़े तब से "वेश्याङ्गनेव नृपनीतिरनेकरूपा" इसका भी अनुभव मिला। यह भी अनुभव मिला कि वर्त्तमान नौकरशाही भारतवासियों की अभिकांक्षाओं को पूरा करने में—

आशां कालवतीं कुर्यात ।
तां विघ्नेन नियोजयेत् ॥
विघ्नं निमित्ततो ब्रूयात् ।
निमित्तं चापि हेतुमत् ॥

अर्थात् आशा को दिलाकर किसी न किसी बहाने से उसको लम्बी डाल देना चाहिये, उसको पूरा नहीं करना चाहिये अथवा पूरी नहीं होने देना चाहिये। यह भी स्पष्ट अनुभव में आ रहा है कि शासक-वर्ग निम्नलिखित श्लोक में वर्णित नीति पर चल रहा है और पूर्ण स्वराज्य की मांग टाल रहा है।

सुपुष्पितः स्यादफलः ।
सफलः स्याद्दुरारुहः ॥
अपक्वः पक्वसंकाश ।
न तु शीर्येत कर्हिचित् ॥

वृक्ष को चाहिये कि फूले नहीं, फूले तो फले नहीं, फले तो थोड़ा फले और वे फल भी इतने ऊँचे लगें कि लेने वाले के हाथ में लगे ही नहीं, लगें तो थोड़े लगें, वह भी कच्चे फल हाथ लगें। फल पहले तो पके ही नहीं, न पके हुये भी देखने वाले को पके से लगें। यदि कोई फल पक भी गया तो जहाँ तक संभव हो टपके नहीं।

नौकरशाही दमननीति में जिस प्रकार काम ले रही है, उसको देखकर महाभारत का एक श्लोक याद आता है।

प्रहरिष्यन प्रियं ब्रूयात् ।
प्रहरन्नपि च प्रियं ॥
प्रहृत्य च प्रियं ब्रूयात् ।
अपि शोचेत रुदेत च ॥

किसी पर प्रहार करने से पूर्व मीठा बोलना चाहिये। प्रहार करते हुये भी मीठा ही बोलना चाहिये। उसकी अच्छी तरह मरम्मत करके भी मीठा ही बोलना चाहिये और आवश्यकता समझे तो पीड़ित पुरुष को समाधान दिलाने के लिये ऊपरी ऊपरी शोक दिखला कर रो भी पड़ना चाहिये। जितनी भी दमननीति प्रचलित है वह सब भारतवर्ष के हित के नाम पर। क्या करें सरकार जनता का हित चाहती है, कर भी रही है, पर काँग्रेस वाले ही भारतवर्ष का अहित साध रहे हैं, पहले इनको मिटा लेवें फिर

लीजिये पूर्ण स्वराज ? आर्डिनेन्स बिल भी भारत के हित लिये है। यह श्लोक इस प्रकार से भी आया है—

प्रहरिष्यन् प्रियं ब्रूयात्,
प्रहृत्यापि प्रियोत्तरम् ।
असिनाऽपि शिरच्छित्त्वा,
शोचेत च रुदेत च ।

अर्थ यह है कि तलवार से गला काटकर भी लोक-दिखावे के लिये रोवें पीटें।

महात्मा गांधी

महात्मा गान्धी जी के प्रथम दर्शन महाविद्यालय ज्वालापुर में हुये थे। तब आप ताज़े ही दक्षिण अफ्रीका से आये थे। आपने आश्रम में आम्रवृक्ष के नीचे ब्रह्मचारियों को चरित्र शिक्षा का उपदेश दिया था। दूसरी बार महाविद्यालय के महोत्सव में पधारे थे। उस समय 'निर्भयता' पर व्याख्यान हुआ था। कुम्भी के मौके पर कनखल में महाविद्यालय की ओर से भारामल के बगीचे में कैम्प लगा था और प्रचार होता था। उस में भी आपका अपूर्व स्वागत किया गया था। चौ० रामभजदत्त, महात्मा मुन्शीराम तथा महात्मा गांधी जी के व्याख्यान हुये थे। महाविद्यालय के भजनोपदेशक पं० वासुदेव-शर्मा ऊमरीनिवासी ने एक भजन तुरन्त ही बनाकर गाया था, जिसका अभिप्राय यह था कि महा-विद्यालय को न भूलें। महात्मा जी ने अपने व्याख्यान में कहा था कि "मुझे यह कड़ी बहुत प्रिय लगी जिसमें यह कहा गया था कि मैं महाविद्यालय को न भूलूं। बहुत अच्छी बात है। जब मैं जेल जाऊँ और आप लोगों से कहूं कि आइये मेरे पीछे पीछे जेल में और तब आपने मेरा कहना माना तो मैं आप लोगों को कदापि नहीं भूलूंगा। भला ऐसे लोगों को कौन भुला सकता है। अगर मेरे बुलाने पर आप लोगों ने साथ नहीं दिया तो फिर बतलाइये आप लोगों को याद रख कर मैं क्या ले लूंगा।"

फिर लखनऊ कांग्रेस पर आप से भेंट हुई। तब से प्रत्येक ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक में और राष्ट्रीय महासभा में आप के दर्शन बराबर होते रहे हैं। १९३० में जब साबरमती में ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक हुई थी तब हम यहाँ से जम्बसूर (भड़ौच) जाकर सत्याग्रह कैम्प में महात्मा जी व खड्गबहादुर सिंह से मिले थे। तब महात्मा जी प्रसिद्ध डांडी के कूच में थे। जब महात्मा जी ने यू० पी० का दौरा लगाया था, तब प्रान्त की ओर से देहरादून व सहारनपुर दो जिलों में मुझे महात्मा जी के साथ रहना पड़ा। इस प्रकार महात्मा जी से बहुत सम्पर्क रहा है। सीतापुर की प्रान्तीय कानफ्रेन्स में मैंने महात्मा जी से अहिंसात्मक असहयोग पर बहुत बातचीत की, जिसका सारांश यह है—

प्रश्न— महात्मा जी। आप कहते हैं कि आत्मिक बल से, अहिंसात्मक पद्धति से स्वराज मिल सकता है, क्या आज तक पृथ्वीतल में किसी भी व्यक्ति ने इस प्रकार आत्मिक बल से, अहिंसात्मक पद्धति से स्वराज्य लिया है अथवा किया है ?

महात्मा जी—जो बात पहले कभी नहीं हुई वह भविष्य में भी नहीं हो सकती अथवा नहीं हो सकेगी ऐसा नियम है क्या ?

प्रश्न— भगवान् कृष्णचन्द्र जी भी आपकी इस अहिंसात्मक पद्धति को नहीं जानते थे, जानते होते अथवा मानते होते तो अर्जुन को युद्ध में प्रवृत्त होने का उपदेश ही क्यों देते ?

महात्मा जी—यह कौरव पाण्डवों का युद्ध नहीं। यह तो दो प्रकार की प्रवृत्तियों का, आसुरी और दैवी का युद्ध है, ऐसा मैं मानता हूं।

प्रश्न— मन्वादि धर्मशास्त्रों में छह प्रकार के आततायियों को बिना विचारे ही मार डालने का आदेश मिलता है। जैसे—

"गुरुं वा बालवृद्धौ वा
............................"

"आततायिनमायान्तं
हन्यादेवाविचारयन्"

इत्यादि।

महात्मा जी—उनके समय की बात उनके साथ, अब तो इन बातों की आवश्यकता ही नहीं है। वसिष्ठ विश्वामित्र के युद्ध की गाथा ही मेरा ध्येय है। कैसा सुन्दर दृष्टान्त है, व्यक्तिगत है सही पर मैं उसका आचरण समुदाय में भी लाना चाहता हूँ।

एक बार १६२५ में इसी विषय में मैंने आप को पत्र लिखा था जिसका अभिप्राय यह था कि—संसार में क्षात्रधर्म रहेगा और बराबर रहेगा। आपका प्रवर्त्तित अहिंसात्मक असहयोग ब्राह्मणों का धर्म है। ब्राह्मधर्म और क्षात्रधर्म साथ साथ चलते आये हैं। जहाँ शास्त्र फेल हुआ वहाँ शस्त्र आया ही समझिये"। महात्मा जी ने यंगइण्डिया व नवजीवन में इसका उत्तर दिया था।

बा० राजेन्द्रप्रसाद जी

मैं जब कलकत्ते में श्री आचार्य सत्यव्रत सामश्रमी जी से वेदाध्ययन करता था (१६०५-१६०६) तब राजेन्द्र बाबू प्रेसिडेन्सी कॉलेज कलकत्ता में एम० ए० में पढ़ते थे और उसी कॉलिज के होस्टेल में रहते थे। उस होस्टेल में आप बिहारभूषण नाम से प्रसिद्ध थे। तभी से बराबर आपका स्नेह चला आ रहा है। कांग्रेस में बराबर मिलते रहते हैं। शोक है हमारे परममित्र जगन्नाथ प्रसाद पाण्डेय एम० ए० शिकारपुर चमपारण्य निवासी आज इस लोक में नहीं हैं। आप संस्कृत व इंगलिश के अगाध पण्डित थे। बिहार की भूमि आप पर गर्व कर सकती थी, पर काल कराल ने आज तक किसको बख्शा है, किसको छोड़ा है—

कांग्रेस के विभिन्न दल

जब हमने कांग्रेस में प्रवेश किया, तब वहाँ दो दल थे, नरम और गरम। सूरत की फूट के पश्चात् लखनऊ में ही दो दल एकत्रित हो गये थे, उसमें लोकमान्य तिलक, श्री सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, महात्मा गांधी, महामना मालवीय जी आदि सभी पधारे थे। वहीं हिन्दू-मुस्लिम पैक्ट बन गया था। आश्चर्य की बात देखिये कि यह नरम और गरम दोनों दल पूने ही से चले थे। एक के नेता थे गोपाल कृष्ण गोखले दूसरे के नेता लोकमान्य तिलक थे। फिर अमृतसर कांग्रेस में मांटेगू-चेम्सफोर्ड स्कीम को स्वीकार करने, न करने में दोनों दलों में खूब जोर-आजमायी हुई। गरम पक्ष की ही जीत रही।

स्वीकार करने के पक्ष में

(निम्नलिखित महानुभाव थे)

❀ महामना मालवीय
❀ महात्मा गांधी इत्यादि।

असन्तोषजनक बतलाने वालों में थे—

श्री लोकमान्य तिलक
श्री विपिनचन्द्रपाल
श्री देशबन्धु दास
श्री मुहम्मद अली
श्री शौकत अली।

सब्जेक्ट कमेटी अर्थात् विषय-निर्धारिणी समिति में तीन वार हार हो जाने के पश्चात् भी जब महात्मा गांधी स्वीकार करने के प्रस्ताव को खुली कांग्रेस में लाये तब वह दृश्य देवताओं के भी देखने योग्य था—महात्मा जी ने अपनी टोपी लोकमान्य तिलक के पैरों में फेंकी थी। लोकमान्य तिलक के निधन के पश्चात् यही दो दल नरम और गरम नामों को छोड़ कर असहयोग और प्रतियोगी सहयोग के नाम से प्रसिद्ध हुये। प्रथम सत्याग्रह आन्दोलन के समाप्ति के दिनों में स्वराज्य पार्टी की सृष्टि हुई, जिसकी नीति काऊन्सिलों में जा कर प्रतिरोध करने की थी। देहली की स्पेशल कांग्रेस में इस नीति पर कांग्रेस की भी मोहर लगी किन्तु १९३० में यह दल पूर्ण असहयोग पक्ष में मिल गया और काऊन्सिल से बाहर निकल आया। तब से देश में अब दो ही पक्ष शेष हैं एक असहयोगी, दूसरे नरम लोगों का जिनकी पार्टी का नाम लिबरल पार्टी है। कांग्रेस में १९२१ और १९३० के मध्य में चेञ्जर और नो-चेञ्जर अर्थात् कांग्रेस प्रोग्राम में परिवर्त्तनवादी अथवा अपरिवर्त्तनवादी ऐसे दो दलों में खूब घमासान रहा। कांग्रेससूत्र स्वराज्य पार्टी के ही हाथों में रहे जिसके अध्वर्यू थे—

स्वराज्य पार्टी	अपरिवर्त्तनवादी
श्री मोतीलाल नेहरू	श्री राजगोपालाचार्य
श्री देशबन्धु दास	श्री राजेन्द्र बाबू
श्री लाला लाजपतराय	श्री मुहम्मद अली
श्री विट्ठलभाई पटेल	श्री कोण्डा वेंकटप्पया
	श्री पट्टाभि सीतारामय्या
	श्री सरदार पटेल इत्यादि ।

श्री जयकर, श्री नरसिंह चिंतामणि केलकर, डॉ० मुंजे, श्री लाजपतराय आदि स्वराज्य पार्टी के साथ रहे किन्तु हिन्दुसभा के प्रश्न पर पृथक् हुये और असेम्बली में हिन्दुमहासभा की ओर से गये । इस प्रकार राजनैतिक दाँव पेंच चलते ही रहे । इन आँखों ने कलकत्ते में जवाहरलाल और श्री सुभाष-बाबू का पूर्ण स्वतन्त्रतापोषक दल भी देखा और लाहोर में इन दोनों की परस्पर झोड़ भी देखी । कांग्रेस आन्दोलन क्या और कोई आन्दोलन क्या उसकी दशा भी गंगा जी की धाराओं के सदृश ही रहती है । मुख्यधारा तो चलती ही रहती है किन्तु मुख्यधाराओं में कई शाखायें पृथक् होकर और पृथक् प्रदेशों में पृथक् पृथक् नामों को धारण करके फिर आगे वही धारायें मुख्यधाराओं में आ मिलती हैं, मिल कर एक रूप हो जाती है । हमने तो इस राजनैतिक क्षेत्र में दलबन्दियों का यही हाल देखा । अब तो हमको मतभेद, दलबन्दी और पार्टियों के मामले में तनिक भी आश्चर्य नहीं होता । जैसा गंगा जी की धाराओं का हाल वही लोकगंगा की धाराओं की गति । फिर आश्चर्य की बात ही क्या है ? लोकमान्य तिलक ने एक व्याख्यान में ठीक ही कहा था कि 'आज जो गरम कहलाते हैं वे आगे चल कर नरम कहलायेंगे ।' बात ठीक ही है । लोकमान्य के जमाने में गोखले दल नरम कहलाता था । महात्मा गांधी के इस ज़माने में लोकमान्य तिलक नरम समझे जाते हैं । और नौजवान भारत सभा वालों की दृष्टि में महात्मा गांधी का आन्दोलन सड़ियल आन्दोलन समझा जाता है । क्रान्तिकारी दल महात्मा गांधी को अंग्रेजों का मित्र समझते हैं । भविष्य में इन लोगों को भी बहुत नरम समझने वाला दल बन अथवा मिल सकता है । स्वराज्यप्राप्ति के उपायों में किस प्रकार शनैः शनैः उत्क्रान्ति होती गई, देखिये

प्रथमदल—प्रारम्भ

उद्देश्य—ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत ब्रिटिश छत्रच्छाया में औपनिवेशिक स्वराज्य ।

उपाय —वैध आन्दोलन, जिसका अर्थ यह है कि प्रार्थनाओं द्वारा, आन्दोलनों द्वारा ब्रिटिश सरकार व जनता की कृपा-संपादन करके प्राप्त करना । अर्थात् "भिक्षां देहि" की नीति । यह दल यह मानता रहा है कि भारतवर्ष का अंग्रेजों से सम्बन्ध ईश्वरीय प्रेरणा है ।

उत्क्रान्ति

उद्देश्य—ब्रिटिश छत्रच्छाया में औपनिवेशिक स्वराज्य ।

उपाय —प्रत्येक उपायों से, हो सके तो ब्रिटिश माल पर बहिष्कार डाल कर भी स्वार्थ-साधना। यह दल भारतवर्ष व अंग्रेजों के सम्बन्ध को ईश्वरीय प्रेरणा नहीं मानता था। उसकी यह धारणा थी कि अंग्रेजों ने कुटिल नीति से भारतवर्ष को हड़प लिया है।

संक्रान्ति

उद्देश्य—समस्त शान्त उपायों से स्वराज्य प्राप्त करना—(पूर्ण स्वतन्त्रता)—पहले यह दल मानता था कि सम्भव हो तो ब्रिटिश साम्राज्य में, न सम्भव हो तो साम्राज्य से बाहर।

उपाय —अहिंसात्मक असहयोग

सविनय अवज्ञा

इस दल के तीन संग्राम हो चुके हैं।

फिर उत्क्रान्ति

उद्देश्य—पूर्ण स्वराज्य अथवा पूर्ण स्वतन्त्रता जिसमें अंग्रेजों से तनिक भी सम्बन्ध न रहे।

उपाय —सशस्त्र क्रान्ति

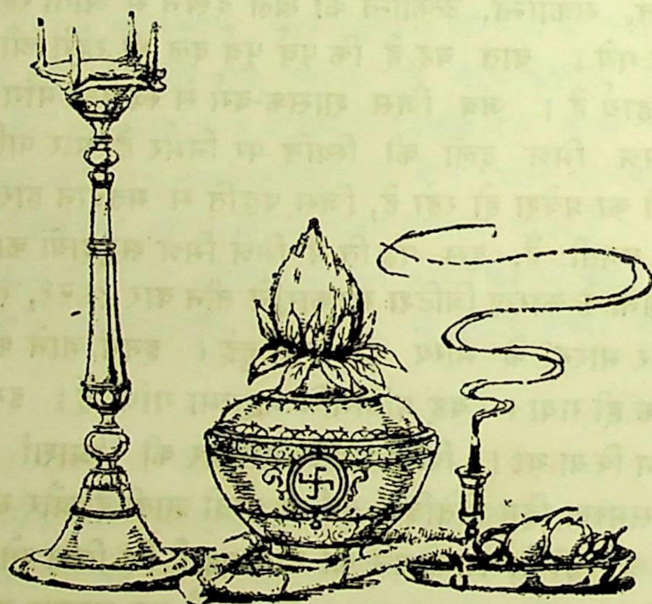
इस प्रकार क्रान्ति, संक्रान्ति, उत्क्रान्ति का खेल देखने में आता रहा है—किन्तु यह न समझिये कि पूर्व पूर्व दल नष्ट हो गये। बात यह है कि पूर्व पूर्व दल भी रहेंगे और उत्तरोत्तर नये नये दल भी खड़े होंगे। यह अपरिहार्य है। जब जिस शासक-वर्ग से स्वराज्य मांग रहे हैं अथवा लेना चाहते हैं उसकी स्वयं स्थिति भिन्न भिन्न दलों की स्थिति पर निर्भर है और पार्लियामेंट के एक्टों द्वारा जिस प्रकार की शासन प्रणाली का प्रवेश हो रहा है, जिस पद्धति से मतदान द्वारा प्रतिनिधि चुन कर शासक-मण्डल व धारासभाएँ बनती हैं, इस पद्धति में भिन्न भिन्न समुदायों का होना अपरिहार्य है। इस स्वराज्य-प्राप्ति के आन्दोलनों के कारण ब्रिटिश सरकार ने तीन वार १९२१, १९३०, १९३२ में तीन गोल-मेज सभायें बुलायीं, और भारत के भाग्य की चर्चा हुई। इनमें जाने को प्रतिनिधि गये ही पर अब तक सच्चा प्रतिनिधि एक ही गया। वह प्रतिनिधि महात्मा गांधी हैं। इस भारतवर्ष के दूत ने अपना कार्य निर्भयता से संपादन किया था। किन्तु ब्रिटिश सरकार की "आशां कालवतीं कुर्यात्" की नीति के कारण भारतवर्ष की समस्या दिन प्रतिदिन जटिल होती जाती है और सरकार व ब्रिटिश जनता इस बात को अनुभव करती जा रही है, पर सोचने की बात यह है कि जिस सोने की चिड़िया—भारतवर्ष के भरोसे पर संसार में ब्रिटिश सरकार का साम्राज्य स्थित है वह सरकार अपनी राजी से पूर्ण स्वतन्त्रता क्योंकर देगी।

पूर्ण स्वतन्त्रता किसी के माँग लेने, मांग लाने की वस्तु नहीं है, वह तो शक्ति हो तो ले-लेने की वस्तु है। जो हो, सत्याग्रह आन्दोलन ने संसार भर में उथल-पुथल मचादी है व उसके इस अहिंसात्मक

आन्दोलन ने भारतवर्ष का सिर फिर बहुत ऊँचा कर दिया है। यह बात तो अब माननी ही पड़ेगी। संसार का गुरु भारत फिर गुरु बन रहा है। यह सत्याग्रह आन्दोलन क्या चला मानो भारतवर्ष की सभी प्रकार की दशाओं और समुदायों में बड़ी भारी क्रान्ति हो रही है। समाज, धर्म, सभ्यता, आचार-विचार सभी में काया पलट हो रही है। मानो आर्य-संस्कृति व अन्य संस्कृतियों में घोर युद्ध हो रहा है।

अभी तक तो आर्य-संस्कृति की ही विजय होती चली आयी है, और भविष्य में विजय होती रहेगी ऐसे शुभ लक्षण दिखलायी पड़ रहे हैं, भारतवर्ष की जो भी बात होगी वह अनोखी ही होगी। भारतवर्ष निःशस्त्र प्रतीकार से, अहिंसात्मक असहयोग से, सत्याग्रह से, आत्मोद्धार द्वारा संसार में शांति सुख की स्थापना करना चाहता है। आर्य-संस्कृति के तीन मुख्य सिद्धान्त—सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह के प्रश्नों पर सृष्टि के आदि से लेकर आज तक कभी इतनी चर्चा हुई थी अथवा नहीं, ईश्वर ही जाने। सत्याग्रह आन्दोलन क्या चला आर्य-संस्कृति की विजययात्रा का प्रस्थान हुआ—संसार चकित है कि ऐसी विजययात्रा न कभी उसने सुनी और न देखी—

(भारतोदय)



ॐ तत्सत

(देहरादून-पर्व)

कारावास

१—सूत्रपात

१६२१ नवंबर का मास, काँग्रेस काम धडल्ले से हो रहा था, सब देशभक्त इस उमंग में लग रहे थे कि अहमदाबाद कांग्रेस में जायेंगे, वहाँ देश की दशा पर विचार करेंगे, स्वराज्य का झंडा गाड़ेंगे, स्वतन्त्रता का द्वार खोलेंगे।

और न जाने क्या क्या सोच रहे थे क्या क्या मना रहे थे, कैसे कैसे सुखस्वप्न देख रहे थे—इतने में भारत सरकार ने अचानक फरमान निकाला कि काँग्रेस-वालण्टियर, खिलाफत-वालण्टियर तथा नैशनल-वालण्टियर (Unlawful) अर्थात् ग़ैर क़ानूनी हैं, जो वालण्टियर होंगे उनको क्रिमिनल लॉ अमेण्डमेण्ट एक्ट १७ ए० की धारा के अनुसार छह मास का दण्ड होगा और वालण्टियर भरती करने वाले को १७वीं धारा के अनुसार तीन वर्ष का कारागार वास और १०००) रु० दण्ड मिलेगा-यद्यपि ये धाराएं अन्य प्रयोजन के लिये बनाई गई थीं तो भी भारत सरकार ने कांग्रेस-आन्दोलन को कुचलने के लिये इनका उपयोग करना विचारा। भारत सरकार का ऐलान निकलना था कि बंगाल सरकार ने बिगुल फूंक ही तो डाला,-जब मैंने समाचार पत्रों में यह वृत्त पढ़ा तब यह ख़याल हुआ कि केवल बंगाल सरकार ही ऐसा करने लगी है और यू० पी० सरकार ऐसी भूल कदापि न करेगी,-पर यह मेरी संभावना निर्मूल ही रही। ता० २३ नवंबर का दिन, प्रातः काल संध्योपासन से निबट कर मैं लीडर को पढ़ने लगा तो क्या देखता हूँ कि यू० पी० सरकार ने युद्ध का शंख बजा ही डाला। मैंने सोचा कि जिलाधिकारियों द्वारा बाज़ाप्ता सूचना आने के पूर्व ही जिले भर के समस्त कांग्रेस-सभ्यों व स्वयं-सेवकों को बुला कर पक्का संघटन करना चाहिये नहीं तो पीछे से बड़ी रुकावट पड़ जायगी। इस विचार के अनुसार समस्त ज़िले भर में विज्ञापन भेज दिये गये-खूब आन्दोलन किया गया-ज़िले भर में एक अपूर्व उत्साह था-इस कार्य के लिये ता० ५ दिसंबर रविवार का दिन नियत किया गया-स्थान तो तिलक-भूमि निश्चत था ही।

इससे पूर्व एक अपूर्व घटना का उल्लेख करना भूल गया—ता० १७ नवंबर को भारत वर्ष की भूमि पर युवराज का पदार्पण होने वाला था, उसी के उपलक्ष्य में ऑल-इन्डिया कांग्रेस-कमेटी ने भारत भर में पूरी हड़ताल मनाने का संकल्प किया था-इसी के सम्बन्ध में देहरादून के ज़िले भर में अपूर्व हड़ताल रही-शहर की दशा तो देखने योग्य थी। सरकारी अधिकारी भी हैरान थे कि यह क्या हुआ ? इसी दिन तिलकभूमि पर जो महती सभा हुई थी वह भी अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। इसमें बरदौली-सत्याग्रह के लिये वालण्टियर भरती किये गये, लाहोर में लारेन्स की मूर्ति को उठा डालने के लिये सत्याग्रहियों के नाम लिखे गये, म्युनिसिपैलिटी के विषय में प्रस्ताव पास हुआ कि वह प्रिन्स ऑफ वेल्स के स्वागत में एक पाई भी खर्च न करे। सभा में स्वयं सेवकों का उत्साह देखने

योग्य था। दूसरे दिन जिले भरमें एक बिजली सी दौड़ गयी। तिलकभूमि में दृश्य देखने वाले अच्छी तरह जानते होंगे कि वे कैसे चहल पहल के दिन थे। वे कैसे परीक्षा के दिन थे—इधर यह उत्साह और उधर ५ दिसम्बर को होने वाली स्वयंसेवक व सदस्यों की महती सभा की चर्चा, एक अजीब लहर थी। इधर रोज अखबारों में किसी न किसी के पकड़े जाने की खबर आती ही रहती थी। वालण्टियरों के फार्म छपाये गये, नाम धड़ाधड़ आने लगे। ज़िलाधिकारी घबराने लगे, हम लोगों पर सख्त नजर रक्खी जाने लगी। आज पं० जवाहरलाल पकड़े गये, आज पं० मोतीलाल जी पकड़े गये, आज बा० पुरुषोत्तमदास टण्डन गये, आज गौरीशंकर मिश्र गये, अब पं० श्यामलाल नेहरू की बारी आई, आज पं० मोहनलाल नेहरू लद गये, आज कमाल-उद्दीन जाफरी पहुंच गये। आज उसका नम्बर आया, आज इसका नम्बर है—यह होता रहा। इस से पूर्व पंजाब में ला० लाजपतराय आदि पकड़े जा चुके थे।

आज ता० २६ नवंबर है, दुपहर के समय सरदार हरनामसिंह कोतवाल अपने दूतों सहित तिलक-भूमि की ओर झपटे चले आ रहे हैं। हमने मन में सोचा कि आज शायद हम लोगों का ही नम्बर है—कोतवाल साहब ने आकर गवर्नमेंट के हुक्मनामे की नक़ल हमको दिखादी। मेरे, बा० बुलाकी रामजी के जनाब फखरुद्दीन फारूखी साहब के हस्ताक्षर हो गये, मैंने इस हुक्मनामे की पुश्त पर लिखा कि सरकार की इस कारवाई से राजा और प्रजा में असन्तोष बढ़ेगा। बा० बुलाकी राम जी फारुखी जी ने भी इसी प्रकार के नोट लिखे।

गवर्नमेंट के इस चैलेंज को यू० पी० प्रान्तिक कांग्रेस कमेटी ने किस धीरता वीरता से स्वीकार किया इस बात को सब कोई जानता है। खैर जब सरकारी हुग्मनामे पर हमारे बाज़ाप्ता हस्ताक्षर हो गये तब हम लोगों में खलबली पड़ गई। मुण्डे मुण्डे मतिभिन्ना, के अनुसार नाना भांति के विचार प्रस्तुत हुए। मैंने जो नोटिस निकाला था कि वर्तमान दशा पर विचार होगा। स्वयं सेवकों का संगठन होगा,—प्रवेश टिकिटों द्वारा होगा। टिकटों के विषय में परस्पर मदभेद था। सब की आंखें ता०५ की सभा की ओर लग रही थीं। लोगों को सन्देह हो गया था कि फौज आयगी, गोलियां चलेंगी, खून खराबी होगी,—पर यह अच्छी बात थी कि लोग निर्भय थे—दो चार को छोड़ प्रायः सभी चाहते थे कि तिलक-भूमि पर धड़ल्ले से सभा हो। मेरे नोटिस के निकल जाने के पश्चात् बा० बुलाकीराम जी व जनाब फ़ारुख़ी जी के नाम से दूसरा नोटिस निकाला गया जिसमें लिखा था कि लोग निर्भय होकर ता० ५ को तिलक—भूमि में आवें और स्वयं-सेवक बनें इत्यादि। इधर सभा का दिन समीप आने लगा और उधर अफवाहों की भरमार होने लगी। लोग आ २ कर मुझसे कहने लगे 'सोच लीजिये, लद जाओगे' मैं हंसकर यही उत्तर देता रहा कि सोच लिया, अब पीछे हटाना कठिन है, सभा अवश्य होगी। १४४ धारा के लगने की पूरी संभावना होने लगी। उन दिनों डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट कालसी की ओर थे, रोज़ खबर आती थी कि सरकारी आदमी उधर जा रहे हैं, पुलिस-सुपरिण्टेण्डेण्ट फेरा लगा रहे हैं, इत्यादि।

इधर जोर की तैयारियां हो रही थीं कि ता० ४ दिसम्बर को सायंकाल के सात बजे बा० बुलाकीराम जी, फारुख़ी जी व मुझपर १४४ धारा लगा दी गई। ता० ५ को मीटिंग थी, और यह १४४ धारा का

नोटिस ऐसे समय में दिया गया कि जिससे हम ता० ५ को कुछ भी न कर सकें, और कुछ करने की कोशिश करें तो भी कामयाब न हो सके। रात रात में हम कहाँ कहाँ जाते, क्या क्या करते, लोग तो ज़िले भर से आने वाले थे। सरकारी नोटिस में यह लिखा था कि देहरादून के इर्द गिर्द ६ मील तक, और राजपुर तथा उसके आसपास पांच पांच मील तक पिकेटिंग, बायकाट, क़ानूनभंग तथा स्वयं-सेवकों की भरती-इन चार बातों के लिये सभा करना मना है। इस आर्डर की पुश्त पर फिर सबने लिखा कि १४४ धारा का यह दुरुपयोग है। इस धारा के लगते ही शहर भर में सन्नाटा छा गया। इधर कांग्रेस की इज्ज़त का सवाल था। सब कांग्रेस के अधिकारी बा० बुलाकीराम जी की कोठी पर एकत्रित हुये, और आधे घंटे के वादविवाद के पश्चात् निश्चय हुआ कि हर्रावाला में सभा की जाय। यह निश्चय होना था कि फिर क्या था, मास्टर हुलास वर्मा, उनके छोटे भाई धर्मवीर, छोटे फारुखी मुश्ताक अहम्मद साहब ने गली २ घूमकर शहर में मनादी कर दी। शहर में उत्साह व आवेश खूब बढ़ा, किसी को पूर्वादून में भेजा, किसी को पछवादून में भेजा, जिससे कि आने वालों को ठीक हाल मालूम हो जाय, जिधर २ से लोग आने वाले थे उन सड़कों पर आदमी भेज दिये-कोई कौलागढ़ की ओर गया, कोई रायपुर को, कोई माजरे की ओर, कोई राजपुर की ओर, कोई कहीं और कोई कहीं। बा० हंसराज कक्कड़ रातोंरात डोईवाला पहुँचे वहाँ जाकर उन्होंने रोक थाम की। धर्मपुर के कलीराम जी व उनके स्वयंसेवकों ने बड़ा काम किया। ता० ५ को प्रातः काल की गाड़ी से ला० कुन्दलाल भोगपुरी, हुलासवर्मा रेल से हर्रावाला पहुँचे और स्थानादि का सब प्रबन्ध कर दिया-इधर ग्यारह बजे से एक बड़ी लारी ने आदमियों को हर्रावाला तक ढोने का नम्बर लगाया। सब लोग आगे पहुँचे। मैं एक बजे तक तिलकभूमि पर ही रहा और जो २ आते गये उनको आगे भेजता गया-लोगों के उत्साह को देखकर मेरे आनन्दाश्रु निकलने लगे, मैं आपे में फूला न समाया-विशेषकर जब कौलागढ़ की स्वयं-सेवक मण्डली बड़े शान के साथ पछवादून के सेवकों को लेकर आई तब मेरे हृदयोल्लास की सीमा नहीं रही-नवयुवकों का वह समूह जिसने देखा वही 'धन्य धन्य' कहता सुनाई दिया। पं० नारायणदत्त डंगवाल की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। पछ्वा और उधर के भाई तीस तीस, पैंतीस मील चल कर आये थे, जब उन्होंने सुना कि सभा हर्रावाला में होगी तब फिर चल दिये-टांगेवाले लोगों को बिठा बिठा कर हर्रावाला तक छोड़ आते थे, जब किराया देने लगे तब उन्होंने नहीं लिया। स्टेशन पर भी अजीब दृश्य था, देहरे वालों ने ऐसे दृश्य कम देखे हैं। बड़े ज़ोर से यह अफवाह फैलाई गई कि हर्रावाला स्टेशन पर गाड़ी नहीं ठहरेगी, टिकट नहीं मिलेगा, तो भी सैंकड़ों मनुष्य जा डटे, गाड़ी में तिल रखने को जगह नहीं थी-जब यह गाड़ी दो बजे के करीब हर्रावाला पहुँची तब जिधर देखो आदमी ही आदमी दिखाई देने लगे। मैं ठीक एक बजे तिलकभूमि से चल दिया और सड़क २ गया, मार्ग में मनुष्य समुदाय के सिवाय और क्या था? लारी भी अपना काम तेज़ी से कर रही थी-साठ साठ वर्ष के बूढ़े पैदल ही हर्रावाला की ओर उत्सुकता से जाते देखे गये। ओह! मैं इस दृश्य को जन्मभर नहीं भूल सकता। कहीं आश्वासन देते, कहीं 'शाबास' कहते, कहीं मुस्कराते, कहीं हाथ के इशारे से उत्साह देते दिलाते, मैं दो बजे हर्रावाले स्टेशन पर पहुँचा। पूर्व से ही गये हुये भाइयों ने सब प्रबन्ध कर रक्खा था, सभास्थान स्टेशन के अहाते के भीतर ही था, स्टेशन मास्टर ने आकर कहा कि

'हमारी हद के भीतर सभा न होनी चाहिये। हमारे अफसर नाराज़ होंगे'। मैंने उत्तर दिया कि अब यहाँ से उठ नहीं सकते। आपसे कोई पूछे तो आप हमारा नाम कह दीजिये। स्टेशन मास्टर बेचारे भले आदमी थे, चुपचाप चल दिये। मैं अभी कह चुका हूँ कि सब प्रबन्ध हुआ था—सभा क्या थी एक अच्छा खासा छोटा सा मेला ही हो गया था। ज़िले भर के लोग एकत्रित थे—पष्टा, चुहड़पूर, रामपुर, सहसपुर, राजपुर, मसूरी, लखवाड़, रायपुर, नांगल, मालदेवता, गूजरवाड़ी, मियांवाली, थानों, मालकोट, भोगपुर हृषीकेश, माजरा, डोईवाला, कौलागढ़, बड़ोंवाला, गलजवाड़ी और न जाने कहां कहां के.......... मुझे याद भी नहीं रहा.........लोग एकत्रित हो रहे थे। तीन बजे तक प्रतीक्षा करके सभा की कार्यवाही प्रारम्भ की गई। बा० बुलाकीराम जी अध्यक्ष थे। राष्ट्रीय गान के पश्चात् बाबू जी ने उपस्थित जनता को बधाई दी और सभा का उद्देश्य बतलाया। पश्चात् ला० ब्रानूमल, चौ० हुलास वर्मा, ठा० मनजीतसिंह, मु० इसहाक हुसैन, फारुखी जी व ठा० चन्दनसिंह जी के समयोचित भाषण हुए, पश्चात मैंने स्वयंसेवकों का प्रतिज्ञापत्र (यू० पी० कांग्रेस का स्वीकृत) पढ़कर सुनाया और अहिंसात्मक गति से काम करने का उपदेश दिया,—स्वयंसेवक अपना नाम लिखाने लगे—सैकड़ों स्वयंसेवकों ने नाम लिखाया, प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर किये। ठा० चन्दनसिंह जी ज़िले भर के स्वयंसेवकों के कमाण्डर चुने गये, भिन्न २ कप्तान चुने गये,—और बड़ी शान्ति व उत्साह के साथ कार्य समाप्त हुआ। कोई एक सहस्र स्वयंसेवकों ने नाम लिखाये होंगे। 'जय' 'जय' करते लोग लौटने लगे-मैंने ईश्वर से प्रार्थना की कि वह हमको अधिक बल देवे—देहरे में आकर देखते हैं तो यहां जिधर देखो हर्रावाला की ही चर्चा !! 'भाई १४४ टूट गई'—ऐसा जमघट हमने नहीं देखा 'खूब हुई'—'सरकार की बात न चली' अभी क्या है जब पकड़-धकड़ होगी तब देखना'—ऐसे ऐसे वाक्य सर्वत्र सुनाई दिये। मुझे तो निश्चय था कि मैं पकड़ा जाऊँगा और विश्वस्त सूत्र से पता चला था कि अधिकारी लोग मुझे देहरे से बाहर पकड़ना चाहते हैं। मेरे शहर में पकड़े जाने से उनको बड़ा अन्देशा था। बहुत दिनों की चिन्ता, जागरण, थकावट आदि के कारण मैं चाहता था कि एक सप्ताह आराम करूँ। इसलिये ता० ६ दिसम्बर को सायंकाल की गाड़ी से मैं ज्वालापुर गया। मेरा यह ख्याल था कि ज्वालापुर में मुझे वारण्ट मिलेगा। महाविद्यालय ज्वालापुर में एक दिन भी पूरा न हुआ था कि देहरे से पत्र आये जिसमें लिखा था कि 'शीघ्र लौटो'—'काम बिगड़ रहा है'। मैं ता० ९ को रात की १० बजे की गाड़ी से देहरे वापिस आया। ज्वालापुर से मैंने बा० हंसराज के नाम तार दिया था कि आ रहा हूँ—मतलब यह था कि सरकारी अधिकारी मुझे पकड़ना चाहेंगे तो रेल पर ही पकड़ कर जेल में भेज देंगे। तार का हाल तो उनको मालूम हो ही जायगा। स्टेशन पर हर ट्रेन पर गुप्तचर रहते ही हैं—एक से मैंने पूछा कि क्या हाल है ? पकड़-धकड़ का हाल कहो ? उसने कहा अमन चैन है। ता० १० को प्रातःकाल उठकर आवश्यक विधि से निवृत्त होकर मैं अपने मिलने वालों से बातचीत करता रहा। ज्वालापुर महाविद्यालय में मैं सबसे कह आया था कि एक वर्ष के लिये जा रहा हूँ। दिन भर मिलने मिलाने में ही व्यतीत हुआ। प्रातः ९ बजे स्टेशन से आते हुए एक परिचित ने आकर कान में कहा 'शास्त्री जी तैयार रहिये, आपके पकड़े जाने का निश्चय हो गया है, कमिश्नर ने मंजूरी दे दी है'—मेरी ओर आँसू भरे नेत्रों से देखता हुआ और हाथ जोड़ता हुआ चला गया। मैंने खबर किसी को नहीं बतलाई क्यों

कि मैं चाहता था कि मैं शान्तिपूर्वक जेल में चला जाऊँ तो अच्छा है, कोई गड़बड़ हो जायगी तो हानि होगी। उसी समय मैंने निश्चय किया कि 'उपवास' रखना चाहिये। शायद बा० हंसराज कक्कड़ को छोड़कर इस बात को कोई नहीं जानने पाया। बा० जयन्तीप्रसाद के पिता की मृत्यु हो गई थी इसलिये सहानुभूति के निमित्त सायंकाल चार बजे मैं उनके घर पर गया-शोक प्रकट करने के पश्चात् क्रिमिनल-लॉ अमेण्डमेण्ट ऐक्ट का मतलब समझने के लिए मैंने कानूनी पुस्तक मंगवाई, कानून पढ़ा गया, वाद-विवाद होता रहा। थोड़ी देर के पश्चात् मैं और जयराम सिन्धी पं० अमरनाथ वैद्य जी के यहाँ पहुँचे। फिर सिन्धी जी बाहर गये और वापस आकर कहने लगे कि कोतवाल झण्डे मोहल्ले में आपकी तलाश में है, आपके पकड़े जाने की खबर है, फिर वे काँग्रेस में गये और खबर लाये कि कोतवाल कांग्रेस में भी हो गया है। फिर क्या था ? मैंने वैद्य जी से छुट्टी ली,वैद्य जी ने कहा'सन्देश' मैंने उत्तर दिया लिख देंगे, जल्दी क्या है ?

बस ईश्वर का नाम लेकर मैं चल दिया। जयराम सिन्धी, मा० रामस्वरूप आदि कई सज्जन मेरे साथ हो लिए। तिलकभूमि में पहुँचकर पता चला कि कोतवाल आए थे वालण्टियर का फार्म मांगते थे। पीछे से बा० हंसराज कक्कड़ से पता चला कि कोतवाल मोटर लेकर आए थे, मोटर दूर खड़ी करके आए थे, त्रिलोकीसिंह पूछने लगा 'शास्त्री जी कहाँ हैं'—जब मैं वहाँ न मिला तब वे मेरी तलाश में बाजार में गए—खैर तिलकभूमि में पहुंचकर दस बारह मिनिट भी न होने पाए थे कि कोतवाल अपने नायब सहित टांगे पर बैठकर आए। मैं कुटिया में था, बाहर आया, कोतवाल ने दूर से ही हाथ के इशारे से बुलाया और कहा 'शास्त्री जी ! आइये'—और आप टाँगे में ही बैठे रहे। मैंने पहले तो यह ख्याल किया कि इस गुस्ताखी का यही उत्तर है कि कुछ भी उत्तर न दिया जावे और जबतक वह गाड़ी से उतर कर भीतर तिलकभूमि में न आवें तबतक ध्यान न दिया जाय, पर पीछे से बेचारा भय के मारे दूर से बुला रहा होगा, स्वयं चले जाने में कोई हानि नहीं है ! यह सोचकर भगवान् का स्मरण किया 'बन्देमातरम्' की ध्वनि की, और कोतवाल के पास सड़क पर पहुँचा। मैंने कहा वारण्ट दिखाइये। वारण्ट देखने दिखाने में दो एक मिनिट लगे होंगे। इतने में सैकड़ों मनुष्य एकत्रित हो गये और चिल्लाकर कहने लगे 'शास्त्री जी ! दस मिनिट ठहरिये हजारों लोग आ रहे हैं'– मैंने कहा 'नहीं अब चलने दो', हमारा टांगा चल दिया। बा० बुलाकीराम जी की कोठी के सामने होकर जो मार्ग जाता है उसी मार्ग से हम जेल की ओर चल दिये। लोगों ने एक दूसरे मार्ग से आकर फिर घेर लिया। जेल के सामने आने पर मैंने गाड़ी से उतर कर और पीपल के चबूतरे पर खड़े होकर लोगों को शान्ति से काम करने व दृढ़ रहने का उपदेश दिया। उस समय की लोगों की दशा वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। लोगों के उत्साह का अतिरेक देखने योग्य था। डुभालवाले के एक लड़के ने कहा 'हम भी आपके साथ चलेंगे। लोगों ने कहा हम भी आपके साथ चलेंगे ! बातचीत में दस बारह मिनिट गए होंगे। इतने में जेल का फाटक खुला, मैं भीतर गया, फाटक बन्द हुआ, मैंने फाटक के भीतर खड़े होकर फिर कुछ उपदेश के शब्द कहे। थोड़ी देर पश्चात् दूसरा फाटक खुला, वह भी बन्द हुआ, और मैं भीतर जा पहुँचा। पहले फाटक के भीतर एक नंबरदार ने मेरी तलाशी लेनी चाही, पर जेलर ने कहा

ये महाराज हैं इनकी तलाशी नहीं होगी। वह नंबरदार भी चकित रह गया। खैर इस तरह पहली वार ठाठ बाट के साथ हमारा जेल में प्रवेश हुआ। बाहर लोग बहुत देर तक 'वन्देमातरम्' 'महात्मा गाँधी की जय' और न जाने किस किस की जय बोलते रहे। भीतर जाकर जेलर ने मुझे एक छोटी सी बारीग दिखाई, मैंने कहा इससे बड़ी कोई बारीग हो तो उसमें मुझे आराम मिलेगा, मुझे टहलने की आदत है। दूसरी एक बड़ी बारीग थी उसमें मैं चला गया, दरवाज़ा बन्द हुआ, ताले पड़ गये। इधर भगवान् सूर्यनारायण अस्ताचल को जा रहे थे, मैंने हाथ जोड़कर कहा 'भगवन् जिधर जा रहे हो उधर मेरा समाचार पहुँचा देना और प्रातःकाल सब मेरे परिचितों का समाचार लेते आना।' मैं सन्ध्यावन्दन में लग गया। परमात्मा का अनुग्रह समझा कि उसने आज ऐसी शुभ घड़ी दिखलाई। इस तरह देहरादून में प्रथम प्रथम मुझ से ही धरपकड़ व जेल प्रवेश का सूत्रपात हुआ—

२— जेल में पहिली रात्रि

सन्ध्या-वन्दन के पश्चात् टहल रहा था, इतने में बा० बुलाकीराम जी आये और कुशल मङ्गल पूछकर चले गये। थोड़ी देर के बाद जॉइण्ट मैजिस्ट्रेट हरचन रोडर साहब आये, मेरा नाम धाम पूछने लगे—उन्होंने कहा कि ता० १३ को आपका अभियोग होगा, आप चाहें तो किसी वकील को कर लीजिये।

मैं—मैं वकील नहीं करूँगा, उसी समय जो कहना होगा कह दूँगा। आप मेरा अभियोग कहाँ करेंगे ? जेल में या खुले कोर्ट में ?

जॉइण्ट मैजिस्ट्रेट—आप कहाँ चाहते हैं ?

मैं—खुले कोर्ट में।

जॉइण्ट—मैजिस्ट्रेट—वहाँ आपके चेले आराम से काम न होने देंगे।

मैं—नहीं, सब शान्त रहेंगे।

इस बात चीत के बाद चलते समय साहब बहादुर ने सिर से टोप उतार कर नम्रतापूर्वक 'गुडबाई' किया और चले गये। इतने में बाहर से भोजन आया। भोजन को नमस्कार करके कुछ अलग रक्खा, कुछ खाया, कुछ छोड़ दिया। वहां खाया किससे जाता, ध्यान ही और तरफ था। सोने का प्रबन्ध ज़मीन पर था या मिट्टी की खाट पर था। जेलर ने मुझे तीन नये कम्बल दिये थे, मेरा एक छोटा सा अपना कम्बल था ही, बा० हंसराज कक्कड़ ने एक बड़ा गद्दा भिजवा दिया था। कुछ कम्बल नीचे कुछ ऊपर लेकर लेट गया—मेरा मन विचारसागर में पड़ गया। मन का यह धर्म है कि जब इसको बाह्य जगत् से भीतर बन्द करने का यत्न किया जाता है तब यह बाहर जाने की अधिक चेष्टा करता है। जो लोग प्राणायाम करते रहते हैं उनको इस विषय में अच्छा अनुभव होगा। मेरा शरीर तीन तालों में बन्द था पर मनीराम को बन्द करने की शक्ति किस में है—शरीर वहीं विस्तरे पर पड़ा रहा पर मनीराम दक्षिण के तमाम रिश्तेदारों में हो आये, समस्त भारत में चक्कर लगा आये, इष्ट मित्रों से मिल आये, शहर के सब

मिलने वालों के घर पर हो आये और न जाने कहाँ कहाँ गये पता नहीं–जेल के बाहर वालण्टियरों के झुंड आकर 'वन्देमातरम्, की गर्जना करते हुए मुझे सचेत कर जाते तब मेरे मनीराम जेल में वापिस आते थे—हमारी तिलकभूमि जेल से बहुत समीप है-वहाँ रात्रि को ग्यारह बजे तक बड़ी सभा हुई। वहाँ के जयघोष स्पष्टरूप से जेल में सुनाई देते थे। जब कुछ नींद आने लगी तब मैंने फिर भगवान् का ध्यान किया और निश्चय किया कि धीरता गम्भीरता से अभियोग में योग देना चाहिये—निर्भयता-पूर्वक अपना वक्तव्य कह डालना चाहिये।

कुछ देर तक नींद आई, पर बीच बीच में नम्बरदारों की चिल्लाहट जगा देती थी। कभी मेरा वार्डर आकर 'शास्त्री जी' कहकर पुकारता था और जब मैं क्या है पूछता तो वार्डर यह कहकर चल देता कि 'कुछ नहीं' 'सो जाइये'-मैं मन में सोचता कि इसने वृथा तंग किया। दूसरे दिन वार्डर ने कहा, कि क्या करें इस तरह जगाने का हुक्म है। मैंने उत्तर दिया अच्छी बात है। नम्बरदार लोग रातभर चिल्लाते रहे कि "एक-दो तीन...'ताला, जंगला, लालटैन, सब ठीक है साहब, नं० -१-२-३" प्रातःकाल ४ बजे मैं अपने बिस्तरे पर बैठ गया, ध्यान करता रहा—५ बजे भीतर ही शौच से निमट कर हाथ धोकर टहलता रहा। सबकी बारीगें खुली पर ६॥ बजे तक मेरी बारीग नहीं खुली। सब कैदी अपना सब कार्य कर चुके और अपने अपने काम पर भेज दिये गये तब वार्डर ने आकर मेरी बारीग खोली। मैं बाहर गया दस मिनट में ही स्नानादि से निवृत्त होकर फिर अपने स्थान पर आया, वार्डर ने मुझे बन्द किया—संध्या करते करते ७॥ बजे—इस तरह जेल में मेरी प्रथम रात्रि व्यतीत हुई—इस तरह जेल में प्रथम सूर्योदय देखा—

३—साहब आरहे हैं।

मैं गीता का पाठ कर रहा था,इतने में जोर से आवाज आई 'साहब आ रहे हैं।' यह आवाज बाहर के फाटक से गेटमैन ने दी थी। जिससे यह मतलब था कि भीतर के वार्डर लोग ठीक-ठीक अपने काम पर रहें। साहब से मतलब 'जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट' से है। आज रविवार का दिन था, रविवार के दिन साहब नहीं आते। वह छुट्टी का दिन माना जाता है पर मेरे कारण उनको आना पड़ा। मैं जिस बारीग में था वह ६२ फुट लम्बी और १४ फुट चौड़ी थी। भूतनाथ की तरह मैं अकेला ही इसमें रहता था। खैर साहब आये,साथ जॉइण्ट मजिस्ट्रेट भी थे। आते ही साहब बोले Come along Mr. Shastri शास्त्री जी आइये। This is more than enough for one man यह बारीग एक आदमी के लिए आवश्यकता से अधिक स्थान है। मैंने कहा नहीं मुझे इसमें आराम है। मैं जहाँ था वह बारीग दरवाजे के पास थी और आते जाते सब कैदी मुझे देख सकते थे। मैंने साहब से कहा, मुझे पुस्तकें मंगानी हैं, पत्रादि भी लिखने हैं। उत्तर मिला कि आप धार्मिक पुस्तकें रख सकते हैं, पत्र लिखिए पर मैं देखकर भेजूँगा। मैंने कहा बहुत अच्छा। साहब चाले गये—

अब लोगों से मिलने का नम्बर आया। बाबू बुलाकीराम जी मिले,फिर कक्कड़ साहब आये–आते ही आपने कहा दास पकड़े गये। मेरी डाक इनके पास ही थी। पत्रादि देखकर उत्तर मैंने लिखा दिये,

फारूखीजी, मु० इसहाक हुसैन, हुलासवर्मा, ला० कुन्दनलाल, ला० बानूमल, पं० द्वारकानाथ रैना, ला० उग्रसैन जी रईस, पं० ओङ्कारनारायण जी, ला० शङ्करलाल जी, वैद्य पं० अमरनाथ जी और बहुत से अन्य सज्जन मिले, इसको प्रेम सम्मेलन कहें, जेल सम्मेलन कहें या क्या कहें, प्रतिदिन भीड़ रहती रही। जो मिल सके वे अपने को कृतार्थ समझकर लौट जाते। जो मिल न सके वे दुखी हो कर लौट जाते। बेचारे नैशनल स्कूल के छात्र निराश ही रहे। सारा स्कूल का स्कूल मिलने के लिये चला आया था, जेलर भी क्या करता? लाचार पाँच मनुष्यों–पं० भूदेवशर्मा आदियों को मिलने दिया। मैंने सन्देश दिया कि दस हज़ार स्वयं सेवक भरती करो'—

मिलने वालों से बाहर के लोगों के सहानुभूति के सन्देश बराबर आते रहे, ज़िले भर में विचित्र लहर फैल गई, देवियों में अनुपम उत्साह संचारित हुआ, छात्रों में आवेश व उत्साह बढ़ा इत्यादि समाचार मन को उल्लास देने वाले थे। जेल के भीतर कैदियों को जब मेरा पूरा समाचार मिला तब वे भी प्रेम प्रकट करने लगे। वे मौका देखकर मेरे बारीग के पास आने का यत्न करते थे और यत्न सफल न होने पर दूर से ही हाथ जोड़ लेते थे। इनमें से नाम से मुझे प्रायः सभी जानते थे। मैं भी दस पाँच मुसलमान कैदियों को जानता था। इनमें से दो चार पहिले खिलाफत के स्वयं सेवक रह चुके थे इस समय ११० धारा में धरे थे। जेलर से लेकर साधारण कैदी तक बड़े आदर से व्यवहार करते थे। मुझे पीछे से विदित हुआ कि जिस दिन मैं पकड़ा गया उसके दूसरे दिन अर्थात् रविवार को नायब जेलरानी ने मेरे लिये फाक़ा रक्खा था और ईश्वर से प्रार्थना की थी कि मैं शीघ्र ही जेल से मुक्त हो जाऊँ। पांचा पैसे भी अपने देवता के नाम पर चढ़ा दिये थे। यह समाचार मेरे लिए आल्हादकारक था। यह हित-कामना, एक अपूर्वदृश्य था। नायब जेलर ने मुझे बुलाया और रजिस्टर में मेरे विषय में सब कुछ लिख लिया। नाम,पिता का नाम,स्थान,आयु,शरीर के विशेष चिन्ह,कपड़ा,लत्ता,पोथी पत्रा,सब कुछ लिख लिया। पीछे से कहा कि अपने बायें हाथ के अँगूठे की निशानी लगा दीजिए। मैंने कहा बेपढ़े लिखे मनुष्यों के लिये ऐसा रिवाज है, मैं ऐसा नहीं कर सकता। थोड़ी देर तक मीठी हुज्जत होती रही और मैंने अँगूठे का निशान लगा दिया। उमर भर में यह पहला ही मौका था जब कि गंवारों की तरह अंगूठे का निशान देना पड़ा। यहाँ से निमट कर मैंने १६ पत्र लिखे और जेलर साहब को दे दिए।

मैं यह बतला चुका हूँ कि यह ध्यान रक्खा जाता था कि कोई क़ैदी मेरी बारीग के पास मुझसे बातचीत न करने पावे। मैं अकेला अपनी बारीग में पड़ा रहता, कभी पुस्तक देखता, कभी टहलता, थकने पर फिर पुस्तक लेता, इसी तरह दिनकटी करता था। रविवार को दिन के दो बजे डाक्टर आये मुझे बुला ले गए, मुझे तोला गया, वज़न ११० पौंड हुआ, तन्दुरस्ती के खाने में मुझे अच्छा लिखा गया। मेरे लिये भोजन अलग बनता था, क्योंकि मैं अभी हवालाती था, बिसोली (बदायूँ) का एक ब्राह्मण पाचक भोजन बनाता था।

अध्ययन के ग्रन्थों में गीतारहस्य, उपनिषद्, शाङ्करभाष्य तथा बा० उग्रसैन जी की भेजी दो पुस्तकें थीं। सोमवार का दिन प्रायः इसी तरह गया। इस दिन भी बहुत से लोग मिले, आज रात्रि को दो बजे तक बैठकर मैंने अपना स्टेटमेंट (बयान) तैयार किया।

४—मेरी किस्मत का फ़ैसला।

मंगलवार का दिन—प्रातःकाल ही बाबू बुलाकीराम जी व बाबू हंसराज कक्कड़ मिले—मैंने स्टेटमेण्ट टाइप करने के लिए दिया। आज जेल में अजीब दृश्य था। मामूली तौर पर सबको ग्यारह बजे ही भोजन दिया जाता है पर आज दस बजे ही सबको भोजन दे दिया गया और बारीगों में ताले पड़ गये—सब क़ैदी बन्द हो गये। जेलर आकर कह गये कि मालूम हुआ है कि जेल के चारों ओर बाहर गारदें खड़ी हैं—ऐसा प्रबन्ध हो रहा था मानों किसी 'बगावती' आदमी से पाला पड़ा है। मैंने भोजन किया, पर उत्सुकता में अच्छी तरह नहीं खा सका। भगवान् का ध्यान किया कि वह मुझे बल देवे। इतने में मेरे बारीग का दरवाजा खुला—मैं क्या देखता हूँ कि जेलर साहब व पाँच सिपाही बाहर खड़े हैं। जेलर साहब ने कहा 'महाराज चलिये'। मैं बाहर आया और पाँचों सिपाहियों ने मुझे घेर लिया और हम सब इजलास में पहुँचे। मैं थोड़ी देर खड़ा रहा, पीछे एक बेंच पर बैठ गया, बीस मनुष्य दर्शकरूप में भीतर आ गये—शेष को नहीं आने दिया। ठा० चन्दनसिंह सम्पादक नार्दर्नस्टार व नव-भारत, पं० चन्दोला जी एडिटर गढ़वाली प्रेस के प्रतिनिधि थे। बा० बुलाकीराम, मि० तवकली, मि० कक्कड़, बा० चण्डीप्रसादसिंह, ठा० मनजीतसिंह, पं० दिनकर शर्मा, लाला कुन्दन-लाल भोगपुरी,—और कई भाई उपस्थित थे। मैं अपना टाइप किया हुआ स्टेटमेंट देख रहा था, इतने में सरकारी वकील मि० तलाटी आये और अदालत का काम प्रारम्भ हुआ। कोतवाल सरदार हरनामसिंह, ठा० त्रिलोकीसिंह, नायब अबदुल रसीद, हर्रावाला ग्राम का पटवारी ग्यानस्वरूप, तारघर का अंग्रेज तारबाबू इनकी गवाहियाँ हुईं—जो जो बातें मुझसे पूछी गईं मैंने सबका उत्तर दिया। पश्चात् मैंने अपने बयान पढ़े। मेरे बयान को सुन कर साहब बेचैन हुए। मुझसे पूछा गया कि आप कसूरवार हैं या नहीं Guilty or not guilty मैंने उत्तर दिया कि—not guilty according to Moral Proceedure Code मैं नैतिक शास्त्र के अनुसार अपराधी नहीं हूं। इससे मि० हरचनरोडर खिज गये और मि० तलाटी से पूछने लगे कि क्या ऐसा भी कोई क़ानून हैं या क़ानून की पोथी है, इस पर बा० बुलाकीराम जी ने अच्छा उत्तर दिया।—

कुछ देर क़ानूनी पोथियों के पन्ने लौटने के पश्चात साहब बहादुर ने मुझे सपरिश्रम १ वर्ष का कारावास और दो-सौ रु० दण्ड और रुपये न दे सकने के बदले में तीन मास और सपरिश्रम कारावास का दण्ड सुनाया। मैंने स्पष्ट यह कह दिया था कि मैं रु० नहीं दूँगा। जी में आया था कि कह दूँ कि सरकारी खजाने से ले लो, वह भी मेरा ही है पर इस तरह खिजाना अनुचित समझ कर चुप रहा। मैंने मनको एक वर्ष के लिये तैयार किया था केवल फरक यह रहा कि साहब ने तीन मास अधिक कर दिये। मैं अपनी इस बड़ी परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ या नहीं इस बात के निर्णय करने का अधिकार मुझे नहीं है—सब भाई प्रेमपूर्वक मिले 'हम भी शीघ्र आते हैं' ऐसा कह कर चल दिये : ठा० मनजीतसिंह ने पूछा 'सन्देश' ? मैंने 'काम करो,' 'अड़े रहो' किसी ने पूछा 'और कुछ' मैंने कहा 'दस हज़ार स्वयं सेवक भरती करो'। एक ने और पूछा 'और कुछ'—मैंने मुस्कराते हुये कहा, हाँ अब आप लोग जाइये और आराम कीजिये'—

लोग इधर चले गये। उधर जिस ठाठ से मैं जेली अदालत में आया था उसी ठाठ से अपने स्थान पर पहुँचाया गया। सिपाही कह रहे थे कि 'दुनियाँ में इन्साफ नहीं रहा'—जेलर बिचारा भी दुःखी था। सभी क़ैदी दुःखी थे। मैं फिर अकेला रह गया—बाहर से 'बन्देमातरम्' 'अल्ला हो अकबर' की घोर गर्जना सुनाई दी। अब तक बन्द किये हुए क़ैदी बाहर निकाले गये—अपने २ काम पर लग गये आज मुझे खबर मिली कि प्रयाग में सारी प्राविन्शियल कांग्रेस कमेटी ही पकड़ी गई-

बाहर बैठे २ जेल की रामकहानियां कितनीवार न सुनी होंगी, कितनी बार न पढ़ी होंगी। पर बाहर सुनने पढ़ने में और साक्षात् चार दीवारी के भीतर पहुंच कर अनुभव करने में बहुत अन्तर है। कोई आकर मुझे ढाढस देता था, कोई सहानुभूति प्रकट करता था। मैं उनसे यही कहता रहा कि "घबराइये मत देशसेवा का मार्ग ही ऐसा कठिन है"—अब तक मैं हवालाती समझा जाता था, पर अब क़ैदी हो गया। मैंने अपने मनीराम को समझाना प्रारम्भ किया 'मनीराम अब तुम जेल की पोशाक, कड़ा हसली पहनने के लिये तैयार हो जाओ, हाथ में तसला लेने के लिये सिर पर लाल टोपी डालने के लिये तैयार रहो' धीरे २ मनीराम कहने लगे अच्छी बात है, ऐसी जल्दी क्या है, देखो, अभी क्या होता है। सायंकाल सन्ध्यावन्दन के पश्चात्, थोड़ा सा भोजन किया। और मैं सो गया, निद्रा खूब आई पर वार्डर ने बीच में ही जगा कर निद्रा को भंग कर दिया। फिर नम्बरदारों की "एक-दो-तीन चार" की आवाज़ ने प्रातःकाल तक सोने नहीं दिया। शय्या पर पड़ा २ सोचता रहा—कभी सम्बन्धियों का ख्याल आता था, कभी मित्रों का—फिर जेल में पड़े हुए देशभक्तों का—जिस जेल में लो० तिलक हो आये क्या वह जेलखाना जेलखाना है, जिसमें लाला लाजपतराय, आदि गये, जिसमें दास पड़े हैं, नेहरू-खानदान का खानदान पड़ा है—जिसमें सहस्रों हमारे जैसे भाई पहुँच चुके हैं क्या वह जेलखाना जेलखाना है?

ऐसे ऐसे विचार आते रहे—इतने में पचासा बजा, प्रतिदिन की भांति ७ बजे तक अपने आवश्यक कृत्यों से निवृत्त हुआ। ७॥ बजे साहब आये। मुझसे पूछा अपील करोगे? मैंने कहा नहीं'। जाते जाते जेलर से कह गये (don't give him any work) इनको कुछ काम मत दो। मैंने पुस्तकों के विषय में पूछा तो उत्तर मिला—धार्मिक पुस्तकें मंगा सकते हो। साहब ने जब जेलर से कहा कि इनको काम मत दो तब वे दूर थे—मैंने वे शब्द सुन लिये थे, मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि काम क्यों नहीं दिया। मैंने सोचा कि आगे जिस जेल में भेजेंगे वहीं काम लेंगे। मेरा अनुमान था कि मुझे बरेली भेजेंगे—जेलर चुप था—सब प्रश्नों का उत्तर यही देता था कि मुझे पता नहीं, आज बाहर के कई पत्र मिले जिस में 'बधाई' आई थी—जेलखाने पर बधाई! एक अजीब ज़माना आया है!!! जेलर अख़बार नहीं दिखाते थे, कई पत्र रोक लिये जाते थे, शारदापीठ के शंकराचार्य श्री १०८ भारतीकृष्णतीर्थ जी का संस्कृत में लिखा हुआ पत्र आज तक मुझे नहीं मिला—

सजा होने के बाद भी कई लोग मिले, विशेषकर बा० हंसराज कक्कड़, भूदेवशर्मा, लाला कुन्दनलाल भोगपुरी, महाविद्यालय ज्वालापुर के विश्वनाथसिंह शास्त्री व पं० कांछीदत्त शर्मा मिले—एक

दिन सुपरिण्टेण्डण्ट ने पूछा कहाँ रहना पसन्द करोगे ? मैंने कहा यदि कोई हानि न हो तो देहरा-जेल में ही रखिये। साहब हड़बड़ा कर बोले It seems you are very popular, there are so mauy demonstrations everyday—

इसका अर्थ यह है कि आप 'अत्यन्त लोकप्रिय हैं ऐसा प्रतीत होता है, प्रतिदिन इतने जलूस निकलते हैं'—मैंने इसका कुछ भी उत्तर नहीं दिया। एक दिन मैंने शिकायत की कि मुझे चौबीसों घन्टे बन्द रक्खा जाता है, बारीग में सवेरे धूप नहीं आती, जाड़ा बहुत पड़ता है। उसने कहा 'इस तरह बारीगों में कभी नहीं सोये होंगे'—मैंने मुस्करा कर कहा 'कभी नहीं'—साहब बोला सरकार का विरोध करने का यह परिणाम है। This is the merit of opposing the sarkar. इसका उत्तर भी मैंने कुछ नहीं दिया।

५—तैयार हो जाइये।

ता० १७ का दिन, शनिवार, सायंकाल ४। बजे होंगे--जेलर ने आकर कहा कि 'तैयार हो जाइये'-मैंने कहा कहां के लिये, उत्तर मिला 'पता नहीं'—मैंने जल्दी २ सन्ध्या करली, इतने में भोजन आया और जैसे तैसे मैंने कुछ खा लिया। ध्यान बाहर की ओर था,......नम्बरदार ने आकर बिस्तरा बान्धा, किसी ने कुछ सामान उठाया,—जेलर आये और कहने लगे 'चलिये देर न कीजिये, मैंने कहा 'कहां भेजियेगा'—फिर उत्तर मिला 'पता नहीं'—पहला फाटक खुला, दूसरा खुला, मैं बाहर आया। फिर मैंने जेलर से पूछा कहां भेजोगे तब कान के पास आकर, आ—हि—स्ता, आ—हि—स्ता बोला "मु—रा—दा—बा—द।" मन में बड़ा हर्ष हुआ कि मुरादाबाद जा रहा हूँ। इधर हर्ष हुआ पर वह हर्ष एक ही या दो मिनट रहा होगा। क्योंकि मुझे ख्याल आया कि जेल की वर्दी व बेड़ी अब पहननी पड़ेगी। अब तक और बात थी। अब जरूर पक्के कैदी बनोगे—बाहर देख रहा हूँ तो एक मोटर नज़र आई, उसमें एक अङ्गरेज व दो सिपाही बैठे थे। एक जमादार मेरा वारण्ट ले रहा था—वारण्ट लेने के बाद मैं उस अङ्गरेज ड्राइवर (हिल्टन) के पास बैठ गया। इतने में लाईन इन्स्पेक्टर आया—सब के साथ हाथ मिला कर इन्स्पेक्टर से हाथ मिलाया—इन्स्पेक्टर ने सविनय कहा I am very sorry for you, you took things upon yourself. 'मैं आप के लिये बहुत दुःखी हूँ। आपने अपने सिर पर सारा मामला ले लिया'। जेलर, नायब जेलर, लेटर बाबू, डाक्टरबाबू सब के साथ 'शेक हैण्ड' हुआ और हमारी मोटर हर्रावाला की तरफ चली। उसी हर्रावाला की तरफ जहाँ कि तारीख ५ को धूम धाम हुई थी। वहीं धूम धाम हुई, वहीं जा रहा हूँ, वहीं से मुरादाबाद जाऊंगा। विचित्र संयोग है! मोटर ड्राइवर से इन्स्पेक्टर कह गया कि जल्दी ले जाओ, ड्राइवर कहता था कि मैंने हर्रावाला की सड़क देखी नहीं।

एक बात रह गई--इधर फाटक पर जब जमादार ने मुझे देखा कि मेरे बेड़ी नहीं है, तब वह हैरान हुआ कि यह कैसा क़ैदी ? अपने कपड़े पहन रहा है, बेड़ी वग़ैरा कुछ नहीं–उसने जेलर से कहा कि इस तरह बिना बेड़ी हथकड़ी के मैं इनको नहीं ले जा सकता, लाइन इन्स्पेक्टर से कहलवाइये, जेलर ने कहा कि 'ये ऐसे ही जायेंगे'—खैर टेलीफ़ोन से लाइन इन्स्पेक्टर से पूछा गया—वह दौड़ता

आया और उसने कहा कि 'नहीं इनके हथकड़ी बेड़ी नहीं पड़ेगी ऐसे ही जायेंगे'। पीछे शेरसिंह जमादार ने जब मेरा नाम सुना तब वह लज्जित हुआ, कहने लगा कि मुझे मालूम नहीं हुआ था कि आप ही शास्त्री जी हैं। इन्स्पेक्टर ने दिन में कहा था कि अफ़ीम का सन्दूक मुरादाबाद जायगा। मुझे क्या मालूम था कि आप जायंगे।" इत्यादि।

एक दिन शहर में हल्ला हुआ कि शास्त्री जी एक्सप्रेस से भेजे जा रहे हैं, यह सुनकर सैकड़ों मनुष्य देहरा स्टेशन पर पहुँचे। इस भीड़ भाड़ को रोकने व हल्ले गुल्ले से बचने के लिये अधिकारियों ने मुझे हर्रावाला स्टेशन पर बैठाना विचारा—

मोटर में अङ्गरेज ड्राइवर हिल्टन से स्वराज्य-विषयक खूब बातचीत हुई।—आखिर हम हर्रावाला स्टेशन पर पहुँचे। इस ठाट बाट को देखकर-मोटर, साथ इधर उधर पुलीस, अङ्गरेज ड्राइवर, यह सब देख कर लोग इकट्ठे हुए। मि० हिल्टनने हाथ मिलाया और कहा They won't detain you much longer, you would come back soon, आप बहुत देर जेल में न रहेंगे, शीघ्र ही वापस आवेंगे। 'गुडबाई' कह कर वह चल दिया।

थोड़ी देर में मेरी गाड़ी आई-'वन्देमातरम्' की गर्जना सुनाई दी, क्या देखता हूं कि बा० हंसराज, ला० कुन्दनलाल, कलीराम आदि बहुत से सज्जन मुझसे मिलने के लिये आये हैं। बहुत हर्ष हुआ, सुख-दुःख की कहानी कहते—सुनते हरिद्वार पहुँचे—हर स्टेशन पर कोई न कोई मिला ही। यदि मुझे देहरे स्टेशन पर चढ़ाया जाता और लोगों को खबर मिल जाती तो निःसन्देह देहरावासी सहस्रों की संख्या में एकत्रित होते। ला० कुन्दनलाल हरिद्वार से जुदा हुए—बा० हंसराज कक्कड़ ठेठ मुरादाबाद तक पहुँचे और रात्रि को १२॥ बजे मुझे जेल में छोड़ कर और सवेरे फिर आने का आश्वासन देकर चले गये..............इस तरह देहरादून छूटा, देहरादून से मुरादाबाद में आ पड़े.........

इति देहरादून पर्व

(मुरादाबाद पर्व)

१—नया जेल, नई बातें।

मुरादाबाद स्टेशन से जब जेल पर पहुँचे तब वहाँ से सन्त्री ने 'हुक्म दर, 'हाल्ट' बोल दिया। हमारे जमादार ने भी 'फ्रेंड' कहा और हम सब तांगे पर से उतर खड़े हुए। जेलर साहब को इत्तला दी गई और वे तुरन्त आ गये—रात के एक बजे का समय, सख्त जाड़ा पड़ रहा था, मुझे नंगे सिर, नंगे पैर देख कर जेलर साहब को आश्चर्य हुआ। झटपट फाटक खोला गया, मेरी पहुँच की रसीद

दी गई और जेलर साहब मुझे भीतर ले गये। एक वृक्ष के नीचे एक अंगीठी धधक रही थी, वहाँ मुझे बिठा कर कह गये कि मैं आपके लिये दुग्ध का प्रबन्ध करके शीघ्र आता हूँ। मैंने कहा जेलर साहब मुझे किसी स्वच्छ खुली बारीग में रख दीजिये। जेलर बोले और तीन असहयोगी जिस बारीग में हैं उसी में आपको रख दूँगा। यह कह कर गये और पांच मिनट में वापिस आये और कहा, 'चलिये'— मैं पीछे चल दिया, एक चौक में एक बारीग खुली, उसी में मुझे ले गये। उसमें पहुँचते ही हमारे असहयोगी भाई झटपट उठ खड़े हुये...क्या देखता हूं कि उनमें हमारे पुराने मित्र बा० बनवारीलाल एडिटर रहबर भी हैं···बड़ी खुशी हुई। दूसरे असहयोगी थे खिलाफत के प्रेसीडेण्ट सैय्यद ज़फर हुसेन एम० ए०, तीसरे महाशय थे जनाब अशगाफ साहब। उनको यह खुशी हुई कि एक साथी और बढ़ गया, मुझे खुशी हुई कि मैं अकेला न रहा। ये सब भाई दो-दो वर्ष के लिये लद गये थे। जेलर साहब ने तीन नये कम्बल ला दिये। दूध पी कर सोना चाहता था पर नींद कैसे आवे दो घण्टे परस्पर सुख दुःख की कहानी सुनते सुनाते लगभग ३-३॥ बजे निद्रादेवी ने आघेरा।

प्रातः नित्यविधि के पश्चात् मैं सोच रहा था कि मेरी सख्त क़ैद है और मेरे भाइयों की महज क़ैद है, शायद मुझे इनके साथ न रक्खेंगे। रविवार के दिन प्रायः साहब सुपरिण्टेण्डेण्ट नहीं आते पर आज मेरी वजह से आगये। इनका नाम बी० एन० व्यास है, बड़े ही भद्र पुरुष हैं, जेलर साहब का नाम है अहसान अली, ये भी सौम्य पुरुष हैं, हेड वार्डर भी हँसमुखी और मिलनसार है।

सुपरिण्टेण्डेण्ट ने आकर पूछा कि कब आये, मैंने कहा रात को, मैंने यह भी कहा कि मेरे बहुत से मित्र मिलने के लिये आये हैं, कृपया मिलने का प्रबन्ध कर दीजिये। उन्होंने मेरा टिकिट मंगा कर देखा और कहा 'अच्छा'। थोड़ी देर में मैं फाटक पर बुलाया गया और पं० शंकरदत्त जी, पं० नाथूराम जी वैद्य, पं० मंगलदेव गुप्त, बा० रामशरण एम० ए०, पं० रविशंकर जी, बा० हंसराज कक्कड़ आदि बहुत से सज्जन मिले। मिलने के पहले सुपरिण्टेण्डेण्ट ने मेरे सब पूर्व वृत्तान्त संक्षेप से सुने। मैंने कह दिया कि मैं पहले महाविद्यालय का अध्यक्ष था। सब भाइयों से मिल कर मैं लौट आया और आनन्द से रहने लगा। ठीक ११॥ बजे भोजन आया, यह असली जेल भोजन था। वही मोटी २ रोटियां और वही काली दाल आई। लोहे का तसला, लोहे की कटोरी आई। मेरे अपने बर्तन साथ थे, उसमें लेकर अन्नदेवता को नमस्कार करके प्रारम्भ में कष्टमय परन्तु परिणाम में सुखमय भोजन को करने लगा। मेरे दूसरे भाइयों को सुभीता था कि वे घर से मंगा सकते थे व मंगा लेते थे। मैं चाहता तो मैं भी मंगा लेता क्योंकि मुरादाबाद में परिचितों व हितैषियों की कमी नहीं थी परन्तु किसी को कष्ट देना उचित नहीं समझा और मन में ठान लिया कि अपने आप कोई रिआयत नहीं चाहूँगा, जेल वाले अपनी इच्छा से जो चाहें करें। प्रातःकाल बड़ी कठिनता से तीन रोटी खा सकता था सायंकाल कभी एक, कभी डेढ़ रोटी खा लेता था क्योंकि गोभी का साग बहुत ही खराब होता था, नमक के साथ रोटी खा लेता था, लगभग १२-१३ दिन यही दशा रही। मुझे काम कुछ भी नहीं मिला, जेलर साहब से पूछने पर विदित हुआ कि ऊपर लिखा गया है वहाँ से जैसा लिखा आवेगा वैसा ही होगा। कभी टहलना, पुस्तकें देखना, बातचीत, जाप आदि में ही हमारा समय व्यतीत होता था। एक दिन साहब

से मैंने कहा कि हमारा बहुत सा समय व्यर्थ जाता है। मेरे लिये लिखने के सामान का प्रबन्ध हो जाय तो मैं गीता पर कुछ लिखना चाहता हूँ। साहब ने जेलर को आज्ञा दी। दोपहर के समय पचास पृष्ठ की एक कापी सिली-सिलाई आगई,—३-४ घण्टे के लिये दवात कलम भी मिलने लगी, मुझे हर्ष हुआ कि मेरा मार्ग साफ होगया, मेरे साथी देखते ही देखते रह गये, मेरा पक्का अनुमान हुआ कि मुझसे कोई काम न लिया जायगा, और हुआ भी ऐसा ही।

इस जेल के जिस चौक में हम रक्खे गये थे, वह खुला चौक था, और बड़ी चहल-पहल रहती थी। यह चौक जेल के मध्यभाग में था अतः चहुँ ओर हमारी दृष्टि पड़ती रहती थी—यहाँ २४ दिन में जेल-शास्त्र का तत्त्व पूर्णरूप से ज्ञात हुआ।...एक दिन अचानक ऊपर से हुक्म आया कि हम लोगों के साथ पोलिटिकल कैदियों का सा वर्त्ताव किया जाय..............फिर क्या था।

भोजन बदल गया, अच्छा मिलने लगा, दूध-घी मिलने लगा, रसोइया मिला, नौकर मिला,—कभी कभी समाचार पत्र भी मिलने लगे—वहाँ के कैदियों ने उमर भर में हम जैसे कैदी कभी देखे नहीं थे। उनकी दृष्टि में हम लोग देवता थे। विशेष कर मुझसे सभी प्रसन्न थे क्योंकि मैं बहुत ही नियम-पूर्वक रहता था। मैंने मन में समझा कि अब सवा साल आनन्द से व्यतीत होंगे, खूब जाप करेंगे, खूब लिखेंगे, खूब पुस्तकें पढ़ेंगे। अब सिर्फ दो-तीन ही कष्ट थे। १—रात को बारीग में बन्द होना पड़ता था, २—उसके सामने के छोटे से चौक में ही दिन कटता था, इधर-उधर उसके बाहर नहीं जा सकते थे। ३—पत्र व्यवहार के नियम अनिश्चित थे।

ये दिन अहमदाबाद कांग्रेस के थे, वहाँ के समाचारों के लिये हम बहुत उत्सुक रहते थे—अन्त में सब समाचार मिले। ता० ७ जनवरी को अमरोहे के चार भाई १-डॉ० नरोत्तमशरण, २-वैद्य पं० नाथूराम, ३-ला० बाबूलाल, ४-नवाब जमील अहमद आगये। ता० ६ को इनका अभियोग भी जेल में हुआ। और इनको भी भिन्न भिन्न समय के लिये कारावास मिला। अब हम चार के आठ हुए। ता० ६ को पं० बालाप्रसाद जी शर्मा मिल गये थे जिनसे देहरे के सब समाचार ज्ञात हुए। ता० ८ को बा० उग्रसेन जी रईस देहरादून मुरादाबाद के दो तीन रईसों के साथ मिले। उनसे काउन्सिल, गवर्नमेंट की नीति वगैरों के पूरे समाचार मिले। आपसे यह भी मालूम हुआ कि आपने काउन्सिल से परित्याग पत्र दे दिया है। इनके साथ बातचीत से यह स्पष्ट हुआ कि हम लोगों के साथ मामूली कैदियोंका-सा वर्त्ताव न होगा। ता० ११ का दिन प्रातः ३ बजे होंगे, मैं शौच से निवृत्त हो कर भगवत्स्मरण कर रहा था, मेरे भाई सब सो रहे थे—एक नम्बरदार ने अकस्मात् आकर कहा '७ बजे की गाड़ी से बरेली जाना होगा'। आप सब लोग तैयार रहिये,—उस समय की गड़बड़ी, उत्सुकता, तर्क-वितर्क का अन्दाजा पाठक न लगा सकेंगे।

विदित हुआ कि बरेली, लखनऊ, काशी व आगरा ये चार डिस्ट्रिक्ट जेल पोलिटिकल कैदियों के लिये रक्खे गये हैं—हमको यहाँ घर सा होगया था, मुरादाबाद जेल घर के तुल्य था—"अब भगवान्

जाने आगे क्या होगा" यह सोचते हुये, सबसे मिलते मिलाते—फाटक के बाहर आ गये, गाड़ियों में बैठ गये। साथी लोगों ने स्टेशन तक बराबर "जय घोष" का सिलसिला रक्खा। स्टेशन पर आ—कर क्या देखते हैं कि चहुँ ओर से मिलने वाले आ रहे हैं। आश्चर्य हुआ कि इनको कैसे पता चला, बड़ी चहल-पहल रही। पं० शंकरदत्त शर्मा, बा० रामशरण और बीसियों भाई थे। मा० हरद्वारीसिंह तो बरेली तक साथ गये—इनसे अहमदाबाद के असली हालात सुने। पं० शंकरदत्त व बा० रामशरण जी से मैंने कहा कि 'आप लोग भी लदने वाले हैं पहिले से ही तैयार रहिये'—ये ही बा०रामशरण फिर मुझे मई में रायबरेली जेल में मिले। खैर एक सारी गाड़ी हम लोगों ने घेर ली—गाड़ी यथासमय चल दी और देखते देखते मुरादाबाद छूटा—आगे प्रत्येक स्टेशन पर कोई न कोई परिचित मिलता ही रहता था। हमको देखने वाले कहते थे कि 'अच्छे कैदी हैं, न बेड़ी न हथकड़ी, न डंडा'—हंसते खेलते ठीक दस बजे बरेली स्टेशन पर पहुँचे।

इति मुरादाबाद पर्व

बरेली-पर्व

१—शकुन अच्छा है?

बरेली स्टेशन पर हमारे स्वागत के लिये सरकार की ओर से पूरा प्रबन्ध था। लाइन इन्स्पेक्टर पूरे स्टाफ के साथ स्टेशन पर मौजूद था। हम सब लोग उतरे और फिर दो लारियों में लादे गये—लादे गये इस लिये कह रहा हूँ कि सचमुच असबाब की भाँति लादे गये थे। बैठने तक को स्थान नहीं था उसमें खड़े के खड़े ही रहे। जयघोष करते करते जेल के दरवाजे पर पहुँचे। मार्ग में लोगों की भीड़ थी ही। मेरे मित्र मास्टर हरद्वारीसिंह स्टेशन से ही पृथक् हुये, मैंने उनको सब सन्देश दे दिये। जब जेल के दरवाजे पर आये तो सामने एक टोकरी में सुन्दर डाली लगी हुई दीख पड़ी-मैंने साथियों से कहा 'शकुन अच्छा है'-थोड़ी देर में दरवाजा खुला, जेलर बा० पृथ्वीनाथ साहब, नायब देवीदयाल साहब लेटर-बाबू सदानन्दराव आदि सब मिले। दूसरा फाटक खुला, हम भीतर गये,-दूसरे व तीसरे फाटक के बीच के छोटे आंगन में दस पन्द्रह मिनिट खड़े रहे। फिर तीसरा भी खुला। वहाँ प्रथम समाचार यह मिला कि पं० हरकरणनाथ मिश्र लखीमपुर से रात्रि में ही आ गये हैं। सेण्ट्रल जेल से बाबा रामचन्द्र, पं० केदारदत्त, पं० बदरीदत्त पाण्डेय, सेठ निरञ्जनप्रसाद आदि १९ भाई भी वहीं बड़े आँगन में अपने कड़े व हसलिया कटवा रहे थे। खूब एक दूसरे से गले लगाकर मिले। मैंने मुस्कराकर कहा 'हमने आते ही तुम्हारे कड़े कटवा दिये।' ये लोग कड़े कटवाकर अपने चक्कर में चले गये। शेष रहे

हम आठ भाई। हमारे टिकिट मुरादाबाद में रह गये थे-अतः जेलर हैरान था कि इनको कहाँ रक्खा जावे-टिकट देखे बिना फर्स्ट व सेकण्ड क्लास का निर्णय करना कठिन था। पं० हरकरणनाथ, ठा० महावीरसिंह, चन्द्रभाल जौहरी, स्वा० योगानन्द फर्स्ट क्लास में थे, पं० बदरीदत्त पाण्डे आदि सेकण्ड में थे। हमारे विषय में मुरादाबाद जेल को तार गया और सायंकाल तक हम हास्पिटल में ही रहे। मुरादाबाद से तार आया कि (१) बा० बनबारीलाल (२) सय्यद जफरहुसैन (३) मु० अशफाग ये तीनों पोलिटिकल हैं शेष 'अनिश्चित' हैं। मैं और मेरे अमरोहे के चार भाई एवं हम पाँच 'अनिश्चित' रहे पर हमारे नये साहब कर्नल लैप्सले ने तार पर लिखा कि अभी सबको स्पेशल में ही रक्खो-सायंकाल को दीवानी बारीग में जहाँ पं० हरकरणनाथ मिश्र आदि रहते थे, उसमें हम चार भाई रहे, शेष हास्पिटल में ही पड़े रहे। दीवानी बारीग क्या थी अच्छा खासा कूप था-इसमें मुझे अच्छा नहीं लगा-वहाँ और भी असुविधाएँ थीं-मैंने व मिश्रजी ने रात को ही सोच लिया कि प्रातः यहाँ से अन्यत्र जाने का यत्न किया जाय। लगभग ७ बजे होंगे कि बरेली के कलेक्टर मिस्टर स्टब्स आये उनसे कहा गया कि इस कूपसदृश बारीग में लोगों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रह सकता। सुपरिण्टेण्डेण्ट करनल लैप्से की सलाह से हम सब लोग हॉस्पिटल के सुन्दर, विस्तृत, रमणीय स्थान में भेज दिये गये। इसमें सब प्रकार के सुभीते हैं-दो कूप हैं, विस्तृत मैदान है, टहलने के लिये सड़कें हैं,—इस ब्लाक में हम स्पेशल वाले ही थे शेष सैकण्ड क्लास वाले चक्कर में थे। सरकार को यह ख्याल नहीं था कि इतने लोग जेल में चले आयेंगे-उधर सरकार ने युद्ध का बिगुल बजा दिया और इधर कांग्रेस वालों ने अपना शङ्ख फूंका-देखने योग्य दृश्य था। सरकार ने हम लोगों के लिये कोई नियम नहीं बनाये थे। केवल इतना कर दिया था कि फर्स्ट क्लास वालों को १।।) रु० प्रतिदिन भोजनादि के लिये मिलता था। सेकण्ड क्लास वाले मामूली कैदियों की भाँति रहते थे। केवल उनको काम नहीं करना पड़ता था, कपड़े लत्ते भी अपने रख सकते थे और मिलाई पत्र व्यवहार में कोई भेद नहीं था। सरकार के इस भेदभाव ने आपस में बड़ी गड़बड़ी फैलाई। सेकण्ड क्लास में हड़तालों की धूम रहती थी। इसी खपखानी में बाराबंकी से ४१ और और वीर मुसलमान भाई आ पहुँचे-बुलन्दशहर से दो भाई आये १-बा० अतरसिंह, २-पं० विश्वशर्मा। ये सब सेकण्ड में ही रक्खे गये। पीछे गवर्नमेन्ट को होश आया, एक कमीशन बैठाया गया। इसमें मि० स्टब्स कलेक्टर, एक जज, कर्नल लैप्से-इन तीनों ने सबके पेशे वगैरे पूछकर निर्णय किया। उन उन स्थानों के मैजिस्ट्रेटों ने बदला लेने के विचार से बहुत सों को 'रद्दीखाते' में डाल दिया था। इस कमीशन से कुछ सुधार हुआ पर फिर भी गड़बड़ी रही। मालिक सेकण्ड क्लास में तो नौकर फर्स्ट क्लास में ऐसी घटनाएँ हुईं। सरकार ने सेकण्ड क्लास के लिये फैज़ाबाद जेल खाली किया और सबको उधर ही भेज दिया।

अब हमारी जेल में सब फर्स्ट क्लास के ही लोग रह गये। ईश्वर जाने गवर्नमेंट ने इस भेदभाव को किस आधार पर स्थिर किया। पर दूरदर्शी गवर्नमेण्ट की यह चाल बड़ी विचित्र चाल थी।

हम लोगों की बहुत बार सभाएँ हुईं, कोई कहता था कि अपने सैकण्ड क्लास के भाइयों से जा मिलो, कोई कहता कि मामूली कैदी जैसे रहो, कोई कहता कि 'मियां पड़े रहो' क्यों आराम से नहीं रहते। 'हम

फर्स्ट क्लास माँगने नहीं गये थे सरकार ने अपने आप दिया है..............कभी भी एक राय नहीं हुई। मैंने महात्मा गांधी जी के पास एक पत्र लिखा और पूछा कि आपकी क्या राय है यह भेदभाव उचित है या अनुचित। मैंने अपना समाचार भी लिखा था। जो उत्तर आया इस प्रकार है...........

Dear Nardev Shastri,

I am delighted you are annotating the Gita. Do ask for a spinning wheel as a change from the study. I am glad you are with Pt. Harkarannath. I am sure you are both doing greater service being in jail. In my opnion there should be no defferentiation between political prisoners.

Yours sincerely

M. K. Gandhi.

Bardoli 1-2-22.

यह पत्र बारदोली से आया जिसका अभिप्राय यह है।

प्रिय नरदेव शास्त्री,

मुझे हर्ष है कि आप गीता पर टीका कर रहे हैं, चर्खा भी मँगा लीजिये। मुझे हर्ष है कि आप पं० हरकरणनाथ के साथ हैं। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि आप दोनों जेल में रहकर अधिक काम कर रहे हैं...मेरी राय में पोलिटिकल कैदियों में इस तरह फर्स्ट सेकण्ड आदि भेद नहीं होने चाहियें।

आपका शुभचिन्तक—

एम० के० गान्धी

खैर मुरादाबाद जेल की भाँति बरेली में भी दिन आनन्द से कटने लगे। मुरादाबाद में दिनकटी करने का जो कार्यक्रम था वह प्रायः यहाँ भी रहा। यहाँ पत्रों का सुभीता रहा, प्रति सप्ताह एक दो पत्र भेज सकते थे। कर्नल लेफ्ले बहुत भद्र पुरुष था। प्रायः कहा करता था कि मुझे इससे मतलब नहीं कि बाहर सरकार ने क्या किया और आपने क्या किया। दो बातों के लिये मैं जिम्मेवार हूँ, १—आपकी तन्दुरस्ती २—आपके ऊपर चारदीवारी के भीतर कब्ज़ा—आप चाहें जैसा विचार रखते हों उससे मुझे क्या मतलब ? आप आनन्द से रहिये। इस जेल में पश्चिम के तेरह जिले के लिए प्रबन्ध था। भिन्न भिन्न जिलों के जेल के डेलीगेटों से मिलकर बहुत अनुभव हुआ। हम लोगों में जितना स्वार्थत्याग है, क्या २ त्रुटियाँ हैं, हम लोग कितने उन्नत हैं ये सब बातें ज्ञात हो गईं। ता० १८ को मास्टर हुलासवर्मा को छह मास का कारावास हुआ था। वह भी ता० २० की रात्रि को हमारी जेल में आये। सात आठ दिन सेकण्ड क्लास में रह कर वे भी फर्स्ट में मेरे ही पास आ गये, इनसे देहरे के समाचार मिले। फिर ला० कुन्दनलाल भोगपुरी ने सब हालात सुनाये। हमारे ब्लाक में अब बढ़ती होने लगी। शक्ति के सम्पादक पं० बद्रीदत्त पांडे भी हमारे साथ रहने लगे। अब हमारे यहां इस ब्लाक में २५ भाई हो गये।

हम लोगों को आश्चर्य हो रहा था कि प्रान्तभर में धर-पकड़ का दौर-दौरा है बरेली में सुनसान क्यों। मि० स्टब्स की मीठी नीति के कारण यहाँ अब तक कोई भी नहीं पकड़ा गया, अन्त में ता० ५-२-२२ को शान्ति भङ्ग हो ही गई और बरेली के डेलीगेट भी आ पहुँचे, कोई वकील, कोई रईस, कोई सम्पादक, कोई पण्डित, कोई मौलवी,—बा० मोतीसिंह वकील, बा० टिकेतराय, पं० बंशीधर पाठक आदि थे। लखीमपुर से भी ठा० रतनसिंह, बा० गिरिजाप्रसाद, बा० महेश्वरसहाय आ मिले।

हम लोगों ने सब प्रबन्ध अपने ही हाथ में रक्खा था। हमारी अपनी एक कमेटी थी-उसमें सब काम बाँट दिये थे कोई किचन-मन्त्री, कोई स्वास्थ्यमन्त्री, कोई कुछ और कोई कुछ, सब आराम से थे केवल चारदीवारी के बाहर नहीं जा सकते थे।

यह तो सब कुछ था किन्तु सब की आंखें मालवीय जी की राउण्ड-टेबल कान्फ्रेन्स की ओर लग रही थीं। अब सुलह हुई, अब छूटे, अब मामला बिगड़ गया, अब वायसराय नहीं मानते, अब गाँधी नहीं मानते-इसी प्रकार की खबरें आती रहीं। अन्तमें वायसराय के पत्र के पढ़ने से निश्चय हुआ कि कान्फ्रेन्स होगी। उधर बारदौली में भी तैयारी हो ही रही थी। किन्तु अचानक समाचार आया कि ता० ४-२-२२ को चौरीचौरा जि० गोरखपुर में घोर उपद्रव हुआ। ता० ११-२-२२ को बारदौली में वर्किङ्ग कमेटी ने 'सिविल नाफरमानी' का मामला मुलतवी किया। चित्त बहुत दुःखी हुआ पर 'ईश्वरेच्छा' कह कर मन को मसोस कर रह गये। 'यच्चिन्तितंतदिह दूरतरं प्रयाति'—यह उक्ति सर्वथा चरितार्थ हुई। चारदिवारी के भीतर बैठे हुए हम लोगों की मानसिक दशा का चित्र कोई भी चित्रकार नहीं खींच सकता। हम तो रहे एक ओर महात्मा गाँधी जी की क्या दशा हुई होगी ? आज (१५-२-२२)भोजन अच्छा नहीं लगा। सब ध्यान कांग्रेस के भविष्य की ओर था। क्या अहिंसात्मक संग्राम के तत्त्व को लोग नहीं समझे ? क्या भारतवर्ष में अहिंसात्मक संग्राम चल सकता है ? क्या यह संभव है कि म० गान्धी बारदौली के रण में जा डटें और जनता चुपचाप शान्ति से रह जाय ? या चुपचाप सरकारी अत्याचार देखती जाय ! कांग्रेस पीछे जा रही है कि आगे ? ऐसे अनेक विचार आये। ४-५ दिन बहुत परेशान रहे, हैरान रहे कि क्या हो रहा है। उन दिनों में माडरेट लोग जोर लगा रहे थे कि हम लोग छूट जायँ और क़ानून (१७-१, १७-२) उठ जाय और कुछ कामयाब भी हो गये थे, लायल कमीशन भी बैठने वाला था—हमको निश्चय हो गया कि न तो अब सरकार और महात्मा का समझौता होगा न हमही छूटेंगे…………

मिलाई का दिन रविवार था। इस दिन पचासों भाई आकर मिलते थे-बाहर के बहुत से समाचार इन से विदित होते थे। बात चीत से विदित होता था कि अहिंसात्मक तत्त्व को बहुत कम लोगों ने समझा है—

इस रामरौले में जेल में जी लगना कठिन हो गया तो भी मन को समझाकर मैंने 'गीताविमर्श' का प्रारम्भिक भाग लिख ही डाला-यह हाल़ हुआ ता० १६-२-२२ तक का। आगे क्रमवार मैं अपनी

डायरी लिखता हूँ जिससे पाठक सब वृत्त को यथाथरूप में जान सकेंगे—इससे क्रमवार आन्दोलन का इतिहास ज्ञात हो जायगा।

(१७-२-२२)

२४-२-२२ को देहली में ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक होगी। बम्बई में मालवीय कानफरन्स हो गई। प्रस्ताव पास हुआ कि वायसराय अपनी नीति बदलें-राजनैतिक कैदियों को छोड़ें। आज यहाँ से सब सेकण्ड क्लास राजनैतिक कैदी फैजाबाद भेजे जा रहे हैं—भाई बिछड़ रहे हैं, ईश्वरेच्छा। 'लीडर' लिखता है कि अभी वर्किंग कमेटी ने 'सत्याग्रह' मुलतवी किया है, केवल मुलतवी करने से काम न चलेगा, सिविल-नाफरमानी सवदा के लिये बन्द होनी चाहिये। ट्रिब्यून लिखता है कि 'अब तो वायसराय जो कुछ चाहते थे वह होगया, क्यों नहीं नीति बदलते'। बारदोली वर्किंग कमेटी के निश्चय से उत्साही नवयुवकों में निराशा छा गई। मरहटा की राय में सिविल नाफरमानी मुलतवी न होनी चाहिये थी। उसने "महात्मा जी की उल्टी कुलाँच" एक मजेदार लेख लिखा है।

(१८-२-२२)

सिविल नाफरमानी के विषय में महात्मा जी का लेख पढ़ा। महात्मा ही हैं।

(१९-२-२२)

बंगाल महात्मा जी के पास डेपूटेशन भेज रहा है कि यह क्या कर रहे हो ?

(२०-२-२२)

स्वा० श्रद्धानन्द काउन्सिल में जाने का प्रस्ताव उपस्थित करेंगे। आश्चर्य ! महात्मा गांधी दिसम्बर तक सिविल नाफरमानी मुलतवी कर रहे हैं। वैय्यक्तिक कानून भंग भी बन्द करेंगे। आप का लेख Shuddering with fear "भय से काँप रहा हूँ" पढ़ा। महात्मा जी की अर्जुनकी-सी दशा हो गई। अफसोस इस समय कोई कृष्ण नहीं है जो महात्मा जी के इस विषाद-योग को दूर कर देवें। काश के आज लो० तिलक मौजूद होते।

(२१-२-२२)

१—महात्मा जी के पास पत्र लिखा कि बारदौली के निश्चय से आप हमको फिर पीछे घसीट कर १९२० में ले जा रहे हैं। इससे कार्यकर्ताओं की हिम्मत टूट गई होगी। क्या आप इस तरह कभी भी सविनय कानून भंग कर सकेंगे, क्या लोग आपके अहिंसातत्त्व को समझ सकेंगे ? और एक जगह कानून भंग हो रहा हो तो समस्त भारतवर्ष शान्त रह सकेगा ? लोगों को उत्साहित करने के लिये कोई उपाय होना चाहिये।

२—सुना है बरेली सेण्ट्रैल जेल में सात मनुष्यों ने घबरा कर माफी मांग ली है। यह अधःपतन के लक्षण हैं—

३—महाविद्यालय के महोत्सव का निमन्त्रण आया, संदेश भेज दिया—

(२३–२–२२)

डांडा लखौंड के पं० ब्रजविहारी फरासी व जाखन के ठा० मानसिंह ये दो देहरे के वालण्टियर सहारनपुर जेल में हैं। बा० मेलाराम वकील व पाण्डेय भुवनेश्वरीप्रसाद को लिख दिया कि इन से मिलकर हाल लिखें। आज देहरे से खबर आई की मेरी एक वर्ष की सज़ा सख्त से महज़ कर दी गई, जुर्माना वैसा ही रहा।

(२४–२–२२)

देहरे में डिस्ट्रिक्ट कानफरन्स मार्च या अप्रैल में होगी। देहली में आज आल-इण्डिया-कांग्रेस कमेटी की बैठक हो रही हागी। पं० शंकरदत्त शर्मा फैजाबाद जेल में पहुँच गये। बा० रामशरण एम० ए० रायबरेली जेल में हैं। देहली में अखिलभारतवर्षीय हिन्दूसभा होगी। कांग्रेस के नियम बदल ने का नोटिस आया है। मैंने लिख दिया है कि जब बहुत से मेम्बर जेल में हैं तब इस तरह उनके पीछे कोई कार्यवाही न होनी चाहिये।

(२५–२–२२)

आज पता लगा है कि हमारे सुपरिण्टेण्डेण्ट करनल लैप्स्ले ता० १५ मार्च को विलायत जायेंगे। झांसी से कोई हार्पर साहब आ रहे हैं। करनल लैप्स्ले बहुत सभ्य, शिष्ट पुरुष हैं।

(२६–२–२२)

ध्यान सारा देहली में है—कोई खबर नहीं मिली। कान में शब्द पड़ रहे हैं कि हम लोग कहीं बदले जायेंगे। जेलर ठीक ठीक पता नहीं देते।

(२७–२–२२)

अचानक लखनऊ जाने की तैयारी, जेल से लेकर स्टेशन तक पोलिस व घुड़सवारों की धूम है—ऐसा प्रबन्ध है मानों हम लोग १८५७ के विकट राजद्रोही हैं–अद्भुत दृश्य है। लोगों की उत्सुकता का पारावार नहीं। आज गाड़ी भी लेट हो गई—रात की १०॥ बजे की गाड़ी ११॥ बजे छूटी। जेलर वगैरे सब लोग प्रेमपूर्वक मिले। नायब देवीदयाल जी, लेटरबाबू सदानन्दराव जी आदि सब बड़े मिलनसार लोग हैं। नायब साहब लखनऊ तक हमारे साथ ही जा रहे हैं—

(इति बरेली पर्व)

लखनऊ पर्व

(२८–२–२२)

हमारी गाड़ी प्रातः दस बजे लखनऊ स्टेशन पर पहुंची। ११ बजे तक स्टेशन पर ही रहे क्योंकि सवारियों का पूरा प्रबन्ध नहीं था। १२ बजे सब लोग जेल के दरवाजे पर पहुँचे। एक घण्टा वहाँ बाहर ही रहे, फिर जेलर साहब एक एक का नाम पुकारते गये और हम भीतर नम्बर से जाते गये।

यहाँ यू० पी० भर के राजनैतिक कैदी विद्यमान हैं—और अभी कुछ लोग आगरे में पड़े हैं—थोड़े दिनों के पश्चात् वे भी आवेंगे। यहाँ प्रायः सभी परिचित मिले, वर्षों से बिछड़े हुये बाबा राघवदास जी यहीं मिले—यहाँ प्रायः सभी नियमों में परिवर्त्तन है। बरेली में हमारा खर्च ४५) प्रति मनुष्य था। अब इससे आधा कर दिया गया है। चाहे कितने ही पत्र आवें पन्द्रह दिन में एक ही पत्र मिलता है और एक ही पत्र लिख सकते हैं। यंग-इंडिया को छोड़ कर शेष समाचार पत्र मिल जाते हैं—हमारे ब्लॉक में प्रो० कृपलानी, बा० सम्पूर्णानन्द सम्पादक 'मर्यादा', पं० शिवविनायक मिश्र आदि लोग हैं। श्री पं० मोतीलाल जी आदि सिविल ब्लॉक में हैं।

(१-३-२२)

बस्ती के बा० विश्वनाथ मुकर्जी आदि से वर्त्तमान आन्दोलन के विषय में बातचीत। जेल-सभा बनाई गई, हमारी बारीग की ओर से प्रो० कृपलानी, पं० बद्रीदत्त पाण्डेय व मैं प्रतिनिधि नियत हुए हैं।

(२-३-२२)

आज जेल-सभा हुई, लोगों का अजीब ढंग है, बहुत समय गया पर कुछ भी निर्णय न हो सका। लीडर में महात्मा गाँधी जी व एक संवाददाता की बातचीत पढ़ी। आज यहाँ के अधिकारियों की ओर से व्यवहार में कुछ सुभीता हुआ। आज से अपना लीडर मांगने लगा हूँ। पहले मुझे केसरी व मरहटा मिलते थे पर अब नहीं देते।

(३-३-२२)

शरीर स्वस्थ नहीं है—आज 'गीता' के विषय में कुछ लिख सका। दो बजे पं० जवाहरलाल नेहरू, बा० मोहनलाल सक्सेना, जनाब शौकतअली बी० ए०, एल्० एल्० बी० आदि सात महानुभाव छूटे। चलो छूटने का श्रीगणेश हुआ। बारीगों के दरवाजे सदा बन्द रहते हैं, सब अपने अहाते में पड़े रहते हैं—कोई किसी से मिलने नहीं पाता। मिलाई के दिन गेट पर सबका मिलना हो जाता है।

(४-३-२२)

काशी के शेष ७५ आगये, मैनपुरी से ६ आये। ब्र० प्रभुदत्त फैजाबाद से फिर यहाँ लौट आये—उससे फैजाबाद जेल के समाचार मिले। अधिकतर वहाँ दंगई लोग एकत्रित हुए हैं। रायबहादुर मिट्ठनलाल सुपरिण्टेण्डेण्ट भद्र पुरुष हैं। पं० शंकरदत्त का वजन २८ पौंड घट गया।

(५-३-२२)

डिपुटी कमिशनर आये थे सब दशा देख गये। सोती जगदीशदत्त व बा० विश्वामित्र वकील बिजनौर से बातचीत। बा० राघवदास स्पेशल क्लास में भी साधारण कैदी की भांति रहते हैं। भिन्न प्रकृति वाले लोगों का अच्छा खासा समुदाय एकत्रित हुआ है। देहरे के स्वामी ब्रह्मानन्द भारती भी यहीं इसी जेल में आ गये। बा० बुलाकीराम जी के पत्र से विदित हुआ कि देहरे में अच्छा काम हो रहा है।

(६-३-२२)

कल से सेकण्ड क्लास वालों ने खान-पान की हड़ताल बोल दी है। बड़ा उधम है, अज्ञता की पराकाष्ठा है, डा० मुरारीलाल जी लिले। आज सुना जा रहा है कि १८-१ वाले सब छूटेंगे व १७-२ वालों की सिर्फ ६ मास की कैद रह जायगी। काशी ब्लॉक के लोग (४१) मामूली झलरा-रोटी लेते हैं। आज सभा में निश्चय हुआ कि फर्स्ट क्लास वाले का कर्त्तव्य है कि वह अपने भाग का एक छटांक दूध व आध छटांक घृत सैकण्ड क्लास वालों के लिये दे देवे।

(७-३-२२)

हड़ताल समाप्त हुई। देहरे की जिला कानफरन्स ईस्टर में होगी। आज बांदे के बाबा जीवन-दास माफी मांग कर छूटे, साश्चर्य खेद है! असहयोगियों की दशा अच्छी नहीं—

(८-३-२२)

गीता लिखने का काम दुबारा प्रारम्भ—

(९-३-२२)

सुलतानपुर वालों की सजा सिर्फ ६ मास करदी गई। विदित होता है इसी प्रकार औरों की सजाएँ भी घटाई जायेंगी।

(१०-३-२२)

आज क़ैद के तीन मास समाप्त हुए।

(११-३-२२)

सायंकाल ७॥ बजे महात्मा गांधी जी के गिरफ्तार होने की खबर आई-कारागार में एक बिजली-सी दौड़ गई। जिधर देखो 'जय जय' है, जिधर देखो यही चर्चा है। लोगों को अब आशा हो गई कि "कुछ न कुछ कर जायेंगे"—कल पूर्ण व्रत होगा, कल से होली है। महाविद्यालय ज्वालापुर व कांगड़ी गुरुकुल के उत्सव धूम-धाम से हो रहे होंगे।

(१२-३-२२)

माण्टेगू ने परित्याग पत्र दिया व स्वीकृत भी हो गया। ईश्वर रक्षा करे। महात्मा गांधी पर १२४ अ० लगाया गया है। देश में सर्वत्र शान्ति है। नं० ३-४ बारीग में कुछ उद्धत लोगों ने गड़बड़ मचा रक्खी है इसलिये आज हम सब एक घण्टे तक असमय बन्द रक्खे गये। जब हमारी बारीग का दरवाज़ा खुला तब प्रो० कृपलानी वगैरा ने उनको समझाया—कुछ शान्ति हुई, चार आदमी बारीग में बन्द नहीं हुए।

(१३-३-२२)

जेल में विचित्र होली मनाई गई। प्रातः ३ बजे से ही आनन्द, उत्साह का प्रारम्भ है। प्रातः ४ बजे होली जलाई गई। सब भाई भेद-भाव को भूल कर सम्मिलित हुए। मैंने तो २३-२४ वर्ष

के पश्चात् होली खेली है। यज्ञ हवन के पश्चात् शाही जी का "खिन्न न होना प्यारे देश" आदि सुमनोहर गीत हुए, आज दिन भर यही रामरौला रहा। हिन्दु मुसलमान आदि सभी रंगे गये और ऐसा प्रतीत होता था मानो रंगा हुआ भारतवर्ष नाच रहा है। आज चक्कर में कोई अधिकारी नहीं आया। आज की रसद कल ही बाँट दी गई थी। सुना गया कि लायल साहब की रिपोर्ट जेल में आई है।

(१४-३-२२)

हमदम और आनन्द के सम्पादक जेल के विजिटर नियत हुए हैं। आज इन्स्पेक्टर जनरल जेल के पास लगभग १५० मनुष्यों का हस्ताक्षर-युक्त पत्र इस विषय का गया कि बारीगों में सोने में बहुत गर्मी होती है अतः यदि ८-१० दिनतक रात्रि को बारागों के खुले रहने का प्रबन्ध न किया जायगा तो उपद्रव की सम्भावना है, कृपया आकर मिलिये। करनल क्लीमेएट का वर्त्ताव अच्छा नहीं है।

(१५-३-२२)

महात्मा गांधी जी का मुक़द्दमा सेशन-सुपुर्द हुआ। महात्मा जी माडरेटों के साथ उदारता का व्यवहार करने के लिये लिख रहे हैं। मि० माएटेगू का करारा लेक्चर पढ़ा। ब्रिटिश मन्त्रि-मण्डल की पोल खुल रही है।

(१६-२-२२)

अहमदाबाद में वर्किंग कमेटी होगी, हकीम अजमलखाँ साहब, गांधी जी के स्थान में नियत हो गये।

(१७-३-२२)

मालवीय जी अहमदाबाद पहुँचे। लीडर में पं० बनारसीदास चतुर्वेदी का पत्र पढ़ा उससे महात्मा जी की गिरफ्तारी का यथार्थ वृत्त मिला। लीडर की टिप्पणियों को पढ़ कर ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है कि उसका एडीटर म० गांधी व असहयोगियों से चिढ़ा बैठा है। फैजाबाद से खबर आई है कि इस मास के अन्त तक वहाँ के २०० कैदी छूट जायेंगे क्योंकि थोड़ी २ मियाद के क़ैदी हैं।

महात्मा गांधी को जब समाचार मिला कि बाहर सुपरिएटेएडेएट वारंट लिये खड़ा है तब वे तुरन्त उठे, आश्रम के लोगों को बुलवाया, सब ने मिलकर यह पद्य गाया—

गीत आगे है।

-: गाँधी जी का प्रिय गीत :-

वैष्णवजन तो तेने कहिये, पीर पराई जाने रे।
पर दुःखे उपकार करे तो ए,मन अभिमान न आणे रे॥
सकल लोकमां सहुने बन्दे, निंदा न करे केनी रे।
वाच काछ मन निश्चल राखे, धन धन जननी तेनी रे॥
सम दृष्टि ने तृष्णा त्यागी, पर स्त्री जेने मात रे।
जिह्वा थकी असत्य न बोले, पर धन न झाले हाथ रे॥
मोह-माया व्यापे नहीं जेने, दृढ़ वैराग्य जेनां मनमां रे।
रामनाम शु ं ताली लागी, सकल तीरथ मनमां रे॥
वण लोभीने कपट रहित छे, काम क्रोध निवार्या रे।
भणै नरसैंयो तेनु ं दर्शन करतां, कुल एकोत्तर तर्यां रे॥

यह नरसी मेहता का गीत है, अफ़रीका के सत्याग्रह में भी गाया गया था जबकि पहला जत्था जेल में गया था।

(१८-३-२२)

अपने नित्य नियम में कोई बाधा नहीं है। जप भी नियम-पूर्वक चल रहा है। गीताविमर्श का काम चल रहा है।

महात्मा गान्धी कहते हैं कि जितनी लम्बी लम्बी सजाएं होंगी असहयोग उतनी शीघ्र गति से चलेगा। अभी धर-पकड़ जारी है। भूमिहार डेपूटेशन के उत्तर में वायसराय ने कहा है कि क्या करें हम लाचार हैं, पढ़े लिखों को पकड़ना पड़ता है। महात्मा जी को छह वर्ष की कड़ी सज़ा हुई, आखिर गवर्नमेण्ट ने बदला ले ही लिया। तिलक महाराज के साथ भी यही गति थी। भारत हड़बड़ा कर जगेगा। कुछ काल तक तो निराशा रहेगी ही। महात्मा जी की यह ख़बर रात्रि के ६॥ बजे मिली—आज शायद ही कोई सोया हो।

१९-३-२२

केशरी में 'महात्मा गांधीनां पकड़ले' यह लेख मननीय है, गान्धी जी के विचार भी पढ़े। इस जमाने के युधिष्ठर प्रतीत होते हैं। उनके उसूल ठीक हैं पर क्या इस तरह देश में काम चल सकेगा? वे स्वयं कहते हैं कि असहयोग में चाहे थोड़े मनुष्य हों पर अच्छे हों। उनका कहना है कि अत्याचाररहित असहकारिता के पीछे चलो या प्रतियोगी सहकारिता का आश्रय लो। दूसरी गति नहीं। उनका दो मार्च का लेख 'शान्त रहो' दुःखपूर्ण है। गान्धी जी ने इतना स्पष्ट कभी नहीं लिखा था। बिचारे साधु पुरुष हैं। उनके लिये भी नया अनुभव है। अफ़रीका व भारत के वातावरण में बड़ा भेद है। परमात्मा की कृपा हुई कि गान्धी जी के सिर से छह साल के लिये भार उतर गया। देखें अब लोग पीछे क्या करके

दिखाते हैं। वे प्रायः अपने व्याख्यानों में कहा करते थे कि उस दिन मुझे सच्चा स्वराज्य मिलेगा जब कि मैं जेल में रहूँगा। निःसन्देह उनको छह साल के लिये व्यक्तिगत स्वराज्य मिल गया। भारत का सामुदायिक स्वराज्य जब कभी मिले, अभी तो बहुत देर है। महात्मा गांधी जी आदर्शवादी हैं। कर्मयोगी नहीं हैं। चौराचौरी आदि घटनाओं की जिम्मेवारी अपने ऊपर लेना बतला रहा है कि कर्मयोगी नहीं हैं। हाँ साधु सन्तों में उनकी गिनती हो सकती है। खैर लोकमान्य तिलक के पश्चात भारत को इतने स्वल्पकाल में इतना आगे खींचने वाला कोई नेता नहीं मिला। वे कहते हैं अन्दाजा चूक गया। ईश्वर के परमानुग्रह से गान्धी जी के दिन जेल में शान्ति से कटें, और इधर भारत अपने कर्त्तव्य को समझकर शान्ति से क्रान्ति करने में संलग्न हो जाय। महात्मा गाँधी का उद्देश्य ही "शान्ति से क्रान्ति" है।

२०-३-२२

१—देहरे के दो वालण्टियर पं० व्रजबिहारी व मानसिंह सहारनपुर जेल में पहुँचे।

२—महात्मा जी ने अपना अपराधी होना स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा कि यदि मैं खुला रहा तो फिर सरकार के विषय में अप्रीति उत्पन्न कराऊँगा। जज ने प्रशंसा की और कहा कि मेरा काम हलका कर दिया। बारह वर्ष पूर्व लोकमान्य तिलक के विषय में ठीक ऐसी ही परिस्थिति उत्पन्न हो गई थी। वे छह वर्ष के लिये भेज दिये गये थे, आपको भी उतना ही दण्ड देता हूं। पर यदि देश में शान्ति रही तो आपको पूर्व ही छोड़ देने की शिफारिस करने में मुझे बड़ा आनन्द आयेगा। गांधी जी ने कहा कि लोकमान्य तिलक का उल्लेख करके आपने मेरा गौरव बढ़ाया है। ला० शंकरलाल को १॥ वर्ष का कारावास व १०००) रु० दण्ड हुआ। सज़ा सुनाने के पूर्व गान्धी जी ने कहा था कि तुम्हारे अधिकार में जितनी सजा है उतनी दे डालो, दया माया मत दिखाओ। जज ने कहा कि न्याय का व अपराध का ठीक तुला पर तोलना अत्यन्त कठिन कार्य है।

२—कटारपुर के भाई सेण्ट्रल जेल में अच्छी तरह हैं। बेरिस्टर ए० पी० सेन आये थे। सब दशा देखकर चले गये।

२१-३-२२

आज इन्स्पेक्टर जनरल आने वाले हैं। मि० सी० आर० दास बीमार हैं। महात्मा जी ने कहा कि यदि लोगों ने उत्पात किया तो वे आयुभर जेल में ही रहना पसन्द करेंगे।

२२-३-२२

स्वा० योगानन्द जी आज छूटे—करुणापूर्ण दृश्य था। बा० सीताराम, बा० छैलबिहारी मेम्बर लेजिस्लेटिव काऊन्सिल से बातचीत हुई। गवर्नमेण्ट तन रही है, प्रश्नों के उत्तर भी नहीं देती।

२३-३-२२

१—गीता हिन्दी भाषानुवाद लिखा गया है।

२—महात्मा जी का पूरा बयान पढ़ा, ठीक है, उनको यरवड़ा जेल में भेज दिया है।

३—आज एक मामूली कैदी ने मुझ से पूछा कि 'आप क्या चोरी में आये हैं'—मैंने मुस्कराकर कहा

'हाँ डाके में आये हैं'—क़ैदी बहुत खुश हुआ और इसलिये भी खुश हुआ हो कि उस जैसे चोर अब पढ़े लिखे बाबू भी बन गये हैं।

२४-३-२२

यहाँ का जलवायु बहुत ख़राब है। बरेली में स्वास्थ्य अच्छा रहता था, यहाँ गर्मी अधिक है। यहाँ ठीक-ठीक पचता नहीं। टहलने का स्थान भी नहीं। स्वच्छता नहीं, प्रबन्ध नहीं,—मच्छर बहुत हैं।

२५-३-२२

१—देहरा जिले की कान्फ्रेंस ईस्टर में होगी। पं० हरकरणनाथ मिश्र प्रेसिडेण्ट चुने गये।

२—आज से रात को बारीगें खुली रहेंगी—मि० क्लीमेण्ट स्वयं कह गये।

२६-३-२२

स्वामी नारायण मिले, हिन्दूसभा व कांग्रेस समाचार जाने—बारदौली का किस्सा सुना। पं० पद्मसिंह शर्मा मुरादाबाद में हैं और पूर्वापेक्षया अच्छे हैं, ईश्वर का अनुग्रह हुआ। सीतापुर के बा० शम्भुनाथ जी से बातचीत हुई, सीतापुर में घोर अत्याचार हो रहे हैं—अवध में एक्का—मूवमेंट ज़ोरों पर है।

२७-३-२२

महाविद्यालय से समाचार आया कि महोत्सव सानन्द समाप्त हुआ। प्रो० राममूर्त्ति आदि आये थे। खूब धूम रही।

हरदोई के भाई आर्डिनरी कैदी कर दिये गये। सरकार ने दिक् करने का यह नया प्रकार निकाला है। प्रविन्शियल कांग्रेस कमेटी में संयोजक की कार्यपद्धति स्वीकृत हुई।

२८-३-२२

कल संवत्सर १९७९ का प्रारम्भ है-संवत्सर का नाम है 'भाव' ईश्वर की कृपा से वह भावपूर्ण हो।

जब से जेल आये हैं तब से आज एक लक्ष गायत्री का जप समाप्त हुआ। उपनिषदों के दश पारायण व गीता के तीस पारायण हुए।

अब यह पुराना संवत्सर जा रहा है, जेल के अनुभव से गीतावर्णित सात्त्विक, राजस, तामस का स्वरूप समझ में आ गया। विश्वरूप में विश्वदर्शन का अच्छा अवसर हाथ आया।

'प्रकृतिं यान्ति भूतानि, निग्रहः किं करिष्यति' इसका पूर्ण अनुभव मिला।

२९–३–२२

भाव संवत्सर १९७९

बुधवार–चैत्र शुक्ला प्रतिपद्

यह भाव नामक संवत्सर हमें सबको सुखकारक हो और हम शीघ्र ही स्वराज्य को प्राप्त कर सकें। कारागार में रहने वाले पुण्य देशभक्तों के भाव सबके कल्याण करने वाले हों। अधिकारी लोग अधिकार-मद में लिप्त हैं, प्रजापालनरूपी कर्तव्यपथ से भ्रष्ट हो रहे हैं, नीतिशून्य होकर प्रजा के सुख-दुःखों की कोई परवाह नहीं कर रहा है, भाव संवत्सर इनके भावों को शुद्ध करे। हे भाव ! मैं तुम्हारे भावों को जानने के लिये उत्सुक हो रहा हूँ। तेरा स्वागत करता हूँ, तेरा भला हो और हमारा भी भला हो। देखो भाव ! पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर सर्वत्र भद्र समाचार पहुँचाओ—

भावो भवतु भव्याय परिपूर्णो मनोरथैः।
भवस्य कृपया तूर्णं स्वराज्यं प्राप्नुयाम वै ॥१॥
कारागारे निवसतां पुण्यानां देशवासिनाम्।
भावा भवन्तु भव्याय सर्वेषां स्वत्त्वकाङ्क्षिणाम् ॥२॥
स्वाधिकारप्रमत्तोऽयमधिकारिजनोऽखिलः।
प्रजापालकनकर्त्तव्यपथभ्रष्टः पराङ्मुखः ॥३॥
अनीतिर्न गणयति प्रजादुःखहितानि च।
भावः प्रजापतिस्तस्य, भावान् परिशोधयेत् ॥४॥
भाव ! भावान् परिज्ञातुमुत्कोऽस्मि भगवन् ! तव।
उद्युक्तः स्वागते तेऽहं स्वागतं भद्रमस्तु ते ॥५॥
भद्रं वद दक्षिणतो भद्रमुत्तरतो वद।
भद्रं प्राच्यां प्रतीच्यां च, भद्रं प्रवद सर्वतः ॥६॥

॥ ॐ तत्सत् ॥

३०–३–२२

फैज़ाबाद जाने की ख़बर गरम है, इससे साथियों में सनसनी फैल रही है। यह सरकारी नया तरीक़ा है कि फर्स्टक्लास वालों को सैकण्ड व थर्ड में भेज रही है। बेचारे हरदोई के भाई थर्ड में गये।

पाण्डेय चन्द्रदत्त जैसे सोलह-सत्रह वर्ष के बालक को एक वर्ष की कैद, आश्चर्य है ! ऐसे अल्प-वयस्क लड़कों को आन्दोलन में भाग न लेना चाहिये।

३१–३–२२

आज ३८ भाई छूट रहे हैं। फर्स्ट क्लास वाले दूसरी क्लासों में भेजे जा रहे हैं। खेद है कि पचासों भाई अपना कार्यक्रम ठीक नहीं रखते, इस तरह अपनी आदतों को स्वयं खराब कर रहे हैं।

ऐसे अमूल्य समय का इस तरह नाश हो रहा है, कहते हैं कि जेल तप करने के लिए नहीं है। है किस लिए ? भगवान इनको सुबुद्धि देवे।

१-४-२२

महाभारत का उद्योग पर्व समाप्त। कृष्ण का हस्तिनापुर को दूत बनकर जाना, कौरवसभा के भाषण आदि प्रकरण मनन करने योग्य हैं। वर्त्तमान दशा पर सब बातें संघठित हो रही हैं। जिसने कभी महाभारत नहीं पढ़ा वह उसकी अनुपम को कभी भी नहीं समझ सकता।

यदिहास्ति तदन्यत्र, यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।

यह उक्ति सर्वथा सत्य है। इसका अभिप्राय यह है कि जो महाभारत में है वही सर्वत्र है और जो बात इसमें नहीं मिलेगी वह फिर संसार में कहीं भी नहीं मिलेगी।

२-४-२२

विद्यार्थी श्री० गणेशशङ्कर जी से बातचीत हुई। खबर आई है कि ३०० भाई मियाद पूरी करके फैज़ाबाद से छूट गये।

३-४-२२

देहरे में ज़िला कान्फ्रेन्स का काम खूब हो रहा है, बम्बई में मालवीय जी का लेक्चर बहुत अच्छा हुआ। खबर उड़ रही है कि गान्धी जी को धारवाड़ जेल में ले गये।

४-४-२२

कल बहुत से भाई फैज़ाबाद जा रहे हैं और फैजाबाद से भी इधर आने वाले हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि गवर्नमेन्ट की नीति (हम लोगों के विषय में) निश्चित नहीं हुई है। आज कुछ है, कल कुछ है, परसों कुछ है। प्रतिदिन नये नियम !! आयरलैण्ड में शान्ति हो गई, उन्हें पूरा स्वराज्य तो नहीं, स्वराज्य का छोटा भाई मिल गया। आयरलैंड फ्रीस्टेट हो गया। देखें भारत का भाग्य कब चेतता है।

५-४-२२

महात्मा जी को धारवाड़ ले जाने का समाचार ठीक नहीं था, वे एरवड़ा (पूना) जेल में ही हैं। आज हमारी जेल से २६ भाई छूटेंगे। कल से १३ तक राष्ट्रीय सप्ताह मनाया जायगा। आगरा जेल से बीस भाई आये-सब से मिलकर बड़ा आनन्द हुआ। स्वा० भास्करतीर्थ,प्रो० रामदास गौड़,डा० लक्ष्मीदत्त आदि सज्जन हैं, शेष फिर आवेंगे। गीताविमर्श की भूमिका लिखी गई।

६-४-२२

आज ४०-४५ भाई छूटेंगे। आज उपवास व्रत आदि है। आज राष्ट्रीय सप्ताह मनाया गया। प्रातः मेरी कथा हुई। सायंकाल व्याख्यानादि हुए। तिलक स्वराज्य फण्ड एकत्रित हो रहा है।

७-४-२२

श्री राजगोपालाचार्य म० जी से एरवड़ा जेल में मिले साधारण वर्त्ताव है। आज हमारे बाड़े वालों की सभा हुई-बड़ी खप्प रही है।

८-४-२२

१८ ता० को सर्वत्र हड़ताल रहेगी। मौ० मुहम्मदअली विजापूर जेल में हैं, बर्त्ताव साधारण कैदियों का-सा है। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध कादम्बरीकार स्व० हरिनारायण आपटे लिखित 'उषःकाल' मँगाया है। ऐसी अनुपम ऐतिहासिक कादम्बरी देखने में नहीं आई।

आज आगरे से दूसरा जत्था आया। इसमें पं० गौरीशंकर मिश्रादि हैं। आज जेल में लोगों ने खूब उधम मचाया।

९-४-२२

देहरादून से समाचार मिला कि वहाँ अच्छा काम हो रहा है। पं० प्रयागदत्त जी, पं० रासबिहारी तिवारी, पं० व्यासदेव शास्त्री आदि मिले।

१०-४-२२

श्री ब्रह्मदेव शास्त्री काव्यतीर्थ सम्पादक ब्राह्मण सर्वस्व से बातचीत हुई।

११-४-२२

आज फिर सुना जा रहा है कि ५० भाई फैजाबाद जायेंगे, जेल की गप्पों के मारे नाक में दम है।

१२-४-२२

आज दुर्जन नामक एक पासी कैदी ने आकर कहा कि म० गांधी व उनका एक साथी बिल्ली का रूप धारण कर एरवड़ा जेल में से निकल गये। लखनऊ आने वाले हैं। बड़ी दिल्लगी रही। यह दुर्जन पासियों का गुरू है। चोर भाइयों को शकुन बतलाने के अपराध में दस साल की सजा लेकर आया है।

आज मैंने जेल कमेटी से परित्याग पत्र दे दिया। मेम्बरों का डेपूटेशन आया, बातचीत हुई।

१३-४-२२

लाहोर में मालवीय जी का व्याख्यान बन्द। पंजाब में दमन जोरों पर है।

१४-४-२२

मालवीय जी ने उद्योग किया कि व्याख्यान दिया जाय। डिप्टी कमिश्नर से पत्र व्यवहार हुआ। मालवीय जी को फिर नोटिस मिला।

१६-४-२२

देहरादून में १४४ लग गई। श्री शंकराचार्य शारदापीठ पं० हरकरणमिश्र, पं० जवाहरलाल आदि पहुँच गये। देखें क्या होता है, कान्फ्रेन्स होती है या रुकती है, मौ० हसरत मोहानी पकड़े गये। उनको

अहमदाबाद ले गये हैं। स्वा० नारायणादि मिले। बाहर के लोगों में निराशा छा रही है। सरकार की दमन नीति की धूम है। पं० मोतीलाल नेहरू के आजकल छूटने की खबर उड़ रही है।

१७-४-२२

मौ० हसरत मोहानी पर १२१-१२४ धाराएँ लगाई हैं। दासबोध अद्भुत ग्रन्थ है। मरहठी दासबोध का पारायण हो रहा है।

१८-४-२२

आज गांधीदिन है-सब उपवास कर रहे हैं। सायंकाल को सभा करने के पश्चात् उपवास तोड़ा जायेगा।

१६-४-२२

लीडर में देहरादून का हाल आया। पं० जवाहरलाल जी की प्रेरणा से देहरे में कान्फ्रेन्स न हो कर डोईवाला में हुई। प्रो० राममूर्ति भी सम्मिलित थे। डोईवाला के भाग्य जगे। देहरे के दो पत्र आ रहे हैं उनमें परस्पर विरोधी समाचार हैं। कोई कहता है काम हो रहा है, कोई कहता है नहीं हो रहा।

२०-४-२२

कर्नल वेजवुड का भाषण पढ़ा, स्पष्टवक्ता हैं—यू० पी० व पंजाब में दमन की मात्रा अधिक है। मालवीय जी पंजाब में मासान्त तक रहेंगे। देहरे में प्रोसेशन के समय किसी दुष्ट ने शंकराचार्य जी पर जूता फेंका और गोली चलाई। ईश्वर की दया हुई कि पं० हरकरणनाथ मिश्र व श्री शंकराचार्य जी को कोई चोट नहीं आई, दोनों एक ही गाड़ी में बैठे थे।

२१-४-२२

मालवीय जी पर सियालकोट में १४४ लग गई। लीडर ने अच्छी टिप्पणी लिखी है। न्यूयार्क मिशन ने भारत शासन पर एक सुन्दर लेख निकाला है। स्वतन्त्र देश के अखबार खूब स्वतन्त्रता से लिखते रहते हैं।

वनपर्व देखा जा रहा है इधर जेलपर्व में हम देख रहे हैं कि न सरकार की ही नियत अच्छी है और न हमारे जेल बन्धुओं की दशा ही अच्छी है।

२२-४-२२

बड़ी कांग्रेस गया में होगी। धार्मिक दृष्टि से स्थान अच्छा है पर वैसे शहर बहुत खराब है। मद्रास के गवर्नर लार्ड विलिंगडन ने कर्नल वेजवुड के व्याख्यान का उत्तर दिया है। जिनेवा कान्फ्रेन्स में रूस-जर्मन सन्धि के कारण बड़ी हलचल मच गई है।

कृष्ण की तस्वीर लटकाने के मामले में ५-६ दिन से बड़ी गड़बड़ मच रही है, मि० रंगा अय्यर सेण्ट्रल जेल भेज दिये गये। दो एक फैजाबाद गये। दोष हमारे भाइयों का भी और कर्नल क्लीमेण्ट का भी। इस विषय में पं० मोतीलाल नेहरू से भी बातचीत हुई।

२३-४-२२

देहरादून में जिसने गोली चलाई वह डूंगे के चौ० समशेरसिंह का पुत्र है। श्री शंकराचार्य जी ने बड़ी शान्ति से काम लिया।

२४-४-२२

श्री० पं० शिवविनायक मिश्र छूटे, बनारस में बा० भगवानदास जी पहले ही छूट गये थे। लीडर ने म० गांधी जी के साथ व्यवहार के विषय में बहुत अच्छा लेख लिखा है, कभी कभी लीडर बुद्धि से भी काम लेता है। कभी २ ऐसी बुरी टिप्पणियां लिखता है कि जिससे प्रतीत होने लगता है कि यह पूर्वजन्म में असहयोगियों का वैरी रहा होगा। 'इण्डिपेण्डएट' फिर जन्म लेगा। 'स्वराज्य' फिर चमकेगा।

२५-४-२२

सेण्ट्रल जेल में भी रंगा अय्यर को अच्छी तरह रक्खा है। असहयोगी लोग जेल में आकर क्यों इतने च्युत हुए, समझ में नहीं आता। भूमि का प्रभाव !!!

मालवीय जी ने गुजरांवाले में प्रभावशाली व्याख्यान दिया। जहाँ जाते हैं कैदियों से मिलते हैं।

आज फिर अफ़वाह है कि ५० कैदी सेकण्ड क्लास बना कर फैज़ाबाद भेज दिये जायँगे।

२६-४-२२

सख्त गर्मी है, ज्येष्ठ में क्या दशा होगी! पं० मोतीलाल नेहरू चक्कर में आकर हम सब से मिल गये। छूटने वाले हैं, छुटकर अल्मोड़ा जायंगे।

२७-४-२२

वनपर्व व विराटपर्व समाप्त। सुना है हसरत मोहानी अपने मुकदमे के समय मौनव्रत धारण करेंगे। अधिक गर्मी के कारण हमारे पर्वतीय भाई बीमार हो रहे हैं।

२८-४-२२

म० गान्धी के साथ बहुत बुरा बर्ताव हो रहा है। उनके सब वार्डर अंग्रेज ही हैं। उधर यह हाल और इधर इतने सुभीतों के होते हुए भी लोग एक एक वस्तु के लिये इतना हुडदंग मचाते रहते हैं। जेल-लाइफ ने हमारे बहुत से भाइयों को भ्रष्ट कर दिया है।

शहर में मिस्टर पटेल का भाषण हुआ। बैरिस्टर ए० पी० सेन ने मार्मिक भाषण दिया। प्रसिद्ध ५५ के छोड़ने के विषय में बल दिया। यदि ये ५५ छूट जायंगे तो अच्छा है। मार्ग खुल जायगा। १७-२ में ये नहीं आ सकते थे। सरकार की धींगाशाही है और क्या। आज पं० जगतनारायण जी पं० मोतीलाल जी से मिले—

२६-४-२२

शारदापीठ के शङ्कराचार्य शहर में हैं। मिलना न हो सका। आज दो मास पूर्व आये हुए कई पत्र मिले। अच्छा तमाशा है ! बा० शम्भूनाथ जी से सीतापुर के समाचार सुने।

३०-४-२२

मिरज़ापुर में खूब दमन है-मुसलमानों के रमज़ान शुरू हुए। एक मास तक रात को इन की खूब रहेगी। दिन भर सोवेंगे और रात भर खाते रहेंगे।

१-५-२२

आज एक कैदी ने कटारपुर केस के प्रसिद्ध डा० पूरणप्रसाद की फांसी का हाल सुनाया। फांसी के समय वह इस जेल में ही था। बड़ा ही करुणापूर्ण वृतान्त था।

२-५-२२

शारदापीठ के शङ्कराचार्य पुरी गये हैं, लौट कर मिलेंगे।

३-५-२२

मालवीय जी पेशावर गये, उधर ही घूमेंगे। हसरत मोहानी जी ने बयान देने की ठानली। टर्कीने मित्रों की बात टाल दी। खिलाफत का फैसला नहीं होता दीखता।

४-५-२२

स्वा० भास्करतीर्थ फैजाबाद को लद गये। साक्षात् दुर्वासा प्रतीत होते हैं। असहयोगियों में रोज झगड़े-रोज़ लड़ाई-उसी का यह परिणाम है।

५-५-२२

मोहानी जी का बयान पढ़ा, विचित्र है-कहीं ठीक है, कहीं उलटा है, ज्यूरी ने १२१ में सर्वथा निर्दोष बतलाया। ये लोग १२४ के लिये ज्यूरी हैं, १२१ के लिये असेसर हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि १२४ में जरूर सज़ा होगी।

६-५-२२

मौ० हसरत मोहानी को १२४ में २ वर्ष के लिये कारागार मिला। १२१ के विषय में जजसाहब हाईकोर्ट को लिखेंगे। पब्लिक प्रासीक्यूटर ने व्याख्यान छपाने का अभियोग वापस लिया।

प्रयाग में आनन्दभवन की तलाशी हुई। पं० जवाहरलाल फिर आते दीखते हैं। मित्रसंघ में वैमनस्य हो रहा है। राष्ट्रसंघ को कोई पूछता नहीं। लाइडजार्ज व लार्ड कर्जन की कूटनीति के कटु फल लग रहे हैं। मालवीय जी पंजाब में घूम-घूम कर दुःखितों को धैर्य दे रहे हैं।

अथर्ववेद ८—३—७ मन्त्र मनन करने योग्य है।

पं० लक्ष्मीनारायण व स्वा० वामदेवाश्रम फैज़ाबाद गये। न जाने हमारी बारी कब है। स्वा० सहजानन्दादि सात महानुभाव फैज़ाबाद से आये हैं। वे कहते हैं कि वहां बहुत आनन्द है।

शोक कि देवरिया के बा० अवधनारायण मुखत्यार की करुणा-जनक मृत्यु हुई—दो तीन दिन से बीमार थे।

८-५-२२

कल सोने के समय तक सर्वत्र अवधनारायण जी की मृत्यु की ही चर्चा थी। प्रत्येक बारीग की ओर से ५—५ प्रतिनिधि शव के पास रात्रि भर रहे। प्रातः सब बारीगों के दरवाजे व वार्ड के दरवाजे खुले थे अतः सब हास्पिटल में जहां शव था गये। अर्थी तैयार की गई। ईश्वर की प्रार्थना हुई, शेर हुए, कविताएं पढ़ी गईं, 'राम नाम सत्य है' इसकी आवाज़ के साथ सब अर्थी के पीछे हो लिये। बाहर के दरवाजे के पास आकर सब ठहर गये। बाहर आर्यसमाज के लोग आकर प्रतीक्षा कर रहे थे। अर्थी उन के सुपुर्द कर दी गई और हम सब लोग दुःख के साथ अपनी २ बारीग को लौटे। जेल में इस प्रकार का दृश्य प्रथम ही है। अवधनारायण जी देवरिया में मुखत्यार थे, ५५ में थे, आपके वृद्ध माता, पिता विद्यमान हैं। इनकी स्त्री पहले ही मर गई थी। इनकी कन्या है। वृद्धों के लिये यह दारुण वज्रपात है। ईश्वरेच्छा—मृत्यु के पूर्व यह कहते थे कि "अंग्रेजी दवाई नहीं खाऊँगा, उन्होंने हमारी कांग्रेस को बिगाड़ा है, मैं अभी मरूँगा नहीं। मुझे अभी स्वराज्य का बड़ा काम करना है।' कल सायंकाल ५। बजे इनकी मृत्यु हुई। यहाँ बीमारों का ध्यान कम रक्खा जाता है। बड़ी बे-एतियाती है, शान्ति व गम्भीरता से सब कुछ भुगताना चाहिये। ईश्वर अवधनारायण जी की आत्मा को सद्‌गति देवे—और वृद्धा माता पिता को धैर्य!

अभी खबर मिली कि मि० केलकर ने महाराष्ट्र प्रान्तिक कांग्रेस के अध्यक्षपद से परित्याग पत्र दिया। न जाने क्या कारण?

पं० मोतीलाल जी अब तक नहीं छूटे—

पं० जवाहरलाल जी ने 'इधर या उधर' नामक एक नोटिस निकाला था, शायद उसी पर मुकद्दमा चलेगा।

९-५-२२

आज पहिली बार हमारे पेड़ पर कोयल आकर बोली है। इसके मधुर आलाप से बड़ा आनन्द आ रहा है। कोकिल! जेल में तेरी आवश्यकता नहीं। क्योंकि यहाँ जेल-काकों का समुदाय है, वे तुझे बहुत देर ठहरने नहीं देंगे। बम्बई में श्रीनिवासशास्त्री जी ने व्याख्यान दिया कि "प्रान्तिक स्वराज्य की मांग करना भी शीघ्रता है" धन्य!

१०-५-२२

शायद आज पं० मोतीलाल नेहरू छूटेंगे। कल रात्रि के समय चक्कर में आये थे, सबको नसीहत कर गये कि असूलों के विरुद्ध आचरण न होना चाहिये। सोच समझ कर सब की रायों का वजन देख कर काम करना चाहिये। "यदि मैं छूटा तो सीधा प्रयाग जाऊँगा। पं० जवाहरलाल पकड़े

गये तो फिर पहाड़ नहीं जाऊँगा', अल्मोड़े में एक बंगला क़िराये पर लिया था, आज मना करवा दिया है। पहले तो क्लीमेंट ने आकर कहा कि आप छूटेंगे कल तैयार रहिये, पर पीछे से कहा कि शायद पहाड़ जाना पड़े। मैंने उत्तर दिया कि पहाड़ जाने के योग्य मेरे पास यहाँ सामान नहीं है। क्लीमेण्ट ने कहा वाइटवे लैडला कम्पनी से आप ले सकते हैं। मैंने उत्तर दिया कि मैं तो उन कपड़ों को छू भी नहीं सकता।"—इत्यादि बातें पंडित जी ने बतलाईं। पं० जी ने यह भी कहा कि कृष्ण की तसवीर का मामला अब शान्त हो गया है। क्लीमेण्ट को समझा दिया है। आप भी अब ज्यादा छेड़छाड़ न करें।

११-५-२२

मानपालगुप्त व लक्ष्मीनारायण अग्निहोत्री नियमपूर्वक गीता पढ़ते हैं, आज दस अध्याय हो चुके—दासबोध, योगदर्शन का पारायण हो रहा है। Moon-struck Philosopher. नामक अजीब लेख म० गांधी के विषय में लीडर में उद्धृत हुआ है। किसी विलायती आदमी ने लिखा है। मिस्टर शास्त्री सुधार का नया उपाय बतला रहे हैं। मिस्टर शंकरन् नायर ने Gandhi and Anarchy नामक पुस्तक लिखी है। सुना है इसमें गांधी जी के विरुद्ध विष उगला गया है। इस पुस्तक की लीडर प्रशंसा कर रहा है—क्यों न हो।

पं० जवाहरलाल पं० मोतीलाल जी से मिलने आये थे। यहीं पकड़ लिये गये, रात्रि को प्रयाग जायेंगे। पं० मोतीलाल जी कल रात्रि की गाड़ीसे नैनीताल जायेंगे। २०-२५ दिन के लिये पहाड़ भेजे जा रहे हैं—आश्चर्य! शायद पं० जवाहरलाल जी के मुक़दमे तक इनको छोड़ना नहीं चाहते।

१२-५-२२

बाबा रामचन्द्र सेण्ट्रल जेल बरेली गये। ये महाराष्ट्रीय हैं, ग्वालियर स्टेट में उज्जैन के पास के रहने वाले हैं—सरकार की बुद्धि विपरीत हो रही है, कोई एक नियम नहीं है—जनाब हमीद साहब बनारस सेण्ट्रल जेल को भेजे गये।

सी० पी० प्रान्तिक कांग्रेस कमेटी ने प्रोग्राम में परिवर्त्तन करना पास किया—लीडर खुश हो रहा है—पं० जवाहरलाल, देवीदास गांधी आदि का मामला सेशन सुपुर्द हुआ—सरकार आन्दोलन को कुचल रही है। आज ३५ भाई फ़ैज़ाबाद गये। परसों भी कुछ जायेंगे।

सुना है मुझे रायबरेली जेल में भेज रहे हैं—अच्छी बात है। चार जेलें देखलीं—यह पांचवीं सही। यह अच्छा हुआ कि लिखने का काम समाप्त हुआ। आगे न जाने कैसे रखेंगे देखा जायगा।

१३-५-२२

लीडर में 'मराठा' के बारे में एक लेख है।

मेरी रायबरेली जाने की खबर ठीक है। अमरोहे वाले भाई फ़ैजाबाद जा रहे हैं। पोलिटिकल वालों को नान-पोलिटिकल बनाना और पोलिटिकल वालों में भी फर्स्ट-सेकण्ड आदि भेद करना विचित्र

बात है। खैर—आज जेल में आये हुए ठीक ५ मास होते हैं—शेष हैं और दस मास। पांच महीने में ५ जेल देखे। यही नम्बर रहा तो यू० पी० भर के प्रमुख जेलों की सैर हो जायेगी। ईश्वर जो कराता है वह कल्याणकारक ही है।

इस जेल में महाभारत के वन, विराट्, उद्योग यह तीन पर्व समाप्त हुए। दशोपनिषद् समाप्त। गौड़पादकारिका समाप्त, गीताविषयक लेख भी समाप्त।

स्वा० ब्रह्मानन्द व मास्टर हुलास वर्मा को देहरे के बारे में हिदायतें दीं।

१४-२-२२

आज सर्वत्र मेरी चर्चा है कि मुझको रायबरेली क्यों भेज रहे हैं। सब मिलने आ रहे हैं—सहानुभूति प्रकट कर रहे हैं। विचित्र समय है। सायंकाल के समय नायब बुलाने आये—दफ्तर में ले गये, एक रजिस्टर में अंगूठे का निशान लगाना पड़ा, पैर में बेड़ी पड़ी। लौट कर बारीग में आया तो लोगों में बड़ा जोश देखा। लोग पैरों पर आकर गिरने लगे। यह बेड़ियों की महिमा है। सौभाग्य से प्रातः शिवप्रसाद मिल गया उसके द्वारा ज्वालापुर समाचार भेजे, सन्देश दिये। सुख दुःख की बातें करते कराते सायंकाल ७॥ बजे। बाहर से नायब आया और कहा 'चलिये'...हमने कहा चलिये। प्रत्येक बारीग में जा कर सब से मिले। बा० राघवदास की मेरे विषय में उत्सुकता देखने योग्य थी—डॉ० मुरारीलाल, गणेशशंकर, पुरषोत्तमदास टण्डन आदि से छुट्टी लेकर चला। किसी ने कविता पढ़ी, किसी ने अभिनन्दन किया। किसी ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से देखा, किसी ने गले लगाया। 'बन्देमातरम्' 'जय जय' की धूम अलग ही थी। इस तरह धूम-धाम से जेल के दरवाजे से बाहर हुए। जेल की बन्द गाड़ी में बन्द हुए, स्टेशन पर पहुँचे, वहाँ भी धूम रही। फैज़ाबाद के भाई फैज़ाबाद की गाड़ी में बैठे, गाड़ी चल दी। मैं भी पास की गाड़ी में बैठाया गया। पीछे मालूम हुआ कि वह गाड़ी कानपुर की है, जल्दी से रायबरेली की गाड़ी पकड़ी। इस अन्धाधुन्धी में बेड़ियों के कारण मेरा पैर बहुत दुख गया। अचानक व्यासदेवशास्त्री मिले। मेरी दशा देख कर घबराये। मैंने उनको धैर्य दिया, उनसे जो कुछ कहना था कह दिया। गाड़ी ने सीटी दी और हमारी ट्रेन हमारे भाग्य के साथ रायबरेली की ओर चल दी। मेरे साथ पीलीभीत के एक और भी मुसलमान भाई थे, वे प्रयाग जेल भेजे जा रहे थे।

(इति लखनऊ पर्व)



(रायबरेली पर्व)

ट्रेन में नींद किसको आनी थी। भविष्य के ही विचार आते रहे। १॥ बजे हमारी ट्रेन रायबरेली स्टेशन पर आ पहुँची। मैंने सिपाहियों से कहा कि प्रातःकाल तक स्टेशन पर ही रहो, फिर जेल में चलेंगे। उन्होंने नहीं माना। एक इक्का किया गया–और जेल का रास्ता पकड़ा। यद्यपि इक्का शहर में से होकर गया तथापि अन्धकार के कारण नगर का स्वरूप अच्छी तरह न दीख सका। रायबरेली को नगर कहने की अपेक्षा छोटा कस्बा कहना अच्छा होगा। लगभग २ बजे जेल के दरवाजे पर पहुंचे। मेरे हवालदार ने मुझे जेल के फाटकवाले के सुपुर्द किया। फाटक खुला मैं भीतर गया और अपना असबाब भीतर ले लिया। फाटकवाले मु० बुद्धूलाल ने मुझे वहीं जमीन पर लेटने को कहा। वहाँ मच्छरों का स्वराज्य था। मैं वहाँ क्या लेट गया उनकी चाँदी बन आई। लगे सब मिलकर मेरा लहु पीने। थोड़ी देर में नींद का झोंका आ ही रहा था कि फाटक खुला– जेलर रायसाहब पं० चम्पालाल औदीच्य भीतर आये। उन्होंने गेटमैन से पूछा ये कौन लेटे हैं, गेटमैन ने उत्तर दिया कोई लखनऊ से आये हैं, टिकट मेज़ पर रक्खा है। जेलर साहब भीतर गये जाकर टिकट देखकर बोले कि नरदेवशास्त्री आये हैं। थोड़ी देर में पचासा हुआ, सब वार्डर वगैरे आ गये और अपनी अपनी ड्यूटी पर भेजे गये। तब जेलर साहब से मेरी बातचीत हुई। मेरा सामान फाटक पर ही रहा और एक पक्के के साथ में सेग्रेगेशन कैम्प में पहुँचा। वहां बा० रामशरण एम० ए० आदि मिले। शौचादि से निवृत्त हुआ ही था कि एक नम्बरदार बुलाने आया 'चलिये फाटक पर बुला रहे हैं'—फाटक पर पहुंचा। पहुँचते ही पैर की बेड़िया निकाली गई, थोड़ी देर में साहब आये–आप का नाम डी० के० मुकर्जी है। जेलर व साहब दोनों सीधे चक्कर में गये और कोई १॥ घंटे के बाद लौटे तब तक मैं नायबसाहब के पास बैठा रहा, यहाँ फिर हुलिया लिखा गया, सामान देखा गया, अंगूठे का निशान लगवाया गया, कद मापा गया। वस्तुओं की गिनती हुई। फिर साहब के सामने मेरी हाजिरी हुई। साहब ने कहा कि देखिये यहाँ कोई गड़बड़ न कीजिये थोड़े दिनों के पश्चात आपकी वस्तुएं मिल जायँगी। मेरे लिखने का सामान मुझ को नहीं मिला, शेष कपड़े लत्ते और दो चार पुस्तकें लेकर मैं अपनी बारीग में पहुँचा। लखनऊ से आने के कारण शायद साहब ने मुझे उपद्रवी जीव समझा। फर्स्टक्लास से मामुली दर्जे में आने वाला जरूर उपद्रवी होगा ऐसी उनकी धारणा हुई होगी, नहीं तो उपर्युक्त शब्द क्यों कहते ?

जेलर साहब ने उसी समय साहब से कहा कि विद्वान् पुरुष हैं गड़बड़ क्यों करेंगे, शांति से ही रहेंगे—मैं भीतर ही भीतर मुस्कराया कि ये लोग मुझे भयङ्कर जीव समझ रहे हैं। पीछे मालूम हुआ कि मेरे वारण्ट पर देहरे के मजिस्ट्रेट ने 'खौफ़नाक जीव' लिखा है। मैजिस्ट्रेट के लिखने से ही मैं रायबरेली में मामूली कैदियों में भेजा गया हूँ। हम जैसे लोगों के लिये ही नान-पोलिटिकिल क्लास बनी है। मेरे आने के एक दिन पूर्व सीतापुर, गोंडा, बस्ती के कैदी भी यहां आ पहुँचे थे। इनमें मुझ जैसे ७-८ ही सिंपल कैदी थे, शेष सब सख्त मशक्कत वाले थे। नान–पोलिटिकिल कैदियों की संख्या लगभग ८० है। प्रायः इनमें ऐसे ही वीर नवयुवक हैं जिन्होंने पूर्व जेलों में अधिकारियों को नाक

में दम कर रक्खा था, अधिकारियों ने भी इन्हें खूब तंग किया था। गांधी जी ने जेल नियमों के अनुसार रहने का आदेश दिया तब तो जेल में हमारे भाइयों की यह दशा, यदि कहीं नियमों को न मानने का आदेश होता तो भगवान् जाने क्या होता।

लखनऊ जेल में प्रायः यू० पी० की कांग्रेस कमेटी के सभी लोग मिले थे। यहाँ आने से लखीमपुर, सीतापुर, बलरामपुर, तुलसीपुर, गोंडा, करनल गंज, बस्ती, गोरखपुर, बलिया, पड़रौना, रायबरेली आदि के महानुभाव मिले। बलिया के नवयुवक कु० विश्वनाथसिंह, ब्रह्मदेवप्रसाद माणिक, केदारनाथ, तथा पड़रौना के ब्रह्मदेवशर्मा को देखकर आश्चर्य हुआ। ऐसे नवयुवकों को बड़ी बड़ी सजाएं देना बतला रहा है कि सरकार की बुद्धि विपरीत हो रही है। ब्रह्मदेवशर्मा को ढाई साल की सजा है!!

बलिया में दमन की धूम हो रही है। गोरखपुर ज़िले में तो होनी ही थी। ये नवयुवक उत्साही हैं, परम देशभक्त हैं पर इनको अभी अनुभव नहीं है। ऐसे सैकड़ों नवयुवक जेल में पड़े होंगे। देश में अद्भुत जागृति का यह स्पष्ट चिन्ह है।

यहां आकर तीन बातें विशेष हुईं—१बारीग में बन्द होना २—आठवें दिन साहब के सामने लाइन में खड़े होकर परेड देना ३—मामूली कैदियों का भोजन।

पत्रव्यवहार का नियम यह है कि आये हुए पत्र प्रतिदिन मिल जाते हैं पर मासभर में नियत तिथि पर २-३ पत्र भेज सकते हैं। मिलाई मासभर में एक बार-समाचार पत्र नहीं मिलता। यहाँ सिंपल व रिगरस साथ ही रक्खे गये हैं-इस लिये दोनों अनुभव साथ ही मिल रहे हैं। ईश्वर की कृपा हुई कि यह भी अनुभव मिला।

यह जेल बड़ी जेल है, किसी ज़माने में यह सेण्ट्रल जेल थी। जिस (Segragation Camp) सेग्रेगेशन कैम्प में हम रक्खे गये हैं वहां पहले विकट रोगी रक्खे जाते थे जिस से कि उनके स्पर्श से अन्य कैदियों को रोग न लगे। विचित्र घटना से आज हम भी इसी कैम्प में हैं-हम जिस बीमारी में यहां आये हैं वह भी ऐसी ही है......इस लिये इस कैम्प में रहना ठीक ही है। हमारे बारीग में पहले १० थे फिर १५ हुए फिर २२ तक का नम्बर आया। शेष भाई 'औरत बारीग' में रक्खे गये थे क्योंकि जेल में उनको रखने के लिये और जगह नहीं रही थी। इन भाइयों के (Female-ward) औरत बारीग में जाते ही वह (Male-ward) पुरुषों की बारीग हो गई।

हमारा वार्ड बहुत सुन्दर वार्ड है-इसमें आम, नीम, जामुन के बहुत से पेड़ हैं। मैंने तनाही की तरफ एक सुन्दर आम्रवृक्ष के नीचे अपना स्थान बनाया है। लीप-पोतकर साफ सुथरा स्थान बना लिया है। दिन भर इसी वृक्ष के नीचे समय कटता है, वृक्ष के नीचे गिलहरियों का अच्छा खासा झुण्ड आकर क्रीड़ा करता रहता है। इनको खिलाने पिलाने में बड़ा आनन्द आता है। इनके बच्चे सुहावने प्रतीत होते हैं। लखनऊ जेल में दिन का समय नीम के नीचे कटता था, यहां आम्रवृक्ष के नीचे कटता है। वहां निष्फल वृक्ष थे, यहां सफल वृक्ष हैं।

मैं लिख चुका हूँ कि लिखने का सामान मुझे नहीं मिला, इस लिये पुस्तकावलोकन के अतिरिक्त समय काटने का अन्य कोई उपाय नहीं था। लखनऊ की भांति नित्यनियम यथारीति होते हैं। केवल भेद इतना है कि बारीग ४॥ बजे खुलती है अतः ३ बजे भीतर स्नान होता है। उसके पश्चात् सन्ध्या-वन्दन जप आदि। बाहर आने पर एक घण्टा भ्रमण। फिर ६॥ बजे तक पुस्तकावलोन। इसी तरह १ से ४ बजे तक पुस्तकावलोकन। ४॥ बजे से ६ बजे तक स्नानध्यानादि। ६ बजे फिर बारीग में बन्द, भोजन भी भीतर। इस तरह क्रम रहा।

इस मास में ये नवीन पुस्तकें देखीं—

१—माई सिस्टम २—फ्रेश एअर ३—गॉस्पेल ऑफ बुद्ध-इज़्म ४—ट्यून इन दी इनफिनिट ५—गार्डनर ६—टेनीसन।

मेरे आने के पश्चात् एक ही मास में निम्नलिखित महानुभाव छूटे—

१—वागेश्वरीप्रसादसिंह बलिया, २—स्वामी सच्चिदानन्द बलिया, ३—पं० रामचन्द्रशर्मा मथुरा, ४—पं० वसन्तलाल प्रयागवाले।

लेजिस्लेटिव काउन्सिल जुलाई में है-देखें क्या होता है। लखनऊ में ऑलइण्डिया कांग्रेस कमेटी सानन्द हो गई। आगामी कांग्रेस गया में होगी।

यहाँ के प्रायः सभी अधिकारी अच्छे हैं, सभ्य हैं, शिष्ट हैं, तो भी हमारे बहुत से भाई कभी कभी वृथा झगड़ा खड़ा करते रहते हैं जिससे कभी-कभी शान्ति भङ्ग हो जाती है।

१५-६-२२

आज मुझे लिखने का सामान मिला इसलिये एक मास पश्चात् यह सब वृत्त संक्षेप से लिख रहा हूँ। कल से यथानियम प्रतिदिन लिखता रहूँगा।

१६-६-२२

टेनीसन की कविता बड़ी मार्मिक है। कहीं कहीं स्वभावोक्ति पूर्ण आनन्द देने वाली है। कहीं कहीं प्रतिभा ने तीक्ष्ण स्वरूप धारण किया है।

१७-६-२२

Morti D. Arthur यह बहुत अच्छी कविता है, कई वार पढ़ने पर भी जी नहीं उकताता।

१८-६-२२

मैनेजर चित्रशाला पूना ने महाभारत (उपसंहार) के स्थान में मराठी डिक्शनरी भेजी, उसको लिखा गया। नहीं मालूम बिना कारण चित्त अस्वस्थ क्यों है। Histoty of the Devils 'शैतानों का इतिहास' संग्रह करने योग्य पुस्तक है। पत्र लिखने की बारी आवेगी तब लिखूँगा।

२३-६--२२

आजकल टेनीसन ही मुझे प्रिय हो रहा है। क्या अद्भुत कवि है!

२४--६--२२

दक्षिण की डाक मिली, सम्बन्धियों का कुशल समाचार पढ़ा।

२६-६--२२ से ६--७--२२ तक

आप्टिमिस्टिक लाइफ, मिरैकल आफ राइट थॉट Optimistic Life, Miracle of Right Thought ये दोनों मारडेन की पुस्तकें मनन करने योग्य हैं, इनको समाप्त करने के पश्चात् अन्य पुस्तकें देखेंगे। बा० रामशरण जी की पुस्तकों से बहुत लाभ रहा है।

असहयोग के नाम पर हुल्लड़ मचाने वाले लोगों ने आन्दोलन को बदनाम कर दिया। आज एक छटांक गुड़ पर महाकाण्ड उपस्थित हुआ था। भगवान् इनको सुबुद्धि देवे। विदित नहीं कि जेलभूमि का यह प्रभाव है या ये लोग ही ऐसे हैं। तामसी प्रकृति के लोग यहाँ आकर अधिक तामस होते देखे गये। ईश्वर की दया हुई कि आन्दोलन में सात्त्विक प्रकृति के लोग भी हैं, इन्होंने ही आन्दोलन का गौरव स्थिर रक्खा।

आज ४--७--२२ को मिस्टर रटलेज डि० कमीशनर रायबरेली आये। बातचीत हुई, इन्होंने कहा कि मैं आपको जानता हूँ। बा० रामशरण जी और मेरे अखबार के लिये कहने पर इन्होंने 'लीडर' के लिये अनुमति दे दी। चलो यह भी दिक्कत दूर हुई। मि० मुकर्जी व राय साहब ने भी डि० कमिश्नर से कहा कि इन दोनों को समाचार पत्र अवश्य मिलना चाहिये। साहब ने कहा 'अच्छी बात है मुझे कोई एतराज नहीं'।

मिस्टर रटलेज बड़े शिष्ट पुरुष हैं, सबसे हँसते खेलते मिले सब से शिकायतें पूछीं।

सिविल डिस-ओबिडियन्स कमेटी अपना दौरा कर रही है। पं० मोतीलाल नेहरू जी ने चहल-पहल कर रक्खी है। १५ अगस्त को कलकत्ते में ऑल इण्डिया की बैठक होगी। २५--७--२२ को लखनऊ में कौन्सिल होगी। लीडर कहता है कि क्रिमिनल-लॉ उठा लेना चाहिये जिन कैदियों के छह मास कट गये हैं उनको छोड़ देना चाहिये। प्रान्तिक कांग्रेस कमेटी के ५५ सदस्यों के बारे में भी लिखा है।

८-७-२२

आज Optimistic Life यह पुस्तक समाप्त हुई। पं० प्रियनारायण मिले, हरद्वार ज्वालापुर आदि के समाचार ज्ञात हुए। महाभारत आगया, अब दिन आनन्द से कटेंगे। आषाढ़ प्रारम्भ से ही मैं एक ही समय भोजन करता हूँ, चतुर्मास इसी तरह कटेगा।

९-७-२२

आज रविवार व्यासपूर्णिमा है, श्री ६ आचार्य जी के लिए धोती जोड़ा व जेलमाला भेजी, यहीं से बैठे दूर रहने वाले गुरुजनों की मानस पूजा की।

१०-७-२२

देहरादून में तिलक भवन का मामला उलटा पड़ गया, भूमि कांग्रेस के हाथ से जाती दीखती है।

११,१२-७-२२

आज सरकार की आज्ञानुसार सर्वत्र यू० पी० भर में छोटी जेल-डिलिवरी हो रही है। लगभग ५००० कैदी छूटेंगे। यहाँ से ११६ कैदी छूट रहे हैं। ये सब कैदी ऐसे हैं जिनके तीन तीन मास रह गये थे। प्रिन्स सकुशल विलायत पहुँच गये, इस खुशी में यह रिहाई है! खुशी हो या न हो, जेल का खर्च अवश्य कम हो रहा है।

१४-७-२२

महाभारत (उपसंहार) रा० चिंतामणराव वैद्य एम० ए० कृत आज मिला अत्यन्त मनोरञ्जक ग्रन्थ है।

१५-७-२२

महाभारत का प्रारम्भ हुआ, चार मास में समाप्त करना है। लखनऊ से काशी के सब भाई छूट गये।

१६--७--२२

आदि पर्व आधा हो गया। 'उपसंहार' प्रारम्भ।

१७--७--२२

लीडर से ज्ञात हुआ कि बाहर सर्वत्र शान्ति है। यह शान्ति निरुत्साहित शान्ति है। पं० मोतीलाल नेहरू जी की कमेटी गश्त लगा रही है।

१८-७-२२

कविसम्राट् टैगोर की गीताञ्जलि देखी। कहीं कहीं विचित्रता है। संस्कृत के प्रतिभाशाली कवियों का मुकाबला टैगोर कर नहीं सकते। हाँ नवीन संसार के लिये नई बात है।

१९-७-२२

वैद्य चिंतामणराव का उपसंहार विचित्र रूप से लिखा गया है। इससे पाश्चात्य लोगों के विचार जानने में बड़ी सहायता मिल रही है।

२०-७-२२

लीडर व अवध के जिमींदारों में खूब ठन रही है।

२१-७-२२

काउन्सिल मुलतवी हो गई। गई अक्टूबर में, लीडर कहता है अगस्त में होनी चाहिये। पर बटलर सुनें तब न ?

२७-७-२२

आदि व सभापर्व समाप्त। दासबोध (हिन्दी) आ गया। हुलासवर्मा छूट कर देहरे पहुँच गये।

२८-७-२२

आल इंडिया कांग्रेस कमेटी अगस्त से १५ दिसम्बर को गई।

वर्तमान स्थिति पर मि० केलकर का उत्तम लेख लीडर में उद्धृत है। गीता 'पूर्वप्रसङ्ग' लिख डाला, अच्छा लिखा गया है।

१-८-२२

पुस्तकों में मन प्रसन्न रहता है पर शरीर निर्बल है। आज मार्कण्डेय समासनिर्णय पढ़ा, विचित्र प्रसङ्ग है।

५-८-२२

दो दिन से खूब झड़ी लग रही है। परसों श्रावणी है। वनपर्व समाप्त। पीलीभीत के पं० दुर्गाशंकर छूट गये। सौम्य, साधु, उत्साही युवक हैं, ऐसे ही युवक कुछ कर सकते हैं।

६-८-२२

विराट पर्व समाप्त।

७-८-२२

दासबोध से गीता के श्लोकों की व्याख्या छांट ली है। उपसंहार आधा हो गया।

१०-८-२२

उद्योगपर्व समाप्त।

१४-८-२२

भीष्मपर्व ४ दिन का युद्ध समाप्त।

१५-८-२२

भीष्मपर्व समाप्त।

२०-८-२२

उपसंहार समाप्त। द्रोणपर्व समाप्त।

२४-८-२२

कर्णपर्व समाप्त।

२६-८-२२

शल्यसौप्तिक पर्व समाप्त।

२७-८-२२

देहरे के समाचार मिले, तिलकभवन की अपील खारिज हो गई।

स्त्रीपर्व समाप्त। मि० केलकर लिखित 'शतसांवत्सरिक वाङ्मय श्राद्ध' (मराठी) अनुपम पुस्तक है।

२८-८-२२

शान्तिपर्व प्रारम्भ। जे० एन० सरकार लिखित "औरंगजेब का इतिहास" तीनों भाग देखने योग्य हैं।

२९-८-२२

मि० शंकरन् नायर कृत Gandhi and Anarchy 'गांधी और विद्रोह' यह पुस्तक पढ़ी। क्या विष उगला है। बहुत सी बातें अच्छी भी हैं, सरकारी लोग इससे खुश हुए होंगे।

३०-८-२२

पार्लियामेंट में प्रीमियर, जायसन हिक्स, करनल वेजवुड इनकी स्पीचें पढ़ने योग्य हैं।

३१-८-२२

मि० शंकरन् नायर ने महात्मा गांधी के "Indian Homerule" के आधार पर यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि महात्मा गांधी वैयक्तिक स्वराज्य चाहते थे, इंग्लिश सभ्यता के शत्रु हैं, असहयोग चला कर द्वेष बढ़ा रहे हैं।

१-९-२२

दे० गणेश दामोदर सावरकर छूट गये, न जाने विनायक दामोदर सावरकर कब छूटेंगे।

३-९-२२

गीता का 'पूर्वरङ्ग' लिखने में एक मास व्यतीत हुआ। शान्तिपर्व चल रहा है।

४-९-२२

मि० केलकर जी का 'वाङ्मयश्राद्ध' समाप्त। इस ग्रन्थ में निम्नलिखित बातों का उल्लेख आया है।

१-अंग्रेजों के आने के पूर्व का महाराष्ट्र, २-अंग्रेज भारत में कैसे आये, ३-मरहठाशाही क्यों डूब गई, ४-मरहठों की राज्य व्यवस्था इत्यादि।

६-९-२२

मोक्षधर्मपर्व चल रहा है।

७-९-२२

एकभुक्त (एकाहारी) होकर तीन मास हो गये।

आज आश्रमवासिक पर्व, मौसलपर्व, महास्थानिकपर्व, स्वर्गारोहणपर्व समाप्त किये, अब केवल अनुशासन व आश्वमेधिकपर्व शेष हैं।

९-९-२२

रिचर्ड पालकी "टू दी नेशन्स" To the Nations पुस्तक सरसरी नज़र से देखी।

१०-६-२२

वायसराय की स्पीच पढ़ी। अत्यन्त शोक कि श्री मोतीलाल घोष सम्पादक अमृतबाज़ार पत्रिका का देहान्त हो गया, बंगाल सूना हो गया।

११-६-२२

श्री रंगाचार्य ने लेजिस्लेटिव एसेम्बली में प्रीमीयर की स्पीच का अच्छा उत्तर दिया है।

१२-६-२२

ग्रीक लोगों की पराजय व तुर्कों की विजय शुरू हुई।

पं० कृष्णकान्त मालवीय का अंग्रेजी माल का बहिष्कार-विषयक लेख पढ़ा।

१३-६-२२

रिचर्ड पाल लिखित Dawn of Asia अच्छी पुस्तक है। इनका कहना है कि श्री अरविन्द बाबू से ही भारत का उद्धार होने वाला है।

१४-६-२२

शान्तिपर्व समाप्त, नारायणीय सिद्धांत मनन करने योग्य है। सांख्य-योग विवरण अत्यन्त मार्मिक है।

१५-६-२२

स्वा० श्रद्धानन्द पकड़े गये।

१६-६-२२

ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी नवम्बर में होगी, दिसम्बर में बड़ी कांग्रेस के साथ ही क्यों न हो।

१८-६-२२

अनुशासनपर्व समाप्त।

२०-६-२२

आज महाभारत ग्रन्थ समाप्त हुआ। इस निर्णयसागर की ऐडीशन में एक लक्ष बारह हजार श्लोक हैं।

२२-६-२२

देहरे के पत्र से ज्ञात हुआ कि तिलक भूमि सर्वथा हाथ से गई। प्रान्तिक कानफरेन्स की तैयारी हो रही है।

२३-६-२२

'अकाली व गुरु का बाग' इस विषय में एण्ड्रूज के पत्र पढ़ने योग्य हैं। साक्षाद् देखा हुआ वृत्तान्त लिख रहे हैं।

३-१०-२२

गीतोपसंग्रह का कार्य समाप्त।

४-१०-२२

श्री सरकार लिखित 'औरंगजेब का इतिहास' आज आरम्भ किया। तीन भाग हैं।

५-१०-२२

पटने के स्व० खा० ब० खुदाबख्श सी० आई० ई० बड़े ही दूरदर्शी पुरुष थे। इनके अनथक परिश्रम व विद्याव्यासंग का परिचय मि० सरकार ने अच्छे शब्दों में दिया है।

७-१०-२२ से १७-१०-२२

औरंगज़ेब का इतिहास समाप्त।

बड़ौदे के प्रो० देसाई ने भी इस विषय में मराठी में इतिहास लिखा है। लोग कहते हैं कि औरंगज़ेब ने अत्याचार नहीं किया पर सरकार के इतिहास से स्पष्ट सिद्ध है कि बहुत अत्याचार किये। इतना बड़ा राज्य था पर बेचारे को सुख कहाँ! उमर भर झगड़े मोल लेता रहा—सरकार ने बड़े ही मार्मिक शब्दों में कहा है—

This was the harvest that Jalaluddin Akabar's great grandson reaped from sowing the whirlwind of religious persicution and suppression of nationalities. सरकार की राय है कि खिलाफ़त का मामला भी उन्नीसवीं सदी का ढकोसला है।

१८-१०-२२

लाइट ऑफ एशिया Light of Asia बौद्ध ग्रन्थ पढ़ा।

१९-१०-२२

आज हमारे कई भाई छूटे।

२०-१०-२२

टैगौर लिखित "Nationalism" देखा।

टैगौर कृत कबीर के गीतों का अनुवाद भी देखा। कबीर स्वा० रामानन्द के शिष्य थे, इनका समय सन् १४४० है।

२२-१०-२२

लियाड जाज मन्त्रिपद से हट गये-बोनर लॉ आ गये।

२३-१०-२२

कबीर के निम्नलिखित पद्य बड़े ही मनोहर हैं।

१—सन्तो सहज समाध भली २—पानी विच मीन प्यासी ३—साईं बिन दर्द कलेजे होय
४—भाई कोई सतगुरु संत कहावे ५—साधो शब्द साधना कीजै ६—साईं से लगन कठिन है भाई

७—जब मैं भूल………… ८—मन न रंगाये……… ६—हमसे रहा न जाय
१०--तोर हीरा हिरलवा कीचड़ में ११--अरे दिल प्रेमनगर का अन्त न पाया ।
१२–झी झी जन्तर बाजे १३--आज दिन के मैं बलिहारी १४--कोई सुनता है रागी ज्ञान गगनमें
१५--अबधू बेगम देश हमारा १६--कोई प्रेम की पेंग झुलाओ रे १७--दर्या की लहर दर्याओ है जी

२६--१०--२२

देहरादून प्रान्तिक कानफ्रेन्स के सभापति पं मोतीलाल नेहरू चुने गये ।

२८–१०–२२

काउन्सिल में क्रिमिनिल लॉ अमेण्डमेण्ट एक्ट उठा लेने का और समस्त पोलिटिकल कैदियों को छोड़ देने का प्रस्ताव पास हुआ । देखें लाट महोदय अब क्या कहते हैं ।

२–११–२२

देहरे की कानफ्रेन्स कुशलपूर्वक हो गई । भारतवर्षीय सभी नेता पहुँचे थे । दे० दास भी पहुँचे थे । प्रस्ताव एक भी काम का नहीं था । सब पुराने गीत थे । दास कहते हैं 'जनता का स्वराज्य' चाहता हूँ । Swarajya for masses.

७–११–२२

लीडर में सिविल डिसओबिडियन्स कमेटी की रिपोर्ट पढ़ी, विचित्र रिपोर्ट है, कमेटी की राय में "देश तैयार नहीं है"—प्रतिरोध के लिये काउन्सिल में जाना चाहिये ।

८–११–२२

दोनों दलों के विचार पढ़े–दास महाराष्ट्र पार्टी की सी बातें कर रहे हैं । खूब रमरौला है—

१३–११–२२

कल का व आज का लीडर पढ़ा—दोनों में दोनों दलों की सम्मति पर प्रकाश डाला गया है । पं० मोतीलाल काउन्सिल के पक्ष में हैं । हकीम जी भी । दूसरी ओर श्री० राजगोपालाचार्य और उनके दोस्त भी हैं ।

१४–११–२२ से २५–११–२२

राजतरङ्गिणी (काश्मीर का इतिहास) ६ तरङ्ग समाप्त ।

२८–११–२२

काउन्सिल में जाने का प्रश्न गया कांग्रेस में गया ।

३०–११–२२

हमारे साथी लाल मुहम्मद बड़े भद्र पुरुष हैं । खूब शेर सुनाते रहते हैं । उन्होंने आज स्वयं आकर दो वज़नी मिसरे सुनाये—

—"न जागने में है लज्जत न शब के सोने में
मज़ा जो पाया जो पिछले पहर के रोने में"
"कामिल"

—"उस बोरिया नशीं का दिला मैं मुरीद हूँ
जिसके रेयाज़ ज़ुहुद में बू-ए-रया न हो"—

इस मास में गोंडा के महम्मदजमासाहब, लहरपुर सीतापुर के गिरजाप्रसाद आदि छूटे।

१-१२-२२

बा० रामशरण, दलश्रृङ्गार; केदारनाथ, विश्वनाथसिंह आदि का पञ्चतन्त्र समाप्त हुआ।
बस्ती के रामानुग्रहलाल छूटे।

२-१२-२२

प्रान्तिक—कांग्रेस कमेटी में फूट पड़ गई है—खेद है!

७-१२-२२

प्रथम तरङ्गिणी समाप्त, ८८०० श्लोक हैं।

१०-१२-२२

अकाली छूट रहे हैं, आज जेल में आये हुये एक वर्ष हुआ।

१३-१२-२२

ला० लाजपतराय के पिता का स्वर्गवास हुआ।

१४-१२-२२

द्वितीय राजतरङ्गिणी समाप्त।
नेहरू आदि म० गांधी जी से मिलने के लिये गये।

१५-१२-२२

कुँ० विश्वनाथसिंह छूटे।

१८-१२-२२

सर बटलर की स्पीच निराशाजनक है।

१६-१२-२२

केदारनाथ छूटे।

२१-१२-२२

तृतीय राजतरङ्गिणी समाप्त।

२२-१२-२२

चतुर्थ राजतरङ्गिणी समाप्त ।

ठा० राजकुमार, पं० राममनोरथ, इसहाक छटे ।

२८-१२-२२

लखनऊ में रहने वाले स्पेशल क्लास वालों के लिये नये विचित्र नियम हैं। घी, दूध गया—अखबार गया, मि० दास की स्पीच मार्के की है। शारदापीठ के शंकराचार्य १०८ में एक वर्ष के लिये गये।

२९-१२-२२

बा० रामशरण जी का रघुवंश समाप्त हुआ। नागपुर में लिबरल फेडरेशन हुआ। मि० दादाभाई ने असहयोग के विरुद्ध बहुत विष उगाला, शास्त्री जी की वक्तृता विद्वत्तापूर्ण हुई।

३१-१२-२२

लखनऊ में खिश्चन कानफ्रेन्स हुई। मि० जे० आर० चिदम्बरम् की स्पीच मार्के की है। आप कोआपरेशन के लिये हैं। कम्पाऊण्डर लोगों की भी कानफ्रेन्स हुई—वे कहते हैं कि उनको मेडिकल असिस्टेण्ट कहा जावे। गांव के लोग उनको गनपाऊडर या कोई कोई कनटोपर कहते हैं, जिससे उनका उपहास होता है और शान में फरक आता है। स्वामी श्रद्धानन्द छूट गये।

गया कांग्रेस में मि० सत्यमूर्ति का "अंग्रेजी माल का बहिष्कार" का प्रस्ताव फेल हुआ। सब्जेक्ट कमेटी में पास हो गया था।

शोक कि बाबू अम्बिकाचरण मुजुमदार की फरीदपुर में मृत्यु हुई। बा० ब्रजकिशोर स्वा० का० समिति के प्रधान की स्पीच पढ़ी। आश्चर्य सब तत्त्वज्ञान की ही बातें करते हैं। श्रीयुत राजगोपालाचार्य जी को बायकाट के प्रस्ताव में क्रोध की मात्रा दीख रही है। धन्य!

आज १९२२ जा रहा है इस वर्ष ने भारत का अभूतपूर्व आन्दोलन देखा। आशा है १९२३ प्रजा के लिये हितकारी सिद्ध होगा। शुभं भवतु,

अलीगढ़ में मुसलमानों की शिक्षण कानफ्रेन्स हुई।

खान बहादुर मियां फजल—उल—हसन की विचित्र स्पीच पढ़ी। कट्टर मुसलमानी ढंग की स्पीच है। आपने मुसलमानी धर्म की पाँच छह विशेषताएँ बतलाईं। १-मुसलमान एक ईश्वर के उपासक हैं २-मुसलमानों में उत्तम कोटि का भ्रातृभाव है ३-मुसलमानों की शिक्षा उत्तम है ४-भारतीय सभ्यता में मुसलमानों का बड़ा भाग है ५-मातृभूमि की सेवा का आदर्श ६-मुसलमानों में अछूत कोई नहीं—

१-१-२३

काउन्सिल जाने का प्रस्ताव रद्द हो गया। ८९० अनुकूल और १७४० प्रतिकूल सम्मतियां आईं।

ख्रिश्चन कानफ्रेन्स ने सरकार से अनुरोध किया है कि गांधीजी को शीघ्र छोड़ें। गया कांग्रेस में कोई विशेष कार्य नहीं हुआ। उधर लुईसाना कानफ्रेन्स में मित्रों व टर्की में मनमुटाव हुआ।

३-१-२३

दास पार्टी बनी। इनके साथ ऑल-इण्डिया-कांग्रेस कमेटी के ११० मेम्बर हैं। राजगोपालाचार्य जी के ही सब प्रस्ताव स्वीकृत हुये—बहुमत के नेता यही हैं। २५ लक्ष रु० व ५०००० स्वयं सेवक मांग रहे हैं। अब तो कांग्रेस में कोई भी सार्वदेशिक नेता नहीं रहा।

४-१-२३

कांग्रेस आन्ध्र को गई। लीडर का अग्रलेख वाचनीय है। दासपार्टी काऊन्सिल के लिये खड़ी होगी। लीडर कहता है कि ये लोग केवल विरोध करने के उद्देश्य से जा रहे हैं इसलिये कामयाब न होंगे।

५-१-२३

हमारे साथी रामलाल मिश्र छूटे—दूसरी बारीग खाली हो गई, इसलिये उधर के ७-८ भाई सब हमारे वार्ड में आये हैं। निरंजनप्रसाद सादाबादी, पं० ब्रह्मदेवशर्मा पडरौनावासी, बाबूराम उर्फ शान्तिस्वरूप आदि हैं।

सर्वन्ट की राय में दासपार्टी का होना अच्छा नहीं है। लीडर कहता है कि दासपार्टी सर्वथा कांग्रेस से पृथक् हो जाय तो अच्छा है, टर्की अड़ रहा है। जर्मन झमेला चल रहा है।

६-१-२३

श्री श्रीनिवासशास्त्री जी का भाषण' "हमारे सम्मुख कार्य"—पढ़ा। लेनिन की किसी संवाददाता के साथ बातचीत पढ़ी।

७-१-२३

मि० विपिनचन्द्रपाल लिखते हैं कि पुरानी कांग्रेस मर गई।

८-१-२३

दासपार्टी की कानफरन्स फरवरी में होगी।

पं० कपिलदेव मालवीय का लेख "हमने कांग्रेस क्यों छोड़ी" पढ़ा।

१०-१-२३

राजतरङ्गिणी के संग्रह करने योग्य श्लोकों के अंक लिख लिये हैं। योगदर्शन के सूत्र लिख रहा हूँ।

११-१-२३

चौरा चौरी केस में १७२ को प्राणदण्ड की शिक्षा सुनाई गई!!! पार्लियामेंट में मजदूर दल के सदस्यों ने खूब हुल्लड़ मचाया, मजमून था 'मजदूरों की बेकारी'।

१२-१-२३

बाबा राघवदास का पत्र, दक्षिण जा रहे हैं, फिर १०८ में जायेंगे ऐसी सम्भावना है। उत्तर दिया।

'महात्मा जी क्या कहेंगे' इस शीर्षक का एक लेख कपीलदेव मालवीय का छपा है। कहेंगे क्या? आयेंगे तो अपना माथा पकड़ के बैठ जायेंगे।

१४-१-२३

ला० लाजपतराय लाहोर सेण्ट्रल जेल में आ गये हैं।

फ्रान्स ने जर्मनी का रूर ज़िला दबा लिया। जर्मन असहयोग कर रहे हैं।

१५-१-२३

शोक कि प्रिय विश्वनाथसिंह प्रभुपुर निवासी का देहान्त हो गया। यहाँ से छूट कर 'गया' गया था, वहां दस दिन स्वयंसेवक रहा। फिर घर जा कर बीमार हो गया और २-३ दिन के ज्वर में ही समाप्त हुआ। ठा० गदाधरसिंह का इकलौता पुत्र था।

१७-१-२३

बा० रामशरण एम० ए० छूट गये! ब्रह्मदेवशर्मा ने अच्छे शब्दों में एक मानपत्र अर्पण किया।

१६-१-२३

आज चौरा चौरी केस के १० कैदी यहाँ इस जेल में आये। स्टेशन से जेल तक पोलिस खड़ी थी। जेल में भी सब कैदी बारीग में बन्द कर दियें गये थे। ११ बजे बारीगें खुलीं, लोग कहते हैं बेचारे सीधे लोग हैं। ऐसे लोग ऐसा घोर काम नहीं कर सकते।

बावा राघवदास का ऊरई से पत्र आया—बम्बई जा रहे हैं। स्पेशल कांग्रेस लाहोर में होगी। 'न्यू पार्टी,' शीर्षक पं० कपीलदेव का लेख पढ़ा।

२०-१-२३

दलशृङ्गार और रसूल छूटे।

२१-१-२३

चौरा चौरी के केस के विषय में कलकत्ते के पादरियों ने लेख अच्छा लिखा है। कहते हैं कि ऐसे फैसलों से अंग्रेजों व देशियों में सदैव के लिये मनमुटाव हो जायगा।

२२-१-२३ (बसन्त)

हमने बसन्तोत्सव खूब मनाया। ब्रह्मदेवप्रसाद माणिक व पं० महादेवप्रसाद की फूलों की

चित्रकारी अवर्णनीय थी। फूलों का बनाया हुआ "भारतवर्ष का चित्र" अत्यन्त मनोहर था। गत वर्ष बरेली में धूम हुई थी। ऋतुराज! हम सब जेलबन्धु तेरा स्वागत करते हैं।

२३-१-२३

शारदापीठ के शंकराचार्य भागलपुर में हैं।

२४-१-२३

मालवीय जी चौरा चौरी केस की हाईकोर्ट में अपील करेंगे। ता० १६ फरवरी नियत है।

मि० दास अपनी जमीन, बंगला वगैरे बेच रहे हैं।
भारत में भिन्न भिन्न मतों की भरमार है।
बा० रामशरण का पत्र आया...मुरादाबाद सो रहा है।

२५-१-२३

चौरा चौरी के विषय में अफरीका का तार—रेड रिबेलियन में ७५०० को कैद व ३-४ को फांसी हुई थी। उस दंगे में १२०० मनुष्य मरे थे। चौरा चौरी में २२ मरे और उनके बदले में १७२ को फांसी!!!

नई पार्टी की मीटिंग बम्बई में २७ को होगी।
मुलशी पेंट का सत्याग्रह फिर चल रहा है।

२६--१-२३

श्री राजगोपालाचार्य कहते हैं २५ लक्ष रुपये रेल और तार में ही खर्च होंगे। लार्ड पील कहते हैं कि 'रिफार्म स्कीम' में अधिक सुधार करने का समय अभी नहीं है।

२७-१-२३

रॉयल-कमीशन 'सिविल सर्विस' के विषय में आ रहा है।

२८-१-२३

ठा० मशालसिंह पोलिटिकल क़ैदियों को छोड़ने के बारे में प्रस्ताव ला रहे हैं।

२९—१—२३

पं० महादेवप्रसाद छूटे। लीडर ने पोलिटिकल क़ैदियों के विषय में सुन्दर अग्रलेख लिखा है।

३१—१—२३

नये गवर्नर की स्पीच, पोलिटिकल भाई छूट रहे हैं।

लाट ने सबको छोड़ना निश्चय किया। सिर्फ एक को न छोड़ेंगे। न जाने यह व्यक्ति कौन है। हम लोग भी दो चार दिन में छूटेंगे।

१, २—२—२३

डा० सप्रु का प्रयाग का भाषण विद्वत्तापूर्ण था। आपने अपने अनुभव बतलाये कि सरकार की मशीन किस प्रकार काम कर रही है। रिफार्म कहां तक सफल हुए। लखनऊ जेल से ७० छूटे। ए० चौधरी का एक सुन्दर लेख 'वर्त्तमान दशा' पर लीडर में आया है। मालवीय जी ने भी वर्त्तमान स्थिति पर हिन्दु विश्वविद्यालय में व्याख्यान दिया। बी० सी० पाल ने कांग्रेस व खिलाफत के बारे में फिर लेखनी उठाई है। जॉर्ज जोसेफ कहते हैं कि प्रथम प्रथम हम लोग ही कामयाब रहे, गवर्नमेएट का रोब जाता रहा था। पश्चात् चौरी चौरा के मामले से गड़ बड़ हो गई।

४—२—२३

लखनऊ जेल को छोड़कर अन्यत्र कहीं से भी पोलिटिकल कैदियों के छूटने का समाचार नहीं आया। 'पोलिटिकल' शब्द के साथ खेल किया गया ऐसा प्रतीत हो रहा है। साथ के रहने वाले नवयुवक अधीर हो रहे हैं

६—२—२३

लाहोर में 'लारेन्स की मूर्ति' का झगड़ा फिर चला।

८—२—२३

आज एक बिल्ली को हमने २४ घएटे का कारावास का दएड दिया। यह बिल्ली गिलहरी के बच्चों को उठा ले जाती थी। इसको पास की कोठरी में बन्द कर दिया है।

६—२—२३

जर्मनों का फ्रान्सीसियों के साथ झमेला चल रहा है। टर्की सुलहनामे पर दस्तखत करने के लिये तैयार है। काउन्सिल में नान-पोलिटिकल कैदियों के बारे में प्रश्न हुआ—पोलिटिकल वे ही समझ गये जो लखनऊ में थे। स्व० कु० विश्वनाथसिंह के पिता ठा० गदाधरसिंह ने उसके जेल-जीवन के बारे में पूछा है, लिखकर भेजता हूं।

१०-२-२३

सादाबादी सेठ निरञ्जनप्रसाद छूटे।

११-२-२३

लीडर ने पोलिटिकल कैदियों के बारे में फिर पूछा है, अच्छा लेख है। हमारे नवयुवक साथी कुछ निराश हुये। उनको समझाया गया। लाहोर में बैरिस्टर दुनीचंद फिर पकड़े गये।

१२-२-२३

स्वा० विचारानन्द मिले, प्रयाग में दोनों दलों में समझौता हो गया। दो मासतक कोई किसी का विरोध न करेगा। विधायक कार्यक्रम रहा।

पं० प्रभुदयाल जी छूटे, महाभारत-सारोद्धार व शाश्वतधर्म—दीपिका ये दो पुस्तकें संग्रह करने योग्य है।

१५–२–२३

मुसलिम नैशनल युनिवर्सिटी के कनवोकेशन के अवसर पर श्री पी० सी० रॉय का अद्भुत व्याख्यान हुआ। ऐसा ऐतिहासिक व्याख्यान मैंने कभी नहीं पढ़ा। आपने मुसलमान भाइयों को उपदेश दिया कि भारत का पहले ध्यान रक्खो।

१६–२–२३

एनी बिसएटकी कनवेनशन के समाचार मिले, औपनिवेशिक स्वराज्य ध्येय है।

१७–२–२३

श्री दास की स्कीम पढ़ी। लीडर की राय भी जानी।

बाबा राघवदास बम्बई से लौटे-गोरखपुर में कानफ्रेन्स की तैयारी करवायेंगे।

१८–२–२३

बम्बई गवर्नमेएट ने भी स्पेशल क्लास के नियम बनाये। सिर्फ सिंपल वालों को स्पेशल मिलेगा। विचित्र नियम हैं।

२०–२–२३

भारतसारोद्धार समाप्त।

प्रिय ब्रह्मदेवशर्मा पड़रौना-निवासी 'योगदर्शन' पढ़ते हैं। समझदार होनहार युवक हैं, इनको राजनैतिक क्षेत्र का व्यापक ज्ञान है, इनको लिखने का अच्छा अभ्यास है। ऐसे युवकों को शिक्षण देने की आवश्यकता है। योग के समाप्त होने पर न्याय दर्शन करादेंगे। गीतातत्त्व भी समझा रहे हैं।

२१–२–२३

कलकत्ते में न्यूपार्टी की सभा हुई। परिणाम कुछ नहीं हुआ मि० दास के विचार सब ने सुन लिये। मिस्टर चक्रवर्त्ती पाल आदि पुराने देशभक्त विद्यमान थे।

२२–२–२३

ज्ञानेश्वरी समाप्त—ज्ञानेश्वरी क्या है ज्ञान का सागर है,

२३–२–२३

तुलसी रामायण का कलियुग वर्णन महाभारत के वर्णन से मिलता है।

२४–२–२३

शाश्वतधर्म दीपिका समाप्त।

चौरी चौरा केस ७ मार्च को होगा। मालवीय जी अग्रेसर रहेंगे। रामदास गांधी 'नवजीवन' केस में तम्बीह देकर छोड़ दिये गये। सम्पादक कालेलकर १ वर्ष के लिये भेजे गये।

२५-२-२३

बाबू भगवानदास जी का वर्तमान स्थिति पर लेख अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण है।

२६-२-२३

निखिल भारतीय शिक्षण कानफरन्स काशी में होगी।

२७-२-२३

मि० सत्यमूर्त्ति ने प्रयाग में कहा कि जब समय आया तब अच्छी तरह डटे नहीं, यही भूल हुई। मि० दास आज अनुयायिरहित नेता हैं पर वह दिन समीप ही है जब सब लोग उन्हीं के पीछे आवेंगे।

२८-२-२३

आज गढ़वाली के लिये 'गिरिराज के लिये सन्देश' लिखा। काऊन्सिल के प्रश्न से विदित हुआ कि केवल १०५ पोलिटिकल छोड़े गये हैं। १४१ अभी नहीं छोड़े गये।

१, २-३-२३

अठारह मार्च (गान्धी दिन) भारत भर में मनाया जायगा, हड़ताल होगी। इन बुद्धिमानों को एक वर्ष बाद हड़ताल सूझी है। होनी चाहिये थी उसी दिन जिस दिन पकड़े गये।

३-३-२३

काउन्सिल व ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के सब समाचार कल के लीडर में आये हैं।

४-३-२३

साथियों के सब सन्देश, समाचार आदि नोट कर लिये। अन्य कैदियों के भी। बाहर जाकर इनके सम्बन्धियों के पास पत्र डालने हैं।

आज होली धूमधाम से मनाई गई। गत वर्ष लखनऊ में 'होली' हो ली थी। जेल भर में आनन्द मङ्गल है। आज हमारे साथी नवयुवक ब्रह्मदेवशर्मा, माणिकचन्द, सूरजलाल भी आनन्द मोद में हैं, इन्होंने आज मुझे बेतरह रंग दिया है।

५-३-२३

वर्किङ्ग कमेटी भारत भर में घूमेगी।

६-३-२३

सर गंगाराम के पत्र से विदित हुआ कि कलकत्ते में भी लारेन्स की एक मूर्ति है, उस पर लिखा है 'योद्धा व राजकारणपटु'—इसी तरह लाहोर की मूर्ति के शब्द हटाकर कलकत्ते की मूर्त्तिवाले शब्द लिखे जायँ तो झगड़ा मिट सकता है। सर सर्वाधिकारी का भी यही मत है। असली बात यह है कि यह

मूर्त्ति विलायत में लण्डन शहर के लिये बनी थी। वहाँ लोगों ने पसन्द नहीं किया तो लाहोर में लाकर लगादी गई। पंजाब लारेन्स का कार्यक्षेत्र रहा है।

७-३-२३

महाविद्यालय का उत्सव सानन्द समाप्त हुआ, ब्रह्मदेवशर्मा का न्यायदर्शन अध्याय द्वितीय समाप्त।

८-३-२३

हमारे जेलर रायसाहब पं० चम्पालाल लखनऊ बदले जा रहे हैं। नैनीताल के नये जेलर आ रहे हैं। राय साहब जैसे जेलर हों तो जेलों की शोभा हो सकती है। सहृदय पुरुष हैं, कर्त्तव्यपरायण हैं, दूरदर्शी हैं अपना कर्तव्य करते हुये वे किसी का भी जी दुखाना नहीं चाहते।

९-३-२३

श्री गणेशशङ्कर पकड़े गये। आज भवानी बढ़ई ने अपना सब हाल सुनाया, उसने अपनी स्त्री को कैसे मारा-कैसे फाँसी से बचा, कैसे काले पानी की सज़ा हुई और क्या क्या हुआ।……लेपर होने से वह लेपर वार्ड में रहता है। इसके घरवालों को यही पता है कि फाँसी हो गई। अब मैं बाहर जाकर इसके पिता को पत्र लिखूँगा।

१०-३-२३

चौरी चौरा केस में मा० मालवीय जी ने अच्छे पाइन्ट पर बहस शुरू की है।

११--३--२३

जेल समाप्ति व्रत। आज पन्द्रह मास समाप्त हुए। करुणानिधान परब्रह्म की अपार कृपा हुई। नया जग देखा, नये अनुभव हुए। मेरे पीछे मेरे तीन साथी रहते हैं-ब्रह्मदेवशर्मा, ब्रह्मदेव माणिक और सूरजलाल, भगवान् इनको धैर्य देवे। इनको आवश्यक बातें समझा दी हैं। आज सब बांधाबान्धी कर डाली।

१२--३--२३

प्रातःकाल हुआ स्नान सन्ध्यावन्दन के पश्चात् साथियों से सुख-दुःख की बातें होती रहीं। ७॥ बजे चपरासी बुलाने आया 'चलिये'—फिर क्या था, वह दृश्य जिसने देखा वही जानता है। इधर जेल से छूटने का आनन्द तो उधर साथियों की वियोगजन्य करुणाजनक दशा। ब्रह्मदेवशर्मा ने झुककर प्रणाम क्या किया मेरे पैर अश्रुओं से भिगो दिये। माणिकचन्द मूक हो गया। सूरजलाल का कण्ठ रुक गया। मेरे सफैया आदि भी दुखी थे। मेरी भी विचित्र दशा हुई। सबको दिलासा देकर बारीग से चल दिया। मैंने देखा बेचारे अन्य कैदी भी दुःखी हैं, मैं क्या करूँ, संदेशे लेते लेते अस्सी जगह के संदेश हो गये। फाटक पर आया-सब से मिला जुला, जेलर साहब ने हिसाब किताब किया। छूटने का पास मिला, बड़े साहब आये, उन्होंने हस्ताक्षर किये और पूछा "शास्त्री जी! जाइयेगा" मैंने कहा "जी हां" उत्तर मिला "बहुत अच्छा"……………फाटक खुला, बाहर का मार्ग दीखा—मैं बाहर हुआ

और जेलर साहब की बैठक में जा बैठा। चलते समय मैंने अपने साथियों को हिदायत की कि मेरी गिलहरियों की खबर रक्खें, उनके खानपान में कमी न हो।

प्रातः ८॥ बजे फाटक से बाहर आया। ६॥ बजे तक साथियों के सम्बन्धियों के पास पत्र भेजे। फिर शहर में गया। पं० विष्णु भास्कर केलकर एम० ए० हेडमास्टर हिन्दू स्कूल से मिला और बहुत से सभ्य मिले। वहाँ से रेवतीराम का तालाब, बेली संस्कृत पाठशाला आदि प्रसिद्ध स्थान देख कर जेल को लौट आया। आज प्रातःकाल ही जेलर साहब ने निमन्त्रण दे रखा था। ११॥ बजे वापस आया। १२॥ बजे तक फिर पत्रादि लिखे। १॥ बजे भोजन हुआ फिर ३॥ बजे तक लिखाई हुई। लीडर में दो लेख भेजे। एक खुली चिट्ठी थी व एक खिलाफत के विषय में लेख था। ये दोनों लीडर में छप गये हैं। ३॥ बजे मुन्शीगंज का प्रसिद्ध स्थान देखने गया जहाँ गोली चली थी। सरदार वीरपालसिंह का मकान इसी मार्ग पर है। स्थान देखकर व सब वृत्त सुनकर चित्त व्याकुल हुआ। एक जानकार मनुष्य मेरे साथ था। ४॥ बजे लौटा। जेलर साहब से आज्ञा या अनुज्ञा लेकर शहर में आया। व्याख्यान का नोटिस शहर में पहले ही घूम गया था। आर्यसमाज मन्दिर में व्याख्यान हुआ। अध्यक्ष थे बा० किसमतराय जगाधरी वकील। व्याख्यान देकर ६-२० पर स्टेशन पर पहुंचे। बहुत से सज्जन स्टेशन पर ही मिले। लगभग ७। बजे गाड़ी आई, हम गाड़ी में बैठे, गाड़ी ने सीटी दी। रायबरेली शहर, हमारा जेल, हमारे साथी सब पीछे रह गये। कहाँ एक वह दिन था कि लखनऊ से बेड़ी डण्डा पहन कर पुलिस के साथ यहाँ आये, कहाँ आज का दिन कि स्वतन्त्रता से जा रहे हैं—

"सब दिन होत न एक समान।"

फिर मुरादाबाद

१३-३-२३

प्रातः १० बजे मुरादाबाद आये। मार्ग में बहुत से परिचित मिले। रेल में बैठे बैठे ६०—७० पत्र लिख डाले होंगे। यह सब काम क़ैदी भाईयों का था। दिन भर मुरादाबाद में रहे। मुरादाबाद जेल में रहने वाले भाइयों से मिलने गये पर मिलाई नहीं हुई। हां पुराने जमादार, देहरे जेल से आये हुए दो तीन वार्डर मिले। विशेष विशेष व्यक्तियों से मिल कर रात्रि की ऐक्सप्रेस से देहरे के लिये प्रस्थान किया। पं० शंकरदत्तशर्मा व बाबू रामशरण एम० ए० म्युनिसिपैलिटी में चुनाव के लिये खड़े हुए हैं।

फिर देहरादून

१४-३-२३

प्रातःकाल का समय-स्टेशन लुक्सर पर हमारी गाड़ी ठहरी थी कि बाहर से आवाज़ आई "शास्त्री जी! शास्त्री जी"--मैंने कहा कौन है? उत्तर मिला 'मैं हूं नारायणदास' ओ हो! देहरे के दूत यहाँ

भी आ पहुँचे—बड़ा हर्ष हुआ। देहरे तक मार्ग भर की बातें होती रहीं। ७॥ बजे हम देहरे स्टेशन पर आ पहुँचे। सवा वर्ष के पश्चात् देहरे के स्टेशन पर आगमन हुआ—सैकड़ों भाई मिले—खूब धूम-धाम हुई, शहर भर फिरे। आर्यसमाज मन्दिर के सम्मुख मैदान में गिने चुने शब्दों में मैंने देहरा-वासियों को धन्यवाद दिया और इस तरह लगभग दस बजे लोगों के हाथ से छुटकारा पाया, जिस दैव ने मुझे ता० १३ दिसम्बर १६२१ को दूसरा दृश्य दिखाया था, उसी दैव ने आज मुझे दूसरा दृश्य दिखाया।

म्युनिसिपैलिटी का चुनाव

दोपहर भर चुनाव की धूम रही है। चुनाव के स्थान में अच्छा खासा मेला लग गया था। रात्रि के ग्यारह बजे बा० नारायणदास आदि ने आकर खबर दी कि कांग्रेस की जीत हुई—चलो अच्छा हुआ।

१५-३-२३

आज मुसलमान भाइयों का चुनाव था और आज हमारे भाई भी कामयाब हुए।

१६-३-२३

प्रातः ७॥ बजे ज्वालापुर को प्रस्थान। ११ बजे यहाँ पहुँचा। महाविद्यालय के अधिकारियों ने बड़ा आडम्बर रचा था। शहर भर में धूम थी, विद्यालय में भी धूम थी, मानपत्र आदि लेने के बाद छुटकारा हुआ।

१७-३-२३

लोगों से मिलने मिलाने में, पत्रव्यवहार आदि में ही समय लगा।

१८-३-२३

देहरे में गांधी दिन धूमधाम से मनाया गया। लोगों में अपूर्व उत्साह था। हड़ताल भी जोर की रही। आज युवा संवत (१६८०) का प्रारम्भ है।

ता० १६ से २३ तक

देहरे की स्थिति के सूक्ष्म अवलोकन में गया। विदित हुआ कि अन्तःस्थिति अच्छी नहीं है।

२३ से ३१ तक

ज्वालापुर महाविद्यालय का निरीक्षण व परीक्षण।

१-४-२३

तहसील व जिला कांग्रेस कमेटी की सम्मिलित बैठक हुई। इसमें बहुत कार्य हुआ। बहुत से झगड़े निमट गये। बहुत से सुधार हुये।

४-४-२३

बा० उग्रसेन जी म्युनि० के प्रेसिडेण्ट चुने गये।

९ से १८ तक

पूर्व (परवादून) में परिभ्रमण। डिस्ट्रिक्टबोर्ड के चुनाव में कांग्रेस के सदस्यों का आना कठिन है। जमींदार बहुत ज़ोर मार रहे हैं जहाँ तहाँ कांग्रेस का संगठन शिथिल है। बड़ी कांग्रेस में दो दल हो गये, इस कारण भी शिथिलता आ गई है।

बस पाठक! अब इस वृत्त को यहीं समाप्त करता हूं। जेल से लौट आने पर चहुँदिशा से बधाई के पत्र आये जिससे लोगों के प्रेम का परिचय मिला। जेल में जाकर हमने नई दुनियां देखी और बाहर आकर भी नई—बिलकुल बदली हुई दुनियां देखी। समय की विचित्र गति है। जिस स्वराज्य की धुन में हम लोग जेल में गये उस स्वराज्य के लिये अभी बहुत स्वार्थत्याग की अपेक्षा है। अभी तक जो प्रयत्न हुआ है वह ऐसा ही है जैसे दरिया में खसखस। अब दूसरे लोग जो दूर से बैठे हमारा तमाशा या दुर्दशा देख रहे थे, कहते हैं कि 'कहो क्या कर लिया? हम पहले ही कहते थे, इसको अज्ञान कहें, भारत के दुर्भाग्य कहें, या क्या कहें। भगवान् हम सबको बल देवे। भगवान् हम सबको सुबुद्धि देवे। भगवान् हम सबकी निराशाओं को दूर करे। मेरे सैकड़ों भाई जो अभी जेल में ही हैं उनके लिये मंगलकामना करता हुआ मैं इस वृत्त को समाप्त करता हूँ। उन बेचारों के पास जब बाहर की उदासीनता के समाचार पहुँचते हैं, व्याकुल हो उठते हैं। उनके पत्रों से यह बात स्पष्ट झलक रही है। मेरा उनसे यही कहना है कि "आप लोग पुण्यवान् हैं जो जेल में हो, हम लोगों के पाप शेष हैं जो हम इस दुर्दशा को देखने के लिये बाहर आये। मेरा अपना बाहर का एक मास का अनुभव है कि बाहर से भीतर बहुत आनन्द है, जेल के बाहर रह कर ऐसी उदासीनता को देखते रहने से भीतर जेल में रह कर कष्ट उठाना हज़ार बार अच्छा है !!!

उन नवयुवक भाइयों को शुभाशीः जो घर बार छोड़कर केवल देशभक्ति की उत्कट लालसा से जेल में जा पहुँचे हैं। उस भारत को प्रणाम जो अपनी आंखों महात्मा गांधी व हज़ारों भाइयों की दुर्दशा देख रहा है फिर भी टस से मस नहीं होता।

१९-४-२३

स्वा० सत्यदेव जी का पत्र आया। बधाई दे रहे हैं और लिख रहे हैं कि विलायत चलो। स्वामी जी आँखों को ठीक करने के लिये विलायत जा रहे है। मैंने लिख दिया है कि मैं इतनी शीघ्र तैयारी कैसे कर सकता हूँ। चाहूं तो भी इस समय नहीं चल सकता।

२३-४-२३

रायबरेली जेल से साथियों के समाचार मिले, बलिया के ब्रह्मदेवप्रसाद माणिक ता० एक मई को छूटेंगे। सूरजलाल जौलाई में और ब्रह्मदेवशर्मा पडरोनानिवासी कहीं अक्तूबर में। इनकी माता का एक पत्र आया है। ब्रह्मदेव का हाल पूछ रही हैं। ब्रह्मदेवशर्मा को २॥ वर्ष का दण्ड हुआ था। एक वर्ष और शेष है। इनकी माता को पत्र द्वारा तसल्ली दे दी कि घबराइये नहीं। ऐसे सैकड़ों युवक

जेल में हैं जिनकी माताओं को जो कष्ट हो रहा होगा वे ही जानती होंगी। वे माताएँ धन्य हैं जिनके सुपुत्र देशकार्य में संलग्न हैं।

२४-४-२३

श्री कविवर पं० नाथूराम शंकरशर्मा का शुभाशीः परक एक पत्र आज मिला—

"शंकर छोड़ेंगे नहीं जो परहित की टेव,
बन जावेंगे वे सुधी देशभक्त नरदेव"

कवियों की कृपा है, जो कुछ कहें, पर मैं तो अभी किसी योग्य नहीं हूँ। परहित-साधना व देशभक्त होना अत्यन्त कठिन कार्य है। जेल जाने के पूर्व मैं बहुत अज्ञान में था, वहाँ जाकर बहुत सा अज्ञान दूर हुआ—देशभक्त कहलाने योग्य हो जाऊँगा तो अपना सौभाग्य समझूँगा। अभी तो देशभक्ति का अ—आ—इ—ई सीख रहा हूँ।

२५-४-२३

श्री ६ गुरुवर पण्डित काशीनाथशास्त्री जी महाराज का शुभाशीर्वाद भी पहुँचा।

ॐ तत्सत्, श्री कृष्णार्पणमस्तु

पक्षी पींजड़े से छूटा

जेल से छूटने के पश्चात् सब मित्रों और परिचितों के पास निम्नलिखित श्लोक छाप कर भेजा गया।

शिशिरसमये योऽभूत् क्लिष्टश्चिरं हतपक्षतिः
धरणिकुहरेष्वन्तः कालं निनाय शुचाकुलः॥
कुसुमसमये प्राप्योद्यानं विकासिलतोज्ज्वलं।
किसलयरतः सोऽयं भृङ्गः सुखं रमते पुनः॥

यह राजतरंगिणी का श्लोक है। बसन्त में ही मेरी रिहाई हुई है इस लिये यह श्लोक उपयुक्त ही है।

अर्थ

शिशिर ऋतु में पंखों के मारे जाने से जिसको बहुत देर तक क्लेश हुआ और जिसने पृथ्वी के छेदों में बड़े दुःख व शोक से दिन काटे वही भृङ्ग आज बसन्त ऋतु में खुले हुए, खिले हुए, पुष्पों से भरे हुए बाग की कलियों में खूब रम रहा है।

कारागाररूपी पींजड़े से छूटा हुआ :
"नरदेवशास्त्री"

(२)

संवत् के दिन सब परिचितों के पास निम्नलिखित आशय का कार्ड भेजा—

१—एक हों सब देश-वासी देश के शुभ कार्य में।
९—ग्रह सभी अनुकूल हों इस देश के शुभ कार्य में॥
८—दिगदेवता सन्तुष्ट हों इस देश के शुभ कार्य में।
०—विघ्न बाधा शून्य हों इस देश के शुभ कार्य में॥

१९८० युवा संवत्।

जेल में रहते हुए मैंने हिन्दी कविता की तुकबन्दी का खूब अभ्यास किया था, उसी तुकबन्दी का यह नमूना है। कवि लोग इस पर हँसेंगे, विद्वान् कहकहा उड़ायेंगे और मैं कृतार्थ हो जाऊगा।

पुनर्जन्म।

कारापञ्जरनिर्मुक्तः पक्षीवाक्षतपक्षतिः।
पुनर्जातमिवात्मानं— नृदेवो मन्यतेतराम्॥

पींजड़े से छूटे हुए किन्तु साबुत पंख वाले पक्षी की भाँति नरदेव भी जेल से छूट कर अपना पुनर्जन्म समझता है।

स्वराज्य कब मिलेगा।

राजतरङ्गिणी के शब्दों में मैं यही कह सकता हूँ कि—

यावज्जीवं दरिद्रत्वं, दशवर्षाणि बन्धनम्॥
शूलस्य पृष्ठे मरणं, पुना राज्यं भविष्यति॥

जब देशभक्त लोग जन्मभर दरिद्रता को सुखपूर्वक भुगतने के लिये तैयार रहेंगे, दस-दस, बीस-बीस वर्ष की जेल को काटने के लिये उद्यत होंगे, निर्भय होकर शूली व फाँसी पर चढ़ने के लिये तैयार रहेंगे—तब स्वराज्य मिलेगा। अभी तो लोग जेल का दरवाज़ा ही देख कर आये हैं।

हम कहां थे और कहां जाना है ?

प्र०—हम कहाँ थे ?

उ०—वह जगह तो पीछे बहुत दूर रह गई, पीछे बहुत दूर रह गई ।

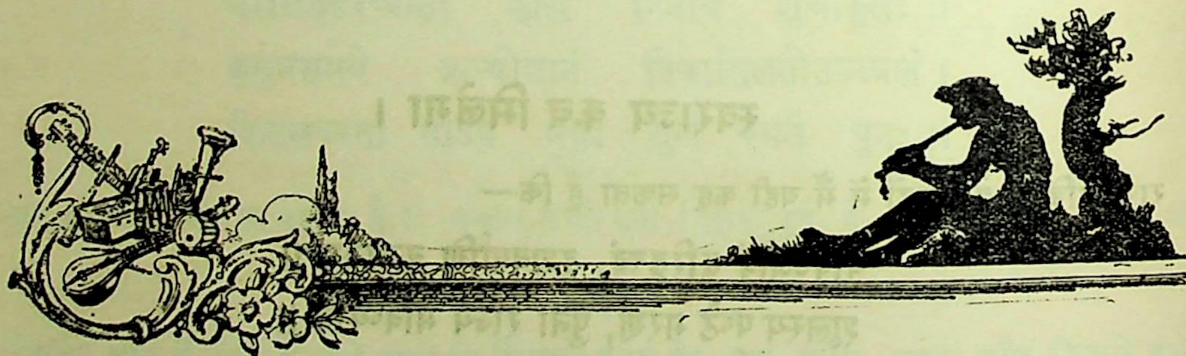
प्र०—कहाँ जाना है, कितनी दूर है ?

उ०—वह जगह भी आगे बहुत दूर है, आगे बहुत दूर है ।

१९३०

नमक-सत्याग्रह

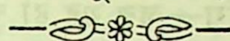
इसमें छह मास की सादी क़ैद तथा ५०) रु० दण्ड हुआ था। कुछ दिन देहरादून जेल में रखने के पश्चात् हम फैजाबाद जेल में भेज दिये गये। श्री महावीर त्यागी, पं० नारायणदत्त डंगवाल, स्वा० विचारानन्द, हुलासवर्मा हमारे साथ ही रहे।



जेलखाने में होली का हुडदंग

मौलवी, पंडित तथा सभी एक रँग में रँगे थे

(देशदूत १९४०)



मैं उस होली को कभी नहीं भूलूँगा जो कि हमने सन् १९२२ में लखनऊ जेल में मनाई थी। उस समय संयुक्त प्रान्त के सभी विशिष्ट क़ैदी (सत्याग्रही) लखनऊ जेल में ही थे। थे कोई नौ सौ सत्याग्रही।

होली के दिन सब ने यही ठान ली थी कि आज चाहे हिन्दू हो, चाहे मुसलमान, चाहे सनातनी हो, चाहे आर्यसमाजी, चाहे नास्तिक हो चाहे आस्तिक सबको एक सिरे से रँग दिया जायगा, कोई बख्शा नहीं जायगा। छोटों ने भी ठान ली कि आज कोई बुजुर्ग न छोड़ा जायगा। सबसे पहले हमारी ही बैरक नं० ३ के आचार्य कृपलानी रँगे गये, एक आया और उसने चुपके से इनके सिर पर रंग उँडेल दिया। श्री कृपलानी जी हैं बड़े मज़े के आदमी। पहले ही लम्बे २ बालों के कारण भूत से लगते थे। रंग में तर हो जाने से भूत-शिरोमणि जँचने लगे।

जेल में होली

मैं यद्यपि ऐसा कट्टर आर्यसामाजिक नहीं था तो भी होली के हुल्लड़ से बचना ही चाहता था। उस समय आर्यसामाजिक विचार के सत्याग्रही थे कोई दो सौ व्यक्ति। उन्होंने हुल्लड़ मचाने वालों से साफ़ २ कह दिया कि ख़बरदार अगर तुमने रंग डाला तो-यह झंझट हो ही रहा था कि एक मुसलमान ने आकर मेरे सिर पर एक लोटा रंग का उँडेल दिया, मैं चुपचाप एक वृक्ष के नीचे बैठा था। आशा कर रहा था कि मुझे बख्श दिया जायगा पर कौन सुनता था। उस हुल्लड़ में पढ़े-लिखे भी गधे हो रहे थे।

मुझ पर रंग डालते ही हमारी बैरक में एक अद्‌भुत ही दृश्य दिखाई दिया। एक-एक को तीन-तीन लिपट गये, किसी का मुँह रँग, किसी की डाढ़ी रँग, किसी पर रंग से भरा लोटा उँडेल, यही हुडदंग रहा। आज जेलवाला कोई भीतर बैरकों में नहीं आया, न जेलर, न नायब, न वार्डर, न राइटर। जो भूल से आ गया उसको तो खूब रंग ही दिया। मौलाना बोले या 'अल्ला', कट्टर मुसलमान बोले "तोबा-तोबा", आर्यसमाजी बोले "जेल में भी यह कुरीति ! लोग वैदिक-धर्म के तत्व को ही नहीं समझते। इसीलिए भारतवर्ष नष्ट हो रहा है। भारतवर्ष खोखला हो रहा है।"

सब एक रंग में

पर चाहे कुरीति हो, चाहे कुछ, सब की गत बना दी गई थी। मालूम नहीं, मनों रंग कहीं से आ गया था। मालूम नहीं अर्थी बनाने के लिये बाँस कहाँ से मिल गये। रात की रात में सामान जुट गया था।

रँगे हुए मौलवी-मौलाना ऐसे लग रहे थे—बस क्या कहूँ हमारे मित्र पं० बद्रीदत्त पाण्डे जो भी पास से निकलता उसके सिर हो जाते-किस की क्या गति हुई यह लिखने बैठूँ तो एक पुस्तक ही बन जायगी, न मौलवी छोड़ा न मुल्ला, न पण्डित बचा न प्रोफेसर, न ग्रन्थकार बचा न सम्पादक। जब सब जेल भर में सबने सबको भूत बना दिया तब सब सत्याग्रहियों ने एख़लाकी क़ैदियों से मिलने की ठानी। खोल बैरक, पकड़ क़ैदी को, दे रँग—जब यह हो चुका, तब जेल के सेण्टर में सब एकत्रित हो गये और एक जनाजा निकाला गया—वाचकवृन्द कहीं मुझे इस कार्य में संमिलित न समझ बैठना, मैं तो एक दर्शकमात्र था। जनाजा था सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल का, आज तो लोग इतने मस्त थे कि वायसराय का भी जनाजा निकाल देते। इतने में सुपरिण्टेण्डेण्ट आये। आइए साहब, आइए साहब, होली में संमिलित हूजिये साहब-एक ही हो हल्ला था। साहब ने देखा कि आज पूरी गत बनेगी इसलिए वे उलटे पाँव वापस चले गये। बहुत से भँगड़ी सत्याग्रहियों ने 'विजया' छानने की सामग्री भी कर ली थी। कोई कोई सुस्वर से "फेर छनेगी भंग"। गा रहा था। सारांश पुराणों में 'भूत-नृत्य' की कथा सुनते थे। वह सत्य हो या न हो, हमने अपनी आँखों यहाँ भूत-नृत्य देख लिया—

मज़े की बात

उस हुड़दंग में एक बड़े मज़े की बात यह थी कि 'ए' क्लासवालों के पास नाना प्रकार की खाद्य सामग्री रहती थी, जब ये अपने रंग में मस्त थे तब सी क्लासवालों ने दीवारें फाँद फाँद कर उसका आस्वाद लिया। बादाम, पिश्ते, किशमिश, केले, संतरे, नारंगी, नासपाती, सेव, गोला, घी, शकर-क्या पूछते हो, कुछ भी तो न छोड़ा। यह होली 'ए' क्लासवालों के लिये महँगी सी पड़ी। पर ऐसी होली मची कि बाहर भी ऐसी होली न कभी देखी न सुनी—

हमारे आर्यसमाजी भाई भी विचित्र प्राणी हैं। होली के हुड़दंग के बाद प्रायश्चित्त रूप में उन्होंने एक वृहद् हवन की योजना की, वही "विश्वानि देव" वही स्वस्तिवाचन, वही शान्तिप्रकरण, वही "जय जय पिता परम आनन्द दाता" आदि गीत। स्वर्गीय पण्डित वंशीधर पाठक बरेली-निवासी ने "होली के महत्त्व" पर लम्बा व्याख्यान दिया।

"भाइयो, प्राचीन समय में प्रत्येक ऋतु-परिवर्तन के अवसर पर यज्ञ-याग हुआ करते थे। होली के अवसर पर "नवसस्येष्टि नामक इष्टि हुआ करती थी" भाइयो, आज आपने यहाँ जेल में जो दुर्दृश्य देखा इस प्रकार के दुर्दृश्य उस समय में देखने को नहीं मिलते थे।" इतना कहना ही था कि सीतापुर के एक नवयुवक ने एक रंग का लोटा पण्डित जी के सिर पर लुढका दिया—

झगड़ा होते होते बचा—मैंने बीच बिचाव किया, किसी प्रकार आर्यसमाजियों का हवन समाप्त हुआ—

सायंकाल ४ बजे जाकर कहीं शान्ति हुई।

मैं यही सोचता रहा कि इस होली को इस प्रकार का रूप कबसे मिला। कहते हैं कि यह शूद्रों का त्योहार है, हाँ है तो सही, जिस प्रकार त्योहार मनाया जाता है इसमें तो सभी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, चाण्डाल एक से ही बन जाते हैं।

जहाँ होली सामने दीखी कि ८-८,१०-१० दिन पहिले से उपलों की, लकड़ियों की चोरी करने लगते हैं। दूसरों के घर के किवाड़ भी सुरक्षित नहीं रहते। इन्हीं लकड़ियों की होली जलाई जाती है। धुलैंडी के दिन ग्रामों तथा नगरों में रास्ते में चलना मुश्किल हो जाता है।

प्रथा में सुधार

गत ४० वर्षों से इस प्रकार की प्रथा में कुछ सुधार होने लगा है। शिष्ट समुदाय अब सभ्यता से होली मनाने लगा है। होली के दिनों में किसी का हास-परिहास करना, किसी को कुवाक्य कहना, स्वयं भूत बनकर दूसरों को पिशाच बनाना सब क्षम्य है। इन दिनों हास-परिहास में परस्पर शत्रु भी मित्र बन जाते हैं।

होली जैसे त्योहार सभी देशों में है। 'एप्रिल फूल' के दिन सारा पाश्चात्य जगत "फूल" (मूर्ख) बन जाता है। जिस किसी को जो चाहे लिखो, झूठ बोलो परेशान करो। सब क्षम्य।

मनुष्य तीन गुणों का पुतला है, सत् रज, तम। इसमें जिस प्रकृति का जो मनुष्य है वह अपनी प्रकृति के अनुरूप ही चलता, बरतता तथा अपने त्योहार मनाता है। हमारी आर्यजाति ने एक एक जाति को एक एक विशिष्ट दिन दिया है—ब्राह्मणों की श्रावणी, क्षत्रियों का दशहरा, वैश्यों की दिवाली, शूद्रों की होली—प्रधान दिन माने जाते हैं। सब जाति के लोग सब के त्योहारों में आनन्दपूर्वक संमिलित होते हैं, भेद-भाव को भूल कर संमिलित होते हैं। होली भेद-भाव को सर्वथा भूलकर आमोद-प्रमोद करने का त्योहार है।

असली होलियाँ तब होती थीं जब "हमारी ही जमीं और हमारा ही आसमाँ" था। आज हम दीन हीन, पराधीन हैं। स्वाधीन बनेंगे तब असली होली खेलेंगे। कालचक्र के प्रभाव से हमारे त्योहारों में अनेक दोष आ गये हैं वे भी तभी दूर हो सकेंगे। हमको अपने त्योहारों को, चाहे वे सदोष भी हों, नहीं छोड़ना चाहिये। हिन्दूजाति इन त्योहारों के कारण ही जीती है और इन्हीं के कारण इस पतित दशा में भी जीती-जागती प्रतीत होती है। सोने के साथ मिट्टी रहती है इसलिये हम सोने को फेंक देंगे तो हम जैसा मूर्ख कौन होगा।



मेरी फुलवाड़ी

देहरादून जेल की आत्म-कहानी

(अर्जुन-१९३२)

[१]

प्रिय वाचक, इस लेख के शीर्षक को पढ़ कर कहीं किसी और भ्रम में न जाइयेगा। यह है मेरी जेल की संक्षिप्त रामकहानी—अबकी वार 'सी' क्लास का भी मजा देखा और 'बी' क्लास का भी। पर रहा मैं शुरू से आखिर तक देहरादून जेल में ही। सौभाग्य से जहाँ श्री पं० जवाहरलाल जी, श्री गोविंदवल्लभ पन्त, श्री कुंवर आनन्दसिंह जी आदि के दर्शन और सहयोग का लाभ हुआ। ये महानुभाव देहरदून जेल से बाहर एक पुरानी छोटी जेल में जिसको वार्डर्स क्वार्टर्स कहते हैं, और जो हाल ही में तोड़ फोड़ कर ठीक की गई है, रक्खे गये थे—श्री पं० जवाहरलाल जी, काशी के म्युनिसिपल कमिश्नर श्री दीवान रामचन्द्र कपूर अब भी इसी में रहते हैं। श्री अब्दुल लतीफ साहब और कुंवर आनन्दसिंह साहब यूरोपियन बैरेक में हैं।

लेख का शीर्षक "मेरी फुलवाड़ी" इस लिये रक्खा गया है कि मैंने अपने अथक परिश्रम से जेल के भीतर ऐसी सुरम्य सुन्दर फुलवाड़ी तैयार की थी कि जिसको देख कर क़ैदी और जेलाधिकारी समानरूप से प्रसन्न होते रहते थे। इस फुलवाड़ी में मेरा सारा दिन कटता था—फिर बतलाइये मैंने इस लेख का शीर्षक "मेरी फुलवाड़ी" रखा तो क्या बुरा किया। पं० जवाहरलाल जी का जन्म-दिन अंग्रेजी हिसाब से जिस दिन पड़ता था (ता० १४ नवम्बर) उस दिन हमने एक पुष्प-गुच्छ उनके पास भी भेजा था। इस फुलवाड़ी में नाना प्रकार के सुन्दर पुष्प थे और इनमें से प्रतिदिन बहुत से पूजा-अर्चा के लिये बाहर जाते थे और न जाने किस किस देवता के ऊपर चढ़ते थे। दीवान रामचन्द्र जी कपूर के पार्थिव शिव पर भी चढ़ते थे। श्री कपूर जी कट्टर शिवोपासक हैं और दिनचर्या के तीन घण्टे शिव-पूजा में ही व्यतीत करते हैं। मेरी फुलवाड़ी के फूल कभी जेलर, कभी २ डिप्टी जेलर और कभी नायब साहब के गलों का हार, कभी गुलदस्ते के रूप में उनके गृह के मेजों की शोभा बनते थे। श्राद्धों के दिनों में तो वार्डरों ने इतने फूल तोड़े की बस पूछिये नहीं।

हमारे सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री कर्नल फेलवेव जब देहरादून से मेरठ बदले जाने वाले थे, तब उनके स्वागतार्थ एक प्रीतिभोज हुआ, बैण्ड आया, बाजे बजे और मेरी 'फुलवाड़ी' के फूलों की भी लूट मची।

उस दिन बने होंगे तीस-चालीस हार। पर सबसे अधिक गुस्सा मुझे तब आता था जब कि वार्डर लोग मेरी 'फुलवाड़ी के हार बना कर पहनते और फिर क़ैदियों को ही डांटते कि "ये, यह काम ठीक नहीं हुआ, वह काम ठीक नहीं हुआ।" इखलाकी क़ैदी भी शैतान के छोटे भाई होते हैं। ये भी बहुत फूलों को तोड़ कर व्यर्थ इधर उधर फेंक देते थे। हम जब उनसे कहते कि मूर्खो, ऐसा क्यों करते हो, तो वे चिढ़ कर उत्तर देते कि क्या आप जेलखाने को सजाने आये हैं। फेंको उखाड़ कर इन पेड़ों को।

जब मैं बाल्यावस्था में पूने में पढ़ता था तभी से मुझे फुलवाड़ी लगाने का शौक था—और बड़ा होकर मैं जहाँ २ भी रहा इस विषय में मेरा शौक बढ़ता ही गया। और मैंने यत्र-तत्र अपने हाथ से लगाई हुई फुलवाड़ी की बड़ी सेवा, रक्षा की। शायद इसी सेवा से प्रसन्न होकर जेल की फुलवाड़ी भी मेरी रक्षक बनी। जेल में सदा मैं चारों ओर फुलवाड़ी में घिरा हुआ था। जेल में प्रवेश करने के पश्चात् १। मास तक बान बटता रहा और लगभग डेढ़ सौ गज बान बट लेता था। फिर मेरा परिवर्तन हुआ फुलवाड़ी के काम में। जब मुझे यह कार्य मिला तब मैं अत्यन्त प्रसन्न होकर इसकी सेवा करने लगा। और मेरा नाम "माली" पड़ गया। जो मुझे नहीं जानते थे, उन बेचारों को क्या पता था कि एक पंडित, शास्त्री वेदतीर्थ पानी की बाल्टी भर भर कर पेड़ों को सींच रहा है। साधारण क़ैदी मुझसे इसलिये नाराज रहते थे कि मैं इतना परिश्रम क्यों कर रहा हूँ। देहरादून जेल में पानी का बड़ा संकट है और जेलर साहब वैसे हमारे काम से बहुत प्रसन्न रहते थे, पर फुलवाड़ी में मैं अधिक जल खर्च कर देता था, इसलिये कभी कभी कह बैठते थे, "महाराज थोड़ा २ जल दीजिये।" पर इस विषय में मैंने जेलर महाशय की एक बात भी नहीं मानी, इस फुलवाड़ी की बदौलत जेल जेल ही नहीं प्रतीत होती थी। जेल में वर्ण-परिवर्तन इतनी शीघ्रता से होता है कि बस मत पूछिये। कलम के एक झटके के साथ, किसी को धोबी, किसी को नाई, किसी को भंगी, किसी को सफैया बनाया जाता है। रूस में प्रतिदिन अनुभव में आने वाली बोलशेविकों की समता अथवा साम्यवाद यहीं तो देखने को मिलता है।

धनी, मानी, पंडित, शास्त्री, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, चमार, भंगी सब एक साथ रहते, खाते पीते और पहरते हैं, कोई भेद-भाव नहीं—सबके सब नम्बरवार चक्की में, कभी बान में, कभी मूंज में और कभी रामबांस की कुटाई में रगड़े जाते हैं। जेल का जड़-यन्त्र सबको पीसता रहता है—और ऐसा पीसता रहता है कि बाहर आने पर न तो पोलिटिकल क़ैदी किसी काम का रहता है न इखलाकी क़ैदी—मुझे इन्हीं इखलाकी क़ैदियों के साथ रक्खा गया था, जिनमें चोर, बदमाश, डाकू, औरतों को भगाने वाले, धोकादेही अर्थात् धारा ४२० में पकड़े हुए, शराब बनाने वाले, अधिक क्या लिखूं संसार का ऐसा कोई बुरा कर्म शेष नहीं था जिसके क़ैदी हमारी बैरक में न आये हों या न रहते हों—

हमने मन में सोचा भगवन् अबके कैसे बीतेगी। पीछे भीतर से आवाज आई "अरे देव वह तेरा पढ़ा हुआ वेदान्त कहां गया? वेदान्तदृष्टि से विचार करके व्यवहार कर, तब यह इहलोक का नरक जेल भी स्वर्ग बन जायगा।" बस मैंने वैसा ही किया और जेलखाना मेरे लिए, एकदम वेदान्त की प्रयोगशाला बना—

मेरी फुलवाड़ी

[२]

हमारी बैरक में बड़े २ इश्कबाज भी रहते थे। दुर्भाग्य से अथवा सौभाग्य से एक मिरासी गवैया भी आ गया। इसके आने से एक लाभ यह हुआ कि सायंकाल जब बैरक बन्द हो जाती थी तब बहुत रामरौला मच जाता था और रात्रि को ६ बजे तक लोग गाजरें बेचा करते थे, अर्थात हुल्लड़ मचाते रहते थे। इस मिरासी के आने से वह बातें बन्द हुईं और लोग उसका गाना सुनने के लिये चुपचाप बैठ जाते थे। मैं भी भगवान् का नाम लेता हुआ अपनी खाट पर पड़ जाता था,–मैं तीन बार इस जेल में आया। १६२१ में १६३० में और १६३२ में। तीनों बार मुझे तीन नम्बर की ही बारीक मिली। तीनों बार मुझे वही पहले नम्बर की सीट मिली, और तीनों बैरक की लिस्ट में नम्बर एक पर मेरा ही नाम लिखा गया। इस विलक्षण योगा-योग को देख कर मैं कभी कभी यह सोचने लग जाता था कि कहीं देहरादून जेल की तीन नम्बर की बैरक की यह खटिया किसी समय मेरी समाधि तो नहीं बन जायगी ?

हाँ तो मैं बात लिख रहा था एक पंजाबी मिरासी की—कितना मधुर गायक था पूछिये नहीं, पर इसको अधिकतर आशिक-माशूकों के ही गीत याद थे, इसने लैला-मजनूँ, हीरा रांजा आदि का पोथा खोल दिया। कभी २ बुल्लेशाह का वेदान्त भी चलता था। जब हम इसको डपट देते थे, तो कभी २ बीच में—

"आँखों का सितारा गाँधी"

यह भी गा देता था।

जरा आप उसके नमूने सुनिये। मैंने मन में सोचा कि संसार है, सब प्रकार के लोग हैं और प्रत्येक की रुचि भिन्न है इसलिये इन गीतों को भी वेदान्त की दृष्टि से देखना चाहिये और मेरे लिये वे सब अश्लील गीत दूसरे अर्थों में दिखाई देने लगे।

मस्त रहते हैं यहाँ, बस्ती है मस्तानों की।
यह है बाजार जनूं, भीड़ है दीवानों की॥

मैंने इसका अर्थ पोलिटिकल दीवानों की ओर लगाया।

❀ ❀ ❀ ❀

या इलाही मिट न जाये दर्दे दिल।
मिटने वालों को मिटाये दर्दे दिल॥

यहाँ "मिटने वाले" शब्द के स्थान में "मिटाने वाले" शब्द को रख कर मैंने और रंग चढ़ाया—

❀ ❀ ❀ ❀

लहद में भी मेरे, शाने हिलाये जाते हैं।
सताने वाले यहाँ भी, सताये जाते हैं॥

हमने इसका यह अर्थ लगाया कि जेल में हमारे भाइयों को कष्ट देने वाले जेलाधिकारियों की भी कभी तो गत बनेगी ही।

❀ ❀ ❀ ❀

दर्दे दिल भी क्या कोई, माशूक है।
जिसको देखो मुब्तलाए, दर्दे दिल॥

हमने इससे यह मतलब लिया कि इस आन्दोलन में प्रत्येक भारतवासी को 'दर्दे दिल' लगा हुआ है, क्योंकि भारतीय कष्ट अब न सहे और न देखे जा सकते हैं।

❀ ❀ ❀ ❀

जान तक भी मैंने दे दी आपको
आप क्या दोगे सिवाये दर्दे दिल॥

हमने इसका यह अर्थ लगाया कि जर्मन वार में भारत ने प्राण तक दे दिये, पर फल यह हुआ कि उसके प्रतिफल में हमको दमन-चक्र ही मिल रहा है अर्थात् 'दर्दे दिल' मिल रहा है।

❀ ❀ ❀ ❀

रात दिन लैला पड़ी रहती है यूँ।
अपने पहलू में दबाये 'दर्दे दिल'॥

इसका अर्थ हमने देशभक्तों के हार्दिक दुःखों की ओर लगाया।

❀ ❀ ❀ ❀

इसके अतिरिक्त राजनैतिक दीवानों के "वन्देमातरम्" "जय जय जन्मभूमि" 'झंडा ऊँचा', "मादरे हिन्द न हो ग़मगीं" इत्यादि भजन चलते ही रहते थे।

मैंने समझा था कि सी० क्लास के छूटने के पश्चात बी० क्लास में इन इखलाकी-कैदियों का संग छूटेगा पर मेरे लिये इसी घेर में रक्खे जाने का हुक्म आया। इसीलिये मैं यहीं रहा और इन्हीं के साथ रहा, और छूटने के दिन तक रहा क्योंकि हम देहरादून जेल वालों को कोई स्थान अन्यत्र नहीं मिला। मैंने तनाही में रखने को कहा पर जेल वालों ने मुझे बैरक में ही रक्खा।

अब की बार सरकार की यह खास नीति रही है कि राजनैतिक कैदियों को पृथक् बैरकों में न रक्खा जाय। उनको आपस में न मिलने दिया जाय, इखलाकी कैदियों के साथ रख उनके साथ उनको

भी रगड़ा जाय। इसी दुर्नीति के कारण राजनैतिक कैदी परेशान रहते हैं। १९२१ और १९३० में सब राजनैतिक कैदी इखलाकी कैदियों से अलग रक्खे जाते थे, पर अब यह बात नहीं है। अब तो जैसा डाकू, जैसा चोर, जैसा उचक्का वैसा ही राजनैतिक कैदी—बस इस "सब धान एक पसेरी" की नीति के कारण जेल में "अन्धेर नगरी गवरगण्ड राज" वाला किस्सा हो रहा है। जेल वाले क्या, सरकार भी यही चाहती है कि राजनैतिक कैदियों को इतना रगड़ा जाय, इतना जलील किया जाय कि फिर जेल आने का नाम न लेवें। यह बात नहीं है कि बी, सी क्लास वाले ही जलील होते हैं। ए, बी क्लास वालों को भी और प्रकार से जलील होना पड़ता है। फैजाबाद में बी क्लास वालों की दुर्दशा इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

मेरी फुलवाड़ी

[३]

जब पहले पहल बान बटने का काम मिला तब पहले दिन केवल तीस गज बान बटने में ही हाथों में दर्द होने लगा—जब थक जाते थे, तब मूँज के ढेर में सो जाते थे। हमारे मित्र रावत घनश्याम-सिंह, मेम्बर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड देहरादून का भी यही हाल रहता था। मेरा बटा हुआ बान खराब रहता था। और जब मुझसे कोई कहता कि यह तो अच्छा नहीं बटा गया, तो मैं हँसकर यही उत्तर देता कि भाई "यह बान जेल की रीति से नहीं किन्तु शास्त्रीय रीति से बटा गया है"—हम अभ्यास करते करते एक सौ छयालीस गज तक पहुँच गये थे कि हमारा ट्रान्सफर "फुलवाड़ी" में किया गया। इतने में हमारे प्रान्त के नेता पं० गोविन्दवल्लभ पन्त इस जेल में आ गये और कुछ दिन तक उनकी रोटी बनाने का काम भी मुझे ही करना पड़ा और "पीर बावर्ची भिस्ती खर" इस कहावत का अनुभव लिया।

जेलर से लेकर नीचे मामूली कैदी तक शास्त्री पण्डित समझ कर पहले ही हाथ जोड़ लेते थे, तब मैं पीर, जब पन्त जी के लिए रोटी बेलता तो बावर्ची, और जब बाग में कुली की तरह काम करता तब खर और भिस्ती बन जाता था। पन्त जी का भोजन बनाने में मैं अपना गौरव समझता था। जब एक बार मैं हलद्वानी गया था, तब पन्त जी का अतिथि था, मैंने मन में कहा कि आज पन्त जी हमारे अतिथि हैं, इसी जन्म में ऋण चुका जा रहा है यह सौभाग्य की बात है। पन्त जी छोटी छोटी पतली रोटी पसन्द करते थे, और यह न समझिये कि मैं खाली डिग्रीदार शास्त्री वेदतीर्थ हूँ, पाकशास्त्र में भी निपुण हूँ। इसीलिये पन्त जी को हमारा बनाया हुआ भोजन रुचिकर प्रतीत होने लगा। पन्त जी के भी किसी जन्म का पुण्य उदय था, नहीं तो मेरे जैसा शास्त्री पण्डित उनको पाचक रूप में कैसे मिलता। इस प्रकार मेरी सी क्लास और पन्त जी की ए क्लास दोनों का भोजन मिल कर एक नया बी क्लास भोजन बन जाता था।

मैंने समझा कि मेरी "सी क्लास के छुटने का सूत्रपात हुआ और सचमुच आगे चलकर "बी" क्लास आ ही गयी। मैं पहले कह चुका हूँ कि मेरे काम से सब प्रसन्न रहते थे। इस बात के लिये और क्या प्रमाण दूँ–कर्नल फेलवेल सुपरिण्टेण्डेण्ट ने मुझे (Good work and excellent behaviour) उत्तम काम और उत्तम चाल चलन के लिये पूरे पन्द्रह दिन रिहाई (Remission) दिया। बस इसीसे समझ जाइये। चाल चलन के अर्थ दुनिया में अर्थात् जेल से बाहर और होते हैं, पर जेल में चाल-चलन का अर्थ यह है कि जेल में सब नियमों को साङ्गोपाङ्ग मानकर काम भी पूरा करना और सब प्रकार के मानापमान को सहकर शांति से जेल के दिन काटना। इस दशा में राजनैतिक कैदी को किस मुसीबत का सामना करना पड़ता है इसका अनुमान जब तक कोई एक बार जेल न हो जावे कोई कैसे लगा सकता है। राजनैतिक कैदी तो जब तक बस चले तब तक अत्याचार, अनाचार सह नहीं सकते। मेरा तो यह अनुभव है कि जब तक शासन-चक्र जनता के प्रतिनिधियों के हाथों में नहीं आता तब तक जेल के अत्याचार, अनाचार आदि बन्द नहीं हो सकते। वर्तमान जेलखाने सुधारगृह नहीं, अपितु पाप-केन्द्र हो रहे हैं जहां से चोर पक्के-चोर, गुण्डे पक्के-गुण्डे, डाकू परले सिरे के डाकू बन कर निकलते हैं। यहाँ मन के संस्कारों को ठीक करके कैदियों को सुधारने की बात की गन्ध तक नहीं। केवल ऊपरी रोबदाब, शानका ध्यान रखकर अपने आप को सुरक्षित रखना यही जेलाधिकारियों का कर्तव्य हो रहा है–जेलाधिकारी भी क्या करें जिस जड़यन्त्र में उनका हाथ फँसा है उसी के साथ विवश घूमना पड़ता है। जेल में सब अधिकारी चाण्डाल, दुष्ट होते हैं, सो यह बात नहीं। जेल में बहुत से सहृदय अधिकारी भी देखे गये हैं, जो बड़ी निपुणता से काम लेते हैं, शेष सरकार का अन्न खाते खाते ऐसे हो गये हैं, कि न तो उनमें सोल है, न लाइफ। उनको नौकरशाही के षड़यन्त्र के पक्के पुर्जे समझिये। राजा की नियत का असर उसके नौकरों पर भी पड़ता ही है।

पोलिटीकल और इखलाकी दोनों के साथ एक सा बर्ताव करके पोलिटिकल कैदियों की स्पिरिट को कुचल डालने की नीति को क्या कहियेगा ? मुझे कोई नरम शब्द नहीं मिल रहा है और सख्त शब्द मैं लिखना या कहना नहीं जानता –। मेरे जैसा एक शास्त्री गुण्डों, बदमाशों और डाकुओं के साथ रखा जा सकता है। उसको उन्हीं गुन्डों, बदमाशों की पंक्ति में बैठ कर रोटी खानी पड़ती है तो बस समझिये राजनीति का दिवाला निकल गया। खैर वेदान्त की दृष्टि से मैंने अपने दिन पूरे कर ही लिये। यह अच्छी बात थी कि महाभारत, वेदान्त, उपनिषद् आदि ग्रन्थों को मैं अपने पास रख सकता था। जिसके अध्ययन और मनन में ही मैं सदैव मस्त रहता था और जेल के अन्य झंझटों के विषय में मैं ध्यान नहीं देता था। इस उदासीन वृत्ति से मुझे लाभ हुआ और मेरी मनोवृत्ति व्यर्थ इधर उधर विचलित नहीं हुई।

साधारण कैदियों का दुःख सुनना उनके दुःखों में सहानुभूति प्रकट करना, कोई झगड़ा आ पड़े तो बीच में पड़ कर जेलवालों को समझाना इत्यादि के कारण देहरादून जेल के सब कैदी प्रसन्न थे और थे एक ही बात से नाराज वह थी 'मेरी फुलवाड़ी' –उनको दुःख था कि मैं काम क्यों करता हूँ, क्यों नहीं चुपचाप बैठा रहता। मैंने कहा कि प्रत्येक पुष्पवृक्ष में देवत्व है, जल देकर उन्ही की सेवा

करता हूँ जो विकसित पुष्पों द्वारा अपनी प्रसन्नता प्रकट करती रहती है—कैदी कहते ही रहते थे कि यह पुष्प वार्डर ले जाते हैं, जेलर के लिये गुलदस्ते बन कर जाते हैं—पर मैंने इनकी बात कभी नहीं सुनी।



मेरी फुलवाड़ी

[४]

वैसे देहरादून जिला है बहुत छोटा, पर है बहुत महत्व का। मसूरी महाराणी का योग भी इसके महत्व का प्रधान कारण है, वर्तमान समय में नौकरशाही का प्रधान गढ़ होने के कारण इसको बहुत महत्व प्राप्त हो रहा है। इसकी जेल है बहुत छोटी, केवल १२० कैदियों के रखने की फोर्थ क्लास जेल। पर श्री पं० जवाहरलाल जी के आने से फर्स्ट क्लास जेल बन गई। भारतवर्ष का ही क्या सारे जगत का ध्यान दो ही जेलों की ओर है। एक देहरादून जेल व दूसरी यरवदा जेल। पूना पैक्ट के सफल होने की खबर यरवदा से तार द्वारा तुरन्त पहुँच गई थी। प्रयाग युनिटी कानफ्रेन्स की सफलता की खबर भी यहाँ कानफ्रेन्स की समाप्ति के एक घण्टे में ही पहुँच गई थी। अखबारों को तो पीछे पता लगा होगा। मुझे बड़ी प्रसन्नता रही कि मैं यहीं रहा, फैजाबाद नहीं भेजा गया। पिछले छह मास में मैंने वेदान्त शास्त्र के चारों भाष्य अर्थात् शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य के भाष्यों को कई बार देख डाला। महाभारत के वन, विराट, उद्योगपर्व को भी देख डाला। इसके अतिरिक्त मरहठी और अंग्रेजी ग्रन्थों में ईसाइयों की पुस्तकें अधिक थीं। वेदों में यजुर्वेद के कई सूक्तों पर विशेष विचार करने का समय मिला। गीता में ज्ञानेश्वरी का ही पारायण कर सका। समस्त गीता में निम्नलिखित दो श्लोकों पर ही मैंने सैकड़ों वार विचार किया जिससे मुझे बहुत लाभ हुआ—

वे श्लोक ये हैं :—

सुहृन्मित्रार्य्युदासीन—
मध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु।
साधुष्वपि च पापेषु
समबुद्धिर्विशिष्यते॥

❀ ❀ ❀ ❀

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं
बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं
गहना कर्मणो गतिः॥

इन श्लोकों के समझने के लिये जेल से अच्छा और कौनसा स्थान मिल सकता था। गीता के दो तात्पय हैं, एक समबुद्धि बनाने की बात दूसरी फल की आकांक्षा छोड़ कर केवल कर्तव्य बुद्धि से कर्म करते रहने की बात।

वेदान्त का तात्पर्य यह है कि इस संसार में सारा झगड़ा 'अहं' और 'त्वं' का है इसी से संसार चलता है और इसी से नष्ट भी होता है। अहन्ता और ममता का झगड़ा कटा कि मोक्ष हुआ समझिये। पर इनका फन्दा कटना है कठिन, इसलिये वेदान्तशास्त्र एक सुलभ उपाय बतलाता है कि यदि अहन्ता और ममता का जाल नहीं कट सकता तो—

अहन्ता – ममता – त्यागः,
कर्त्तुं यदि न शक्यते।
अहन्ता-ममता-भावः,
सर्वत्रैव विधीयातम्॥

अहन्ता और ममता को विस्तृतरूप दे दो, उस भाव को सर्वत्र फैला दो, बस दुःखों से छुटकारा हो जायगा। मतलब यह कि "ममता" "शब्द" के प्रथम 'म'—कार को बदल कर उसके स्थान में 'स' कर दो अर्थात् "ममता" के स्थान में "समता" का प्रयोग करते चलो फिर देखो कैसा आनन्द आता है—

महाभारत वनपर्व में मुझे एक श्लोक मिला —

पुण्यदेशनिवासाच्च
तास्मान्मृत्युभयं न नः।

❀ ❀ ❀ ❀

"तेजस्विदेशवासाच्च
तस्मान्मृत्युभयं न नः॥"

एक वार हैहेय-वंशज किसी राजपुत्र ने मृगया करते हुए भूल से एक ऋषिकुमार पर बाण छोड़ा, जिससे वह मूर्छित होकर गिर पड़ा और मर गया। जब राजकुमार अपने पिता के पास पहुँचा और सब वृत्तांत कहा तब पिता बहुत दुःखी हुआ। राजकुमार को लेकर एकदम ऋषि अरिष्टनेमि (जिसका कि वह पुत्र मरा था) के पास पहुँचा। बहुत पाश्चात्ताप किया, इस घोर अपराध का प्रायश्चित्त पूछा। तब ऋषि ने हँस कर कहा "भाई तुम क्या कह रहे हो मेरा पुत्र तो मरा नहीं है और न मर सकता है। हम पुण्य देश के रहने वाले हैं, तेजस्वी देश के रहने वाले हैं, हमको मृत्यु का भय कहाँ '—ये बातें हो ही रही थीं कि वह ऋषिकुमार इतने में आगया और सब बड़े प्रसन्न हुए।

हमारा भारतवर्ष सचमुच किसी समय पुण्यदेश, तेजस्विदेश था, जो कालवश अब उलट-पुलट हो रहा है—यहाँ तो अब पदे-पदे मृत्यु-भय उपस्थित हो रहा है—महात्मा जी के अहिंसात्मक भावों का उदय हो रहा है। सत्य और तप का वेग उमड़ रहा है और आशा पड़ती है कि फिर भारत पूर्ववत् पुण्य और तेजस्विदेश बनने की तैयारी कर रहा है—सत्य से, तप से, अहिंसा-भाव से क्या कुछ सिद्ध नहीं हो सकता। सत्य से, तप से, क्या कुछ नहीं मिल सकता—

वाचक वर्ग ! मैं बहक गया, किधर का किधर जा पहुँचा—

श्री कन्हैयालाल गोबा की नं० ९९ नामक अंग्रेजी में एक पुस्तक देखी जिसमें भारतीय नरेशों की विषयलोलुपता, विलासप्रियता, अधिकारमद, अत्याचारों की कहानी पढ़ कर रोमांच खड़े हो गये।

खैर मैं फुलवाड़ी भी सींचता रहा और जब समय मिलता इस प्रकार की वेदान्त चर्चा, शास्त्र मनन से समय और समय के साथ जेल को भी काटता रहता था। अगले लेख में जेल की विवेचना पढ़िये।

मेरी फुलवाड़ी

[५]

आखिर जेल है क्या बला ? मैंने जेल की यह तारीफ अर्थात् लक्षण किया है और लोगों को भी पसन्द आया है कि "जेल वह स्थान है जिसके सींकचों में से हाथी तो निकल जा सके, पर सुई पार न हो सके।" कोई व्यक्ति जेल में जाकर यह कहे कि वहाँ मैंने कोई कष्ट नहीं उठाया तो यह बात गलत, और कोई यह बात कहने लगे कि जेल में सब दुःख संकट ही हैं और वहाँ कोई भी काम की चीज नहीं, यह भी गलत। जेल में सीखने लायक भी बहुत कुछ है। यदि सूक्ष्मदृष्टि से प्रत्येक कैदी की दशा पर ध्यान रक्खा जाय, उसकी पूर्वापर कथा सुन कर विचार किया जाय तो 'कर्म-मीमांसा' का गहन तत्व समझ में आ सकता है। सत्व, रज, तम इन तीन गुणों के खेल भी देखने को मिलते हैं। अपनी आन्तरिक शक्ति का भी पूरा परिचय मिल जाता है। अपने बहुत से भ्रम भी निकल जाते हैं। जेल में कैदियों को कष्ट मिलने का मुख्य कारण पदे पदे इच्छाविघात का होना है। बस आप जो चाहते हैं वही नहीं होता और जेलाधिकारी जैसा चाहते हैं, वैसा करा लेते हैं।

संसार में भी इच्छा-विघात ही दुःख का कारण रहता है। जिसने इच्छाओं को छोड़ ही दिया उसको दुःख कहाँ। जिसने आपे को मार डाला, अपने को वश में रक्खा, जेलाधिकारी उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं कर सकते। आप यह न समझिये कि केवल 'सी' क्लास वालों को ही कष्ट रहता है और 'बी' क्लास, 'ए' क्लास वालों को कष्ट नहीं होता। हाँ, ऊपर की क्लास वालों को खाने पीने का उतना कष्ट भले ही न हो तो भी अन्य बातों में उनका इच्छा-विघात होता ही रहता है। प्रतिक्षण थोड़ा

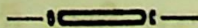
बहुत खटका लगा ही रहता है कि कहीं कोई अपमान न हो जाय। प्रयाग जेल में पं० रणजीत जी की मुलाकात के समय उनका तथा श्रीमती स्वरूपरानी जी का क्या थोड़ा अपमान हुआ जिस के प्रतिरोध में श्री पं० जवाहरलाल जी ने किसी से भी मुलाकात करना बन्द कर दिया और आज पांच मास से उनसे कोई नहीं मिल सका है। फैजाबाद जेल में इच्छा-विघात के खेलों के कारण ही तो बी० क्लास वाले सभी कैदी कष्ट भोग रहे हैं। कोई तनहाई में पड़े हैं, पचासों के बेड़ियां पड़ गई हैं—पत्र-व्यवहार बन्द, मुलाकात बन्द—यह क्यों, इसलिये कि जेल का मुख्य असूल इच्छा-विघात है। एक चीज मांगी इनकार कर दिया। दूसरी चीज मांगी दी, किन्तु थोड़ी दी और इतनी दी कि उसका न मिलना ही अच्छा था। राजनैतिक कैदियों को भी इखलाकी के साथ रक्खा जाने लगा। फिर झगड़े क्यों न होते। एक तो राजनैतिक कैदियों के रजोगुण का उद्रेक हुआ उधर जेलाधिकारी भी रजोगुण के पुतले रहते ही हैं और इस प्रकार रजोगुण टकरा गया और दुःख और अशांति का कारण बना। भला राजनैतिक कैदियों से बान बटवा कर सरकार अपना क्या इष्ट साधती है। जेल में आने वाले लोग इस दुर्व्यवहार से और भी कटु बन कर बाहर जाते हैं। राजनैतिक कैदी देशभक्ति की धुन में जेल आते हैं। वे सरकारी कानूनों की अवहेलना करते हैं, सही, किन्तु शान्तिपूर्वक करते हैं। वे चोर नहीं, उचक्के नहीं, फिर क्यों उनको साधारण कैदियों के साथ एक ही चक्की में पीस डालने का प्रयत्न किया जाता है।

सरकार का यह ख्याल हो कि इस तरह करने से ये फिर आगे कांग्रेस का नाम नहीं लेंगे तो यह भ्रम ही भ्रम ही है। जो जेल से लौटते हैं उन में से बहुत से ऐसे बन जाते हैं, सही, पर प्रतिदिन नये नये लोग भी तो कांग्रेस में आते जाते हैं। और सारा देश ही तो अब कांग्रेसमय हो रहा है। एक ओर सरकार कहती है कि कांग्रेस दब गई, दूसरी ओर कड़े २ कानून बनाती जा रही है। इस तरह कांग्रेस नहीं मर सकती। कांग्रेस तो भारतीय जनता के हृदय-मन्दिरों में सुरक्षित है और कोई यह चाहे कि कांग्रेस दब जायगी, झूठी बात है। कांग्रेस मर गई है तो लार्ड सैंकी महात्मा जी का सहयोग क्यों चाहते हैं? चारों ओर से यह आवाज़ क्यों आ रही है कि कांग्रेस वालों को गोलमेज सभा में क्यों नहीं बुलाया? गोलमेज खिलवाड़ होकर रहेगी। भारतवर्ष के सभी अन्य दल वाले नेता क्यों कह रहे हैं कि यदि कांग्रेस वालों को सम्मिलित न किया जायगा, उनको सन्तुष्ट न किया जायगा तो आने वाली स्वराज्य की किश्त नाकामयाब रहेगी। सच बात यह है कि सरकार भी जानती है और सारी दुनिया भी जानती है कि कांग्रेस अभी मरी नहीं, वह तो जीती जागती ज्योति है और उसके अहिंसात्मक सत्य रूप सत्याग्रह से संसार सजग हो रहा है, भारत का मान बढ़ गया है—

हां तो मैं जेल की बात लिख रहा था। सच पूछो तो पोलिटिकल कैदी मरने तक की तैयारी करके जेल में जाते हैं, उनके लिए जेल में दी जाने वाली तकलीफें हैं ही क्या। हाँ नये नये रङ्गरूट जरा घबरा जाते हैं पर भीतर जाकर ठीक हो जाते हैं। सभी जेलाधिकारी हृदयहीन होते हैं सो बात नहीं। उनके हृदय भी हों तो भी क्या करें जब कि जिनका अन्न खाते हैं उन प्रभुओं की आज्ञाओं का पालन करना भी उनका कर्त्तव्य है। इस विषय में उनको दोष देना व्यर्थ है। पर अपने तौर पर यह जब अपनी तिकड़में लगा कर कैदियों को अनुचित रीति से दबाते हैं, अपमान करते हैं,

नानाविध कष्ट पहुँचाते हैं, बस यही बात असह्य है। परेड अच्छी प्रथा है पर जब वह बेढंगे तरीके से ली जाने लगती है, तब अपमान का कारण बन जाती है। परेड केवल अधिकारियों की कैदियों पर रोब गांठने की वस्तु न रहे तो ठीक ही है। पर खड़े रहो टिकट लेकर पन्द्रह मिनिट तक, ऐसे खड़े रहो, एड़ी मिलाओ, हाथ जोड़ो सिर पटको, ये सब बेहूदी बातें हैं। ईश्वर की दया थी कि हमारा साहब कर्नल फेलवेल कभी भीतर जेल में नहीं आता था। न उसने कभी परेड ली, न देखी। शायद एक-दो बार जेल के भीतर आया था और वैसे ही फिर-फिराकर चला गया। हम तो सर्वथा परेड की अपमानास्पद प्रथा से बचते ही रहे। परेड होती तो भी हम परेड लगाते ही, पर हमको परेड के विषय में तनिक भी आस्था अथवा श्रद्धा नहीं है। १९३० के आन्दोलन में परेड के मामले में ही कर्नल कुक से हमारा झगड़ा हो गया था। वैसे देखा जाय तो जेल मैन्युअल के बहुत से नियमों के बदलने का समय आ गया है।

जेल वाले स्वयं इस बात का अनुभव करने लगे हैं। वैसे तो १९२१ से अब तक जेलों में बहुत परिवर्तन हो गया है। अब उस जमाने का वह कड़ा, वह गले की हँसली, वह हाथ का लोहे का कंकण कुछ नहीं रहा। रसोई घर के वे लोहे के बर्तन भी गये। उसके स्थान में पीतल के बर्तन आ गये हैं। दाल में हल्दी भी पड़ जाती है चाहे थोड़ी ही क्यों न हो, नमक भी पड़ जाता है, मिरचें भी नसीब हो जाती हैं। सिर्फ रोटी का रंग ढंग वैसा ही चला जाता है। वेष में कुरता, जांघिया, फर्री आदि सब उसी प्रकार ही है। कम्बख्त यह लाल टोपी अब भी पीछा नहीं छोड़ रही है। पहले सब लोगों के शिखा-सूत्र उतार लिए जाते थे, अब ऐसा नहीं होता। हां लोहे का तसला कटोरी वही है। उसने अपने स्वरूप में तनिक परिवर्तन नहीं किया। "ताला-जंगला, लालटेन सब ठीक है हजूर" अब भी उसी तरह चला जाता है। हाँ रात को पहरा बदलने के लिये अब कैदियों को उठा कर जोड़े में बैठा कर गिनती हुआ करती थी, वह प्रथा अब भी है। जेल की मुख्य बात जो तलाशी (जिस पर बड़ा बल दिया जाता है) के नाम पर अब भी कैदियों को दिक करने की प्रथा चल रही है, पर कैदी भी कौनसे भले लोग हैं, जेल वालों को परेशान करते ही रहते हैं। समस्त ब्रिटिश साम्राज्य का बल लगा कर भी जेल वाले कैदियों की तिकड़म और उनकी प्राणों से भी प्रिय वस्तु बीड़ी को भी नहीं बन्द कर सके हैं। जेल में बीड़ी के विषय में कैदियों में जितना सहयोग और सत्याग्रह रहता है उतना बाहर स्वराज्य के विषय में लोगों में सहयोग और सत्याग्रह रहे तो आज ही स्वराज्य मिल जाय। मैं यह कहता हूँ कि जेल क्या है? मेरा उत्तर यह है कि वर्तमान जेलखाने बीड़ी और बेड़ी के क्रीडाङ्गण हैं जिस में इस जुगलजोड़ी के नानाविध मनोरंजक खेल देखने को मिलते रहते हैं।



१२ जनवरी ४१ से—एक वर्ष

वे कारावास के दिन।

डिस्ट्रिक्ट जेल-देहरादून

(वैदिकधर्म से)

[१]

पता नहीं जन्मपत्री में अभी कितनी वार जेल जाना लिखा है। यह सौभाग्य की बात है कि, ये जेल-यात्राएँ भारत माता की दासता को दूर करने के निमित्त ही हो रही हैं। महात्मा गांधी के शब्दों में कहना हो तो कह सकते हैं कि यह प्रायश्चित्तरूप में ही जेल-यात्रा है।

जब हम छोटे थे तब उस समय के नेताओं की जेलयात्राओं के वर्णन सुनकर सोचा करते थे कि, क्या कभी इस प्रकार हमको भी जाना पड़ेगा, क्या वैसे ही कष्ट सहने पड़ेंगे। वे दिन देखने ही पड़े-एक बार नहीं, पूरे चार बार।

मेरे जेलबन्धुओं में ऐसे ऐसे भी वीर हैं जिन्होंने आठ-आठ, दस-दस वार जेल यात्रा की है। हमारे जीवन में इन जेल यात्राओं का प्रारम्भ उत्तराखण्ड के द्वार देहरादून (द्रोणनगर) से ही हुआ। यह आश्चर्य की बात है कि, जितनी वार भी मैं देहरे जेल में गया मुझे वही तीसरी नम्बर की बैरक मिली, उसी बैरक की वही सीट-प्रथम नंबर की सीट, मिली।

इस बार मैंने सत्याग्रह के लिऐ भारत-प्रसिद्ध हृषीकेश का तीर्थ चुना था। लक्ष्मण झूला का स्थान चुना था। इस शुभ कार्य के लिए मकरसंक्रांति का शुभ पर्व चुना था। क्योंकि इस पर्व पर गढवाल तथा देहरादून जिले के सहस्त्रों नरनारी वहाँ आते हैं। मैं हृषीकेश में संक्रांति के दो दिन पूर्व ही पहुँच गया था। स्टेशन पर स्वागत के लिए हृषीकेश की जनता उमड़ पड़ी थी, विशेषकर छात्रसमुदाय का उत्साह अवर्णनीय था--बड़े जोर का जलूस निकला और दो दिन हमारे व्याख्यान भी खूब आवेशपूर्ण हुए।

ता० १२ जनवरी को प्रातः वैदिक-आश्रम में समाज का अधिवेशन था। हम उसी आश्रम में ठहरे हुए थे। हवन हो रहा था कि, पुलिस सबइन्स्पेक्टर आये, पूछने लगे, शास्त्री जी कौन से हैं। स्वा० देवानन्द जी ने मेरी ओर निर्देश किया और कह दिया कि, समाज की कार्यवाही समाप्त होने पर ही शास्त्रीजी आप के साथ चल सकेंगे।

सबइन्स्पेक्टर भला आदमी था, उसने मान लिया। हवन-समाप्ति के पश्चात् हमने धर्मविषय पर कुछ कहा और उपस्थित सज्जनों से अनुज्ञा मांगी, तब वैदिकआश्रम में सैकड़ों की संख्या में जनता एकत्रित हो गई थी।

एकत्रित नर-नारियों का स्वागत लेने और सब से मिलने में लगभग एक घंटा लगा। दृश्य विचित्र था, किन्तु हमें तो आगे जेल दीख रही थी, इसलिए हमने अपने मन को खूब कठोर कर लिया था, क्योंकि जनता की अश्रुपूरित आँखों को देखकर विचलित होते तो क्या कारावास के कठोर दिन काट सकते।

जो व्यक्ति मोह में फँसेगा, वह कारावास के अयोग्य सिद्ध होगा। बड़े समारोह के साथ थाने में गये। वहाँ मित्र-मण्डली एकत्रित हुई। कोई मिष्टान्न लाया, कोई दूध लाया, कोई चाय लाया, कोई फल लाया-इन सबकी मात्रा अत्यधिक थी।

यदि महाविद्यालय के ब्रह्मचारी उसको समाप्त करने में योग न देते, तो उस की समाप्ति भी कठिन थी। हमारा सत्याग्रह देखने और हम से मिलने के लिये प्रायः महाविद्यालय के सभी ब्रह्मचारी पहुँच गये थे। ठीक साढ़ेनौ बजे लॉरी आई और हमने सबसे बिदाई ली। जनता हृषीकेश की ओर लौट गई और हमारी लॉरी देहरादून जाने के लिए जंगल में प्रविष्ट हुई।

हृषीकेश से देहरादून के मार्ग में जंगल ही जंगल है। प्रथम नौ मील तक तो बड़ा ही भयावना जंगल है। देहरादून तक (२७ मील तक) मार्ग में ग्रामों के लोग मिलते ही रहे। हम ठीक ग्यारह बजे देहरादून जेल के द्वार पर पहुँचे। जेल से बाहर अनेक मित्र हमारी प्रतीक्षा में खड़े थे-सब से मिल कर हम जेल के फाटक के पास गये, फाटक खुला और भीतर गये। फाटक फिर बंद हुआ।

फाटकवाले जमादार ने पूछा-आप के पास कुछ है-हमने कहा कुछ नहीं। भीतर का दूसरा फाटक खुला, हम और भीतर गये और वह फाटक भी बंद हुआ। बस हमारे लिये संसार का द्वार बन्द हो गया। हम सर्वथा पराधीन हो गये। आश्चर्य कि पराधीनता मिटाने के लिये इस प्रकार की पराधीनता स्वीकार करनी पड़ी। महान् आश्चर्य कि बड़े बड़े दासता के दुःखों से छुटकारा पाने के उद्देश्य से ये कष्ट उठाने पड़े।

भीतर हमारे सात आठ सत्याग्रही मित्र, जो हम से पहिले ही आये थे, हमारी प्रतीक्षा में थे ही। कुशल प्रश्न आनन्द मङ्गल के पश्चात् हमने विश्राम किया। रविवार होने से हमारे मित्रों से मिलने के लिए बहुत से उनके इष्ट-मित्र-सम्बन्धी आये हुए थे, उनसे भी हम मिले। बीस मिनिट के पश्चात् वे सब चले गये। अब हमारी बैरक में हम और हमारे आठ मित्रों को छोड़कर और कोई न था।

सायंकाल चार बजे डॉक्टर आया। उसने हमको तोला, उचाई मापी, हमारी शारीरिक दशा को देखा और चला गया। सायंकाल छह बजे हमको बैरक में बन्द किया गया और वह प्रथम रात्रि किस प्रकार गुजरी होगी इसका अनुमान विचक्षण पाठक स्वयं लगा सकते हैं।

दूसरे दिन प्रातः ८ बजे कर्नल ल्यूकस, (हमारा सुपरिण्टेण्डेण्ट) के सामने जाना पड़ा-उसने देखभाल की, कुछ प्रश्न पूछे और वहाँ से भी छुट्टी मिली। सायंकाल ४ बजे मिस्टर बैरेट, एस.डी. ओ.

आये और न्याय का अभिनय होकर हमको एक वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड सुनाया गया। हम "सी." को सुनने के लिये तैयार थे, किन्तु हमको मिली "बी" क्लास। हमसे मिस्टर बैरट ने कहा आप को कुछ कहना है? हमने कहा कुछ नहीं। सब किस्सा समाप्त।

हमारा सुपरिण्टेण्डेण्ट।

हमारा सुपरिण्टेण्डेण्ट एक फौजी गोराशाही अंग्रेज था। उसका नाम था कर्नल ल्यूकस। अब तो वह युद्धक्षेत्र में चला गया है। गोराशाही अंग्रेज कहने से मेरा अभिप्राय यह है कि, वह हिन्दुस्तानियों को अत्यन्त तिरस्कार की दृष्टि से देखने वाला गोरा था। कोई बात उससे कहो, सब बातों का उत्तर वह एक ही देता था। वह यह कि यह जेल का रूल नहीं है।

वह यह नहीं समझता था अथवा समझ नहीं सकता था कि बाबा आदम के समय के बने हुए जेल के नियम इस समय किस काम के। तो भी वे पुराने नियमों को ही जबरदस्ती लादना चाहते थे या लादते थे।

यह नहीं देखते कि कैसा तो समय है और किस प्रकार के कैदी आ रहे हैं। चोर, उचक्के, डाकू, बदमाश, खूनी कैदियों में और राजनैतिक कैदियों में कोई अन्तर रखना नहीं चाहते। अब भी सी क्लास के कैदियों के साथ वही पुराने ढर्रे का अमानुष व्यवहार रक्खा जाता है।

हाँ, मुझे दण्ड मिलने के पश्चात् फिर एकवार सुपरिण्टेण्डेण्ट के सामने जाना पड़ा। यहाँ मेरी वस्तुओं की फेहरिस्त सुनाई गई और भी कई बातें पूछी गईं। उनमें से एक बात यह थी कि 'आप अपील दायर करेंगे', हमने स्पष्ट निषेध कर दिया। इस कार्यवाही के पश्चात् हम बाकायदा जेल पींजरे के बंद पक्षी हो गये। हमारे लिए बान बटने का काम दिया गया।

हमने अपने मन में कहा कि 'जिन हाथों से सैकड़ों, सहस्रों लेख लिखे, अनेक ग्रन्थ बनाये, उन्हीं हाथों से अब दिनभर बान बटा करो।' हमारी उम्र ६३ वर्ष है, इसलिये हमारे टिकट पर लिखा गया कि, 'मध्यम काम' अर्थात् पूरे स्वस्थ व्यक्ति को तीनसौ गज़ बान बटना पड़े तो हम केवल १५० गज़ बान बटें। हमको पहले कारावासों में इस बान बटने का काम करना पड़ा था, इसलिए ईश्वर का नाम लेकर फिर बान बटना प्रारम्भ किया। पर इस जेल में हम केवल पन्द्रह दिन रहे, इसलिए साठ गज़ से अधिक हमने कभी बान नहीं बटा। फिर हम सेंट्रल जेल बरेली भेज दिये गये।

हमारी पुस्तकें पहिले सी-आई-डी के अधिकारी के पास भेजी गईं, फिर कई दिनों के पश्चात् स्वीकृत होकर आईं। पत्र भी सी-आई-डी के पास होकर आते थे।

एक दिन—अभी देहरादून की ही बात है—अचानक इस जेल में मुझ से पूर्व आए हुए मेरे साथी सब के सब सेंट्रल जेल बरेली भेजे गए। बी० क्लास का मैं अकेला ही रह गया। उधर हमारे

सुपरिण्टेण्डेण्ट की आज्ञा थी कि बी और सी क्लास वाले साथ न रक्खे जायँ। इसका प्रायश्चित्त हमको यह मिला कि, स्थानाभाव के कारण मुझे एकान्तवास की कोठरी में भेज दिया गया।

एक कोठरी में मैं था। एक में मसूरी हत्याकण्ड के अपराधी एक सतरह वर्ष का पारसी नवयुवक होमी गांधी नाम का था। इसको कालेपानी की सजा हुई थी अर्थात् बीस वर्ष की। तीसरी कोठरी में एक चटर्जी नामक बंगाली नवयुवक था जो कि ४२० धारा में आया था। इस पर एक केस पूना के यरवदा जेल में भी चल रहा था।

सेंट्रल जेल बरेली जाने पर फिर मैंने सुना कि होमी गांधी को हाईकोर्ट ने छोड़ दिया। मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई क्योंकि सतरह वर्ष का अपक्व बालक कहाँ और बीस वर्ष का कठोर दण्ड कहाँ। चटर्जी को किसी ठगी के मामले में एक वर्ष का कठोर कारावास हुआ और वह यरवदा वापस भेज दिया गया। चटर्जी गाता खूब था, इसलिये थोड़ा सा मनोरंजन भी हो जाता था। हमारा वार्डर एक पठान था, उसे भी गाने का शौक था—वह भी हमारे मनोरंजन का साधन रहा।

कांग्रेस गवर्नमेन्ट के समय में जेल व्यवस्था कई अंशों में बदल गई। कैदियों के साथ सौम्य व्यवहार होने लगा। लोहे के बर्तनों का स्थान पीतल के बर्तनों ने लिया। कपड़ों में भी सुविधा हुई—भोजन में भी कुछ सुधार हुआ। कैदियों को जेल की ओर से बीड़ियां मिलने लगीं। बीड़ी और बेड़ियों का अटूट सम्बन्ध है।

बीड़ियों के बिना कैदियों का काम नहीं चलता। बेडियां न हो तो जेल-प्रबन्ध नहीं चल सकता। इस महायुद्ध के कारण जेल की ओर से बीड़ियाँ मिलनी बन्द हो गई है। जेल में कम्बलों का भी दिवाला निकल गया। कैदियों को फटे-पुराने कम्बलों में शीत ऋतु निकालनी पड़ रही है—कैदियों को प्रति दिन गुड़ मिलता है। दो दिन चने, दो दिन उबले हुए चने, (नमकीन) दो दिन दलिया, एक दिन नमकीन, एक दिन गुड के साथ मिलता है।

जब से कांग्रेस गवर्नमेन्ट हुई, तब से जेल में सब कैदी प्रातः सायं सामूहिक प्रार्थना करते हैं। सुन्दर सुन्दर भजन गाते हैं—हम भी इसी में सम्मिलित होते थे—

ऐसे ऐसे भजन गाये जाते हैं—

(१) प्रेमनगर की राह कठिन है,
सम्भल सम्भल पग धरा करो।

(२) तुम राम कहो, वे रहीम कहें
दोनों की गरज, एक अल्लाह से है।

(३) मसजिदों में है खुदा
और मन्दिरों में राम है।
जपते हैं हिन्दु-मुसलमाँ
दोनों का एक नाम है ॥१॥

गायें गोकुल में चराईं
मक्के में खुद बकरियाँ।
आप ही अहमद बने
और आप ही घनश्याम हैं ॥२॥

शंख काशी में बजाया
और अजाँ काबे में दी।
खुद पुजारी खुद बलाले
आशिके इसलाम है ॥३॥

तसबी और माला में
सिर्फ एक नाम का ही फर्क है।
सच अगर पूछो तो
इन दोनों का इक नाम है ॥४॥

(४) तेरी जात पाक है ऐ खुदा,
तेरी शान जल्ले जलाल हूँ।
यह जमीं बनी, वह फलक बना,
यह बशर बने, वह मलक बना
जिसे चाहे जैसे बनाये तू
तेरी शान जल्ले जलाल हूँ ॥१॥
इत्यादि।

(५) उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है सो खोवत है
जो जागत है सो पावत है ॥

❀ ❀ ❀ ❀

यह प्रीत करन की रीति नहीं,
रब जागत है तू सोवत है।

❀ ❀ ❀ ❀

यह पाप की गठरी सिर बँधी,
अब सिर पकड़ क्यों रोवत है ॥

कभी कभी राष्ट्रीय गान भी होते थे, पर हमारा जेलर सावधान रहता था कि कोई ऐसे गीत न गाने पावे।

कई बार उसने राष्ट्रीय गानों को रोका। जेलरादि प्रार्थना में सम्मिलित होते थे।

यदि मैं भूलता नहीं तो ता० २३ जनवरी को जेल के इन्सपेक्टर जनरल श्री सलामत उल्ला शेख देहरे जेल में आये थे—देख-भाल कर चले गये। उन्होंने हमारे लिये लिखा कि इनको एकदम सेंट्रल जेल बरेली भेज दिया जाय और हमारी वहाँ जाने की तैयारी होने लगी। क्यों कि देहरादून जेल अत्यन्त छोटी जेल है—केवल १२० कैदियों का स्थान है। पर प्रसिद्ध इसलिये है कि वह जवाहरलाल जी की जेल कहलाती है।

गवर्नमेन्ट ने जब कभी उनको पकड़ा सीधे इसी जेल में लाकर छोड़ा। १९३२ में गोविंदवल्लभ पन्त भी रह चुके थे। हम तो चार बार रह चुके हैं। वहाँ की दीवारें हमको खूब पहचानती हैं।

मुझे एक बात की बड़ी प्रसन्नता हुई। सन् १९३२ में मैं जब इस जेल में था तब मुझे पहिले तो बान बटने का काम दिया गया था, फिर माली का काम दिया गया। उस समय मैंने जेल में एक आम का पेड़ लगाया था। अब वह पेड़ बड़ा हो गया। उसकी छाया में बैठ सकते हैं।

किन्तु उसके पास ही 'बी' क्लास वालों के लिये रसोई घर बनाया गया है, इससे उसके नीचे अपेक्षित स्वच्छता नहीं रहती। मैं जब तक देहरा जेल में रहा तब तक अपना संध्यावन्दन उसी आम्र-वृक्ष के नीचे करता रहा, ऐसा मुझको उस वृक्ष से प्रेम हो गया था—होना ही था।

ता० २५ जनवरी को सायंकाल ६ बजे अचानक जेलर ने कहा कि बरेली के लिए तैयार हो जाइये। वहाँ क्या देर थी, तैयार तो बैठे ही थे। जेलवालों ने मेरे जाने की खबर को गुप्त रखने का पूर्ण प्रयत्न किया, किन्तु देहरादून स्टेशन पर मिलने वाले लोग पहुंच ही गये—जो बिलम्ब से आये निराश लौट गये।

हावड़ा एक्सप्रेस सीटी बजा कर द्रुततम वेग से चल पड़ी, हरिद्वार आया और गया, लक्सर आया गया, मुरादाबाद भी पीछे रह गया। प्रातः ३॥ बजे बरेली जंकशन पर पहुँचे। वहाँ से छोटी लाइन की गाड़ी (प्रातः ६ बजे) में बैठ कर इजतनगर स्टेशन पर पहुँचे—सामने ही सेंट्रल जेल है—लगभग दो मील तो उसकी चारदीवारी है।

भीतर बाहर सब स्थान लगभग तीन मील है। यह हम कहना भूल गये कि देहरादून से सेंट्रल जेल बरेली तक बड़े जंकशनों पर तथा रेल में भी हमारे बहुत से परिचित सज्जन मिले।

[२]

सेंट्रल जेल से बरेली

पहिले कई बार जेल जाने पर भी सेंट्रल जेल जैसी बड़ी जेल देखने का सौभाग्य नहीं मिला था। देहरादून, मुरादाबाद, डिस्ट्रिक्ट जेल बरेली, लखनऊ डिस्ट्रिक्ट जेल, रायबरेली डिस्ट्रिक्ट जेल आदि

जेलें देख चुका था। यह प्रथम अवसर था जो कि इतनी बड़ी जेल देखने को मिली, जहाँ कोई ढाई हजार कैदी रहते हैं, जो कि तेरह जिलों के जेलों का केन्द्र हैं, जहाँ सौ पाचक बराबर रोटी बनाते रहते हैं, जहाँ छोटे मोटे दो—सौ वार्डर हैं, जहाँ सैकड़ों नम्बरदार हैं, जहाँ कि चार दिवारी के पास चहुँ ओर बराबर सौ-सौ गज के अन्तर पर एक एक नम्बरदार रक्षक हैं, जहाँ अस्पताल में—कमजोरों के तथा रोगियों के हस्पतालों में प्रायः प्रतिदिन डेढ-दो सौ बीमार हर समय बने रहते हैं।

जेल के फाटक पर पहुँचते ही फाटक वाले जमादार ने कहा 'आइये-शास्त्रीजी'। यह वही जमादार था जो कि १६२१ में देहरादून जेल में मेरा वार्डर था। फाटक के भीतर जाने के पश्चात् पन्द्रह मिनिट तक मेरी और उसकी बातचीत होती रही। रविवार होने से अभी कोई बाबू अथवा जेलर वहाँ नहीं आया था। मैंने वार्डर से सब हाल पूछ कर यह जान लिया कि, 'बी' क्लास बैरिक में (जिसका पुराना नाम स्टेट प्रिजनर्स सर्कल है) कौन कौन हैं, कैसी बैरिक है इत्यादि।

उस वॉर्डरने पास के कमरे में एक कुरसी डाल दी और उस दिन के कई दैनिक पत्र लाकर मेरे सामने डाल दिये। मैं लगभग एक घण्टे तक उनको पढ़ता रहा। जब थक गया और सामने देखा तो दीवार पर जेल का नकशा (मानचित्र) टंगा है। वॉर्डर को बुलाकर मैंने उस नकशे को भली भांति समझ लिया। मेरे आने की खबर बी क्लासवालों को पहुँच चुकी थी। थोड़े समय में एक जेलर आए और पूछ गए कि आप कहाँ से आए हैं।

दूसरे आये पूछ गये कि आप की सजा कितनी है। तीसरे आये और कहने लगे चलिए न अपने बैरिक को–कुछ अपना सामान साथ लेकर, कुछ वहीं फाटक पर छोड़ कर मैं अपने बैरिक की ओर चला, एक नम्बरदार संरक्षक मेरे पीछे हो लिया, चलते चलते बहुत दूर जेल के एक कोने में बी क्लास थी। इसमें लगभग ५० भाई थे। एक एक से गले लगाकर मिलने में बहुत समय लग गया। उस दिन स्वतन्त्रता का दिवस था। २६ जनवरी का दिन था—सब लोग झण्डाभिवादन करके बैठे थे। किसी का गान हो रहा था।

यहाँ कैसे कैसे महानुभाव थे।

जब हम पहिले पहिले इस जेल में आये तब यहाँ ५० सत्याग्रही थे। फिर बढ़ते बढ़ते लगभग १२० हो गये। इन में २० एम० एल० ए०, ७–८ प्रोफेसर, लगभग १७–१८ बी० ए०, एम० ए०, पास बीस–बीस बाईस वर्ष के नवयुवक, ८–१० वकील मुख्तार, कई व्यापारी, कई जिमींदार, चार शास्त्री और अन्य इसी प्रकार के व्यक्ति थे–ओ, हो, मैं तो भूल गया एक डॉक्टर (जर्मनी) उपाधिधारी, २ वैद्यराज, दो हकीमजी, दो डॉक्टर (अंगरेजी) इस प्रकार प्रत्येक वर्ग अथवा वर्ण के प्रतिनिधि विद्यमान थे–इनमें नवयुवकों की देशभक्ति और उनका उत्साह देखते ही बनता था।

वे नवयुवक क्या थे देशभक्ति की प्रतिमूर्ति थे।

यहाँ आने के पश्चात् हमारे टिकिट में हमारे नाम के आगे हमारा काम चर्खा–कातना लिखा गया। बहुत से भाई बराबर चर्खा चलाते रहते थे, पर चर्खे थे उनके अपने और पूनी भी थी अपनी। बहुत से भाई केवल तकली चलाते थे। बहुत से चलाते ही नहीं थे। ऐसा प्रतीत होता था कि जेलवालों की ओर से इस विषय में कोई सख्ती नहीं थी। उन्होंने चर्खे तो सब को दिये थे।

जिनके पास यरवदा मारके के चर्खे थे वे अपने चर्खे चलाते थे, शेष जेल के चर्खे से काम लेते थे। फिर जेल से पूणियाँ मिलने लगीं। दाम देकर अपना सूत हम मोल ले सकते थे। मेरा अपना इस विषय में नियमित कार्यक्रम न था। क्योंकि बाहर से मेरा अपना चर्खा नहीं आया था। तकली ही चलाता था।

मेरी वाटिका।

काम के लिए मेरी अपनी वाटिका थी। इस पुष्पवाटिका में गुलाब गेन्दा, जाई-जुई, मोंगरा, रजनी—गन्धा, नर्गिस आदि नाना प्रकार के पुष्प थे, दो आम्र के वृक्ष भी थे, एक आड़ू का वृक्ष था जिसके इतने अधिक फल थे कि उसने हमारे सभी सत्याग्रही भाइयों का अतिथ्य किया। रात को बैरिक बन्द हो जाती थी इसलिए वहीं सोना पड़ता था। दिन में खुले रहते थे, तब मैं प्रातःकाल से सायंकाल तक इसी वाटिका में रहता था। रोज इसी का सेचन करता था।

इस वाटिका में अत्यधिक पुष्पश्री रहती थी। जो भाई भी छूटकर जाते थे मेरी वाटिका के पुष्पों की माला ही उनका कण्ठाभरण हो जाता था। इस बात की मुझे बहुत प्रसन्नता थी। एक वार्डर प्रतिदिन अपनी वृद्धामाता को पाँच पुष्प भेंट किया करता था, वे पुष्प भी मेरी वाटिका से जाते थे। सत्याग्रही भाइयों के पूजापाठ में भी यहीं से पुष्प जाते थे। इस वाटिका के कारण मेरा मन सदैव प्रसन्न रहता था और भी मेरे दो भाइयों ने अपनी अपनी वाटिकाएँ बना ली थीं।

एक थे सहारनपुर के हकीम जी, दूसरे थे मुजफ्फरनगर जिले के पं० ब्रह्मप्रकाश। इस वाटिका में परिश्रम करने से मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहने लगा। मुझे कोई दुःख था, तो वह मेरी बाईं तरफ की डाढ का तथा और एक दांत का जो कभी कभी बहुत कष्ट देते रहते थे। डाढ तो स्वयं निकल गई और वह दाँत अब भी कष्ट दे रहा है।

हम सब सत्याग्रही तीन बैरिकों में रहते थे। नं० १ में मैं और मेरे साथी, नं० दो और चार में इसी प्रकार किसी में तीस, किसी में ३५ रहते थे। जब गरमी के दिन आये, तब हम को बैरिक से बाहर सोने की आज्ञा मिल गई थी।

जेल में, जेलवालों की यह रीति रहती है कि, किसी प्रकार कैदियों को किसी न किसी प्रकार का कष्ट पहुँचाना। वहाँ पदे पदे जो इच्छाविघात तथा अपमान का अनुभव करना पड़ता है, वह अनुभव करने की वस्तु है, न कि वर्णन करने की। जब हम स्वेच्छा से ही कारावास का निमन्त्रण स्वीकार कर लेते हैं, तो फिर हमने यह सहा, हमने यह कष्ट उठाया, वह कष्ट उठाया ऐसा कहना

अथवा लिखना शोभा की बात नहीं है। बी क्लासवालों को कुछ तो आराम मिलता है, पर सी क्लासवालों के कष्ट देखो, तो देखे नहीं जाते, सुने नहीं जाते।

मि० गफ्फार।

हमारे सुपरिण्टेण्डेण्ट श्रीमान् गफ्फार थे। बड़े सज्जन पुरुष थे। व्यर्थ ही झगड़ों को मोल नहीं लेना चाहते थे। शांति और गंभीरता से काम लेते थे। बड़े बड़े झगड़े उठे और कई वार तो बड़ी अशांति हुई, फिर भी उन्होंने बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लिया पर उन के सहायक डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट तथा अन्य जेलर उलटी खोपड़ी के लोग थे। वे समझ रहे थे कि सी क्लासवालों की तरह बी क्लास वालों को भी दबाकर रक्खेंगे। कई जेलर बहुत सभ्य और मिलनसार थे-वे युक्ति से, मधुरता से अपना काम निकाल लेते थे।

यह तो स्पष्ट ही था कि ऐसे सुशिक्षित सत्याग्रहियों को स्कूल के लड़कों की भाँति नहीं हाँका जा सकता था। हम में से जो भाई उद्दण्ड समझे जाते थे उन को अन्य जेलों में भेज दिया जाता था। दूसरे जेलों में उद्दण्ड समझनेवाले हमारे जेल में भेज दिये जाते थे। ऐसे ही आवागमन लगा रहता था। प्रतिदिन कोई न कोई झगड़ा खड़ा हो जाता था।

वस्तुतः यह जेल नैतिक अपराधियों का केंद्र था। इस में बी क्लास वालों के लिये प्रबन्ध करना अनुचित था। यद्यपि हम जेल के एक कोने में पृथक् बैरकों में रक्खे गये थे तथापि सामान्य कैदियों के प्रबन्ध के कारण हम लोगों को भी विशेष बंधन था। यदि बी क्लास के लिए कोई पृथक् स्वतंत्र जेल होती, और स्वतन्त्र प्रबन्ध रहता तो थोड़ी थोड़ी बातों में सत्याग्रहियों का जेलवालों के साथ जो मनमुटाव होता रहता था, वह न होने पाता।

खाने पीने के झगड़े, सामान के अच्छे न होने के झगड़े, अपने सर्कल से बाहर न जाने देने के झगड़े, पर्याप्त कम्बल या वस्त्रों के न मिलने के झगड़े, खाटों के झगड़े, समय पर पत्र न मिलने आदि के झगड़े, ठीक समय पर औषधि न मिलने के झगड़े—जेलरों के अनुचित बर्ताव के झगड़े, बस झगड़े ही झगड़े थे। पर हम लोग बीच में पड़कर मिटा देते थे। प्रत्येक बारिक की अपनी एक पृथक् सभा थी, वहाँ निर्णय होकर बड़ी सभा में बात आती थी। वहाँ बहुमत से निश्चय होता था।

कालक्रमण।

सब सत्याग्रही सुशिक्षित थे, इसलिए बहुतसा समय पढ़ने-लिखने में भी लगाते थे। कोई पुस्तक लिखता था, कोई कुछ, कोई कुछ करता था, हममें साम्यवादी, समाजवादी, वैज्ञानिक समाजवादी, फॉरवर्ड-ब्लाकवाले, गान्धीवादी आदि सभी विचार के लोग थे। दो-चार रॉयिस्ट भी थे-इनमें परस्पर विचारविनिमय, वादविवाद रहा करता था। प्रतिसप्ताह कविसम्मेलन भी रहता था, प्रायः कविताएँ साधारण कोटि ही रहती थीं—

दो एक अच्छे कवि भी थे। कभी कभी अन्य विषय की सभाएँ भी होती रहती थीं। हम में कतिपय अच्छे गायक भी थे जो रात्रि के समय जब बैरिक बन्द होती थी तब पार्टी बनाकर खूब गाते थे और रात्रि को ग्यारह २ बजे तक जमघट रहता था। हो···हल्ला, चिल्लाना, विनोद आदि का बाजार गरम रहता था। इस प्रकार सत्याग्रही भाइयों की कालक्रमणा का संक्षिप्त वृत्तान्त है। दो घण्टे अखबारों को पढ़ने में लगता था, दिनभर ताजे समाचारों की चर्चा रहती थी।

प्रातः सायं टहलते समय समाचारों की समालोचना होती रहती थी। कलकत्ते का स्टेट्समैन, प्रयागका भारत, काशी का आज आदि समाचार पत्र जेलवालों की ओर से मिलते थे और लखनऊ का नैशनल हेरल्ड, न्यूदेहली का हिंदुस्तान टाइम्स हम अपने खर्च से मंगाते थे। हमारे एक भाई मॉडर्न रिव्यू मंगाते थे–अखबार को तो सत्याग्रहियों का जीवन प्राण समझिये। जिस दिन समाचारपत्रों की छुट्टी रहती थी उस दिन हमारे बैरकों में उदासी-सी रहती थी। प्रातः १० बजे तक अखबार मिल जाते थे। कभी बहुत लेट आते थे। हमारे भाई अखबार जब तक न पढ लेते थे तब तक उनको भोजन भी नहीं रुचता था।

---

* वे कारावास के दिन *

[२]

मेरा अपना विचार है कि, यदि महात्मा गान्धी जैसा चाहते हैं, उस प्रकार हम लोग अपने जेल के कष्टों को गम्भीरता-पूर्वक सहें और समय को आत्मपरीक्षण-निरीक्षण में लगाते रहें, तो हमारी शक्ति द्विगुण हो सकती है। पर जो प्रकृति के त्रिगुणात्मक (सत्व, रज, तम,) भावों को जानते हैं, वे स्वयं समझ सकते हैं कि सत्याग्रहियों में सबसे यह आशा करना कि, वे विशुद्ध सात्त्विक बनकर जेल में आते रहें, शान्ति से रहें, यह बात हो नहीं सकती।

एक तो अंगरेजी शिक्षा में लालित, पालित, पोषित, दीक्षित होकर आने के कारण उनमें विचित्र रजोगुण का उत्थान रहता है। किसी धर्म में उनका विश्वास नहीं रहता। धर्म तो एक ढोंग समझा जाता है, स्वसंस्कृति को निकम्मा समझा जाता है। ऐसे उग्र तथा वक्र लोगों को महात्मा गांधी अपने अनुयायी बनाने में सफल हो गये हैं, यह कम आश्चर्य की बात नहीं है।

अंगरेजी शिक्षित वर्ग में देशभक्ति कूट कूट कर भरी रहती है, दूसरे देशों के स्वतन्त्रता-प्राप्ति के इतिहास पढ़कर स्वदेश के विषय में भी वैसी प्रबल भावना का उत्पन्न होना स्वभाविक ही है। इस विषय में इनकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। संस्कृत-शिक्षावालों में यह उत्साह और उमंग नहीं देखी जाती। अगले लेखांक में और भी मनोरंजक वृत्त पढ़िये—

सुधार का यह प्रकार नहीं।

बरेली सेण्ट्रल जेल में लगभग ढाई सहस्र कैदी हैं, यह मैं कह चुका हूँ। इनमें केवल १२५ कैदी राजनैतिक अपराधी थे, शेष सब नैतिक अपराधी अर्थात् इखलाकी कैदी थे। कोई चोरी में, कोई डाके में, कोई गैंग (Gang-case) में, कोई ठगी में, कोई खून में, कोई व्यभिचार में, इसी प्रकार के अपराधी भरे हुए हैं। डेढ सौ वर्ष की कैदवाले ७-८ कैदी हैं, अस्सी, साठ, पचास, चालीस वर्ष के दण्डवाले कैदी होंगे कोई चालीस, पचास। बीस-बीस, पच्चीस-पच्चीस वर्ष के कैदी होंगे, कोई ५००, शेष दो दो वर्ष से लेकर पन्द्रह-पन्द्रह वर्ष दण्डवाले कैदी हैं।

समस्त यू० पी० में ऐसे पच्चीस सहस्र कैदी होंगे। क्यों इतने नैतिक अपराधी हैं, मुख्य कारण क्या है, यह रोग कैसे दूर हो सकता है, इत्यादि बातों पर न सरकार ध्यान देती है और न जनता। जो एक बार जेल में हो आता है, जनता तो उसको अपने पास बैठने भी नहीं देती, कुटुम्बवाले भी घृणा करते हैं, पुलिसवाले चैन से बैठने नहीं देते। ज़रा सन्देह हुआ कि, पकड़कर जेल में बन्द कर देते हैं।

कैदी स्पष्ट कहते हैं कि क्या करें महाराज, बाहर कोई चैन से बैठने नहीं देता, इसलिए जेल ही हमारा घर बन गया है। जेलों में चोरों और डाकुओं की एक बड़ी जाति की जाति ही बन गई है। सरकार यदि इनको निर्वाहार्थ भूमि प्रदान करके इनका ध्यान बटावे, तो ही सुधार हो सकता है। निर्वाह का साधन उपस्थित होने पर भी जो चोरी आदि करें, उनको कड़े से कड़ा दण्ड देने से चोरी कम हो सकती है और सुधार भी हो सकता है। राजनैतिक कैदियों की जेलें सर्वथा पृथक् होनी चाहिएँ।

उनको नैतिक अपराधियों के साथ रखना अथवा उनसे उन जैसा बर्ताव करना घोर अन्याय है। यदि राज्य में प्रजा असन्तुष्ट है, तो उसका अपराध राजा के ही सिरपर है। प्रजा को पुत्रवत् न पालन कर उसको अपने ऐश्वर्य बढ़ाने का साधनमात्र समझना भी घोर नैतिक अपराध है। जब राजा और प्रजा एक ही देश, धर्म, संस्कृति के होते हैं, तब और बात होती है और जब इनका देश, धर्म, संस्कृति, हितसम्बन्ध पृथक् होते हैं और पितापुत्र का सा सम्बन्ध न रहकर कोरा शास्य-शासकसम्बन्ध रह जाता है, तब तो घोर उपद्रव का कारण बन जाता है। सम्प्रति भारतवर्ष इसी दुरवस्था में से होकर गुजर रहा है।

जेल में स्वाध्याय

अब हम इन बातों को छोड़कर जेल के स्वाध्याय के विषय में लिखते हैं। स्वाध्याय करने वाले, शान्तप्रकृति सत्याग्रहियों के लिए तो जेल स्वर्ग तुल्य है। मैं जब भी जेल में गया कुछ कमाकर ही लाया हूँ। कुछ भी खोकर नहीं आया। ऐसा स्वच्छ स्थान, ऐसा एकान्त स्थान, ऐसा निश्चिन्त होकर रहने का स्थान कहाँ मिलेगा। बाहर तो सार्वजनिक तथा कौटुम्बिक अथवा संस्थासम्बन्धी इतनी चिंताएँ रहती हैं कि, कह नहीं सकते। काम करने वाले स्वयं जानते हैं—

बाहर काम तो बहुत होता है, पर शक्ति का अपव्यय भी बहुत होता रहता है। व्यर्थ के रागद्वेषों में शक्ति घटती रहती है। जेलें शक्तिसञ्चय के आगार हैं। यदि कोई उनसे काम लेवे, तो दुःख तो है ही पर परिणाम में सुख ही है। जिन जिन महापुरुषों ने जेलों में पैर रक्खे, उन्होंने अपने शक्तिसंचय द्वारा, बाहर आने पर संसार को कुछ दिया ही है—महापुरुषों के जीवन पर दृष्टि देकर देखिये—लोकमान्य तिलक ने संसार को अमर गीतारहस्य दिया।

महात्मा गांधी ने सत्य, अहिंसा आदि के पवित्र पाठ पढ़ाये, जवाहरलाल जी ने बोधप्रद आत्मकथा दी। लोकमान्य तिलक ने "ऋग्वेद" का Arctic Home in the Vedas' वहीं लिखा। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, अरविंद घोष, विपिनपाल, लाजपतराय आदि आदि ने बहुत कुछ किया—कहाँ तक गिनाएँ, हम अपनी बात ही कहते हैं—

इस सेण्ट्रल जेल में सत्याग्रहियों के पास, भिन्न भिन्न विषय की लगभग पाँचसौ पुस्तकें होंगी—रूस के साम्यवाद, वर्गवाद, जर्मनी के समाजवाद, यहाँ के गांधीवाद, हिटलर की आत्मकथा (माइन कैम्प), चीन के इतिहास, लोकमान्य तिलक की पुस्तकें, टागोर के ग्रन्थ, वेद, शास्त्र, महाभारत, पाश्चात्य तथा पौरस्त्य दर्शन, बर्नाडशाह की ग्रन्थावली, बौद्धग्रन्थ, कार्ल मार्क्स के ग्रन्थ, अमरीकन तथा इङ्गलैंड के प्रसिद्ध ग्रन्थकारों के ग्रन्थ, संसार के ऐतिहासिक ग्रन्थ आदि आदि पचासों ग्रन्थ थे। परस्पर ग्रन्थ-विनियम द्वारा जिसको जो ग्रन्थ रुचता था, मांग लेता था और पढ़ कर लौटा देता था।

मैंने क्या २ पढ़ा, इसका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है। उपर्युक्त ग्रन्थों में मैं प्रायः सब देख गया था, किन्तु विशेष रूप में मैं संस्कृत के ग्रन्थों का ही पारायण करता रहा–आधा महाभारत देख गया, भागवत समस्त बाँच गया, मज्झिमनिकाय नामक विशालकाय बौद्धग्रन्थ को पढ़ गया, दासबोध (श्रीसमर्थ रामदास रचित) गीतारहस्य, श्री डॉक्टर भगवानदास के अंग्रेजी के दार्शनिक ग्रन्थ (सायन्स ऑफ इमोशन्स, सायन्स ऑफ सेल्फ) आदि। राजतरङ्गिणी (काश्मीर का इतिहास चारों भाग कल्हणादिकृत) रामायण समस्त, चरक-सुश्रत का कुछ अंश, ऋग्वेद प्रायः समस्त एक वार ही सरसरी दृष्टि से देखा गया, और क्या २ देख गया, इसके लिखने का यह अवसर नहीं है। ऋग्वेद का कोई भी प्रामाणिक भाष्य मेरे पास नहीं था, मूल मूल ही देखता गया, फिर अचानक श्रीजयदेव जी का ऋग्वेद-भाष्य मिला—इसको मैंने समालोचनात्मक दृष्टि से देखा।

इसके अतिरिक्त राजधर्म पर कुछ लिख लाया हूँ। जेल का वातावरण प्रायः अशान्त रहता था, इसलिये बहुत विघ्न रहे, बाहर से आपेक्षित पुस्तकें भी न आ सकीं, इसलिये ग्रन्थ अधूरा रह गया, यदि अवसर मिला, तो इसका उपबृंहण करूँगा, नहीं तो हरीच्छा। इस समय हमारी उम्र ६३ वर्ष की है, पहिले जैसा पुरुषार्थ नहीं हो सकता—इस जीर्ण-शीर्ण शरीर से जो कुछ भी बन सके, वह सौभाग्य ही समझिये—इस समय इतना ही कह सकता हूँ।

आर्यजगत् की प्रगति

यद्यपि जन्म ही आर्यकुल में हुआ और समस्त आयु ही आर्यसमाज के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करते हुए गई, तथापि हमारी यह धारणा हुई कि स्वराज्य के बिना स्वधर्म की सर्वात्मना रक्षा नहीं हो सकती। स्वराज्य के अभाव में भारतसन्तान को जिस प्रकार की धर्मशून्य शिक्षा मिल रही है, उसने तो भारत की आँखें तो खोल दी हैं, पर भारत का नाश कर दिया है। नवयुवकों में स्वधर्म स्वसंस्कृति के लिये कोई आस्था ही नहीं रहती, ऐसी विचित्र दशा है—यदि आर्यसमाज प्रारम्भ से धार्मिक, शैक्षिक, सामाजिक राजनैतिक सभी क्षेत्रों में पग रखता, तो आज आर्यसमाज ही भारतवर्ष की अग्रणी संस्था रहती।

इसने मुख्य अंग 'राजधर्म' को छोड़ दिया। राजसभा बनाना भूल गया। सदा इसके नेता यही कहते रहे कि हमारा राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं। परिणाम यह हुआ कि संस्था पीछे पिछड़ गई। शिक्षाक्षेत्र में भी आर्यजगत् का अधिक धन स्वसन्तान को अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा देने में ही व्यय हो रहा है। थोड़े बहुत गुरुकुल खुले थे, वे भी वर्तमान स्थिति से प्रभावित हो गये हैं, जैसा फल चाहिये नहीं दे रहे हैं। ऐसी अनेक बातें हैं, जिससे आर्यसमाज की गति-विधि रुक गई है।

इसलिये हम सन् १६१६ के पश्चात् स्वराजनैतिक-गुरु लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के आदेशानुसार स्वधर्म का काम संभालते हुए भी, राजनैतिक क्षेत्र में काम कर रहे हैं और मन को प्रेम सन्तोष है कि देश-कार्य में कुछ तो योग दिया, कुछ तो काम किया, कुछ तो कष्ट सहे। भगवान् हमको शक्ति देवें कि जिससे भविष्य में भी योग दे सकें—सत्य संकल्पों का देने वाला और उनको पूर्ण करने वाला वही भगवान् है। अस्तु।

जेल में वेदविषय में मैंने बहुत विचार किया, उनको कभी आर्यजनता के सम्मुख रक्खूँगा। आज एक ही विचार रख कर इस लेखमाला को समाप्त करता हूं।

क्षयरोग

भारतवर्ष को दासता, दरिद्रता, दीनता तो सता रही ही है, पर उसमें क्षयरोग भी घुस गया है। डॉक्टरों से ज्ञात हुआ है कि हमारे देश में किसी न किसी रूप में इक्कीस लक्ष नर-नारियों को न्यूनाधिक अंश में क्षयरोग चिपटा हुआ है—कैसी भयंकर स्थिति है। यह सब भरपेट अन्न न मिलने तथा अधिक परिश्रम का फल है। हमारे देश के आयुर्वेदाचार्य इस विषय में क्या कर रहे हैं, पता नहीं, किन्तु ऋग्वेद के पारायण करते हुये मुझे यह बात मिली कि अपामार्ग क्षयरोग के जन्तुओं को निर्मूल करने का सबसे उत्तम उपाय हैं—वह कैसे इस को आयुर्वेदाचार्य बतलायेंगे।

ऋग्वेद दशम मंडल में राजयक्ष्मघ्न मन्त्रों अथवा सूक्तों को देखिये। इन मंत्रों का देवता "अपामार्ग" है। वेद तो मूल में सब कुछ कह देता है, उसका उपबृंहण करना विद्वानों का—वैदिक

विद्वानों का काम है। अपामार्ग का किस प्रकार उपयोग करना चाहिए, इसका अनुसन्धान शीघ्र होना चाहिए। यदि इसकी सहायता से हम असंख्य क्षयरोगियों के प्राण बचा सकें तो अच्छा है। बड़े पुण्य तथा उपकार का कार्य है। दशम मण्डल के १६१ से १६३ तक के सूक्त देखिए। इस विषय में कभी फिर विस्तृत रूप से लिख सकूंगा—

सारांश पहिले तीन जेलयात्राओं की तरह इस चौथी यात्रा में भी हमको बहुत लाभ हुआ। हमारी आत्मा बहुत प्रसन्न है।

हमारी सेण्ट्रल जेल में यू० पी० के २६ जिलों के प्रमुख कार्यकर्ता थे, नेता थे—उनसे राजनैतिक-विषय में विचार-विनिमय करने का अवसर मिला, इतने ग्रन्थों को देख जाने का अवसर मिला, आत्म-परीक्षण का अवसर मिला, बिखरी हुई स्वशक्ति के संचय का अवसर मिला, यह किसी पूर्वजन्म के सुकृत का ही फल है।

वैसे जेल में कष्ट तो होते ही हैं, कौन चाहता है कि बन्धन में रहे और बन्धन दुःख का कारण है। बन्धन, व्यसन, दुःख आदि किसी पाप के ही फल हैं, होंगे, कोई पूर्वजन्म के कर्म जिनका फल इस प्रकार के फल हों। चलो इस एक जेलनिमित्त से पूर्वपाप भी कटा और देश के पुण्यकार्य का फल भी मिला या मिलेगा। जो हुआ अच्छा हुआ, जो भी होगा, अच्छा होगा—बस।

यत्करोमि, यदश्नामि
यज्जुहोमि ददामि यत्।
यत्तपस्यामि कौन्तेय
तत्करोमि त्वदर्पणम्॥
शुभाशुभैः फलैरेवं
मोदयसे कर्मबन्धनैः॥

(गीता)

बरेली सेण्ट्रल जेल

एक घटना

महात्मा जी का पत्र सेवाग्राम से

(१६४१-जून)

सेवाग्राम ४-६-४१

श्री पण्डित नरदेवशास्त्री जी,

बन्दे ! पूज्य बापू जी की आज्ञा से यह पत्र लिखता हूँ। उनके ऊपर डॉ० धर्मप्रकाश संस्थापक अ० भा० दलित-जातीय-संघ मानवाश्रम बरेली का पत्र आया है। उसमें वे लिखते हैं—

"बरेली जेल में अपने साथी श्री चौ० परागीलाल एम्० एल्० ए० मु० सीतापुर और चौ० भीमसेन जी एम्० एल्० ए० बुलन्दशहर से मिलने गया था। वहाँ उपरोक्त दोनों महानुभावों ने बतलाया कि पं० नरदेवशास्त्री, पं० शंकरदत्तशास्त्री (मतलब पं० शंकरदत्त शर्मा एम्० एल० ए० से है) मुरादाबाद, श्रीधरगोस्वामी मथुरा, पं० कमलाप्रसाद लखीमपुर सीटी, पं० बालकृष्ण (मतलब पं० बालमुकन्दशास्त्री उरई से है) शास्त्री उरई, रामस्वरूपशर्मा हरदोई, जो सेण्ट्रल जेल बरेली में हैं—वह हम लोगों से इस कदर छूत-छात मानते हैं कि इनका लोटा गिलास छू जावे तो जब तक आग में न तपा लें, पानी नहीं पी सकते। मैंने अनुभव किया है कि मेरे साथियों के हृदय पर इनके इस घृणित व्यवहार से आघात पहुँचता है..............."

कृपया आप इस पर प्रकाश डालें, पूज्य बापू जी औरों को तो पहिचानते नहीं, आपको अच्छी तरह जानते हैं। इसलिये उन्होंने डॉक्टर जी को लिखवाया है कि—

"कम से कम पं० नरदेवशास्त्री के विषय में आपकी लिखी हुई बात पर विश्वास नहीं बैठता है फिर भी आप और अन्य सज्जनों के विषय में इस शिकायत पर प्रकाश डालियेगा।"

आशा है आप सब कुशल होंगे। उत्तर पूज्य बापू जी के नाम ही लिखा जाय।

आपका—

कि० ध० मशरूवाला

बजाय गांधी के

हमारा उत्तर

॥ वन्देमातरम् ॥

सेण्ट्रल जेल बरेली
७-६-४१

श्री महात्मा जी, वन्दे !

श्री मशरूवाला जी ने आपकी आज्ञा से जो पत्र लिखा, वह आज प्रातःकाल मुझे मिल गया। श्री डॉ० धर्मप्रकाश जी ने आपके पास जो शिकायत लिखी है वह सर्वथा निराधार है, उसका मुझसे तो कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं यहाँ देहरादून से ता० २६ जनवरी को आया था। तब यहाँ केवल दो लंगर (रसोईघर) थे। एक सामान्य General Kitchen जिसमें आमिष तथा निरामिषभोजी दोनों संमिलित थे, और निरामिषभोजी भी अपने आपको नॉन-वेजिटेरियन लिखाते थे क्योंकि ऐसा करने से —लिखाने से ग्यारह आने मिलते थे। दूसरे में केवल निरामिष सत्याग्रही थे।

यह स्मरण रखने की बात है कि जो अपने आप को निरामिष लिखाते हैं, उनको केवल आठ आने मिलते हैं। और जो अपने आप को आमिषभोजी (Non-vegetarion) लिखाते हैं, उनको ग्यारह आने मिलते हैं। मैं ग्यारह आने वालों में नहीं जाना चाहता था, क्योंकि मैं निरामिष हूँ, इसलिए श्री महावीरत्यागी आदि की सहमति से उसी रसोई में गया जिस का प्रबन्ध पं० शंकरदत्तशर्मा के हाथ में था। तब से इसी रसोई में भोजन करता हूँ। श्री प्रयागीलाल जी तथा श्री भीमसेन जी ये दोनों भी आमिषभोजियों के लंगर में खाते थे, इसलिए आज तक हमारा और इनका कभी संपर्क ही न पड़ा। फिर निरामिष-भोजियों का आन्दोलन उठा। नं० ४ बैरिक में उनका एक पृथक लंगर खुला। उसमें मांस तो नहीं बनता पर अपने आप को (Non-vegetarion) लिखाकर ग्यारह आने लेने वाले अनेक हैं। इसलिए हम उस लंगर में भी नहीं गये। हमने अपना लंगर पृथक् ही रक्खा। इसमें केवल आठ आने वाले ही संमिलित हैं। इसलिए प्रयागीलाल जी अथवा भीमसेन जी से संपर्क ही नहीं आया और न कभी ऐसी घटना हुई कि जिसमें बरतनों को आग में डालने का प्रसंग पड़ा हो। आमिषभोजी लंगर में लोग मांस खाते हैं, अण्डे कुटकते हैं, प्याज खाते हैं, हम जैसे लोगों के सुभीते का कोई ध्यान नहीं रक्खा जाता था, इसलिए हमको अपना प्रबन्ध पृथक् ही रखना पड़ा। छूत-छात के ख्याल से नहीं अपितु भक्ष्याभक्ष्य के विचार से हम प्रायः आमिषभोजियों से पृथक् ही रहे हैं। श्री प्रयागीलाल जी तथा श्री भीमसेन जी से हमको कभी घृणा नहीं हुई और न ही सर्व सामान्य व्यवहार में हमने कोई ऐसा काम किया जिससे कोई शिकायत हो। श्री प्रयागीलालजी अब भी मांस खाते हैं।

उरई के श्री बालमुकुन्द शास्त्री ता० २७ मई को छूटकर चले गये। श्री भीमसेन जी इससे भी पूर्व चले गये। हरदोई के रामस्वरूप जी भी चले गये, एक मास हो गया। वे यहां होते तो मैं यह

पत्र उनको दिखाता और उन्हीं के हाथ के पत्र भिजवाता। श्री श्रीधर गोस्वामी वृन्दावनवाले माध्व संप्रदाय के कट्टर वैष्णव हैं। वे अन्य ब्राह्मणों के हाथ तक का नहीं खाते। स्वयंपाकी हैं। सब से पृथक् हैं। श्री कामताप्रसाद मिश्र पहिले हमारे लंगर में थे फिर नं० ४ में चले गये। उनका और श्री प्रयागीलाल जी का कुछ झगड़ा हुआ था यह सत्य है क्योंकि ये दोनों नं० २ की बैरिक में पास ही पास रहते थे। शायद उसी झगड़े का जिक्र उन्होंने डॉ० धर्मप्रकाश से किया हो। इस झगड़े से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं। श्री कामताप्रसाद जी को बुलाकर मैंने पूछा तो उन्होंने कहा कि प्रयागीलाल जान बूझकर हमको तंग करता रहता है इसलिये हम उससे खान पान का सम्बन्ध नहीं रक्खेंगे।

पण्डित शंकरदत्त जी शर्मा एम० एल० ए० जो नेशनेलिस्ट पार्टी के मेंबर हैं, श्री मालवीय जी ने खड़े किये थे। ये कई वार जेल में आ चुके हैं और जब भी आये हैं, अपने ही हाथ से रसोई बनाकर खाते हैं। आमिषभोजियों से बचने के लिये पृथक् रहते हैं। बहुत सी ऐसी बाते हैं जो हम यहां से लिख नहीं सकते, विवश हैं। जब बाहर आयेंगे निवेदन करेंगे। यहाँ इस समय ६ लंगर हैं जिनमें लोग अपने अपने सुभीते के अनुसार प्रबंध कर लेते हैं। इनमें विशुद्ध आठ आने वालों का हमारा ही भोजनालय है। शेष मिश्रित हैं—शम्

आप का विनम्र

नरदेवशास्त्री

इस पत्र का उत्तर

(जो हमारे पास आया)

सेवाग्राम, वर्धा

१६-६-४१

श्रीमान् शास्त्री जी!

आपका पत्र पूज्य बापूजी को मिला। आपकी सफाई के लिये धन्यवाद। उसे डॉ० धर्मप्रकाशजी को भेजदेता हूँ। पूज्य बापूजी को उसे पढ़वा दिया है।

आपका

कि० ध० मशरूवाला



॥ ॐतत्सत् ॥

सन् ४२-४३ की नजरबन्दी

(६ अगस्त ४२ से १७ नवम्बर ४३)

जेल-जीवन का रोजनामचा

देहरादून तथा आगरा।

हम ता० ७-८-४२ को सायंकाल की गाड़ी से हरिद्वार स्टेशन पर चढ़े थे। पं० रेवानन्द भारद्वाज, श्री धर्मदेव, श्री करुणाकर पहुँचाने गये थे। और बहुत से लोग स्टेशन पर ही मिल गये थे। ता० ८-८-४२ का दिन साथियों से परामर्श तथा मिलने वालों से मिलने जुलने में गया। ता० ६-८-४२ को प्रातः आर्यसमाज देहरादून के अधिवेशन में सम्मिलित हुए। अधिवेशन समाप्त करके हम मित्रों से मिल ही रहे थे कि किसी ने रेडियो का समाचार सुना दिया कि महात्मा गांधी तथा अन्य कमेटी के सदस्य पकड़े गये—हम सभी मिलने वालों से मिल कर वनस्पति-भवन पहुँचे ही थे कि श्री दासबाबू और बाबू खुरशेदलाल जी आये, श्री नारायण मुनि को वहीं बुला लिया गया, निश्चय हुआ कि सायंकल बाबू खुरशेदलाल की कोठी पर कार्यकर्त्ताओं की विशेष बैठक हो जिसमें कार्य-क्रम सोचा जाय। लगभग ३ बजे के समय कोठी पर सब लोग एकत्रित हुए—लगभग पचास व्यक्ति होंगे। आधा घण्टा भी न होने पाया कि श्री सत्येन्द्र (बद्रीपुर) ने सूचना दी कि बा० खुरशेदलाल और श्री कृष्णचन्द सिंगल का वारण्ट है, पुलिस आ रही है इत्यादि। बा० खुरशेदलाल और श्री कृष्णचन्द तो बाजार में व्याख्यान देने चले गये, वे वहीं पकड़े गये—मैं, नारायणमुनि, श्री दासबाबू, श्री नारायणदत्त डंगवाल और दो एक और सज्जन रमा-औषधालय (अजबपुर) पहुँचे, शेष सब अपनी २ तैयारी के लिये स्व स्व स्थान को चले गये। हम रमा-औषधालय में लगभग एक घण्टे डेढ घण्टे रहे होंगे कि श्री लक्ष्मणदेव बाइसिकिल पर शीघ्रता से आये और कहने लगे कि पुलिस आ रही है-देखते देखते दो लारिएँ, पुलिस और सी० आई० डी० के लोग आगये। पुलिस वालों ने मुस्करा कर कहा 'शास्त्री जी चलिये' 'मुनिजी चलिये' 'दासबाबू' चलिये' 'डंगवाल जी चलिये'। हमने भी मुस्करा कर कहा 'चलिये'।

थोड़ी देर में वहाँ सौ-दो सौ गाँव वाले एकत्रित हो गये। हम सब पुलिस लॉरी में बैठ गये, जेल में आये, जेल के भीतर जाने से पूर्व मिलने वालों को संदेश दे दिये गये। बस संसार से सम्बन्ध छूट गया। हमने समझा था हम ही हैं पर जेल में आने वालों का ताँता सा ही बन्ध गया—हमारे पूर्व श्री कृष्णचन्द्र सिंगल और खुरशेदलाल आगये थे। ता० १० को प्रातःकाल तक श्री गोविंदराम भट्ट

(जिला मन्त्री) ला० सेवाराम (चूहड़पुर) बुद्धिप्रकाश, (चूहड़पुर) ख्वाजा अब्दुल अजीज (मसूरी) मास्टर रामस्वरूप (धर्मपुर) श्री सोमप्रकाश (कालसी) श्री धर्मदेवशास्त्री (कालसी) श्री महानन्द (डांडा) श्री ज्योतिप्रसाद (राजपुर) श्री मिट्ठनलाल (देहरा) रावत घनश्यामसिंह (अजबपुर) आ गये—

शहर में पूर्ण हड़ताल रही—विराट् सभा हुई। सब अपने २ पकड़े जाने की खबर सुनाते रहे, दुःख में सुख रहा, शोक हर्ष में बदल गया—शहर में श्री लक्ष्मीचन्द और हरस्वरूप आदि ने खूब धूम मचा रक्खी थी। ता० ११–८–४२ की रात्रि में सोमेन्द्र मुकर्जी (अजबपुर) पं० सीताराम वैद्य, श्री शान्तिप्रपन्न (महन्त परशुराम के सुपुत्र) पं० माधोराम, श्री देवकीदन्दन ता० १२–८–४२ को पं० शीशराम (कैरवान कर्णपुर) पं० चन्द्रमणि जी (बम्बई से आते ही स्टेशन पर पकड़े गये) श्री नाथीराम ममगाईं (मसूरी) आये—पता चला शहर में हड़ताल चल रही है,—सोमेन्द्रमुकर्जी से प्रान्त का हाल और श्री चन्द्रमणि जी से बम्बई का वृत्तान्त सुना—आश्चर्यजनक वृत्तान्त थे—

ता० १५–८–४२—को श्री लक्ष्मीचन्द (गुजराड़ा) हरस्वरूप (देहरा) श्री ऋषिकुमार वैद्य (चूहड़पुर) पं० दीपचन्द (कर्णपुर) आये—१६–८–४२ को श्री जोगाराम, (राजपुर) कुन्दनलाल (नालापानी) आये। पता चला कि ता० ६ से चली हुई हड़ताल ता० १६–८–४२ को खुली। ता० १७–८–४२ को पूर्णचन्द्र (चूहड़पुर) दर्शनलाल (चूहड़पुर) आये—पहिले जब हम गये तब जेल की बड़ी डाट में ही रहते थे पर जब वह भर गई, तब सात नम्बर की बैरिक खुल गई, हम में से बहुत से वहाँ गये। इस तरह बैरिक नं० २, नं० ७ और डाट नजरबन्दों से ही भर गई। नं० ७ बैरिक में इतने खटमल थे कि रात्रि को सोना कठिन हो रहा था—आज यज्ञोपवीत परिवर्तन-हवन हुआ—

ता० १७–८–४२ श्रावण शु० ६ संवत् १६६६—हृदयविदारक खबर आयी कि श्री महादेव देसाई का हृदयक्रिया के बन्द होने से देहावसान हो गया। महात्माजी चाहते थे कि जहाँ देसाई जी के देह की दाह हो वहाँ तक उन्हें जाने दिया जाय, अधिकारियों ने नहीं माना और महादेव देसाई का अन्त्येष्टि संस्कार आगाखाँ महल की हद में ही किया गया। महात्माजी वहाँ जाकर प्रतिदिन बैठते और कुछ काल ध्यान करते रहते ऐसा पता चला। जेल में सभा हुई, हमारा भाषण हुआ। नगर में पूर्ण हड़ताल हुई।

ता० १८–८–४२ श्रावण शु० ७ संवत् १६६६-पता चला कि हिन्दु विश्वविद्यालय काशी १४ सितम्बर तक के लिए बन्द हुआ। श्री मित्रसेन वैद्य, (देहरा) श्री लालाराम (रिस्पना) इन्द्रदत्त (कर्णपुर) आदि १० व्यक्ति दफा १८८ में आये।

तुलसीजयन्ती मनायी गई। नजरबन्दों की भीड़ अधिक हो गई इसलिए, श्री नारायण मुनि, श्री चन्द्रमणि, श्री भट्ट 'ए' क्लास बारिक में गये। जब से हम आये हैं हम अपना नित्य नियम

स्वाध्याय और जप यथारीति करते रहते हैं। कुछ पुस्तकें हम अपनी लाये हैं और कुछ साथियों से ले लेते हैं इस तरह दिनकटी होती रहती है।

आज ज्ञात हुआ कि हम ग्यारह व्यक्तियों के वारण्ट जो जोलाय में ही मंगा लिये गये थे–सीधे संयुक्त प्रान्त की गवर्नमेण्ट ने भेजे थे। हम ग्यारह व्यक्ति जब भी छूटेंगे तब प्रान्तीय सरकार की आज्ञा से ही छूटेंगे–बाकी १२६ में आ रहे हैं और उनकी २६ पीछे से मंगा ली गयी है। हमारी प्रारम्भ से २६ धारा है—हम ग्यारह हैं—१-श्री नारायणदत्त डंगवाल २-श्री खुरशेदलाल एडवोकेट ३-श्री महावीरत्यागी (आगरा जेल में सजा भुगत रहे हैं) ४-श्री नारायण मुनि ५-श्री हुलासवर्मा (लखनऊ में थे, वहीं पकड़े गये) ६-श्री ख्वाजा अब्दुल अजीज ७-श्री धर्मदेवशास्त्री ८-श्री हंसराज कक्कड़ (एक मास पश्चात् आए) ९-हम (नरदेवशास्त्री) १०-श्री ज्योतिःप्रसाद कन्नान ११-श्री सुरेशचन्द्र दास (दास बाबू)—

श्री जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट हमारे पूर्व परिचित श्री रायबहादुर रामस्वरूप श्रीवास्तव हैं। ये १६३० में फैजाबाद में सुपरिण्टेण्डेण्ट थे। जेलर हैं श्री काजमी साहब बी० ए, नायब हैं श्री कैलासनाथ उपाध्याय (ये पूर्व वर्ष भी यहाँ थे), श्री रायबहादुर साहब ने हुक्म सुनाया कि हम लोग न पत्र लिख सकते, न कोई पत्र मिल सकता है, न मुलाकात हो सकती है, न अखबार। हमने कहा जब हम यहाँ बन्द हैं तब पत्र लिखने में क्या हानि है। उत्तर मिला कि आज़तक आप जो जेल में आये तब और दशा थी, आप लोगों ने Quit India भारत को छोड़ो ऐसा पहले कभी नहीं कहा था। अब तो आप लोग युद्ध के कैदी हैं, सरकार जैसा रक्खेगी रहना पड़ेगा—

देहरादून के कलेक्टर ने नजरबन्दों में कोई भेद-भाव 'बी–सी' जैसा नहीं रक्खा। सब के साथ 'बी' का सा वर्त्ताव करने के लिये लिखा था। जो १४४ अथवा कोई धारा तोड़ कर आते थे वे साधारण 'सी' जैसे समझे जाते थे—नजरबन्दों को प्रतिदिन के खर्च के लिये ९ आने दिये जाते थे। देहरे के नजरबन्दों में किसी को भी 'ए' क्लास नहीं मिली। हम अपने कपड़े-वस्त्र, बिस्तर रख सकते हैं, पुस्तकें रख सकते हैं, सी० आई० डी० की मंजूरी अथवा सुपरिण्टेण्डेण्ट की मंजूरी से। जेल से भी कम्बल, कुरते, घुटन्ने पायजामें मिलते हैं जिसको लेना हो ले लेवे, प्रायः नजरबन्द ले ही लेते हैं—अपनी वस्तुओं को कोई खराब करना नहीं चाहता—

१९-८-४२—आज पगली हुई।

२२-८-४२—रात्रौ १–३० पर पगली हुई।

२४-८-४२—श्री पं० अमरनाथ वैद्यशास्त्री, ध्रुवसिंह आये—पं० वंशीधरशास्त्री जो जेलोपदेशक हैं प्रति रविवार प्रातः साधारण कैदियों को धर्मोपदेश देने आते हैं। एक मौलवी भी आता है। पं० हृदयराम (जोहड़ी) वीरेन्द्र, उदयवीरसिंह, पं० गोविंदराम पाठक (गुजराड़ा), गोयल; जितेन्द्रकुमार, ब्र० कुंजबिहारी, चेला (हृषीकेश), सच्चिदानन्द आदि आये।

२६-८-४२—रक्षाबन्धन दिवस, बृहद्धवन, यज्ञोपवीतपरिवर्तन, मिष्ठान्नवितरण, आमोद-प्रमोद।

३१-८-४२—अब तक कानून भंग करके आए हुए भाइयों की संख्या लगभग १२० हो गई जिनमें ८ देवियाँ भी हैं—नगर में खूब जलूस निकल रहे हैं, श्याम सत्येश्वर आदि डी० ए० वी० कॉलेज के छात्र अधिक संख्या में आ रहे हैं। जेल में रहने को स्थान नहीं, बड़ी तंगी है। कारखाना बन्द करके टीन के नीचे बहुत से रक्खे गये हैं—छोटे छोटे १०-१२ वर्ष आयुवाले बालक भी ८-१० आगये। एक विचित्र धूम मची हुई है—

१-६-४२—आज कविसम्मेलन हुआ—प्रतिदिन दस बीस आ ही जाते हैं, गैर कांग्रेसी बहुत से गुण्डा एक्ट में लाये जा रहे हैं।

३-६-४२—श्रीकृष्णजन्माष्टमी व्रतम्, महोत्सव।

५-६-४२—आज विशेष सभा, "हिंसा-अहिंसा" पर वादविवाद—हमारा भाषण। भिन्न २ विषयों पर प्रतिसप्ताह वादविवाद होते हैं। कभी २ किसी का विशेष विषय पर व्याख्यान भी हो जाता है। कभी कभी नकली पार्लियामेंट भी होती है। लगभग दस बारह दिन से सायं प्रातः झण्डाभिवादन भी होने लगा है।

६-६-४२—श्रीदेवसुमन, श्रीभगवतीप्रसाद पान्थरी एम्० ए०, श्री रघुवीरप्रसाद पैनूली एम्० ए०, श्री शिवप्रसाद पैनूली, श्री आनन्दशरण रतूड़ी एम्० ए०-टिहरी स्टेट के ये पांच आये हैं-श्री पं० शंकरदत्त डोभाल छठे। सुना है बुलन्दशहर जेल में १५०, बरेली में २५० और मुरादाबाद जेल में भी २०० राजनैतिक कैदी हैं।

१२-६-४२—सायंकाल पं० दीनदयालशास्त्री आये, बाहर का सब वृत्तान्त सुना। डी० ए० वी० कॉलेज के २०० छात्रों का नाम कट गया सरकारी ग्रैण्ट बन्द हो गई। अध्यापकों को १/३ वेतन मिला करेगा इत्यादि सुना है। महाविद्यालय ज्वालापुर में ५वीं तक के छात्र शेष हैं, बड़े छात्र आंदोलन में गये।

१३-६-४२—हम 'ए' क्लास वार्ड में आये। इस समय यहाँ इस वार्ड में श्री भट्ट, नारायणमुनि, बा० खुरशेदलाल, श्री चन्द्रमणि भी हैं—इस प्रकार हम पाँच हैं—

१८-६-४२—श्रीगोविन्दसहाय बिजनौर वाले जो मसूरी में पकड़े गये थे, आये। श्री चन्द्रमणि जी 'ए' वार्ड से फिर नं० ७ में चले गये—जेल में राजनैतिक बन्दी इतने अधिक बढ़ गये कि सीमेन्ट वाला कारखाना बन्द करके वहाँ भी बन्दियों को रक्खा जा रहा है। तनाहियाँ भी भर गई—वस्तुतः देहरादून जेल में अच्छी तरह रखना हो तो केवल १२० के लिये स्थान है पर अब तो साधारण बंदी तथा राजनैतिक बंदी मिला कर तीन सौ से ऊपर हो गयें हैं। बैरिक नं० ८ में साधारण बंदी ७०-८० रहते हैं, स्थान है केवल ३० के लिये।

२०-६-४२—गायत्री का प्रथम पुरश्चरण आज भाद्रपद शुक्ला ११ को समाप्त (१२५०००),—श्री गोविंदसहाय जी से बाहर के विस्तृत वृत्त सुने।

२१-६-४२—अस्वस्थ ।

२२-६-४२—अस्वस्थ ।

२३-६-४२—अस्वस्थ ।

२४-६-४२ से ३०-६-४२—स्वस्थ, भोजन व्यवस्था में गड़बड़, केवल दो जगह रसोई बनती है, सबका भोजन साथ ही होता है, बहुत विलम्ब होता है । खाने-पीने में आपाधापी ।

सितम्बर मास गया, महाविद्यालय का कोई समाचार नहीं मिला । न दक्षिण से कोई खबर मिली । देश में सर्वत्र उपद्रव हो रहे हैं ऐसा सुना जा रहा है । प्रमुख २ समाचार-पत्र बन्द हो गये हैं, सरकारी नियन्त्रण के कारण कांग्रेस के समाचार छपने नहीं दिये जाते ।

२-१०-४२—गांधी जयन्ती मनाई गई, टिहरी के दो छूटे ।

३-१०-४२—श्री हंसराज कक्कड़ आये, सब वृत्त जाना ।

८-१०-४२—कलेक्टर जॉनस्टन और कमिश्नर वुड निरीक्षणार्थ आये । कल से दिनचर्या में विशेष परिवर्तन करना है ।

६-१०-४२—जो जन्मे हम संग, उतौ सब स्वर्ग सिधारे ।
जो खेले हम संग, काल तिनहूँ को मारे ॥
हम हूँ जर-जर देह, निकट ही दीखत मरीबो ।
जैसे सरिता - तीर - वृक्ष, तुच्छ उखरिबो ॥

इसको आत्मकथा में मिलाना है । अब हमारी दशा ऐसी ही होती जाती है ।

१०-१०-४२— "प्रकृतिस्त्वाँ नियोद्यति
निग्रहः किं करिष्यति"

इसका साक्षात् अनुभव कारावास में प्रतिदिन हो रहा है । सभी नेता हो रहे हैं, कोई किसी की न सुनता है न मानता, "बहवो यत्र नेतारः" यह उक्ति चरितार्थ हो रही है ।

११-१०-४२—बाहर समय मिले तो शिवाजी के मरहटी चरित्र को हिन्दी में करने का विचार मन में आ रहा है ।

१२-१०-४२—जो लोग छूटकर जाते हैं उनको वाचिक संदेश दे देते हैं । यथास्थान पहुँचते हैं कि पता नहीं ।

१८-१०-४२ (विजयादशमी)—विजयामहोत्सव, आनन्द-मंगल ।

२४-१०-४२—हृषीकेश के स्वा० सदानन्द, भगवानदास आये ।

२६-१०-४२—समाचार है कि हम पर एक नया अभियोग चलेगा, क्योंकि को-ऑपरेटिव बैंक विषयका एक समाचार हमारे कहने से संवाददाता श्री लक्ष्मणदेव ने प्रकाशनार्थ भेजा था।

३०-१०-४२—गायत्री का द्वितीय पुरश्चरण समाप्त।

८-११-४२—आज इस कारा में आये हुए हमको पूरे तीन मास होते हैं। इस बार राजनैतिक बन्दियों की खूब धकापेल रही, अब तक इनकी संख्या २५० के लगभग हो गई। इनमें १६० नजरबंद हैं। ६० शेष किसी न किसी धारा में दण्डित हैं। विशेषतः भारत-रक्षा धारा का ही प्रयोग हुआ है। स्कूलों और कॉलेजों के छात्र अधिकतर धारा १४४ तोड़ने के अभियोग में आये हैं। बन्दियों में सब प्रकार के लोग हैं। डाक बन्द, तार बंद, मुलाकात बंद, अखबार बंद, लेखन सामग्री का अभाव इत्यादि के कारण एक प्रकार से अज्ञातवास-सा ही है।

इस बार बन्दियों का परिवर्तन भी नहीं हो रहा है। जो जहाँ पकड़ा गया, वहीं के जेल में बंद। एक ही साथ घिच-पिच रहते हैं। स्वास्थ्य का पूरा प्रबंध नहीं। बाह्य जगत् के समाचार नये-नये बन्दियों से मिलते रहे हैं। 'न भूतो न भविष्यति' ऐसी दशा हो रही है।

भारतवर्ष की स्वतन्त्रता का प्रश्न एक जटिल प्रश्न हो गया है, भूमण्डल में सर्वत्र इसी की चर्चा है। प्रश्न इतना गम्भीर हो गया है कि यह प्रश्न अन्तरराष्ट्रीय बन गया है। भारतवासी स्वतन्त्रता के लिए जी-तोड़ परिश्रम कर रहे हैं, घोर प्रायश्चित्त कर रहे हैं, त्याग-तपस्या कर रहे हैं, फल भगवान् के अधीन है-गीता में ठीक ही कहा है कि—

अधिष्ठानं तथा कर्ता, करणं च पृथक् विधम्।
विविधाश्च पृथक् चेष्टाः, दैवं चैवात्र पञ्चमम्॥

तत्रैवं सति कर्त्तारं आत्मानं केवलं तु यः।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वात् ,न स पश्यति दुर्मतिः॥

देखिए, अघटित-घटना-पटीयसी भगवती भवितव्यता क्या क्या चमत्कार दिखलाती है। संसार-व्यापी युद्ध संसार का मानचित्र बदलने को है।

जेल में रहन-सहन, खान-पान का एकसा भाव विशेष देखने योग्य है। नजरबंद और दण्डित दोनों मिले-जुले रहते हैं—जब पृथक् २ रहने को स्थान नहीं तब जेल वाले भी विवश हैं। जेलर तथा उनके सहचारी शिष्ट पुरुष हैं। सहनशीलता से काम ले रहे हैं, गंभीरता से वर्त रहे हैं। सुपरिण्टेण्डेण्ट पुराने अनुभवी हैं। अब की वार जितने भी अनुभव हुए नये ही नये हैं।

जिलेभर के छोटे बड़े कार्य-कर्त्ता एक साथ हैं, समीप रहने से परस्पर गुणावगुण की खूब जाँच हो रही है। शेष अनुभव गतवर्ष सेण्ट्रल जेल बरेली में जैसा हुआ था उसी प्रकार है। कहीं जाइये वहीं ढाक के वही तीन पात। गवर्नमेंट यह समझे बैठी थी कि सब कार्यकर्त्ताओं को एकदम पकड़ कर

बंद कर देने से, उनका बाह्य जगत से संपर्क मिटा देने से शायद आन्दोलन बन्द हो जायगा, पर अभी तक तो आन्दोलन दबा नहीं। अस्तु गत तीन मास में हम ने निम्नलिखित ग्रन्थों का स्वाध्याय किया। स्वाध्याय-ग्रन्थों में सभी प्रकार के ग्रन्थों का समावेश रहा।

१—डॉक्टर भण्डारकर के लेख तथा भाषण (मरहटी।
२—सुभाषितावली (संस्कृत)।
३—Message of the Gita I (Arvinda Ghosh).
४— ,, ,, ,, II
५—In our own Times.
६—In Andamans (अंदमन में)।
७—Bankim, Tilak, Dayanand (Arvinda).
बंकिम, तिलक, दयानन्द।
८—Is India civilised क्या भारत सभ्य है ? (हिन्दी)।
६—Auto-suggestion.
१०—The Rebel President.
११—The Men of Miracles.
१२—Upnishads (मरहटी-संस्कृत)।
१३—To the Students (विद्यार्थियों से—ले० महात्मा गाँधी)।
१४—The Philosophy of Upnishads (Sarva Palli Sir Radhakrishnan).
१५—Gospel of the Johns.
१६—भर्तृहरि (हरिदास कम्पनी मथुरा—छह वार आवृत्ति)।
१७—The Riddle of the Universe (Earnest Hacckels).
१८—मरहटा राज्य का इतिहास (सरदेसाई—बड़ोदा)।
१६—History of the World V, VI Volumes.
२०—William Orange (Holland).
२१—Robert Bruce (Scotland).
२२—Lord North Cliffe (Diary).
२३—निरुक्त भाग १
२४—Hitler's War (Before and After).
२५—Aims of Humanity (Masaryak).
२६—Marvells of the Modern World.

जेल में आने से वैसे लाभ तो बहुत होता है। स्वाध्याय तथा आत्मचिन्तन के लिए पर्याप्त समय मिलता है। गत तीन मास में लगभग गायत्री का २६६००० जाप हुआ—हम जब जब जेल में गये गायत्री जाप तो हमारे कार्यक्रम का मुख्य अंग रहा है—

१६२१–१६२३—प्रथमवार जेल में

देहरादून–मुरादाबाद–बरेली–लखनऊ–रायबरेली १०२५००० जाप

१६३०—द्वितीयवार जेल में

देहरादून–फैजाबाद ६२५००० जाप

१६३२—तृतीयवार जेल में

देहरादून में ही ६२५००० जाप

१६४०–१६४१—चतुर्थवार जेल में

सेण्ट्रल जेल बरेली ७२५००० जाप

१६४२–१६४३—पंचमवार जेल में

देहरादून

६–८–४२ से ८–११ ४२ तक २६६००० जाप

आगे जो कुछ हो—

पिछली बार जेल में आम्लपित्त बहुत तंग करता रहा किन्तु इस बार स्वास्थ्य ठीक रह रहा है। हम इतना स्वाध्याय, इतना जप, इतना संयम रख कर बरतते हैं तथापि बाह्य जगत् के मोह और संस्कार तंग करते ही रहते हैं। महाविद्यालय की स्मृति भी कभी कभी विचलित कर देती है, संस्कारों की प्रबलता !! हम तो इस निश्चय पर पहुँचे हैं कि—

ईश्वरः सर्वभूतानां, हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि, यन्त्रारूढानि मायया॥
(गीता)

ईश्वर मनुष्य के कर्मानुसार, यन्त्र के सदृश फलचक्र घुमाता रहता है, वैसी ही मनुष्य की बुद्धि कर देता है अथवा फेर देता है। इसीलिये पुरुषार्थ करना अपना काम है फल उसी के अधीन है। जैसा फल मिलना होगा, जितना मिलना होगा, जब मिलना होगा, सब उसी की इच्छा पर निर्भर है, चिन्ता व्यर्थ है। उसी पर अटल विश्वास रखना चाहिये। अथवा—

"देहिनो व्यसनापातवैवश्याद्भ्रमतो पथि"
"आत्मापराधवृक्षाणां फलान्येतानि देहिनाम्॥"

यह उक्ति सर्वथा चरितार्थ होती है—मन कह रहा है कि हमारी अन्तिम जेल है। अब तक का जीवन संकट-परम्परा के रहते भी अद्भुत रहा। ईश्वर की कृपा से शेष जीवन भी किसी न किसी उपकार

के कार्य में लगा ही रहेगा ऐसी पूर्ण संभावना ही नहीं अपितु दृढ़ विश्वास है। आगे भी वही रक्षक करुणानिधान भगवान् है।

पूने में मरहटी की पूर्ण शिक्षा और अंग्रेजी की चतुर्थश्रेणी की शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् सन् १८६४ में, नवम्बर मास के अन्त में हम उत्तर भारत में आये थे। तब से अब तक लगभग ४८ वर्ष होते हैं। विधाता का यही विधान था। समस्त जीवन अपनी मातृभूमि से दूर प्रदेश में रहे और वहाँ भी संकट-परम्परा में से निकले और संकटों में ही प्रकाश हुआ। कहाँ तब अपना महाराष्ट्र छोड़ा था और कहाँ अब सब भारतवर्ष ही अपना हो रहा है।

स्वप्नेऽपि यदसंभाव्यं,
तत्र भग्ना मनोरथाः।
हेलया तद्विदधतो,
नासाध्यं विद्यते विधेः॥
(राजतरङ्गिणी)

जिस उद्देश्य की प्राप्ति स्वप्न में भी संभव नहीं थी, जिस की प्राप्ति में सैकड़ों वार निराश होना पड़ा, विधाता ने उसी उद्देश्य को हेला या लीला से ही प्राप्त करा दिया। विधाता के लिए असाध्य ही क्या है? संभव को असंभव और असंभव को संभव करना उसके रात-दिन के खेल-से हैं—

इस समय भारतवर्ष में जो आन्दोलन चल रहा है, ऐसा तीव्र आन्दोलन कभी नहीं चला था। यदि यह सत्य है और है अवश्य त्रिकालाबाधित सत्य कि किया हुआ कोई कर्म निष्फल नहीं जाता, तो इस समय जो असंख्य लोग भारतवर्ष के जेलों में कष्ट उठा रहे हैं, उनके वे कष्ट परिणाम में सुखकर होंगे। गवर्नमेण्ट ने प्रत्येक प्रदेश के कार्यकर्त्ताओं को एकदम पकड़ कर बंद कर दिया इस लिये आन्दोलन का रूप बदल-सा गया है क्योंकि मार्गदर्शक कोई नहीं। पर इस प्रकार एकदम धर-पकड़ न हुई होती और आन्दोलन को अपनी चाल चलने दिया होता तो आन्दोलन की प्रगति और अच्छे ढंग से हुई होती। सहस्रों कांग्रेस कार्यकर्ताओं के पास कोई हिदायत नहीं पहुँच सकी थी, वे पूर्व ही पकड़े गये थे।

सरकारी अधिकारियों का यह खयाल अवश्य है कि यदि वे इस प्रकार पहिले से पहिले ही धर-पकड़ न करते तो भारतवर्ष में ऐसे उपद्रव हो जाते कि जिनकी कल्पना करना भी असंभव था। सारांश इस समय देश में सर्वत्र उथल-पुथल मची हुई है। अधिकारीवर्ग यही कह रहा है कि काम मार लिया, आन्दोलन दबा दिया गया, हम कांग्रेस से बात नहीं करेंगे किन्तु कांग्रेस की स्थिति ऐसी दृढ़ हो गई है कि कोई भी समझौता कांग्रेस के बिना हो ही नहीं सकता।

इसी का नाम विचित्र गति है कि कहाँ तो जापान के आक्रमण के समय देश की स्थिति को संभाल रखने के लिए संघटनात्मक, रचनात्मक कार्य-क्रम बनाया जा रहा था और वहाँ एकदम यह दशा आई

कि कांग्रेस को अखाड़े में उतरना पड़ा। सर स्टेफोर्ड क्रिप्स समझौता कराने आये थे किन्तु असफल ही लौट गये।

राजनैतिक वातावरण में क्षण क्षण में परिवर्तन हो रहे हैं, या दिखलाई पड़ रहे हैं। राजनैतिक अखाड़े में, कोई यह चाहे कि सदैव एक ही गति रखी जाय अथवा एक ही चाल चलती रहे तो यह असम्भव बात है। जैसे युद्धक्षेत्र में कभी आगे बढ़ना होता है, कभी पीछे हटना पड़ता है, यही हाल राजनैतिक दाँव-पेंचों का है।

कुछ भी हो, भारतवर्ष की स्वतन्त्रता के दर्शन होने का उपक्रम हो गया है। भारतवर्ष जिस जाल में फँसा पड़ा है उसकी प्रायः सब गाँठें खुल चुकी हैं। दो एक मुख्य गाठें शेष हैं, उनके खुलते ही भारतवर्ष स्वतन्त्र हुआ समझिये। भारतवर्ष के स्वतन्त्र हुए बिना संसार के झगड़े निबट नहीं सकते। जब इस विश्वव्यापी महाभारत के अन्त में सब राष्ट्र अपने २ भाग्य का निर्णय करने बैठेंगे तब वे देखेंगे कि भारत के भाग्य का निपटारा हुए बिना किसी भी राष्ट्र के भाग्य का निपटारा संतोषजनक रीति से नहीं हो सकता। बस वही समय भारतवर्ष की स्वतन्त्रता का है। फैसिस्टवाद, नाजीवाद आदि को समूल नष्ट करने की इच्छा रखने वाली ब्रिटिश सत्ता खूब समझ गई है कि उन वादों के साथ इसका साम्राज्यवाद भी विलीन होने को है। अस्तु, परमकारुणिक भगवान् की असीम कृपा कि भारतवर्ष के स्वतन्त्रता के आन्दोलन में एक सिपाही की भाँति कई वार सम्मिलित होने का अवसर मिला—ऐसा आशामय समय देखने को मिला जिसके देखे जाने की कोई आशा ही नहीं थी।

क्या कोई आशा कर सकता था कि भौतिक साम्राज्यवादियों के सम्मुख भारत का निःशस्त्र-प्रतिकार काम कर जायगा? संसार ने न जाने, सृष्टि के आरम्भ से लेकर आज तक कितने असंख्य युद्ध देखे होंगे पर ऐसा युद्ध जिसमें ज्ञान विज्ञान के बल पर उग्ररूप से खड़ा हुआ भौतिक राष्ट्र एक ओर और निःशस्त्र-प्रतिकारी भारत दूसरी ओर, ऐसा युद्ध सृष्टि के आरम्भ से लेकर अब तक कहीं नहीं हुआ। हाँ व्यक्ति व्यक्ति में तो हुए हैं, जैसे शास्त्रास्त्रधारी विश्वामित्र और निःशस्त्र वशिष्ठ में—पर आज जो निःशस्त्र भारत शस्त्रास्त्र-सुसज्जित ब्रिटिश सत्ता से टक्कर ले रहा है यह बात तो एकदम निराली है। देवताओं को भी लालायित करने वाला दृश्य उपस्थित हुआ है।

यह दैवी और आसुरी सम्पद् का युद्ध देखने योग्य है। इसमें प्रारम्भ में आसुरी सम्पद् की ही विजय होगी पर अन्ततोगत्वा दैवी सम्पद् की ही विजय होगी। भारत दैवी सम्पद् का प्रतिनिधि है। यह गीता वाक्य अवश्य सफल होगा—

मा शुचः संपदं दैवी—
मभिजातोऽसि भारत।

देहरादून—जेल
कार्तिक शुक्ला १५—१६६६
८-११-४२

एवमस्तु, तथास्तु, परेशो मंगलं
विदधातु अत्र, तत्र, सर्वत्र—
नरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ

कारावास का वृत्तान्त

१९४२-१९४३

९- ८-४२— को पकड़े गये भारत-रक्षा धारा २६।

२४-११-४२—देहरादून जेल में रहे।

२५-११ ४२—आगरा सेण्ट्रल जेल में पहुँचे।

१७-११-४३—आगरा सेण्ट्रल जेल से मुक्त हुए।

देहरादून में तोल	१४० पौंड	
आगरे में नवम्बर	१२६ पौंड	
,, ,, दिसम्बर	१३८ पौंड	
,, ,, जनवरी	१४० पौंड	
,, ,, फरवरी	१३८ पौंड	
,, ,, मार्च	१४२ पौंड	
,, ,, अप्रैल		भयंकर गरमी के कारण वजन बहुत घट गया।
,, ,, मई		
,, ,, जून		
,, ,, जुलाई		रुग्ण रहा।
,, ,, अगस्त		
,, ,, सितम्बर		
,, ,, अक्टूबर	स्वास्थ्य संभला	
,, ,, नवंबर	पूर्ववत्	

जब गरमियों में गरमी असह्य होगई तब देहरादून वाले बन्दियों ने आई-जी के पास अन्यत्र किसी ठंडे स्थान की जेल में भेजने के लिये प्रार्थना पत्र भेजा—जब आधी गरमी निकल गई तब उत्तर आया कि कहीं भी स्थान खाली नहीं है। तोलने की मशीन पुरानी और रद्दी थी इसलिए उपर्युक्त तोल को यथार्थ नहीं समझना चाहिये। इन तोलों में से चार अथवा पाँच पौंड कम करना चाहिए। जनवरी से नवम्बर तक प्रायः एकाहार ही रहा—

आगरा सेण्ट्रल जेल

२६-११-४२ से १७-११-४३ तक

२६-११-४२ प्रातः ८—हम बैरिक नं० २८ में हैं इस बात की खबर दीवार की दूसरी ओर रहनेवाले नजरबन्दों को लग गई थी, इसलिए प्रातःकाल होते ही दूसरी ओर के नीम के पेड़ पर चढ़कर हम से दो दिन पूर्व आये हुए देहरादून के एक भाई ने चिल्लाकर सब कुछ समझा दिया था—

प्रातः १०-११—बा० व्रजपालसिंह आये और उन्होंने, हमारे सामान-सूमान देखे और जोर की तलाशी ली। फिर श्री० रामस्वरूप शर्मा (स्वर्गीय श्री पद्मसिंह शर्मा नायकनगला निवासी के चचेरे भाई जो यहाँ गोदाम में काम करते हैं) आये और हमारे कपड़े-वपड़े लिख लिए और जेल के कपड़े दे गये—

ठीक १२ बजे—हमको बारहताला नामक स्थान में भेजा गया—हमारे अन्य भाई हमसे मिलने के लिए उतावले बैठे ही थे। खूब गले से गले लगाकर मिले और इधर उधर की, बाहर भीतर की बातें समाप्त होने के पश्चात् देहरादूनवालों ने अपने लिए बैरिक नं० २० को पसन्द किया, तब से वह बैरिक देहरेवालों की कहलायी जाती रही है—कुछ लोग अन्य बैरिकों में भी गये क्योंकि देहरादून वाले पहिले और पिछले मिलाकर लगभग ५० थे-सब बीस नम्बर में नहीं आ सकते थे। मेरे लिए हमारे आगरे के भाइयों ने पहिले से नं० २४ में स्थान रख लिया था इसलिए मैं वहीं गया।

इस बैरिक में दो-चार को छोड़ कर सभी किसान और जिमींदार थे इसलिए यह किसानों की और कभी कभी हँसी में गँवारों की बैरिक कहलायी जाती थी। इसमें विद्याभास्कर श्री वाचस्पतिशास्त्री (स्नातक महाविद्यालय) के श्वशुर पं० शिवलाल जी, पं० चन्द्रहंस वैद्य भी रहते थे। इन्होंने हमारी खूब सेवा की। श्री पं० अमरनाथ दीक्षित (वटेश्वर), श्री ठा० जगजीतसिंह जी वगैरों ने भी हमारे सब प्रकार के सुभीतों का ध्यान रक्खा। इस बारहताला में इस समय लगभग १७५ नजरबन्द हैं और सात बैरिकें हैं। नजरबन्दों का हस्पताल भी इसी में है-इस सेण्ट्रल जेल में साधारणतया दो सहस्र कैदी रह सकते हैं। भीड़-भाड़ के समय २५००-३००० सहस्त्र भी हो जाते अथवा रक्खे जाते हैं-इस जेल में इमली के सैकड़ों पुराने पेड़ हैं–नीम के भी पेड़ हैं, यत्र तत्र पीपल के वृक्ष भी दिखलायी पड़ते हैं।

यह आगरे का प्रदेश राजपूताने का द्वार होने से शुष्क प्रदेश है—यहाँ जल की भी तंगी रहती है, गरमी भी बेहद पड़ती है, वर्षा बहुत कम होती है और जाड़े में ठिर काफी। देहरादून की सुन्दर जेल छोड़कर हम रेगिस्तान के द्वार पर आ पड़े। यहाँ आगरे से मथुरा दिल्ली जो भी हवाई जहाज जाते हैं, जेल के ऊपर से होकर निकलते हैं इसलिए हवाई जहाजों का रामरौला सदैव बना रहता है, हम लोग इनसे भी तंग रहते थे। जो देश साक्षात् युद्धभूमि बन रहे हैं वहाँ के लोगों की क्या दशा हो रही होगी– हवाई जहाज कभी एक कभी दो, कभी छह-छह सात सात निकलते रहते थे—क्योंकि आगरा भी एक बड़ा हवाई अड्डा है।

यहाँ आने पर और ही दृश्य दिखलायी पड़े—आगरे जिले के समस्त राजबन्दियों की यही एक जेल है, एटा, मैनपुरी, झाँसी के भी कुछ नजरबन्द आये हैं। आगरे जिले के ही नजरबन्दों की संख्या इस समय १२० के लगभग हो गई है-इसलिए आगरे जिले के सभी कार्यकर्त्ताओं से एकदम एकसाथ परिचय हो गया-नजरबन्दों में सभी प्रकार के लोग थे, धनी मानी सेठ, वकील, व्यापारी, प्रोफेसर, अध्यापक, कॉलेज-स्कूल के छात्र, संपादक, कवि, ग्रन्थलेखक, शास्त्री, पण्डित, पुरोहित, किसान, जिमींदार, डॉक्टर, वैद्य, सोशियालिस्ट (समाजवादी) कम्यूनिस्ट (वर्गवादी, साम्यवादी) गान्धीवादी, क्रान्तिवादी, नरम, गरम सभी प्रकार के लोग थे—

बारहताला विस्तृत स्थान है, इसलिए प्रातः सायं टहलने का भी सुभीता रहता है-यहाँ प्रतिदिन कांग्रेस वालों का झण्डाभिवादन होता है। ता० ६ अगस्त (धरपकड़ का दिन) प्रत्येक मास की ६ तारीख को मनाया जाता है। प्रतिमास के अन्तिम रविवार को विशेष झण्डा-समारोह होता है। स्वतन्त्रता-दिवस (ता० २६ जनवरी) को धूमधाम से मनाया जाता है।

इसके अतिरिक्त हिन्दू, जैन, आर्यसमाजी, सिक्ख सभी अपने अपने त्योहार मनाते हैं। मुसलमान अपनी ईद भी मनाते हैं—रसोईघर १३-१४ हैं, जहाँ जिसका सुभीता हो, जिसमें जिसका मेल बैठे वहाँ भोजन करता है-यद्यपि नियमानुसार प्रबंध जेलवालों को करना चाहिए तथापि अपना सुभीता समझकर जेलवाले समस्त भोजन-प्रबन्ध नजरबन्दों पर ही छोड़ देते हैं। प्रत्येक मेस का एक मैनेजर है, परोसने की बारी लग जाती है। मैनेजर बदले भी जाते हैं-भोजन पकाने, बैरिक साफ करने, ऊपरी काम करने, जल भरने, कपड़े धोने के लिये मामूली कैदी हैं।

यहाँ निम्नलिखित क्लासें चलती हैं—

१—चर्खा क्लास।
२—राजनैतिक क्लास।
३—रामायण क्लास।
४—गीता क्लास।
५—कम्यूनिस्टों का क्लास।
६—गायन-वादन क्लास।
७—वाद-विवाद क्लब।
८—विशेष व्याख्यानमाला।

इसके अतिरिक्त समय समय पर विशेष नैमित्तिक सभाएँ भी हो जाती हैं—लोग अपनी अपनी रुचि के अनुसार कालक्रमणा अथवा कालयापना करते हैं—खेलने के लिए वॉली बॉल, बैडमिण्टन आदि का प्रबन्ध है, कुश्ती आदि के लिये अखाड़ा भी है—कोई विशेष पुरुष छूटा कि कर पार्टी, कोई विशेष नजरबंद आया कि दे पार्टी यह तो चलता ही रहता है। साधारण कैदियों (जो नजरबंदों का काम करते हैं) को भी कभी २ नजरबन्द लोग अपना भोजन काटकर अथवा विशेष त्योहार के अवसर पर

भोज देते हैं—इस प्रकार ये नजरबन्द अपनी दिनकटी करते रहते हैं—पढ़ने के लिए अपनी पुस्तकें रख सकते हैं इसलिए विद्याव्यसनी लोग अपने समय का सदुपयोग अन्य प्रकार से करते रहते हैं।

अशिक्षित अथवा साधारण नजरबन्दों में कोई अंगरेजी पढते हैं, कोई हिन्दी सीखते हैं, कोई ऊर्दू। शिक्षितों में कोई लॉ (कानून) की तैयारी कर रहा है, कोई परीक्षा की तैयारी कर रहा है, विशेष पुरुष कोई ग्रन्थ लिख रहे हैं इत्यादि सब चल ही रहा है—

सेण्ट्रल जेल में नजरबन्दों का जीवन साधारणतया कैसे चल रहा है इस विषय में हमने, कारागार से छूटने पर देहली के 'हिन्दुस्थान' दैनिक में लेख छपवाया था, यहाँ अविकल उद्धृत करते हैं क्योंकि उससे सब ज्ञात हो सकता है—

(हिन्दुस्थान–२० दिसम्बर ४३)

'क्यू क्लास'

श्री नरदेवशास्त्री वेदतीर्थ गत मास सेण्ट्रल जेल आगरा से मुक्त हुए थे। वे ज्वालापुर महाविद्यालय से लिखते हैं:—

पाठकों को यह नया नाम सुन कर कुछ आश्चर्य-सा होगा। सामान्यतः सब नजर-बन्दी जो कि धारा १२९ अथवा धारा २६ के अन्तर्गत नजरबन्द हैं, उनका नाम है "क्यू क्लास प्रिजनर।" सरकार ने इस नये नाम का आविष्कार संभवतः "क्विसलिंग" नाम को लेकर किया है। पाश्चत्य देशों में यह शब्द देशद्रोही के लिये उपयोग में लाया जाता है—भारतीय देशभक्तों के लिये ऐसे संकेत का रखना देशभक्तों का अपमान करना है। अब सरकार जान गई कि नजरबन्द लोग इस 'क्यू क्लास' के नाम से घृणा करते हैं, इस लिए उनके कागजों में तो हम लोगों के लिये "क्यू" का ही प्रयोग किया जाता है पर प्रत्यक्ष में "क्यूक्लास" कहना बन्द है।

जिनको नजरबन्दी का अनुभव नहीं वे नजरबन्दों के सुख-दुःखों को नहीं जान सकते। विशेषतः १९४२ से प्रारम्भ हुई नजरबन्दी तो एकदम बेढब थी। इसमें भी ए, बी, सी जैसा विभाजन किया है। जिलाधीश की इच्छा पर छोड़ दिया गया कि जैसा चाहे रक्खे। कभी-कभी सरकार भी हस्तक्षेप करके जिलाधीश की ज्यादतियों को दूर कर देती है, वह भी धनीमानी श्रेणी के व्यक्तियों के लिये। किसी किसी जिलाधीश ने बहुत ही सख्ती वर्ती है। संहारनपुर जिले में १५-१६ को छोड़कर शेष सभी 'सी' क्लास में दे दिये गये। अब जरा नजरबन्दों की दशा सुनिए। मेरे लिए तो इस प्रकार नजरबन्द होने का प्रथम ही अवसर था। देहरादुन के जिलाधीश ने किसी को भी 'सी' में नहीं डाला, यह उनकी उदारता या निष्पक्षता कम प्रशंसनीय नहीं थी। प्रथम प्रथम 'ए' वाले को लगभग बारह आने 'बी' वाले को नौ आने और 'सी' वाले को चार आने मिलते रहे। 'सी' वालों की दशा

अभी भी वैसी ही है। ए, बी वालों ने बहुत हल्ला किया तब उनका खर्च दुगना किया गया, इस भयंकर महंगे जमाने में जब प्रत्येक वस्तु के दाम दुगने कहीं-कहीं तिगुने हो गये हैं, तब वहाँ किस तरह काम चलता होगा इसका स्वयं अनुमान लगाना चाहिए।

हम एक वर्ष तो ऐसे रहे जैसे किसी दूसरे लोक में रहते हैं। पढ़ने को पुस्तकें मिलती थीं, यही एक अच्छी बात समझिये। नहीं तो न कागज, न स्याही, न लिखने के साधन, न मुलाकात, न अखबार, न और कैदियों से मेल-मिलाप। कहीं कहीं तो आपस में भी मिलने-जुलने में प्रतिबन्ध। रात भर बैरिकों में बन्द रहना। काफी तादाद में न तो जेल के कपड़े मिले और न ही प्रति-दिन व्यवहारोपयोगी बर्तन। जिनके पास अपने बर्तन थे वे अच्छे रहे। सरकार ने अपने कपड़े और बर्तन मंगाने की इजाजत दे रक्खी थी, पर हमारे साथी इसी बात पर अड़े रहते थे कि जब ये लोग पकड़ कर लाये हैं तब इन्हीं का कर्तव्य है कि हमें प्रत्येक वस्तु दें। इसमें बड़े झगड़े खड़े हो जाते थे। जेल के जूतों पर ही झगड़ा चल पड़ता था। सागपात भी झगड़े की जड़ रही। पहिले अच्छे जूते मिले, फिर चप्पल, फिर देशी-जूते ही मिलने लगे गुरगाबी शाही।

जब कोई वस्तु नहीं मिलती थी तब चलता था "नो लॉक अप" अर्थात् बन्द नहीं होंगे। जब इन्सपेक्टर-जनरल या अन्य अफसर आते थे तब परेड, खड़े होने नखड़े होने पर भी झगड़े चल पड़ते थे। बहुत से भाइयों को तनाही का दण्ड भुगतना पड़ता था। मैं तो मोटी मोटी बातें लिखता हूँ, छोटे-मोटे मानापमान के प्रश्नों को जाने दीजिये। जेल में सभी अधिकारी उग्र होते थे, सो बात नहीं। कहीं २ के सुपरिण्टेण्डेण्टों की प्रसंशा करनी पड़ती है, क्योंकि उनकी नितान्त सज्जनता को कभी कभी हमारे भाई दुर्बलता मान बैठते थे—यह तो भूल थी ही।

इस प्रकार एक वर्ष तक बट्टेखाते में रहने के पश्चात् सहसा पत्र-व्यवहार का मार्ग खुल गया। हम मास भर में चार पत्र लिख सकते थे और आठ पत्र ले सकते थे। किन्तु यह बात पूरे मास भर रही भी नहीं कि एक हुक्म आया कि यह हुक्म समझने में भूल हुई है भविष्य में मास भर में एक चिट्ठी भेज सकेंगे और एक ही बार की चिट्ठी मिला करेगी। इसमें भी सेंसर सिर पर था, जहाँ चाहे कोई वाक्य काट देता था,—सारा पत्र ही व्यर्थ हो जाता था। पत्र के साथ एक स्लिप लगानी पड़ती थी जिस पर पत्रान्तर्गत आये हुये सब नामों का पूर्ण विवरण लिखना पड़ता था—जैसे दीनदयालु शास्त्री हमारे मित्र, बा० मथुराप्रसाद हमारे साले, सूरजकृपालु हमारा भतीजा, शिवलाल हमारे मामा, सुशीला हमारी लड़की, इत्यादि। कहाँ तक लिखें विचित्र दशा थी। हँसी भी आती थी और रोना भी आता था। पत्र कभी मिलता था, कभी महीनों तक नहीं मिलता था, कभी जेल कार्यालय में पड़ा रहता था।

जिस दिन हम छूटे हमने देखा, कार्यालय में पत्रों के गड्ड के गड्ड पड़े हुए हैं जो कभी नहीं दिये गये। भीतर हम अपना सिर धुन लेते रहे, बाहर हमारे इष्ट-मित्र-बन्धु बांधव। एक वर्ष तक तो कोई समाचार-पत्र मिला ही नहीं। फिर भीतर बाहर के आन्दोलन करने पर 'हिन्दुस्तान टाइम्स', 'हिन्दुस्तान' 'तेज', 'मॉडर्न रिव्यू', 'सरस्वती','माधुरी', 'योगमाया' ये दैनिक और मासिक मिलने लगे। मासिकों

की यह दुर्दशा कि मासारम्भ में प्रकाशित होने वाले मासिक पत्र मासान्त में मिलते थे। पता नहीं इसमें क्या प्रबन्ध की खूबी थी। मैं तो लिख ही चुका हूँ कि सब जेलों के सुपरिण्टेण्डेण्ट अथवा अधिकारी एक से नहीं थे। कोई सज्जन थे तो कहीं कहीं नवाबी ठाट-बाट के भी थे—जो नजरबन्दों को "भिखमङ्गों" से अधिक अच्छा नहीं समझते थे।

हम मानते हैं कि जेल में नियन्त्रण की बड़ी आवश्यकता है। पर नियन्त्रणों के नाम पर, जेल अथवा बिभिन्न धाराओं के नाम पर, नजरबन्दों को सदैव दबा कर रखने की प्रथा अथवा पदे-पदे उनको यह जतलाने की प्रथा कि "तुम बन्दी हो"कोई अच्छी प्रथा नहीं। इससे तो कटुता और तीव्र हो जाती है—बढती है। इस प्रकार परस्पर सौमनस्य के कभी दर्शन नहीं होंगे।

अब सुनते हैं कि नजरबन्दी कानूनों में—विशेषतः धारा २६ में—कुछ परिवर्तन सोचा जा रहा है। कहते हैं कि इस कार्य के लिये प्रत्येक प्रान्त में रिवाईजिंग बोर्ड बैठेंगे। २६ धारा प्रथम-प्रथम छह मास के लिए लगा करेगी—उसकी मियाद बढ़ाने का अधिकार सरकार को होगा। नजरबन्द को बतलाया जाया करेगा कि क्यों पकड़े गये। उसको वकीलों के साथ परामर्श करने का सुभीता रहेगा। वह आक्षेपों का समाधान कर सकेगा। इत्यादि। यदि इस वार्ता में कुछ भी तथ्यांश है तो मैं यही कहूँगा कि नजरबन्दों के निवास के, अथवा दिनचर्या अथवा अन्य व्यवहार के विषय में नियमोपनियमों का निर्माण उदारभाव से होना चाहिये। अब तो नियम और धाराएँ हैं उनमें अक्षर तो हैं पर हृदय नहीं हैं। थोड़े शब्दों में मैं यही लिख सकता हूँ कि जेलों की जड़ किन्तु निर्जीव मशीनों में हजारों सजीव प्राणियों, बोलचालने वाले देशभक्तों का कचूमर निकाला जा रहा है।

२६-११-४२—यहाँ बारिकें रात्रि को ग्यारह बजे बन्द होती हैं—आज परिचय सभा हुई थी, हम तो नहीं गये थे। बाहर से जो भी आता है उसका इस सभा में परिचय दिलाया जाता है।

३०-११-४२—यहाँ ४ महाराष्ट्र व्यक्ति हैं श्री धूतेकर, श्री खेर (दोनों एम्० एल्० ए० हैं) श्रीभागवत वैद्य (ये तीनों झाँसी के हैं। श्री डॉ० कुण्टे (ग्वालियर के)।

१-१२-४२—गायत्री का तृतीय पुरश्चरण समाप्त।

"यमदंष्ट्रा" (कार्तिक के अन्तिम आठ दिन और अगहन के प्रारम्भिक आठ दिन) के दिनों में स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रक्खा।

देहरादून से चलते समय Marvels of the Modern World श्री जेलर साहब काजमी जी को भेंट की। हमने अपनी २४ नम्बर की बैरिक का नाम शान्तिनिकेतन रक्खा है।

२-१२-४२—यहाँ आकर मालूम पड़ने लगा है कि बाह्यजगत् से सर्वथा सम्बन्ध-विच्छेद हो गया। पहिले ही यहाँ अनेक क्लास थे एक और वैद्यक श्रेणी भी खुल गई है—भागवत पढ़ाते हैं, श्री मनमोहन वैद्य भी पढ़ाते हैं—

३-१२-४२—हमारे पास सायं ३ से ४ जिज्ञासु लोग आते हैं, हम भी यथाशक्ति समाधान कर देते हैं।

१२-१२-४२—गीता सप्ताह प्रारम्भ, हमारा प्रवचन।

१८-१२-४२—गीता-जयन्ती सप्ताह समाप्त, हमारा भाषण।

१९-१२-४२—गीताविषयक कविसम्मेलन-सभापति पं० हरिशंकर शर्मा कविरत्न।

२०-१२-४२—मिट्टी का तेल न मिलने के कारण बन्दियों का विरोध-प्रदर्शन।

२१-१२-४२—आई० जी० आकर चले गये, शीघ्र बन्द होने के विरुद्ध प्रदर्शन।

२२-१२-४२—फिर जोर का प्रदर्शन, मैजिस्ट्रेट ने आकर बन्द कराया, बन्दी बन्द नहीं होते थे।

२३-१२-४२—फिर प्रदर्शन—विरोध इत्यादि।

२४-१२-४२—आज पहिली वार सब बैरेकों में जाकर लोगों से मिले। हमारा स्वाध्याय का क्रम बराबर चला जा रहा है।

२५-१२-४२—सी० क्लास के राजनैतिक कैदी भी बिजनौर, मेरठ आदि से लाये गये हैं। उनको नजरबन्दों से पृथक् भीतर सर्कल में रक्खा गया है। मिलना असंभव।

३०-१२-४२—गायत्री का चतुर्थ पुरश्चरण समाप्त। सुना है गु० कु० डौरली बन्द हो गया, सरकार की आज्ञा से। पं० बालाप्रसाद, पं० श्रीरामजी शर्मा आदि भी हमारे साथ ही हैं। श्री पं० हरिशंकर शर्मा हमारी बैरिक में रहते हैं।

बाहर की कोई खबर नहीं मिल रही है, पाषाण-पत्रिका से कुछ समाचार मिल जाते हैं। यह 'पत्रिका' जेल से ही संपादित होकर स्लेट पर लिखकर प्रत्येक बारिग में सुनायी जाती है—एक साहित्य-गोष्ठी और चल पड़ी है, कवि-सम्मेलन भी जब चाहे कर लिया जाता है—हिन्दी तुलसीरामायण की अन्त्याक्षरी भी होती है।

३१-१२-४२—यहाँ एक कौन्सिल ऑफ-एक्शन नामक बन्दियों की सभा है। यह सब झगड़े निमटाती है और करती भी है। चुनाव के लिए भी उग्र झगड़े चल पड़ते हैं, दलबन्दी भी कम नहीं है।

५-१-४३—महाविद्यालय पत्र लिखा वस्त्रों के लिए।

६-१-४३—श्री मित्रसेनवैद्य देहरे गये एक पुराने मारपीट के अभियोग में, देहरे जेल के बन्दियों को सन्देश भेजा।

१३-१-४३—श्री पं० योगेश्वर वैद्य (कनखल) के देहावसान का समाचार मिला।

१४-१-४३—मकर संक्रान्ति १६६६-विशेषव्याख्यान।

यहाँ ता० २६ नवम्बर को आये थे आज ता० १४ जनवरी है, निम्नलिखित पुस्तकें देखीं—

Glimpses of the World-History (Jawaharlal) Short Histroy of the World.
गान्धी-अभिनन्दन ग्रन्थ (श्री सर्वपल्ली राधाकृष्णन्)

उपनिषद् भाष्य (पं० राजाराम शास्त्री)
,, ,, (भीमसेन शर्मा-इटावानिवासी)
,, ,, (मरहटी-भागवत)
महें-जो-दड़ो-हरप्पा (मनोरंजक वृत्तान्त)
House of Shivajee (J. Sarker)
राजस्थान का इतिहास (जगदीशसिंह गहलौत)
निरुक्त (उत्तरार्द्ध)
भण्डारकर (फिर आवृत्ति)
सुभाषितावली (विशेष विशेष प्रकरण)
मनुस्मृति।
मराठा राज्य (देसाई)
Quislings (Hitler's Trojan Horses)
केवल अच्छे अकरण पढ़े-रद्दी पुस्तक.
Voltaire's philosophical Dictionary)

वॉल्टियर का यह कथन है कि ग्रन्थकार को तीन बातें नहीं करनी चाहिएँ—१ अपना नाम लम्बा-चौड़ा नहीं लिखना चाहिए, केवल नम्रतापूर्वक अपना साधारण नाम लिखना चाहिए, २—पुस्तक को किसी के समर्पण नहीं करना चाहिये, ३—पुस्तक की भूमिका नहीं लिखनी चाहिए और चौथी बात यह कि जो लोग लेखक नहीं हैं, लिखना नहीं जानते, उनको व्यर्थ लिखना भी नहीं चाहिए।

२२-१-४३—आज ज्ञात हुआ कि पत्र-व्यवहार खुल गया—प्रतिसप्ताह दो पत्र जाया करेंगे। मास-भर में आठ पत्र मिला करेंगे। केवल सम्बन्धियों को जा सकते हैं।

२६-१-४३—स्वतन्त्रता दिवस अत्यन्त समारोह से मनाया गया। प्रभातफेरियाँ निकाली गईं, सभाएँ हुईं, भोज हुआ इत्यादि। "जंग छिड़ा है जंग"—यह गीत बड़ा रोचक था।

२-२-४३—गायत्री पंचम पुरश्चरण समाप्त।

५-२-४३—पं० गोविंदराम वैद्य की मृत्यु का दुःखद समाचार आया।

६-२-४३—हमने पं० रामदत्तशुक्ल तथा स्वा० आनन्दबोधतीर्थ जी के नाम पत्र लिखे थे—सेंसर ने लौटा दिये।

८-२-४३—मिस्टर स्लोन का पत्र बन्दियों के विषय में।

९-२-४३—बसन्त पंचमी की धूम--

११-२-४३—जमनालाल बजाज दिन मनाया गया।

१२-२-४३—श्री चन्द्रभाल जौहरी का देहावसान हुआ। कष्टम्--महात्मा गांधी जी का इक्कीस दिन का उपवास प्रारम्भ होगा—सर्वत्र क्षोभ--चिन्ता।

१३-२-४३—पत्र व्यवहार फिर रोका गया, एक पत्र जाया करेगा, एक मिला करेगा।

१४-२-४३--महात्मा गाँधी और वायसराय के बीच जो पत्र व्यवहार हुआ है, वह महत्वपूर्ण है।

१६-२-४३—महाविद्यालय के समाचार मिले।

१७-२-४३—महात्मा गाँधी जी की दशा चिन्ताजनक।

१८-२-४३—महात्मा जी के स्वास्थ्य निमित्त यज्ञारम्भ।

२०-२-४३--यज्ञ समाप्ति।

२१-२-४३—महात्मा जी के स्वास्थ्य के निमित्त सिक्खों की ओर से अरदास।

२२-२-४३—महात्मा जी की दशा अत्यन्त चिन्ताजनक--(आकाशवाणी)।

२३-२-४३—आज दशा अच्छी बतलाते हैं।

१-३-४३--महात्माजी प्रसन्नचित्त।

३-३-४३—महात्मा जी का व्रत सानन्द समाप्त। जेल में यज्ञ-हवन, भजन-पूजन, गायन-वादन, सिक्खों द्वारा अरदास।

४-३-४३--ऋषिबोधोत्सव समाप्त—हमारा भाषण, नवस्नातकों के लिये सन्देश भेजा।

६-३-४३—सप्तम पुरश्चरण गायत्री का समाप्त करना है, नवीन संवत्सर के पूर्व।

७-३-४३—महात्मा गाँधी के स्वास्थ्य निमित्त सामूहिक प्रार्थना, हमारी प्रार्थना, श्री खेर का भाषण।

मकरसंक्रान्ति से अब तक निम्नलिखित ग्रन्थ देखे—
निरुक्त संपूर्ण
ज्ञानेश्वरी केवल ६ अध्याय।

उपनिषद् १२ सभाष्य-सरसरी दृष्टि से।

अमरकोष सम्पूर्ण।

House of Shivajee.

The Attack from Within.

Thomas Pain.

चरक-सुश्रुत--विशेष प्रकरण।

कृष्णचरित्र (हिन्दी)।

रामायण (संस्कृत) युद्धकाण्ड, अयोध्याकाण्ड।

Glimpses of World History.

ज्ञानार्णव--जैनग्रन्थ--मनन करने योग्य।

China—

Bhudola Stories.

भण्डारकर (फिर सरसरी दृष्टि से)।

सुभाषितावली (कतिपय मनोरंजक प्रकरण)

सरस्वती, माधुरी, विशालभारत, मॉडर्न रिव्यू।

१५-३-४३--महात्मा गांधी के उपवास का संसार पर विचित्र प्रभाव पड़ा, संसार हिल उठा।

१६-३-४३--श्री सरदार चन्द्रसिंह जी से "अरदास" सुनी। श्री गुरुनानक जो का नसीहतनामा सुना जो कि बाबर के नाम था।

मन नींवा, मत ऊँची!
देग-तेग की फतह--

१७-३-४३—आज महाविद्यालय से पुस्तकें आईं। हमारे पास अपने वस्त्र पर्याप्त हैं इसलिये जेल के कपड़े लौटा दिये।

२०-३-४३—श्री अनुसूयाप्रसाद बहुगुणा का देहावसान सुन कर क्लेश हुआ।

२१-३-४३--नजरबन्दों की ओर से 'सी' क्लास वालों को विशेष भोजन दिया गया।

२२-३-४३--होली का परस्पर सम्मिलन।

२५-३-४३--हमारे प्राचीन मित्र प्रो० जंगबहादुर झा एम्० ए० भी आगये-नजरबन्द आ ही रहे हैं।

२६-३-४३--स्वर्गीय सत्यमूर्ति जी के लिये सभा,-हमारा भाषण।

५-४-४३—आज संवत् २००० का प्रारम्भ। संवत् १९९९ अपना रंग दिखा कर चले गये। स्वस्त्यस्तु, संवत्सरोत्सव मनाया गया।

निम्न पुस्तकें देखीं—

History of the World Civilisation.

माधुरी (मार्च)

विशालभारत (मार्च)

शान्तिपर्व—

यजुर्वेदमूल

दशोपनिषद् (पाठ)

गीतापाठ (प्रतिसप्ताह पूर्ववत्)

८-८-४२ से अब तक ५-४-४३ गायत्री जाप संख्या ८९१००० हुई।

महात्मा गाँधी और वायसराय का पत्र व्यवहार ध्यानपूर्वक पढ़ा। महात्मा गाँधी ने मुँहतोड़ उत्तर दिया है कि सब दोष सरकार का ही है। कांग्रेस का दोष नहीं। सहस्रों कांग्रेस वालों को एकदम पकड़ कर बंद कर देने से उपद्रव हुए। उत्तरदायित्व सरकार का है।

६-४-४३—राष्ट्रीय सप्ताह प्रारम्भ।

किसी ने यह गाया—"यह मत कहो कि जग में क्या कर सके अकेला"

पं० प्यारेलाल गुरु ने गाया—"चरखा तेरी पाटी काऊदिन सोने से मढवा दूँगी"

श्री रामचन्द्र पालीवाल ने गाया—"रण में किसका किससे नाता"

महाविद्यालय का महोत्सव आज समाप्त हो गया होगा।

११-४-४३—श्री महावीर त्यागी, श्री खुरशेदलाल तथा प्रकाशशिरोमणि बदायूं भेजे गये। श्री धुलेकर तथा श्री महेन्द्र गये एटा को।

१२-४-४३—नजरबंद आते ही जा रहे हैं, जितने जाते हैं उतने ही भर जाते हैं।

१४-४-४३—रामनवमी मनाई गयी। हमारा भाषण।

१५-४-४३—महावीरजयन्ती मनाई गई, हम अध्यक्ष थे।

२०-४-४३—आज दशलक्ष (गायत्री) जाप समाप्त।

४-५-४३—फिर पत्र व्यवहार खुला, मास भर में एक पत्र जा सकता है और एक ही आ सकता है। एक पत्र में ५०० से अधिक शब्द नहीं रहने चाहिएँ। अपने मूल्य से अखबार मंगा सकते हैं पर उसके लिये भी उसी पत्र में लिखना पड़ेगा, पृथक् कार्ड नहीं मिलेगा।

१०-५-४३—समाचार पत्र में म० वि० के महोत्सव का समाचार पढ़ा। उत्सव अच्छा रहा। छह स्नातक निकले।

११-५-४३—मवाना के केशवशरण का देहावसान हुआ, कष्टम्, एक शक्त और भक्त शिष्य जाता रहा।

१२-५-४३—देहरादून के मित्रसेन वैद्य का पुत्र शिखरचन्द्र का देहावसान हो गया। अत्यन्त सुशील लड़का था।

१५-५-४३—श्री अल्लाहबख्श (सिन्ध के प्रधान मंत्री) को किन्हीं दुष्टों ने मार डाला।

१७-५-४३—श्री भगवतप्रसाद सनातन 'कोकिल सम्पादक' का बहादरगढ़ (मेरठ) में देहावसान।

१८-५-४३—दो एक दाँत पीड़ा दे रहे थे। पं० शिवलाल जी ने अनायास निकाल दिये।

२२-५-४३—पं० माधोराम, सीताराम वैद्य, भगवानदास, मिट्ठनलाल छूट गये।

२५-५-४३—देवकीनन्दन गुप्त, हरस्वरूप, जोगाराम, नाथूराम (मसूरी) छूटे।

२७-५-४३—हरद्वार हिन्दीसाहित्य सम्मेलन हो गया। बड़े झगड़े रहे। स्वा० शान्त्यानन्द, श्री घनश्याम गिरि आदि ने संभाल लिया।

२६-५-४३—सायं वृष्टि हुई, जरा आनन्द आया-

३१-५-४३—हृदयराम, बलदेव, प्यारेलाल आदि छूटे, सुना है देहरे जिले से भी थोड़े थोड़े छोड़े जा रहे हैं।

ये ग्रन्थ देखें या चल रहे हैं—

१-History of the World Ceirtisation.
२-विशालभारत (मार्च)
३-दासबोध (मरहटी)।
४-शान्तिपर्व।
५-छान्दोग्य- बृहदारण्यक उपनिषद्।
६-भट्टिकाव्य-(सम्पूर्ण)।
७-सरस्वती-(मई)।

८–The Story of India. (F. R. Moraes)

९–अध्यात्मरामायण।

१०–In the Woods of God-realisation–

११–योग वासिष्ठ।

आगे गायत्री जाप का कोई नियम न रहेगा, प्रतिदिन बिना किसी विशेष कष्ट के जितना भी जाप हो सकेगा किया जायगा। प्रणव, महाव्याहृति, अजपा, अघमर्षण इनके विशेष जाप किये जायंगे—स्वाध्याय भी ढीला किया जायगा, क्योंकि गरमी बेहद पड़ने लगी, बैरिक भी तप जाती है, बाहर जाकर बैठें तो वहाँ भी बैठना कठिन। प्रातः भोजन के पूर्व जितना स्वाध्याय हो सके उतना पर्याप्त है। बाहर जेल की दीवार की छाया में कुछ समय के लिये एकान्त में बैठ जाया करते हैं जब वहाँ भी धूप आ जाती है तो चक्कर में इमली के पेड़ के नीचे कुछ समय बिताते हैं।

३-६-४३—दीपचन्द-बलदेव आदि मुक्त हुए।

६-६-४३—फेडरलकोर्ट ने स्पेशल कोर्टों को रद्दी करार दे दिया।

७-६-४३—नजरबन्दियों के फिर आपसी झगड़े खड़े हुए, मास भरमें एकाधवार उठते ही हैं, जेलवालों के साथ तो झगड़े बने ही रहते हैं।

८-६-४३—गवर्नमेण्ट अब नया आर्डिनन्स बनाना चाहती है जिसमें २६ धारा की अवधि ६ मास तक रहेगी, फिर अधिक बढ़ाने का अधिकार सरकार को रहेगा। वह पकड़ कर बन्द रखने का कारण बतलायेगी, अपील हो सकेगी, वकील कर सकेंगे इत्यादि।

१३-६-४३—पं० सीताराम मुक्त।

१४-६-४३—श्री एमरी का वक्तव्य है कि वह समय आने वाला है जब भावी पीढी तक सब ठीक हो जायगा। अब तक जितने झगड़े रहे हैं वे पिछली पीढी के कारण रहे हैं।

१५-६-४३—वर्षास्नान, बड़ा आनन्द रहा, जब भी वर्षा होती है हम वर्षास्नान करते हैं।

१८-६-४३—आजसे डायरी में वही बात लिखी जायगी जो विशेष हो, क्योंकि कागज थोड़ा है।

२७-६-४३—महात्मा जी के आमरण अनशन करने की फिर चर्चा उठ रही है। ईश्वर कृपा करें।

२८-६-४३—देहरादून के जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट का वक्तव्य, नजरबन्द की देखभाल, दवा दारू के विषय में पढ़ा। शायद पं० गोविंदराम वैद्य की मृत्यु के कारण ऐसा वक्तव्य निकालना पड़ा।

२-७-४३—श्री शुक्ल जी (रामदत्त शुक्ल) का पत्र 'अध्यात्म में लगे रहिये'। आजकल अच्छा बरस रहा है।

१३-७-४३—चातुर्मास्यारम्भ, धार्मिक ग्रन्थों का पारायण विशेषरूप से। विशेषरूप में जापादि (गिनती के बिना)

१५-७-४३—जेल-एडवाइजर स्लोनमहाशय जेल-निरीक्षण के लिए आये।

१६-७-४३—व्यासपूर्णिमा मनायी गई-धर्मदेव, हरि, वाचस्पति आदि के सन्देश।

१८-७-४३—हमारे बैरिक में बोर्ड पर विशेष सन्देश लिखे रहते हैं। जिससे सब लाभ उठाते हैं। अबकी वार सन्देश है—

धीरज धरिये तो पाइय पारू।
नाहिं त बुड़ि है सब परिवारू॥

२७-७-४३—किंग एम्यानुएल ने मुसलिनी का त्याग किया, बोडोगिलियो प्रधान मन्त्री हुये।

२६-७-४३—बीच में पड़ कर नजरबन्दियों के झगड़े निबटाये। ये झगड़े "कौंसिल ऑफ एक्शन" के चुनाव के कारण होते रहते हैं। इसमें २१ मेम्बर हैं जिनमें प्रत्येक बैरीक की ओर से दो-दो प्रतिनिधि हैं। केवल आगरे वालों का आगरे के झगड़े निबटाने के लिये पृथक् संगठन है। एक वार 'कौन्सिल' पर अविश्वास का प्रस्ताव भी आया था पर तीन दिन में झगड़ा निबटा। वही कौन्सिल रही। दूसरी वार जब स्लोन आये और बसंतलाल झा तनाही में भेजे गये तब बड़ा झगड़ा उठा। २८ व्यक्ति तनाही में तब गये जब I. G. आई० जी० आये और खड़े होने न खड़े होने का झंझट चला। भोजराज को तनाही भेजा गया, बहुत शोर मचा और २८ व्यक्ति तनाही में भेजे गये।

फिर दो मास पश्चात् जब ये वापस आये फिर चुनाव हुआ और नई कौन्सिल चुनी गई। हमारे वहाँ से चलने तक वही कौंसिल कार्य करती रही। इस कौन्सिल के समय में भी झगड़े रहे। लोग उदास हो गये। अस्तु जेलजीवन इतना कष्टदायक नहीं जितना कि झगड़ालू लोगों का साथ। हर समय कोई न कोई बात उठाये रखते हैं। इनके मान-सम्मान के प्रश्न भी विचित्र ही रहते हैं।

३-८-४३—वायसराय का निराशाजनक भाषण। पंजाब के श्री शिवदयाल एम्० ए० का स्वर्गवास।

७-८-४३—६ ता० न मनाने पायें इसलिये बहुत से व्यक्ति पकड़ कर लाये गये। भारतवर्ष भर में धर-पकड़ है।

८-८-४३—तुलसीजयन्ती समारोह। श्रीरामशर्मा, बा० कालिकाप्रसाद, श्री पान्थरी एम्० ए० का व्याख्यान।

१५-८-४३—श्रावणी, उपाकर्म, भाषण।

१६-८-४३—महती वृष्टि, पगली।

२४-८-४३—खूब ज्वर रहा। यहाँ से २० दिन तक प्रायः अस्वस्थसा रहा, बारी का ज्वर रहा। श्री मनमोहन वैद्य द्वारा उपचार।

१-९-४३—फेडरल कोर्ट का निर्णय नजरबन्दियों के लिये अनुकूल नहीं पड़ा। वह "रामाय स्वस्ति रावणाय स्वस्ति" इस प्रकार का है। कलकत्ता हाईकोर्ट का निर्णय बड़े शान का था, हमारे यू० पी० का हाईकोर्ट "जी हुजूर" ही रहा।

५-९-४३—आज समाचार पत्र में महाविद्यालय का वृत्तान्त पढ़ा।

८-९-४३—स्वास्थ्य ठीक हो रहा है, निद्रा भी ठीक आती है।

१०-९-४३—इटली का आत्मसमर्पण।

११-९-४३—रोम पर जर्मनों का अधिकार।

२-१०-४३—श्री रामानन्द चटर्जी का निधन !!!

१०-१०-४३—फ्रान्स के तत्ववेत्ता श्री रोमा रोलाँ का स्वर्गवास।

१९-१०-४३—श्री वेवेल आये।

१९-१०-४३—श्री श्रीनिवासशास्त्री की तीन खुली चिट्ठियाँ।

२७-१०-४३—दीपावली-दयानन्दनिर्वाणमहोत्सव।

२-११-४३—देहरादून में नजरबंद प्रायः छूट गये। मुकर्जी, गोविंदसहाय रहगये। यहाँ भी छूटने का हुक्म आया किन्तु ऑर्डर पर कलेक्टर के कार्यालय की मोहर न होने से वापस भेजा गया।

१०-११-४३—श्री रामस्वरूपादि छूट गये।

१२-११-४३—यहाँ से भी छूटने लगे-दो-दो, तीन-तीन दिन पीछे धर्मदेव, नारायणमुनि, सोमप्रकाशादि गये।

१४-११-४३—श्री चन्द्रमणि, पं० दीपचंद, ॐ प्रकाश गये।

१५-११-४३—श्री दासबाबू गये।

१६-११-४३—सायंकाल पता चला कि कल प्रातः मैं, नारायणदत्त डंगवाल और कृष्णचंद सिंगल छूटेंगे-टिहरीवाले ५ ता० २० को छूटेंगे। पीछे केवल मा. मथुराप्रसाद, रामचन्द्र वेदी, सुन्दरलाल और सूरजकृपाल रहेंगे।

१७-११-४३—रात्रिभर चलने की तैयारी, निद्रा न आयी। प्रातः स्नान ध्यान, जप, मिष्ठान्न-भोजन, मेल-मिलाप १० बजे तक। ११॥ बजे सभा में भाषण-१॥ बजे मुक्ति, ३ बजे राजामण्डी स्टेशन,

वहीं मिलने वालों से मिले बहुत लोग आये थे। ज्वालापुर को तार, ६॥ बजे मेल ट्रेन द्वारा दिल्ली के लिये प्रयाण। ११ बजे दिल्ली पहुँचे। स्टेशन पर ही रहे।

१८-११-४३—प्रातः ८॥ बजे से सायं ४ बजे तक नगर-भ्रमण लक्ष्मीनारायण मंदिर के दर्शन। सायं ६ बजे हरद्वार के लिए प्रयाण।

१९-११-४३—प्रातः ६ बजे हरद्वार स्टेशन पहुँचे। श्री नन्दकिशोरशास्त्री, श्री सत्यव्रतशास्त्री, श्री जयनारायणशास्त्री लेने आये। ७ बजे महाविद्यालय में पदार्पण-आनन्द मंगल, सुख-दुःख-संवाद। महाविद्यालय में हर्षोल्लास।

१९-११-४३ से २२-१२-४३—देवाश्रम ठीक कराया, कुटिया ठीक करायी, पंचपुरी के लोगों से मिले। भारतवर्षभर के मित्रों परिचितों से पत्रव्यवहार।

२९-११-४३—श्री रामेश्वरराव का पत्र (गिरिजा के विवाह का पत्र) कैसे जा सकते हैं। आज ही विवाह है और आज ही पत्र मिला।

३०-११-४३—बाहर से बहुत पत्र आने लगे। देहरादून वालों का तकाजा कि शीघ्र आइये।

४-१२-४३—श्री ठा० मनजीतसिंह का स्वर्गवास।

७-१२-४३—महाविद्यालय में गीताजयन्ती, हमारा भाषण।

८-१२-४३—ब्रह्मचारियों के सम्मुख भाषण-क्या वर्तमान राष्ट्रीयता संसार को शान्तिधाम बना सकती है, आज न देकर विद्यार्थियों के लिये केवल प्रबोधनात्मक व्याख्यान दिया। उपर्युक्त व्याख्यान ता० १६ को होगा।

१०-१२-४३—'हिन्दुस्थान' के लिए "क्यू क्लास" लेख भेजा। 'टाइम्स' में भेजा था, पर न छपा।

११-१२-४३—देवाश्रम में सायं वृहद्धवन, मिष्टवितरण, भाषण।

१३-१२-४३—जयपुर हिन्दीसाहित्य सम्मेलन स्थगित। ईस्टर में होगा। सभापति का निर्वाचन रद्द। घोर असन्तोष। समाचार पत्रों की घोर टिप्पणियाँ।

१५-१२-४३—ब्र० के सम्मुख श्री चन्द्रमणि जी का भाषण।

१६-१२-४३—ब्रह्मचारियों के सम्मुख भाषण, ता० ८ के विषय पर आज प्रातः २ घण्टे व्याख्यान दिया। श्री डॉ० मनोहरलाल जी का ब्रह्मचारियों के लिये विशेष भण्डारा।

१८-१२-४३—नागपुर के डॉ० बालकृष्ण पांडुरंग दलवी से बातचीत वर्तमान स्थिति विषयक।

२९-१२-४३—पुराना कूडा करकट, व्यर्थ का संचित पत्रव्यवहार नष्ट किया गया। श्री खुशालचन्द्र जी, श्री कन्हैयालाल प्रभाकर आदि के पत्र।

२०-१२-४३—मालवीय जयन्ती। श्रवणनाथ मंदिर में भाषण,—मंदि-रनिरीक्षण।

२२-१२-४३—देहरे के लिये प्रस्थान।

२४-१२-४३—श्रद्धानन्द दिवस, भाषण।

२५-१२-४३—चूहड़पुर-पं० राजारामशर्मा के अतिथि।

२६-१२-४३—प्रातः कालसी, शक्ति आश्रम देखा। सायं पश्चिमी वाला, पं० मायाराम के यहाँ।

२७-१२-४३—बुलाकी वाला, रात्रि पश्चिमीवाला।

२८-१२-४३—डॉ० सोमप्रकाश के यहाँ भोजन (चूहड़पुर)। सायं कौलागढ़, पं० नारायणदत्त डंगवाल के यहाँ।

२९-१२-४३—देहरादून, राजपुर, कैरवान कर्णपुर।

३०-१२-४३—कन्यागुरुकुलोत्सव।

३१-१२-४३—कन्यागुरुकुलोत्सव।

१,२,३ जनवरी विशिष्ट पुरुषों से मेल-मिलाप।

३-१-४४ से ६-१-४४—हृषीकेश के लिये प्रयाण। सब से मिले। वैदिक आश्रम में टिके। लक्ष्मण-भूला, मोनी-की-रेती, शिवाश्रम, स्वर्गाश्रम आदि गये।

६-१-४४—सायं ज्वालापुर।

७-१-४४—अंतरंग-सभा।

८-१-४४—ऋषिकुल में लीलाधर स्मृति दिन में भाषण।

१४-१-४४—संक्रान्ति, वृहद्धवन इत्यादि।

१४-१-४४ से ३०-१-४४—जेल की डायरी उतारी, कल्पवृक्ष, आर्यमित्र, प्राचीनभारत, प्रकाश, हिन्दुस्तान, अर्जुन, आदि को लेख भेजे। श्री रणजीत पण्डित का देहावसान २०-१-४४।

२०-१-४४—दर्शनानन्द दिवस, भाषण।

२६-१-४४—महाविद्यालय में कांग्रेस-भण्डा खड़ा किया ब्रह्मचारियों ने।

बसंतपंचमी
२९-१-४४—
३०-१-४४—
३१-१-४४— } आर्यकिशोर सभा के महोत्सव की धूम, भाषण। ज्वालापुर गंगा सेवासंघ में बसंतोत्सव, भाषण।

१३-२-४४--ज्वालापुर में विक्रम-द्विसहस्राब्दी, भाषण।

२४-२-४४--माता कस्तूरबा के देहावसान पर शोक सभा, भाषण।

२५-२-४४--दक्षिण यात्रा-देहरादून से प्रस्थान ३-३-४४ को और ५-४-४४ को वापस।

६-४-४४ से ११-४-४४--महाविद्यालय का ३६वां वार्षिक महोत्सव।

६-५-४४—महात्मा गाँधी मुक्त हुए। देश में सन्तोष और आशा की लहर।

७-५-४४—महात्मा गाँधी जी को स्वास्थ्य लाभ निमित्त तार दिया।

१०-५-४४—महात्मा जी जूहू पहुँचे।

११-४-४४—इस सप्ताह Government of India भारत सरकार के सी० आई० डी० ऑफिसर ने नेपाल काण्ड के लेख के विषय में मुझे दो वार बुलाया।

निम्नलिखित पुस्तकें चल रही हैं अथवा पढ़ डाली हैं।

Swami Ramtirth (चरित्र और व्याख्यानमाला, नोट बुक) I, II, III, IV, V, VI इत्यादि।

२ शान्तिपर्व समाप्त।

३ योगवासिष्ठ (हिन्दी) विशेष विशेष प्रकरण।

४ In the Woods................

५ बृहदारण्यक-छान्दोग्य-श्वेताश्वतर उपनिषद्।

६ Public Speaking (Dale Carnegie).

७ Acres of Diamond.

८ My Finish Dairy.

९ Russia (Bernard Pares).

१० The Oxford War Atlas 1939—1942.

११ Congres Responsibility, Disturbances 42-43 (कांग्रेस का उत्तरदायित्व उपद्रवों के विषय में) सरकारी पुस्तिका।

१२ Friend of Friend इस पुस्तक के अनुभव मनोरंजक हैं पर उपसंहार उद्वेगजनक।

१३ Fasting (Sir Douglas Young in the Northern India Observer.)

१४ They speak for India (एडगर स्नो, पर्ल बक, लिन यू टांग, लाईफ-संपादक वेंडेल विल्की, एडवर्ड थामसन्)

१५ ईशादि छान्दोग्य तक।

१६ सरस्वती, माधुरी, विशालभारत माडर्न रिव्यू के उस उस मास के अंक।

१७ राजतरंगिणी।

१८ अमरकोष।

१९ चरक-सुश्रुत, माधवनिदान विशिष्टप्रकरण।

२० Soviet Union News (अगस्त अंक)

२१ यजुर्वेद—(मूल)

२२ Asiatic Digest

२३ La Miserable (Victor Hugo)

२४ The Chairman's Hand-book (Sir Reginald, F.D. Palgrave.)

२५ Which Way will the Seals Tip.

२६ मनुस्मृति।

२७ महाभारतमीमांसा।

२८ Reader's Digest

२९ Irish Digest

३० The War Speaches (Churchill)

३१ Gandhi & Gandhism (Pattabhi)

३२ Shakespeare (शेक्सपियर के कतिपय नाटक)

३३ जेल से आने के पश्चात् जनवरी ३१ तक योगवाशिष्ठ संस्कृत।

देहरादून के नारायण मुनि के पास अंगरेजी का फुटकर साहित्य बहुत था, उनके पास सामयिक छोटे मोटे अखबार (मासिक) भी बहुत आते थे। उन सबका हमने उपयोग किया।

जेल में लिखने के साधनों का सर्वथा अभाव था तथापि हमारे पास जो दो चार कापियाँ थीं उसी पर हमने अपना जेल का रोजनामचा अत्यन्त संक्षिप्त रूप में लिखा, कहीं कहीं केवल विशेष संकेतों से काम लिया, बहुत से संकेतों को अब हम स्वयं नहीं पढ़ सकते कि क्या मतलब है, क्योंकि जेलवालों से बचने के लिये हमने वे संकेत किये हैं। दुःख है हम अपने संकेतों को स्वयं भूल गये। सब नहीं,

दस बीस, डायरी की सब बातें अविकल रूप में लिखने से "जेल का रोजनामचा" बहुत बढ़ जाता, इसलिये संक्षेप से लिखा है। पिष्टपेषण नहीं होने दिया है। स्वाध्याय के समय जिन जिन ग्रन्थों के वाक्यों और उद्धरणों को उपयोगी समझा उनको डायरी में उद्धृत कर लिया गया था, उनको उपर्युक्त विवरण में छोड़ दिया है। उनका संग्रह "कृष्णमन्दिर के पुष्पगुच्छ" शीर्षक के नीचे पृथक् है।

जब हम आगरा सेण्ट्रल जेल से मुक्त हुए थे तब निम्नलिखित हिंदी पद्य याद आये। इनको हमने 'सरस्वती' के किसी अंक में पढ़ा था। आज एक बड़ी जेल से छूटे हैं पर उससे भी बड़ी जेल भारतवर्ष में-(जो कि एक १८०० मील लम्बी और १४०० मील चौड़ी खुली जेल बन रही है) आये हैं—जबतक भारतवर्ष पूर्ण स्वतन्त्र नहीं हो जाता खुली जेल है ही–इसी खुली जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट हैं वर्तमान शासक वर्ग, इसका बड़ा फाटक है "इण्डियागेट" जो कि बम्बई में समुद्र के किनारे बना हुआ है, जहाँ जहाज से उतरे हुए मुसाफिर बंबई में प्रवेश करते हैं।

उड़ जा पंछी, उड़ जा आज !

एक पिंजरे से तू निकला,
किन्तु दूसरे में है बन्द।
यहाँ पवन के झोंके कैसे,
कैसा सुख स्वच्छन्द ॥ उड़ जा० ॥

उड़ जा पंछी आज गगन में,
तोड़ बन्धनों की कारा।
जीना है तो जीवित रह तू,
कहता है अधिकार हमारा ॥ उड़ जा० ॥

इस बंधन में क्या है पंछी,
जी-जीकर मरते जाना।
बंधन तोड़ राह ले अपनी,
नभ में गा अपना गाना ॥ उड़ जा० ॥

ॐ तत्सत्

❀ कृष्णामन्दिर के पुष्पगुच्छ ❀

[ये उन उन ग्रन्थों के पुष्पों के गुच्छे हैं]

[१]

चाहिएँ

सुधारक चाहिएँ सुधारक,
किसके सुधारक ? दूसरों के ?
दूसरों के नहीं, अपने सुधारक,
जिन्होंने कि जीता हो,
विश्वविद्यालय की उपाधियों को नहीं,
अपि तु अपने आप को।

—(स्वामी रामतीर्थ)

❀ ❀ ❀

भारतवर्ष

भारतवर्ष वह है जिसने अन्य देशों से भागकर आये हुओं को–पारसियों–यहूदियों और मुसलमानों को अपना द्वार खोला और आश्रय दिया पर आज जो अपने ही बच्चों को अन्न देने में असमर्थ है–और वह है जिसके कि पारसी, यहूदी, मुसलमान सभी आश्रय मिलने के कारण कृतज्ञ थे पर अब वे सभी उसका केवल तिरस्कार ही नहीं कर रहे हैं प्रत्युत उसका बहिष्कार करने पर उतरे हैं—

—(स्वामी रामतीर्थ)

❀ ❀ ❀

संदेह से गोली अच्छी

हृदय में संदेह रखने की अपेक्षा यह अच्छा है कि उसमें बंदूक की गोली पड़ी रहे।

—(स्वामी रामतीथ)

संशयात्मा विनश्यति ।

—(गीता)

जिसके हृदय में संदेह–संशय रहेगा, वह मरा-सा ही है।

भैया, सिर जितना चाहे ऊँचा ले जाओ पर यह ध्यान रहे कि पैर सदा जमीन पर ही टिके रहें, क्योंकि (आगे पैर उठे तो पीछे धड़ाम करके गिरोगे और पीछे से पैर उखड़े कि आगे मुँह के बल जा पड़ोगे)—तुम्हारे पैर कभी किसी के कंधों और गर्दन पर नहीं पड़ने चाहिएँ चाहे वह कितना ही दुर्बल व्यक्ति क्यों न हो—

—(स्वामी रामतीर्थ)

❀ ❀ ❀

काल क्या करता है ?

न कालो दण्डमुद्यम्य,
शिरः कृन्तति कस्यचित् ।
कालस्य बलमेतावद्,
यद्विपरीतार्थदर्शनम् ॥

—(महाभारत शान्तिपर्व)

काल दण्ड उठाकर किसी का सिर नहीं फोड़ता। काल का बल इतना ही है कि वह विपरीत अर्थ को दिखा देता है। जो जिस स्थिति में रहता है उससे विपरीत दशा दिखला देता है।

❀ ❀ ❀

दोनों नहीं जानते

धर्मं करोमीति करोत्यधर्मम्,
अधर्मकामश्च करोति धर्मम्।
उभे बालः कर्मणी न प्रजानन्,
संजायते म्रियते चापि देही॥

समझता है कि मैं धर्म कर रहा हूँ पर करता रहता है अधर्म। धर्म करता है पर वह भी अधर्म के लिए—ऐसा पुरुष धर्म-अधर्म दोनों के तत्व को नहीं जानता और जन्म-मरण के चक्र में फँसा रहता है।

❀ ❀ ❀

दोनों को ही भुगतना चाहिए

नैव नित्यं जयस्तात,
न नित्यं पराजयः।
तस्माज्जयश्च भोक्तव्यः,
भोक्तव्यश्च पराजयः॥

—(शान्तिपर्व)

न नित्य किसी की जय होती है और न नित्य पराजय इसलिए जय को भी भुगतना चाहिए और पराजय को भी।

❀ ❀ ❀

धीरे धीरे बल दिखलाते हैं

न हि वैरं महात्मानो,
विवृण्वन्त्यपकारिषु ।
शनैः शनैर्महाराज,
दर्शयन्ति स्म ते बलम् ॥
—(शान्तिपर्व)

महाराज, बड़े गंभीर लोग, महात्मा लोग, अपने साथ बुराई करने वाले पर सहसा नहीं बिगड़ते किन्तु धीरे धीरे अपना बल दिखलाते हैं।

❀ ❀ ❀

असन्तोष में ही यह होता है

In pain are new constitutions born, and without the fever of unrest there is no Constitutional development.

—(Friend of Friend)

असन्तोष के, कष्टों के, बेचैनी के, दिनों में ही कान्स्टिट्यूशनों का जन्म होता है—सुधार आते हैं, बेचैनी के ज्वर के बिना, कोई सुधार नहीं, कोई कान्स्टिट्यूशन नहीं।

"असन्तोषः श्रियो मूलम्"

असन्तोष ही श्री का मूल है।

वने ग्राम्यसुखाचारः, यथा ग्राम्यस्तथैव सः ।
ग्रामे वनसुखाचारः, यथा वनचरस्तथा ॥
(शान्तिपर्व)

वन में रहता हुआ भी जो ग्राम-सुखों का उपभोग करता है वह भी गँवार ही है, और जो ग्राम में रहता हुआ भी वन जैसा सुख एकान्त चाहे वह भी वनचर ही है।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

मनसः प्रतिकूलानि,
प्रेत्य चेह नचेच्छसि ।
भूतानां प्रतिकूलेभ्यः,
निवर्तस्व नराधिप ॥
(शान्तिपर्व)

यदि तू यह चाहता है कि यहाँ और दूसरे जन्म में तेरे प्रतिकूल कोई बात न हो तो तुझे चाहिए कि तू भी कोई ऐसा कार्य न कर जो अन्य प्राणियों के प्रतिकूल हो।

× × × ×

महाह्रदः संक्षुभितः,
आत्मनैव प्रसीदति ।
एवं नरः स्वात्मनैव,
कृतप्रज्ञः प्रसीदति ॥

(शान्तिपर्व)

जैसे क्षुब्ध हुआ-हुआ बड़ा तालाब स्वयं ही शान्त हो जाता है इसी प्रकार कृतप्रज्ञ पुरुष आत्मा से स्वयं ही प्रसन्न रहता है। कितना ही बड़ा विकार उसकी आत्मा में क्यों न उत्पन्न हो, शान्त कर लेता है।

कृष्ण-मन्दिर के पुष्पगुच्छ

[२]

तुम भाई हो

For Ye are brothers, wherefore look,
Not at the things wherein we differ,
But unto those where ye are,
The same, for the end is the same.

(Friend of Friend)

भाई तुम हो भाई, भाई हो इसलिये इस बात का ध्यान रखने की अपेक्षा कि तुम्हारा मतभेद किन किन बातों में है, तुम इस बात को अधिक देखा करो कि तुम दोनों का मेल किन बातों में है। क्योंकि दोनों का उद्देश्य एक ही है।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

हमारा विश्वास उड़ गया

We are not trusted.

अब भारतवर्ष हमारा विश्वास नहीं कर रहा है।

(Garbet-एक पुराना अनुभवी सिविलियन)

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

उसी की विद्या सफल

यस्य देवे परा भक्तिः
यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः,
प्रकाशन्ते महात्मनः ॥

(श्वेताश्वतर-उपनिषद्)

जिसकी परमात्मा में दृढ़भक्ति होती है और जो गुरु में भी वैसी दृढ़ भक्ति रखता है, ऐसे ही को बतलाई हुई, कही हुई विद्या सफल होती है।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

बिना उपदेश दिये, किसी से कुछ मत लो

पिता मेऽमन्यत, नाननुशिष्य हरेतेति

(याज्ञवल्क्य)

हे जनक, मेरे पिता का कथन था कि बिना उपदेश दिये, बिना चार अक्षर कहे किसी से कुछ नहीं लेना चाहिए।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

भोजन के समय

"प्राणाय स्वाहा"—कह कर प्रथम ग्रास,
"व्यानाय स्वाहा"—कह कर द्वितीय ग्रास,
"अपानाय स्वाहा"—कह कर तृतीय ग्रास,
"समानाय स्वाहा"—कह कर चतुर्थ ग्रास,
लेना चाहिये।

(बृहदारण्यक-उपनिषद्)

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

तुम्हारा भला हो

मा वो भयं भवतु
न वोऽस्तु पापम्।

(शान्तिपर्व)

न तुम्हें कोई भय हो और न कोई पाप लगे—

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

सत्य क्या है ?

सत्यस्य वचनं श्रेयः,
सत्यादपि हितं वदेत् ।
यद्भूतहितमत्यन्त—
मेतत्सत्यं मतं मम ॥
(शान्तिपर्व)

सत्य बोलना कल्याण के लिये है, पर कोरा सत्य बोलने से हित की बात कहने में अधिक कल्याण है। मेरा तो मत यह है कि जिसमें भूतों का, प्राणियों का अत्यन्त हित होता हो वही सत्य है—

(सनत्कुमार)

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

मेरा तो कोई शत्रु नहीं है

द्वेष्टारं न च पश्यामि
यो मामद्य विरुद्धयति ।
(प्रह्लाद)

मैं तो अपने किसी द्वेषी को नहीं देख रहा हूँ जो मेरा विरोध करे—

× × × ×

मन ही पहिले बतला देता है

मन एव मनुष्यस्य,
पूर्वरूपाणि शंसति ।
भविष्यतश्च भद्रं ते,
तथैव न भविष्यतः ॥
(शान्तिपर्व)

कार्य सिद्ध होगा या नहीं, इस बात को तो मन ही पहिले बतला देता है ।

× × × ×

मेरी यह पक्की धारणा है

एवं मे निश्चिता बुद्धिः
शास्तुस्तिष्ठाम्यहं वशे ।
(बलि इन्द्र के प्रति)

मेरी यह पक्की धारणा है, राय है कि मैं तो उस शास्ता भगवान् के ही बस में हूँ । वह जैसा रखता है रहता हूँ ।

× × × ×

सब शरीरधारियों में यही दोष है

कामक्रोधौ भयं निद्रा, पंचमः श्वास उच्यते ।
एते दोषाः शरीरेषु, दृश्यन्ते सर्वदेहिनाम् ॥
छिन्दन्ति क्षमया क्रोधं, कामं संकल्पवर्जनात् ।
सत्वसंवेदनान्निद्रामप्रमादाद् भयं तथा ॥
छिन्दन्ति पंचमं श्वासमल्पाहारतया नृप ॥

(शान्तिपर्व)

काम, क्रोध, भय, निद्रा और श्वास ये पाँच दोष सब के साथ लगे रहते हैं । इनके दूर करने का उपाय यह है कि क्षमा से क्रोध को, संकल्पत्याग से काम को, सत्वगुण के आश्रय से निद्रा को, सावधानता से भय को और मिताहार से श्वास को दूर करे ।

× × × ×

पाप कैसे दूर हों

विकर्मणा तप्यमानः
पापात्पापः प्रमुच्यते ।
नैतत्कुर्यां पुनरिति
द्वितीयात्परिमुच्यते ॥
चरिष्ये धर्ममेवेति
तृतीयात्परिमुच्यते ।
बहूँस्तीर्थान्यनुचरन्
बहुत्वात्परिमुच्यते ।
पापं कृत्वा हि मन्येत
नाहमस्मीति पूरुषः ॥

(शान्तिपर्व)

उल्टा काम करके यदि पछतावे तो वह पुरुष पहिले पाप से छूट जाता है। अब कभी भी नहीं करूँगा, ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा करे तो दूसरे पाप से भी छूट जायगा। बस अब आगे धर्म ही धर्म करूँगा इस भावना से चले तो तीसरी बार किये हुए पाप से भी छुटकारा मिलेगा। यदि बहुत पाप हों तो उस पुरुष को तीर्थों में घूम-घूम कर, सत्पुरुषों का संग करना पड़ेगा तब छुटकारा मिले तो मिले। असली बात यह है कि पुरुष को चाहिये कि वह पाप करके यही समझे कि मैं नष्ट हो गया। इसी भय से वह पाप से बचे तो अच्छा—

× × × ×

इन बातों को देरी में करो
जितनी देर करो उतना अच्छा
शायद देरी में बात टल ही जाय

चिरेण मित्रं बध्नीयात्
चिरेण च कृतं त्यजेत्।
चिरेण हि कृतं मित्रं
चिरं धारणमर्हति॥
रागे दर्पे च माने च
द्रोहे पापे च कर्मणि।
अप्रिये चैव कर्त्तव्ये
चिरकारी प्रशस्यते॥

(शान्तिपर्व)

मित्र को मारना हो तो, किसी कार्य को छोड़ना हो तो, सोच विचार कर बड़ी देर में बनाये हुए मित्र को छोड़ना हो तो, इन सब कार्यों में जितनी देर करे उतना अच्छा।

किसी से प्रेम करना हो, मन में अभिमान आवे, द्रोहबुद्धि उठे, मान आजाय, किसी की बुराई आ जाय तो जो जितना टालेगा उतना अच्छा—

× × × ×

धीरे धीरे हटे

शनैः शनैरुपरमेद्
बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा
न किञ्चिदपि चिन्तयेत्—(गीता)

संसार से या किसी वस्तु से हटना हो तो निश्चयपूर्वक थोड़ा थोड़ा हटता जाय, जिधर से हटता जाय उधर फिर न जावे, इस प्रकार हटते हटते भीतर मनको आत्मा में स्थिर करे, फिर बाहरी वस्तुओं को न सोचे—जो धीरे धीरे धैर्यपूर्वक हटता है—वही सच्चा सुख पाता है ।

× × + ×

कृष्ण-मन्दिर के पुष्पगुच्छ

[३]

आज करे सो अब

अद्यैव कुरु यच्छ्रेयो, मा त्वा कालोऽत्यगादयम् ।
अकृतेष्वपि कार्येषु, मृत्युर्वै संप्रकर्षति ॥
श्वः कार्यमद्य कुर्वीत, पूर्वाह्णे चापराह्णिकम् ।
न हि प्रतीक्षते मृत्युः, कृतमस्य कृतं नवा ॥
को हि जानाति कस्याद्य मृत्युकालो भविष्यति ॥ (शान्तिपर्व)

कोई शुभ कार्य करना हो तो आज ही कर डालो, देखो कहीं समय निकल न जाय। काम भी न हुआ तो भी मृत्यु तो खेंच ही लेगा। कल करना हो तो आज करो। दोपहर के बाद करने की बात हो तो पहले ही पहर में कर डालो। मृत्यु यह नहीं देखता कि इसका काम हुआ कि नहीं, वह तो सिर पर चढ़ जाता है। कौन जानता है कि आज ही मृत्यु न ले जायेगी।

× × × ×

नरम भी रहो गरम भी

मृदुमप्यवमन्यन्ते, तीक्ष्णादुद्विजते जनः ।
मा तीक्ष्णो मा मृदु र्भूस्त्वं, तीक्ष्णो भव, मृदुर्भव ॥
(शान्तिपर्व)

नरम रहोगे तो लोग तिरस्कार करेंगे, गरम रहोगे तो लोग डरेंगे इसलिये न केवल नरम बनो न केवल गरम, नरम गरम दोनों बने रहो।

× × ×

संस्कृत अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है।

To-day when people said that all that was necessary was a knowledge of Hindi or Marathi they forget the source from which these languages had sprung—Sanskrit. The glory of Sanskrit was that though it embodied Hindi literature in it was not purely a Hindu language. It was the lauguage of Budhists and Jain literature. It was related to Greek and Latin. It was an inter-national language.

(Mr. Richardson on Sanskrit)

मिस्टर रिचर्डसन शिक्षामंत्री इन्दौर कहते हैं कि—जब लोग यह कहते हैं कि हिन्दी पढ़ो, मरहटी पढ़ो, बस हो गया तब वे उस भाषा को भूल जाते हैं जिसमें से कि हिन्दी मरहटी भाषाएँ निकली हैं—मतलब संस्कृत भाषा से है।

संस्कृत भाषा की यह एक बड़ी विशेषता है कि उसमें हिन्दुओं का साहित्य है पर वह केवल हिन्दुओं की ही भाषा नहीं है। वह बौद्ध और जैन साहित्य की भी भाषा रही है। उसका सम्बन्ध ग्रीक और लेटिन भाषा से भी है—संस्कृत तो अन्तर्राष्ट्रीय भापा है—

❀ ❀ ❀

आओ भगवान् के दरबार में

Despite fears and doubts in the minds of many, let us put this problem (re-India) before God in prayer that He who guides the nations and peoples may not have his will for India thwarted either one way or the other by the wilfulness man.

(In the issue of Churchman)

राईट रेवरेण्ड सी० डी० होसल कोलम्बो के बिशप कहते हैं,—अनेकों के मन में भय और शंका है तो भी आओ इस भारतवर्ष के प्रश्न को उस भगवान् के सामने प्रार्थना के रूप में रक्खें जिसके हाथों में देश, जनता और राष्ट्रों की बागडोर है और वस्तुतः इनका मार्गदर्शक है। मनुष्य और मनुष्यों की मक्कारी से उसके संकेतों में कभी उलट-पुलट नहीं हो सकेगा—

गीता क्या है ?

अर्जुन के केवल तीन वाक्य

(आदि) न योत्स्ये (२–६) मैं नहीं लड़ूंगा।
(मध्य) मोहोऽयं विगतो मम (११–१) मेरा मोह नष्ट हो गया।
(अवसान) करिष्ये वचनं तव (१८–७३) हे जनार्दन जो तू कहे वह करने को तैयार हूँ।

× × × ×

गायत्री से पाप दूर

तस्या अग्निरेव मुखं यदिह वा अपि
बह्विवाग्नावभ्यादधति सर्वमेव तत्संदहति,
एवॐ हैवैवंविद्यपि बह्विव पापं कुरुते
सर्वमेव तत्संप्साय पूतोऽजरोऽमृतो भवति–

(बृहदारण्यक उपनिषद् में बुडिल जनक के प्रति)

जैसे अग्नि में डाले हुए सब पदार्थों को अग्नि भस्म कर डालता है इसी प्रकार जो गायत्रीविद् हैं उनके पाप जाप से नष्ट हो जाते हैं—वे जाप के प्रभाव से शुद्ध और पूत (पवित्र) हो जाते हैं—

× × × ×

मूर्खों से छेड़-छाड़ न करें

आक्रोशन-विभानाभ्यां
नाबुधान् बोधयेद् बुधः ।
तस्मान्न वर्द्धयेदन्यं
न चात्मानं विहिंसयेत् ॥

(शान्तिपर्व)

बुद्धिमान् को चाहिये कि वृथा कोसकर अथवा अपमान करके मूर्ख पुरुष को न जगावे । इससे तो उसका जोर बढ़ता और अपना घटता है ।

× × × ×

क्षमा ही कर देवे

पापीयसः क्षमेतैव, श्रेयसः सदृशस्य च ।
विमानितो हतः क्रुष्ट एवं सिद्धिं गमिष्यसि ॥

(शान्तिपर्व)

पापी को तो क्षमा ही करे चाहे वह अपमान करे, कोसे, इसी प्रकार से तुझे सिद्धि होगी । इस प्रकार की क्षमा से तेरा पाप उसके पास पहुंचेगा और उसका पुण्य तुझे मिलेगा—

× × × ×

तू अकेला ही नहीं है

एकोहमस्मीत्यात्मानं
यत्त्वं कल्याण मन्यसे ।
नित्यं स्थितस्ते हृद्येष
पुण्यपापेक्षिता मुनिः ॥ (मनुः)

प्यारे, यह जो तू समझे बैठा है कि मैं अकेला ही हूँ, मेरे ऊपर अथवा मुझे देखने-भालने वाला और कोई नहीं, सो यह तेरी भूल है । तेरे ही भीतर तेरे पुण्य-पापों का, तेरी भलाई-बुराई का, देखने वाला मुनि (भगवान्) सदैव रहता है—

× × × ×

तभी मनुष्य अमर हो जाता है

यदा सर्वे प्रभिद्यन्ते, हृदयस्येह ग्रन्थयः।
अथ मर्त्यो अमृतो भवति, एतावदनुशासनम् ॥

जब हृदय की सब गाँठें खुल जाती हैं तभी यह मर्त्य मरणधर्मी मनुष्य अमर हो जाता है। बस यही तत्व है।

× × × ×

कारावास में निम्नलिखित नोट पढ़ा है

महाभारत रूसी भाषा में

Mahabharata in Russian

Translation of First Volume Completed

(MOSCOW)

Soviet Sanskrit experts have announced that the translation of the first volume of the Mahabharata, the great Hindu epic, is completed. Other volumes are being translated, and it has been planned to publish a complete edition in the next few years.

Professor Balianov, an outstanding Soviet Sanskrit scholar, told the Press that he had trained a number of young scholars to aid him in this undertaking. The Mahabharata has always been popular with Russian intellectuals, he said. 'It's popularity has grown now that the United Nations are waging a struggle in defence of civilisation. This great Hindu epic, which is imbued with the spirit of love for the native land and the whole mankind, is topical today.'

Printing of the first volume will start very shortly.

रूस के संस्कृतज्ञ पंडितों ने ऐलान किया है कि महाभारत के प्रथम भाग का रूसी भाषा में अनुवाद हो गया—महाभारत जो कि हिन्दुओं का धार्मिक महाकाव्य ग्रन्थ है। अब दूसरे भागों का अनुवाद

हाथ में लिया है। प्रोफेसर बैलोनाव (जोकि संस्कृत के अच्छे विद्वान् हैं) ने कहा कि इस कार्य के लिये उन्होंने अनेक नवयुवक विद्वान् तैयार किये हैं। रूस के विज्ञपुरुषों में महाभारत के लिये सदैव आदर रहा है। और अब जब कि कई राष्ट्र मिलकर सभ्यता और संस्कृति की रक्षा के लिये महायुद्ध में उतरे हैं तब तो महाभारत का गौरव और भी बढ़ गया है क्योंकि महाभारत स्वदेशप्रेम और मानव-जाति के प्रेम का पाठ पढ़ाता है—

प्रथम भाग का अनुवाद शीघ्र छपेगा—

कृष्ण-मन्दिर के पुष्पगुच्छ

[४]

अब वही जाने

तुका म्हणे जीव, देवाजीच्या हाती।
दिली त्याची, गति, तोची जाणे॥

(संत तुकाराम)

तुकाराम कहता है अब तो हमने आत्मा को भगवान् के सुपुर्द कर दिया है। अब उसकी (आत्मा की) जो गति होगी वही जाने—अब अपना अधिकार नहीं।

× × × ×

अब हमको अनुभव होने लगा है

We are beginning to realise that that conflict terrible and enormous as it was, ended nothing, began nothing and settled nothing. It killed millions of people. It wasted and impoverished the world. It was atleast an acute and frigheful reminder that we were living foolishly in a dangerous and unsympathetic universe.

(H.G. Wells)

अब हम अनुभव करने लगे हैं कि वह महायुद्ध (१६१४–१६१८) कितना भयंकर और विस्तृत था। उसका प्रारम्भ व्यर्थ रहा, उसका अन्त भी व्यर्थ रहा, उससे कोई अच्छा परिणाम नहीं निकला, कोई निश्चय ही न हो सका। उसने करोड़ों की हत्या की, संसार को भूखा और गरीब बनाया और वह इस बात को भयंकर रूप में याद दिलाने वाला हुआ कि हम संसार में मूर्खतापूर्वक रहते हैं और ऐसे जगत में रहते हैं जो कि भयंकर तो है ही, पर परस्पर सहानुभूति-शून्य भी है—

(एच० जी० वेल्स)

× × × ×

दिन को सफल करो

अवन्ध्यं दिवसं कुर्याद्,
दानाध्ययनकर्मभिः ।

(मनु)

दिन को सफल करो, कैसे ? दान, अध्ययन अथवा और किन्हीं शुभ कर्मों द्वारा। तीनों कर सको तो क्या कहना, कम से कम तीनों में से एक तो करो, तभी दिन सफल होगा।

× × × ×

एक भविष्यवाणी

India will be Dominion and probably linked in some way to China, which will be centre of the World Organisation in the far East. It may be that by 1990 there would be Dominion of West Africa. The old conception of whiteman's burden and the whiteman's superiority are dead. The coloured people are awake and on the move and the Japanese Victories in the far East will have an even more profound effect on the relationship between Europeans and Asiatics and Africans than the Japanese Victory over Russia in 1905.

(Commander Stephen King Hall M.P.)

भारतवर्ष को औपनिवेशिक स्वराज्य मिलेगा और वह चीन के साथ सम्बद्ध होगा जो कि पूर्व में एक केन्द्र रहेगा। पश्चिमी अफरीका वालों को १६६० तक औपनिवेशिक स्वराज्य मिलेगा। वह पुराने विचार कि गोरे ही सब कुछ हैं और इन्हीं पर संसार की रक्षा का सब भार है, जाते रहे हैं। जापानियों के विजय ने और ही गजब ढाया है, उसका भी प्रभाव पड़ रहा है और काले लोग सजग हो उठे हैं। जापानियों की १६०५ में रूस पर जो विजय हुई उसके भी प्रभाव से अधिक प्रभाव वर्तमान विजयों से पड़ रहा है और इससे एशिया और अफरीका निवासियों और युरोपियनों के परस्पर सम्बन्धों में बहुत फरक पड़ेगा—

सोलहवीं सदी से

From the sixteenth century onward the history of the mankind is a story of Political and social institutions becoming more and more misfits, less comfortable, and more vexatious, and of the slow reluctent realisation of the need for a conscious and deliberate reconstructions of the whole

scheme of human societies in the face of needs and possibilities new to all the former experiences of life.

(H.G. Wells)

सोलहवीं सदी से आगे का इतिहास एक मनुष्य समाज की राजनैतिक और सामाजिक जीवन की और संस्थाओं की एक ऐसी कहानी है कि जो आगे चलकर अधिक अयोग्य, कम सुखकारक, और अधिक त्रासदायक सिद्ध हुई और उसने यह उद्वेगपूर्वक जतला दिया कि इस अवस्था और व्यवस्था में समयानुरूप, पूर्व अनुभवों को सम्मुख रखते हुये, बुद्धि और बलपूर्वक आमूल, आचूल परिवर्तन करने की और नई व्यवस्था करने की बड़ी भारी आवश्यकता है—

(एच्० जी० वेल्स)

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

मैंने वेदमाता को सुना है

श्रुता मया वरदा वेदमाता,
प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम् ।

(अथर्ववेद)

मैंने वेदमाता (गायत्री) को सुना है अर्थात् उसका मनन किया है। वह वेदमाता कैसी है ? वर देने वाली है, मन की कामना को पूरा करने वाली है और द्विजों को शुद्ध और पूत करने वाली है—

× × × ×

क्या तुम ग्रन्थकार या रचयिता बनना चाहते हो ?

तीन बातों का ध्यान रक्खो

If you want to be an author, if you want to write a book reflect that it must be useful and new. We think that the author of a good work should refrain from three things—from putting his name save very modestly, from the epistle dedicatory and from preface. Others should refraim from a forth—that is writing.

(Voltaire)

यदि तुम ग्रन्थकार बनना चाहते हो, यदि कोई पुस्तक लिखना चाहते हो तो यह बात ध्यान में रक्खो कि पुस्तक उपयोगी हो और नई हो तो ही लिखो नहीं तो नहीं। हमारी राय है कि अच्छे ग्रन्थ के लेखक को तीन बातों को नहीं करना चाहिये—

१—अपना नाम लम्बा चौड़ा नहीं लिखना चाहिये, केवल नम्रतापूर्वक नाम लिखे।

२—पुस्तक किसी को समर्पित न करे।

३—कोई भूमिका न लिखे।

जो ग्रन्थकार या लेखक नहीं हैं उनको चौथी बात यह करनी चाहिए। वह यह कि उनको कतई लिखना ही नहीं चाहिये।

(वाल्टेर)

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

सत्यसंकल्प

सत्य संकलपाचा दाता।
भगवान् ॥

(समर्थ रामदास)

सत्य संकल्प के देने वाले और उसको पूरा करने वाले वही भगवान् है।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

उसके लिये क्या कठिन ?

शरीरनिरपेक्षस्य, दक्षस्य व्यवसायिनः।
न्यायेनारब्धकार्यस्य, नास्ति किंचन दुष्करम् ॥

(नीति-पद्धति)

जो शरीर की परवाह नहीं करता, जो दक्ष, व्यवसायी है, कार्यों को न्यायपूर्वक प्रारम्भ करता है भला उसके लिए संसार में कौनसा कार्य कठिन है?

कृष्णमन्दिर के पुष्पगुच्छ

[नं० ५]

कारावास के दिन

Other men condemned to exisle and captivity, if they servive despair. The man of letters may reckon these days as sweetest of his life.

(बेंजामिन देसराईल)

जिनको देशनिकाला हुआ हो या जिनको जन्मभर की कैद का दण्ड मिला हो ऐसे बेपढ़े व्यक्ति यदि निराश हो बैठें तो कोई आश्चर्य नहीं पर शिक्षित पुरुष के लिए ये दिन तो जीवन के सब से मधुर दिन हैं– क्योंकि ऐसे लोगों ने कारावास में बैठ कर संसार को अमूल्य ग्रन्थों के रूप में बड़ी भारी देन दी है—

❀ ❀ ❀

ऐसे पुरुष से सावधान रहो

A politician wants to have a say on every subject and he always pretends to know much more than he actually does. He has to be watched carefully.

(Jawaharlal)

पोलिटिकल व्यक्ति प्रत्येक विषय में अपनी राय देना चाहेगा चाहे उन-उन विषयों में उसकी कुछ भी प्रगति न हो। और वह ऐसा दम भरेगा कि मानों उस को उस विषय का पूरा पूरा ज्ञान है-ऐसे व्यक्ति से सावधान रहना चाहिए।

(जवाहरलाल)

× × ×

विद्वान् पुरुष कम बोलेगा

विजानन् विद्वान् भवते नातिवादी (मुण्डक उपनिषद्)

विद्वान् पुरुष कम बोलेगा।

वह व्यर्थ इधर-उधर की गप्पें नहीं हाँकेगा—

× × ×

मैं तो ईश्वर की आज्ञा मानूंगा

Men of Athens, I honor and love you, but I shall obey God rather than you, and while I have life and strength I shall never escape from the practice and teaching philosophy.

(Soerates in 399 B. c.)

हे अथेन्स के निवासियो! मैं आपका सम्मान करता हूँ। आप से प्रेम करता हूँ पर आपकी आज्ञा को मानने की अपेक्षा मैं ईश्वर की ही आज्ञा मानूंगा। और जब तक मुझ में प्राण हैं, जब तक बल है तब तक सत्य और तत्वज्ञान का स्वयं अभ्यास करने और अन्यों को सिखाने से नहीं चूकूँगा।

(सुकरात २४०० वर्ष पूर्व)

❀ ❀ ❀

क्यों कह रहे हो

Why tell me that the man is a fine speaker, if it is not the truth he is speaking.

(रामतीर्थ)

यदि वह जो कुछ बोल रहा है, वह सत्य नहीं है तो फिर मेरे पास आकर यह क्यों कह रहे हो कि वह बहुत अच्छा बोलने वाला है, सुंदर वक्ता है—

❀ ❀ ❀

शरीर में भले ही त्रुटि हो, आत्मा में नहीं।

❀ ❀ ❀

जल प्रवाह भले ही टेढा हो, जल थोड़े ही टेढा होता है।

❀ ❀ ❀

गन्ना भले ही टेढा हो, पर भीतर का रस टेढा होता है क्या?

❀ ❀ ❀

मनुष्य के खाने-पीने का उसके नैतिक जीवन पर बड़ा प्रभाव रहता है या पड़ता है!

❀ ❀ ❀

प्रत्येक शहद की मक्खी का कर्तव्य होता है कि वह रस को एकत्रित करे, पर उस (रसपर) उस का कुछ भी अधिकार नहीं।

❀ ❀ ❀

छाया के पीछे दौड़ने से छाया को न पकड़ पाओगे, छाया से भागो और छाया अपने आप पीछे चली आयगी।

× × ×

किसी के पास कम, किसी के पास अधिक या बहुत अधिक हो तो बँटवारे का यही सुन्दर उपाय है कि जिनके पास अधिक या अत्यधिक है उनसे हैसियत के अनुसार लो और जिनके पास नहीं है उन को आवश्यकता के अनुसार दो—

(रामतीर्थ)

× × ×

भारतवर्ष की कहानी

India, ancient and immemorial has a long memory, She forgives slowly. She never forgets.

(Story of India F. R. Moraes)

भारतवर्ष (जो कि संसार में अतिप्राचीन और स्मरणीय भूभाग है) की बड़ी लम्बी स्मृतिशक्ति है। वह धीरे धीरे क्षमा करना जानता है पर कभी भूलना नहीं जानता—

× × ×

यह सब कुछ तेरी कृपा

जेथें जातो तेथें, तू माझा संगाती।
चालविसी हातीं, धरूनिया ॥
चालो वाटे आम्हीं, तुझाची आधार।
चालविसी भार, सवे माझा ॥
बोलो जातां बरल, करिसी तें नीट।
नेली लाज धीट, केलो देवा ॥
अवघे जन मज, झाले लोकपाल।
सोइरे सकल, प्राणसखे ॥
तुका म्हणें आता, खेलतो कौतुकें।
झाले तुझे सुख, अंतर्बाह्य ॥

(तुकाराम

मैं जहाँ भी जाता हूँ तू बराबर साथ रहता है। और हाथ पकड़कर ले जाता है, ले चलता है। हम समझते हैं कि हम ही चल रहे हैं पर असली आधार आप ही हैं। मैं क्या कहूँ, आप मेरा बोझ भी उठाते हैं, ले भी चलते हैं। मैं कुछ ही बे-सोचे समझे कह बैठता हूँ, तेरी कृपा से वह भी ठीक हो जाता है। मेरी झिझक दूर हो जाती है, मैं ढीट बन जाता हूँ। आपकी कृपा से सब लोग मेरे रक्षक और मेरे संबन्धी हो गये हैं। अब मेरी बड़ी मौज रहती है क्योंकि भीतर बाहर सभी जगह तेरा ही सुख मिल रहा है—

❀ ❀ ❀

किसी पर नाराज होने, बिगड़ने, की अपेक्षा अपने ऊपर ही नाराज होना, बिगड़ना, अपने को ही भला बुरा कहकर, अपने को ही दबा डालना अच्छा है—इसी में आत्म-कल्याण है—

❀ ❀ ❀

कृष्ण-मन्दिर के पुष्पगुच्छ

[६]

सर्वनाश की आग

हराभरा रह सका यहाँ पर।
नहीं किसी का बाग ॥
यहाँ सदा जलती रहती है।
सर्वनाश की आग ॥

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

कई व्यक्ति ऐसे होते हैं कि जो हँसी में उन बातों को कह डालते हैं जो कलह में कहनी चाहिएँ। अर्थात् उनको समय का ज्ञान नहीं होता। ऐसे मूर्ख होते हैं—हँसी में जिनका यह हाल, कलह में क्या करते होंगे।

(नीतिपद्धति)

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

नीच

दुष्ट चंद्रमा के कलङ्क को तो देखते हैं पर अपनी आँख के व्रण को नहीं देखते।

× × × ×

नीच पुरुष दूसरे के दोष कहने में दशवदन (दशमुख वाला रावण), दूसरे के दोष देखने में सहस्राक्ष (हजारों आँखो वाला) इन्द्र और दूसरों की वृत्ति हरने और उसका काम बिगाड़ने में सहस्र बाहुओं वाला सहस्रार्जुन।

× × × ×

नीच लोग दूसरे के यशरूपी अग्नि से जले-भुने हुए होते हैं इसलिए दूसरे की निंदा करते रहते हैं कि उस पद को प्राप्त करने में वे स्वयं असमर्थ रहते हैं। करें क्या बेचारे।

❀ ❀ ❀ ❀

भला यह सफेद है, नीला है, हरा है इसका निर्णय करने का अधिकार अन्धे को कभी मिल सकता है। कभी नहीं—

× × × ×

दुर्जन का इलाज यही है कि उसकी बातों पर ध्यान ही न देवे।

क्या यह गन्ने का दोष है ?

परार्थे यः पीड़ामनुभवति, भङ्गेऽपि मधुरो।
यदीयः सर्वेषां खलु विकारोऽप्यभिमतः॥
न संप्राप्तो वृद्धिं यदि स भृशमक्षेत्रपतितः।
किमिक्षोर्दोषोऽसौ, न पुनरगुणाया मरुभुवः॥

(सुभाषितावली)

जो गन्ना कि दूसरों को सुख पहुँचाने के निमित्त कष्ट उठाता है (लोग इसको दाँतों से छीलते हैं, रस निकालने के लिये दाँतों से दबाते हैं) और जो छीलने, तोड़ने, दबाने पर भी मीठा रहता है

और जिसका विकार (रस) सबको प्रिय रहता है वह यदि अपने अयोग्य मरूभूमि में बोया हुआ, बढ़ता नहीं तो, यह किसका दोष है। भूमिका, बोनेवाले का कि गन्ने का ?

× × ×

कवियों का अनुचित कार्य

कविभिर्नृपसेवासु वित्तालंकारहारिणी।
वाणी वेश्येव लोभेन, परोपकरणीकृता॥

कवियों ने भी हद कर दी। वेश्या जिस प्रकार धन, आभूषण के लोभ से स्वशरीर को बेच देती है, इसी प्रकार कवियों ने लोभ से राजसेवा में वाणी का हाल कर रक्खा है।

× + × ×

सौ में से एक जानता है

उपकर्तुमप्रकाशं क्षन्तुं न्यूनेष्वयाचितं दातुं
अभिसन्धातुं गुणैः, शतेषु केचिद्विजानन्ति॥

(सुभाषितावली)

चुपचाप उपकार करना, कमजोरों पर क्षमा करना, बिना मांगे देना, गुणों के कारण मेल करना इत्यादि बातों को सौ में से कोई जानता है।

× × × ×

बड़ों की बड़ी बात

अयमुन्नतिसत्वशालिनाम्,
महतां कापि कठोरचित्तता।
उपकृत्य भवन्ति दूरतः,
परतः प्रत्युपकारशङ्कया॥

बड़ों की यही बड़ी बात कि दूसरों पर उपकार करके दूर भाग जाते हैं, इसलिये कि कहीं वह पुरुष फिर प्रत्युपकार न कर बैठे। कैसी कठोरचित्तता है।

फिर भी सोना सोना ही है

छेदताडननिघर्षतापनैः,
नान्यभावमुपयाति काञ्चनम्।

क्या काटने, पीटने, रगड़ने या तपाने से सोना कोई और वस्तु बन जाता है ? नहीं, सोना सोना ही रहता है।

× × × ×

आशा का सन्देश

(विश्वकवि रवीन्द्र)

(गीतांजलि से)

Where the mind is without fear and the head is held high,

Where knewledge is free,

Where the world has not been broken up into fragmrnts by narrow domestic walls,

Where words come out from the depth of truth;

Where tireless striving strelches its arms towards perfection;

Where the clear stream of reason has not lost its way into the dreary desert sand of dead habit,

Where the mind is led forward by thee into ever winding thought and action;

Into that heaven and freedom, my father, let my country wake.

हे पिता उस स्वर्ग में, उस स्वतन्त्रता के वातावरण में मेरा देश जागे—

जहाँ मन निर्भय हो, सिर ऊँचा हो,

जहाँ ज्ञान बिना मूल्य मिले,

जहाँ घर की संकुचित दीवारों के कारण घर के टुकड़े २ न हुए हों,

जहाँ जो भी शब्द निकलें सत्य के स्रोत से निकलें,

जहाँ अनथक परिश्रम पूर्णता की ओर ले जाता हो,

जहाँ तर्क के शुद्ध स्रोत बहते बहते पकी आदतों के रेतीले बीहड़ जंगल में जाकर गुम न होते हों,

जहाँ मन उन्नति करता हुआ सच्चे ज्ञान और क्रिया में संलग्न हो,

हे पिता, तू मुझे वहाँ पहुँचा—

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

हे ब्रह्मन्, तुम कम बोला करो

विवक्षत इव ते मुखं,
ब्रह्मन् मा त्वं वदो बहु। (यजुर्वेद)

हे ब्राह्मण, तेरी आकृति को देख कर ऐसा जान पड़ता है कि तू कुछ बोलना चाहता है, देख, कम बोला कर क्योंकि इसी में तेरा कल्याण है। कम बोलने से तेरी शक्ति इधर उधर न बिखरेगी।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

पाठकों के पढ़ने के प्रकार

तीन पाठक

कोई जितना पुस्तक में लिखा है उतना ही पढते हैं। कोई पुस्तक में जितना लिखा रहता है उतना भी पढ़ते नहीं। कोई पुस्तक में जितना लिखा रहता है उससे भी अधिक पढ़ते हैं, इस प्रकार तीन प्रकार के पाठक हैं।

× × × ×

ये सब नष्ट होते हैं

केचिदज्ञानतो नष्टाः, केचिन्नष्टाः प्रमादतः।
केचिज्ज्ञानावलेपेन, केचिन्नष्टैस्तु नाशिताः॥ (महाभारत)

कोई अज्ञान से नष्ट होते हैं, कोई प्रमाद से, कोई ज्ञान के घमण्ड से, कोई जो बचे उनको वे नष्ट कर देते हैं जो कि स्वयं नष्ट हुए रहते हैं।

× × × ×

ये भी

अनायका विनश्यन्ति,
नश्यन्ति बहुनायकाः।
स्त्रीनायका विनश्यन्ति।
नश्यन्ति बालनायका॥

जिनका कोई नायक नहीं वे नष्ट हो जाते हैं, जिनके अनेक अथवा बहुनायक होते हैं, वे भी नष्ट हो जाते हैं। स्त्रीनायक वाले भी और बालनायक वाले भी नष्ट हो जाते हैं—

बहवो यत्र नेतारः सर्वेपण्डितमानिनः।
सर्वे महत्व मिच्छन्ति, तद्वृन्दमवसीदति॥

जहाँ बहुत से नेता हों और हों सभी पण्डितमानी और सभी बड़प्पन चाहते हों वह समुदाय नष्ट हो जाता है।

जेल-जीवन

(विश्वमित्र कलकत्ता दीपावली अंक—१९४५)

जेल-परिवार का अनुभव १९२१-२३ में १९३० में, १९३२ में और १९४० में, चार वार हुआ और संयोग देखिये कि प्रत्येक वार देहरादून जेल से ही एक नम्बर बैरिक की प्रथम सीट से—यों पहली वार मुरादाबाद, बरेली, लखनऊ, रायबरेली। द्वितीय वार फैजाबाद, और चौथी वार फिर सेण्ट्रल जेल बरेली का भी पानी पीना पड़ा। चारों वार के अनुभव भिन्न-भिन्न ही रहे।

देहरादून जेल में सन् १९३२ में मैंने आम का पौदा लगाया था। आठ वर्ष पश्चात् इस वार देखा, तो अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि वृक्ष फल देने लगा। विशेष प्रसन्नता इसलिये भी हुई कि इस वर्ष जब मैं सेण्ट्रल जेल बरेली में था, मेरे पीछे आये हुए सत्याग्रही भाइयों ने देहरा जेल में उन फलों का आस्वाद लिया और सबसे अधिक प्रसन्नता की बात यह है कि उसका एक सुमधुर फल श्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू को हमारे सत्याग्रही मित्र हरिजीवन जी ने यह कह कर भेंट किया कि यह शास्त्री जी के आम का फल है। मैं इस वार जब तक देहरादून जेल में रहा, तब तक दोनों समय का सन्ध्या-वन्दन इसी वृक्ष के नीचे करता रहा। फैजाबाद जेल में भी मैंने इसी प्रकार एक सुन्दर आम्रवृक्ष की सेवा की थी। इस वार सेण्ट्रल जेल बरेली में भी अपने परिश्रम से लालित-पालित आम्रवृक्ष छोड़ आया हूँ। वहाँ एक छाया-फल-समन्वित आड़ू का पेड़ है। उसी के नीचे दिनभर रहने में मुझे बड़ा आनन्द मिलता था।

१९२१ के समय की जेलों में और आज की जेलों में बहुत अन्तर है। उस समय या तो "ए" के तुल्य श्रेणी ऊपर वालों के लिए थी या थी "सी" श्रेणी (मामूली कैदियों की), जिसमें प्रति कैदी का प्रतिदिन का खर्च सात पैसे पड़ता था। ऊपर की श्रेणी वालों के नाम के साथ "फर्स्ट क्लास मिस-डिमीनण्ट" लिखा रहता था। इनको पहले-पहले प्रतिदिन १॥) रुपया मिलता रहा, फिर ॥।) रह गये थे। साधारण "नैतिक अपराधी" कैदी और राजनीतिक कैदी में कोई अन्तर नहीं था। अब भी नहीं है, पर सरकार को विवश होकर राजनीतिक कैदियों को नैतिक अपराध करने वाले कैदियों से पृथक

रखना पड़ रहा है। १९२१ में तसला-कटोरी लोहे के ही रहते थे। लोहे के बर्तन में ही दाल-शाक पकाया जाता था। कैदी के गले में एक लोहे की हँसली रहती थी जिसमें एक तख्ती लटकी रहती थी, जिस पर कैदी की सजा का विवरण रहता था। पैर में एक लोहे का कड़ा पड़ा रहता था। अब तो लोहे के तसले-कटोरी का स्थान पीतल के तसले-कटोरी ने ले लिया है। पकाने के बर्तन भी पीतल के हैं। गले की हँसली गयी, पैर का कड़ा गया, कपड़े तो प्रायः इस समय भी पहले जैसे ही हैं। हाँ एक चादर बढ़ गई है। काम करने तथा लेने का ढर्रा वही पुराना है। उस समय कहीं-कहीं जेलों में कैदी के यज्ञोपवीत तोड़ डाले जाते थे। दाढ़ी कटवा दी जाती थी। जहाँ अधिक कैदी रहते थे, पैरों से आटा गूंदा जाता था—ये सब बातें अब नहीं रहीं। अब तो डिस्ट्रिक्ट जेलों में प्रातः-सायं प्रार्थना होती है। अच्छे २ भजन गाये जाते हैं। कांग्रेस की कृपा से जेलों में साक्षरता का भी प्रवेश हो गया है। कैदियों के साथ कुछ मनुष्यता का बर्ताव होता है। पर इस जेल-परिवार को देख कर मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि इस प्रकार वर्षों बन्द रखने मात्र से संसार से चोरी, जारी, व्यभिचार, ठगी, खून-खराबी आदि मिट नहीं सकतीं। इसके मिटाने के लिये अन्य भी उपाय काम में लाने पड़ेंगे। अब तो चोर, डाकू ठग जेल में जाकर पक्के चोर, डाकू, ठग बन कर बाहर आते हैं। फिर जाते हैं, फिर बाहर आते हैं। जेल ही इनका घर बना हुआ है। केवल संयुक्त प्रान्त में ही लगभग ५२ जेलें तथा ६ बड़ी सेण्ट्रल जेलें हैं, जिनमें तीस सहस्र नैतिक अपराधियों को रखने का प्रबन्ध है। समस्त भारतवर्ष के नैतिक अपराधियों के परिवार का अनुमान आप स्वयं लगाइये। सेण्ट्रल जेल बरेली में, जहाँ मैं रहता था, डेढ़ सौ वर्ष के दण्ड वाले ६ या ७ कैदी हैं। २५ वर्ष से लेकर ८० वर्ष तक के दण्ड वाले कैदी लगभग ८००-१००० होंगे।

स्वर्गीय जितेन्द्रनाथ के प्राणत्याग के कारण बन्दियों की "ए"—"बी"—"सी" श्रेणियों की सृष्टि हुई। राजनीतिक कैदी भी मजिस्ट्रेट अथवा प्रान्तीय सरकार की इच्छानुसार श्रेणियों में बाँट दिये जाते हैं। अधिक संख्या "सी" श्रेणी में ही रहती है। १९२१ में जो भोजन मिलता था, प्रायः उसी प्रकार का, किन्तु शतांश में सुधरा हुआ भोजन "सी" क्लास वालों को मिलता है। काम वही नैतिक अपराधियों जैसा अर्थात् चक्की, कोल्हू, बान, रामबाँस आदि। 'बी' क्लास वालों को भोजन अच्छा मिलता है और काम भी हलका। "ए" क्लास वालों को काम कुछ नहीं करना पड़ता। "ए-बी" वालों को पुस्तकें भी मिलती हैं, लिखने पढ़ने का सामान भी मिलता है। पत्र, मुलाकात का भी सुभीता रहता है। पर "सी" क्लास वालों को बड़ी कठिनाइयाँ हैं। यह राजनैतिक अपराधी अथवा सत्याग्रही भाइयों का परिवार उस नैतिक अपराधी परिवार से सर्वथा विभिन्न है। इनके मण्डल में सदैव देश-हित की बातों की ही चर्चा रहती है। देश-कार्य करने के कारण, रुष्ट अथवा असन्तुष्ट सरकार स्वयं पकड़ कर इनको जेलों में भर देती है अथवा वे स्वेच्छा से ही कारावास का आनन्द अथवा दुःख उठाने आते हैं। अबकी, थोड़ी संख्या को छोड़कर, लगभग समस्त भारतवर्ष के तीस सहस्र सत्याग्रही स्वेच्छा से ही कारावास में आये। तीस सहस्र सत्याग्रही जो बाहर युद्ध-विरोधी नारे लगाते रहे, इनको पकड़ा ही नहीं गया। महात्मा गांधी के पास सत्तर हजार सत्यग्रह के आवेदन-पत्र पड़े हुए हैं,

जिनके लिए महात्मा जी ने स्वीकृति दी ही नहीं। अब तो, सरकार अवशिष्ट सत्याग्रहियों को छोड़ रही है और अब देखना चाहिए कि आन्दोलन को क्या नवीन रूप मिलता है।

राजनैतिक अपराधी परिवार में प्रान्तीय तथा केन्द्रीय असेम्बली के प्रायः सभी कांग्रेसी मेम्बर, आठ प्रान्तों का कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल, ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के मेम्बर, प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों, जिला और मण्डल कांग्रेस कमेटियों के समस्त अधिकारी तथा स्वेच्छा से आये हुए अन्य सहस्रों सत्याग्रही सम्मिलित हैं—इनमें सभी प्रकार के लोग हैं, किसान, जमींदार अध्यापक, प्रोफेसर, वकील, व्यापारी, डॉक्टर, दूकानदार, सम्पादक, लेखक, ग्रन्थकार, संवाददाता, इस प्रकार अनेक धंधों के लोग हैं।

"ए"—क्लासवाले व्यक्ति बहुत थोड़े हैं, और वे भी गवर्नमेण्ट की नीति के अनुसार यत्र-तत्र जेलों में दो-दो, तीन-तीन, चार-चार रखे जाते हैं और ऐसे पृथक् रखे जाते हैं कि वे 'बी' अथवा 'सी' श्रेणी वालों के सम्पर्क में नहीं आने पाते। खाने-पीने और अन्य अनेक सुविधाओं के कारण यह क्लास भले ही उत्तम हो, पर अन्य दृष्टि से यह क्लास अच्छी नहीं। एक तरफ ही जो पड़े रहते हैं।

"बी"—क्लास, इस विषय में अच्छा रहता है, सौ-सौ, डेढ़ डेढ़ सौ, दो-दो सौ केन्द्रित करके रखे जाते हैं। ये परस्पर सम्पर्क में भी आते हैं और परस्पर विचार-विनिमय का भी अच्छा अवसर मिलता है। यदि 'बी' क्लासवाले परस्पर सङ्गठन और सुमति रखें और शान्ति से जेल काटें तो इस क्लास के कैदी अपनी शारीरिक, मानसिक, आत्मिक उन्नति कर बहुत लाभ उठा सकते हैं। परन्तु अनेक कारणों से समय और पुरुषार्थ प्रायः नष्ट होता रहता है। बी क्लास में प्रायः प्रत्येक जिले के विशिष्ट कार्यकर्ता तथा नेता रहते हैं, तो आप ही सोचिये कि जहाँ सभी नेता हों और अनुयायी कोई नहीं, वहां क्या दशा रहनी चाहिए। बहुत से लाभ भी उठाते हैं। सभी विचारों के लोग होते हैं। नियमित रूप से कातनेवाले, पुस्तकों के कीड़े, आमोद-प्रमोद और सङ्गीत-प्रिय, सब थे। कवि-सम्मेलन की भी भरमार रहती थी, प्रायः कवितायें थर्ड क्लास रहती थीं; किन्तु उनमें भी लोग मनोविनोद मान ही लेते थे। वाद-विवाद की सभायें भी चलती थीं। प्रबन्ध-सम्बन्धी सभाओं की बैठकें भी होती थीं और उनमें जेलवालों से भिड़न्त करने के लिये उपाय सोचे जाते थे। शान्ति-प्रिय सत्याग्रही बीच-बिचाव करके झगड़ों को मिटाने का प्रयत्न करते थे। शान्ति-प्रिय सत्याग्रही दुर्बल मनोवृत्ति के लोग समझे जाते थे। जेलवालों से अड़नेवाले "वीर" कहलाये जाते थे।

प्रायः सभी अनुभव करते रहते थे कि जेल-नियन्त्रण में रहकर सौम्य-भाव से रहने में अधिक लाभ है। पर कोई चाहे या न चाहे, जब झगड़ा चल पड़ता था, सबको साथ देना ही पड़ता था। बात-बातपर मानापमानका प्रश्न खड़ा हो जाता था। ये सब त्रुटियां थीं, तो भी सत्याग्रहियों में उज्जवल देश-भक्ति और कष्ट सहने की उत्कट भावना थी और वें समय पड़ने पर प्राण तक देने के लिए तैयार रहते थे। युवकों का प्राधान्य था। बीस-बीस वर्ष के बी० ए०, एम० ए० नवयुवक क्या थे, आग के पुतले थे। इनमें रॉयिस्ट, कम्यूनिस्ट, सोशियालिस्ट, साइण्टिफिक सोशियालिस्ट, आदि भी थे। इनका शरीर गांधीजी के अधीन था, तो इनका मन रूस तथा अन्य देशों के समाजवादियों के साथ।

गांधीवादियों के साथ इनकी सदैव तनातनी रहती थी। कभी-कभी वाद-विवाद में बहुत कटुता आ जाती थी। ऐसे अवसरों पर कट्टर गांधीवादी लोग बीच में पड़कर शान्ति-स्थापना कर देते थे। ऐसा था वह एक परिवार, जो देश की उज्ज्वल भक्ति से प्रेरित होकर स्वेच्छा से ही कष्ट भोगने के लिये कारागार में एकत्र हुआ था।

जेलाधिकारी कैदी की इच्छा के अनुकूल कभी नहीं चलते। वे तो उसकी इच्छा का विघात करने के लिये ही तुले रहते हैं। 'ए-बी' श्रेणीवालों को पद-पद पर इस प्रकार के इच्छाविघात देखने पड़ते हैं। सी क्लासवालों के लिये तो विघात के साथ भिन्न २ प्रकार के दण्डों का विधान भी है, इसका अनुभव कोई भुक्तभोगी ही कर सकता है। मैं यह नहीं कहूँगा कि 'ए'-'बी' वाले शूरवीर नहीं होते। किन्तु यह अवश्य कहूँगा कि जो सत्याग्रही अथवा राजनीतिक अपराधी "सी" क्लास में रहकर असह्य कष्टों को वीरतापूवक सहते हैं, वे अधिक वीर हैं। रूखा-सूखा भोजन, कड़ा काम और जेलवालों की क्षण-क्षण में हर प्रकार से—उचित-अनुचित रूप में—दबाते रहने की कुटेव इत्यादि के कारण "सी" क्लासवालों को बड़ी मुसीबत का सामना करना पड़ता है। जिन 'ए' अथवा 'बी' वालों ने कभी 'सी' का अनुभव नहीं किया, वे 'सी' के कष्टों को जान ही नहीं सकते। सैकड़ों ऐसे महानुभाव हैं, जो कई-कई बार जेल में गये; पर जब भी गये, सीधे 'ए' अथवा 'बी' में ही पहुँचे, वे 'सी' के क्लेशों को कैसे जान सकते हैं।

यह सर्वथा अयोग्य है कि राजनीतिक कैदियों में "सी" श्रेणीवालों से नैतिक अपराधियों की भांति चक्की पिसवायी जाय, ३६० गज बान बटवाया जाय, रामबाँस कुटवाया जाय या कोल्हू चलवाया जाय। उनको नैतिक अपराधियों की भांति डण्डा-बेड़ी का दण्ड दिया जाय अथवा एकान्तवास का। क्या देशभक्ति भी कोई ऐसा अपराध है, जो कि चोरी, व्यभिचार, ठगी की भांति घोर अपराध समझा जाता है।

यह प्रश्न कई बार उठ चुका है कि पोलिटिकल कैदियों की एक पृथक् श्रेणी रहे और उनके रहन-सहन आदि का प्रबन्ध राजकीय कैदियों की भांति हो, पर सरकार इस बात की ओर ध्यान ही नहीं देती। पोलिटिकल कैदी की भी कोई श्रेणी है यह बात नहीं मानती, किन्तु अमलन (बर्ताव में) विवश होकर भेद करना पड़ रहा है। राजनीतिक अपराधियों को नैतिक अपराधियों (इखलाकी) के साथ रखना और उनके साथ वैसा बर्ताव करना न्यायतः अक्षम्य अपराध है। अस्तु, सरकार जो चाहे करे, किन्तु अभी तो सत्याग्रहियों को इस प्रकार के कष्ट सहने ही पड़ेंगे।

मनुष्य की परीक्षा इसी बात से होती है कि वह अपने अभीष्ट उद्देश्य की सिद्धि के लिये कितने कष्ट उठाता है। महात्मा गांधीका मार्ग—सत्य, अहिंसा-तप-सत्याग्रहका मार्ग, कष्टसहन द्वारा व्यक्ति, जाति तथा देश के पापों के प्रायश्चित्तका मार्ग है। जितना ही बड़ा काम, उतना ही बड़ा प्रायश्चित्त, इसलिए सरकार क्या करती है, कैसा बर्ताव करती है, इस ओर ध्यान न देना चाहिये और यह स्मरण रखना चाहिए—

रत्नैर्महार्घैस्तुतुषुर्न देवाः।
न भेजिरे भीमविषेण भीतिम्॥
सुधां विना न प्रययुर्विरामम्।
न निश्चितार्थाद्विरमन्ति धीराः॥

देवताओं ने जब समुद्र-मन्थन किया, तब उनको प्रसन्न करने के लिए समुद्र ने अमूल्य रत्न दिये। पर देवता इससे कब प्रसन्न होने लगे थे। वे मन्थन करते ही गये। फिर समुद्र ने डराने के लिए महाविष हलाहल उगला। देवता उससे भी विचलित न हुए और "अमृत"-प्राप्ति तक मन्थन करते ही रहे।

यही दशा पूर्ण स्वराज्य के इच्छुकों की होनी चाहिए, तब कहीं पूर्ण स्वराज्य के दर्शन होंगे।

जेल में सत्याग्रही परिवार में देश के जीवन, दृढ़ता की प्रतिमूर्ति युवकों को देखकर आशा और विश्वास होता है कि वह दिन प्रतिदिन समीप, अधिक समीप आता जाता है, जब हम अपने लक्ष्य तक पहुँच सकेंगे।

कारातीर्थ से वेदतीर्थ जी का सन्देश

(आगरा जेल से)

(आर्यमित्र १९४२)

[प्रस्तुत लेख के लेखक सम्प्रति जेल में हैं, उन्होंने वहीं से इस लेख को भेजा है; लेख में आपने इस बात को सिद्ध किया है कि पाश्चात्य समाजवाद आध्यात्मिकवाद से शून्य विज्ञानवाद के आश्रित होने के कारण जनता के लिये घातक है। अध्यात्मवाद ही हमारी उन्नति का कारण है। —सम्पादक]

पाश्चात्य समाजवाद अस्वाभाविक समाजवाद हैं। उनके वर्गवाद, साम्यवाद, समाजवाद, राष्ट्रीय समाजवाद, वैज्ञानिक समाजवाद, फैसिस्टवाद सबके सब आध्यात्मिकवाद से शून्य होने के कारण अस्वाभाविक हैं। इसीलिए वे ऋत अर्थात् परमार्थिक सत्य (Ethics of right and good action) स्वभावानुरूप स्वाधिकार तथा स्वकर्म के तत्व को नहीं जानते। इसीलिए पाश्चात्य देशों में स्वजीवन-निर्वाह के लिये इतनी घोर अशान्ति रहती है। पाश्चात्यों के वाद धर्मशून्य विज्ञानवाद के आश्रयीभूत होने के कारण संसार को क्लेश पहुँचा रहे हैं। भारतीय समाजवाद अध्यात्मसूत्र से ओत-प्रोत था इसलिए इतनी दासता, इतनी पराधीनता इतने परचक्र, इतनी अनर्थ-परम्परा के होते हुए भी आज तक श्वास-प्रश्वास लेने में समर्थ हो रहा है। अब भी इसी अध्यात्मवाद से प्रभावित स्वसंस्कृति

के कारण संसार को यथार्थ मार्ग बतलाने की शक्ति रखता है। इसका धर्म, इसकी संस्कृति, इसका अध्यात्मवाद अब भी इसको "संसार का गुरु" कहला रहा है—

श्री डा० भगवानदास जी ने Science of Self नामक अपनी पुस्तक में क्या ही अच्छा कहा है,-

It is the ancient socialism, which some are convinced, is truly scientific because based on Science of Psyccology the most important of all the sciences as is being widely recognised in the West also, now, while modern socialism or communism, which calls itself scientific, fails to be so, because it ignores and even goes positively against some fundamental facts and laws of human nature and therefore will fail to realise its objective and fail exactly in the degree in and to the extent, which it violates those facts and laws.

All this world of objects which is named by the word "this" is made of and by the ideation. Hence none who knows not the Science of Self can carry action to the fruitful issues. He who knows the inner purpose of the laws of process and its orders,ideated by the self-existent, he alone can rightly ascertain and enjoin the right and duties of the different classes of human beings of their social (Varnas) occupations and vocations and of their Ashrams=stages in life."

इसका अर्थ यह है कि अनेकों का विश्वास है कि प्राचीन समाजवाद ही सच्चे अर्थों में वैज्ञानिक समाजवाद है क्योंकि वह अध्यात्मवाद पर निर्भर है। अध्यात्मवाद सब विज्ञानों में श्रेष्ठ विज्ञान है। पाश्चात्य देशों के विद्वान् भी अब इस बात को मानने लग गये हैं। पाश्चात्य देशों के वर्तमान समाजवाद मौलिक प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध हैं, मनुष्य-स्वभाव से विरुद्ध हैं, इसीलिए असफल हो रहे हैं।

यह भौतिक जगत् जिसको हम इदम् (यह) इस नाम से पुकारते हैं या कहते हैं किसी विशिष्ट कल्पना अथवा व्यवस्था पर निर्भर है। इसीलिए जो लोग इसके भीतर ओत-प्रोत अध्यात्मसूत्र को नहीं जानते वे कभी सफल नहीं हो सकते। वे भिन्न भिन्न वर्णों अथवा आश्रमों के यथार्थ कर्तव्यों को भी नहीं जान सकते। भगवान् मनु ने ठीक ही कहा है कि:—

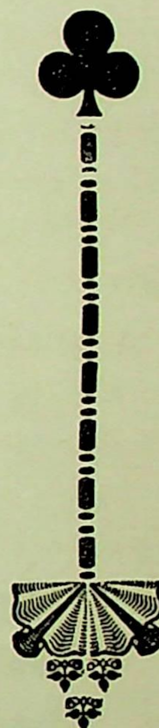
"न ह्यनध्यात्मवित् कश्चित् क्रियाफलमपश्नुते"

जो अध्यात्म तत्व नहीं जानता उसकी क्रियाएँ कभी भी सफल नहीं हो सकतीं। यद्यपि आर्यधर्म का, आर्यसंस्कृति का पोषक, धारक, आर्यराज्य अथवा आर्यसाम्राज्य एक सहस्र वर्ष से नहीं रहा तथापि

अध्यात्मवाद के आधार पर स्थित वर्णाश्रम धर्म के जो भग्नावशेष अब भी दिखलायी दे रहे हैं उनसे भारत की स्वाभाविक समाजवाद की महत्ता संसार भर को विदित हो गई है। इस मानव धर्म को न समझने के कारण ही सब देशों के राष्ट्रों के समाज विस्खलित हो रहे हैं। उनकी आसुरी-वृत्ति बढ़







श्री नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ।

रही है। हमारे प्राचीन-तम पूर्वज अपनी परम्परा द्वारा जिस ऋत नामक सत्य का प्रचार तथा प्रसार करते थे उसी का बलपूर्वक प्रचार करना आर्यसमाज का परम कर्तव्य है। स्वामी दयानन्द का अवतार ही इसी ऋत के उद्धार के लिये था। इसी ऋत के प्रचार में उन्होंने अपने प्राण अर्पण किये।



॥ ॐ तत्सत् ॥

आत्म-कथा

तृतीय भाग

प्रकीर्णांक--१

(भिन्न भिन्न विषय)



कैसा ज़माना आ गया है ?

कोई नहीं सुनता

ऊर्ध्व बाहुर्विरौम्येष,
न च कश्चिच्छ्रुणोति मे ।
धर्मादर्थश्च, कामश्च,
स किमर्थं न सेव्यते ॥

मैं हाथ उठा-उठा कर, चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा हूँ कि "हे संसारी लोगो! तुम्हारी सब शुभ कामनाएँ धर्म से ही पूर्ण होंगी, तुम्हें समस्त ऐश्वर्य तथा साधन-सामग्री धर्म से ही मिलेगी, फिर तुम धर्म को छोड़ कर इधर-उधर क्यों भटकते फिरते हो"—पर मैं देख रहा हूँ कि कोई मेरी बात सुन नहीं रहा है, कैसा विपरीत समय आ गया है—

[सौति—५५०० वर्ष पूर्व]

[आज भी यही स्थिति है]

॥ ओ३म् तत्सत् ॥

महाराज शाहू छत्रपति

(कोल्हापुर–महाराष्ट्र)

बुलावे का पत्र

(१९१७)

जब हम भोमपुर (देहरादून) में एकान्तवास करते थे तब कोल्हापुर स्टेट के दीवान श्री सबनीस का पत्र आया कि महाराज छत्रपति शाहू आपसे मिलना चाहते हैं। मैंने उसी समय लिख भेजा कि कृपया लिखिये कि क्या काम है। इस पत्र के उत्तर में स्वयं छत्रपति ने तार दिया कि I wish to see Aryasamaj in my state. मैं अपने राज्य में आर्यसमाज को देखना चाहता हूँ।

मैं लोकमान्य तिलक के कट्टर शिष्यों में था और उधर लोकमान्य और छत्रपति शाहू में नहीं बनती थी। इसका कारण 'केसरी' के लेख ही थे और कुछ नहीं।

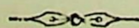
मैंने सोचा कि मैं गया भी तो एक दिन वहाँ से निकलना ही पड़ेगा। लोकमान्य की निन्दा मैं सुन नहीं सकूँगा। किसी दिन अवश्य ही खटपट हो जायगी। इन सब बातों को सोच कर मैंने छत्रपति के पास तार भेजा कि मैं होमरूलर हूँ, होमरूल लीग का मेम्बर हूँ। मेरा अभिप्राय यह था कि मैं लोकमान्य तिलक की होमरूल लीग का मेम्बर हूँ, राज्य में कैसे रह सकूँगा। छत्रपति ने तुरन्त तार भेजा कि I am also a Home-Ruler जिसका अर्थ यह है कि मैं भी तो होमरूलर हूँ। छत्रपति का व्यङ्ग अर्थ यह था कि मैं भी तो होम अर्थात् कोल्हापुर स्टेट का रूलर राजा हूँ—यहीं तार-व्यवहार रुक गया।

फिर अपने युवराज राजपुत्र के विवाह के अवसर पर बड़ौदे आने के लिये मुझे निमन्त्रण भेजा और बहुत आग्रह किया। स्व० राज्यरत्न मास्टर आत्माराम जी इन्स्पेक्टर (बड़ौदा) को मेरे आतिथ्यादि के प्रबन्ध के लिये लिखा। पर मैं गया ही नहीं।

शाहू छत्रपति मुझे बहुत चाहते थे। और सन्देह नहीं कि मैं चला जाता तो सरस्वती और लक्ष्मी देवी दोनों मुझसे प्रसन्न रहने लगतीं। मेरे कोल्हापुर न जाने से मेरे इष्ट-मित्र बन्धु-बान्धवों को बहुत दुःख हुआ, मैं करता क्या, वैराग्य का रंग जम रहा था—

"त्वं राजा वयमप्युपासितगुरु-प्रज्ञाभिमानोन्नताः"

यह भर्तृहरि का वचन जोर मार रहा था—जिसका अर्थ यह है कि राजन्, तुम राजा हो तो क्या है, हमने भी तो गुरुजनों की उपासना की है—हमें भी तो अपनी विद्या का अभिमान है, इसी लिये निःस्पृह हैं इत्यादि।



तुलजाभवानी का मन्दिर

[१]

हमारे पूज्य पिता जी जिस तुलजाभवानी मन्दिर के मोहतमीम अर्थात् व्यवस्थापक थे उसके विषय में सन् १९३८ सितम्बर के "हिन्दुस्थान टाईम्स" के एक अंक में निम्नलिखित लेख छपा था जो कि पढ़ने योग्य है।

BHAWANI-GODDESS OF TULJAPUR

ONE of the most prominent places of pilgrimage to the Mahrattas is Tuljapur which is situated on the western border of the Hyderabad territory. It stands on the verge of what is known as the Balaghat, one of the terraces by which the tableland of the Deccan descends towards the west. Specially during the Dusserah festival Tuljapur attracts a good number of pilgrims from all parts of India. Some of the pilgrims, in fulfilment of their vows, cover a long distance by rolling themselves to the feet of the Goddess Bhawani. Bhawani's shrine in Tuljapur, which possesses a wonderful collection of valuable jewels which were presented by the great Shivaji himself, is reputed to be one of the richest in India.

Tuljapur is famous as being the reputed scene of tne Goddess Bhawani slaying with a single sroke of her irresistible sword the buffalo *Asura* or demon *Mahisha* who assumed the shape of a ferocious wild buffalo, and, as Tulja is one of the many names of the Goddess, the partner of God Shiva, the town is named after her. The charming temple is built over a small image of finely-polished black basalt, said to have been discoverd in the dell by some Brahmins, and which was recognised as having been graciously left there by Tulja herself in memory of her great victory on the

spot. The interior of the temple is low, about six feet to the lintels. There are sixteen pillars in the principal hall and a large number of shorter ones on its low thick screen walls on the north and south sides, where the entrances are: on the west is the shrine of Tulja and the east that of her lord, God Shiva. The temple stands in an enclosed court entered from the east by descending stairs.

The buildings in it are of a very mixed style and various ages, but there is probably little or nothing that can date further back than, at the most, the end of the sixteenth century, and considerable additions have have been made since then. The grandeur of the image of the Goddess Bhawani, the brilliance she sheds, the grace that she radiates and the fervent devotion she evokes are beyond description. One has to see for himself to realise what a privilege it is to have such worship and *darsan*. The Goddess is sweet and charming whether she is in simple dress or when she is bedecked with priceless gems and jewels placed at her feet by devout kings of many ages and climes.

The Goddess is regularly worshipped four times a day, and at night her image is laid upon a gold bedstead. There is an interesting tradition that no Muslim or Hindu at Tuljapur dare sleep on a bedstead, this honour being reserved for the Goddess Bhawani alone. Before the priest commences the worship, the temple watchman turns to the gate from which a pathway leads down to the Bharatibua Mutt and call aloud that the temple priest and watchman have come. He then proceeds to the door of the shrine and again calls out "Come soon." The story runs that the founder of the *mutt*, the sage Rama Chandra Bharati, was in the habit of playing *saripat* (a sort of chess) with the Coddess in his *mutt*. Unaware of the Goddess's regular visits to the sage, the *pujari* (temple priest) is supposed to have continued performing the rites as usual at her shrine. One night, while he was asleep, Bhawani appeared to him in a dream and remonstrated with him for having neglected to worship her for a considerable period. The awe-struck *pujari* assured the Goddess that he had diligently performed his duties. She did not doubt that he spoke

the truth, but told him that she had taken playing chess with the sage and was therefore absent while the worship was in progrees, She instructed him to warn her before beginning the worship. Ever since then, we are told, the custom of warning the Goddess has been rigidly observed.

The main gateway of Tuljapur, known as Bhawani Bais, is a very beautiful structure which on account of its loftiness and grandeur attacts the view of the visitor from a considerable distance. It is an arched structure, about 45 ft. in hight, constrcted of well-chiselled masonry. Sculptures *dwarapalas* and Hindu Gods as well as the figures of Jaina Tirthankaras have been fixed into the body of the building. To the right of the arch is a band of four naked seated female figures, all four-handed—two hands of these are joind together and rest in the lap, while the right one of the other two hands holds a *trisula* and a left a *damru*. Over these figures are two heads of Narashima and a lotus frieze. To extreme right is a four-handed *dwarapala*, holding in each of the two right hands a mace and a *damru* and in one of the left hands a three-hooded serpent which winds round the body of the *dwara-pala*: the forth hand is broken. A panel representing a flying *garuda*, another containing a scene of the *Linga* worship and another representing a wrestling scene appear little over the head of the *dwarapala*.

By
R. S. R. Thomas

The left side of the arch has in the middle portion a nude male standing figure wearing a conical head-dress, and below is a carved frieze representing the scene of the Goddess Bhawani crushing the *Mahisha Asura* (Buffalo Demon). There is a bull in front of the Goddess and on either side are figures of standing attendants and seated drum-beaters. On the frieze are also carved figures of *makaras*, the griffins of the Hindu Mythology. To the left of the frieze is fixed a fragmentaly inscriptional tablet, the letters of which are abraded beyond the possibillity of decipherment.

Another building of interest in Tuljapur is the Laoni Gumbad, which is in Bijapur style. It consistf of a large narrow-necked dome adorned with

lotus Petals round the drum. The facade of the building is ornamented by means of a carved stone *chhajja* supported on carved brackets. Above the *chhajja* is an arcaded frieze, and at the top is an ornamental parapet. There are figures of monkeys, peacocks and lions fixed here and there in the masonry of the building. These animal repesentations from their haphazard arrangement appear to have been transferred to this building from some Hindu stuctures. The building has another feature which is rarely to be met with in the other buildings of its class, namely, the projecting margins of the platform, on which the building stands, have been placed, as the *chhajja* has been, on carved stone brackets, and this unique arrangement leads a chrming appearance to the body of the stucture. The arrangement of the interior of the building is of the usual type, *viz.*, the square chamber renderd by means of squinches into an octagon, which higher up is changed into a polygon of sixteen sides and ultimately into a perfect circle which supports the drum of the dome.

Tuljapur is worth visiting often by every devout Hindu for its natural beauties and the glory of the Goddess Bhawani.

तुलजाभवानी मंदिर

[२]

निजामराज्य की पश्चिमी सीमा पर स्थित है। मरहटों और कन्नडों (कर्नाटकवासियों) का मुख्यतीर्थ स्थान है। यह तीर्थस्थान तुलजापुर कहलाता है। बालाघाट नामक पहाड़ी पर स्थित है। दशहरे के दिन यहाँ बड़ी भारी यात्रा भरती है। यात्रियों की भक्ति देखते ही बनती है। बहुत से नर-नारी जहाँ से चलते हैं वहीं से रास्ते में मंदिर को साष्टांग डंडौत करते हुए चले आते हैं। तुलजा-भवानी का मंदिर अपनी अनन्त धनराशि और आभूषणों के लिए प्रसिद्ध है और उनमें से बहुत से आभूषण स्वयं श्री छत्रपति शिवाजी महाराज ने अर्पण किये हुए हैं। यह प्रसिद्ध है, पुराणों में कि भवानी देवी ने तलवार के एक ही वार से महिषासुर नामक राक्षस को मारा था। यह लोकोक्ति है कि महिषासुर ने एक भयंकर जंगली भैंसे का रूप धारण कर लिया था और देवी ने उसको यहीं तुलजापुर में मारा। देवी का नाम तुलजा है। वह महादेव की एक सहचरी थी। तुलजा के नाम के कारण

ही तीर्थ का तुलजापुर नाम पड़ गया। यह मंदिर सुन्दर है, भव्य है, कलायुक्त है। तुलजाभवानी की मूर्ति कृष्णवर्ण है, यह मूर्ति पर्वतगुफा में किसी ब्राह्मण को मिली थी और कहते हैं कि तुलजा माता ने स्वयं महिषासुर के विजयोपलक्ष्य में छोड़ी थी। मन्दिरद्वार छह फीट ऊँचा है, भीतर मन्दिर के चारों ओर बड़ा अच्छा प्राङ्गण है। मुख्य मंदिर में सोलह बड़े स्तम्भ हैं और उत्तर और दक्षिण की ओर जहाँ आने-जाने के मार्ग हैं, कई छोटे छोटे स्तम्भ भी हैं। तुलजादेवी का मंदिर प्राङ्गण में पश्चिम की ओर है। पूर्व की ओर उस के स्वामी महादेव जी का मन्दिर है। मन्दिर के प्राङ्गण में पूर्व की ओर की सीढियों से प्रवेश किया जाता है। प्राङ्गण और मंदिर चहुँ ओर से घिरा हुआ है।

यह मंदिर विभिन्न कलाओं के मेल से बनवाया हुआ है, यह बात मंदिर की बनावट से ही स्पष्ट दिखलायी पड़ती है। ये कलाएँ सोलहवीं शताब्दी के पूर्व की नहीं प्रतीत होतीं। इसके आरम्भ काल से ही इसमें अनेक भाग संमिलित किये हुए जान पड़ते हैं। मूर्ति की आभा और शोभा अवर्णनीय है। केवल स्वयं देखकर ही अनुमान लगाया जा सकता है कि यहाँ की पूजा-अर्चा और भक्ति का क्या महत्व है। देवी चाहे साधारण वस्त्र ही क्यों न पहिने, पर राजा-महाराजाओं द्वारा देवी के चरणों में भक्तिभावयुक्त होकर समर्पित किये हुए आभूषणों के कारण देवी की भव्यता बहुत ही बढी-चढी रहती है। जब यह खयाल आता है कि देवी श्री छत्रपति शिवाजी की कुल देवता है तब तो मानसिक भाव और ही प्रकार के हो जाते हैं। भक्तिभाव शतगुण-सहस्त्रगुण बढ जाता है। देवी का सम्बन्ध प्राचीनतम काल की परम्परा से ठेठ छत्रपति शिवाजी के समय तक आमिलता है। मरहटों में इसीलिए इसी भवानी के लिए श्रद्धा अधिक है—

देवी की पूजा दिनभर में नियमपूर्वक चार वार होती है और रात्रि के समय उसकी मूर्ति स्वर्ण के पलंग पर लिटायी जाती है। यहाँ एक बड़ा ही अच्छा रिवाज है, वह यह कि इस तीर्थस्थान में, हिन्दु हो या मुसलमान कोई भी खाट या पलंग पर नहीं सोता अथवा सोने का साहस नहीं कर सकता है। मंदिर में देवी के दर्शनार्थ मुसलमान नर-नारी भी बहुत संख्या में आते हैं।

पुजारी के पूजा के आरम्भ करने के पूर्व चौकीदार भारती बुआ (वहाँ के गोस्वामी) के मठ के द्वार की ओर जाकर जोर से चिल्लाता है कि पुजारी आगये हैं। फिर वह देवी के द्वार पर आता है और फिर पुकारता है कि शीघ्र आइयेगा। यह क्यों, कहानी इस प्रकार है—

मठ के संस्थापक रामचंद्र भारती अपने मठ में देवी भवानी के साथ सरीपत (शतरंज) खेला करते थे। देवी के आगमन के निश्चत समय को न जानते हुए पुजारी मंदिर में पूजा कर लिया करता था। एक दिन पुजारी को स्वप्न में देवी ने उसे बहुत समय से पूजा न करने के लिये फटकारा। पुजारी ने विश्वास दिलाया कि वह यथासमय प्रतिदिन पूजा करता रहा है। देवी ने उसकी बात का अविश्वास नहीं किया पर उससे कहा कि वह सन्त के साथ सरीपत (शतरंज) खेला करती थी और इसी लिये पूजा के समय अनुपस्थित रहा करती थी। देवी ने पुजारी को चेतावनी दी कि पूजारम्भ के पूर्व तुम मुझे

सूचना दिया करो। तब से देवी को सूचना देने की यह रीति प्रचलित है और इस रीति का पूर्ण रूप से पालन किया जाता है। मंदिर का मुख्य द्वारा जहाँ से अहाते में उतरते हैं विशाल और भव्य है, महराबों से युक्त है, पैंतालीस फुट ऊँचा है। इस पर सुन्दर चित्र हैं, कारीगरी का सुन्दर नमूना है। यह द्वार एक प्रकार से यात्रियों को अपनी ओर आकृष्ट करता हुआ मानों कहता है कि "आओ भीतर चलो भवानी माता के दर्शन करो"। यहाँ द्वारपाल, हिन्दू देवों और जैन तीर्थङ्करों की मूर्तियाँ स्थापित हैं। महराबों के दाईं ओर चार नग्न स्त्रियों की मूर्तियाँ हैं, इनके चार-चार हाथ हैं जिनमें से दो दो हाथ एक जगह मिले हैं, गोदी में। और शेष दो हाथों में से दायें हाथ में त्रिशूल और बाएँ में डमरू हैं। इन मूर्तियों के ऊपर दो नृसिंह के शिर हैं और कमल की महराब। दायीं ओर के अन्तिम सिरे पर चारहाथ वाला एक द्वारपाल है, यह अपने दायें हाथों में एक असा और डमरू लिए हुए हैं तथा बाएँ एक हाथ में तीन फनोंवाला एक सर्प है और सर्प द्वारपाल के शरीर में लिपटा हुआ है। चतुर्थ हाथ टूटा हुआ है।

महराब के बाएँ भाग के मध्य में एक खड़े हुए नग्न मनुष्य का चित्र है जिसके सिर पर एक तिरछी पगड़ी है। उस के नीचे और एक विचित्र महराब है और यह भवानी द्वारा महिषासुर को मारने के दृश्य को प्रदर्शित करती है। भवानी के सामने नाँदिया (बैल) है, उसके दोनों ओर सेवकों के ढोल बजाने के चित्र हैं। महराब पर प्राचीन हिंदूशास्त्र के मकारों के चिह्न भी अङ्कित हैं। महराब के पूर्व की ओर एक शिला-लेख है जिसके अक्षर पढ़े नहीं जाते, यहाँ की दूसरी इमारत लावनी गुम्बद है। यह गुम्बद विजापुर के ढंग का है। इसमें कमल पंखडियों से चित्रित तंग गर्दनवाला गुम्बद है। इसका अगला भाग चित्रित पत्थर के छज्जे से सुशोभित है। इस छज्जे को रोकने के लिये चित्रित स्तम्भ हैं। छज्जे के ऊपर एक विचित्र महराब है और चोटी पर एक चित्रित छोटी सी दीवार।

इस इमारत पर वानर, मयूर तथा सिंहों के चित्र स्थान स्थान पर बने हुए हैं। इस चित्रकारी का ढंग हिन्दू चित्रकारी पद्धति का है। इस भवन की विशेषताएँ अन्य भवनों में नहीं देखी जातीं। जिस कुरसी पर यह भवन खड़ा किया गया है वह भी अजीब ढंग की है-छज्जे जैसा लगती है और चित्रित पत्थर के मुडे हुए स्तम्भ इस कुरसी या चबूतरे को उठाये हैं। इन भवनों से मंदिर की शोभा बहुत बढ गई है।

एक वर्गाकार कमरा है जिसमें आठ कोनेवाली महराबें हैं। ये ऊपर जाकर सोलह सोलह कोनेवाली हो जाती हैं और अन्त में वृत्ताकार होकर गुम्बद के घेर को उठा लेती हैं। इस प्रकार यह तुलजाभवानी का मंदिर प्राकृतिक सौन्दर्य, देवी के ऐश्वर्य, और विविध चित्रकला के कारण देखने योग्य हैं। धार्मिक दृष्टि से तो इसकी महत्ता का क्या कहना है— ?

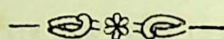


❀ पिताजी का उपदेश ❀

पूज्य पिताजी प्रायः उपदेशप्रद पत्र लिखा करते थे। महाविद्यालय की प्रारम्भिक दशा में जब कि संघर्ष का समय था और महाविद्यालय की रक्षार्थ रात्रिदिन घोर परिश्रम करना पड़ता था तब मैं पन्द्रह दिन में एकाध बार अवश्य ही बीमार पड़ जाता था क्यों कि उन दिनों में हम अपने स्वास्थ्य की तनिक भी परवाह नहीं किया करते थे। पिताजी ने मुझे उपदेशप्रद पत्र लिखा जिसका अभिप्राय यही था कि तुम अकेले ही इस तरह घोर परिश्रम करोगे तो तुम्हारा शरीर नष्ट हो जायगा। वृद्धावस्था में पछताओगे। नियत समय पर खाया पिया करो। स्वयं काम करोगे तो अधिक से अधिक दो तीन व्यक्तियों का काम करोगे। काम करने की अपेक्षा लोगों से काम लेना सीखो। जबतक अंगरेजी शिक्षा की गोद में रहे तब तक तो बड़े ढंग से रहते थे। किन्तु संस्कृत शिक्षा की गोद में आकर मस्तिष्क ही बदल गया और खान-पान, रहन-सहन में बेपरवाही होने लगी। प्रतिसमय ऐसी धुन में मस्त रहते थे कि उसको हम ही अनुभव करते हैं। खान-पान का अनियम, शक्ति से अधिक परिश्रम, सार्वजनिक कार्यों की घोर चिन्ताएँ, इन सबका प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ा और अब शरीर से वह परिश्रम नहीं होता है। पिताजी के उपदेश का अर्थ सार्वजनिक जीवन में जिस प्रकार आगे बढ़ते गये, समझने लगे। अब तो काम लेने की बात को अच्छी तरह सीख गये हैं। क्रोध और हठ (जो कि हमारी पैतृक व मातृक संपत्ति है) ने हमको पहले पहले बहुत हानि पहुँचाई पर अनुभव शाला के प्रयोगों से वह क्रोध व हठ अब दूसरी दिशा में चल दिये हैं और अब हमको कम हानि पहुँचाते हैं। बस हमारा बल है तो 'क्षमा', हमारा अस्त्र है तो क्षमा, हमारा धन है तो क्षमा। युवावस्था की वह थोड़ी थोडी सी बात पर चिड़चिड़ाने की आदत साफ जाती रही। जिसने ज़रा खुशामद की बातें कीं उसको अपना हितैषी समझ बैठने और जिसने ज़रासा भी मतभेद रक्खा उसके पीछे पड़ जाने की बात साफ जाती रही। अब वेदान्त की दृष्टि से सब पिछले जीवन के आय-व्यय की पड़ताल करते हैं तो नितान्त अज्ञान प्रतीत होता है। मैंने बहुत अनुभव के पश्चात् जीवन के कतिपय लक्ष्य स्थिर किये हैं और गत अनुभवों ने उनको स्थिर करने में वहुत सहायता पहुँचाई। मैं तो यही समझ रहा हूँ कि यदि मनुष्य सार्वजनिक जीवन में पड़ जाय तो उसको परिस्थिति घड़-घड़ा कर अपने अनुरूप बना लेती है।

एक बार संस्कृत से जी उपराम होने लगा तब पिताजी ने लिखा "कि तुम युवक होकर भी संस्कृत से घबरा रहे हो, स्कूल में तुम संस्कृत में सबसे उत्तम रहते थे, अब व्याकरणादि ग्रन्थों से घबराने की क्या बात है। माना कि इसमें घोंकने का काम बहुत है तो भी धैर्य रक्खो तो पार हो जाओगे। मैं इतना बूढ़ा होकर भी पंचतन्त्र पढ़ रहा हूँ। तुम मेधावी परिश्रमी होने पर भी महाभाष्य से घबराते हो। आश्चर्य है।" इस पत्र का मुझ पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि मैंने समस्त नवाह्निक को ही कण्ठस्थ कर डाला और आजतक समस्त भारतवर्ष में नवाह्निक को कण्ठस्थ कर डालने वाला छात्र मैंने नहीं देखा। इस विषय में किसी को सन्देह हो तो वह श्री १०८ स्वामी शुद्धबोध तीर्थ जी महाराज से पूछ सकते हैं।

एकवार पिता जी ने एक विचित्र पत्र भेजा जिसका आशय अब तक मुझे अच्छी तरह स्मरण है। पिताजी ने मुझ से पूछा था कि तुम क्या करोगे, भविष्य में क्या करने का विचार है। मैंने लिखा कि देश का काम करूँगा। देश जाकर कोई सात आठ वर्ष हो गये थे। पिताजी ने लिखा कि तुम क्या देश का काम करोगे जब कि तुम अपने देश (स्वदेश = महाराष्ट्र) को ही भूले बैठे हो। मैं पिताजी के अभिप्राय को समझ गया। मुझे देश जाना पड़ा। पिताजी प्रसन्न हुये। उन्होंने मुझे पाँच सौ रु० दिये और आज्ञादी कि अपने पितृकुल व मातृकुल में जो आप्त पुरुष जीवित हैं उन सब से मिल आओ। कहाँ से कहाँ जाना, किससे मिलना, किस के यहाँ ठहरना, और किस किस को क्या क्या देना इत्यादि सब लिख दिया था। इसी यात्रा में मुझे मगद मासूर (मैसूर व ब्रिटिश सरहद) तक जाना पड़ा। वहाँ हमारी मावसी रहती थी। यह यात्रा बड़े ठाठ की रही। मैंने भी कोई सम्बन्धी नहीं छोड़ा, सबसे मिल आया। मेरे नाना पं० गोविन्दराव जी का स्वर्गवास हो गया था। किन्तु व्यंकटरावमामा, रामरावमामा तथा कृष्णरावमामा के पुत्र नारायणराव आदि सब से मिल आया—व्यंकटराव मामा व रामराव मामा की मृत्यु के पश्चात् भी एकवार गया था।



आर्य समाज के शास्त्रार्थ

हमने प्रारम्भिक दिनों में आर्यसमाज के शास्त्रार्थों में बहुत भाग लिया। बंबावाला (गुरुदासपुर) में सनातनियों से शास्त्रार्थ हुआ था, उसमें आचार्य श्री पं० गंगादत्तजी शास्त्री के साथ मैं भी गया था। शास्त्रार्थ 'महाभारत' पर था। इस शास्त्रार्थ में यह बात विशेष थी कि बड़े बूढ़े सब सनातन धर्म की ओर थे और उन्हीं के नवयुवक पुत्र, इष्ट मित्र सम्बन्धी आर्यसमाज की ओर थे।

आगरे में श्री पं० भीमसेन शर्मा इटावानिवासी के साथ जो बड़ा शास्त्रार्थ हुआ था, उसमें भी हम गये थे, आर्यसमाज की ओर से लिखने वाले थे श्री पं० भीमसेनशर्मा साहित्याचार्य आगरानिवासी। बोलनेवाले थे श्री पं० तुलसीरामजी सामवेद-भाष्यकार। शास्त्रार्थ लैखिक व मौखिक दोनों रूप में होता था।

सिकन्दराबाद में भी पं० भीमसेन जी इटावा-निवासी के साथ शास्त्रार्थ ठहरा था किन्तु पत्रव्यवहार होकर ही रह गया। फिर दोनों ओर से खूब व्याख्यान हुये। स्व० पं० तृषाराम जी शर्मा पं० जी के पृष्ठपोषक थे।

जब पं० जी सहारनपुर के जिले में आये थे तब भी हम पहुँचे थे। पं० जी भगवानपुर में आये थे और आर्यसमाज के विरुद्ध व्याख्यान दिये थे।

श्री पं० जी किसी समय आर्यसमाज के गण्य मान्य पण्डित समझे जाते थे। जिस वर्ष हम लाहोर पहुँचे थे (१८६४) उस वर्ष वच्छोवाली समाज में हमने आपका व्याख्यान सुना था। पण्डितजी बड़े विद्वान थे और संस्कृत के उच्चकोटि के लेखक थे। आपका वैदिकविषयक स्वाध्याय व्यापक था।

❀ ❀ ❀

मुरादाबाद के पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र विद्यावारिधि के साथ प्रायः मुठभेड़ रहती थी, मुरादाबाद गुहावर (बिजनौर) आदि स्थानों में आपसे खूब शास्त्रार्थ हुये।

❀ ❀ ❀

खुर्जे में श्री० श्यामसुन्दरजी के साथ बराबर शास्त्रार्थ रहता था।

❀ ❀ ❀

इन शास्त्रार्थों में भीड़ तो खूब रहती थी किन्तु निर्णय कभी भी नहीं होता था। बस जिसने जनता को प्रसन्न कर लिया उसी की जीत समझी जाती थी। कभी २ इसमें दोनों ओर से सब प्रकार के छल प्रपञ्च, वितण्डावाद चल पड़ते थे। ऐसे वादविवादों का नाम 'शास्त्रार्थ' चल पड़ा था। आर्यसमाज का छोटा सा छोटा व्यक्ति भी बड़े से बड़े सनातनी पण्डितों को, मौलवी और पादरियों को ललकार बैठता था—

हिसार के जिले में अहीर लोगों को सनातनी पण्डित देवदत्तशर्मा ने शूद्र बतला दिया। बस झट 'अहीर' हमारे पास आये और कहने लगे चलिये शास्त्रार्थ में।

हम —किस विषय का शास्त्रार्थ।

अहीर—हमको क्षत्रिय सिद्ध करना होगा।

हम —हमको स्वयं पता नहीं तुम कौन हो, हम वहाँ जा कर क्या सिद्ध करेंगे।

अहीर—चलिये तो सही।

हम चल दिये। शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। शास्त्रार्थ के मध्य में ही, अब ठीक स्मरण नहीं, न जाने किस बात पर पं० देवदत्तशर्मा ने स्वा० दयानन्द को कटुशब्द कह डाला। हमने कहा कि सभ्यतापूर्वक शास्त्रार्थ कीजिए।

देवदत्तशर्मा—स्वा० जी ने ऊँटों को 'उभयादतः' दोनों ओर के दाँतों वालों में गिना है। यह बात मिथ्या है, ऊँट के दोनों ओर दाँत नहीं होते।

हम—(हमने ऊँट तो देखा था किन्तु हमको स्वयं पता नहीं था कि ऊँट के दोनों ओर दाँत होते हैं या नहीं तथापि हमने कहा—अवश्य होते हैं।

देवदत्तशर्मा—नहीं होते।

सभा में बड़ा ही कोलाहल मचा। ऊँट सभा में लाया गया, उसका मुँह खोला गया। सब अहीरों ने एक स्वर से कहा कि दोनों ओर दाँत हैं। देवदत्तशर्मा कहते ही रह गये कि एक ओर दाँत हैं, दूसरी ओर दो कीलें। अहीरों ने उत्तर दिया कीलें भी तो दाँत ही हैं। देवदत्तशर्मा देखते के देखते रह गये।

हमने अपने मन में सोचा कि जान बची लाखों पाये। सर्वत्र हमारी विजयदुन्दुभि बजी। हम तो—

'यः पलायति स जीवति'

इस न्याय से वहाँ से जो चले पीछे लौट कर नहीं देखा और फिर इस प्रकार के शास्त्रार्थ में नहीं गये। क्योंकि सभा में ऊँट लाने व उसके मुँह को खोलने का शास्त्रार्थ शायद भारतवर्ष में यह पहला ही था।

मार्ग में लौटते हुए रेवाड़ी स्टेशन पर अहीरों ने बड़ा स्वागत किया। वे लोग मुझे बड़ा परिडत समझते थे, और मैं उनसे अपना पीछा छुड़ा रहा था।

❀ ❀ ❀ ❀

महाविद्यालय के महोत्सवों के अवसर पर भी हमने कई शास्त्रार्थ कराये जिनमें रेवरण्ड फ्रैंक, स्वा० दर्शनानन्द सरस्वती, पं० अखिलानन्द कविरत्न, पं० गणपतिशर्मा, पं० मुरारिलालशर्मा, पं० नन्दकिशोरदेव शर्मा का नाम उल्लेख योग्य है।

हमने आर्यसमाज में निम्नलिखित शास्त्रार्थ देखे :—

१—पं० लेखराम जी का सनातनी परिडतों से (लाहोर में)।

२—महात्मा मुन्शीराम जी का पं० गोपीनाथ से (लाहोर में)।

३—पं० दौलतराम जी का एक नास्तिक से (पंजाब में)।

४—स्वा० दर्शनानन्द जी का पादरी ज्वालासिंह से (यू० पी० के कई स्थानों में)।

५—पं० गणपति जी का पादरियों और सनातनी परिडतों से (यू० पी० में)।

६—पं० गणपति जी का रेवरेंड फ्रैंक से (महाविद्यालय में)।

७—स्वा० दर्शनानन्द जी का मौलवियों से (कई स्थानों में)।

८—स्वा० दर्शनानन्द व पं० गणपतिशर्मा (परस्पर) वृक्षों में जीव विषय पर (महाविद्यालय में)

९—स्वा० दर्शनानन्द जी का पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र से (कई बार कई स्थानों में)।

१०—पं० नन्दकिशोरदेव शर्मा जी का पौराणिकों से (खुर्जा आदि में)।

११—स्वा० नित्यानन्द जी का पौराणिकों व ईसाइयों से (दिल्ली में)।

१२—श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी का कादियानियों से (कई स्थानों में)।

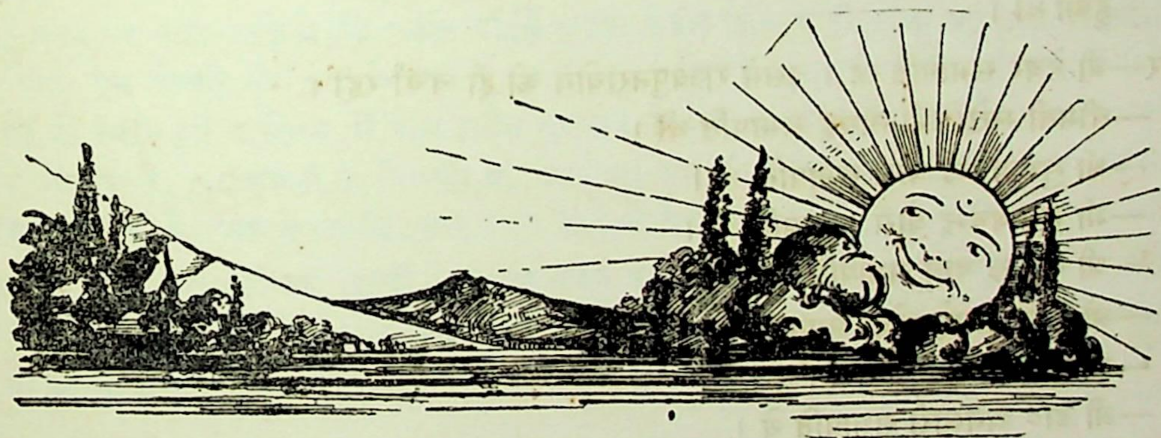
१३—पं० मुरारिलालशर्मा का पौराणिकों और मौलवियों से (उत्सवों में)।

१४—पं० तुलसीराम जी सामवेदभाष्यकार का पौराणिकों से (उत्सवों में)।

१५—७-८ स्थानों में तो शास्त्रार्थों में मध्यस्थ रहे।

हमको इतनों का ही स्मरण है। वैसे हम सैकड़ों छोटे-मोटे शास्त्रार्थों में सम्मिलित हुये हैं।—

शास्त्रार्थों के विषय में अब समाज की नीति बदल गई है। सम्भवतः अब इनकी आवश्यकता भी नहीं रही। जनता भी इन खेलों को पसन्द नहीं कर रही है। श्री पं० रुद्रदत्तशर्मा संपादकाचार्य ने प्रारम्भिक काल में पौराणिकों के साथ बहुत शास्त्रार्थ किये। आर्यसमाज की नई पीढ़ी न तो उतनी कट्टर है और न ही वह इस प्रकार की शास्त्रार्थ-प्रणाली को पसन्द करती है।



हमने कौन कौनसी कांग्रेस देखी

(मुख्य मुख्य कांग्रेस अधिवेशन)

पूना —हम छोटे थे, समझ ही नहीं सके। हल्ला-गुल्ला खूब रहा।

लखनऊ—(यहीं से हमारा राजनैतिक जीवन प्रारम्भ हुआ) जब श्री अम्बिकाचरण मुजुमदार सभापति (१६१६) थे। लोकमान्य तिलक मांडले से छूट कर आये थे। महात्मा गाँधी भी पधारे थे। श्री सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी भी पधारे थे।

लखनऊ—जब पंडित जवाहरलाल नेहरू सभापति थे।

दिल्ली —जिसमें लोकमान्य तिलक सभापति चुने गये थे पर विलायत चले गये थे इसलिए श्री महामना मालवीय सभापति बनाये गये थे।

दिल्ली —एक वार कनवेशन (श्री जवाहरलाल के सभापतित्व में)।

लाहोर —पं० जवाहरलाल सभापति थे, पूर्ण-स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास हुआ था।

अमृतसर—पं० मोतीलाल नेहरू सभापति थे। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक दल-बल सहित पधारे थे। महात्मा गाँधी भी पधारे थे। माएटेग्यू-चेम्सफोर्ड स्कीम पर बड़ा वाद-विवाद हुआ था।

अमृतसर—श्री ढेबर सभापति रहे। इसमें राज्यपुनरायोग की ही चर्चा रही।

कानपुर —श्रीमती सरोजिनी नायडू सभापति थीं।

त्रिपुरी —श्री सुभाषचन्द्र बोस सभापति थे।

हरिपुर —भी सुभाषचन्द्र बोस सभापति थे।

फैजपुर —श्री राजेन्द्र बाबू सभापति थे।

कराची —श्री वल्लभभाई पटेल सभापति थे।

बम्बई —श्री राजेन्द्र बाबू सभापति थे।

मद्रास —श्री डॉ० अनसारी सभापति थे।

रामगढ़ —श्री मौलाना अबुल कलाम आजाद सभापति थे।

कलकत्ता—श्री पं० मोतीलाल नेहरू सभापति थे।

गोहाटी (आसाम)—श्री श्रीनिवास आयंगर सभापति थे।

हैदराबाद कांग्रेस—इसके सभापति पं० जवाहरलाल नेहरू थे।

जयपुर —जिसके सभापति पट्टाभि सीतारामय्या थे।

मेरठ —श्री कृपलानी सभापति थे।

परमहंस रामकृष्ण के जगत्प्रसिद्ध शिष्य

स्वामी विवेकानन्द की सेवा में

१८६७ में जब हम लाहोर में नववीं क्लास में पढ़ते थे जगत्-प्रसिद्ध श्री स्वा० विवेकानन्द जी लाहोर पधारे थे। उसी समय प्रो० बोस का सर्कस वहाँ आया था। प्रो० बोस और स्वा० विवेकानन्द किसी समय कलकत्ते में सहाध्यायी थे इसलिए स्वा० विवेकानन्द जी के संमानार्थ प्रो० बोस ने एक विशेष खेल रक्खा, उसमें स्वा० विवेकानन्द पधारे थे। दर्शकों की भीड़ भी बेहद थी। सर्कस का खेल समाप्त होने पर श्री स्वा० विवेकानन्द जी ने एक संक्षिप्त भाषण दिया। इसमें प्रो० बोस का अभिनन्दन था। फिर राजा ध्यानसिंह की हवेली में स्वा० जी का सार्वजनिक भाषण हुआ। इतनी अधिक भीड़ थी कि लोग हॉल में न समा सके तब विस्तृत प्राङ्गण में भाषण हुआ। जनता होगी कोई पचास-साठ हजार की संख्या में, बड़ा हो-हल्ला रहा पर स्वामी जी के खड़े होते ही सर्वथा सन्नाटा छा गया। अप्रतिम भाषण था। दो घण्टे तक सरस्वती का अखण्ड प्रवाह चलता रहा—फिर स्वा० जी भागसू (धर्मशाला जि० कांगड़ा) के पर्वत पर चले गये। गरमियों की छुट्टियों में हम कोई पचास छात्र वहाँ पहुँचे। वहाँ कोई बीस बाईस दिन रहे। प्रतिदिन स्वामीजी का सत्संग रहा। स्वामी जी भक्तिरस के सुन्दर मधुर गीत गाया करते थे। उनका कण्ठ अत्यन्त मधुर था। छात्रगण उनको घेरे रहते थे। स्वामी जी पंजाबी छात्रों से कहा करते थे कि उड़द की दाल छोड़ो तब दिमाग ठीक होगा। आप यह कहा करते थे कि पहिले पहिले हमको केवल लिखना ही आता था, बोलना नहीं आता था। जब हम बोलने लगे तब लिखना छूट गया है। आपके साथ एक अमरीकन महाशय और एक लेडी थी जो स्वा० जी के शिष्य थे और सदैव गुरुभाव से सेवा शुश्रूषा करते रहते थे। स्वा० जी बड़े हँसमुख व्यक्ति थे, पराकाष्ठा के विनोदी थे, आप जब अमरीका के अनुभव सुनाते थे तब एक समय-सा बँध जाता था। जब वे सायं टहलने बाहर जाते थे तब पचासों छात्र तथा व्यक्ति साथ हो लेते थे। रविवार के दिन, सामाजिक पुरुषों के आग्रह करने पर साप्ताहिक अधिवेशन में बीस मिनिट तक बैठे रहे। स्वामीजी की मूर्ति भव्य थी, कद ऊँचा था, जब सभा में बोलने खड़े होते थे तब उनकी आकृति देखते ही बनती थी।

स्वामी रामतीर्थ

हम लाहोर में १८६४ से १८६८ तक रहे अर्थात् पाँच वर्ष। जब एण्ट्रन्स पास करके फोरमैन ख्रिश्चन कॉलेज में प्रविष्ट होने गये थे तब विशेषरूप से दर्शन हुए। तब आप वहाँ गणित के प्रोफेसर थे। उसके पश्चात् कई वार दर्शन हुए। बातचीत का प्रसंग दो-एक वार ही आया, वह भी छात्रगणों के साथ जाने से, लाहोर में आप जिस मकान में रहते थे उसको हमने देखा था। बाजार के रास्ते से कई पैडी चढ़ कर कुछ ऊपर जाना पड़ता था। इन पैड़ियों को हरि की पैड़ी कहते थे। वहाँ

प्रो० तीर्थराम कहलाये जाते थे, फिर उत्तरकाशी (टिहरी) में इन्होंने संन्यास लिया। हमने इनके गुरु के दर्शन किये थे सन् १९१६ में। एक मास तक हम उत्तरकाशी रहे, गंगोत्री तक गये थे। इनके गुरु कहते थे कि तीर्थराम हमारे पास आया था, हमने उसको रामतीर्थ करके भेजा। हमने कहा कि अब तो वे बड़े प्रसिद्ध महात्मा हो रहे हैं, जापान अमरीका आदि में उनकी बड़ी ख्याति है। तब बोले कि रामतीर्थ एक वार हमसे कहता था कि गुरू जी देश में चलिए यहाँ क्यों पड़े हैं, हमने उत्तर दिया कि हम जो यहाँ इधर पर्वत प्रदेश में आये हैं, वह फिर लौटने या वापस जाने के लिये नहीं आये।

लोकमान्य तिलक

हम जब छोटे थे तब तीनों भाई पूने में, शनिवार पेठ में अंकलीकर के वाडे में रहते थे। लोकमान्य तिलक को हमारे पिता जी ने कह दिया था कि बच्चों की निगरानी रक्खें। वे कभी सातवें दिन, कभी पन्द्रहवें दिन देखने आते थे। कभी कभी घर पर भी बुला लेते थे। बस यही प्रथम दर्शन। हमारे दोनों बड़े भाई नारायणराव और भीमराव तिलक महाराजके ही स्कूल में अर्थात् न्यू इंगलिश स्कूल में पढ़ते थे। हम पढ़ते थे नूतन मराठी विद्यालय में। जिस स्कूल में हम पढ़ते थे उसी स्कूल के भव्य-भवन के एक भाग में केसरी प्रेस और केसरी कार्यालय था। इस भवन का नाम था अप्पा बलवन्त का वाडा। यहाँ प्रायः तीसरे चौथे दिन दर्शन हो जाते थे। कभी २ वे बुला लेते थे और हाल पूछते थे। उन दिनों "केसरी" की बहुत खपत थी। सुनते हैं कि दो बैलगाड़ी भर कर केसरी पोस्ट आफिस में पहुँचाया जाता था—वहाँ पूने में जिधर देखो उधर तिलक ही तिलक हो रहा था। जनता उन पर मुग्ध थी। कभी २ तिलक महाराज धाराशिव (उस्मानाबाद) आते थे तो हमारे यहाँ ही ठहरते थे। इतना याद है कि इनको देखने के लिये बड़ी भीड़ जमा हो जाती थी।

लोकमान्य के सबसे बड़े चिरंजीव विश्वनाथ के यज्ञोपवीत में हमारे पिता जी गये थे और मेरे यज्ञोपवीत (मरहटी में मुंज कहते हैं) संस्कार में लोकमान्य भी आये थे—विश्वनाथ और मैं मरहटी की तीसरी श्रेणी में पढ़ते थे।

फिर १८९४ में हम पंजाब चले गए। फिर १९१६ में लखनऊ कांग्रेस के अवसर पर मैं उनसे मिला, फिर अमृतसर कांग्रेस के अवसर पर मिला—अमृतसर में पूछते रहे कि इधर उत्तरभारत में कैसे चले आये—तब मैंने सब वृत्तान्त सुनाया। तब कहने लगे कि कोई बात नहीं, महाराष्ट्र-निवासी जहाँ भी जाय उसको वहीं महाराष्ट्र बना लेना चाहिए। मेरे आग्रह करने पर लौटते समय हरद्वार आने वाले थे, पर नागपुर का आवश्यक कार्य निकल आया इसलिये सीधे वहीं चले गये। हाँ मैं भूल गया, कलकत्ते में शिवाजी उत्सव में (१९०५) मैंने उनके दर्शन किये थे। उनके साथ श्री खापर्डे और डॉ० मुंजे थे। वहाँ लोकमान्य का अपूर्व समारोह रहा—हावड़ा स्टेशन से कॉलेज स्क्वायर तक नरमुण्ड ही नरमुण्ड दिखलाई पड़ते थे, इतनी भीड़ थी—बड़ी सभा हुई थी कॉर्नवालिस स्ट्रीट के एक प्रांगण में। विपिनचन्द्रपाल का भी भाषण हुआ था।

हमारे गुरु श्री ६ सत्यव्रत सामश्रमी जी महाराज लोकमान्य तिलक से बहुत नाराज थे, क्योंकि तिलक महाराज ने Arctic Home in the Vedas इस पुस्तक में यह सिद्ध किया था कि आर्य लोग उत्तरी ध्रुव के निवासी थे। श्री सामश्रमी जी कहते थे कि यह लोकमान्य तिलक की नितान्त भूल है। वेदों से सिद्ध है कि आर्य लोग भारत के ही आदि-मूल-निवासी हैं। कहते थे कि एकवार तिलक उनके पास गये थे तब बड़ा वाद-विवाद रहा। श्री सामश्रमीजी महाराज ने अपने प्रसिद्ध ऐतरेयालोचन-ग्रन्थ में लोकमान्य तिलक के पक्ष का खण्डन किया है—

कलकत्ते में मैं लोकमान्य से मिलने गया तो सामश्रमी जी महाराज नाराज हो गये। मैंने कहा कि शिष्टाचार के रूप में मेरा जाना उचित ही था क्योंकि तिलक मेरे पिता जी के पुराने मित्र हैं और हम जब पूने में पढ़ते थे तब से परिचय है—फिर लो० तिलक से अमृतसर कांग्रेस में ही मिल सका।

महात्मा गान्धी

महात्मा गान्धी जी के दर्शन सब से पूर्व महाविद्यालय में ही हुए। संभवतः १९१२ में। तब हमारे महोत्सव में आप अचानक पधारे थे। कुम्भ का अवसर था। फिर भारामल के बाग में हमने इनका बड़ा स्वागत किया। फिर एकवार हमारे महोत्सव में आये और तीन दिन तक रहे-तब से प्रायः प्रत्येक कांग्रेस में दर्शन होते रहे। अमृतसर कांग्रेस के अवसर पर मैं इसलिए भी गया था कि कटारपुरकाण्ड के विषय में इनसे परामर्श लूँ। आपने यह राय दी थी कि जो भी कटारपुरकाण्ड में गये थे वे स्पष्ट कह देवें कि हम गये थे। जम्बूसर में भी मिला था, तब ये अपने अस्सी साथियों के साथ डाण्डी जा रहे थे। देहरादून-मसूरी-सहारनपुर के दौरे में भी मैं महात्मा जी के साथ था।

जब आप महाविद्यालय पधारे थे और ठहरे थे तब महाविद्यालय में बड़ी दल बंदी थी, चुनाव के हो-हल्ले को उन्होंने सुना था। मुझ से पूछा कि-क्या हल्ला था, मैंने कहा चुनाव का झगड़ा था। तब आपने मुझे कहा कि यह सार्वजनिक जीवन बड़ा विचित्र है इसमें संभलकर पग रखना चाहिए। विलायत में लड़के एक खेल करते हैं, जीती मक्खी को पकड़कर उसमें सुई चुभोते हैं और उसके पंख फड़फड़ाने को देखकर प्रसन्न होते हैं। जनता कभी कभी कार्यकर्ता के साथ यही हाल करती है। सावधान रहो, मैंने आज्ञा शिरोधार्य की। जब कभी मैं कांग्रेस के अवसर पर मिलने गया तब बड़े प्रेम से मिलते रहे। महाविद्यालय का कुशल पूछते रहे—

१९२१ में अहमदाबाद में कांग्रेस हुई मैं तो ता० १० दिसम्बर को ही पकड़ा गया था। अहमदाबाद कांग्रेस में जो बड़ा गेट बनाया गया था उस पर २५० कारागार में गये हुए व्यक्तियों के नाम थे। मुझसे जो व्यक्ति मिलने आये थे—(मुरादाबाद जेलमें) उन्हों ने कहा था कि उनमें मेरा नाम भी था। मुझे इस बात को सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई थी।

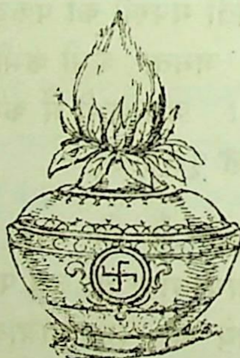
देहरादून के बहुत से लोग अहमदाबाद गये थे। जब वे महात्माजी से मिले तब उन्होंने पूछा आप लोग कहाँ से पधारे हैं-श्री हंसराज कक्कड़ ने कहा हम देहरादून से आये हैं, तब आपने उपालम्भ-

पूर्वक कहा कि अच्छा किया, आप नरदेवशास्त्री को जेल में पहुँचा कर कांग्रेस देखने आ गये--लोग चुप हो गये--महात्मा गाँधी के काँग्रेस के अवसर पर अथवा ऑलइण्डिया काँग्रेस कमेटियों में दर्शन मिलते रहे--एक वार मैं स्वयं वर्धा गया था--महात्मा जी के डाण्डी मार्च के अवसर पर अहमदाबाद-जम्बूसर गया था।

* पंजाबकेसरी ला० लाजपतराय *

इनका परिचय लाहोर में ही होगया था क्या गजब के वक्ता थे! जब ये अपील करते थे रुपये, कपड़े, बर्तन, भूषण वर्षा की तरह बरसते थे। हम महात्मापार्टी के बोर्डिंग में रहते थे, कॉलेज वालों के जलसे में जाने से इधर के लोग नाराज़ हो जाते थे, तब भी हम जब तक लाहोर में रहे चुरा कर कॉलेज वालों का जलसा देख ही लेते थे। महाविद्यालय के जलसे में भी आप दो बार पधारे थे। देहरादून की राजनैतिक कान्फ्रेन्स में (१६२०) आपको विशेषरूप से निमन्त्रित किया गया था।

आप के भाषण को सुनने के लिये जनता उमड़ पड़ती थी। मुझसे कहते थे कि महाविद्यालय के आम्रों के झुण्ड में जो प्राकृतिक सौन्दर्ययुक्त पण्डाल था उस में वे इतना अच्छा बोले कि ऐसा कम बोलते हैं--उन्होंने यह भी कहा कि शास्त्री जी तुम पुराना जमाना लाने को फिरते हो, काम बड़ा कठिन है और समय सर्वथा प्रतिकूल। मैं कान्फ्रेन्स का स्वागताध्यक्ष था, मेरा भाषण सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और मेरी पीठ थोपी। देहरादून कान्फ्रेंस के चन्द्राकार पण्डाल की भी वे प्रशंसा करते रहे। कहते थे कि इस प्रकार के पण्डाल में बोलने में वक्ता को बहुत सुभीता रहता है--

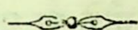


॥ ॐ तत्सत् ॥

श्री नेमचंद वालचंद गांधी का

पिता जी के विषय में पत्र

(मरहटी पत्र का हिन्दी अनुवाद)



श्री नरदेवशास्त्री को धाराशिव (उस्मानाबाद) से नेमचन्द वालचन्द गाँधी का नमस्ते !

विनती विशेष आप अपनी आत्म-कथा लिख रहे हैं, प्रसन्नता की बात है। आप जैसों को तो अपनी आत्म-कथा अवश्य लिखनी चाहिये, क्योंकि इससे बहुतों को लाभ होगा। आपने मुझे आपके पिता जी के विषय में लिखने के लिये कहा है। जो कुछ मुझे ज्ञात है मैं लिख रहा हूँ—

तुलजापुर के मन्दिर में भोपी और पालकर नामके दो पक्ष हैं। इन दोनों में अत्यन्त वैमनस्य चला आ रहा है, इसलिए दोनों पक्षों में सदैव झगड़े मारपीट तक हो जाती है। इसलिये निजाम सरकार ने मन्दिर को अपने अधिकार में लेकर रावसाहब श्रीनिवासराव जी को समस्त प्रबन्ध सौंप दिया। विशेष विचित्र बात यह थी कि दोनों पक्षों के लोग अन्त तक यही समझते रहे कि रावसाहब श्रीनिवासराव सर्वथा उनके हितैषी हैं और उन्हीं का पक्ष करते हैं।

भोपी लोगों का पक्ष सत्य था और पालकर व्यर्थ ही झगड़े खड़े कर देते थे। पालकरों का उपद्रव शान्त हो और पूजा के सच्चे अधिकारी भोपी लोगों को उनका अधिकार मिले यही रावसाहब श्रीनिवासराव जी का उद्देश्य था। यहाँ आपके पिता 'रावसाहब' नाम से ही प्रसिद्ध थे। रावसाहब जी ने इस अभिप्राय को अन्त तक अर्थात् निर्णय देने के दिन तक दूसरे पक्ष पर प्रकट न होने दिया, ऐसी चतुराई और दक्षता से काम लिया। पालकर (विपक्षी) यही समझते रहे कि रावसाहब हमारा ही पक्ष ले रहे हैं, फैसला हमारे ही हक में देंगे इत्यादि। वे भोपी लोगों के हक में हैं इस बात को रावसाहब ने अन्त तक ऐसा गुप्त रक्खा कि भोपी लोग भी न जान सके। इन दो पक्षों में झगड़ा था पुजारीपन और आमदनी के अधिकार का। कभी कभी भोपी लोग इसी बात का संशय करते रहे कि रावसाहब पालकर लोगों का पक्ष ले रहे हैं—रावसाहब इस प्रकार का गंभीर वर्ताव न रखते तो दोनों पक्षों में बड़ी भारी खून-खराबी हो जाती। अन्त में रावसाहब ने जो फैसला दिया निजाम सरकार ने उसी को मंजूर कर लिया। एक दो पीढी का झगड़ा, एक वर्ष में ही तय हुआ। भोपी लोगों को हक मिल गया। रावसाहब की बुद्धिमत्ता और न्याय-परायणता की धाक निजाम राज्य में पहुँच गई। अब तक इस मन्दिर में भोपी और पालकर इनके हक के विषय में और यात्रियों को किस २ स्थान में क्या देना चाहिये

इस विषय में कोई नियम ही नहीं थे। रावसाहब ने इन हक्कों के विषय में और आय-व्यय के बारे में ऐसे नियम बना डाले और वे सब निजाम सरकार को इतने पसंद आये कि सरकार ने उन नियमों में तनिक भी परिवर्तन नहीं किया और रावसाहब की सभी बातें अविकलरूप में स्वीकार करलीं। वहाँ मंदिर की व्यवस्था अब तक उन्हीं नियमों के अनुसार हो रही है—

इस विषय में इधर रावसाहब का नाम अजरामर हो गया है।

तुलजा भवानी (यहाँ अंबाबाई कहते हैं) के मंदिर में प्रतिवर्ष अनेक होम उत्सव महोत्सव के प्रसंग पर पचासों बकरों की आहुति दी जाती थी। रावसाहब ने इस प्रथा को बंद करने का पूर्ण प्रयत्न किया—अब वहाँ वर्षभर में दशहरे के मौके पर एक ही बकरा बलि दिया जाता है। वे यदि जीवित रहते तो इस एक बकरे को बलि देने की प्रथा भी सर्वथा बंद करवा देते—

रावसाहब को इंगलिश, मरहटी, उर्दू, कनडी, हिंदी, तेलगू इन भाषाओं का पूर्ण ज्ञान था। बुढापे में वे संस्कृत का भी अभ्यास करने लगे थे। संस्कृत का पंचतत्र और अन्य ग्रन्थों का प्रारम्भ उन्होंने मुझ से ही किया था। ऐसा विद्याव्यासंगी पुरुष इधर तो कहीं देखने में नहीं आया।

रावसाहब बड़े पोलिटिकल व्यक्ति थे परन्तु उनके नित्यप्रति के व्यवहारों से लोग उनको बहुत ही भोले भाले समझते थे। उनकी बातों का पता फलोदय के पश्चात् ही ज्ञात होता था! "फलानुमेयाः-प्रारम्भाः" इस कालिदास की उक्ति को यहीं चरितार्थ होते हुए हमने देखा।

राजा और प्रजा में सौमनस्य रहना चाहिये। राजा को प्रजा के हित का ध्यान रखना चाहिए इत्यादि विषय में उनकी और मेरी कई वार बातें हुईं। वे कहते थे कि वे इस विषय में निजाम सरकार हुजूर आली और मैसूर के महाराज से भी मिले थे। और दोनों ने उनकी बातों को बड़े ध्यानपूर्वक सुना था।

वे भोले भाले दीखते थे, वे सनातनी लोगों को अप्रिय नहीं थे तो भी सच्चे सुधारक थे। रावसाहब ने वैष्णव होते हुए भी अपनी कन्या सुन्दराबाई का विवाह दूसरी शाखा अर्थात् स्मार्तों में किया। वे सब से मेल से रहते थे, मधुर स्वभाव के लोग थे। हमसे कोई गुप्त बात कहनी हो तो रात को कभी चले आते थे अथवा बुला भेजते थे-हमसे तो जब कोई विशेष कार्य आ पड़े तभी मिलते थे।

रावसाहब अत्यन्त निःस्पृह व्यक्ति थे। ऐसा निःस्पृह व्यक्ति निजाम राज्य में विरला ही होगा। अपने सरकारी कार्यों में इतने अधिक निःस्पृह थे कि, बड़े बड़े अफ़सर उनकी बात मानने के लिए तैयार रहते थे किन्तु रावसाहब ने अपने लड़कों की सिफ़ारिश कभी न की और न करायी। वे चाहते तो अपने लड़कों को अच्छे अच्छे पद पर लगवा देते। अधिकारी वर्ग पर इनका काफी प्रभाव था उससे उन्होंने किसी प्रकार का भी व्यक्तिगत लाभ नहीं उठाया। पातूर (अकोला बरार) में रावसाहब के मित्र ठाकुर गोविंदसिंह के यहाँ भाई-भाइयों में बड़ा कलह खड़ा हुआ था। रावसाहब अपनी नौकरी

से छुट्टी ले गये और बड़ी युक्ति से वहाँ के झगड़ों को शान्त किया-कराया। उनको लोग अजात शत्रु कहते थे—

तुलजा भवानी मन्दिर में श्रद्धालु भक्त अपनी कन्याओं को भेंट चढा जाते थे, जो देवदासी नाम से कही जातीं थीं। वे कन्याएँ मन्दिर में ही रहती थीं, वहीं बड़ी हो जाती थीं। रावसाहब ने बंबई गवर्नमेंट और निजाम सरकार को लिखकर इस प्रथा को बन्द करवाने में बड़ा प्रयत्न किया; देवदासी के प्रश्न के उठते ही सर्वत्र चर्चा प्रारम्भ हुई और बम्बई प्रान्त में सर्वत्र यह प्रथा बन्द हुई।

रावसाहब को शतरंज खेलने का बड़ा शौक था। निजाम राज्य में वे बड़े नामी खेलने वाले माने जाते थे। वाघ आणि मेंढा (शेर और बकरा) इस प्रसिद्ध खेल को वे खेलते थे। इसमें वे अत्यन्त निपुण थे। उनको कमरे में बन्द कर देने पर भी वे भीतर से ही ऐसे दाँव पेंच चलाते थे कि बाहर देखने वाले दंग रह जाते थे। एक बार हमारे यहाँ शोलापुर के मेहमान आये तब उन्होंने कमरे में बंद होकर यह खेल खेला था। रावसाहब कहते थे कि वे एक बार चार खेल खेल सकते हैं। अगर मेरे जैसा और कोई खेलने वाला मिले तो फिर केवल मौखिक रूप में ही हमारा खेल चल सकता है। न घोड़े हाथी की आवश्यकता और न हाथी, घोड़े, ऊँट, प्यादे की आवश्यकता।

तुलजापुर में उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहा। दिन प्रतिदिन क्षीण ही होते गये। उनका देहावसान अचानक हुआ, उनकी श्मशान यात्रा के साथ आस-पास के ग्रामों के, शोलापुर तक के सहस्रों मनुष्य थे।

मैंने यह सब कुछ संक्षेप से लिखा है। और जो जो हाल मिलता जायगा लिखता रहूँगा।

—नेमचंद गांधी

१६-८-३८. धाराशिव (उस्मानाबाद)

निजाम राज्य

श्री नेमचंद बालचंद गांधी उस्मानाबाद जिलेके प्रसिद्ध धनी मानी वकील हैं। आप दिगम्बर जैन हैं। आपने उस्मानाबाद में एक सुन्दर जैन मंदिर बनवाया है। आप धार्मिक प्रवृत्ति के पुरुष हैं। जैन ग्रंथों का अच्छा व्यासंग रखते हैं। संस्कृत का उत्तम ज्ञान है। पत्र-व्यवहार संस्कृत में भी करते हैं।

—नरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ

हमारा पत्र-व्यवहार

हमको अपने पत्रव्यवहार को सुरक्षित रखने का पूरा पूरा ध्यान रहा। सन १६१६ तक तो इस कार्य को हम पूर्णरूप से निभा सके। प्रसिद्ध प्रसिद्ध दैनिक, साप्ताहिक समाचारपत्रों के लेख और कतरनों का संग्रह हम रखते रहे। इष्टमित्र, बंधु-बांधवों के पत्रों के ढेर के ढेर लग गये। दुर्दैव से हमारी अनुपस्थिति में न जाने कहाँ गये। पीछे पता चला कि हमारे यहाँ तलाशी होने की अफवाह थी इसलिए हमारे स्व० गुरु महाराज ने बवाल टालने के लिए उन सबको भस्मसात् करा दिया।

हमको इस बात का बहुत दुःख हुआ, तबसे अखबारों की फाइल रखने का, पत्रों को जमा रखने का व्यसन जाता रहा। आज वह सब पत्र-व्यवहार विद्यमान रहता तो मैं वाचकों को प्रचुर मात्रा में मनोरंजन की सामग्री दे सकता—फिर भी दो-तीन बार हमने यत्न किया कि इस प्रकार की सामग्री रक्खें, पर जटिल राजनैतिक जीवन ने विवश कर दिया कि इस प्रकार का संग्रह ठीक नहीं।

प्रायः भारतवर्ष के प्रसिद्ध दैनिक, साप्ताहिक, मासिक पत्र हमारे पास आते थे। मरहटी का केसरी, ज्ञानप्रकाश, काल, भाला आदि पत्र आते रहे। अंगरेजी समाचार पत्रों में अमृत बाजार पत्रिका (कलकत्ता), आर्यपत्रिका (लाहोर), लीडर (प्रयाग), इण्डीपेण्डेण्ट (प्रयाग) आदि आते रहे। टाइम्स ऑफ इण्डिया का साप्ताहिक संस्करण आता रहा।

बम्बई के 'विवधज्ञानविस्तार' "इन्दुप्रकाश" मनोरंजन आदि से हमको बहुत लाभ पहुँचा-हमारे पिता जी "अमृत बाजार पत्रिका" के बड़े भक्त थे। वे कहते थे कि ऐसा अच्छा अंग्रेजी समाचार पत्र भारतवर्ष भर में नहीं मिलेगा। है तो देशी पर अंग्रेज सम्पादकों के मुकाबले का।

जब पूज्य पिता जी का स्वर्गवास हुआ तब उनकी लिखी हुई पचासों डायरियाँ थीं। पीछे छोटे भाई की अनवधानता और नौकरों की बेपरवाही के कारण उनका क्या हुआ, पता नहीं चला। एक डायरी भी हाथ नहीं लगी।

हमारा प्रथम हिन्दी लेख

जब हम लाहोर में नववीं श्रेणी में पढ़ते थे तब लाहोर के वैदिक पुस्तकालय में आर्यावर्त नामक एक छोटासा साप्ताहिक पत्र आता था। उसमें 'मांस-भक्षण' विषय में किसी ने कई प्रश्न किये थे। उन प्रश्नों के उत्तर में मैंने भी एक छोटासा लेख भेज दिया था। उस समय स्व० पण्डित रुद्रदत्तशर्मा संपादकाचार्य उसके सम्पादक थे। उन्होंने मेरा लेख छाप दिया। जब वह लेख आया तब हम अपने लेख को पढ़ २ कर अत्यन्त प्रसन्न हुए। उस लेख को हमने पचास बार पढ़ा होगा। पचासों मित्रों को भी दिखलाया होगा, बालक ही जो थे। जब बड़े हुए तब धीरे धीरे अन्य पत्रों में लेख आने लगे। अंग्रेजी, हिन्दी आदि के समाचार पत्रों में थोड़ा २ लिखने लगे। हिन्दी लेखन की स्फूर्ति हमको विहार के आर्यावर्त से ही मिली। जिन समाचार पत्रों में हमारे लेख छपते रहे हैं उनकी सूची इस प्रकार है—

आर्यमित्र आगरा, भारतसुदशा-प्रवर्तक फर्रुखाबाद, कर्मवीर खण्डवा, स्वराज्य खण्डवा, वेंकटेश्वर समाचार बम्बई, आज काशी, स्वतन्त्र कलकत्ता, विश्वमित्र कलकत्ता, वर्तमान कानपुर, देश पटना, स्वदेश गोरखपुर, भारत प्रयाग, विद्यार्थी प्रयाग, अभ्युदय प्रयाग, हिन्दी प्रचारक मद्रास, अर्जुन देहली, हिन्दुस्थान न्यू देहली, विश्वमित्र न्यू देलही, हिन्दी मिलाप लाहोर, आर्यमार्तण्ड अजमेर, आर्यसेवक नागपुर, प्रकाश लाहोर, आर्य गजट लाहोर, आर्यवीर लाहोर, जागरण काशी, भारतमित्र कलकत्ता, मतवाला कलकत्ता, हिन्दूपंच कलकत्ता, गढ़वाली देहरादून, हंस काशी, सरस्वती प्रयाग, देशदूत प्रयाग,

सुधा लखनऊ, माधुरी लखनऊ, कल्याण गोरखपुर—इस समय सब पत्रों का नाम आना भी कठिन कार्य है—

सम्पादक

श्री पं० पद्मसिंहशर्मा के सम्पादनकाल में हम मासिक "भारतोदय" के सहकारी सम्पादक रहे। जब वह साप्ताहिक हो गया तब पं० हरिशंकरशर्मा कविरत्न के साथ सहकारी सम्पादक रहे फिर हम ही उसके सम्पादक हो गये। फिर श्री पं० शंकरदत्तशर्मा एम्० एल० ए० द्वारा प्रवर्तित मुरादाबाद के प्रसिद्ध मासिक पत्र "शंकर" का सम्पादन हम ही करते रहे। "भारतोदय" तथा "शंकर" ने आर्यजगत् में बड़ा नाम पाया—

हमारा शिष्य-संप्रदाय

इस जीवन में पचासों सैकड़ों छात्रों को पढ़ाने का, शिक्षा-दीक्षा देने का योगायोग आया होगा पर—

यत्करोमि यदश्नामि।
यज्जुहोमि ददामि यत्॥
यत्तपस्यामि कौन्तेय।
तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥
शुभाशुभैः फलैरेवं।
मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः॥

इस गीता वाक्य का अनुसरण करके हम शिक्षित, दीक्षित छात्रों को बड़े दरबार में अर्थात् बड़े गुरुओं को समर्पण करते रहे इसलिये हम सदा प्रसन्न रहते रहे हैं—

हमने अपने जीवनकाल में ही अपने पूज्य गुरुजनों के ऋण से उऋण होने का भरसक प्रयत्न किया है। वैसे तो हमारा शिष्य-सम्प्रदाय भारत भर में फैला हुआ है और है संख्या में न जाने कितना।

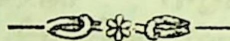
जिनको हम गुरु मानते रहे हैं, जिनके चरणों में बैठकर हमने चार अक्षर सीखे हैं और अब सबके सब स्वर्ग को सुशोभित कर रहे हैं, उन गुरुओं का अभी कितना ऋणानुबन्ध हैं इसको देवदेवेश जगत्पिता के अतिरिक्त और कौन जान सकता है। हमको प्रसन्नता है कि हम अपने गुरुओं के सदैव कृतज्ञ रहे हैं। एक वार भी ऐसा मौका नहीं आया कि जिसमें हमने मन-वचन-कर्म से द्रोह किया हो। इसलिये हमारे गुरुजन हम पर सदैव कृपादृष्टि रखते रहे हैं। इनकी शिष्यवत्सलता की बात लिखने बैठें तो एक पुस्तक ही लिखनी पड़ेगी। जबसे हमने अंग्रेजी छोड़ी और संस्कृत विद्या की ओर झुके हैं, आज ४२ वर्ष होते हैं, तब से हम देखते आ रहे हैं कि नवयुग का प्रभाव संस्कृत के सरलप्रकृति गुरु

और छात्रजनों पर भी पड़ता जा रहा है। उस समय के वे गुरुशिष्यभाव, वह गुरुभक्ति, वह शिष्य-वत्सलता, वह धारणा, वह ध्यान, वह निश्चिन्तता अब कहाँ देखने को मिलती है।

उत्तरोत्तर इन गुरु-शिष्यगुणों का ह्रास होता जा रहा है। न तो गुरुजन ही निश्चिन्त होकर पढ़ाते हैं। अब तो जीविका का प्रश्न ही जटिल रूप में सामने आ खड़ा है। वह प्राचीन "निष्कारण-धर्म" अर्थात् केवल ज्ञानार्जन अथवा ज्ञानसंपादन के लिये ही अध्ययन-अध्यापन करने की बात जाती रही। पहले गुरु व शिष्य पुण्य समझकर पढाते थे और पढते थे। अब तो इनका सब परिश्रम "दृष्ट" के लिए है। 'अदृष्ट' की महिमा जाती रही।

छात्रजनों में पल्लवग्राही पाण्डित्य आ गया है। प्राचीन समय के से एक एक शास्त्र में पारंगत बनने का, संस्कृत और संस्कृति की रक्षा का अब उतना ध्यान कहाँ? यदि पुरातन गुरुपरम्परा ने शास्त्रों की रक्षा न की होती तो आज वेदशास्त्रों के दर्शन भी सुदुर्लभ हो जाते। उन पुरातन गुरुओं के गुरुओं के और उनके भी गुरुओं के हम पर अनंत उपकार हैं। ऋषिऋण की महत्ता को समझकर यदि वेदशास्त्रों का स्वाध्याय-सूत्र चलता रहा तो वेदवाणी तथा देववाणी तेजस्विनी हो सकेगी। गुरुशिष्यजन पुरातन शान्तिपाठ को भूल गये। वह शान्तिपाठ यह है—

सह नाववतु, सह 'नौ' भुनक्तु,
सह 'वीर्यं' करवावहै।
'तेजस्वि' नावधीतमस्तु,
मा विद्विषावहै॥



हमारा साहित्यिक क्षेत्र

हम देहली साहित्य-सम्मेलन से ही साहित्यिक क्षेत्र में आये हैं। अब बीस वर्ष हो रहे हैं। उसी अवसर पर हमने देहरादून की ओर से निमन्त्रण दिया था। स्व० श्री० सेठ जमनालाल बजाज ने निमन्त्रण स्वीकार कराने में बड़ी सहायता दी। उस वर्ष सम्मेलन में श्रीमन्त सयाजीराव गायकवाड भी पधारे थे, आपका एक छोटासा भाषण भी हुआ था। देहरादून में जो हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का समारोह हुआ वह देखने योग्य था। हम ही उसके स्वागताध्यक्ष थे। श्री स्व० माधवराव सप्रे सभापति थे। वृन्दावन के स्व० श्री राधाचरण गोस्वामी सभापति चुने गये थे पर वे न आ सके। श्री १०८ महन्त लक्ष्मणदास जी महाराज, श्री महन्त परशुराम जी भरतमन्दिर हृषीकेश, महंत ओंकारदास आदि ने बड़ी सहायता की। श्री नाभानरेश महाराज प्रद्युम्नसिंह प्रतिदिन सम्मेलन में पधारते रहे। कवि-सम्मेलन, कविदरबार, नाटक आदि सभी देखने योग्य हुए। दश दश सहस्र दर्शकों की भीड़ रहती रही। भारतवर्ष भर के प्रसिद्ध साहित्यिक पधारे थे। तब से हम प्रायः प्रतिवर्ष हिन्दी साहित्य-सम्मेलनों के समारोहों में जाते रहे हैं। वृन्दावन साहित्य-सम्मेलन के झगड़े को हमने ही निबटाया था। भरतपुर में

श्री स्व० कविसम्राट् रवीन्द्रनाथ टगोर भी पधारे थे। हम वर्षों हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की स्थायी समिति के सदस्य रहे। १९९३ संवत् में नागपुर में दर्शनपरिषद् के सभापति रहे—

महात्मा मुन्शीराम

आप पहिले जालंधर के श्री ला० मुन्शीराम लीडर थे, फिर आर्यसमाज की महात्मा पार्टी के नेता होने के कारण महात्मा मुन्शीराम हुए, फिर गुरुकुल कांगड़ी को छोड़ कर जब संन्यास लिया तब स्वा० श्रद्धानन्द बने। हमने सबसे पहले सन् १८९४ नवम्बर मास के अन्तिम सप्ताह में लाहोर में वच्छोवाली समाज के उत्सव पर देखा था। लाहोर में हम पाँच वर्ष रहे तब मास में एक वार तो आपके व्याख्यान सुनने का अवसर मिल ही जाता था। श्री पं० लेखराम जी के व्याख्यान भी प्रायः हुआ करते थे। हम आर्य विद्यार्थी आश्रम नामक बोर्डिङ्ग में रहते थे।

महात्मा मुन्शीराम, पं० लेखराम वहाँ प्रायः आया जाया करते थे। पं० रामभजदत्त चौधरी ने तो एल्० एल्० बी० की तैयारी हमारे बोर्डिङ्ग में रह कर ही की थी। १८९८ के अन्त में हम वैदिक आश्रम जालंधर में पहुँचे तब मुन्शीराम जी उस आश्रम के अधिष्ठाता थे। वहाँ से जो सम्बन्ध छूटा वह फिर गुरुकुल कांगड़ी में जुडा—१९०६-१९०७ में हम एक वर्ष तक अध्यापक रहे। किसी श्रेणी को नवाह्निक, किसी को निरुक्त पढ़ाते थे। १९०७ में हमने कांगड़ी छोड़ा—फिर हम महाविद्यालय ज्वालापुर में १९०८ में आये, बीच में एक वर्ष गुरुकुल फर्रुखाबाद के आचार्य रहे—

महाविद्यालय ज्वालापुर और गुरुकुल कांगड़ी में वर्षों तक बड़ा संघर्ष चला। इस तरह महात्मा मुन्शीराम जी के साथ रहने, समीप रहने, और विरोध करने के भी समय देखे। फिर वह भी समय देखा जब कि सब विरोध मिट गये और पहिले जैसा मेल-जोल हो गया--वह उनके अन्तिम दिन तक रहा। गुरुकुल कांगड़ी और महाविद्यालय के संघर्ष की राम कहानी बड़ी लम्बी रही है। स्व० प्रो० रामदेव ही इसके मुख्य कारण रहे। स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी, पं० भीमसेनशर्मा जी, पं० पद्मसिंहशर्मा जी महाविद्यालय आ बैठे इसलिये हम भी आ बैठे--विधाता का विधान ही ऐसा था। आज म० मुन्शीराम, प्रो० रामदेव, श्री स्वा० शुद्धबोध, पं० भीमसेन शर्मा, पं० पद्मसिंहशर्मा इस लोक में नहीं हैं। उस संघर्ष के समय का मैं एक ही व्यक्ति शेष हूँ। गुरुकुल कांगड़ी भी उस पार से इस पार आ गया, नहीं-नहीं ज्वालापुर में ही आ गया और अब महाविद्यालय और गुरुकुल दोनों के खेत परस्पर सटे हुए हैं—कौन जानता था कि कभी ऐसा अवसर भी आयेगा—

महात्मा मुन्शीराम के ज्येष्ठ सुपुत्र हरिश्चन्द्र एक वार विलायत क्या गये, फिर लौटे ही नहीं। पता नहीं किस लोक में हैं। इन्द्र 'अर्जुन' को दोनों हाथों से संभाले हुए इन्द्रप्रस्थ में रहते हैं। जयचन्द्र (पं० बाँसीराम का पुत्र) कहीं लाहोर में प्रोफेसर है। ये तीनों कांगड़ी में हमसे निरुक्त पढ़ते थे। उस समय के विश्वनाथ (वजीराबादी) वेदालंकार होकर कांगड़ी की सेवा में लगे रहे, अब वहाँ से भी पेन्शन लेकर घर गये हैं--

उस समय के कांगड़ी के छात्रों में से जिनके नाम अब जनता के सामने आये हैं वे तब छोटी छोटी श्रेणियों में पढ़ते थे—वे कहाँ हैं, क्या करते हैं, पता नहीं। हाँ उस समय के युधिष्ठिर आज के स्वा० व्रतानंद हैं, जो गुरुकुल चित्तौड़ को चला रहे हैं—

महात्मा मुन्शीराम जी और हमारे पिता स्व० रावसाहेब श्रीनिवासरावजी का प्रायः पत्रव्यवहार चलता रहता था–जब महात्मा मुन्शीराम और पं० गंगादत्तशास्त्री (स्वा० शुद्धबोधतीर्थ) में मतभेद हुआ और पं० गंगादत्तशास्त्री कांगड़ी छोड़कर चले आये तब उनके साथ म० मुन्शीरामजी का व्यवहार मुझे अच्छा नहीं जँचा इसलिए मैंने भी कांगड़ी छोड़ा। तब पूज्य पिताजी ने मुझे लिखा था कि "तुम कांगड़ी में ही रहो, म० मुन्शीरामजी के पास रहो" पर पिताजी को कांगड़ी के पूरे पूरे समाचार ज्ञात नहीं थे इसलिए मैंने पिताजी की बात नहीं मानी। यदि मान जाता तो यह आत्मकथा आज और ढंग से लिखी जाती या न लिखी जाती—विधाता का विधान ही जो ठहरा। उसको अन्यथा करने वाला कौन था?

महात्मा मुन्शीरामजी में दो बड़े गुण थे। एक यह कि वे समय की गति को खूब समझते थे, जब किसी कार्यक्षेत्र में कूदने का समय आता था, ठीक समय पर कूद पड़ते थे। दूसरा बड़ा गुण था कि अपने भक्तों का पूरा पूरा साथ दे देते थे, चाहे ऐसा करने में उनको कितना ही कष्ट क्यों न उठाना पड़े। तीसरा गुण यह था कि उद्देश्य की पूर्ति के लिये मुक्तहस्त से व्यय कर डालते थे, कृपण नहीं थे। ऐसे अनेक अवसर आये जब कि उन्होंने अपने भक्तों का पूरा २ साथ दिया और बहुत बदनाम भी हुए। एकवार तो उनको "दुखी दिल की पुरदर्द दास्ताँ" जैसी एक बड़ी पुस्तक आत्मरक्षा के लिये लिखनी पड़ी। इनके प्रतिस्पर्द्धियों में बड़े बड़े कार्यकर्ता, नेता थे पर वे इन को इसलिए परास्त न कर सके कि घर छोड़कर त्यागपूर्वक कार्य करने की हिम्मत उनमें न थी। महात्मा मुन्शीराम ने अपने अनेक पुराने साथियों का साथ इसलिए छोड़ा कि वे उनसे कुछ मतभेद रखते थे। सार्वजनिक जीवन में उन्होंने कई अपने साथियों को कुचल ही तो डाला, पर ये कभी भी सुखी नहीं रहे, काम भी करते गये और रात दिन लम्बी सांसें भी लेते रहे। गुरुकुल कांगड़ी भी उन्होंने दुखी होकर छोड़ा, संन्यास भी दुखी होकर लिया। संन्यास लेकर वे एक वार अपने पुराने मित्र स्वा० शुद्धबोधजी से मिलने ज्वालापुर आये तब उन्होंने सारी गाथा बतलायी कि किस प्रकार कृष्णपार्टी ने उनको दिक् किया। किस प्रकार रामदेव जी से तीव्र मतभेद हुआ। प्रसन्नता की यही बात थी कि स्वा० शुद्धबोधतीर्थ और महात्मा मुन्शीराम जी स्वा० श्रद्धानन्द के रूप में फिर मित्र के मित्र बन गये। हमने वे भी दृश्य देखे, यह भी देखे—नेताओं के पुण्य पाप दोनों देखे—

संस्थाएँ भी क्या हैं, एक झगड़ों का घर। धार्मिक कहलाने वाली संस्थाओं में भी अपने अपने बडप्पन के लिए अंगरेजी ढंग का पॉलिटिक्स चलता रहता है। वातावरण ऐसा दूषित हो जाता है कि कोई सौजन्य ही नहीं रहता। मित्र भी शत्रु बन जाते हैं, ये दुःखद दृश्य जिसने नहीं देखे वह बड़ा भाग्यशाली पुरुष समझिए। पहिले कुछ लोग सद्भाव से काम करने लगते हैं, कुछ वर्षों के पश्चात् स्वार्थवश या अन्य किसी रजोगुण के कारण उनमें मतभेद हो जाता है, फिर फूटकर दो टुकड़े

हो जाते हैं, एक टुकड़ा किसी और दल से और दूसरा टुकड़ा दूसरे किसी दल से मिल जाता है। फिर कई वर्षों तक उनमें भी संघर्ष चलता जाता है। इसी प्रकार शक्ति का ह्रास होता रहता है—

पहिले आर्यसमाज एक ही था
|
फिर महात्मा दल और कलचर्ड दल बना।
|
फिर प्रतिनिधि और आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि दल हुए।
|
फिर गुरुकुल और कॉलेज पार्टी कहलाने लगे।
|
उनमें भी दल चल पड़े।

हम सब गुरुकुल कांगड़ी में एक थे, फिर हम लोग महाविद्यालय में आ बैठे। उधर गुजरानवाला (पंजाब में) एक और गुरुकुल चला—कोई संस्था अपने पहले डगर पर उसी रूप में स्थिर न रह सकी। यही अच्छी बात रही कि बहुत से दल हुए पर जो जहाँ पहुँचा काम करता ही गया—

पता नहीं संस्थाओं कोय ही अभिशाप है कि जो किसी कार्य को प्रारम्भ करेंगे वे अधिक वर्ष एक साथ न रह सकेंगे--

पूने में लोकमान्य तिलक, गोखले आदि न्यू इंगलिश स्कूल में साथ काम करते रहे। ग्यारह वर्ष पश्चात् उनमें सरकारी ग्रैण्ट लेने पर मतभेद हुआ। तिलक अलग हुए, उनका 'केसरी' निकलने लगा। कट्टर और सुधारक दो दल बने, नरम और गरम दो दल हुए। एक के नेता तिलक दूसरे के गोखले हुए। यही नेतृत्व कांग्रेस में गया, वहाँ भी दो दल हुए। वहाँ दोनों मिले, भिड़े, फिर पृथक् हुए। सार्वजनिक जीवन में जो इस प्रकार के संयोग-वियोग के झोंके सहने को तैयार न हों या सहने की शक्ति न रखते हों तो उनको कार्यक्षेत्र में न उतरना चाहिये। आनन्द से रहना हो तो किसी एक दल के हो कर रहना और उसके साथ बहते रहना चाहिए। सबसे अच्छा वह रहेगा जो अपने काम से काम रक्खे और किसी झंझट में न पड़े।

हम लोग महाविद्यालय में आये पर क्या यहाँ सुखपूर्वक बैठ सके। पहिले पाँच वर्ष तो काम बिना किसी झंझट के चलता रहा। जैसे २ संस्था की ख्याति बढ़ती गई वैसे २ कमेटी में बाहर के लोग आने लगे, सभा के कार्य में भाग लेने लगे, पद के लिए झगड़ने लगे। हम लोगों में भी मतभेद होने लगे, भीतर मतभेद रहते भी हम लोगों ने आपसे में बहुत निभाया और लोक-हँसी नहीं होने दी। बड़ी लम्बी कहानी है।

महाविद्यालय के नियमोपनियम कुछ ऐसे ही थे, जिसने भी घुसना चाहा और जोर पकड़ा वही दल थोड़ी देर के लिये यहाँ का स्वामी बन गया। फिर दूसरे दल ने जोर बाँध कर उसको खदेड़ा,

फिर तीसरे ने उसको खदेड़ा अन्त में उसी समुदाय की जीत रही जो महाविद्यालय से सच्चा प्रेम रखते थे, जो उसके लिए कष्ट सहने को तैयार थे–इसलिये गरम हुए अथवा गरम किये कराये पर जो अपनी रोटियाँ उतारना चाहते थे, जो यह चाहते थे कि काम तो पण्डित-मण्डली करे, धन भी वही लाये और हम केवल अपना अधिकार जमा कर इनके सिर पर रहें, वे लोग साफ हारे, ऐसे हारे कि अब इधर मुख भी नहीं करते। इतने कलहों में से भी महाविद्यालय अपना सिर ऊपर करता गया यह किसी पुण्य का ही प्रताप समझिये और क्या कहा जा सकता है—

१६२० से १६३१ तक हम ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के मेम्बर होने के कारण प्रायः प्रत्येक प्रान्त के प्रत्येक मुख्य कांग्रेस कार्यकर्ता से परिचय हो गया था। प्रान्तीय (यू० पी०) कांग्रेस कमेटी के प्रमुख मेम्बरों का परिचय तो प्रान्तीय सम्बन्ध से पहिले ही हुआ था। नि० भा० हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के प्रमुख व्यक्ति तथा देश भर के हिन्दी साहित्यिकों से अच्छा घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया था। हम दो वर्ष हिन्दी सम्पादक-समिति के मन्त्री रहे इसलिये हिन्दी पत्रकारों से खूब मेल-जोल रहा। जब से होश सम्भाला है और हिन्दी लिखने का ढंग आ गया तब से प्रायः सभी हिन्दी पत्रों में सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक, राजनैतिक लेख जाते ही रहे हैं। प्रारम्भ में मुख्य क्षेत्र आर्यसमाज का रहा, विशेष कर शिक्षा-दीक्षा का, इसलिए इसके सभी कार्यकर्ताओं, नेताओं के सम्पर्क में आना अपरिहार्य था। इस कारण सनातन-धर्म के पण्डितों से भी परिचय हुआ—हमारा क्षेत्र १६१६ से धीरे धीरे व्यापक होता गया और एक ही क्षेत्र में पड़े रहने से अथवा कार्य करने से जो संकुचित बुद्धि हो जाती है, वह सर्वथा जाती रही। ईश्वर की कृपा से १८६४ में दक्षिणपथ से जो चले थे, फिर उत्तरापथ आकर, फिर समस्त भारत घूमकर अब तो समस्त भारतभूमि ही अपनी क्रीड़ास्थली बन गयी है—केवल आर्यसमाज के क्षेत्र में ही पड़े रहते तो आज १६४३ में जो आनन्द मिल रहा है वह कहाँ से मिलता।



* दिव्य पुरुष स्वामी श्रद्धानन्द *

[गुरुकुलपत्रिका श्रद्धानन्द-जन्म शताब्दी अङ्क अप्रैल सन् ५७ से उद्धृत]

यथा काष्ठं च काष्ठं च, समेयेतां महोदधौ ।
समेत्य च व्यपेयातां, तद्वत् भूतसमागमः ॥

(मनुः)

संसार में संयोग-वियोग लगे ही रहते हैं—जैसे नदी की धाराओं में, लकड़ियाँ बह-बह कर आतीं हैं, एक धारा में मिल जाती हैं, फिर कुछ काल एक साथ बह कर, फिर जल के धक्के के साथ पृथक् हो कर भिन्न दिशाओं में बहने लगती हैं, ऐसे ही होते हैं संसार में प्राणियों के संयोग और वियोग ।

यही बात सार्वजनिक जीवन में भी, चाहे वह सार्वजनिक जीवन किसी प्रकार का भी क्यों न हो—घटती रहती है । जिन्होंने किसी संस्था, सभा, सोसाइटी में काम किया है, वे कभी अन्त तक मिले नहीं रहे ।

गुरुकुल कांगड़ी की योजना जब पुस्तकरूप में तैयार हुई तब महात्मा मुन्शीराम, राय रलाराम (गुजरानवाला) जिन्होंने स्कीम को सुन्दर रूप में तैयार किया था) राय ठाकुरदत्त धवन, सब एक साथ थे । जब स्थान का प्रश्न आया, तब महात्मा मुन्शीराम हरिद्वार के पक्ष में रहे और उन्हीं की बात चली । बस हो गईं दो धाराएँ । जब गुरुकुल स्थापित हो गया और पूरे पाँच वर्ष होने न पाए थे कि गुरुकुल की पाठ्य-प्रणाली पर ही मतभेद चल पड़ा । रामदेव जी और महात्मा जी इस पक्ष में थे कि अंग्रेज़ी छठी श्रेणी से की जाए । आचार्य पं० गंगादत्त शास्त्री अड़ गए कि नवम श्रेणी से ही अंग्रेज़ी चलाई जाय, पहिले रखने से संस्कृत कमजोर पड़ जायगी, बस हो गईं दो धाराएँ । स्वर्गीय स्वामी दर्शनानन्द और महात्मा मुन्शीराम दोनों पंजाब की वच्छोवाली पार्टी के दो प्रबल स्तम्भ थे—पंजाब में रहे दोनों साथ रहे । मिलकर कल्चर्ड-पार्टी (महात्मा हंसराज की पार्टी) का कड़ा प्रतिरोध करते रहे, पर संयुक्त प्रान्त में आते ही, गुरुकुल सशुल्क हो कि निःशुल्क इस पर दो धाराएँ चलीं—सबसे पूर्व पंजाब में ही सब एक थे किन्तु डी० ए० वी० कालेज की व्यवस्था के विषय में उग्र मतभेद होकर, दो पृथक धाराएँ बह निकलीं—और आगे जाकर गुरुकुल पार्टी और कालेज पार्टी इस प्रकार दो बन गईं । आर्यसमाजें भी इन्हीं नामों से सम्बोधित होने लगीं ।

जब मैं पूने में पढ़ता था, डेक्कन एज्यूकेशन सोसाइटी के फरग्यूसन कालेज में लोकमान्य तिलक महामना गोखले, महामना गोपालराव आगरकर, सब एक साथ काम करते रहे, फिर सरकारी सहायता लेनी चाहिए कि नहीं, इसी बात पर मतभेद उठा । लो० तिलक सरकारी सहायता के विरुद्ध थे । गोखले दल प्रबल रहा—बस बह चलीं दो धाराएँ—फिर ये धाराएँ केसरी और सुधारक के रूपमें बह निकलीं । फिर ये ही धाराएँ कांग्रेस में नरम और गरम पार्टी के रूप में चल निकलीं ।

सारांश, संसार और सार्वजनिक जीवन का यही बनने–मिलकर बहने–और फिर बिछुड़ने का इतिहास है।

मैंने भी गत पचास वर्ष के सुदीर्घ सार्वजनिक जीवन काल में इस प्रकार मिलने, बिछुड़ने, पृथक् चलने, बहने का पर्याप्त अनुभव लिया है और इस प्रकार मिलन और बिछोह प्रतिदिन के भोजनादि आवश्यक कार्यों के सदृश जीवन के अंग बन गये हैं।

लाहोर में जब मैं विद्यार्थी आश्रम में बोर्डर था तब महात्मा मुन्शीराम मेरे संरक्षक थे। जब मैं अंगरेजी छोड़कर जालंधर के वैदिक–आश्रम (आर्य प्र० नि० सभा द्वारा स्थापित) में आया तब म० मुन्शीराम हमारे आश्रम के अधिष्ठाता थे। जब मैं (१६०६–१६०७) में गुरुकुल कांगड़ी में गुरुकुल की ११ वीं, ६ वीं और ७ वीं श्रेणी को पढ़ाता था, तब ये हमारे मुख्याधिष्ठाता रहे। जब हमने आचार्य पं० गंगादत्त शास्त्री के साथ गुरुकुल छोड़ा और महाविद्यालय–ज्वालापुर में बैठे तब हम लोग परस्पर विरोधी रूप में हो गये। जब महात्मा जी अमृतसर काँग्रेस के स्वागताध्यक्ष बने, तब हम भी काँग्रेस के डेलीगेट के रूप में पहुँचे थे—तब फिर धारा मिल गई। इस प्रकार हमारा महात्मा जी से विभिन्न रूप में सम्बन्ध और संपर्क रहा।

और आज इतने अनुभव के पश्चात् हम स्पष्ट, अधिकृत लेखनी से लिख सकते हैं कि महात्मा मुन्शीराम जी के पश्चात् उन जैसा नेता आर्यसमाज में हुआ ही नहीं। स्व० लाला लाजपतराय थे, पर वे राजनीति में ही अन्त तक रहे। महात्मा हंसराज थे, पर उनका मुख्य क्षेत्र शिक्षा ही रहा। महात्मा मुन्शीराम, धर्म, शिक्षा, राजनीति, हरिजनोद्धार, शुद्धि, हिन्दी-प्रचार आदि आन्दोलनों में व्यापक रहे। उन्होंने सबसे पहिले गुरुकुल की स्थापना की (सन् १६०२ में)। सबसे पहिले छाती खोलकर गुरखा पलटन की संगीनों के आगे डटकर खड़े होने वाले वे ही वीर थे—(दिल्ली में)। वे ही सबसे प्रथम थे, जिन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिये दिल्ली की जामा मस्जिद की व्यास पीठ पर (जहाँ आजतक कोई हिन्दू खड़ा न हो सका था) खड़े होकर महानाद किया।

व्यापक शुद्धि-आन्दोलन में सब से प्रथम कूद कर मार्गदर्शक बनने वाले महात्मा जी ही थे। इस पर महात्मा गान्धी ने इनके विरुद्ध कुछ लिख दिया था, तब मुझे याद है, महात्मा मुन्शीराम आवेश में आकर बोले थे कि जहाँ जीवन में इतने संघर्ष किये, देखे, सहे, वहाँ यह एक और संघर्ष सही। ये ही थे जिन्होंने अपने उर्दू पत्र "सद्धर्म प्रचारक" को हिन्दी में किया। इस प्रकार किसी भी आन्दोलन अथवा सार्वजनिक कार्यों में अग्रसर ही रहते थे, पहल करते थे, निडर होकर कूदते थे कार्य क्षेत्र में।

इसलिए संक्षेप में उनके विषय में हम दो शब्दों में लिख सकते हैं कि आर्यसमाज में सब कामों में सबसे पहिले रहने वाला, सब क्षेत्रों में धकापेल करने वाला यदि कोई व्यक्ति नेता हुआ है तो वे महात्मा मुन्शीराम ही थे।

आज आर्यसमाज में कोई साहसी नेता दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है, इसी लिये सिसक रहा है, हिचक रहा है, विचल रहा है।

स्वामी श्रद्धानन्द स्वभाव से सरल व्यक्ति थे किन्तु परिस्थितियों ने उनको योद्धा बना दिया था। जो उनके विरोध में गया, वह उनके आगे टिक न सका। स्वामी श्रद्धानन्द समझौता नाम की वस्तु जानते ही नहीं थे, इसी लिये उनके संपर्क में आने वाले सहयोगी, सहकारी अथवा अनुयायियों की कभी-कभी विचित्र दशा हो जाती थी। वे जिसको एक बार अपना कह देते थे उसका, निन्दा सहकर भी पूरा पूरा साथ देते थे, जिसको स्वोद्देश्य पूर्ति में बाधक समझते थे, वह कितना ही प्रिय हो, उस को छोड़ देते थे। उनके स्वभाव का चित्रण करना कठिन कार्य है। उनमें ऐसे अनेक विरोधी गुण थे जो पर्याय से उभरते रहते थे और अपना काम कर जाते थे।

आर्यसमाज में वे धार्मिक वृत्ति के पुरुष माने गए। अन्य क्षेत्रों में अवसरवादी कहलाये गए और जब वे राजनीति-क्षेत्र में कूदे तो लोगों के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा।

हमारे पिता जी रावसाहेब श्रीनिवासराव स्वामी जी को उच्चकोटि का राजनैतिक पुरुष समझते रहे। एक बार उन्होंने मुझे लिखा था कि—तुम्हें महात्मा मुन्शीराम जैसे नीति-निपुण नेता के पास रहना चाहिए। इसलिए मेरी राय में तुम गुरुकुल में उन्हीं के पास रहो, उन्हीं के नीचे काम करते रहो, तुम्हें बड़ा लाभ होगा।"—इत्यादि। महात्मा मुन्शीराम भी चाहते थे कि मैं गुरुकुल कांगड़ी में ही आजीवन काम करता रहूँ पर यह तो न हो सका, विधाता का विधान दूसरा ही था।

महात्मा मुन्शीराम अथवा स्वामी श्रद्धानन्द जी को मैंने अति समीप से देखा, उनके नीचे काम करके देखा, अति दूर से देखा, साथ रहकर देखा, विरोध में रहकर देखा, और मुझे यह लिखते कोई संकोच नहीं है कि महात्मा मुन्शीराम अथवा स्वामी श्रद्धानन्द अपने जैसे आप ही थे। जैसे बड़े थे, वैसा ही बड़ा काम कर गये। अन्त में अपने नाम अथवा गुणों के अनुरूप ही 'बड़ी मृत्यु' को प्राप्त कर अमर हो गये। आर्यसमाज! स्वामी श्रद्धानन्द के बिना आज तू निस्तेज-सा जँचता है।

—नरदेवशास्त्री

❀ आत्मिक स्वतन्त्रता ❀

न्यायकारी, सर्वशक्तिमान, सर्वनियन्ता परमेश्वर की शरण लो। यदि तुम देहरूपी कारागार से स्वतन्त्र होना चाहते हो तो उसी की स्तुति करो। उसी से बल के लिये प्रार्थना करो और अपने कर्मों को शुद्ध करते हुए और उसकी एक एक आज्ञा पालते हुए शनैः शनैः उसके समीप होते जावो। अर्थात् उसकी उपासना करो ताकि वे तुम्हारे समस्त दुःखों के बन्धनों को काट कर तुम्हें प्रत्येक बन्धन से स्वतन्त्र कर के अपने परमधाम का अधिकारी बना देवें। —स्वामी श्रद्धानन्द। धर्मोपदेश पृ० १३४।

समय समय पर

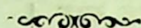
महाविद्यालय में जो प्रमुख नेता या विद्वान् आये उनकी नामावली

१—श्री महात्मा गान्धी, दो वार।
२—श्री मोतीलाल नेहरू, एक वार।
३—श्री लाला लाजपतराय, दो वार।
४—श्री कविराज गणनाथ सेन, एक वार।
५—श्री महामहोपाध्याय सतीशचन्द्र विद्याभूषण, एक वार।
६—श्री राजेद्रबाबू, दो वार।
७—श्री महामहोपाध्याय पं० गिरधरशर्मा, कई वार।
८—श्री सत्यमूर्ति, एक वार।
९—श्री सन्तानम्, एक वार।
१०—श्री १००८ भारती कृष्णतीर्थ गोवर्द्धनमठ, कई वार।
११—श्री महामना मालवीय, कई वार।
१२—श्री महात्मा हंसराज, कई वार।
१३—श्री चौ० रामभजदत्त, दो वार। (श्रीमती सरलादेवी सहित)
१४—श्री सर देवधर (पूना), एक वार। (भारतसेवक समिति पूना)
१५—श्री सर सीताराम (मेरठ), कई वार।
१६—श्री सर सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, एक वार।
१७—श्री पं० रमाकान्त मालवीय, एक वार।
१८—श्री पं० जवाहरलाल नेहरू, एक वार।
१९—श्रीमती विजयलक्ष्मी, एक वार।
२०—श्री महामहोपाध्याय जयदेवशास्त्री, एक वार।
२१—श्री श्रीकृष्णमाचार्य मद्रास, एक वार।
२२—श्री काका कालेलकर (गुजरात), एक वार।
२३—श्री यादवजी त्रिविक्रमजी (बम्बई), एक वार।

२४—श्री घनश्यामसिंह गुप्त एम्० एल० ए० (सी० पी०), एक वार ।
२५—श्री महात्मा मुन्शीराम, दो वार ।
२६—श्री पं० नेकीरामशर्मा (भिवानी)
२७—श्री गंगाप्रसादवर्मा (लखनऊ)
२८—श्री डॉ० मुञ्जे (नागपुर)
२९—श्री गोविन्दवल्लभपन्त (नैनीताल), कई वार ।
३०—श्री बदरीदत्त पाण्डे (अल्मोड़ा), कई वार ।
३१—श्री हरगोविन्दपन्त (राणीखेत) कई वार ।
३२—श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी (२ मास ठहरे)
३३—महात्मा पं० भगवानदीन (लखीमपुर)
३४—श्री पं० तुलसीराम जी, सामवेदभाष्यकार-मेरठ
३५—श्री पं० आर्यमुनि जी (पंजाब)
३६—श्री पं० देवदत्तशास्त्री जी (कासगंज-एटा)
३७—श्री पं० सीतारामशास्त्री (रावलपिण्डी)
३८—श्री पं० नन्दकिशोरदेवशर्मा (भोला-शाहजहाँपुर)
३९—महामहोपाध्याय श्री पं० अम्बादासशास्त्री (काशी)
४०—महामहोपाध्याय श्री पं० शिवदत्तजी शास्त्री (जयपुर)
४१—श्री गुरुवर काशीनाथशास्त्री जी (छाता-बलिया) छह वर्ष महाविद्यालय में रह गये ।
४२—भाष्याचार्य पं० हरनामदत्तजी (१॥ वर्ष रह गये)
४३—श्री कविवर मैथिलीशरणगुप्त (चिरगाँव-झाँसी)
४४—कविसम्राट् श्री पं० नाथूरामशंकरशर्मा (हरदुआगंज)
४५—श्री मेहता जैमिनि (स्वामी ज्ञानानन्द)
४६—श्रीमन्महाराजाधिराज शाहपुराधीश नाहरसिंह जी ।
४७— " " उम्मेदसिंह जी ।
४८—श्री संस्कृत कमीशन भारत सरकार ।
४९—श्री पं० अमरनाथ झा वाइस चैन्सलर प्रयाग विश्वविद्यालय ।
५०—श्री बा० श्रीप्रकाश जी एम्० एल्० सी० (काशी)
५१—श्री कृपलानी जी " पी० (प्रधानमन्त्री ऑ० ई० का० क०)
५२—श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन ।
५३—श्री के० एम्० मुन्शी (राज्यपाल)
५४—श्री डॉ० देशमुख (भू० पू० वित्तमन्त्री भारत सरकार)



जो जीवनकाल में आड़े समय पर काम आये



१—स्व० श्री ठा० गोविंदसिंह जी मनसबदार, पातूर जि० अकोला (बरार)।

२—स्व० श्री बाबू प्रतापसिंह जी अहलूवालिया (होशियारपुर-पंजाब)।

३—स्व० श्री रायबहादुर घनानन्द जी खण्डूडी मालदार, (गढ़वाल)।

४—श्री पं० राधावल्लभ खण्डूडी मालदार, (गढ़वाल)—(ये पं० घनानन्द के छोटे भाई हैं)।

५—स्व० श्री केशवशरण डुबलिस रईस मवाना कलाँ, इन्होंने 'सचित्र शुद्धबोध' छपवा दिया और वर्षों मेरा खर्च उठाते रहे।

६—स्व० श्री ला० शिवचरणदास गुप्त भोगपुर-देहरादून-(इनके यहाँ हम तीन वर्ष रहे)।

७—श्री ला० कुन्दनलाल गुप्त भोगपुर-देहरादून, (ये शिवचरण जी के छोटे भाई हैं)।

८—श्री पं० भीमदत्त मालदार तलाई, थानों।

९—स्व० श्री पं० रामसहाय वैद्य मेरठ, (इन्होंने 'गीताविमर्श' छपवा दिया था)।

१०—स्व० श्री पं० निरंतरदेव वैद्य, देहरादून।

११—स्व० श्री पं० केदारनाथ जी शर्मा, बेलोन-नरौरा (बुलन्दशहर)।

१२—स्व० श्री ला० बैनीराम जी, बेलोन-नरौरा (बुलन्दशहर)।

१३—स्व० श्री पं० शालिग्राम जी शर्मा, बेलोन-नरौरा (बुलन्दशहर)।

१४—स्व० श्री पं० राजाराम शर्मा, चूहड़पुर-देहरादून।

१५—स्व० श्री ला० काशीराम जी, देहरादून।

१६—स्व० श्री सेठ मुरलीधर, (टिहरी) ये ४० वर्ष से इधर ही रहते थे—ये कई वर्षतक मेरा व्यय उठाते रहे।

१७—श्री नेमचन्द वालचन्द गाँधी, उस्मानाबाद (हैदराबाद दक्षिण)।

१८—श्री हीराचन्द अमीचन्द " " "

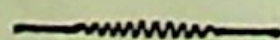
१९—श्री ला० विश्वम्भरनाथ आर्य, धामपुर जि० बिजनौर।

२०—स्व० श्री ला० काशीनाथ फिदा, जफरपुर-गंगोह जि० सहारनपुर।

२१—स्व० पं० शंकरदत्त शर्मा एम्० एल्० ए० (मुरादाबाद)।

२२—पं० लक्ष्मीकान्त मिश्र, शाहपुर टोल दैभत पो० लोहाट-दरभंगा (बिहार)।

२३—श्री ओमप्रकाश गुप्त c/o सीताराम सन्स लण्ढौर (मसूरी)।



हमारे ग्रन्थ

१—आर्यसमाज का इतिहास भाग १ ... ... ४०० पृष्ठ
२— ,, ,, ,, भाग २ ... . ,, ,,
३— ,, ,, ,, भाग ३ (जब हम जेल में थे तब पीछे गुम हो गया–अभी छपा नहीं था)

[भाग १ को स्व० पं० रामजीलालशर्मा हिन्दी प्रेस प्रयाग ने छापा था]
[भाग २ श्री फूलचन्द द्वादशश्रेणी प्रेस अलीगढ़ ने छापा था]

४—सचित्र शुद्धबोध ... ... २५० पृष्ठ
(श्री १०८ श्री स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी महाराज का जीवन-चरित्र)

*५—ऋग्वेदालोचन ... ... ३२५ पृष्ठ
[स्व० सत्यव्रतशर्मा शान्ति प्रेस आगरा ने छपाया]

*६—गीताविमर्श ... ... ३५० पृष्ठ
[स्व० पं० रामसहाय वैद्य मेरठ ने अपने खर्च से छपाया]

७—पत्रपुष्प भाग १ ... ... ५०० पृष्ठ
[श्री रामस्वरूपगुप्त अलीगढ़निवासी ने छपाया]

८—पत्रपुष्प भाग २ (तैयार है, छपा नहीं)

*९—राज्यशास्त्र (छपा नहीं, आधा तैयार है)।

*१०—देहरादून--गढ़वाल ... ... १२५ पृष्ठ

*११—१९२१ की धकापेल ... ... २०० पृष्ठ
[कारावास की राम कहानी]

१२—आत्मकथा......यह तैयार है।

१३—यज्ञ में पशुवध वेदविरुद्ध (छोटी सी पुस्तिका) हिन्दी और संस्कृत दोनों में। ४० पृष्ठ
लिखी श्री पं० लक्ष्मीशंकरमिश्र (हैदराबाद दक्षिण) ने, हमने सम्पादन किया।

१४—दयानन्द दिग्विजय (छोटा ट्रैक्ट)।
[हिन्दी और संस्कृत दोनों में]

१५—आनन्दबाग में आर्यदरबार।

१६—वैदिक स्वराज्य।

१७—अछूत--मीमांसा (छोटा ट्रैक्ट)

१८—कालेर गति (यह पिता जी ने मँगवा लिया था, फिर छपने नहीं दिया)।

---

*जेल में लिखे गये। १९२१ की धकापेल महात्मा गाँधी को बहुत पसन्द आई थी उन्होंने उसको गुजराती में छपवाने के लिये आदेश भी दिया था, पर छप नहीं सकी।

हमने जो कुछ लिखा वह कभी धन की लालसा से नहीं लिखा। केवल भीतर वाले की प्रेरणा हो रही थी इसलिये लिखा। आर्थिक दृष्टि से हम कभी घाटे में नहीं रहे किन्तु दूसरी वार कोई पुस्तक छप नहीं सकी। पुस्तकों की तैयारी का व्यय हमारे भक्तगण स्वयं ही पूर्व दे देते थे। इसलिए छपने के पश्चात् भी हम प्रकाशकों द्वारा भी लाभ उठाते ही रहे, वह केवल नियत पुस्तक संख्या द्वारा जो कि बाँटने में ही चली जाती थीं। आर्यसमाज का इतिहास भाग नं० १ ने आर्यजगत् में बड़ी खलबली डाली जो वर्षों तक चली। द्वितीय भाग भी छपा था, तृतीय भाग तैयार किया कराया पीछे कोई उठा ले गया, जब कि हम जेल में थे। ऋग्वेदालोचन का विद्वानों ने खूब स्वागत किया। गीताविमर्श मध्यम स्थिति के लोगों को बहुत पसन्द आया। हमारा पत्रपुष्प भाग १ सर्वसाधारण को बहुत रुचा--सचित्र-शुद्धबोध तो स्वामी जी के शिष्य-प्रशिष्यों में ही खप गया। लोगों ने बहुत मांगा पर दूसरी वार छपा ही नहीं। इसकी छपाई का समस्त व्यय स्व० केशवशरण गुप्त रईस मवाना ने दिया था।

जनता में खलबल उत्पन्न करने, जनता की आँखें खोलने, आर्यसमाज को संप्रदाय होने से बचाने की दृष्टि से हमारी लेखनी ने बहुत काम किया। जब से हिन्दी में लिखना प्रारम्भ किया तब से अब तक न जाने कितने लेखों ने जनता को संचालन करने का काम किया। सहस्रों छोटे मोटे लेख लिखे होंगे, पर वे सब अब मिलते हैं कहाँ। आत्मकथा तो स्वमनोरंजनार्थ ही लिखी गई है, पर वह कथा अब तक बढ़ती ही चली गई।

यतः हमने इतिहास में आर्यसमाज की स्थिति का यथारीति चित्रण किया था इसलिए समाज के स्वयंभू नेता हम पर अत्यन्त क्रुद्ध हुए थे। हमारे पुस्तकों के विरुद्ध घोर आन्दोलन किया, पर इन सब विरोधों का फल यह हुआ कि जनता ने बुद्धि से काम लेना प्रारम्भ किया और अब सब विद्वान् और जनता भी स्पष्टरूप में कहती है कि शास्त्री जी ने सच सच लिखा था, लाग-लपेट कुछ भी नहीं रक्खी थी।

हमारे लेख प्रायः सभी विषय में रहे, विवादात्मक, संवादात्मक, उद्बोधनात्मक, सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, धार्मिक, राजनैतिक, यात्रा-सम्बन्धी, देशभ्रमण, विशिष्टमहोत्सव-विवरण और वीरचरित्र इत्यादि विषय में रहे—

ग्रन्थ-लेखन कार्य में सफल असफल दोनों रहे। लेखादि में प्रायः सफल रहे-सफलता इस अंश में कि जनता जागृत होकर उठती रही, विद्वानों में खलबली मचती रही और जो लोग सिद्धान्तों के नाम पर उत्पात मचाते, फतवा देते रहे, वह सब प्रकार बन्द हो गये। जरा किसी ने किसी सिद्धान्त पर मत-भेद प्रकट किया कि बस उसके विरुद्ध घोषणा की जाती थी, उसको समाज से निकालने की धमकी दी जाती थी और कइयों को बलि भी दिया गया, पर हमको संतोष है कि हमारी लेखनी ने विचार-स्वातन्त्र्य का मार्ग बतला दिया और सिद्ध किया कि अब विचारभेद, मतभेद रखते हुए भी कोई विद्वान समाज में रह सकता है। जिन लोगों ने सबसे पहिले ववेला मचाया था वे अब स्वयं अपनी भूलों को अनुभव करते हैं, क्योंकि अब वे स्वयं अनेक विषयों में मतभेद रखते हैं—सारांश कट्टरपन्थी लोगों के दिन गये।

अब लोग सुख समाधान से अपने विचार प्रकट कर सकते हैं। आर्यसमाज की शिक्षा संस्थाओं द्वारा लालित-पालित-पोषित और शिक्षित स्नातक वर्ग स्वयं कट्टर नहीं हैं। इसलिए इस क्षेत्र में हमको कष्ट तो बहुत हुए पर सिद्धान्तों के ठेकेदारों का ठेका हमने तोड़ दिया। आर्यसमाज में जो बाबू संप्रदाय चल रहा था उस सम्प्रदाय का सर्वथा मूलोच्छेद हुआ, समाज बड़ी विपत्ति से बचा।

महाविद्यालय-ज्वालापुर के लिए

❀ दो शब्द ❀

स्वर्गीय श्री १०८ स्वामी शुद्धबोधतीर्थ जी कुलपति महाविद्यालय के शिष्य-प्रशिष्यों का कर्तव्य है कि वे महाविद्यालय को संभालते हुए ऐसा प्रयत्न करें कि जिससे महाविद्यालय अपने निर्दिष्ट पथ पर चलता जाय। उनकी अन्तिम इच्छाओं का ध्यान रक्खा जाय।

"इस महाविद्यालय में कभी भी किसी प्रकार का शुल्क न लगने पावे—"

वस्तुतः जनता के लिए प्राचीन निःशुल्क शिक्षा का काम एक अद्भुत आकर्षण है, जहाँ यह आकर्षण गया कि फिर महाविद्यालय में विशेषता ही क्या रहेगी—

महाविद्यालय के कार्यकर्ताओं में भी संसार को संतुष्ट करने की कुप्रवृत्ति चल पड़ी है। यह प्रवृत्ति किसी समय इसके उद्देश्य को नष्ट कर सकती है। यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि निःशुल्क शिक्षा के सिद्धान्त के कारण ही महाविद्यालय जीवित है। पूरी निःशुल्क शिक्षा रहेगी तो पूरी कामयाबी मिलेगी, अधूरी रहेगी तो अधूरी कामयाबी रहेगी-परमात्मा इस संस्था की रक्षा करे—

आर्यसमाज के लिये

❀ दो शब्द ❀

आर्यसामाज ने अपने प्रवतक के पश्चात् बहुत काम किया है किन्तु वह उसके महान् उद्देश्यों की दृष्टि से ऐसा ही है जैसे "दरिया में खसखस"। आर्यसमाज में तप और श्रद्धा का अभाव-सा है। इसमें जिस प्रकार भी त्यागी; तपस्वी जनों की अभिवृद्धि होगी उसी के अनुपात से इसके उद्देश्य सफल होते जायेंगे। अबतक तो उसका समस्त बल समाजसुधार (Social Reform), कुरीति निवारण, शिक्षा प्रचार में ही व्यय हुआ है। इसमें आध्यात्मिक तेज का अभाव है। अभी संचार ही नहीं होने पाया है। आध्यात्मिक शक्ति के बिना संसार समाज की ओर आकृष्ट नहीं हो सकता। आर्यसमाज के संन्यासियों ने इधर कभी ध्यान नहीं दिया। वे भी सांसारिक पुरुषों की भाँति लोकैषणा में फँसे हुए हैं, नहीं तो बहुत कार्य हो जाता।

आर्यसमाज की संस्थाएँ भी अपने मार्ग से च्युत हो रही हैं। इसके शिक्षणालय आर्यसमाज के लिए त्यागी-तपस्वी पुरुषों के तैयार करने के लिए होने चाहिये थे—प्राचीन पद्धति के शिक्षणालय भी नवीन पद्धति का आश्रय ले रहे हैं। समाज अपने व्यय से सैकड़ों नवीन पाश्चात्य प्रणाली की संस्थाएँ खड़ी कर चुका है। परमात्मा इस समाज की रक्षा करे जिसके द्वारा हिन्दू समाज तथा देश का इतना बड़ा कल्याण हो चुका है।

स्व-विषय में

❀ दो शब्द ❀

"स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः" इस तत्व को हम मानते हैं। प्रत्येक आत्मा अपने कर्मानुसार जगत् में आता है, कर्मों को करता है, कर्मफलों को भुगतता है और चला जाता है। कहाँ का हमारा जन्म (दक्षिणापथ का) और कहाँ हमारा कार्यक्षेत्र यह उत्तरापथ। जैसी शक्ति थी, जैसे साधन थे, जैसी परिस्थिति थी, जैसे कर्मबन्धन अथवा फल थे (अनेक संकट-परम्परा के होते हुए भी) तदनुरूप इस शरीर से बहुत कार्य हुआ। जितना भी कार्य हुआ उससे हमारी अन्तरात्मा सन्तुष्ट है। इसी सन्तोष, इसी प्रसन्नता के आश्रय से हम शेष दिन व्यतीत कर रहे हैं। यह सत्य है कि हम जैसा चाहते थे, हमारी जितनी और जैसी भी उमंगें थीं, उतना तो कार्य नहीं हो सका—पर संसार में आजतक किसकी सब इच्छाएँ सफल हुई हैं—भाग्यवान् हैं वे जिनकी सब कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। जितना चाहते थे उतना न हो सका, हाँ जो हो सकता था वह भी नहीं हुआ। मनुष्य के चाहने मात्र से क्या हो सकता है। ऊपर का अदृश्य हाथ जैसा चाहता है वैसा ही, उतना ही, होता है। मैं तो यही कहता हूँ कि —

स्थास्तुस्तिष्ठाम्यहं वशे (बलि)

वह भगवान जैसा रखता है, चलाता है, वैसा ही रहता हूँ। सर्वथा उसके वश में हूँ।

यह बलि का वचन सर्वथा सत्य है। अब हमको किसी बात की इच्छा नहीं है, किसी बात का पश्चात्ताप नहीं है। शेष जीवन शान्तिपूर्वक गुजरे, यही एक अभिलाषा है। इसकी पूर्ति भगवान् के हाथ है।

गुरुकुल सिकन्दराबाद के सहयोगी

१—श्री १०८ स्वा० दर्शनानंद सरस्वती।
२—श्री पं० मुरारिलाल शर्मा (सिकन्दराबाद)
३—श्री पं० शंकरदत्त शर्मा (मुरादाबाद)

४—श्री पं० गंगासहायजी शर्मा (देवटा)
५—श्री पं० राधेलाल शर्मा (पटवारी)
६—श्री पं० जमनादत्त शर्मा।
७—श्री पं० लखपतसिंह शर्मा।
८—श्री पं० शिवदयालसिंह शर्मा।
९—श्री ठा० गंगासहाय (महेवा)
१०—श्री पं० मोहनलाल शर्मा (देवटा)
११—श्री पं० मिश्रीलाल शर्मा (देवटा)
१२—श्री ठा० जयरामसिंह रईस (धूम)
१३—श्री ठा० पृथ्वीराजसिंह रईस (धूम)
१४—श्री ठा० हरबख्शसिंहजी (साबितगढ़)

अध्यापक

१—श्री पं० जीवारामशर्मा साहित्याचार्य (ताजपुरी)
२—श्री पं० श्यामलाल शर्मा (पहासू)
३—श्री पं० मधुसूदन झा व्याकरणाचार्य (महामहोपाध्याय पं० जयदेव झा के कनिष्ठ भ्राता)
४—श्री पं० नन्दलाल व्यास (धर्मकोट-पंजाब)
५—श्री पं० धनीरामशास्त्री (लुधियाना)

गुरुकुल फर्रुखाबाद के सहयोगी

१—श्री बाबू गलराज गोपाल गुप्त (फतेहगढ)
२—श्री बाबू रामदीनजी (फतेहगढ)
३—श्री बाबू सूरजप्रसाद जी (फर्रुखाबाद)
४—श्री पं० गणेशदत्तशर्मा संपादक भारतसुदशा-प्रवर्तक (फ०)
५—श्री चौबे रामदुलारेलाल एम० ए० एल्० एल्० बी० (फतेहगढ)
६—श्री चौ० हुक्मसिंह जी रईस (आंधई-बलदेव-मथुरा)
७—श्री स्वा० बालानन्द संन्यासी।
८—श्री महात्मा भगवानदीन (सभा के प्रधान थे)
९—श्री पं० महेशप्रसाद मिश्र (भगवानदीनजी के बड़े भ्राता) मुख्याधिष्ठाता थे।

अध्यापक

१—श्री पं० देवदत्त शास्त्री व्याकरणाचार्य।
२— ,, पं० पृथ्वीराज जी (स्वा० ब्रह्मानन्दतीर्थ आजमगढ़)
३— ,, पं० रामचन्द्र शर्मा।

संरक्षक

१—श्री हेतराम जी; फिर हितानन्द हो गये।

गुरुकुल कांगड़ी के सहयोगी

१—स्व० श्री महात्मा मुन्शीराम (मुख्याधिष्ठाता)
२—स्व० ,, रामदेवजी (आचार्य अंगरेजी विभाग)
३—श्री विनायक गणेश साठे एम्० ए० (बम्बई)
४—स्व० श्री मास्टर सियाराम एम्० ए० (फिर योगी सियाराम हुए)
५—स्व० ,, मास्टर गोवर्द्धन एम्० ए० (मुलतान)
६—स्व० ,, मास्टर रामगोपाल जी।
७—स्व० ,, डॉ० बालकृष्ण जी (राजाराम कॉलेज—कोल्हापुर)
८—डॉ० सुखदेवजी (देहली)

संस्कृत-विभाग

१—श्री गुरुवर पं० काशीनाथशास्त्री (दर्शनाचार्य)
२— ,, पं० गंगादत्तशास्त्री (आचार्य संस्कृत विभाग)
३— ,, पं० भीमसेनशर्मा साहित्याचार्य।
४— ,, पं० पद्मसिंह शर्मा साहित्याचार्य।
५— ,, पं० यागेश्वर शर्मा ज्योतिषाचार्य (कनखल)
६— ,, पं० विष्णुमित्र जी (राहों)।
७— ,, पं० रलारामशास्त्री।

भण्डारी

१—श्री शालग्रामजी, जालन्धर वाले।

महाविद्यालय ज्वालापुर के सहयोगी

१–स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी महाराज।
२–स्वा० भास्करानन्द तीर्थ जी।
३–श्री पं० पद्मसिंह शर्मा (नायक-नगला)
४–श्री पं० दिलीपदत्तोपाध्याय।
५–श्री पं० रामचन्द्र जी वैद्य (कनखल)
६–श्री मास्टर हरद्वारीसिंह जी (रुड़की)
७–श्री चौ० जयकृष्ण जी (अमृतसर)
८–श्री बाबू ज्योतिःस्वरूप जी वकील, देहरादून।
९–श्री पं० तुलसीराम जी सामवेद-भाष्यकार, मेरठ।
१०–श्री पं० रविशंकर शर्मा (स्वा० आनन्दबोधतीर्थ)
११–श्री स्वा० आनन्दप्रकाश तीर्थ (भरतपुर)
१२–श्री डॉ० शिवदत्त जी भिषगाचार्य (अमृतसर)
१३–श्री मास्टर विश्वम्भरदयाल बी. ए. एल. टी. (बिजनौर)
१४–श्री बाबू प्रतापसिंह जी (भैरोवाल-होशियारपुर)
१५–श्री चौ० राव मामराजसिंह जी रईस, शामली।
१६–श्री चौ० महाराजसिंह जी (मानकपुर)
१७–श्री चौ० अमीरसिंह जी (गढमीरपुर)
१८–श्री रायसाहब मथुरादास जी रईस, रुड़की।
१९–श्री ला० केवलकृष्ण जी (इमली-खेड़ा)
२०–श्री चौ. भागीरथलाल जी (महेवड)
२१–श्री ला. सीताराम जी अहार-बुलन्दशहर।
२२–श्री पं. रामस्वरूप जी अहार बुलन्दशहर।
२३–श्री चौ. रघुराजसिंह जी (पृथ्वीपुर, दारानगरगंज)
२४–श्री पं. शंकरदत्त शर्मा एम. एल. ए. मुरादाबाद।
२५–स्व. श्री बा. रामानन्द घोष (नौखाली-बंगाल)
२६–श्री स्वा. विवेकानन्द जी (नलहडा-रुड़की)

विशिष्ट महोपाध्याय

२७–श्री गुरुवर पं. काशीनाथशास्त्री (बलिया)
२८–श्री गुरुवर पं. हरनामदत्त जी भाष्याचार्य (चूरू)
२९–दर्शनशास्त्री श्री पं. नृसिंहदेवशास्त्री।

भूमिदाता

३०–श्री बा० सीताराम जी दरोगा, श्री बा. जगदम्बाप्रसाद [उनके भांजे]

राजनैतिक क्षेत्र के सहयोगी

१६२० से १६३१ तक हम ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के सदस्य रहे।

कई वर्ष तक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य रहे।

कई वार जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान तथा संचालक रहे—

१—श्री बा० बुलाकीराम बैरिस्टर
२— ,, ठा० चन्दनसिंह जी
३— ,, पं० देवरत्नशर्मा
४— ,, बा० उग्रसेन जी बैरिस्टर
५— ,, ला० हरप्रसाद जी रईस
६— ,, पं० मुकुन्दरामशर्मा--(चूहड़पूर)
७— ,, ला० शंकरलाल आढ़ती
८— ,, ला० उधोराम आढ़ती
९— ,, ला० मित्रसेन आढ़ती
१०— ,, ला० ज्योतिप्रसाद जी रईस
११— ,, ला० केदारनाथ जी आढ़ती
१२— ,, ला० कुन्दनलाल जी (भोगपुर)
१३— ,, दिनकरशर्मा एम० ए० एल्० एल्० बी०
१४— ,, बा० जयन्ती प्रसाद मुख्तयार
१५— ,, ठा० मनजीतसिंह जी एम्० एल० ए०
१६— ,, नारायणदास भार्गव (नारायण मुनि)
१७— ,, पं० नारायणदत्त डंगवाल (कौलागढ़)
१८— ,, ला० किशोरीलाल (मसूरी)
१९— ,, पं० द्वारकानाथ रैना वकील
२०— ,, चौ० बिहारीलाल जी एम्० एल्० ए०
२१— ,, फखरुद्दीन फारुखी, (रिस्पना)
२२— ,, ख्वाजा अब्दुल अजीज (काश्मीरी)
२३— ,, महावीर त्यागी एम्० एल्० ए०
२४— ,, हुलासवर्मा
२५— ,, रामस्वरूप नवकोटी (धर्मपुर)
२६— ,, चन्द्रमणि विद्यालंकार (भास्कर प्रेस)
२७— ,, पं० अमरनाथ वैद्यशास्त्री
२८—श्री बा० खुरशेदलाल एडवोकेट
२९— ,, दासबाबू वकील
३०— ,, हंसराज कक्कड़ वकील
३१— ,, धर्मदेवशास्त्री (कालसी)
३२— ,, विचारानन्द जी सरस्वती
३३—स्वामी सदानन्द जी (हृषीकेश)
३४— ,, केवलानन्द जी ,,
३५— ,, पं० दीपचन्द (कर्णपुर)
३६— ,, विवेकानन्द जी (ज्वालापुर)
३७—श्री सोमेन्द्र मुकर्जी (अजबपुर)
३८— ,, ब्र० हरिजीवनशर्मा (हृषीकेश)
३९— ,, शान्तिप्रपन्न बी. ए. ,,
४०— ,, पं० सीताराम वैद्य ,,
४१— ,, पं० माधोराम डोभाल (नागल)
४२— ,, पं० शीशराम जी शर्मा (कैरवाँ कर्णपुर)
४३— ,, ज्योतिःप्रसाद कप्तान (राजपुर)
४४— ,, ला० कुन्दनलाल (नालापानी)
४५— ,, सोमप्रकाश वकील (कालसी)
४६— ,, ला० सेवाराम (चूहड़पुर)
४७— ,, पं० ऋषिकुमार वैद्य (चूहड़पुर)
४८— ,, गोविंदराम भट्ट बैरिस्टर
४९— ,, मित्रसेन जैन वैद्य
५०— ,, रावत घनश्यामसिंह (अजबपुर)
५१— ,, ला० चण्डीप्रसाद जी
५२—श्रीमती शर्मदादेवी त्यागी
५३— ,, सरस्वतीदेवी सोनी
५४— ,, यशोदादेवी

५५—श्रीमती आशादेवी
५६— ,, रामलुभाईदेवी
५७—म० ज्वालाप्रसाद जी (डोईवाला)
५८— ,, ईश्वरचन्द्र ,,
५९— ,, कृष्णदत्त वैद्य ,,
६०—श्री श्यामलाल जी ,,
६१—सरदार बख्तावरसिंह जी (डोईवाला)
६२—पं० गणेशप्रसाद (बरकोट)
६३— ,, सुन्दरलाल (विधौली)
६४— ,, दर्शनलाल (धोरण)
६५— ,, महानन्द (डांडा-लखौंड)
६६— ,, ब्रजलाल फरासी (जाखन)
६७—ठा० मानसिंह जी ,,
६८— ,, हरनामसिंह जी (थेवा-मालदेवता)
६९— ,, लालसिंह (अस्थल)
७०—पं० निरंजनलाल अजित (नागल)
७१— ,, प्यारेलाल (रायपुर)
७२—श्री उत्तमसिंह (द्वारा)
७३— ,, खड्गबहादुर (आठ नं० ग्रैण्ट)
७४— ,, रीठासिंह (गढ़ी)
७५— ,, लाजपत पाण्डे (गोरखपुर)
७६— ,, भूमानन्द (टिहरी)
७७— ,, पं० देवदत्त जी (चूहड़पुर)
७८— ,, आर्यकिशोर जी गुप्त
७९— ,, लाला मोहरसिंह (थानों)
८०— ,, पण्डित जयदेवशर्मा (तलाई)
८१— ,, ,, श्रीरामशर्मा कवि (देहरादून)
८२ – श्री ठाकुर गुलाबसिंह (जोली)
८३— ,, पण्डित खेमचन्द ,,
८४— ,, ,, पन्नालाल ,,
८५— ,, हरिसिंह नेगी (भोगपुर)
८६— ,, बुधसिंह नेगी (गोविंदवाला)
८७— ,, पण्डित ज्योतिः स्वरूप (सारंगधरवाला)
८८—पं० गोविंदराम (गुजराडा)
८९—श्री भगवानदास मुलतानी (हृषीकेश)
९०— ,, सत्येन्द्र (बद्रीपुर)
९१— ,, बुद्धिप्रकाश फरासीसी (गुजराडा)
९२— ,, सूरतसिंह जी (पछवादून)
९३— ,, बलदेव सिंह ,,
९४— ,, झब्बीसिंह ,,
९५— ,, कलीराम जी (अजबपुर)
९६— चौधरी कलीराम (सहिया)
९७—श्री सेवकराम (लखवाड)
९८— ,, दर्शनलाल (चूहड़पुर)
९९— ,, पूरणचन्द ,,
१००—ठाकुर देवनारायणसिंह (असोढाद्वारा)
१०१—श्री सत्यप्रकाश शर्मा (समशेरगढ़)
१०२— ,, मा० मथुराप्रसाद जी
१०३— ,, सूरजकृपालु
१०४— ,, रामचन्द्र वेदी
१०५— ,, सुन्दरलाल (चौ० बिहारीलाल के भाई)
१०६— ,, ओम्प्रकाशगुप्त
१०७— ” जगदीश वैद्यशास्त्री, पीपलमंडी-देहरादून
१०८— ” शान्तिस्वरूप गुप्त वकील

गढ़वाल के सहयोगी

१—पं० कृपाराममिश्र 'मनहर', कोटद्वार
२— ,, मदनमोहन काला, चमराडा
३— ,, भोलादत्त चन्दौला, पौडी
४—श्री ठा० कोतवालसिंह जी, पौडी
५— ,, जगमोहनसिंह नेगी
६—श्री पं० सकलानन्द शास्त्री
७— ,, जोगेश्वर बहुखंडी
८— ,, मा० जगतसिंह, सिलेत
९— ,, हरिशर्मा, केदारगली
१०— ,, पं० बलदेवप्रसाद, कंडाखणी।

११—श्री प्रतापसिंह नेगी ।
१२— ,, भक्त दर्शनजी एम्. ए. ।
१३— ,, विष्णुसिंह जी, गूजडू ।
१४— ,, केसरसिंह जी, नौगाँव खाल ।
१५— ,, देवकीनन्दन ध्यानी ।
१६— ,, पं० रामप्रसाद नौटियाल ।
१७— ,, रघुवीरसिंह जी, धुराताल दुगड्डा ।
१८—ठा० जोधासिंह, पैडूलस्यूँ ।
१९—श्री चन्द्रसिंह रावत, पौडी ।
२०— ,, पं० हर्षमणि जी, कोट महादेव ।
२१— ,, चंद्रसिंह, गजरसैन ।
२२— ,, ठा० गोपालसिंह, उदयपुर ।
२३— ,, ठा० छवाणसिंह, उदयपुर ।
२४— ,, ठा० नयनसिंह, बूङ्गापट्टी ।

देहरादून की देवियों में

१—श्री सरस्वतीदेवी जी, (महिला आश्रम की अधिष्ठात्री)
२— ,, विद्यावती सेठ बी. ए. (महिला आश्रम संस्थापिका किसी समय कन्यागुरुकुल की आचार्या)
३— ,, विद्यावतीदेवी (म्युनिसिपल कमिश्नर)
४— ,, सत्यवतीदेवी (भू० पू० म्युनिसिपल कमिश्नर)
५— स्व० श्री लीलावती झाँवर (आचार्या कन्या महादेवी पाठशाला)
६—श्री सत्यवतीदेवी (श्री सेठ रामकिशोर की धर्मपत्नी)

कमायूँ

इसके अतिरिक्त कमायूँ के प्रसिद्ध प्रसिद्ध महानुभावों से हमारा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा—
१—श्री पं० गोविंदवल्लभपन्त-प्रधान मन्त्री लेजिस्लेटिव असेम्बली ।
२—श्री हरगोविंदपन्त एम्० एल्० ए० (रानीखेत)
३—श्री पं० बदरीदत्त जी पाण्डे एम्० एल्० सी० ।

आप तीनों महानुभावों की ज्योति सर्वत्र जगमगाती रही है । पं० हरगोविंदपन्त के कारण ही 'सल्ड' दूसरी बारदोली बना । श्री पानसिंह जी (चामी) आपका पुरुषार्थ अत्यन्त प्रशंसनीय है । पं० बद्रीदत्त पाण्डे स्फूर्ति के स्रोत हैं । श्री पं० गोविंदवल्लभपन्त को कमायूँ के रत्न समझिए । इसके अतिरिक्त १९४० के व्यक्तिगत सत्याग्रह के समय में सेण्ट्रल जेल बरेली में बीसियों होनहार व्यक्तियों के साथ रहने का अवसर मिला—

हरद्वार के सहयोगी

१—श्री पं० दीनदयालशास्त्री (गु० कु० कांगड़ी)
२—श्री हरिदत्त बहुगुणा एम्० ए० (कनखल)
३—श्री पं० रामचंद्रशर्मा वैद्यराज (कनखल)
४—श्री सरदार बलवन्तसिंह जी (हरिद्वार)
५—श्री ला० वेणीप्रसाद (कनखल)
६—श्री किशोरीदास वाजपेयी शास्त्री (कनखल)
७—श्री हीरावल्लभ त्रिपाठी (कनखल)
८—श्री त्रिलोकचन्द्र (हरिद्वार)
९—श्री रामभज (हरिद्वार)

हैदराबाद की चिट्ठी–पत्री

[नं० १]

सबसे एक ही प्रश्न

कहो क्या हाल है ? सत्याग्रह से कुछ लाभ हुआ ?

(१९४४)

मुझे निजी कार्यवश एकदम इधर आना पड़ा । ता० ३ मार्च को सायं देहरादून से चल पड़ा था। हैदराबाद सत्याग्रह के पश्चात् अभी इधर आना हुआ है इसलिए भिन्न भिन्न परिस्थितियों को देखने का अच्छा अवसर है। मुझसे जो कोई मिलने आता है उससे मेरा एक ही प्रश्न होता है कहिये क्या हाल है, हैदराबाद के सत्याग्रह के पश्चात् यहाँ के अधिकारियों का क्या रवैया रहा है । लोग इस प्रश्न का उत्तर भिन्न-भिन्न प्रकार से दे रहे हैं। उन सब उत्तरों का सारांश यही है कि—

उत्तर–१–यद्यपि इतना बड़ा सत्याग्रह हुआ पर उससे जितना लाभ होना चाहिए नहीं हुआ—

उत्तर–२–धार्मिक मामले में प्रायः अधिकारी वर्ग हस्तक्षेप नहीं करते। हिन्दू प्रजा को, कमसे कम यह दिखलाने का प्रयत्न किया जाता रहा है कि हम तुम्हारे धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करते।

उत्तर–३–अपने अपने यहाँ किसी बन्द अहाते में कोई सभा करनी हो तो किसी के पूछने की अथवा पूर्व से ही आज्ञा प्राप्त कर लेने की कोई आवश्यकता नहीं, हाँ चौड़े मैदान में कोई सभा करनी हो तो अधिकारीवर्ग की आज्ञा लेनी पड़ती है ।

उत्तर–४–यहाँ बरंगल में एक नई मस्जिद अब बन रही है, हमारे जलूस पहिले से निकलते रहे हैं। मस्जिद बनने पर अब कहा जाता है कि इसके सामने बाजा नहीं बजना चाहिए। मामला पहुँचा आला हजरत तक। उन्होंने लिखा कि मैं अपनी हिंदू और मुस्लिम प्रजा दोनों को खुश देखना चाहता हूँ, इसलिए हिन्दुओं के जलूस के हक़ को तसलीम करता हूँ, साथ ही हुक्म देता हूँ कि मस्जिद का दरवाजा इस तरह रक्खा जावे कि उसका मुहँ सड़क की तरफ न हो। भारतवर्ष में शायद यही एक मस्जिद है जहाँ हर वक्त बाजा बजाकर निकल सकते हैं, चाहे नमाज़ का वक्त हो या न हो। यह बात हनमकोण्डे में ही है, अन्यत्र नहीं। अन्य स्थानों में बाजे का प्रतिबन्ध है ही।

कहीं कहीं हिन्दू ऐसा करते रहते हैं कि एक बाजा मस्जिद के मुकर्रिरा फासले पर बजता रहता है और एक बाजा जलूस के साथ रहता है। जहाँ बाजे की हद आती है वहाँ इधर का बाजा बन्द कर दिया जाता है और आगे का बाजा बजता रहता है। इस तरह एकाध जगह ही होता है ।

उत्तर–५–यद्यपि धार्मिक मामले में अब उतनी सख्ती नहीं बरती जाती तो भी सरकारी मामलों में मुसलमानों को ही ऊँचे-ऊँचे अधिकार देने की नीति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। इस राज्य में ८० लाख तेलगू भाषाभाषी, ४० लाख मरहट्टी भाषा-भाषी, १५ लाख कर्नाटक-भाषी और १५ लाख मुसलमान हैं। प्रायः सब ऊँचे ऊँचे पद पर मुसलमान ही हैं।

उत्तर–६–नवाब छतारी आये हैं, ये पहिले से जो ढर्रा चला आ रहा है उसी पर चल रहे हैं। न किसी के बुरे हैं न किसी के भले। कभी-कभी भाषणों में संकुचित जातीयता का खण्डन भी करते हैं। अकबर हैदरी बड़े बुद्धिमान् व्यक्ति थे।

उत्तर–७–शिक्षा विभाग में अभी कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ है। वही उर्दू माध्यम का जोर है कॉलेज विभाग में द्वितीय भाषा के रूप में अपनी अपनी मातृभाषा को ले सकते हैं पर उच्च शिक्षा का माध्यम भी उर्दू है इसलिए छात्र प्रारम्भ से ही उर्दू का ही अभ्यास करने के लिये विवश हो जाते हैं। इतनी बड़ी उस्मानिया यूनिवर्सिटी किन्तु "हिन्दी" को कहीं स्थान नहीं पाठ्य-क्रम में।

उत्तर–८–उर्दू माध्यम का हिन्दुओं की बोलचाल, सभ्यता आदि पर बहुत प्रभाव पड़ा है।

उत्तर–९–इस राज्य में प्रायः आने जाने के सभी मार्ग साफ-सुथरे अच्छे पक्के हैं। बस-सर्विस रेलवे (एन्-एस-आर) के अधीन है इसलिये रियासत भर में बसें ठीक समय पर आती और जाती हैं, पर बसों में भीड़ बेहद। नगरों और उपनगरों में बिजली आदि का सुन्दर प्रबन्ध है। सारांश सरकार का ध्यान बाह्य दशा को सुधारने और ब्रिटिश राज्य की तरह ऊपर ऊपर सब कुछ उजला उजला रखने की ओर है।

उत्तर–१०–नवाब यार जंग को धन्यवाद देना चाहिए कि उन्होंने हिन्दुओं के विरुद्ध कट्टर मुसलमानी आन्दोलन चला कर हिन्दुओं का बड़ा उपकार किया है। यह आन्दोलन न चलता तो हिन्दू अपना छोड़ पराये के पीछे चलने लगे थे। इस आन्दोलन से हिन्दुओं का ध्यान "स्व" और स्व-रक्षा की ओर आ गया और वे किसी भी विपरीत परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए तैयार हैं, यह कम लाभ नहीं।

उत्तर–११–हैदराबाद के उद्योग धंधे बढ़ रहे हैं, व्यापार की अभिवृद्धि हो रही है। चाहे सब ऊँचे पद मुसलमानों को भले ही मिलें किन्तु निजाम स्टेट की उन्नति हिन्दुओं की उन्नति पर ही निर्भर रहेगी, इस बात को अधिकारी वर्ग भी समझता है।

उत्तर–१२–आर्यसमाज अभी जैसा चाहिये लोकप्रिय नहीं हुआ। हिन्दू लोग इसलिए साथ दे रहे हैं और उसको अच्छा समझ रहे हैं कि समाज को हिन्दूहित का ध्यान है और वह मुसलमानों से अड़ता है।

हैदराबाद की चिट्ठी-पत्री

[नं० २]

वरंगल से हम यहाँ ता० १२ की सायंकाल को पहुँचे। श्री गयाप्रसादशास्त्री आयुर्वेदाचार्य, श्री पं० लक्ष्मीशंकर मिश्र आदि अनेक सज्जन स्टेशन पर ही मिले। हम श्री गयाप्रसादशास्त्री जी के ही अतिथि बने। ता० १३ को प्रातः सबसे पहले हम श्री विनायकराव बैरिस्टर से मिले। आप तो हैदराबाद स्टेट समाजों के प्राण हैं, फिर श्री नरेन्द्र जी मंत्री आर्य-प्रतिनिधि सभा निजाम स्टेट के साथ जाकर प्रतिनिधि सभा का कार्यालय देखा और प्रतिनिधि सभा का आद्योपान्त वृत्तान्त सुना। इस समय बारह उपदेशक हैं, लगभग दो सौ समाजें हैं, जिनमें से लगभग आधों में ठीक काम हो रहा है। गुलबर्गा में मई में एक बड़ी कान्फ्रेंस होने वाली है। सभा का सब पत्र-व्यवहार हिंदी में ही होता है। यहाँ तीन भाषाएँ प्रधान हैं तैलंगी, कर्नाटकी, मरहटी। तीनों प्रदेशों की समाजें हिंदी में ही पत्र व्यवहार रखते हैं। जहाँ निजाम सरकार उर्दू पर इतना बल दे रही है वहाँ समाज का यह हिंदी कार्य स्तुत्य है। हिंदी प्रचार सभा भी बहुत कार्य कर रही है। श्री पन्नालाल राजा के प्रयत्न से इस कार्य के लिये २॥–३ लाख रु० लिखा गया है। अपील की गई है पाँच लाख की। हिंदी माध्यम द्वारा एक कन्या पाठशाला भी चल रही है। आश्चर्य है शिक्षा-विभाग ने इसके लिये स्वीकृति दे दी है। शायद कन्या की पाठशाला समझकर, नहीं तो समस्त निजाम राज्य में कहीं भी राज्य की ओर से हिंदी के लिए कोई स्कूल, पाठशाला नहीं है। इस राज्य में हिंदी भाषा-भाषियों की संख्या है लगभग २०४३०० तो भी उनकी सन्तानों को हिन्दी पढ़ाने का कोई प्रबन्ध नहीं। पता नहीं सरकारी शिक्षा विभाग हिन्दी से इतना क्यों चिढ़ता है। यहाँ केशव मेमोरियल हाईस्कूल के प्राइमरी विभाग में हिन्दी माध्यम है। सरकार ने इस स्कूल को मान्यता नहीं दी। हाई स्कूल में माध्यम है उर्दू। इसीलिए मान्यता मिली है। आर्यों द्वारा संचालित इस स्कूल में उर्दू माध्यम देखकर हम तो दङ्ग रह गये। वैसे हमने स्कूल का निरीक्षण किया। यहाँ धार्मिक शिक्षा का प्रबन्ध है यही संतोष है। श्री खण्डेराव जी हेडमास्टर दक्षतापूर्वक कार्य चला रहे हैं। यह हाई स्कूल यहाँ के स्वर्गीय स्वनामधन्य श्री केशवराव जी वकील हाईकोर्ट (श्री विनायकराव जी के पिता) के स्मारक में चलाया जा रहा है। किसी समय यह हाईस्कूल कॉलेज भी बन सकता है। निजाम राज्य में हिन्दी भाषा को Non-local बाहर की भाषा कहा और माना जाता है। ८० लाख तैलंगी, ४० लाख मरहटी बोलने वाले, २० लाख कन्नड भाषा भाषी इनकी पर्वाह न करके केवल १५ लाख मुसलमानों की भाषा उर्दू पर इतना अधिक बल और व्यय किया जाता कि कुछ कहते नहीं बनता। धार्मिक सभाओं को बन्द चार दीवारी में जब चाहे कर लो, आज्ञा लेने की कोई आवश्यकता नहीं। चौड़े मैदान में सभा करनी हो तो पूछना पड़ता है। मिडिल तक स्कूल खोलना हो तो पूछने की आवश्यकता नहीं। पहले तो प्राइमरी तक के स्कूल खोलने के लिये पूछना पड़ता था। हिन्दी के एक पत्र साप्ताहिक चलाने के लिए प्रार्थना पत्र दिया गया था, स्वीकृति नहीं मिली। आर्यसमाजों ने "वैदिक आदर्श" "दक्षिण केसरी" समाचार पत्रों की आज्ञा मांगी थी, स्वीकृति नहीं मिली। आर्य प्रतिनिधि सभा का एक समाचार पत्र निकलता है। उसका नाम है "आर्यभानु" जो छपता तो है शोलापुर में और जाकर प्रकाशित होता है नागपुर में! विचित्र झमेला है।

हम ता० १४ को घटकेश्वर गुरुकुल देखने गये थे। घटकेश्वर यहाँ से १४ मील पर स्थित है। साथ श्री विनायकराव जी, श्री गयाप्रसाद शास्त्री, श्री बंशीलाल व्यास, श्री नरेन्द्र जी थे। गुरुकुल का स्थान रमणीय है, प्रबन्ध भी ठीक है। पहले यह गुरुकुल हैदराबाद में ही अनंतगिरि नामक पहाड़ी पर था।

ता० १५ को प्रातः हमने महन्त पूरणदास के उदासीन आश्रम को देखा, स्थान दर्शनीय है। मध्याह्नोत्तर हम उस्मानिया युनिवर्सिटी देखने गये। इस विषय में हम पत्र नं० ३ में मनोरंजक वृत्तान्त लिखेंगे।

श्री दत्तात्रेयप्रसाद जी, श्री बंशीलाल वकील, श्री गङ्गाधर जी, श्री मनोहरलाल जी, श्री गोपालदेव जी, श्री रुद्रदेव, श्रीदास आदि अनेक सज्जनों से वार्तालाप हुआ। इस विषय में फिर लिखेंगे।

---

* हैदराबाद की चिट्ठी-पत्री *

[नं० ३]

गत पत्र में हमने सामान्यतया आर्यसमाज और हिन्दी के चहल-पहल का वृत्तान्त दिया। आज हम उस्मानिया यूनिवर्सिटी और उर्दू का वृत्तान्त सुनायेंगे। उस्मानिया यूनिवर्सिटी के संस्कृत-विभाग के प्रमुख डॉ० आर्येन्द्र एम्. ए. और बंशीधर जी विद्यालंकार हमसे पहिले ही मिल चुके थे। फिर उन्हीं के आग्रह से हम, गयाप्रसाद शास्त्री, श्री नरेन्द्र जी विश्वविद्यालय देखने गये शहर से ६–७ मील की दूरी पर। पहले भी हमने इस यूनिवर्सिटी को देखा था, पर उस समय वहाँ इतने भव्यभवन नहीं थे। अब तो वहाँ ३० लाख की लागत का एक भव्य आर्टस् कालेज है, बाईस-बाईस लाख के साइंस विभाग, कामर्स विभाग आदि अनेक भव्यभवनों का निर्माण हो रहा है।

युद्धकाल के कारण काम ढीला चल रहा है, पर जब कभी राज्याधिकारियों के मस्तिष्क में स्थित सब विचार पूर्ण मूर्तस्वरूप को धारण कर लेंगे तब यह विश्वविद्यालय भारतवर्ष का दर्शनीय विश्वविद्यालय होगा। इस समय इसमें दो सहस्र छात्र शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। जहाँ हम यह देख रहे हैं कि काशी का हिन्दू विश्वविद्यालय छात्रों की संख्या बढ़ाने में हर्ष मानता है, वहाँ उस्मानिया यूनिवर्सिटी छात्रों की संख्या को सीमित ही रखना चाहती है। अब तो शहर से भी छात्र पढ़ने जाते हैं, पर जब हॉस्टेल सिस्टम (गुरुशिष्यवर्ग के एक ही स्थान में रहने की प्रथा) प्रचलित होगी तब और ही बात रहेगी। इस समय वहाँ 'ए' और 'बी' नाम के दो छात्रावास हैं।

आर्टस् कालेज के भवन-निर्माण में कई मिश्रित संस्कृतियों को काम में लाया गया है। खम्भे एजण्टा के ढंग के हैं तो डोम (गुम्बज) मुग़लशाही ढंग के। पता नहीं इनके प्रवेश द्वार इतने छोटे क्यों

रक्खे गये हैं। बाहर से तो ये भवन इतने भव्य प्रतीत नहीं होते, इनका विस्तार तो भीतर जाकर देखने से ज्ञात होता है, एक एक बात देखने योग्य है—

यहाँ की शिक्षा दीक्षा का माध्यम उर्दू है, पर इसको अरबी ही कहना चाहिये। यू० पी० आदि प्रान्तों में जो उर्दू बोली जाती है उससे तो यहाँ की उर्दू सर्वथा निराली है। जरा बानगी देखिए—

म्युनिसिपल गार्डन बाग-ए-आम, हाईकोर्ट अदालत-उल-आलिया, डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट-नाजिम जिला, अनुवाद विभाग-दार-उल-तरजुमा व तालीम व तसानीफ।

पुरातत्व विभाग-(मैं भूल गया) थरमामीटर-मिकासुल हरारत, हॉस्टेल-(बोर्डिङ्ग हाउस) अक़ामत खाना, पाखाना-बैतुल-खलाँ, स्नातक (Graduate) तिलसान, म्युनिसिपैलिटी-बलदिया, रसोई घर-तामघर, प्याऊ-आबदार खाना, स्मॉल-कॉज़-कोर्ट-दारुल खफीफा।

यह तो छोटे छोटे नमूने हैं। शहर के सभी प्रसिद्ध सड़कों के नाम उर्दू के ढंग के जैसे—

शाह-राह-उस्मानी, मुकर्रमजाह रोड, मौजमशाही मार्केट, आजमशाही रोड।

शहरों के नाम भी बदले गये—धाराशिव उस्मानाबाद बन गया, मुचकुन्दी नदी मूसानदी हो गई, इन्दौर हो गया निजामाबाद, अम्बा जोगी हो गया मोमिनाबाद, विंदर्भनगर का विकृत देशी रूप था बीदर, वह हो गया महमूदाबाद।

गंडीपेर तालाब एकदम उस्मानसागर हो गया, कोई तालाब हिमायतसागर, कोई हुसैनसागर और कोई निजामसागर हो गया। "जेल" महबस कहलाये जाने लगी। तनाही की कोठरी "गंजी" बन गई। धारा सभा हो गई 'मजलिसवज़े कवानीन'। मैं सब बातों को लिखूँ तो एक पुस्तक ही बन जायगी।

उस्मानिया यूनिवर्सिटी में पठन-पाठन के अन्य स्थानों में जो बोर्ड लगाए गए हैं वे सब एक ओर उर्दू और दूसरी ओर अंग्रेजी के हैं। कन्नड, तैलंगी, मरहठी भाषाओं के लिये भी विशेष श्रेणियाँ हैं। संस्कृत क्लास का बोर्ड भी उर्दू में है। एक बात तो प्रसन्नता की है कि अंगरेजी का पूरा बहिष्कार है और एक दुःख की बात यह है कि उर्दू के नाम पर एक अरबी गढ़ बनाया जा रहा है।

इतनी सख्ती है कि आयुर्वैदिक कालेज औषधालय में औषधियों के नाम उर्दू लिपि में लिखे जाते हैं। नुस्खे भी उर्दू में लिखने पड़ते हैं, पत्र व्यवहार भी उर्दू में करना पड़ता है। आयुर्वैदिक कालेज को सरकार की ओर से ३५०००) वार्षिक सहायता मिलती है पर यूनानी औषधालय के भवन और उनकी शान निराली है। इन पर सरकार प्रतिवर्ष ५–६ लाख खर्च करती है।

पत्र लम्बा होता जारहा है और मनोरंजक वृत्तान्त चिट्ठी नं० ४ में—

हैदराबाद की चिट्ठी-पत्री

[नं० ४]

मैं संक्षेप से इधर का समाचार लिख चुका हूँ। शेष आज लिख रहा हूँ। जिस हैदराबाद में किसी समय बड़ी कठिनता से एक आध उर्दू समाचार पत्र के दर्शन होते थे वहाँ आज रहबर, पयाम, सूबेदकन (साप्ताहिक), वक्त तंजीम (तीन रोजा) मुमालिकत अर्थात् स्टेट, इकबाल, मशीर-ए-दकन रैय्यत, मीजान (त्रैमासिक) साप्ताहिक और दैनिक गोलकोंडा, तैलंगाना इतने अखबार निकलते हैं। गोलकोंडा और तैलंगाना ये दो समाचार पत्र तेलंगी-भाषा में निकलते हैं। अस्सी लाख भाषा-भाषियों के लिये केवल दो पत्र, ध्यान रखिए। २० लाख कर्नाटक भाषा-भाषी अथवा ४० लाख मरहटी भाषा बोलने वालों का एक भी अखबार नहीं,-रहबर, पयाम, वक्त, मशीर-ए-दक्कन मुमलिकत, इकबाल, रैयत, गोलकोंडा, तैलंगाना वे सब दैनिक हैं। जैसे उत्तर भारत में प्रातःकाल होते ही हिन्दी दैनिक प्रत्येक की मेज पर देखे जाते हैं वैसे ही यहाँ उदू दैनिकों का हाल है।

स्टेट में कुल बारह लाख की खादी तैयार होती है। जिसमें से ४ लाख की खादी स्टेट में ही बिक जाती है शेष स्टेट के बाहर जाती है। खादी उत्पत्ति का सबसे बड़ा केन्द्र है मिटपल्ली, यह है तो छोटासा ग्राम पर हैदराबाद को छह लाख की खादी तैयार करके दे देता है।

अब हम फिर उस्मानिया युनिवर्सिटी की बात पर आते हैं-यहाँ के छात्र नम्र और मृदुभाषी तथा अतिथिप्रिय होते हैं सम्भवतः इन गुणों के लिये यहाँ गुरुगण प्रयत्नशील रहते हैं। वहाँ के छात्र कट्टर उर्दू के पक्षपाती भी रहते हैं। इनके उर्दू भाषणों को आप सुनें तो आप दंग रह जाइयेगा। यहाँ केवल एक ही कॉलेज है, वह है नाइझाम कालेज, जहाँ इंगलिश माध्यम है और जो मद्रास विश्वविद्यालय से संबन्धित है, शेष सब उच्च तथा निम्न शिक्षणालयों का माध्यम उर्दू है।

यहाँ की बोल-चाल की भाषा भी प्रतिदिन उग्र होती जाती है। अरबी शब्दों की संख्या बढ़ती ही जाती है। इसीलिये हमने लिखा था कि निज़ाम स्टेट धीरे धीरे अरबी का गढ़ बनता जाता है। हमारे एक मित्र ने यह कहा कि उस्मानिया युनिवर्सिटी नहीं है, यह है उर्दू का मकबरा। बाहर से आप इमारतों का ढंग देखें तो मकबरे जैसा ही प्रतीत होगा। खैर निजाम स्टेट में सब दोष ही दोष हैं, यह बात नहीं। अनेक बातों में ब्रिटिश राज्य से बढ़ा-चढ़ा है। मेरी अपनी धारणा है कि यहाँ उर्दू की कट्टरता किसी समय हिन्दी के लिये मार्ग सुलभ कर देगी। निजाम स्टेट कुछ काल के लिये भले ही हिन्दीप्रचार में अड़चनें डाले, पर अन्त में उसे विवश होकर हिन्दी को मानना पड़ेगा।

मुझे हैदराबाद से चलते समय यह ज्ञात हुआ कि यहाँ के प्रमुख श्री दत्तात्रेयप्रसाद जी, श्री नरेंद्रजी, श्री उमरावसिंह जी, बंशीलाल व्यास आदि पर आपत्तिजनक भाषणों के लिये अभियोग चलाये गये हैं। श्री नरेन्द्र जी को तो नीचे के कोर्ट से एक वर्ष का दण्ड भी मिल चुका है। जमानत पर छूटे हैं, अपील की गई है, देखें क्या होता है —

शोलापुर में आर्य प्रिंटिंगप्रेस अच्छी तरह चल रहा है, समाज किराये के मकान में है, स्थान लिया गया है, देखें कब अपना मन्दिर बनता है। यहाँ के डी०ए०वी० कालेज में ४५० छात्र हैं, एफ० ए० और बी० ए० में। अब तक एफ० ए० में ही हिन्दी थी, अब बी० ए० में भी हो गई है। समस्त बम्बई प्रान्त में यही एक कॉलेज है जहाँ श्रेणियों में अर्थात् कॉलेज में हिन्दी शिक्षा का प्रबन्ध है —

हैदराबाद की चिट्ठी-पत्री

(नं० ५)

शोलापुर में डी. ए. वी. कॉलेज देखने योग्य है। प्रिन्सिपल श्री सूरजभान एम. ए. के साथ दो घन्टे तक वार्तालाप हुआ। आर्यमित्र के भूतपूर्व संपादक श्री बाबूराम गुप्त एम.ए. यहाँ संस्कृत के प्रोफेसर हैं। इस डी. ए. वी. कॉलेज पर अब तक ढाई लाख रु० खर्च हुआ है। समाज के लिए नौ हजार की भूमि ली हुई पड़ी है। मन्दिर कब बनेगा, पता नहीं।

शोलापुर से हम तुलजापुर आये हैं। यहां महाराष्ट्र-कुलस्वामिनी, छत्रपति शिवाजी की अभीष्ट देवता तुलजाभवानी का भव्य मन्दिर है। प्रतिवर्ष लक्षों नर-नारी यात्रा के लिए आते रहते हैं। देवी के आभूषण ही ७-८ लाख रुपये के होंगे। बड़ा पुराना मन्दिर है। इस मन्दिर में कई कलाओं के दर्शन होते हैं। मन्दिर के द्वार सब के सब चाँदी से मढे गये हैं। शोभा देखते ही बनती है—

यह मंदिर निजाम राज्य में ही है। हमारे पिता श्री पं० श्रीनिवासराव रावसाहेब इसी मन्दिर के व्यवस्थापक थे। इन्होंने मन्दिर के विषय में जो नियम-उपनियम बनाये थे, उन्हीं नियमों तथा उप-नियमों के अनुसार सब प्रबन्ध चलता है। अब यहां की सड़कें पक्की हो गई हैं, बिजली भी लग गई है।

उस्मानाबाद भी निजाम स्टेट का एक विशेष स्थान है। बालाघाट नामक एक सुन्दर घाटी पर स्थित है। बाल्यावस्था में हमारी शिक्षा-दीक्षा यहीं हुई थी। फिर हम पूने में भेजे गये थे, वहां से पंजाब गये थे तब से हम उधर ही रहते हैं। कभी कभी इष्ट-मित्र बंधु-बांधव से मिलने चले आते हैं। यहां हमारे पिता वर्षों तक निजाम स्टेट के नौकर रहे।

उस्मानाबाद के पास ही १४ मील पर, स्टेट के प्रसिद्ध सामाजिक और श्री वंशीलाल वकील ने श्यामार्य गुरुकुल खोला है। यह गुरुकुल हैदराबाद सत्याग्रह के शहीद श्यामलाल के स्मारक के स्मारकरूप में है। श्यामलाल श्री वंशीलाल जी के भान्जे थे। गुरुकुल प्रारम्भिक दशा में है।

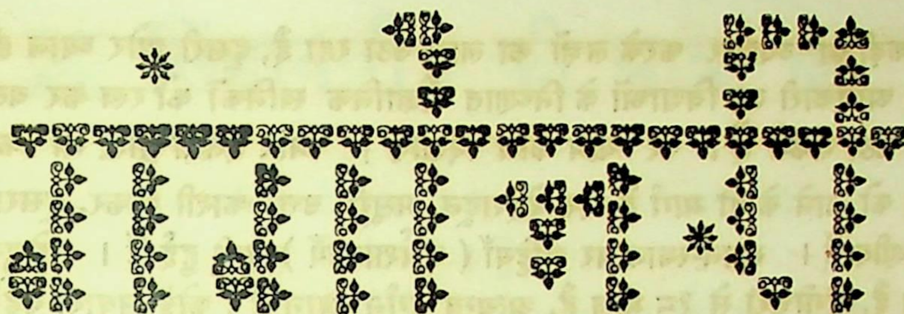
अब हमारी निजाम स्टेट की यात्रा समाप्त होने को है और ३०-४० मील की यात्रा रह गई है। वरंगल से लेकर यहां तक हम ३५० मील की यात्रा कर चुके हैं। हमको सन्तोष है कि आर्यसमाज और आर्यसमाजियों की संख्या पर्याप्त है। यदि इसी प्रकार वृद्धि होती गई तो निकट भविष्य में उत्तम परिणाम होगा।

अब हम ता० २६ तक बरार प्रदेश में (विदर्भ में) पहुँचेंगे। अकोला अमरावती, वर्धा, नागपुर इत्यादि स्थानों में दो-दो दिन ठहरेंगे। कारंजा में जैन गुरुकुल को भी देखेंगे—

हमारी यात्रा अत्यन्त शीघ्रता से हो रही है, इस यात्रा में जो लोग हमारे सहायक रहे उनमें पं० श्रीरामकिशोर ठेकेदार सिकन्दराबाद, श्री पं० गयाप्रसाद शास्त्री, श्री पं० लक्ष्मीशंकर मिश्र, श्री नरेन्द्र (हैदराबाद), श्री दत्तोपंत कुलकर्णी तुलजापुर, श्री नेमचन्द बालाचन्द उस्मानाबाद आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

सारांश हमारी यह यात्रा बड़े ही महत्त्व की हुई। हम निजाम स्टेट में स्थित अपने सम्बन्धियों से भी मिलते गये और स्टेट के दर्शनीय स्थानों को भी देखते गये। इन पाँचों पत्रों में संक्षेप में हमने अपने अनुभवों को लिखा है। आशा है हमारे पत्रों से वाचकों का मनोरंजन हुआ होगा। अब हम इन पत्रों को समाप्त करते हैं—विदर्भ देश के अनुभवों को फिर कभी लिखेंगे—समाप्त।





(गङ्गा १९१५)

मैं जब गंगोत्तरी गया था–तब मैंने धार्मिक, राजनैतिक, भौगोलिक आदि दृष्टि से वहाँ की परिस्थिति का निरीक्षण किया था। मुझे तो सभी दृष्टि से उसका अत्यन्त महत्त्व जान पड़ा। धार्मिक दृष्टि से तो पूछिये नहीं, संसार में सबसे अधिक महत्त्व इसी गंगोत्तरी को मिला है—क्यों? इसलिये कि स्वर्ग-द्वार होने से। राजनैतिक और भौगोलिक दृष्टि से वह शत्रु के लिए एक अगम्य स्थान है। उधर से शत्रु पहिले तो आ ही नहीं सकता है, आये तो भी बच नहीं सकता, कुछ बचे तो आगे बढ़ नहीं सकता, बढ़े तो आगे इतिश्री ही समझिये।

प्राकृतिक दृष्टि से वह स्थान इतना सुन्दर है कि उसके देवदारु-वन, हल्दू-वृक्ष का वन, मीलों तक पुष्पश्री, वनश्री, वनस्पतिश्री, औषधिश्री, बस पूछिये नहीं। हिमश्री की शोभा देखते ही बनती है। मैं तो कहता हूँ, वह समस्त संसार की औषधि-वनस्पति का भण्डार है। समस्त प्रकार के अन्नों का बीज यहाँ विद्यमान है। जल की दृष्टि से ऐसा जल संसार में नहीं मिलेगा। गंगा की रेती भी ऐसी विचित्र है कि वह स्वर्ण-कणों से परिपूर्ण है। खनिज पदार्थों की दृष्टि से भी लोहा, ताँबा, चाँदी अभ्रक आदि विपुल परिमाण में विद्यमान हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से वह हमारे पुरातन ऋषि-मुनि-तपस्विजनों का स्थान है। ऐसी गंगोत्तरी की महिमा को कौन नहीं जानता।

संसार भर के प्रवासी, जो भारत की यात्रा करने आते हैं, गंगोत्तरी की यात्रा किये बिना वापस लौट कर नहीं जाते। मैं जब गंगोत्तरी गया था, तब उत्तर-काशी से जब ऊपर गंगोत्तरी की ओर चला तब मुझे टर्की के डार्डेनल्स का स्मरण आया और भौगोलिक दृष्टि से उसका महत्त्व जान पड़ा—नीचे गंगाजी, दोनों ओर ऊँची दुर्गम पर्वत-मालाएँ, दुर्गम जंगल और अगम्य पथ। उस प्रदेश की दुर्गमता और रम्यता तथा उसकी भयंकरता को उधर जाने वाले ही जान सकते हैं। बिना दुर्गों के, बिना सेना के, बिना अस्त्र-शस्त्रों के वह स्थान इतना दुर्गम हैं, तो यदि दोनों ओर स्थान-स्थान पर दुर्ग बनाये जायँ, सेना रक्खी जाय, तो संसार में ऐसा कौनसा शत्रु है, जो इधर झाँक भी सके। उधर से कोई भी नहीं आ सकता। यह स्थान, यह प्रदेश, टिहरी-राज्यान्तर्गत है, किन्तु टिहरी-राज्य केवल

जंगल की लकड़ी का व्यापार करके लक्षों का लाभ उठा रहा है, दूसरी ओर ध्यान ही नहीं है। यदि टिहरी-राज्य के अधिकारी उन विद्याओं के निष्णात वैज्ञानिक खनिकों को रख कर यत्न करें, तो करोड़ों रुपयों का लाभ उठा सकते हैं। पर ध्यान कौन दिलाये? और इतनी बुद्धि भी किसमें है?

गंगोत्तरी को जाने के दो मार्ग हैं-एक देहरादून, मसूरी, उत्तर-काशी होकर, दूसरा हृषीकेश होकर। दोनों मार्ग रमणीय हैं। स्थान-स्थान पर चट्टियाँ (धर्मशालाएँ) बनी हुई हैं। गोमुख, जहाँ से कि वस्तुतः उद्गम है, गंगोत्तरी से १८ मील है, अत्यन्त दुर्गम स्थान है। कोई सवारी वहाँ जा नहीं सकती, पैदल ही वहाँ जाना पड़ता है। साथ पण्डा मार्गदर्शक न हो, तो बस वापस आने की आशा न रखिए—कहीं कहीं तो रेंग-रेंग कर जाना पड़ता है--बर्फ पड़ती है तब कष्ट होता है। पर इन सब दिक्कतों को पार करके जब आप गोमुख पर पहुँचते हैं, तब वहाँ के जलपान से, वहाँ की रमणीकता से, वहाँ के दिव्यदर्शन से, सब थकावट दूर हो जाती है। गङ्गोत्तरी-यात्रा में एक विशेष बात यह है-यदि चलने को पैर मजबूत हों, भूख सहन करने की शक्ति हो, असली मार्ग छोड़ कर आसपास के प्रदेशों में जाने की हिम्मत हो, तो उत्तर-काशी से लेकर गङ्गोत्तरी तक अनेक योगियां के दर्शन मिल सकते हैं! पर हिम्मत चाहिये, प्रारब्ध चाहिये। हठयोगी तो स्थान-स्थान पर मिलेंगे।

इनकी बातों में आने की आवश्यकता नहीं--राजयोगी के दर्शन तो अलभ्य हैं ही; पर ढूँढ़ने वाले ढूँढ़ ही लेते हैं, दर्शन की उत्कट लालसा रखने वाले प्राप्त कर ही लेते हैं। जो सीधी सड़क से जाते हैं, उन्हें उस मार्ग पर ऐसे व्यक्ति मिलेंगे ही नहीं। साक्षात् गोमुख के पास गुफा में कोई न कोई नग्न योगिराज मिल ही जाते हैं। सहस्रों यात्री गङ्गोत्तरी की यात्रा के लिये जाते हैं, किन्तु १८ मील इधर गङ्गा-मन्दिर से ही लौट आते हैं और उस दिव्य गिरिराज हिमालय की असली विभूति के दर्शन से वञ्चित रह जाते हैं।

यात्रा मई से जुलाई तक अच्छी रहती है। फिर कष्ट ही समझिए। यात्रा भी अकेले-दुकेले के बस की नहीं। कम से कम तीन मनुष्य मिलकर जायें, तब आनन्द आ सकता है। जितने भी दृश्य हैं, दर्शनीय स्थान हैं, वे सब असली मार्ग से दायीं या बायीं ओर सात-सात, आठ-आठ, दस-दस मील की दूरी पर हैं। इधर के लोग अतिथि-प्रिय हैं। समय पर जाइये--अर्थात् जब तक रोटी चढ़ रही है जाइये, अवश्य सत्कार होगा।

इस समय को छोड़ कर लोग जंगल में काम-काज के लिये चले जाते हैं। फिर भी, असमय जाने से भी, कुछ न कुछ सत्कार होगा ही। ऐसे प्रदेश के कारण ही भारतवर्ष का गौरव स्थिर है। इन लोगों का पाण्डव-नृत्य तथा गान भी देखने सुनने की वस्तु है। गङ्गोत्तरी से जान्हवी गङ्गा के किनारे किनारे आप त्रिविष्टप-देश अर्थात् तिब्बत में जा सकते है। वही त्रिविष्टप-देश, जहाँ की सृष्टि की आदि में ऋषिमुनियों द्वारा वेदों का प्रादुर्भाव हुआ, जिनके आश्रय से आज भी संसार में आर्य-संस्कृति की दुन्दुभि बज रही है--वह आर्य-संस्कृति, जिसमें अब भी संसार को स्वर्गधाम बनाने की शक्ति है--वह आर्य-संस्कृति, जिसकी थोड़ी सी झलक का सहारा लेकर महात्मा गाँधी ने संसार में एक अद्भुत युग का प्रवेश कराया है।

सिंहलद्वीप की यात्रा

(१६२७)

(मद्रास कांग्रेस में गया था तब उधर से उधर गया था)

[१]

मद्रास कांग्रेस के महाधिवेशन के पश्चात् मैं सिंहलद्वीप की यात्रा करने के लिए इधर आया और अनवरत सत्रह दिनों की यात्रा में, कोलम्बो, निगैम्बो, तत्समीपवर्त्ती प्रदेश, कैण्डी, पैरिडोनिया, न्यूवाराएलिया (इस द्वीप का सब से ऊँचा पर्वत), हेक्गल, अनुराधापुर आदि प्रदेशों को देख सका हूँ। हमारे देशवासी इसको लंका कहते हैं किन्तु इधर के निवासी अपने आप को सिंहली कहने में ही प्रसन्नता मानते हैं। वस्तुतः यह लंका ही है या नहीं, इस विषय में पण्डितों में मतभेद है। दीपवंश, महावंश, अर्थकथा आदि में स्पष्ट रूप से लंका का नाम मिलता है। अशोक के शिलालेखों में ताम्रपर्णी और लंका दोनों नाम आते हैं। यहाँ के विद्वानों में भी दो मत हैं। कुछ भी हो, देश अत्यन्त रमणीय है। सिंहली लोग धर्म-श्रद्धालु, सरल हैं। इधर बौद्धधर्म का ही प्राधान्य है—४४००००० चवालीस लक्ष जन संख्या में छै लक्ष ईसाई और ३ लक्ष मुसलमान और इतने ही हिन्दू हैं। यहाँ नारियल, रबर, चाय, सुपारी, कालीमिर्च, इलायची, दालचीनी आदि की विपुलता है।

कैण्डी और अनुराधापुर बौद्धों के गढ़ हैं। वैसे प्रायः सर्वत्र ही इनके विहार और स्तूप मिलेंगे। कोलम्बो ऐसा ही है जैसे बम्बई या मद्रास, स्वच्छ है, समुद्रतट रम्य है। निगैम्बो में बड़ा सरोवर है। भीतरी प्रदेशों में असली सिंहली देखने को मिलते हैं। न्यूवाराएलिया सब से ऊँचा पर्वत प्रदेश है। इसको सिंहलद्वीप का शिमला कह सकते हैं। इसी के पास हेक्गल है; यहाँ सुन्दर वनस्पति-उद्यान है। इसी पर्वत प्रदेश में सीता–एलिए (सीतालय) है। यहीं सीता कारावास में थी ऐसी दन्तकथा है। थोड़ा नीचे उतर कर एडमज् पीक (श्रीपाद पर्वत) है—हिन्दू, बौद्ध, मुसलमान तीनों इस स्थान को पवित्र मानते हैं। पैरिडोनिया में भी विस्तृत वनस्पति उद्यान है—कैण्डीनगर को यू० पी० का देहरादून कह सकते हैं पर है उससे रम्य, क्योंकि चारों ओर मध्य में सुन्दर सरोवर के कारण विचित्रता आ गयी है। यहीं बौद्धों का "दन्त मन्दिर" Tooth Relic है। अनुराधापुर प्राचीन सिंहल–राजधानी है।

प्राचीन नगरों के अवशेष भी मीलों तक दीखते हैं। यहाँ बड़े बड़े स्तूप हैं जिनको महाचैत्य कहते हैं। जाफना में अधिकतर तामिल रहते हैं। ट्रिंकोमाली, गाल आदि पुराने डच बन्दरगाह हैं। भारतवर्ष बड़ा जेलखाना हो रहा है तो सिलोन भी एक छोटा-सा सुन्दर जेलखाना है। यहाँ अभी स्वायत्तशासन प्रणाली का प्रवेश नहीं हुआ। रिफ़ार्म कमीशन आया था, विदित नहीं क्या परिणाम निकला। मैं धार्मिक दृष्टि से यह लिखना चाहता हूँ कि भारतवर्ष और सिंहलद्वीप का घनिष्ठ सम्बन्ध है। सिंहली लोगों के धर्म का उत्पत्तिस्थान भारतवर्ष है। यदि दस पाँच संस्कृत के विद्वान् सिंहलद्वीप में आकर बसने की ठान लेवें और संस्कृत विद्या का प्रचार करें तो भारतीय हिन्दू और सिंहली लोगों में अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध हो सकता है। सब से पहले सिंहलद्वीप में संस्कृत-विद्या

का प्रचार करने वाले काशी के महापुरुष का नाम है पं० ईश्वरचन्द्र। कोई डेढ़-दो सौ वर्ष की पुरानी बात है।

इसी प्रकार भारतीय पण्डितों का ध्यान इधर जाना चाहिये। काशी आदि के लिए सिंहली बड़ा आदर रखते हैं। ईसाइयों का प्रचार अब रुक गया है। इधर एक विचित्र बात है। धर्म-परिवर्त्तन से जात नहीं टूटती। सिंहली लोगों में विवाहादि बड़ी अवस्था में होते हैं। यहाँ नगरों में वेश्या आदि का उपद्रव नहीं है। मद्यपान का व्यसन अच्छी तरह घुस गया है। आंग्ल शिक्षा का खूब प्रचार है। सिंहल में सब से पुराना सिंहली पत्र है। सिंहलजातीय, सिंहलबौद्ध ये भी अच्छे पत्र हैं। एक पत्र है जो सिंहली, तामिल और संस्कृत तीन भाषा में निकलता है। लिपि सिंहली है। 'सिलोन डेली न्यूज़' आदि अंगरेज़ी के पत्र हैं। यदि किसी को संस्कृत और अंगरेज़ी आती है तो वह इस देश में अच्छी तरह काम चला सकता है। विहारों के भिक्षु प्रायः संस्कृत समझ लेते हैं और बोलते हैं। प्रत्येक विहार अथवा आराम के साथ मन्दिर, स्तूप और पुस्तकालय रहता है। यहाँ बौद्ध बालक धर्म शिक्षा पाते हैं, फिर यथासमय दीक्षा दे कर भिक्षु बना लिये जाते हैं। अशोक के पश्चात् भारतवासियों ने सिंहलद्वीप की कोई खबर नहीं ली। स्वयं दास हो गये, करते क्या—

ब्रिटिशशासन-पद्धति के अनुसार सिंहलद्वीप भारत से पृथक् है परन्तु दोनों का हृदय एक ही है। आश्चर्य यह है कि हमारी कांग्रेस कभी सिलोन के विषय में एक शब्द भी नहीं कहती। सिंहली लोगों को दुःख है कि उनका पवित्र मन्दिर 'बौद्धगया' हिन्दुओं के हाथ में है। मैंने उनको समझाया कि हम दोनों एक ही हैं। इस विषय में समझौता हो सकता है। आर्यसमाज का इधर नाम भी नहीं है। कोलम्बो में दो एक आर्यसज्जन रहते हैं। श्री गोविन्दजी सुन्दरजी परमार नं० २० ब्रास फ़ाउण्डर स्ट्रीट कोलम्बो बड़े ही उत्साही पुरुष हैं। कोई आर्य सज्जन इधर यात्रा करते हुए आये तो आपको सूचना देने से सब प्रकार का सुभीता हो सकता है। यहाँ की रेलवे, सरकारी रेलवे है। किराया बहुत महँगा है। यहाँ स्टेशन पर स्टेशनमास्टर के नाम का साइनबोर्ड लगा रहता है। एक बात विचित्र है कि घोड़ों, खच्चरों और ऊँटों के दर्शन दुर्लभ हैं।

सीलोन आने के लिए परमिट Permit की आवश्यकता होती है। धनुष्कोटि के पास माण्डपम् कैम्प में थर्डक्लास पैसेञ्जरों के लिए क्वारण्टीन है। इधर कस्टम वालों की बड़ी सख्ती है। सीलोन में रहन-सहन का व्यय अधिक है। कोलम्बो में पैलिगोडिया के विद्यालंकार कालेज में आजमगढ़ के पं० रामउदार शास्त्री संस्कृत पढ़ाते हैं और पाली सीखते हैं। न्यूवाराएलिया के अभिनवरामसैया नामक विहार में भिक्षु लोग मुझ से आग्रह कर रहे थे कि मैं भी इधर ही रह कर संस्कृत विद्या का प्रचार करूँ। मैंने कहा सोचूँगा। महाविद्यालय ज्वालापुर में निगैम्बो का ए० डी० एस० परैरा (धर्मानन्द) नामक एक ब्रह्मचारी सिंहली लड़का शिक्षा प्राप्त कर रहा है। वह सिलोन में संस्कृत का प्रचार करेगा। यह सिंहली ब्रह्मचारी उच्चवंश का है। एक और विद्वान् भिक्षु हिन्दी पढ़ने आयेंगे। इधर के बौद्ध मन्दिरों में कृष्ण, स्कन्द, विष्णु आदि की मूर्त्तियाँ हैं और सब लोग उन्हें पूजते हैं। यहाँ का कला-कौशल बढ़ा हुआ है।

सिंहल द्वीप की यात्रा

त्रिपिटिका

[२]

बौद्ध धर्म के विस्तृत साहित्य में से यदि वह त्रिपिटिका ग्रन्थ निकाल दिया जाय तो फिर शेष साहित्य का इतना महत्व नहीं रहता। भारतवर्ष में प्रथम तो बौद्धधर्म है ही कम, उसमें भी दूसरी बात यह है कि उनकी पूर्ण लायब्रेरी कहीं नहीं—उनमें भी त्रिपिटिका दुर्लभ—अब बौद्ध सचेत हो गये हैं। अपने पुरातन विहारों का जीर्णोद्धार कर रहे हैं। काम इतने वेग से हो रहा है, इतनी श्रद्धा से हो रहा है, मुट्ठी भर आदमी उस लगन से काम कर रहे हैं कि जिनकी प्रशंसा मैं किन शब्दों में करूं। बौद्ध के उत्साही नेता सारनाथ को पुनरपि पुरातन विहार के बनाने की चिन्ता में हैं; सारनाथ में डेढ दो लक्ष का एक सुन्दर बौद्ध मन्दिर बनकर तैयार हो रहा है। अब विश्वविद्यालय की स्कीम हाथ में ली गई है, कुछ काल पश्चात् वहां एक बृहद् विहार की स्थापना होगी। एक बड़ा पुस्तकालय स्थापित होगा। इस विहार में बौद्धधर्म की संस्कृति का उद्धार होगा। यह बहुत ही अच्छी बात है कि काशी जो कि हिन्दूधर्म की संस्कृति का केन्द्र है,—जहां कि श्री महामना मालवीय जी का जगद्विख्यात हिन्दू विश्वविद्यालय है, उसके पास ही यह बौद्ध विश्वविद्यालय सारनाथ में खुलेगा। जहाँ से बौद्धधर्म के आदि प्रवर्तक बुद्ध भगवान् ने प्रचार कार्य प्रारम्भ किया था वहीं से बौद्धधर्म के जीर्णोद्धार का प्रयत्न होगा यह शुभ लक्षण है! समस्त हिन्दुओं को इसका स्वागत करना चाहिये।

❀ ❀ ❀

इस यात्रा में मुझे स्थान स्थान पर बौद्धधर्म के भिक्षुओं और आचार्यों से बात-चीत करने का मौका मिला। विहारों में किस प्रकार शिक्षण दिया जाता है, छात्रवृन्द का नियन्त्रण किस प्रकार किया जाता है, इनमें शील का संचार कैसे होता है, ये लोग सूत्रग्रन्थों का अध्ययन किस प्रकार करते हैं, इनका अभि-धर्म प्रश्नोत्तररूप संवाद कैसे होता है, आचार्य लोग किस प्रकार धर्मोपदेश करते हैं, श्रावक किस तरह बैठते हैं, किस प्रकार अनुज्ञा लेते हैं इन सब बातों का अच्छा बोध हुआ। एक आचार्य के कहने से ही मैंने 'त्रिपिटिका' को देखा। त्रिपिटिका तीन भागों में विभक्त समझिये।

१—विनय-जिसमें शिक्षण-नियन्त्रण-शील का विचार है।

२—सूत्र-सूत्ररूप में धर्मतत्व वर्णित हैं।

३—अभिधर्म-प्रश्नोत्तररूप में संवाद।

इन तीनों संग्रहों के पढ़ने के पश्चात् बौद्ध धर्म के तत्व समझ में आजाते हैं। हम हिन्दुओं के सब धर्म-तत्व इनमें आगये हैं। केवल प्रकार-भेद हैं। इनके पढ़ने के पश्चात् यह विदित होने लगता है कि

बौद्धों को हिन्दुओं से पृथक् मानना, उनसे घृणा करना, उनको अन्य समझना ठीक नहीं है। जिन पुरातन पौराणिक आचार्यों ने बुद्ध भगवान् को हिन्दुओं के चौबीस अवतारों में लिखा और माना उन्होंने मेरी समझ में बड़ी दूरदर्शिता की। एक बौद्ध आचार्य ने हम से कहा कि हिन्दुओं के पुरातन आचार्यों ने बुद्ध भगवान् को चौबीस अवतारों में मान कर हमारा तो नाश कर दिया। बुद्ध भगवान् का अपमान किया। मैंने कहा महाशय हिन्दू धर्म की उदारता देखिये, जिसने वेदों को ही तिलांजली दी थी किन्तु जो वैदिक सिद्धान्तों से कतिपय सिद्धान्तों को लेकर संसार में छह बड़े धर्मों में से एक बड़े धर्म को प्रचलित कर सका उसको हिन्दू आचार्यों ने अपने अवतारों की लाईन में समान रूप से बैठाया, यह उदारता है, यह बुद्ध भगवान् का परम आदर है या अपमान। हमारे इस उत्तर को सुन कर बौद्ध आचार्य कुछ नहीं बोले। सच्ची बात यह है कि हम बौद्धों को छोड़ नहीं सकते। संसार भर में कहीं भी जाइये बौद्धों के पुरातन स्तूपों के खण्डहर, विहारों के खण्डहर, प्राचीन अवशेष भारतीय पुरातन उच्च संस्कृति का बोध करा कर संसार की दृष्टि में भारत का सिर ऊँचा कर रहे हैं, यह प्रत्यक्ष बात है। यह हम में से हैं, हमारे ही हैं, और हम इनको कदापि नहीं छोड़ सकते। लंका, जावा, सुमात्रा, बालि, बर्मा आदि स्थानों में जहाँ भी बौद्ध धर्म का प्रचार है वहाँ भी हिन्दू धर्म के पुरातन स्मारक अवशेष हैं ही। अब इन स्थानों में प्रबन्ध हो रहा है कि हिन्दुओं से घृणा उत्पन्न करादी जाय किन्तु इसमें बौद्ध भिक्षु सफलप्रयत्न न होंगे, ऐसी पूर्ण आशा है।

अब त्रिपिटिका और हमारे ग्रन्थों का साम्य देखिये—

बौद्ध धर्म

१—विनय अर्थात् शिक्षण, नियन्त्रण, शील इनमें वर्णव्यवस्था प्रकट नहीं है।

हिन्दू धम

१—हमारे संस्कृत विद्या के नियम अर्थात् शिक्षण नियन्त्रण और शील में कोई भेद नहीं है। वही गुरुशिष्य भाव है। हमारे विनय में वर्णव्यवस्था का ध्यान है।

बौद्ध धर्म

२—धर्मतत्व सूत्रग्रन्थों में हैं। इनके धर्मग्रन्थों में केवल धर्मतत्व हैं किन्तु हमारे सूत्रग्रन्थों जैसा विचार कम किया गया है।

हिन्दू धर्म

२—हमारे यहाँ भी समस्त तत्वज्ञान सूत्रग्रन्थों में आता है। इसके अतिरिक्त वेद ब्राह्मण, धर्मशास्त्र आदि हैं।

बौद्ध धर्म

३—अभिधर्म अर्थात् प्रश्नोत्तर-रूप संवाद का बौद्ध धर्म में बहुत प्रचार है ।

हिन्दू धर्म

३—हमारे यहाँ प्रश्नोत्तर-रूप संवाद जिसको वाकोवाक्य कहते हैं कुछ वेदों में हैं—और कुछ उपनिषदों में देखने को मिलता है; स्वामी जी के प्रचलित ग्रन्थों में सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदभाष्य भूमिका इसीलिए रोचक और प्रभावशाली है कि इनमें अभिधर्म अर्थात् प्रश्नोत्तर-रूप में सब कुछ कहा गया है ।

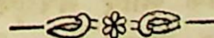
बौद्ध धर्म

४—अब तक हमारा यह ख्याल था कि बौद्धों ने हमारे षड्दर्शनों के विषय में कुछ भी नहीं लिखा था, इनके अपने दर्शन नहीं हैं किन्तु अब इनके दर्शन मिल गये हैं और उनके निर्माताओं ने हमारे दर्शनों की अच्छी आलोचना की है ।

हिन्दू धर्म

४—हमारे दर्शनकारों ने सर्वदर्शनसंग्रह में बौद्ध मत को भी स्थान देने की उदारता दिखायी है । जब चार्वाक जैसे वज्र नास्तिकों को स्थान दिया है तब बौद्ध तो हमारे बहुत समीप ठहरे—असली बात यह है कि बौद्ध धर्म के तत्व अधिकतर सांख्यतत्वों पर निर्भर हैं—बुद्ध भगवान् केवल आत्मतत्व तक पहुँचे और उसमें उन्होंने पराकाष्ठा की उन्नति की । उन्होंने कई बार स्पष्ट भी कहा कि इससे परे क्या तत्व है, इसकी चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है । मेरी समझ में बुद्ध भगवान् को नास्तिक कहना उनका अपमान करना है । जिस जमाने में वे नास्तिक कहे गये, वे इसलिए नहीं कि ईश्वर को नहीं मानते थे, अपितु इसलिए कि वेदों को नहीं मानते थे । मनु ने भी यही लिखा है "नास्तिको वेदनिन्दकः" चाहे लोग कुछ भी समझें हम तो इसी राय के हैं ।

इसलिए आर्योपदेशक प्रायः व्याख्यानों में बौद्धों के खण्डन में बुद्ध को अनीश्वरवादी कह बैठते हैं वह ठीक नहीं है, उनको ऐसा प्रचार नहीं करना चाहिये । हिंन्दू भी विचित्र हैं, एक ओर बुद्ध भगवान् को अवतार मानते हैं और दूसरी ओर बौद्धों से घृणा करते हैं । इससे तो अपना ही नाश है । बौद्धों के ग्रन्थों का पर्यालोचन करना चाहिये, उनसे प्रेम करना चाहिए । वे हमारे हैं और हम उनको थोड़े से मत-भेद के कारण छोड़ नहीं सकते । बुद्ध भगवान् ने वैयक्तिक जीवन पर बहुत बल दिया है । सामुदायिक या जानपदिक जीवन पर ध्यान देने का उन्हें अवकाश ही नहीं मिला । पीछे इनके शिष्यों ने इस विषय में प्रचार किया ।



स्व० ठा० गोविन्दसिंह मनसबदार

संस्मरण—१

(आर्य-सेवक १५-६-४४)

"यथा काष्ठं च काष्ठं च ।
समेयातां महोदधौ ॥
समेत्य च व्यपेयातां ।
तद्वद्भूतसमागमः ॥ (मनुः)



स्व० ठाकुर साहब हमारे पूज्य पिता रावसाहेब श्रीनिवासराव जी के परम मित्र थे। मैं जब छोटा था ६ वर्ष का, तब मैंने ठाकुर साहब को उस्मानाबाद (उस समय का नाम धाराशिव) में देखा था। उस्मानाबाद निजाम स्टेट में है, बालाघाट पर बसा हुआ है। ठाकुर साहब प्रायः हमारे घर आया जाया करते थे। धाराशिव में आप सौ—सवा सौ घोड़े रखते थे और निजाम सरकार की ओर से घोड़ों का और घुड़सवारों का खर्च मिलता था। सर्वत्र रियासत में निजाम सरकार की ओर से ऐसे प्रबन्ध थे। जब सरकार का हुक्म आता था तब उसके अनुसार सवारों को जहाँ तहाँ भेजना पड़ता था। हमारे ठाकुर नामी घुड़सवारों में थे। मुझे स्मरण है कि मैं कई बार अश्वशाला में जाया करता था, मुझे यह भी स्मरण है कि मैंने आपकी माता जी के दर्शन भी किये। उन दिनों पूने से एक केशवराव नामक अंगरेजी के मास्टर आये थे। ठाकुर साहब तथा वहाँ के जैनी नवयुवकों ने उनको अंगरेज़ी पढ़ाने के लिये रख लिया था। यह प्राइवेट स्कूल सेठ बालाचन्द के घर लगता था, ठा० साहब उत्साहपूर्वक अंगरेज़ी पढ़ते थे। यह होगी कोई १८८८ की बात।

हमारे पिताजी और ठाकुर गोबिन्दसिंह जी हमारे घर पर सायंकाल के समय आर्यसमाज के ग्रन्थ अथवा समाचार पत्र पढ़ा करते थे। उस समय हम छोटे थे, वे क्या करते थे समझना ही कठिन था। फिर हमको हिन्दी पढ़ाई गई। वैसे तो हम स्कूल में पढ़ते थे मराठी और घर पर पढ़ते थे हिन्दी। सार्वजनिक जीवन की दृष्टि से देखा जाय तो कहना पड़ेगा कि हमारे पिताजी तथा ठाकुर साहब धाराशिव अर्थात् उस्मानाबाद जिले के प्राण थे।

❀ ❀ ❀

वहाँ लोगों को महाराष्ट्र के नामी खेल आट्या-पाट्या, खो-खो खेलने का बड़ा शौक था। सेठ नानचन्द, माणिकचन्द, हीराचन्द, राजे आदि नवयुवक मण्डली इन खेलों को प्रतिदिन खेला करती थी। ठाकुर साहब का शरीर भारी था, दौड़ने में जल्दी थक जाते थे और खेलने में मारे जाते थे।

मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि स्व० धर्मपाल का जन्म (ठाकुर साहब का प्रथम पुत्र) धाराशिव में ही हुआ था, उस समय उन्होंने सारे गाँव को भोज दिया था। बड़ी चहल-पहल रही थी। यही लड़का फिर गुरुकुल कांगड़ी में पढ़ा। जब महात्मा मुन्शीराम ने गुरुकुल के लिए तीस सहस्र रुपये एकत्रित करने की घोषणा की थी, तब ठाकुर साहब ही सबसे प्रथम थे जिन्होंने दस सहस्र रुपये दान दिये। तब से उत्तर भारत की आर्यजनता आपको जानती थी।

❀ ❀ ❀ ❀

संस्मरण—२

फिर पिता जी ने हम सब भाइयों को पूना भेज दिया। मैं तो नूतन मराठी विद्यालय में प्रविष्ट हुआ—जो फिर पूना कॉलेज नाम से प्रसिद्ध हुआ और अब सर परशुराम भाऊ कॉलेज नाम से विख्यात है। मेरे दोनों भाई फर्ग्यूसन स्कूल में प्रविष्ट हुए। हम प्रतिवर्ष गर्मियों की छुट्टियों में जब पूना से जाते थे तभी ठाकुर साहब के दर्शन हो जाते थे।

एक वार ठाकुर साहब हमारे विद्यालय को देखने आये थे। हमारे सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री कुलकर्णी साथ थे। उस समय आपने हमारे नूतन मराठी विद्यालय को कई सहस्र दान दिया था। ठाकुर साहब दान देने में मुक्त हस्त थे, हम पूने में १८६० से १८६४ तक रहे।

❀ ❀ ❀ ❀

फिर १८६४ के नवम्बर मास में पिता जी को ठाकुर साहब ने सलाह दी कि लड़कों को लाहौर डी० ए० वी० कॉलेज में पढ़ाया जाय। विचार होने का ही विलम्ब था कि ठाकुर साहब, पिता जी तथा हम तीनों भाई और एक हमारे जीजा जी के छोटे भाई बम्बई आये। वहाँ समाज में पिताजी तथा ठाकुर साहब के व्याख्यान हुए। लोगों ने बड़ा अभिनन्दन किया कि लड़के लाहौर जा रहे हैं।

❀ ❀ ❀ ❀

फिर हम अजमेर पहुँचे। वहाँ भी लोगों ने बड़ा अभिनन्दन किया। पिताजी तथा ठाकुर साहब वहाँ भी गरजे। वहाँ ज्ञात हुआ कि हम लोगों को जिस कॉलेज में पढ़ाने के लिये भेजा जा रहा है वह मांसपार्टी का कॉलेज है। पिता जी मांस पार्टी का नाम सुनते ही घबराये। घर लौटने को तैयार हुए। ठाकुर साहब ने समझाया कि चलो एकवार लाहौर तक तो हो आवें, फिर सोच लेंगे, इस वक्त लौटने में लोग-हँसाई होगी। लाचार सब लाहौर पहुँचे। वहाँ बच्छोवाली पार्टी की समाज के उत्सव में सम्मिलित हुए। ७-८ दिन बड़ी चहल-पहल रही, फिर पिताजी और ठाकुर साहब हम सबको दयानन्द हाई स्कूल में प्रविष्ट करा कर देश लौट गये। हमारे निवास का प्रबन्ध आर्य-विद्यार्थी आश्रम में था। लाहौर में हम १८६८ तक रहे।

कुछ दैवी घटनाएँ ऐसी हुईं कि हमारे सब भाई लौट गये। मैं इधर ही हूँ—अब पचास वर्ष होने आते हैं, ४३ वर्ष तो संयुक्त प्रान्त में गये।

फिर ठाकुर साहब कभी कभी गुरुकुल कांगड़ी के महोत्सव में मिलते रहे। जब से मैं विद्यालय का काम कर रहा हूँ तब से कई वार महाविद्यालय में भी मिले। दो तीन वार मैं पातूर भी गया हूँ।

❀ ❀ ❀ ❀

श्री ठा० गोविंदसिंह मनसबदार

संस्मरण—३

गत मार्च की ता० २६ को मैं (दक्षिण यात्रा के सम्बन्ध में) पातूर गया था, वहाँ रात-रात ही ठहरा, क्योंकि ठाकुर साहब नागपुर गये थे। मैंने नागपुर तार कर दिया कि आ रहा हूँ, ठहरिये। मैं अमरावती होकर नागपुर पहुँचा तो वे पहिले ही पातूर के लिये चल पड़े थे, मिलना न हो सका। दुर्भाग्य !

ठाकुर साहब उदार विचार के सामाजिक थे। उन्होंने अपनी सब कन्याओं के तथा पुत्रों के विवाह बड़ी दूर-दूर किये।

आज से पचास वर्ष पूर्व हैदराबाद स्टेट में जो तीन प्रसिद्ध आर्यपुरुष हुए उनमें श्री ठाकुर साहब भी एक थे। हमारे पिता रावसाहब श्रीनिवासराव, श्री केशवराव वकील जज हाईकोर्ट हैदराबाद, वर्षों पूर्व दिवंगत हो चुके थे। अब ठाकुर साहब भी चल बसे।

इनके आर्यसामाजिक विचार कैसे हुए ?

निजाम स्टेट में नौकरी करने के पूर्व हमारे पिता जी बम्बई में पुलिस विभाग में अफसर थे। इनका काम डाकुओं पर निगरानी रखना था। इनकी हद थी बम्बई से अजमेर तक। एक वार पिता जी अपने कार्य से अजमेर गये, वहाँ या जयपुर में अकस्मात् पं० लेखराम जी शर्मा आर्य-मुसाफिर से भेंट हुई—बस वहीं से पिता जी के विचार बदले। फिर पिता जी के सम्पर्क में आने से ठाकुर गोविन्दसिंह जी के भी विचार बदले—फिर धीरे धीरे स्वामी जी के ग्रन्थों से परिचय हुआ।

ठा० साहब का स्वभाव।

वैसे बड़े मिलनसार थे पर जब इनको क्रोध चढ़ता था तब इन्हें सम्भालना कठिन कार्य था। एकवार किसी बात पर ठाकुर साहब और पिता जी की अनबन हुई। पीछे किसी प्रकार समझौता हुआ। हमारे पिताजी बीच में एकवार अपनी नौकरी से छुट्टी लेकर इनकी पातूर की जायदाद का प्रबन्ध

करने गए थे। ठाकुर साहब चाहते थे कि पिताजी नौकरी को छोड़ कर सदैव के लिये पातूर में ही रहें पर पिताजी को यह बात पसन्द नहीं आई।

मुझे तो वे सदा कहा करते थे कि दक्षिण छोड़ कहाँ उत्तर में पड़े हो। मैं यही कहकर टाल देता रहा कि जो जो उत्तर को गया वह दक्षिण क्यों आने लगा। जो उत्तर को गया अर्थात् ऊपर की ओर गया वह दक्षिण अर्थात् नीचे की ओर क्यों आयेगा, इस पर वे हँस पड़ते थे।

संस्मरण ४

उनको दुःख यह भी था कि गुरुकुलों से जैसे चाहिए वैसे स्नातक क्यों नहीं निकलते। इन रत्नों के होते हुए यह दिवाला क्यों ? मैंने उनको कई वार समझाया कि जैसी सामग्री थी वैसी ही वस्तु बनी, इसमें दुःख करने का कोई कारण नहीं।

एक वार जब मैं पातूर गया था, तब हम निकट ही पहाड़ी पर भ्रमणार्थ गये। जब ऊपर बैठ गये तब उन्होंने एक लम्बा साँस लेकर कहा कि कहो नरदेव क्या इस सामग्री से आर्यसमाज सार्वभौम धर्म हो सकेगा। मैंने कहा कि नहीं, प्रयत्न करते रहना चाहिये। फिर बोले देखो, जब भारत के प्रदेशों में ही आर्यसमाज का पूरा पूरा प्रचार नहीं तब विदेशों में कब होगा। मैंने कहा भारतवर्ष कभी मर नहीं सकता, यह गुरुभूमि है फिर किसी न किसी समय गुरु उठेंगे ही। एक सहस्र वर्ष से बराबर इतनी क्रान्ति, उत्क्रान्ति, संक्रान्तियों के पश्चात् भी जब भारतवर्ष जीता है, उसकी संस्कृति, उसका धर्म बने हुए हैं, तो वह इसी लिये कि इस भूमि द्वारा फिर एक वार संसार का कल्याण होने को है।

हैदराबाद सत्याग्रह के समय में मैं दक्षिण गया था। आपसे भी मिला था। आपने कहा कि यदि मुसलमानों को जगा दिया और फिर अपने आप सो गये तो बड़ा बुरा होगा।

उनकी बड़ी इच्छा थी महाराष्ट्र-भूमि में आर्यसमाज की खूब चहल-पहल हो। उनको आर्यसमाज के ही स्वप्न आते थे। और कभी कभी वे परले सिरे के निराशावादी बन जाते थे। और वे अपनी निराशा को भगाने के लिए उत्तर भारत के बड़े २ महोत्सवों तथा समारोहों में सम्मिलित हुआ करते थे।

बस एक दरी, चादर, एक धोती उठाई और चल पड़े, घरवालों ने पूछा तो कह दिया कि नागपुर तक जा रहे हैं। जब तक ये फिर घर लौट कर नहीं पहुँचते थे, घरवाले परेशान रहते थे।

मृत्यु के एक वर्ष वा छह माह पूर्व उनमें एक प्रकार का वहम हो गया था। पता नहीं चलता था कि क्या है। उनके पत्र जो मेरे पास तथा अन्य मित्रों के पास आते थे उनमें कभी २ कोई कोई बात ऐसी लिखी रहती थी जिससे अनुमान होता था कि उनका मन बहुत दुःखी है और मन में कोई वहम है जिसको कोई हल नहीं कर सकता था।

मैं अबकी वार मार्च में उस्मानाबाद गया था तो उस इलाके के लोग उनको बहुत याद करते थे। अन्य स्थानों में भी गया तो वहाँ भी देखा कि लोग पिछली बातों को दुहराते थे।

♣ श्री द्विवेदी जी के साथ डेढ़ मास ♣

(१९०९)

जब महाविद्यालय बाल्यावस्था में था—इस बात को बारह वर्ष का युग माना जाय तो दो युग बीत गये, तब स्वर्गीय श्री पं० पद्मसिंह शर्मा की प्रेरणा से श्री द्विवेदी जी स्वास्थ्य सुधार के लिये महाविद्यालय में पधारे थे। आप कोई डेढ़ मास तक यहीं रहे। 'सरस्वती' सम्पादक आ रहे हैं और उनको आराम कैसे पहुँचेगा यही चिन्ता थी। उस समय महाविद्यालय में एक भी पक्का मकान नहीं था। हम सब झोंपडियों में ही रहते थे। श्री द्विवेदी जी आये तब वे भी प्रसन्नता-पूर्वक देवाश्रम की कुटिया में रहने लगे। द्विवेदी जी ने झाँसी से चलते समय तार दिया कि Reaching Jwalapur manage conveyance fifteen hours. मैं ज्वालापुर आ रहा हूँ, सवारी का प्रबन्ध करो, पन्द्रह बजे। रेल वालों की परिभाषा में, अर्थात् तीन बजे दिन के। तारबाबू ने ऊपर के तार में 'अवर्स' की जगह 'हार्सेज़' (घोड़े) भूल में लिख दिया अथवा न जाने 'करेन्ट' में क्या भूल रह गई कि 'अवर्स' के स्थान में 'हार्सेज' लिखा गया। मैं चिन्ता में पड़ गया कि द्विवेदी जी पन्द्रह घोड़ों को लेकर क्या करेंगे? वैसे एक सुन्दर तांगे का प्रबन्ध मैंने कर लिया था।

जब द्विवेदी जी स्टेशन पर पहुँचे, तब मैंने वह तार उनको दिखाया तो बड़े खिलखिला कर हँसे और तारबाबू से जाकर विनोदपूर्वक कहा—वाह बाबू जी खूब किया, तार बाबू खिसियाना सा रह गया। द्विवेदी जी की रहन-सहन सादी थी। स्वभाव के मिलनसार और विनोदी थे, इसलिये वे महाविद्यालय के परिवार में झट मिल गये, पराया भाव तनिक भी नहीं रहा। द्विवेदी जी को उन्निद्र रोग था। रात में कभी निद्रा उचट जाती तो फिर बड़ी कठिनता से आती थी। वह रोग सम्भवतः अतिविचार का कारण था।

श्री द्विवेदी जी महाविद्यालय में आये तो 'सरस्वती' का हेडक्वार्टर भी यहीं बना। यहीं ज्ञात हुआ कि श्री द्विवेदी जी 'सरस्वती' का सम्पादन कैसे करते हैं। सब छोटे से छोटे और बड़े से बड़े लेख को आद्योपान्त सावधानी से पढ़ कर उनको ठीक करना, प्रत्येक पत्र का उत्तर देना, रद्दी से रद्दी लेख को अच्छा रंग रूप देकर उसके अभिप्राय को स्थिर रखते हुए सुन्दर बनाना, इत्यादि बातों में द्विवेदी जी की तुलना कोई सम्पादक न कर सकेगा।

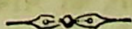
अमरिका तक से लेख आते थे। जब मैंने श्री द्विवेदी जी से कहा कि आप ऐसे रद्दी लेखों का भी स्वागत करते हैं, यह क्या बात है, तो आपने मुस्करा कर उत्तर दिया कि द्वार पर आने वाले का स्वागत करना परम धर्म है। और जिन महानुभावों को बार बार लिख लिख कर लेख मँगाया जाता

है, उनका तो आदर आवश्यक है। द्विवेदी जी ने 'सरस्वती के लिए जिस प्रकार दिन रात एक किये, उतना अब कौन कर सकता है? द्विवेदी जी द्वारा सम्पादित 'सरस्वती' को कोई आद्योपान्त पढ़ता तो उसे स्पष्ट भान हो जाता था कि उसमें आरम्भ से लेकर अन्त तक एक ही लेखनी कहीं न कहीं फिर गई है। द्विवेदी जी ने अपनी निर्धारित प्रणाली, नीति-रीति के विरुद्ध 'सरस्वती' में एक शब्द भी नहीं जाने दिया। इस विषय में उन्होंने अपने प्रगाढ़ मित्रों को भी रुष्ट कर दिया, पर अपनी नीति पर अटल रहे। श्री पद्मसिंह शर्मा की 'सतसई संहार' नामक लेखमाला एक वर्ष तक इसी लिए सरस्वती के कार्यालय में पड़ी रही, न छप सकी। श्री द्विवेदी जी के पश्चात् श्री बख्शी जी के समय में छपी। श्री द्विवेदी जी शर्मा जी की शैली में परिवर्तन करना चाहते थे। शर्मा जी इस बात पर डटे थे कि एक अक्षर भी इधर का उधर न किया जाय। समस्त लेखमाला अविकल रूप में जैसी लिखी गई है वैसी ही छपे। दोनों वीर अपनी २ बात पर डटे रहे।

श्री द्विवेदी जी स्वाभिमानी पुरुष थे। कहते हैं कि महात्मा मुन्शीराम जी ने द्विवेदी जी को किसी प्रसंग में अभिमानी कहा अथवा लिख डाला था। बस द्विवेदी जी महाविद्यालय में कांगड़ी के इतने पास रहे और बुलावा जाने पर भी नहीं गये। प्रो० रामदेव हरिद्वार में इन्हें बुलाने आये थे। द्विवेदी जी ने हँस कर उत्तर दिया, "यदि मैं काँगड़ी गया तो अभिमानी नहीं रहूँगा। एक महात्मा का वचन मिथ्या सिद्ध होगा इसलिये नहीं जा सकता।" श्री द्विवेदी जी प्रतिदिन ब्रह्मचारी तथा अध्यापकवृन्द के साथ नहर की पटरी पर टहलने जाते थे, तब उनके अनुभव सुनने में बड़ा आनन्द आता था। वे संस्कृत के भी अच्छे कवि थे। जब लहर आती थी तभी अनुष्टुप आदि छन्द बना डालते थे। एक वार एक ब्रह्मचारी ने अभिवादन किया तो उसी समय संस्कृत में आशीर्वादात्मक श्लोक कह डाला। आपका विद्या-व्यासंग वाचन प्रबल था। कौनसा विषय था, जिस पर आप प्रकाश न डाल सकते थे।

जब द्विवेदी जी ने यहाँ आने के पूर्व 'सरस्वती' में आर्य लोग खेतिहर की सन्तान हैं, इस विषय पर लेख लिखे थे तब मैंने दो एक लेखों में द्विवेदी जी की युक्तियों का खण्डन किया था। वे जब यहाँ पधारे तब मुस्करा कर बोले शास्त्री जी तब आपने हमारे लेखों का खण्डन किया था, अब हम स्वयं आ गये हैं हमारा खण्डन कीजिये। मैंने भी मुस्करा कर उत्तर दिया आप हमारे पूज्य अतिथि हैं। हम आपका खण्डन नहीं कर सकते।

द्विवेदी जी डाक के मामले में बड़े पक्के रहते थे। सब डाक डाकविभाग के नियमानुकूल भेजते थे। क्या मजाल कि रत्ती भर भूल हो। यदि डाक विभाग की ओर से कोई भूल रह जाती तो उसकी भी खबर ले डालते। डाक विभाग के नियम पालने में इतने सख्त थे कि एक वार किसी मित्र के पास जूते का नाप भेजना था अतएव अपने मित्र को लिफाफा अलग भेजा जिसमें हिदायतें थीं और दूसरे लिफाफे में नाप का धागा भेजा। मैंने कहा यह क्यों? कहने लगे वैसा भेजना नियम विरुद्ध हो जाता इसीलिए पृथक्-पृथक् भेजा गया।



स्वर्गीय प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद

(संस्मरण)

[१६३६]

(कॉलेज मैगेजीन)

स्वर्गीय, श्रीयुत प्रिन्सिपल लक्ष्मणप्रसाद जी का और मेरा सबसे प्रथम परिचय१६०३ में हुआ था—और वह भी खुर्जा (जिला बुलन्दशहर) में। मैं वहाँ सनातनी पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ करने के लिए गया था—वही परिचय धीरे-धीरे मित्रता के रूप में परिणत होकर अन्त तक एकरस बना रहा, कभी उसमें विकार नहीं रहा अथवा विकार नहीं आया। जब से प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद जी देहरे में आये, तब से सार्वजनिक कार्यों में हम दोनों सब कार्य परस्पर परामर्श से ही करते थे। अपने विचारों के अनुरूप, जहाँ तक डी० ए० वी० कॉलेज को बचाया जा सकता था बचा कर, वे सामाजिक, साहित्यिक और राजनैतिक कार्यों में बराबर सहयोग देते रहे। असहयोग आन्दोलन जब जोरों पर था तब देहरे जिले में आन्दोलन का मैं ही प्रमुख था। इधर मैं और उधर प्रिंसिपल साहब, दोनों अपना-अपना काम पृथक्-पृथक् करते रहे, किन्तु कभी भी किसी प्रकार का भी परस्पर मनोमालिन्य नहीं हुआ, क्योंकि हम दोनों एक दूसरे को खूब समझे हुये थे।

यह प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद जी का ही दम था कि डी० ए० वी० कॉलेज को उस समय प्रचण्ड आँधी में से बचा ले गये। वैसे वे जब कभी देहरे में कोई बड़ा सार्वजनिक कार्य हुआ, बराबर छात्र-वृन्दों सहित साथ देते थे। कोई बड़ा आदमी आता तो डी० ए० वी० कॉलेज में बुला कर उसका अभिनन्दन करते थे। आर्यसमाज के तो वह द्वितीय प्राण ही थे, वर्षों प्रधान रहे और स्थानिक दलबन्दी से अलग रह कर काम करते रहे। डी० ए० वी० कॉलेज उनका प्रथम प्राण था। स्थितप्रज्ञ पुरुष की भाँति हानि-लाभ, मान-अपमान, सुख-दुःख को समान समझ कर वे अहर्निशि उसी की चिन्ता में संलग्न रहते।

खाते-पीते, उठते-बैठते, सोते-जागते उनका ध्येय एक ही था और वह था डी० ए० वी० कॉलेज की उन्नति। वे आसन के पक्के थे। इसलिये जहाँ एक वार डी० ए० वी० कॉलेज में आसन जमा कर बैठ गये वहीं मरते दम तक रहे। यही उनकी सफलता की कुञ्जी थी। बाबू ज्योतिःस्वरूप के जमाने में बड़ी भारी दलबन्दी थी और कोई हेडमास्टर महीने, दो महीने, चार महीने से अधिक नहीं टिकता था, किन्तु प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद जी ने ऐसी जोर की चौकड़ी बाँधी कि दूसरे लोग अपनी चौकड़ी भूल गये। प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद ऊपर से रूखे प्रतीत होते थे और एक-एक बात को इतनी देर तक सोचते

रहते थे, एक एक बात का उत्तर इतनी देरों में देते थे कि कभी-कभी यह ख्याल होने लगता था कि कैसे आदमी हैं, किन्तु जो उनके हृदय को जानते थे वे सब अच्छी तरह समझते थे कि प्रिंसिपल साहब छात्र-वृन्द के कितने हितैषी हैं। जिसकी आयु के चालीस वर्ष विशुद्ध ज्ञान-सत्र में बीते और जिसने इस ज्ञान-सत्र द्वारा सहस्त्रों छात्रों का कल्याण साधा उसकी महत्ता किन शब्दों में कही जावे ?

धार्मिक क्षेत्र में वे स्वामी दयानन्द के कट्टर अनुयायी थे। राजनैतिक विचारों में उनका झुकाव गांधीवाद की ओर था। साहित्यिक क्षेत्र में वे राष्ट्रभाषा के कट्टर उपासक थे। वे चाहे किसी विषय में कट्टर थे, किन्तु उन्होंने अपने से भिन्न मत रखने वालों का कभी उपहास नहीं किया, कभी किसी का दिल नहीं दुखाया। आर्यसमाज की वर्त्तमान दलबन्दी की पद्धति और चार-आना अथवा दो-आना संगठन के विरुद्ध थे। कभी-कभी कहते थे और बड़े आवेश में कह बैठते थे कि "शास्त्री जी, गजब की बात देखिये जिसको शिक्षा का चालीस वर्ष का अनुभव है उसकी राय का भी वही मूल्य है जो अनुभव शून्य एक नये मेम्बर का"—मैं भी मुस्करा कर कह देता था—आप ही लोगों ने ऐसे नियम बनाये हैं, अब आपही उसका फल चाखिये।

प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद जी के जीवन से एक बात स्पष्ट है कि वह हमको यह शिक्षा देता है एक भी व्यक्ति यदि सच्ची भावना को लेकर किसी एक कार्य में हाथ डालता है, तो कालान्तर में वह कार्य इतना बड़ा कार्य बन जाता है कि उसी से देश में एक बड़ी लहर उत्पन्न होकर देश उन्नतिपथ पर आरूढ़ होने लगता है। प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद जैसे लगन के, धुन के, आन के व्यक्ति जिस समाज सोसाइटी में होंगे वह समाज सोसाइटी सौभाग्यशाली है।

कुछ दिन हुए, एक व्यक्ति ने मुझसे पूछा कि प्रिंसिपल साहब की आत्मा इस समय कहाँ होगी। मैंने कहा—होगी कहीं अन्तरिक्ष में विचरती हुई। उस व्यक्ति ने हँस कर कहा—'शास्त्रीजी, उनकी आत्मा यहीं डी० ए० वी० कॉलेज के इर्द-गिर्द घूम रही होगी'—वास्तव में डी० ए० वी० कॉलेज के बिना उनको कुछ भी नहीं सूझता था, मृत्यु के दस-पाँच मिनट पूर्व वे पास वालों से यही पूछते रहे कि अमुक बिल्डिंग कितनी बन गई, अमुक बिल्डिंग कितनी टूट गई।

ऐसे ईश्वर-विश्वासी, आत्म-विश्वासी, यति, व्रती प्रिन्सिपल साहब का जीवन भविष्य में शिक्षा-क्षेत्र में पदार्पण करने वालों के लिये एक आदर्श जीवन है। आकाशवाणी कहती है कि "सचमुच आदर्श जीवन है, सचमुच आदर्श जीवन है।"

स्व० राज्यमित्र श्री आत्मारामजी

(संस्मरण)

[२६-७-३८]

अचानक एक मित्र ने आकर सुनाया कि "प्रताप" लाहोर और 'अर्जुन' देहली में राज्यमित्र, राज्यरत्न, रावबहादुर मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी का देहावसान छपा है। मैं एक दम अवाक् रह गया—मित्र के साथ तिलक-लायब्रेरी गया वहाँ समाचारपत्र देखे और मेरे मन की विचित्र दशा हो गई। एक दम १८६४ से ले कर १६३८ तक के दृश्य का चित्रपट मेरे सामने दिखलाई दिया।

❀ ❀ ❀ ❀

१८६४ में जब हम लाहोर आर्य विद्यार्थी आश्रम में पढ़ते थे तब मास्टर जी आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के महामन्त्री थे और उन दिनों में कल्चर्ड और महात्मा पार्टी का 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे' चल रहा था। इसलिए उस समय के युद्ध में आप महात्मा मुन्शीरामजी के दक्षिण भुजा समझे जाते थे। अद्भुत वक्तृत्व, अनुपम कार्यकर्तृत्व आदि गुणों के कारण आप अत्यन्त लोकप्रिय थे।

❀ ❀ ❀ ❀

जब हम प्रति सप्ताह आर्यसमाज वच्छोवाली में जाया करते थे तब प्रायः आपके व्याख्यानों को सुनने का अवसर मिलता था। कई शास्त्रार्थों के अवसर पर भी आपकी निपुण विचारशैली का अनुभव मिलता रहा।

❀ ❀ ❀ ❀

जब श्री पं० लेखरामजी का स्वर्गवास हुआ था तब दोनों दल मिल गये थे। वच्छोवाली समाज में दोनों महात्मा और कल्चर्ड पार्टियों का सम्मिलित अधिवेशन हुआ था। तब आपने कहा था, मुझे वे शब्द अभी तक याद हैं, कि "अब तक हम भाई भाई आपस में तीर चला कर अभ्यास कर रहे थे अब दोनों मिल कर आर्यसमाज के शत्रुओं को देखेंगे।"

❀ ❀ ❀ ❀

फिर दुर्भाग्यवश महात्मा पार्टी में भी मतभेद हुआ और उसमें मास्टर आत्मारामजी और महात्मा मुन्शीराम जी में अनबन हुई। उसी में मास्टर जी पंजाब छोड़ कर बड़ौदा जाने में विवश हुए। स्व० स्वा. नित्यानन्द जी ने बड़ौदा महाराज से कह कर आपको राज्य में अच्छे स्थान पर लगा दिया—बड़ौदा में जितनी भी सामाजिक जागृति दिखलाई पड़ती है और जितनी भी संस्थाएँ हैं उन सबका श्रेय मास्टरजी

को है। महाराज आपसे अत्यन्त प्रसन्न थे और राज्यरत्न, राज्यमित्र, रावबहादुर आदि उपाधियों से उनको विभूषित किया था।

❀ ❀ ❀ ❀

गुजरात और बम्बई में भी आर्यसमाज के प्रत्येक कार्य में आप सम्मिलित रहे। यदि उनसे पंजाब छूटा था उन्होंने उधर जाकर दूसरा पंजाब बना लिया—उत्तम वक्ता, अनथक लेखक, अद्वितीय प्रबन्धक ग्रन्थ-लेखक आदि के नाते मास्टर आत्मारामजी का नाम आर्यसमाज के सर्वोच्च नेताओं की पंक्तियों में देखने योग्य है।

❀ ❀ ❀ ❀

आप महाविद्यालय के प्रतिष्ठित सदस्य थे और प्रारम्भिक वर्षों में प्रति वर्ष महाविद्यालय के महोत्सव पर नियमित रूप में आते रहे। महाविद्यालय के उत्सव आप, गणपति शर्मा, स्वा० दर्शनानन्द जी आदि के कारण बड़े मार्के के होते रहे—

❀ ❀ ❀ ❀

मास्टरजी बड़े मिलनसार, विनोदी और निरभिमान पुरुष थे। और उसकी दिनचर्या ऐसी थी जैसी घड़ी का काँटा। समय को कभी भी व्यर्थ नहीं जाने देते थे—कट्टर किन्तु विचारशील सामाजिक थे—आपका विद्याव्यासंग और आपका वाचन प्रबल था—आप की नोटबुकें और फाइलें इस बात की पुष्ट प्रमाण हैं।

❀ ❀ ❀ ❀

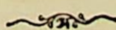
आर्यसमाज के पुरानी पीढ़ी के लोग प्रायः समाप्त होते जा रहे हैं। पुरानी पीढ़ी ने जो काम किया जिस परिस्थिति में किया, जिस उत्साह और कष्ट-सहिष्णुता से किया उसको नई पीढ़ी, चाहे वह पुरानी पीढ़ी से अधिक विद्वान है, नहीं कर सकी है—किस किस को याद किया जावे, देखते देखते सब काल कराल की विकराल उदरदरी की अन्तःस्थली में न जाने कहां विलीन हो गये पर हम तो पुनर्जन्म् के मानने वाले हैं, और जो नेता अपने जीवन काल में कर्त्तव्य पूर्णरूप से पालन कर गये हैं वे फिर अन्य जन्म में कहीं न कहीं मिलेंगे ही ऐसी भावना करते हैं—

❀ ❀ ❀ ❀

महाभारत ने ठीक ही कहा है—

"यस्य कालः स यात्यग्रे
तत्र का परिदेवना—"

जिसका काल आता है वह आगे चला जाता है इसमें क्या शोक और क्या दुःख—



श्रद्धाञ्जलिः

गुरुवर श्री पं० काशीनाथ जी शास्त्री षड्दर्शनाचार्य का देहावसान

भारतवर्ष में कौन ऐसा संस्कृत का विद्वान् अथवा छात्र होगा जो श्री गुरुवर काशीनाथ जी शास्त्री का नाम, धाम और उनके काम को न जानता हो। श्री गुरु जी का ज्ञानमय जीवन "ज्ञानमय तप" इसकी साक्षात् मूर्ति थी। आज उनके सहस्रों शिष्य, प्रशिष्य तथा उपशिष्य उनकी निधन की वार्ता सुन कर भारतवर्ष के कोने कोने में जहाँ भी जो हैं तड़प रहे होंगे। आज भारतवर्ष की समस्त पाठशालाओं, विद्यालयों और केन्द्रों में शोक छा गया होगा। आज संस्कृत जगत् में उदासी छा गई होगी।

श्री गुरुजी का आर्यजगत् से यह सम्बन्ध था कि उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी में १५ वर्ष और महाविद्यालय ज्वालापुर में ७ वर्ष दर्शनाचार्य का काम किया था, और जीवन के अन्तिम भाग को काशीवास में बिताने के लिये और स्वेच्छानुसार वहीं शरीर छोड़ने के लिए काशी चले गये थे। यह उनकी इच्छा सोलह आने पूरी हुई। आर्यसमाज में जितने भी पण्डित हुए या हैं वह सब गुरुजी के ही शिष्य थे। आर्यजगत् के अतिरिक्त भी उनका शिष्य-परिवार इतना बड़ा है और इतनी दूर तक फैला हुआ है कि कोई भी नहीं गिन सकता। श्री गुरुजी के निधन से प्राचीन प्रणाली के दर्शन-शास्त्र के पंडितों की परम्परा टूट गई। भारतवर्ष में हाथ में पुस्तक लिए बिना और देखे बिना आद्योपान्त छोटे से छोटे और बड़े से बड़े आकर ग्रन्थों को मौखिक रूप में पढ़ाने वाला ऐसा पण्डिताग्रणी कहीं देखने को नहीं मिलेगा। इन पंक्तियों का लेखक इस बात में अपना गौरव समझता है कि वह इसी परम्परा में से एक तुच्छ व्यक्ति है, और गुरुजी का शिष्य कहलाने में गौरव मानता है। हमें समझ में नहीं आ रहा है कि हम किन शब्दों में गुरुजी के ज्येष्ठ पुत्र श्री हरनाथ जी शास्त्री तथा कनिष्ठ पुत्र श्री पं० रघुनाथशास्त्री को सान्त्वना दें। किन शब्दों से धैर्य बंधावें किन्तु सोचने की बात है कि श्री गुरुजी केवल उनके ही थोड़े थे वे तो संस्कृत जगत् के अक्षय्य निधि थे, वे तो भारतवर्ष के ही नहीं संसार के बड़े बूढ़ों में विशेष व्यक्ति थे। आज तो भारतवर्ष का एक एक संस्कृत विद्वान् और छात्र उनकी छत्रच्छाया उठ जाने से अपने आपको अनाथ समझ रहा होगा। श्री गुरूजी ने अपने सुदीर्घ जीवन रूप में इतना ज्ञानमय तप किया है कि इस जीवन के तो वे महर्षि थे ही, आगामी जीवन में भी भारतवर्ष में ही जन्म लेकर अब से उच्च पद को प्राप्त करेंगे, ऐसा दृढ़ विश्वास है।

एक वीतराग भगवद्भक्त का महाप्रयाण

श्री १०८ अच्युतमुनि चल बसे

मरण और जीवन किस प्राणी के साथ नहीं लगा रहता ? प्रतिदिन सहस्रों प्राणी काल के ग्रास बन जाते हैं और ठीक उसी समय उतने ही कभी २ उससे अधिक उत्पन्न होते हैं। किन्तु जीवन उसका है जिससे संसार का उपकार हो, संसार को सन्मार्ग का उपदेश मिले, आत्मा का सुधार हो, भगवान् के दर्शन हों। नहीं तो इस नश्वर, क्षणभंगुर शरीर में क्या रक्खा है, जिस का क्षणमात्र का भरोसा नहीं है।

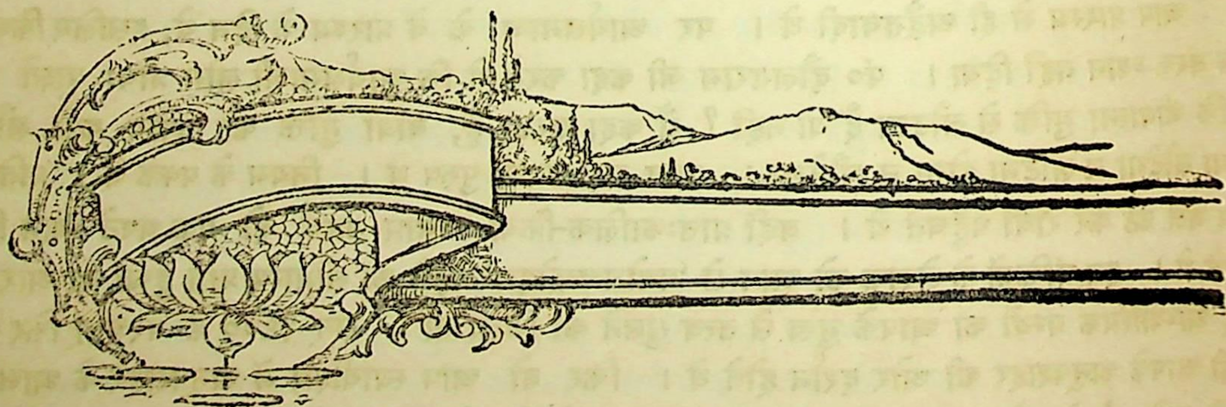
श्री अच्युतमुनि जी ऐसे ही महान् आत्मा थे। गत मास काशी में आपका स्वर्गवास हुआ। उनकी अवस्था ८४ वर्ष की थी। वह अपने मनुष्य जीवन को सफल कर गये, सार्थक कर गये और उनके जीवन को भी सफल सार्थक बना गये जो उनके संसर्ग में आये। आपका विनोद भी आध्यात्मिक रूप का होता था। जब सन् १८६४ में हम लाहोर पहुँचे थे तब आप डी० ए० वी० स्कूल में संस्कृताध्यापक थे, किन्तु कहलाते थे आर्यसमाज की महात्मा पार्टी के आदमी। महात्मा पार्टी वह जिसके अग्रणी स्व० महात्मा मुन्शीराम थे। डी० ए० वी० कॉलेज पार्टी के अग्रसर थे, महात्मा हंसराज जी। उस समय भी अच्युतमुनि जी पं० दौलतराम के नाम से प्रसिद्ध थे और आध्यात्मिक कथा करने में विख्यात थे। पंजाब भर से बुलावा आता रहता था और बड़ी ख्याति थी। हम लाहोर में ४-५ वर्ष रहे तब प्रति रविवार अमृतरसपान करने का अवसर मिलता ही रहता था। आप किसी के खण्डन-मण्डन के झगड़े में नहीं पड़ते थे। आत्मा, मन, शरीर, इन्द्रियाँ इनका सम्बन्ध, मनुष्य जन्म का उद्देश्य आदि पर ही बोलते रहते थे। उपनिषद् की कथा भी करते थे।

आप प्रारम्भ से ही अद्वैतवादी थे। पर आर्यसमाज के वे प्रारम्भ के दिन थे, इसलिए किसी ने इस तरफ ध्यान नहीं दिया। पं० दौलतराम जी कहा करते थे कि आर्यसमाजी लोग प्रायः पूछते रहते हैं कि जीवात्मा मुक्ति से लौटता है या नहीं ? मैं कहा करता हूँ, बाबा मुक्ति का उपाय करो, लौटना होगा लौटेगा न लौटना होगा न लौटेगा। आप बड़े संयमी पुरुष थे। नियम के पक्के थे। प्रतिदिन चार बजे उठ कर रावी पहुँचते थे। वहीं प्रातःकालिक-क्रिया समाप्त करके दो एक घण्टे ध्यान किया करते थे। इन पंक्तियों के लेखक को आप से 'प्रबोधचन्द्रोदय' पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था और भी कई आध्यात्मिक ग्रन्थों का आपके मुख से तत्व सुनने को मिला था। सन् १६०० के पश्चात् फिर कभी कभी आपके अनूपशहर की ओर दर्शन होते थे। फिर तो आप स्थायीरूप में अनूपशहर के आसपास में ही रहने लगे थे और आध्यात्म-साधन में संलग्न रहते थे और भिक्षावृत्ति रखते थे।

भैक्ष्यमन्नमजिनं परिधानम्।
रूक्षमेव नियमेन विधानम्॥

इस उक्ति को चरितार्थ करते रहते थे। इनके पास साधकों की, भक्तों की बड़ी भीड़ रहने लगी। तब वे कभी२ चुपचाप स्थान बदल देते थे। फिर आप एक बार मरणासन्न हुए तो आपने विद्वत्-संन्यास लिया। ईश्वर की कृपा हुई, आप बच गये। तब आपका अध्यात्मचिन्तन और भी बढ़ गया। भगवद्भक्ति और भी बढ़ाई, बड़े २ सेठ, साहूकार, राजा, महाराजा आपके दर्शनार्थ आते रहे, पर आप निःस्पृह ही रहे। आपने अनेक वेदान्त ग्रन्थों का अनुवाद कराया, जिनमें बोधसार, पंचदशी आदि का नाम उल्लेखयोग्य है। गतवर्ष आप कुछ काल हिन्दू विश्वविद्यालय में भी रह चुके थे। महामना मालवीय जी आपकी अध्यात्म चर्चा पर मुग्ध रहा करते थे। श्री अच्युतमुनि जी काशी के पास रामेश्वर में भी रहा करते थे। ऐसे वीतराग योगिराज यद्यपि जनता से दूर अलिप्त रहा करते हैं, तथापि ऐसे व्यक्ति जिस किसी देश में रहते हैं अपनी आध्यात्मिक किरणों द्वारा अलक्षितरूप में जनता का कल्याण ही करते हैं। आपने आर्यसमाज के प्रारम्भिक काल में आध्यात्मिक उपदेशों द्वारा लक्षों व्यक्तियों का उपकार किया। आर्यसमाज से विरक्त के मार्ग में जाने के पश्चात् भी आपने जो उपकार किया वह लिखने की बात नहीं, अनुभव करने की बात है। आप प्रायः बुलन्दशहर जिले में गंगा के किनारे भेरिया, कर्णवास, अनूपशहर, माण्डू (माण्डव्य ऋषि का तपःस्थान) में रहते थे।

जब अच्युतमुनि संसार से विरक्त थे, तब उनके गृहस्थाश्रम सम्बन्धी घटना का विवरण लिखना उचित प्रतीत नहीं होता। इतना ही कथन पर्याप्त है कि आप 'गृहेष्वतिथिवद् वसेत्' इस मनूक्ति को चरितार्थ करते रहे। आपके दो पुत्र थे। बड़ा तो विद्वान् ग्रेजुएट था, जिसका नाम चरणदास था, वह इस संसार में नहीं है। छोटा लड़का, सुनते हैं, कहीं डाक-विभाग में है। यह प्रायः अच्युतमुनि के दर्शनार्थ आता रहता था। इसका नाम सन्तराम है।



स्वर्गीय वैद्यराज पं० रामचन्द्र शर्मा

(संस्मरण)

पुराना महाविद्यालय मण्डल मानो खाली हो रहा है। स्वर्गीय श्री १०८ स्वा० शुद्धबोधतीर्थजी; श्री पं० भीमसेन शर्मा (स्वा० भास्करानन्द) आगरानिवासी, श्री पं० पद्मसिंह शर्मा, श्री० स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती इस प्रकार एक एक करके सब कालवश हुए और अभी हम उस धक्के से सम्भले भी नहीं थे कि ता० २६ मई १६३६ को महाविद्यालय का एक और महारथी चल बसा। श्री वैद्यराज पं० रामचन्द्रशर्मा एक प्रसिद्ध वैद्य और कार्यकर्त्ता थे। प्रत्येक देश और धर्म के कार्य में पूर्ण मनोयोग देने वालों में थे। पञ्जपुरी के तो आप प्राण थे। आपके द्वारा कितने गरीबों की चिकित्सा होती रही इसकी गिनती कौन कर सकता है। लोग कहते हैं कि महाविद्यालय के पुराने आदमियों में केवल आप (मैं नरदेव शास्त्री) और श्री स्वा० आनन्दबोधजी (श्री पं० रविशंकरजी) दो ही रह गये हैं। हम भी मुस्करा कर उत्तर दे देते हैं कि हमारी भी बारी आ रही है। तैयार हैं।

❀ ❀ ❀ ❀

श्री वैद्य रामचन्द्र जी का और हमारा सम्बन्ध कोई ३४,३५ वर्ष का है। जब हम गुरुकुल सिकन्दराबाद में मुख्याधिष्ठाता थे तब आप विद्यार्थी के रूप में उपदेशक क्लास में प्रविष्ट हुए। जब हमने सिकन्दराबाद छोड़ा और कलकत्ते चले गये तब आप वैद्यक करने लगे। वैद्यक आपकी पैतृकसंपत्ति थी। जब हम लोग महाविद्यालय में आ बैठे, आप भी आ बैठे। तब से ही इनके सार्वजनिक जीवन का प्रारम्भ है, कुछ काल महाविद्यालय में रहने के पश्चात् आपने कनखल में आसन जमाया। तब से लोकोपकारी कार्य में आप सर्वदा संलग्न रहे। क्या समाज, क्या देश, क्या धर्म, क्या कांग्रेस सभी क्षेत्रों में काम करते रहे। और ऐसी धाक जमाई कि इनका नाम दूर दूर तक फैल गया। वैद्य जी की रसशाला क्या थी एक सार्वजनिक पंचायती अखाड़ा था।

❀ ❀ ❀ ❀

वैद्य जी बड़े मिलनसार, परोपकारी जीव थे। वैद्यक का काम बड़ी गम्भीरता से करते रहते थे। आपका परिवार बड़ा है। बूढ़ी ८४वर्ष की माता पुत्र वियोग से बिलबिला रही है। बूढ़े मामा अपना माथा पीट रहे हैं। बड़ा लड़का विष्णु, क्या पूछते हो, उसके दुःख का कौन वर्णन करे और छोटे बच्चे दो पुत्र और दो पुत्रियां चिल्ला रहे हैं कि पिताजी क्यों नहीं बोलते, कहां गये ? कौन धैर्य देवे। अपने ही को सम्भालना कठिन हो रहा है। उनकी पत्नी का हाल देखा नहीं जाता। धैर्य ही तरणोपाय है। धीर लोग ही विपत्ति को पार कर सकते हैं।

वैद्य जी की श्मशान यात्रा बड़े ठाट से हुई जिसमें सैकड़ों-सहस्रों नर-नारी उपस्थित थे। और्ध्व-देहिक-क्रिया विधिवत् संपन्न हुई। मैं, उपाध्याय दिलीपदत्तजी, महाविद्यालय ज्वालापुर, कांगड़ी की मंडली सब उपस्थित थे। निवापाञ्जलि देकर, सुयोग्य बन्धु के वियोग पर कुछ देर अश्रुधारा बहाकर उनकी सद्गति के लिये परमात्मा से प्रार्थना करके श्मशान घाट से लौट आये, और करते क्या, ज्वालापुर, कनखल, हरद्वार में भी शोक सभाएँ हुईं—

बहुगुणी जमनालाल जी

(संस्मरण)

जिस वर्किङ्ग कमेटी में अंग्रेजी के दिग्गज पण्डित हों वहाँ स्व० श्री बजाज, अंग्रेजी के विज्ञ न होते हुए भी अपने चातुर्य से वर्किङ्ग कमेटी के सदस्यों पर अपनी अमिट छाप छोड़ते थे। इससे स्पष्ट है कि वे नितान्त दक्ष पुरुष थे। जरा किसी ने कुछ कहा कि प्रथम वाक्य को सुनते ही वे वक्ता के अगले वक्तव्य को भाँप जाते थे, ऐसे विचक्षण पुरुष थे स्व० जमनालाल बजाज।

महात्मा गांधी जैसे संसार के महापुरुष को अपने वश में लाना उनकी महात्मा जी के प्रति अगाध भक्ति का परिचायक है। भक्तों के वश में जब साक्षात् भगवान् आ सकते हैं, आजाते हैं, तब भक्त और शक्त स्व० जमनालाल जी के महात्मा जी को वश में करना कौन कठिन बात थी!

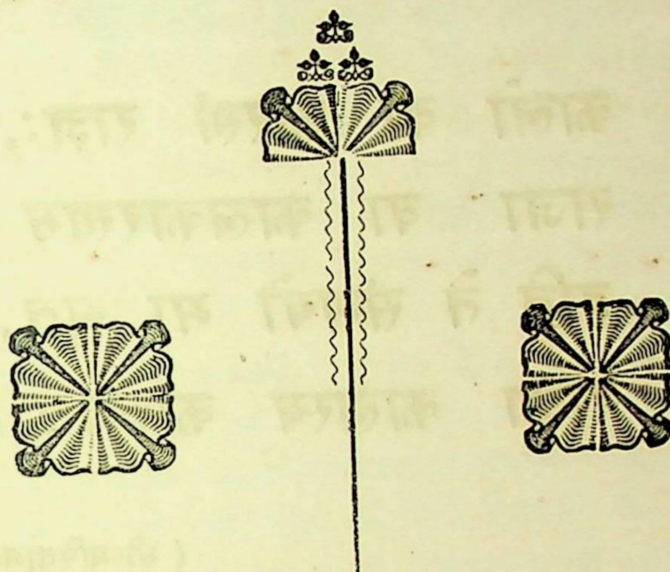
मेरा और स्व० श्री जमनालाल जी बजाज का परिचय सन् १६१६ से ही रहा है जब कि मैं कांग्रेस के कार्यक्षेत्र में प्रत्यक्ष रूप में उतरा। सन् १६१६ से १६३१ तक मैं ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी में रहा। सो उसके प्रत्येक अधिवेशन में उनसे किसी न किसी विषय पर बातचीत करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। प्रतिवर्ष कांग्रेस के महाधिवेशन में भी उनसे मिलने का मौका मिल जाता था। वे बोलते कम थे, क्रियात्मक कामों में चुपचाप प्रारम्भ किए हुए कार्यों का पता उनके महाफलों से ही चलता था। कांग्रेस का कौनसा ऐसा काम रहता होगा जिसमें उनका हाथ काम न करता होगा? ऐसा कौनसा कार्य होगा जिसमें वर्किङ्ग कमेटी के सदस्य अथवा महात्मा गांधी उनसे परामर्श न लेते रहे होंगे?

उन्होंने अपने जीवन द्वारा अपने को केवल कुशल व्यापारी ही सिद्ध नहीं किया अपितु पात्रवर्षी पर्जन्य की तरह पात्र-वर्षी महादानी, कुशल सत्याग्रही, विचित्र दूरदर्शी भी सिद्ध किया।

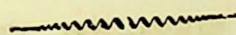
कलकत्ते में कांग्रेस के दिनों में आसाम-बंगाल हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन था। महात्मा गांधी इस सम्मेलन के अध्यक्ष थे और स्वागताध्यक्ष श्री सुभाषबाबू थे। जब सब कार्यवाही हो चुकी तब सम्मेलन की सहायता के लिए अपील की गई। महात्मा जी की अपील पर चारों ओर से धन बरसने लगा, पर इसको इकट्ठा कौन करता? महात्मा जी ने श्री बजाज जी की ओर देखा और बजाज जी ने खड़े होकर एकदम दस-बारह आदमियों के नाम बोल दिये कि भीड़ में जाकर एकदम धन संग्रह करें। मेरा नाम भी बोला गया था। हम लोग आश्चर्य में पड़ गये कि इतनी शीघ्रता में उन्होंने हमारे नाम बोल दिये, मानो वे पहिले से ही हमारी ताक में थे कि ऐसा मौका आया तो हम लोगों का नाम ले लेंगे। अपूर्व दक्षता थी।

रामगढ़ कांग्रेस के अवसर पर मेरी उनकी भेंट हुई थी। तब मैंने उनको शरीर से दुर्बल पाया। मैंने कहा सेठजी क्या बात है, इतना दुर्बल तो मैंने आपको कभी भी नहीं देखा था। एकदम हँस कर बोले कि शरीर का काम शरीर करता रहेगा, हम अपना काम करते रहेंगे, हमारे काम में कोई रुकावट नहीं है। प्रत्यक्ष है कि ऐसा उत्तर वही व्यक्ति दे सकता है जो कि स्वशरीर में अध्यास न रखता हो।

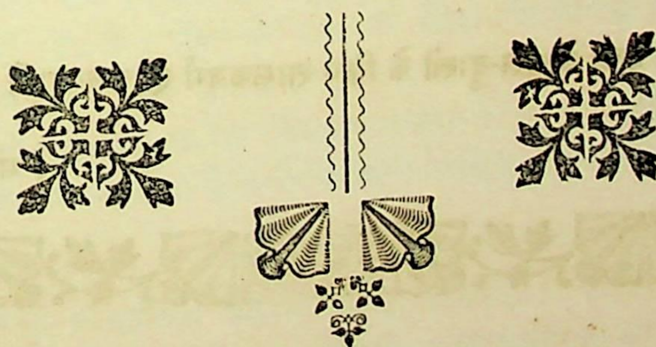
आत्म-कथा



चतुर्थ भाग



प्रकीर्णांक - २



कालो वा कारणं राज्ञः,
राजा वा कालकारणम् ।
इति ते संशयो मा भूत्,
राजा कालस्य कारणम् ॥

(भीष्मपितामह, युधिष्ठिर के प्रति)

समय को अच्छा-बुरा बनाने वाला,
समय को अच्छा-बुरा लाने वाला,

राजा अथवा शासकवर्ग
ही है ।

प्रजा के सुख-दुःखों के लिए शासकवर्ग ही उत्तरदायी है ।

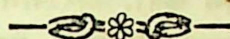
(महाभारत-शान्तिपर्व)

वन्दे मातरम्

काम के पाँच वर्ष

(१९४२ से १९४७)

हमने कहा "अंग्रेज़ो, भारत छोड़ो" और वे छोड़ गये।



१९४२ में महात्मा गाँधीजी ने "भारत छोड़ो" (Quit India) की बात बड़े जोर से उठायी थी। फल यह हुआ कि प्रबल दमन खड़ा हुआ। ता० ९ अगस्त को बम्बई की ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी में "भारत छोड़ो" का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारें महीनों पूर्व अस्त्र-शस्त्र-सुसज्जित थीं। प्रत्येक प्रान्त में पकड़े जाने वालों की सूची तैयार ही थी। पकड़-धकड़ प्रारम्भ हुई, हमारे प्रान्त में ५ सहस्र की सूची तैयार थी। ता० ९ से ही पकड़ा-पकड़ी प्रारम्भ हुई, जो जहाँ मिला पकड़ा गया, जेल में बन्द किया गया, कांग्रेस के विशिष्ट मेंबरों की एक सभा बा० खुरशेदलाल एडवोकेट के मकान पर बुलाई गई थी। सभा हो ही रही थी—लगभग सौ व्यक्ति उपस्थित थे। खबर आई कि पकड़-धकड़ के लिये कोतवाली से लॉरियाँ चल पड़ी हैं। बा० खुरशेदलाल जी, श्री कृष्णचन्द सिंगल आदि दो चार व्यक्ति बाजार में "भारत छोड़ो" का नारा लगाने गये। शेष अपनी तैयारी में इधर उधर चले गये। मैं, श्री सुरेशचन्ददास वकील, बा० नारायणदास भार्गव आदि पांच छह व्यक्ति रमा औषधालय (अजबपुर) में गये वहीं विचार विमर्श करने लगे कि क्या करना चाहिये। यही परामर्श हो रहा था कि कचहरी पर धरना देकर कचहरी का बहिष्कार प्रारम्भ किया जाय। इतने में हमारे मित्र बाकरअली खाँ (सी-आई-डी) पुलिस लॉरी सहित आ पहुँचे। "चलिए यहाँ क्यों बैठे हैं, हम आप को अच्छी जगह बैठायेंगे, जहाँ आप अच्छी तरह सोच सकते हैं। महीनों सोचते रहिये"—फिर क्या था एक ही कहकहा उठा और हम लॉरी में बैठ कर जेल पहुँचे। अभी मेरे तथा दास बाबू के वारन्ट पर मैजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर नहीं हुए थे। जेलर ने मना कर दिया कि मैजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर के बिना हम भीतर नहीं लेंगे। यह बात हमारे लिये अच्छी ही हुई। घण्टा भर जेल के बाहर बड़े पीपल के नीचे बैठे रहे, लोग आते गये, मिलते गये, हम सन्देश देते रहे। लगभग ६ बजे सायं हम जेल के भीतर चले गये। बस तब से ३-४ दिन तक रात में, दिन में जत्थे के जत्थे पकड़े हुए लाये गये।

१५ दिन तक जेल में लगभग ४०० काँग्रेसी हो गये मानों जिला कानफरन्स जेल में ही करने की तैयारी हो रही है। उधर शहर में हड़ताल और जलूसों का जोर रहा, विद्यार्थियों ने खूब उत्साह दिखाया। डी० ए० वी० कॉलेज के विद्यार्थी प्रमुख रहे। महादेवी कन्या पाठशाला की कन्याओं ने भी खूब वीरता का परिचय दिया। एक दिन तो ३-४ सहस्र विद्यार्थियों का जलूस बाजार में होता हुआ जेल के फाटक पर पहुँचा। जेलवाले घबरा गये कि कहीं जेल को न तोड़ डालें। जेलर ने मुझ से कहा कि लड़कों को

समझा दो। मैंने कहा मिलादो तो समझा देंगे। एक खिड़की के पास मैं खड़ा हो गया, ५-६ अग्रणी छात्र बुलाये गये और मैंने उन्हें समझा दिया कि जो कुछ करना हो शहर में करो, जिले भर में फैल जाओ। वे मान गये और शान्तिपूर्वक चले गये। हमारे जेलर श्री रिजवी भद्र पुरुष थे। सुपरिण्टेन्डेन्ट रायसाहब रामस्वरूप भी भद्र पुरुष थे। फिर भी नवयुवक बन्दियों के साथ किसी न किसी बात पर तना-तनी हो ही जाती थी। बात यह थी की नवयुवक कहते थे कि जब "भारत छोड़ो" नारा लगाया तब जेलाधिकारियों को भी हम क्यों मानें, जेल के नियमों को भी क्यों मानें। सारांश किसने कार्य करना था, सब मौज में रहते थे। देहरा जेल बहुत छोटी जेल है। उसमें केवल १२० कैदी रह सकते हैं। जब ४५० कैदी हो गये तो रहने का स्थान कहाँ, कारखाना बन्द करके वहां भी कैदी रक्खे गये। मामूली इखलाकी कैदी भी प्रसन्न हुए कि उनका भी काम बन्द हुआ। दूसरी जगह कैदियों को भेजते तो कहां भेजते, प्रान्त भर में सब जेल ठसा ठस भरे हुए थे। जेल में कोई काम तो था ही नहीं, नवयुवक प्रत्येक बात में अडंगा लगाते थे, थालियां कभी भी बजने लग जाती थीं। एक ऊधम था, एक मनोरञ्जन था, स्वभावशास्त्र के अध्ययन के लिये एक अच्छी मनुष्यशाला बन गयी थी। जब तीन मास तक देहरे में किसी प्रकार से आन्दोलन बन्द नहीं हुआ तब सी०-आई०-डी० ने समझा कि चोटी के ४०-५० व्यक्तियों को जब तक दूसरे स्थान पर न बदला जायगा तब तक आन्दोलन शान्त न होगा।

ऊपर लिखा गया और वहाँ से आज्ञा आई कि ५० व्यक्तियों को लखनऊ, बरेली अथवा आगरा सेन्ट्रल जेल में बदल दिया जाय। सुपरिण्टेण्डेन्ट आये और कह गये २५-२५ के दो जत्थे जायंगे। तीनों जेल में से जिस जेल में जाना चाहो वहीं भेज देंगे। देहरे वालों के लिये लखनऊ बहुत गरम स्थान था, बरेली सेन्ट्रल जेल को १६४० के व्यक्तिगत सत्याग्रह में देख चुके थे, इसलिये पं० नारायणदत्त डंगवाल ने आगरा सेन्ट्रल को पसन्द किया। और २५ व्यक्ति वहां भेजे गये। यह नवम्बर के अन्तिम सप्ताह की बात है। दो एक दिन के पश्चात् दूसरा २५ का जत्था भी चल पड़ा। आगरे गये तो वहां और भी आनन्द था। पर लोग आनन्द लेना नहीं जानते थे। कोई न कोई झगड़ा खड़ा कर लेते थे, तथापि शिक्षित समुदाय अधिक था इसलिये अध्ययन-अध्यापन, लेखन, वाचन, सभा, समाज, गोष्ठी सत्संग, हवन, भजन, पूजन आदि में भी कुछ समय जाता था। इस जेल में सभी प्रकार के लोग थे। कम्यूनिस्ट अपना झण्डाभिवादन पृथक् ही करते थे, सोशियालिस्ट भी कम नहीं थे। परले सिरे के क्रान्तिकारी भी थे, गाँधीवादी भी पर्याप्त संख्या में थे। एक अच्छा जमघट था। आगरे जिले के सभी प्रमुख व्यक्ति यहां थे ही पर झाँसी के धुलेकर, खेर आदि प्रमुख व्यक्ति भी थे। मैनपुरी से भी बहुत व्यक्ति आये थे। वहाँ पहिले पहिले आगरे वालों की नीति-रीति प्रबल रही, फिर देहरे वालों की रीति-नीति प्रबल हो गई।

हमारे सुपरिन्टेण्डेण्ट श्री ए० एम० खाँ बहुत सज्जन पुरुष थे पर नीचे के अधिकारी खचरे थे, इसी लिए कई बार झगड़े हुए। बड़े बड़े झगड़े हुए। दो बार आई० जी० आया और किसीने परेड तक नहीं की। बहुतों को तनाही में भेजा गया, बहुतों को दूसरे जेल में भेजा गया। आगरा जिले के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट श्री शिवदसानी भी प्रतिमास आते रहे। देहरे के भूतपूर्व कलेक्टर रॉस (जो यहाँ कमिश्नर थे)

वे भी एक बार आये थे। इस जेल में महात्मा गांधी के अनशन का समाचार मिला था। महात्मा जी के स्वास्थ्य के लिए कई दिनों तक बृहद्यज्ञ हुआ। इस जेल में दो एक मास तक न कोई पत्र मिला, न कोई समाचार पत्र, ऐसे रहते थे कि मानों संसार से कोई सम्बन्ध ही नहीं। पहिले पता चला कि ६ वर्ष में छूटेंगे। फिर पता चला कि प्रत्येक जिले के प्रमुख व्यक्तियों को छोड़ कर सब लोग शीघ्र छूटेंगे। फिर पता चला कि जो लोग अहिंसात्मक रहे वेही छूटेंगे। हम इस सेण्ट्रल जेल में एक वर्ष रहे। और ता० १७ नवम्बर (४३) को छूटे। छूटते ही हम राजामण्डी स्टेशन पर पहुँचे, वहीं सामान रखकर पं० हरिशंकर शर्मा संपादक आर्यमित्र से मिले। स्टेशन पर बहुत से लोग मिले। देहली पहुँच कर अर्जुन नैशनल कॉल, हिन्दुस्थान आदि के सम्पादकों से मिले। ता० १६ नवम्बर को प्रातः हरद्वार पहुँचे। महाविद्यालय के लोग लेने आये थे। महाविद्यालय पहुँच कर १५-२० दिन विश्राम किया। फिर देहरा जिले में यत्र तत्र मिलने गये। महाविद्यालय की स्थिति बदली हुई थी। बहुत सी बातें मुझे नहीं रुचीं। उनका उल्लेख न करना अच्छा। मार्च (१९४४) के प्रारम्भ में मैंने दक्षिण की यात्र की। हैदराबाद से बेझवाडा तक, उधर शोलापुर से उस्मानाबाद तक, उधर बम्बई तक घूम आया, सबसे मिल आया। इस यात्रा में पता चला कि पिछले दश वर्ष से हमारे बहुत से निकट तथा दूरवर्ती सम्बन्धी तथा इष्ट मित्र काल-कवलित हो चुके हैं। यात्रा अच्छी रही, नये अनुभव प्राप्त हुए। अभी उधर ही घूमने तथा मद्रास तक जाने का विचार था पर महाविद्यालय से बार बार पत्र गये कि उत्सव में अवश्य सम्मिलित होऊँ इसलिये दक्षिण की यात्रा स्थगित करके अप्रैल में उत्सव से दो चार दिन पूर्व यहां आया। उत्सव हुआ और अच्छा हुआ पर एक ही बात बुरी हुई कि चुनाव में तीन वर्ष के लिये मैं आचार्य चुना गया।

अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय ।
बलादिव नियोजितः ॥

मैंने मनमें कहा देव तू चाहे या न चाहे, तुझे विवश हो कर करना पड़ेगा।

मेरे पीछे महाविद्यालय में भयङ्कर पार्टी बन्दी हो गयी थी। स्नातकों में दो दल हो गये थे। मैंने और कुलपति स्वा० आनन्दबोधतीर्थ जी ने निश्चय किया कि चुनाव से अलिप्त रहा जाय। सो हम तो चुनाव के समय में नहीं गये तो भी हम चुने गये यह हमारे लियें आश्चर्य ही हुआ। पीछे पता चला कि चुनाव में जब एक पार्टी हारती ही गई तब एक ने आचार्य के पद के लिए हमारा नाम प्रस्तुत किया और इनमें दोनों दल वालों ने हमारे लिये वोट दिये। बहुमतवाली पार्टी भी हक्का बक्का रह गई कि यह क्या हुआ क्योंकि आचार्य पद के लिये वे किसी स्नातक को ही चाहते थे। गुरुकुल कांगडी की तरह स्नातकरोग महाविद्यालय में भी चिपटा हुआ था। अल्पमत वाली पार्टी ने मेरे "आचार्य" होने में अपनी विजय समझी। बहुमतवाली पार्टी ने अन्तरंगसभा में उसका पूरा बल होने पर भी अपनी पराजय समझी—

त्रैवार्षिक चुनाव पर पं० नरदेव जी

श्री नरदेव शास्त्री "वेदतीर्थ" लिखते हैं:—महाविद्यालय ज्वालापुर का नया त्रैवार्षिक चुनाव हो गया। १९४० से ही अब तक महाविद्यालय के अन्तःस्थ प्रबन्ध में मेरा कोई हाथ नहीं रहा। क्योंकि मैं अन्य राजनैतिक उलझनों में फँसा रहा। ढाई वर्ष तो बन्दी रहा। अपने राम की कभी इच्छा भी नहीं हुई कि किसी पद को ले लेवें अथवा उसके लिये प्रयत्न करें। यही इच्छा थी कुलपति आनन्दबोध तीर्थ जी की भी। महाविद्यालय मण्डल में हम दो ही व्यक्ति पुराने थे और हमने निश्चय किया था कि चुनाव में तनिक भी भाग न लेंगे। इसी निर्णयानुसार हम दोनों महासभा के अधिवेशन में नहीं गये।

विचित्र योगायोग देखिए, चुनाव के लिए समुपस्थित दो प्रबल दलों के संघर्ष में किसी ने मेरी सम्मति के बिना ही नाम प्रस्तुत कर दिया और मेरा नाम बड़े बहुमत से आ गया। कुलपति जी का भी नाम आ गया। जब यह बात हमने सुनी तो हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। तुरन्त मैंने अपने इष्ट मित्रों से परामर्श किया। जो दूर थे उनसे पत्र-द्वारा परामर्श किया। सबकी यही सम्मति रही कि जब नाम आ गया है तब काम करना ही चाहिए। मेरी तुच्छ सम्मति में दैवी घटना ही हुई है, नहीं तो हमारे नाम के आने की कोई सम्भावना ही न थी। जो कि हमारा नाम लाना नहीं चाहते थे उनकी इच्छा के विरुद्ध और हमारी अपनी इच्छा के विरुद्ध भी हमारा नाम आ ही गया। अपने राम गत ३६ वर्षों से प्रायः सभी बड़े २ पदों को कई बार भुगत चुके हैं। अब ऐसी अवस्था भी नहीं, रुचि भी नहीं, शक्ति भी नहीं। वृद्धावस्था शरीर को जर्जर करती जा रही है, समय भी भयंकर आ रहा है, चिन्ता के कारण जी घबरा जाता है, पुराने साथी भी नहीं। सभी नये कार्यकर्ता, सभी अपने ही पर मति-विभिन्न। ऐसी दशा में क्या होगा, कैसे होगा, यही समझ में नहीं आ रहा है। जिस अदृष्ट चक्र ने हमको इस भँवर में फांसा है वही पार भी कर देगा, ऐसा दृढ़ विश्वास है। इस संस्था द्वारा बड़ा उपकार हुआ है। आगे भी होता रहे, यही अभिलाषा है। यदि अधिक क्लेश का हेतु समझेंगे तो मुक्त होना तो अपने हाथ की बात है। इस समय तो हटने का कोई अवसर ही नहीं।

हिन्दुस्थान—१-५-४४

इन तीन वर्षों में ४४-४५, ४५-४६, ४६-४७ महाविद्यालय में कैसे कैसे बीता और क्या क्या हुआ यह लम्बी कहानी है, तथापि—

हमने अपने राजनैतिक गुरु लोकमान्य तिलक से सीखा था कि—

सुखं वा यदि वा दुःखं,
प्रियं वा यदि वाऽप्रियं।
प्राप्तं प्राप्तमुपासीत,
हृदयेनापराजिता॥

सुख आवे, दुःख आवे, प्रिय हो, अप्रिय हो अपराजित हृदय से काम करते रहना चाहिए। इसलिए हमने तीन वर्ष तक दनदनाते पूरे किये और सन् ४७ के चुनाव में भी हम आ सकते थे (क्योंकि बहुमत पार्टी अब देख चुकी थी कि हमारे रहने से महाविद्यालय तथा उनका गौरव और लाभ ही है) तथापि हमने देखा कि स्वेच्छा से ही हटना, लोगों के चाहते हुए ही हटना, अच्छा है। इसलिए हमने सभा को लिख दिया कि किसी पद के लिये हमारा नाम प्रस्तुत न किया जाय, हम स्वीकार नहीं करेंगे। इस प्रकार हमारा छुटकारा हुआ और हम "निर्लेप नारायण" की तरह महाविद्यालय के उत्तरदायित्व से मुक्त होकर आनन्द मना रहे हैं।

देहरादून जिले में भी कांग्रेस में बड़ी दलबन्दी चली आ रही थी। मैंने कई प्रयत्न किये पर कहीं सफल हुआ, कहीं असफल रहा। मैं गाड़ी धकेलता ही रहा। सब जगह प्रान्तों में इसी प्रकार के झंझट फैले हुए हैं। समय का फेर है। जिले की बैठकें बड़ी धूमधाम की होती रहीं। जिले भर से लोग बैठकों की कार्यवाही देखने सुनने आते रहे। हमारे प्रधानकाल में ही श्री राजेन्द्र बाबू, श्री विजयलक्ष्मी पण्डित, श्री गोविंदवल्लभ पन्त, श्री पं० जवाहरलाल नेहरू, श्री सरदार पटेल आदि का जिले में आगमन तथा दौरा रहा। सारांश हमारे प्रधानकाल में दोनों दल कुछ दब दबा कर चले इस लिए पूर्व वर्षों की अपेक्षा काम अच्छा चला, ढंग से चला—

यह परम प्रसन्नता की बात है कि स्वतन्त्रता दिवस धूमधाम से हमारे ही प्रधानत्व में आया। और ऐसी धूमधाम से मनाया गया कि देहरा जिला चिरकाल स्मरण रक्खेगा। इधर से तो छुटकारा हो गया पर देहरा जिला हमको छोड़ने को तैयार नहीं था। उधर कांग्रेस का काम करना ही पड़ा। महाविद्यालय और कांग्रेस दोनों का कार्य हम किसी प्रकार सम्भालते रहे। १९४५ मार्च में डॉ० गैरोला के चुनाव निमित्त गढ़वाल तथा श्री महावीर त्यागी के निमित्त देहरादून जिले का दौरा करना पड़ा। १९४६ अक्तूबर ता० १६ को हम फिर देहरादून जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान चुने गये। तब से देहरे जिले भर में भ्रमण करना पड़ा, जगह २ कान्फ्रेन्सें करनी पड़ीं। बाढ़वाला, बडवा, डोभरी चूहड़-पुर, सैलाकुई, झाजरा, लांगा, रुद्रपुर, कालसी आदि पछवादून के स्थानों में तथा परवादून के प्रायः सभी छोटे बड़े स्थानों में जाना पड़ा। बाढ़वाला, झाजरा, भोगपुर की कान्फ्रेन्सें धूमधाम की रहीं। भोगपुर कान्फ्रेन्स के सभापति श्री धुलेकर जी एम्० एल्० ए० थे। वर्षों के पश्चात् ऐसा जमघट रहा।

हाँ एक बात लिखना भूल गये। जुलाई ४६ में हम आम रोग से रुग्ण हो गये और अगस्त, सितम्बर में हम मसूरी रहे। जब अक्तूबर के अन्त में ज्वालापुर लौटे तो बहुत बीमार पड़ गये, वायु का झटका लग गया था, किसी प्रकार बच गये तो वैद्यों ने परामर्श दिया कि किसी सूखे प्रदेश में जाना चाहिए। इसलिए सिन्ध गये, कराची रहे, सिन्ध के समस्त प्रसिद्ध प्रदेश देखे, यह यात्रा हमारे लिए अत्यन्त सुखकारक एवं स्वास्थ्यप्रद सिद्ध हुई। हमारी रुग्ण दशामें कनखल के पं० विष्णुदत्त वैद्य तथा मेरठ के पं० हरिशंकर वैद्य ने बड़ी तत्परता से काम लिया।

यह वायु का झटका हमारे स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त विघातक रहा। तब से अब तक (अक्तूबर ४७) हम अच्छी तरह पनप नहीं पाये हैं। वैद्यों ने परामर्श दिया था कि चिन्ता के सभी कार्यों से

मुक्त हो जाओ तब ठीक होगे। अप्रैल (४७) में महाविद्यालय की चिन्ता से मुक्त हो ही गया था और अब (अक्तूबर ४७) में कांग्रेस कार्य से भी मुक्त होने की चिन्ता में हूँ। त्यागपत्र (प्रधान पद से) भेज दिया है। अब मुझे सार्वजनिकरूप में किसी प्रकार की चिन्ता नहीं है। स्वस्थ रहे, उत्साह उठा, जी ने चाहा तो कोई काम कर दिया नहीं तो मौज में बैठे रहे—महाविद्यालय से मुक्त होने के पश्चात् आर्यमित्र १ मई—४७ में निम्नलिखित लेख प्रकाशित हुआ—

ज्वालापुर-महाविद्यालय

[आर्यमित्र, १ मई १९४७]

(संवाददाता द्वारा)

ज्वालापुर-महाविद्यालय का ३९ वाँ महा-महोत्सव ५-६-७-८ अप्रैल को सानन्द समाप्त हुआ। महोत्सव का प्रारम्भ आचार्य श्री नरदेव शास्त्री द्वारा हुआ। ॐ पताकारोहण के समय आपने पताका का महत्त्व समझाते हुए कहा कि यह पताका हमारी संस्कृति की पोषक है। सर्वात्मना इसकी रक्षा होनी चाहिए। श्री सुखलालसिंह आर्य मुसाफिर ने रुग्ण रहते भी चौथे दिन की समाप्ति के समय करारा भाषण दिया और कहा कि आर्यसमाज के अतिरिक्त वैदिक धर्म तथा संस्कृति की रक्षा कोई भी नहीं कर सकता। श्री रामरक्ष सांख्यरत्न, स्नातक महाविद्यालय (वर्त्तमान राँची निवासी) के तीनों भाषण अत्यन्त प्रभावशाली हुए। श्री चौ० चरणसिंह एम० एल० ए० तथा श्री कृष्णदत्त पालीवाल एम० एल० ए० (सेण्ट्रल) के भाषणों ने जनता में उत्साह संचारित किया। आर्य-किशोर-सभा, श्री उदयवीरशास्त्री जी की अध्यक्षता में हुई। विद्वत्कला परिषद् के अध्यक्ष थे श्री वाचस्पति शास्त्री। युवक-सम्मेलन श्री पालीवाल जी के सभापतित्व में हुआ। श्री रुद्रदेव तथा श्री सत्येन्द्र के धनुर्विद्या सम्बन्धी खेल प्रभावोत्पादक रहे। इस वर्ष २० नूतन ब्रह्मचारी प्रविष्ट हुए। ब्र० देवपाल तथा ब्र० राजकुमार दो स्नातक हुए। श्री स्वा० आनन्द-प्रकाश तीर्थ तथा श्री स्वा० केवलानन्द की कथाएँ प्रभावोत्पादक रहीं। कविसम्मेलन भी हुआ। प्रति दिन पण्डाल श्रोताओं से खचाखच भरा रहता था। अभ्यर्थना में महाविद्यालय को बीस सहस्र रुपये के लगभग मिला। समय की विकट स्थिति को देखते हुए महोत्सव को अत्यन्त सफल कहना चाहिए। श्री कु० नरेन्द्रसिंह जी, श्री कान्तिचन्द्र प्रभाकर, श्री हेमचन्द्र, श्री जयदेव जी आदि ने भजनों द्वारा श्रोताओं का मनोरंजन किया। बीच-बीच में श्री गोपालदत्त शास्त्री, श्री प्रकाशवीर शास्त्री, श्री वाचस्पति शास्त्री, श्री मुरारीलाल शास्त्री के समयोपयोगी भाषण हुए। दीक्षान्त के समय श्री रायबहादुर मथुरादास जी एम० एल० सी० सभापति रहे। दीक्षान्त भाषण दिया श्री रामरक्ष सांख्यरत्न ने। श्री पं० रामदत्त, शुक्ल, श्री पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट, श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय के भाषणों ने जनता को मुग्ध किया। इस वर्ष संस्था का त्रैवार्षिक चुनाव भी हुआ। प्रायः पूर्व के ही अधिकारी रहे। विशेष बात यह हुई कि आचार्य नरदेवशास्त्री वेदतीर्थ महाविद्यालय की सेवा से निवृत्त हुए, गत वर्ष से आपका स्वास्थ्य खराब हो गया है। वे अपने स्वास्थ्य को संभालेंगे और भविष्य में भी देश तथा साहित्य-सेवा में संलग्न रहेंगे। भविष्य में महाविद्यालय उनका विश्रामस्थान रहेगा, न कि कार्यक्षेत्र।

॥ वन्दे मातरम् ॥

जय-हिन्द

भोगपुर-कान्फ्रेंस

(२२ मार्च १९४७)

* श्री नरदेवशास्त्री जी का प्रारम्भिक भाषण *

देवियो और भद्र ग्रामीण भाइयो,

आप लोग तो भारत के हृदय हैं। महात्मा गान्धी ने भी ग्रामवासियों को ही भारत का हृदय माना है, उन्होंने नगरों को छोड़ दिया है। उनके सारे प्रयत्न भारत के सात सवा सात लाख ग्रामों में रहने वाले भाइयों के उद्धार में ही हो रहे हैं। ग्रामवासी सुखी हुए तो भारत सुखी, ग्रामवासी दुःखी तो भारत दुःखी। कांग्रेस के शुभ, त्यागमय प्रयत्नों का ही यह फल है कि हम स्वराज्यभवन के द्वार पर पहुँच गये हैं, पूर्णस्वतन्त्रता की सुन्दर छटा को देखने लग गये हैं। हमारी नाव पहिले कहाँ थी ? यह स्थान बहुत पीछे रह गया है, बहुत पीछे रह गया है। हमें जहाँ पहुँचना है वह किनारा कितनी दूर है ? वह समीप ही है, समीप ही है। पर, भाइयो हमको सावधान रहना चाहिये कि किनारे पर कोई दुर्घटना न हो जाय। यह भारत का संक्रमण काल है। संक्रमण काल उसको कहते हैं जबकि शक्ति एक शासक अथवा शासक-वर्ग से छूटकर दूसरे शासक अथवा शासकवर्ग के पास जाने को होती है। समुदायों, राष्ट्रों, देशों के इतिहास में यह संक्रमण काल बहुत भयङ्कर रहता अथवा होता है। इतिहास इस बात का साक्षी है।

ऐसे संक्रमण काल में जिसके हाथ से शक्ति छूटकर जाने लगती है वह भी जाते-जाते उपद्रव करने लगता है, ऐसे झगड़े डाल जाता है जो पीछे बहुत काल तक चलते रहें। जिस राष्ट्र अथवा देश के हाथों में शक्ति आने लगती है, उसमें भी छोटे छोटे समुदाय, छोटी छोटी जातियाँ शक्ति प्राप्त करने के लिये झपटती हैं, खड़ी होती हैं, उपद्रव मचाती हैं। इसके अतिरिक्त जहां से किसी प्रकार के भय की आशंका नहीं रहती वहाँ से भी भय खड़े हो जाते हैं और उन्नति के मार्ग में बाधक पड़ जाते हैं। ऐसे ही संक्रमण काल में जिस प्रजा के हाथों में शक्ति आने को होती है परस्पर फूट, वैमनस्य, अविश्वास, परस्पर जिघांसा अर्थात् पिछले बदले लेने की भावना जागृत हो उठती है। इस प्रकार लज्जा, शंका, भय, जागृति के चिन्ह एक साथ चारों ओर से उमड़ पड़ते हैं। यही समय परीक्षा और धैर्य का है। ऐसे संक्रमण काल में युद्धकालीन दशा की अपेक्षा अधिक दुःख आते हैं, प्रजा में एक वार तो घोर निराशा छा जाती है। भाइयो, यदि मध्यरात्रि का, घोर अन्धकार का समय आ गया तो समझ लीजिये प्रातःकाल समीप ही है, अरुणोदय होने वाला है, सूर्यदेव आने वाले हैं—इसीलिए धैर्य रखिये। हम सबका विशेषतया कांग्रेस जनों का कार्य है कि वे जनता को संभाले रक्खें, क्योंकि उनकी प्रिय संस्था कांग्रेस-महासभा ही

इस समय भारत में सर्वोपरि है। इस बात को हमारे शासक वर्ग ही नहीं अपितु संसार के समस्त राष्ट्र मान गये हैं। शासक वर्ग हमारे हाथ सत्ता सौंपने को तैयार हो गये हैं। एक वर्ष, और बेड़ा पार। इस समय कांग्रेस ही सर्वोपरि संस्था है इसलिए कांग्रेसजनों का कर्तव्य है कि वे उच्च चरित्र, धैर्य, सहनशीलता, मधुरता आदि गुणों द्वारा कांग्रेस संगठन को सुदृढ़ करें और अपनी कांग्रेस महासभा का गौरव बढ़ावें—परस्पर विश्वास सहयोग बढ़ावें।

इतनी भूमिका के पश्चात् मुझे आगे नहीं बढ़ना चाहिये। सभापति श्री धुलेकर जी जो कि विद्या में, बुद्धि में, नेतृत्वादि गुणों में हमारे प्रान्त के माने हुए नेता हैं, आपको परिस्थिति तथा कर्तव्य का बोध करायेंगे। इस मण्डल के सौभाग्य कि उसको ऐसा गुणी, मानी सभापति मिला। आप हमारे प्रान्त के नेता तो हैं ही, विधान परिषद के भी सदस्य हैं। आप झांसी के आयुर्वैदिक विश्वविद्यालय के संस्थापक भी हैं। आप अनुपम वक्ता, गम्भीर विचारक एवं विवेचक हैं। आप झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की भूमि के हैं, महाराष्ट्रीय हैं, बस इसी में समझ जाइये कि क्या क्या हैं।

भोगपुर देहरादून जिले का एक निसर्ग रमणीय सुन्दर पर्वतीय प्रदेश है। एक ओर ऊपर रम्य पर्वतमाला, दूसरी ओर नीचे की ओर अनुपम वनश्री, मध्य में कलकल ध्वनि करने वाला आनन्ददायक कुल्या प्रवाह (नहर) है—एक आनन्द का स्थान है। आपके सभापति जी भी इस स्थान को देखकर प्रभावित तथा आनन्दित हुए होंगे। इसी प्रदेश के साथ डेढ़ मील पर टिहरीराज्य की सीमा है। है छोटासा राज्य पर है इसका विस्तार दूर तक, तिब्बत तक। इसमें भी प्रजा को कष्ट हैं, बहुत कष्ट हैं। पर भारत की दशा के साथ-साथ इसका भी भाग्य बँधा हुआ है। जनता में जागृति हो रही है, युवकगण उठ रहे हैं और राज्य वालों को भी थोड़ी थोड़ी अक्ल आने लगी है। हमारी वहाँ की प्रजा के साथ सहानुभूति है।

भोगपुर किसी समय कांग्रेस आन्दोलन में हमारे जिले में प्रमुख रहा—इतना प्रमुख रहा कि हमारे शासक इस प्रदेश को बहुत खतरनाक समझते रहे—एक बार तो यहाँ फौज और मशीनगन तक पहुँच गई थी पर बीच में देश की दशा के साथ साथ इसकी दशा गिरी। ऐसे समय में जिन महानुभावों ने कांग्रेस का नाम रक्खा, उसकी रक्षा की, उन वीरों की स्मृति आना स्वाभाविक है। वस्तुतः भोगपुर का नाम लेते ही मालकोट, गड्डूड, जोली, रानीपोखरी सब का नाम उसी में आ जाता है। मैं श्री हरिसिंह नेगी का नाम अवश्य लूँगा क्योंकि भोगपुर में उन्होंने ही कांग्रेस का नाम रक्खा है। अब उत्साही नवयुवक आगे आ रहे हैं और उनको आना भी चाहिए। भोगपुर के ला० कुन्दनलाल गुप्त को भी भुलाया नहीं जा सकता जिन्होंने १६१० से २२ की धूमधाम में सहयोग दिया था। मेरा इस इलाके से सम्बन्ध १६०६ से ही है।

यिप्र भाइयो! मैं बहुत कह चुका, अब मनोनीत सभापति जी से प्रार्थना करता हूँ कि वे अपने सभापति के आसन को सुशोभित करें।

झाझरा राजनैतिक कान्फ्रेंस

झगड़ों में संयम से काम लेने पर जोर

(२६ अप्रैल १९४७)

देहरादून (डाक से) देहरादून के पछवादून में झाझरा राजनैतिक कान्फ्रेंस श्री पं० नरदेव जी शास्त्री प्रधान जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधानत्व में बड़े समारोह के साथ २६ अप्रैल को हुई। इस कान्फ्रेंस में पर्वतीय ग्रामों के स्त्री, पुरुष बड़ी संख्या में सम्मिलित हुए। जिले भर के कांग्रेसी कार्यकर्त्ता जिनमें श्री महावीर त्यागी एम० एल० ए० सदस्य विधानसभा, श्री बा० खुर्शेदलाल जी सदस्य विधानसभा, श्री चौ० हुलासवर्मा, श्री मास्टर रामस्वरूप जी, सुश्री कु० मंगला उपाध्याय, श्री कृष्णचन्द सिंघल आदि के नाम विशेषतया उल्लेखनीय हैं, उपस्थित थे।

अपने प्रारम्भिक भाषण में कांग्रेस के पिछले २५ वर्षों के इतिहास को बतलाते हुए श्री पं० नरदेवजी शास्त्री ने कहा कि आज जबकि हमारे आजाद होने की पूर्णतया घोषणा हो चुकी है देश में आग, लूट, मार-धाड़ तथा साम्प्रदायिक झगड़े बड़े भारी पैमाने पर हो रहे हैं। हमें इन सबको रोकना चाहिये और संयम से काम लेना चाहिये। जब कोई बड़ा परिवर्तन हुआ करता है तो समाज में भी अभूतपूर्व हल-चलें होती हैं। जैसे कि भूचाल आने से पूर्व पृथ्वी कांपा करती है। आप इन झगड़ों से डरें नहीं प्रत्युत इनका दृढ़ता से सामना करें।

शास्त्री जी के भाषण के उपरान्त श्री पं० धर्मदेव जी शास्त्री, पं० चन्द्रमणि जी विद्यालंकार, सुश्री कुमारी मंगला उपाध्याय, श्री कृष्णचन्द सिंघल तथा बा० खुर्शेदलाल जी ने भाषण दिया।

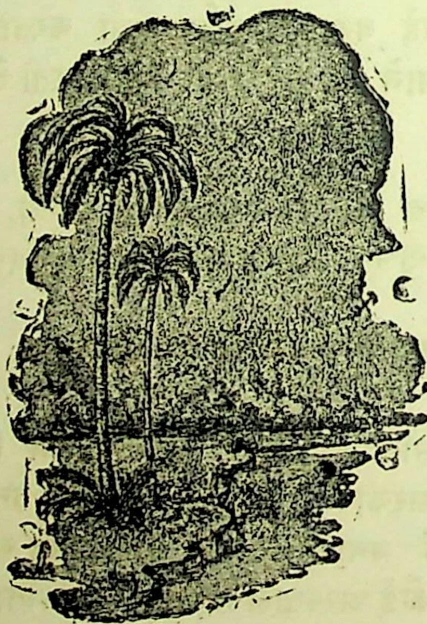
महावीर त्यागी का भाषण

इन सबके बाद श्री महावीर त्यागी ने अपना भाषण प्रारम्भ किया। अपने छोटे से भाषण में श्री त्यागी जी ने बताया कि यू० पी० सरकार ने देहरादून जिले की उन्नति के लिये क्या क्या योजनाएँ स्वीकृत की हैं। इस जिले में नई सड़कें बनाने के लिये पांच लाख रुपया स्वीकृत हुआ है। जौनसार बावर के अर्धनियन्त्रित इलाके में जहां कोई अस्पताल नहीं है, दो अस्पताल खोलने का निश्चय किया गया है। देहरादून शहर के सिविल अस्पताल को एक लाख रुपया दिया गया है। जौनसार बावर इलाके में ऊन व्यवसाय तथा ऊन की दस्तकारी की उन्नति करने के लिये एक लाख रुपया व्यय करना स्वीकृत हुआ है। इसी प्रकार इस प्रदेश में सिंचाई के लिये पानी की व्यवस्था करने के लिये भी चालीस लाख रुपया स्वीकृत हुआ है।

हमारे प्रान्त में चाय बगीचों के काम करने वाले मजदूर काश्तकार केवल देहरादून में हैं और कहीं नहीं। अतः सरकार ने निश्चय किया है कि २॥ बीघा से अधिक जमीन जिस काश्तकार के पास होगी उसे मौरुसी हक दे दिया जायगा और २॥ बीघा से कम वाला काश्तकार मजदूर कहलायेगा। यह मौरुसी हक काश्तकार को पिछले सात वर्ष बाद से मिलेगा जब कि पहिले कांग्रेसी मंत्रिमंडल ने इस संबन्धी कानून एसेम्बली में पेश करना चाहा था। तीन व सात साल में जो काश्तकार किसी भी वजह से बेदखल कर दिये गये हैं उन्हें काश्तकारी हक पुनः वापस मिल जायेगा।

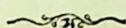
आपने बताया कि हमारे प्रधानमंत्री श्री पन्त जी ने घोषणा की है कि भविष्य में पुलिस विभागों में, कचहरी में या अन्य सरकारी विभाग में किसी भी व्यक्ति की जाति नहीं लिखी जाया करेगी। वोटरों की फेहरिस्त तैयार करते समय भी जाति का खाना समाप्त कर दिया जायगा। हरिजनों के सम्बन्ध में आपने बताया कि सरकार शीघ्र ही ऐसा कानून बना रही है जिसके अनुसार जो कोई व्यक्ति हरिजनों को होटलों या दुकानों पर खाना खिलाने से इन्कार करेगा उसे जेल भेज दिया जायगा।

(हिन्दुस्तान, १ मई १९४७)



यह राजनैतिक अखाड़ा !

(१७ जुलाई १९४७)



राजनैतिक अखाड़ों में सब प्रकार के दाव-पेंच करने पड़ते हैं। जिसके अथवा जिनके हाथों में राज्य-सूत्र आते हैं, वे कदाचित् ही ऋजुनीति (सरल नीति) का अवलम्बन करते हैं। अधिकतर कुटिल-नीति से ही काम लेते हैं। चला चपला राज्यलक्ष्मी का ऐसा ही प्रभाव रहता है। इसलिए ऐसे कुटिल-नीति वालों को ठीक करने के लिए ही कौटिल्य-शास्त्र बना है। जो ऋजुनीति वर्तना चाहते हैं, उनके लिए विशुद्ध धर्मशास्त्र अथवा नीतिशास्त्र हैं ही।

वर्तमान पाश्चात्य प्रणाली के युग में महात्मा गांधी ही ऐसे युग-प्रवर्त्तक हुए हैं, जो राजनीति में भी सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, अपरिग्रह आदि उच्च धार्मिक अथवा आध्यात्मिक साधनों का प्रयोग करते हैं। सत्य से असत्य को, अक्रोध से क्रोध को, अहिंसा से हिंसा को, उपकार से अपकारी को जीतने की बात करते हैं। शत्रु के साथ भी प्रेम करने की बात कहते हैं।

भारतवर्ष पूर्णरूप से महात्मा गांधी के आदेश-निर्देश पर न चल सका, अथवा उसमें चलने की शक्ति ही नहीं थी, तो भी वह जितना भी चल सका उतने से ही अंग्रेजी शासन का मजबूत खूँटा जड़ से हिल गया।

संसार के इतिहास में इतने थोड़े से त्याग-तप से, जिनके राज्य में सूर्य कभी अस्त नहीं होता ऐसे (प्रबल राष्ट्र) इतने बड़े राष्ट्र की स्वयं चले जाने की बात कहना अथवा चले जाने की तैयारी करना, जाने की तिथि, नक्षत्र तक निश्चित करना है एक अद्भुत, अभूतपूर्व बात !! नहीं तो स्वतन्त्र होने के लिए, अपने गये हुये प्रदेशों को, देश को शत्रु के गले से बाहर निकालने के लिए कितना त्याग, कितना तप, कितना बलिदान चाहिए, इसका अनुमान ऐतिहासिक पण्डित ही लगा सकते हैं।

इस दृष्टि से ६०-६२ वर्ष पूर्व कांग्रेस के चलाये हुए स्वराज्य और स्वतन्त्रता के युद्ध पर विचार किया जाय तो कौन कहेगा कि कांग्रेस की विजय नहीं हुई। मुसलमान स्वराज्य की गाड़ी में रोड़ा बन कर अटक गये थे, नहीं तो कभी का बेड़ा पार हो गया होता। अब भी जो कांग्रेस को विभाजन की स्कीम विवश होकर मान लेनी पड़ी, उसका तत्व यही है कि युद्ध में कभी कभी बहुत पीछे हटना पड़ता है, पर वह हटना फिर जोर से टक्कर देने के लिए ही होता है। राजनीति में सदा एक-सी चाल रहे, ऐसा हो ही नहीं सकता। कभी मन्दगति से, कभी मध्यम चाल से, कभी तीव्रगति से सेना-संचालन करना पड़ता है। भूमि पर लेटना पड़ता है, कभी जंगल में छिपना पड़ता है, कभी मौका देख कर

एकदम बाहर आकर झड़प करनी पड़ती है। इसलिए जो लोग केवल दूर बैठने वाले द्रष्टा रहते हैं, वे सेना-संचालन की यथार्थ गतिविधि को समझ नहीं सकते। सेनापति ही जानता है कि किस समय शत्रु पर आक्रमण करना चाहिये, किस समय हटना चाहिये, शत्रु कहाँ दुर्बल है, कहाँ बलवान् है, इत्यादि।

अब स्वराज्य और स्वतन्त्रता के युद्ध पर दृष्टि डालिए। कांग्रेस के आरम्भकाल में हम यही मान कर आगे बढ़ें कि यह पाश्चात्य शासन एक ईश्वरीय संकेत है। तब मिन्नत से, राजी से ब्रिटिश साम्राज्य की छत्रच्छाया में ही स्वराज्य की लालसा रखते रहे। वह "भिक्षां देहि" का जमाना था।

उसके पश्चात् उसी स्वराज्य को "जन्मसिद्ध अधिकार" कह कर मांगने लगे। यह इस प्रकार का दावा "भिक्षां देहि" की अपेक्षा हमको बहुत कुछ आगे ले जाने वाला था। फिर हम इससे भी आगे बढ़े। स्वराज्य (होमरूल) की कल्पना के साथ ही स्वावलम्बी वृत्ति बनी और भिक्षा-वृत्ति गई। आगे चल कर "ब्रिटिश साम्राज्य की छत्रच्छाया" की बात जाती रही। फिर सीधा असहयोग आया। फिर सत्याग्रह के रूप में "डायरेक्ट एक्शन" (सीधी कार्यवाई) आया। पर यह सब अहिंसात्मक प्रयोग ही थे। १९४२ में "भारत छोड़ो" का नारा गूँजा। काँग्रेस अहिंसात्मक ही रही, पर भारतीय जनता ने न हिंसा देखी, न अहिंसा, जो मन में आया किया।

फिर अंग्रेजों ने स्वराज्य की एक नई स्कीम भारत के सम्मुख रक्खी। फिर उसमें कई उलट-फेर हुए। अब मुसलमान हिन्दुस्थान एक ओर और हिन्दू हिन्दुस्थान एक ओर की स्कीम आई। अवस्था देख कर कांग्रेस ने भी इस व्यवस्था को मान लिया। यदि कांग्रेस इस समय अपने 'अखण्ड भारत' की बात पर अड़ी रहती और हठ में राज्यसूत्र को फेंक देती, तो भी क्या होता। फिर भी लोग कहते कि यहाँ तक आकर फिर छोड़ने में कांग्रेस ने देश का घात किया, लोग चैन से बैठने नहीं देते। अब कांग्रेस की यह वीरता रही कि वह कूटनीतिज्ञ ब्रिटिश शासक, गोरे सिविल सर्वेण्ट और लीगियों के विरोध में भी पैर अड़ा कर जमी रही। फल यह हुआ कि तीन चौथाई भारत आज कांग्रेस के हाथों में है। नीतिशास्त्र का वचन है कि—

"सर्वनाशे समुत्पन्ने
अर्द्धं त्यजति पण्डितः"

जब हाथ से सारी ही वस्तु निकल जाने लगे, तो पण्डित उसमें से आधी को स्वयं छोड़ देता है और इस प्रकार आधी वस्तु तो उसके पास रह जाती है।

अब क्या हुआ ?

अब क्या हुआ कि कांग्रेस के बँधे हुए हाथ खुल गये। १५ अगस्त के बाद वह जैसा चाहेगी वैसा करेगी। अब मुसलमानों का अडंगा नहीं रहा।

१५ अगस्त से औपनिवेशिक स्वराज्य होगा। हिन्दुस्थान, कैनेडा, आस्ट्रेलिया जैसा उपनिवेश होगा। अपनी फौज पर पूर्ण अधिकार रहेगा। जहाँ जरा-सा भी दंगा हुआ कि एक घण्टे में समाप्त। वायसराय नाममात्र का रहेगा, दूर बैठे-बैठे टुकुर-टुकुर देखा करेगा। किसी बात में दखल न दे सकेगा। यह दशा ६-१० मास तक रहेगी और १६४८ के जून में हिन्दुस्थान स्वतन्त्र ! पूर्ण स्वतन्त्र ! उधर पाकिस्तान, खाकिस्तान-सा रहेगा। अंग्रेज उसमें घुसे रहेंगे। मुसलमान प्रत्येक बात में अंग्रेजों का मुख देखते रहेंगे। इधर हमारा हिन्दुस्थान बल पकड़ता जायगा, इसका गौरव बढ़ेगा। तब पाकिस्तानी पछतायेंगे कि हम 'हिन्दुस्थान' के साथ रहते तो अच्छा था। दुःख है कि ऋषियों की भूमि पंजाब, वीरभूमि पंजाब का नाम विकृत होकर पाकिस्तान कहलाया जायगा, जैसा कि किसी समय का हमारा गान्धार देश अब अफगानिस्तान है—ऐसी ही कुछ बात हो जायगी। इतिहास और भूगोल के पन्नों में इसी प्रकार उलट फेर होता रहता है। थोड़ी देर के लिए यह दुःख सहना ही पड़ेगा। उपाय नहीं।

आज महाभारत में वर्णित नाना देशों के संस्कृत नाम कहाँ हैं ? कौन जानता है, कौन बोलता है ? पर इतिहास में तो हैं ही, इसलिये भारतवासी घबरायें नहीं। संसार का चक्र घूम-फिर कर वहीं आ जाता है। अभी जावा, सुमात्रा में एक सहस्र वर्ष का पुराना संस्कृत ग्रन्थ मिला है। उसने तो हमारे पूर्वजों की कीर्ति को चार चाँद लगा दिये हैं। क्या पाकिस्तानी लोग 'सिन्ध' को कहीं ले जायँगे। क्या हिन्दू सभ्यता का स्मारक मोहेंजोदड़ों कोई ले जायगा। पंजाब की पाँच पवित्र धाराएँ कहीं बन्द होंगीं, कभी नहीं। इस विभाजन में ईश्वरीय हाथ है। कोई अदृश्य हाथ काम कर रहा है। और आकाशवाणी कह रही है कि मुसलमानो—"तुम भी थोड़ी देर मनमानी कर लो, 'हिन्दुस्थान से अलग रह कर देख लो, तुम्हें भी पता लग जायगा कि तुमने अक्षम्य अपराध किया है।" इत्यादि।

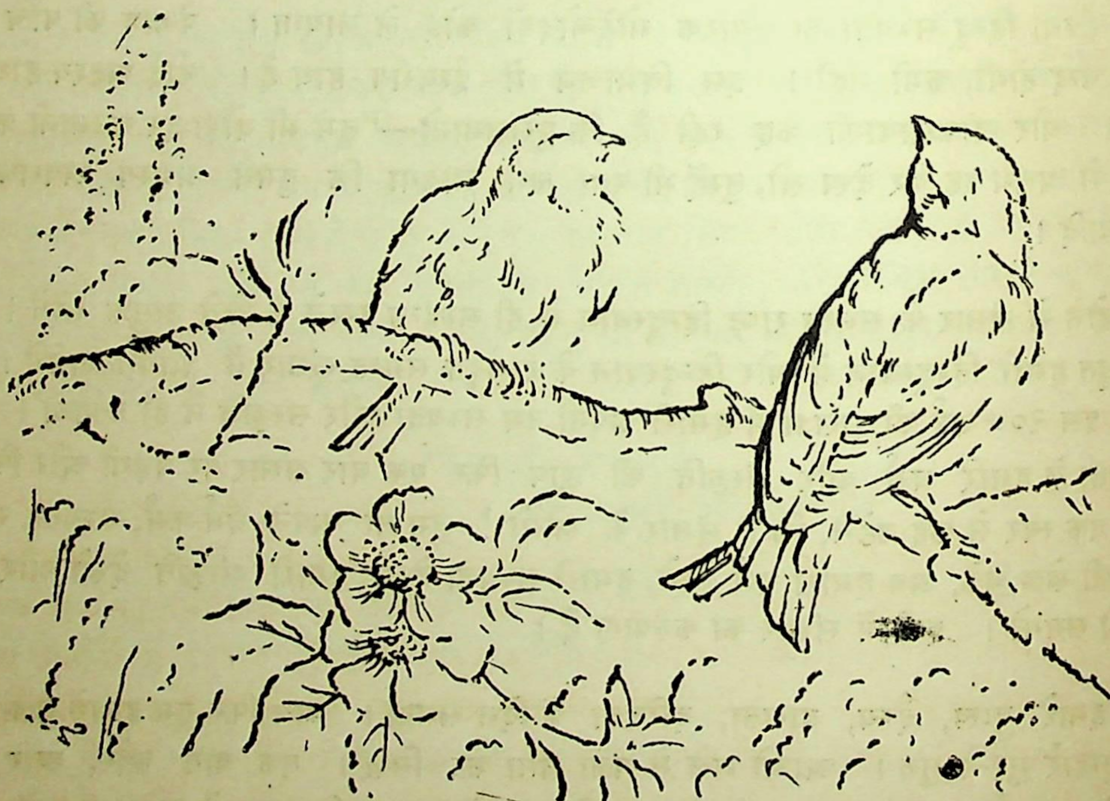
बड़ा होने से संसार के समस्त राष्ट्र हिन्दुस्थान से ही सम्बन्ध रखने के लिये उत्सुक रहेंगे। संसार भर के राजदूत हमारे हिन्दुस्थान में और हिन्दुस्थान के राजदूत समस्त संसार में आयेंगे-जायेंगे। अब तक हमको, इस २०० वर्ष की दासता में हमारी अपनी उच्च सभ्यता और संस्कृति ने ही बचाया। हमारी पूर्ण स्वतन्त्रता से हमारे धर्म और संस्कृति की छाप फिर एक वार संसार पर पड़ेगी और फिर हम भारतवासी एक स्वर से कह उठेंगे, कि हे संसार के लोगो ! तुम तो अपने धर्म-कर्म, सभ्यता, संस्कृति के साथ होली खेल चुके, अब हमारा धर्म देखो, हमारी सभ्यता देखो, हमारी संस्कृति देखो और भारत के गौरव को समझो। इसी में संसार का कल्याण है।

बस, हमारे दुःख, दैन्य, दासता, दरिद्रता के दिन समाप्त। अब फिर तुम हमारे चेले-के-चेले और हम तुम्हारे गुरु-के-गुरु। आओ गले से गला लगा कर मिलें। एक बात और, और बस। वह यह कि राजपूतों का एक कड़ा असूल यह था कि रण में जाकर फिर उस से हटना ही नहीं। इस नीति से राजपूतों की वीरता तो अमर हो गई, पर इनकी नीति का दिवाला निकल गया। व्यर्थ ही

सहस्रों राजपूत मारे जाते थे। कल्पना ही ऐसी विचित्र थी। सारे राजपूत मिल कर यवनों को परास्त न कर सके। अन्त में प्रायः सभी राजपूत राजे यवनों के सामन्त बने। दूसरी ओर मरहटों की नीति देखिये। रण में जाते थे, समय देख कर हटते थे, समय देख कर खूब मार देते थे। उन्होंने अपनी इस नीति से औरंगजेबी शासन को जर्जर कर दिया था।

इसी प्रकार यदि काँग्रेस अपने ध्येय-प्राप्ति के लिये बराबर अग्रसर होती रही और बीच में इस प्रकार विघ्न-बाधाएँ आयीं, तो जरा ठहर गयी। हाथ से जाती हुई सारी वस्तुओं में से तीन चौथाई बचाया। जब सिक्खों ने स्पष्ट कह दिया कि हम चाहे नष्ट हो जायँ, पर पाकिस्तान में न रहेंगे, तब कांग्रेस करती क्या। जब मुसलमानों के अत्याचारों से बंगाली तंग आ गये, तो उन्होंने भी घोषणा की कि हम अपने देश में ही मुसलमानों के गुलाम न रहेंगे। तब कांग्रेस के पास कोई चारा नहीं था। जब लीगी हिन्दुओं के नीचे रहना पसन्द नहीं करते थे, तब पंजाबी और बंगालियों की माँग को मानना ही पड़ा। इसलिए व्यर्थ कांग्रेस को दोष मत दो, समय ने ही सब कुछ कराया है।

"कालो हि बलवान् लोके
सर्वं कालस्य चेष्टितम्"



यह सार्वजनिक जीवन !

(आर्यमित्र, २४ जुलाई १९४७)

यथा काष्ठं च काष्ठं च ।
समेयातां महोदधौ ॥
समेत्य च व्यपेयाताम् ।
तद्वद्भूतसमागमः ॥ (मनु)

जैसे नदियों में अथवा समुद्र में भिन्न-भिन्न दिशाओं के काष्ठ बह कर आते हैं, एक स्थान पर एकत्रित हो जाते हैं, फिर तरङ्गों की थपेड़ों से पृथक्-पृथक् होकर न जाने किधर बह जाते हैं, इसी प्रकार भिन्न-भिन्न प्रकार के प्राणियों का संसार में समागम होता रहता है। अभी संयोग है, अभी वियोग है, वियोग होकर फिर कहीं संयोग है। इस प्रकार संयोग और वियोग के चक्र चलते ही रहते हैं—इसी जन्म में नहीं, अपितु जन्म-जन्मान्तरों में भी। यह क्यों होता है, इसका शास्त्रानुसार एक ही समाधानकारक उत्तर है। वह है—

'अदृष्ट'

अदृष्ट क्या है ? यह हमारे शास्त्रों का परिभाषा शब्द है, जिसका अर्थ है 'धर्म-अधर्म'। यह अदृष्ट क्यों ? इसलिये कि करुणानिधान भगवान् के अतिरिक्त प्राणियों के धर्माधर्म को यथार्थ रूप में कोई नहीं जानता और न इस स्थूल दृष्टि से पता ही चल सकता है। अब अदृष्ट अर्थात् 'धर्माधर्म' प्राणियों के अपने अपने शुभ अथवा अशुभ कर्मानुसार बनते, बिगड़ते रहते हैं और मरने के पश्चात् केवल यही अदृष्ट सूक्ष्मशरीरयुक्त आत्मा के साथ जाते हैं। और संसार के सब पदार्थ यहीं के यहीं पड़े रह जाते हैं। मैं लिखने चला था सार्वजनिक और जा पहुँचा संसार के प्राणियों की समागम की बात की गाथा में। बात यह है कि जिस प्रकार उपर्युक्त श्लोक संसार के भूत-समागम की बात कहता है, उसी प्रकार यही श्लोक सार्वजनिक जीवन पर घटता है।

सार्वजनिक जीवन में भी, कार्य करने वालों को पग-पग पर यही अनुभव होता रहता है। फिर वह क्षेत्र सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, शैक्षिक अथवा किसी प्रकार का क्यों न हो। जब कोई व्यक्ति किसी भी सार्वजनिक जीवन में पड़ता है, तब उसको अनेक व्यक्तियों के साथ रहने तथा मिलकर काम करना पड़ता है। फिर कुछ काल पश्चात् उसको उनका साथ भी छोड़ना पड़ता है, अथवा वे ही साथ काम करने वाले कभी विचार-भेद के नाम पर, कभी मतभेद के नाम पर, कभी ईर्ष्या-द्वेष-वश साथ छोड़ बैठते हैं। इस प्रकार के वियोग के पश्चात् किसी समय एक ही उद्देश्य से प्रेरित हो कर, एक ही स्थान में, एक ही संस्था में काम करने वाले लोग, विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने लग जाते हैं और समयानन्तर में फिर कहीं-न-कहीं किसी कार्य-क्षेत्र में मिल जाते हैं।

पूना के फर्ग्यूसन कॉलेज में स्व० श्री लोकमान्य तिलक और स्व० श्री गोपालकृष्ण गोखले ने ग्यारह वर्ष तक एक साथ काम किया। फिर मतभेद इस बात पर हुआ कि वे सरकार से सहायता लेने के विरुद्ध थे। सरकारी सहायता का पक्षपाती गोखले-दल प्रबल था। तिलक फर्ग्यूसन कॉलेज छोड़ने के लिये विवश हुए। फिर तिलक महाराज ने 'केसरी' निकाला और गये राजनैतिक क्षेत्र में। इनका पक्ष गरम दल कहलाता रहा। गोखले भी समयानन्तर राजनीति में आ गये, पर इनका पक्ष नरमदल समझा जाता रहा। वहाँ के बिछड़े हुए तिलक और गोखले कांग्रेस में फिर एकत्रित हुए और सूरत—कांग्रेस में दोनों में मुठभेड़ होकर फिर वियोग हुआ। फिर दो मार्ग हुए।

यही कथा आर्यसमाज की है। पहले तो सब एक ही समाज के थे। सबके प्रयत्न से लाहोर में डी० ए० वी० स्कूल की स्थापना हुई। जनता में अपार उत्साह था। कुछ काल पश्चात् इन्हीं में कॉलेज प्रबन्ध पर मतभेत होकर महात्मा मुन्शीराम जी की महात्मा पार्टी और महात्मा हंसराज जी की कॉलेज पार्टी बनी। यही पार्टियाँ मांस-पार्टी और घास-पार्टी नाम से प्रसिद्ध हुईं। फिर कालानन्तर में गुरुकुल पार्टी में भी मतभेद होकर स्व० राय ठाकुरदत्त धवन, राय रलाराम आदि पृथक् हो गये और इधर गुरुकुल पार्टी अपना काम करती रही। फिर इन पार्टियों में भी मतभेद हुए और कुछ शाखाएँ फूटीं। इसमें प्रधान शाखा महाविद्यालय ज्वालापुर की रही और प्रायः कांगड़ी की पंडित-मंडली ज्वालापुर में आ डटी। ज्वालापुर में भी पहले सात-आठ वर्ष ठीक एक मत से काम चले, फिर मतभेद का रोग वहाँ भी आगया। पर वहाँ की पण्डित-मण्डली में गुरु-शिष्य-भाव रहा था, इसलिए वे निभा ले गये।

इन दृष्टान्तों को देने का यह तात्पर्य है कि जब पुरुष सार्वजनिक जीवन में पड़े, उसको अच्छी तरह सोच लेना चाहिये कि किसी न किसी समय सहकारी लोगों से वियोग का होना अपरिहार्य है और ऐसे वियोग के अवसर आयें, तो उदास न होना चाहिये, न घबराना चाहिये, क्योंकि सद्भावपूर्वक कार्य करते रहने से कहीं न कहीं, किसी न किसी कार्य-क्षेत्र में फिर एक साथ काम करने का अवसर मिल सकता है। हमारा तो यह अनुभव है कि आज संस्था के अधिकारियों को एक व्यक्ति नहीं रुचता। वे उस व्यक्ति को संस्था छोड़ने के लिये विवश कर देते हैं, पर समय का अनुभव भी कार्यकर्त्ताओं को विवश कर देता है कि वे फिर उसी व्यक्ति को बुलायें और आदरपूर्वक बैठायें। यहाँ एक बात अवश्य कहनी पड़ेगी कि मनुष्य को चाहिये कि ऐसा अवसर आने न दे, जिससे वह संस्था अथवा किसी क्षेत्र को छोड़ने पर विवश किया जाय। ऐसे ढंग से बरते कि यदि छोड़ना ही पड़े, तो स्वेच्छा से छोड़े। स्वयं छोड़ने में बड़ा आनन्द रहता है। विवश होकर छोड़ेगा, तो लम्बे साँस लेता रहेगा। फिर दूसरे क्षेत्रों में यथार्थ रीति पर काम न कर सकेगा। सार्वजनिक जीवन की सफलता मनुष्य की स्वभाव-मधुरता, दक्षता तथा सहकारी और जनता के भावविज्ञान पर निर्भर रहती है।

जो लोग इस प्रकार के उलटफेरों के लिए तैयार नहीं, उनको सार्वजनिक जीवन में पड़ना ही नहीं चाहिये। जो लोग मानापमान, सुख-दुःख, हानि-लाभ सहकर भी, मतभेद रहते भी, अन्यों के साथ रहने, मिलने, बहने तथा कार्य करने के लिये तैयार नहीं, वे सार्वजनिक जीवन में न पड़ें, तो कहीं अच्छा।

भिन्न भिन्न भाव वालों के साथ रहकर काम करते रहने में व्यक्ति को अपनी शक्ति का पता लग जाता है। वह अपनी दुर्बलताओं को भी जान जाता है। उसकी स्वविषय में (कार्य क्षेत्र में आने के पूर्व) बनाई हुई भ्रामक कल्पनाएँ भी दूर हो जाती हैं। इस अनुभवशाला में रहते-रहते उसको बड़ा लाभ होता है।

जो लोग संस्था में शान्ति के लिये जाते हैं, जैसी वे शान्ति चाहते हैं, वैसी शान्ति तभी मिल सकती है, जब कि वे संस्था के किसी पद को ग्रहण न करें, किसी दल के दल-दल में न फँसे और अपनी शक्ति के अनुसार जो बन पड़े करते रहें। चाहे कोई भी अधिकारी क्यों न हो—चाहे किसी भी दल का शासन क्यों न हो।

यदि किसी दल में पड़ना है, तो फिर दल के अनुकूल तथा प्रतिकूल परिणामों को भुगतने के लिये सदैव तत्पर रहना चाहिए। यही तत्व है। संस्थाओं में केवल धन की लालसा से जाने वालों को प्रायः निराश ही होना पड़ेगा। केवल यश की लालसा के वशीभूत होकर जाने वाले भी कभी-कभी भारी अपयश के भागी होंगे।

इसलिये गीतोपवर्णित लोकसंग्रह की रीति को केवल कर्तव्य-बुद्धि से, फल की आकांक्षा को छोड़ कर करते रहना चाहिए। ऐसा पुरुष कर्मयोगी बनकर सब क्लेश को पार कर जाता है; और कर्म तो निष्फल नहीं जाता। ईश्वरीय संकेतानुसार कभी न कभी, कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में अवश्य फलेगा। फिर उस कर्मफल की इतनी चिंता क्यों? हम जैसा चाहते हैं, वैसा फल न मिलने पर, इतनी निराशा क्यों?

हम तो कर्म करने ही के अधिकारी हैं—फल तो ईश्वराधीन है। वह जब देवे, जिस रूप में चाहे देवे, थोड़ा थोड़ा करके देवे अथवा एकदम देवे, यह उसकी इच्छा है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते। (गीता)

मनुष्य जिस प्रकार के स्थान में, जिस प्रकार के समय में, जिस भाव से जो भी शुभ अथवा अशुभ काम करेगा। ठीक उन्हीं परिस्थितियों में, ठीक उसी प्रकार के समयों में, उन्हीं प्रकार के भावों से युक्त वे शुभाशुभ कार्य उसी प्रकार के फल देंगे। चाहे वे कर्म वैयक्तिक हों, चाहे सामुदायिक अथवा सार्वजनिक। अपने ही शुभ या अशुभ भाव, शुभ अथवा अशुभ फलों को कोई दूसरा भुगतने थोड़े ही आयेगा।

"स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः" यह संसार स्वकर्म-सूत्रों से ही बँधा हुआ है।

आध्यात्मिक केन्द्र

(महाविद्यालय से मुक्त होने के पश्चात् ता० २४ अप्रैल ४७ के आर्यमित्र में निम्न संपादकीय टिप्पणी छपी)।

[१]

आर्य्यसमाज में एक ऐसे केन्द्र की अत्यन्त आवश्यकता है, जिसे अध्यात्मवाद का केन्द्र कहा जा सके। बड़े-बड़े आर्य्य-विद्वानों द्वारा जहाँ कथा-वार्ता होती रहे और संसार से व्यथितजनों को जहाँ आत्मिक आनन्द अनुभव करने का लाभ मिलता रहे, ऐसी केन्द्र-संस्था के विषैले प्रभाव से मुक्त रहे ? 'कमेटीबाज़ी' से पृथक् रखा जाय। निरीह साधु, संन्यासी, विद्वान् वहाँ रहें और उपदेश—केवल आध्यात्मिक उपदेश देते रहें। वहाँ एक ऐसा सुरुचिपूर्ण वायु-मण्डल उत्पन्न किया जाय, जो दूर-दूर के लोगों को आकृष्ट करता रहे। ऐसा स्थान गंगा तट पर हो, तो अति श्रेष्ठ। अथवा श्री सर्वदानन्द-साधु-आश्रम को ही अध्यात्म-केन्द्र का रूप दिया जाय। महात्मा नारायण स्वामी का आश्रम भी इस कार्य के लिये उत्तम हो सकता है; परन्तु हम ऐसे केन्द्र का हरिद्वार में होना अधिक उपयुक्त समझते हैं। क्योंकि वहाँ का प्राकृतिक सौंदर्य भी आध्यात्मिक भाव जागृत् करने में सहायक होगा।

अभी हमें सूचना मिली है कि आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् श्रीयुत नरदेवशास्त्री वेदतीर्थ ने भी ज्वालापुर महाविद्यालय से अवकाश ग्रहण कर लिया और अब वे अपना शेष जीवन स्वतन्त्रता-पूर्वक साहित्य और आर्य-प्रचार में लगावेंगे। क्या ही उत्तम हो कि वेदतीर्थजी हरिद्वार में अध्यात्म-केन्द्र का सूत्रपात्र करें और उसे सफल बनावें। श्री पं० नरदेवशास्त्री उन आर्य-विद्वानों में हैं, जिन्होंने अपनी जन्म-भूमि (महाराष्ट्र) से बहुत दूर रह कर निःस्वार्थ भाव से सारा जीवन आर्यसमाज और वैदिकधर्म की सेवा में खपा दिया है। बड़े-बड़े पदों और वेतनों की किंचित् मात्र भी परवाह न की। ऐसे त्यागी, तपस्वी, विद्वान् ब्राह्मण द्वारा ही अध्यात्म-केन्द्र की आधार-शिला रखा जाना बड़ी समुचित बात होगी।

इस कार्य में वेदतीर्थ जी को सुप्रसिद्ध आर्य्य विद्वान और नेता श्री पं० गंगाप्रसाद जी एम० ए०, रिटायर्ड चीफ जज भी पर्याप्त सहायता प्रदान कर सकेंगे। और भी अनेक साथी तथा सहयोगी मिल जावेंगे। ज्वालापुर का वानप्रस्थाश्रम ही सम्प्रति इस कार्य्य के लिये काम में लाया जा सकता है। केन्द्र के लिये दो बातों की आवश्यकता होगी। विद्वानों के लिये योगक्षेम की और जिज्ञासु यात्रियों के लिये निवासस्थान की। हम समझते हैं कि ये दोनों समस्यायें आसानी से हल हो सकती हैं। जाड़ों में अध्यात्म-केन्द्र श्री सर्वदानन्द साधु-आश्रम हरदुआगंज में लाया जा सकता है। गर्मियों में हरद्वार ही ठीक रहेगा। संस्था चुनावबाजी के प्रपंच से सर्वथा शून्य, बिलकुल आध्यात्मिक ढंग की हो।

[आज १९५७ में भी यह आशा पूरी न हो सकी, सार्वजनिक जीवन से पीछा न छूट सका—नरदेवशास्त्री]

आध्यात्मिक केन्द्र

(३१ जुलाई सन् ४७ के आर्यमित्र में मैंने यह लेख प्रकाशित किया था)

[२]

आर्यसमाज में आध्यात्मिक केन्द्र की आवश्यकता है, इस बात को सभी अनुभव करते हैं। वैसे तो प्रत्येक आर्यसमाज ही आध्यात्मिक केन्द्र बनता तो आज संसार आर्यसमाज के पीछे ही हो लेता, पर आर्यसमाज के लिये वर्तमान परिस्थिति में ही इतने बाहर के कार्य हैं कि इसको अन्तर्मुख होने के लिए समय ही कहाँ है। जब किसी का गृह ही जल रहा हो, तो जब तक अग्नि शान्त न हो जाय, गृह की व्यवस्था फिर ठीक न हो जाय, तब तक वह शान्ति से कैसे बैठ सकता है ? जब संसार के दोनों छोर जल रहे हैं और इधर भारतवर्ष में ही कई प्रदेश महाभारत-वर्णित खाण्डव-वन-दाह के दृश्य बन रहे हैं, तब आर्यसमाज शान्ति-सुख-समाधान-पूर्वक बैठ कर अध्यात्म-चिन्तन कैसे कर सकता है। जहाँ एक ओर उपर्युक्त बात है, वहाँ दूसरी ओर यह बात भी सत्य है कि अध्यात्मज्ञानविहीन समाज भी चिरकाल जीवित रह सकने वाला समाज रह नहीं सकता। यह बात भी सत्य है कि—

शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे
शास्त्र-चिन्ता प्रवर्तते

जब राज्य में सर्वत्र शान्ति रहे, राजा-प्रजा में सौमनस्य रहे, दोनों अपनी मर्यादा में रहें, चलें, तब न अध्यात्मज्ञान का प्रचार और प्रसार हो।

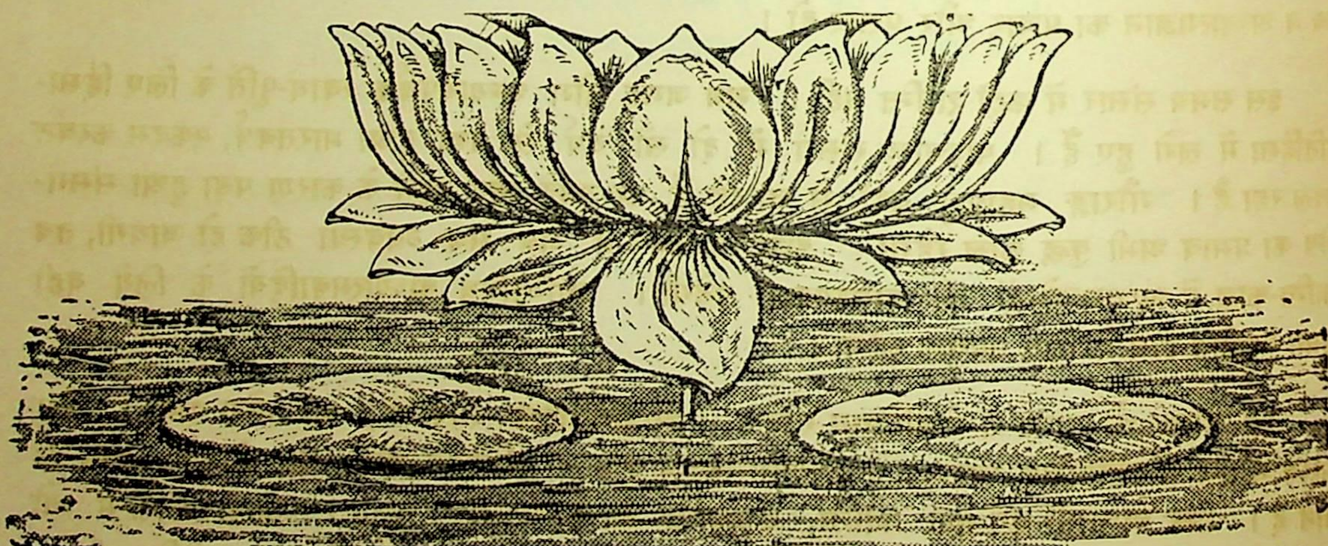
इस समय संसार में कहीं शान्ति नहीं। सब जगह लोग अन्यायपूर्वक स्वार्थ-पूर्ति के लिए हिंसा-प्रतिहिंसा में लगे हुए हैं। पाश्चात्य संसर्ग में दो सौ वर्ष से पड़ा हुआ भारतवर्ष, एकदम करवट बदल रहा है। गौराङ्ग महाप्रभु यहाँ से जा रहे हैं, पर उनके साथ रहने के कारण पड़ा हुआ संसर्ग-दोष का प्रभाव अभी कुछ काल रहेगा। इधर भारतवर्ष में जब सब व्यवस्था ठीक हो जायगी, तब शान्ति-काल में अध्यात्मकेन्द्रों की आवश्यकता पड़ेगी। शान्तिप्रिय अध्यात्मवादियों के लिये वही समय एकत्रित होने के लिए उपयुक्त रहेगा।

१५ अगस्त को भारत में डोमीनियन स्टेट्स (औपनिवेशिक स्वराज्य) का प्रवेश होगा। फिर भारत में इस औपनिवेशिक स्वराज्य के परिणाम-स्वरूप क्या २ परिवर्तन होंगे, यह भी एक देखने की बात है। फिर आगामी वर्ष तक क्रान्ति, उत्क्रान्ति का बाजार गरम रहेगा। संक्रमणकाल में जो कुछ होगा, उसके लिये तैयार रहना चाहिये। क्या क्या होगा अभी कोई निपुण राजनीतिज्ञ भी कह नहीं सकता। विद्युत्-चित्रपट की भाँति क्षण-क्षण में रूप बदलता जा रहा है, घर जल भी रहा है और बँट भी रहा है। फिर घर में बहुत से अन्धे ऐसे हैं, कि उनको कुछ नहीं दीख रहा है। कई लोग अन्धे भी हैं, और सो भी रहे हैं। इस पाश्चात्य ढंग की क्रान्ति से सभी चकित हैं। इस क्रान्ति को

टाला नहीं जा सकता, इससे भागा नहीं जा सकता। क्षेम-कुशल इसी में है कि घर की आग को बुझाते भी जाएँ। घर की वस्तुओं को सम्भाला भी जाए, और इस बँटवारे के समय सावधान भी रहा जाय।

अब बैठ कर शोक करने का समय नहीं है। भारत पर जो दुःख आपड़ा है, वह जानपदिक दुःख है, अर्थात्—देश भर का दुःख है। वह एक के बूते का नहीं। सब मिल कर ही इस दुःख को हटा सकते हैं। संसार में समय-समय पर वैयक्तिक और सामुदायिक शोक और संकट-काल आते रहते हैं। धीर पुरुष युक्ति से ही उनमें से पार हो जाते हैं। दुःखों का प्रतीकार शोक नहीं, अपितु धैर्य और पुरुषार्थ है।

भारतवर्ष के सहस्रों वर्षों के पापों का प्रायश्चित हो रहा है। इसके पाप घटने को हैं। इसका सिर फिर उभरने को है, इसका गौरव फिर आने को है। ऐसे समय में शोककाल की अपेक्षा हर्षकाल ही अधिक समझना चाहिये। जब भारतवर्ष में शान्तिकाल आयेगा, तब फिर भारतवर्ष अपनी आध्यात्मिकता से संसार को सुख-शान्ति पहुँचाने में समर्थ होगा। यही तत्व है। बाप-दादों की लुटी हुई सम्पत्ति—जिसके मिलने की कोई आशा नहीं रही थी, उसमें से तीन चौथाई वापस भी मिल रही है, यह पूर्वजन्म के शेष पुण्यों का ही फल समझना चाहिए।





१५ अगस्त !



[१९४७]

भारतवर्ष रूपी सूर्य को ग्रहण लगे हुए लगभग १००० वर्ष हुए। सात-आठ सौ वर्ष तक भारत-सूर्य यवन-राहु-द्वारा ग्रस्त रहा। उसका ग्रहण छूटा न छूटा कि गौराङ्ग-राहु ने आ ग्रसा। शुक्रवार १५ अगस्त (४७) का दिन भारतवर्ष के लिये एक शुभ दिन है, जबकि गौराङ्ग-राहु की छाया हटनी प्रारम्भ हो रही है। चिरप्रतीक्षिता घड़ी आ गई है।

यवन-राहु-द्वारा ग्रसे हुए भारतवर्ष में भारतवर्ष की बात इतनी न बिगड़ी थी। उसमें शौर्य था, तेज था, और था आत्मविश्वास। पर गौराङ्ग-राहु के ग्रसते ही उसका शौर्य, उसका तेज और उसका वह आत्मविश्वास न जाने कहाँ गया। भारत इतना दीन, हीन, पराधीन अनन्यगतिक, परमुखापेक्षी हो गया कि यह आशा ही नहीं रही थी कि वह कभी स्वतन्त्र होगा अथवा हो सकेगा।

भारत के पुण्य शेष थे। उसका पूर्वजन्म का कोई सुकृत संचित कर्मों के ढेर के एक कोने के नीचे दबा हुआ पड़ा था। उसकी बारी आई। वह संचित सुकृत उभर आया और आज हम फिर खुले श्वास-प्रश्वास किंवा निःश्वास लेने के लिए कटिबद्ध हुए हैं।

यवनों के अत्याचारों अथवा उनके साथ संसर्ग-दोष से हमारा स्वराज्य, साम्राज्य, अधिराज्य, महाराज्य तो नष्ट-भ्रष्ट हो गया था, पर अन्य विषयों में हम अच्छे रहे थे। पर इन गौराङ्ग महाप्रभुओं ने वह बात कर दिखाई, जिसको यवनों की तलवार की तीव्र धारा भी न कर सकी थी।

हमारा स्वराज्य, स्वाराज्य (मोक्ष) अधिराज्य, महाराज्य तो गया ही पर इस ज्ञान-विज्ञान के युग में हम अपने धर्म तथा संस्कृति को भी खो चुके। यवनों ने हमारे देश और शरीर पर तो विजय पाई थी, पर वे हमारे हृदय और मस्तिष्क पर काबू न पा सके थे। गोराङ्ग महाप्रभुओं ने देश, शरीर हृदय, मस्तिष्क इन सबको एक साथ जकड़ डाला। इतना कि उद्धार की आशा ही नहीं रही थी। ऐसो दर्शन दियो (!) नाथ !

सबसे प्रथम ऋषि दयानन्द ने भारत के रोगों की आध्यात्मिक चिकित्सा का प्रारम्भ किया। वह चिकित्सा ऐसी थी कि उस चिकित्सा को वे ही कर सकते थे। उनके पश्चात् उनके अनुयायी अपनी शक्ति के अनुसार उसी चिकित्सा को चलाते रहे हैं, पर कांग्रेस ने देखा कि जब तक दासता रहेगी, तब तक कुछ भी न हो सकेगा, इसलिये उसने ६३ वर्ष पूर्व अपने आंदोलन का सूत्रपात किया और धीरे-धीरे आगे बढ़ी। २५ वर्ष तक भिक्षांदेहि करती रही, २० वर्ष तक स्वावलम्बन का पाठ पढ़ाती रही, बीस वर्ष तक सत्याग्रह, असहयोग चलाती रही। तीन वर्ष से महाप्रभुओं से कहती रही कि "छोड़ो भारत

को।" फिर कहने लगी जाने की तिथि निश्चित करो। महाप्रभुओं ने जाने की तिथि, नक्षत्र आदि निश्चित किये और १५ अगस्त से ही जाने का प्रारम्भ कर रही है। जाते-जाते और एक वर्ष लगेगा। और वह दिन भी आ रहा है, जब यह खग्रास ग्रहण छूट जायगा।

संसार में प्रत्येक वस्तु का प्रारम्भ भी है, विनाश भी। विनाश का भी प्रारम्भ है और विनाश की समाप्ति भी। इस प्रकार अंगरेजी कहावत के अनुसार अंगरेजी राज्य की समाप्ति का प्रारम्भ हो चुका है।

कांग्रेस तो अपने ध्येय में सफल हुई है क्योंकि उसका उद्देश्य केवल अंगरेजों की सत्ता को हटाकर अपनी सत्ता को प्रस्थापित करने का था। इस अवसर पर हम महात्मा गांधी, कांग्रेस तथा सहस्रों, लक्षों आत्माओं के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित किये बिना नहीं रह सकते, जिनके त्याग-तपस्या के कारण ही यह शुभ घड़ी आ सकी। और इतने सस्ते रूप में अमूल्य स्वतन्त्रता स्वयं ही द्वार पर आ खड़ी हुई है। यह इस आधुनिक युग का विशेष चमत्कार है।

पर उन आर्यों का क्या होने वाला है, जो अंगरेजी सत्ता को जी से नहीं चाहते थे, पर समष्टिरूप से इस दिशा में कुछ भी नहीं कर सके हैं। उन आर्यों का क्या होने वाला है, जो अपनी ही शिक्षा-दीक्षा प्रणाली चलाना चाहते थे। जो स्वधर्म और स्वसंस्कृति को लाना तो चाहते थे, विश्व-भर में फैलाना तो चाहते थे, पर अभी अपने देश में ही उतनी सफलता प्राप्त न कर सके थे, जितनी कि अबतक प्राप्त कर लेनी चाहिए थी।

अंग्रेज महाप्रभुओं-द्वारा ग्रस्त भारतवर्ष के ग्रहण के छूटते ही जिसका प्रारम्भ हो चुका है आर्यों के सम्मुख नवीन प्रश्न, नवीन ढंग से आयेंगे। उन्हीं प्रश्नों को प्राचीन ढंग से सुलझाने के लिये आर्यों को एक सुन्दर अवसर मिलने वाला है। देखें, आर्य लोग इस अवसर से लाभ उठाकर फिर विश्व के सम्मुख आते हैं, या क्या करते हैं।

"तू भी बदल फ़लक़—
कि ज़माना बदल गया।



* प्रतिज्ञा *

१५ अगस्त सन् १९४७ भारत के इतिहास में एक स्मरणीय दिवस है। आज ब्रिटिश साम्राज्यवाद का प्राणान्तक भार देश के ऊपर से उठ गया है। स्वतन्त्रता संग्राम के बहादुर योद्धाओं ने पीढ़ी दर पीढ़ी जो मुसीबतें उठायी हैं और कुर्बानियाँ की हैं उनका फल आज प्राप्त हो रहा है। हम उन लोगों की यादगार में श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं जिनके खून और पसीने से सींची हुई फ़सल को आज हम काट रहे हैं। हम उन बहादुर और निःस्वार्थ देशभक्तों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हैं जो सौभाग्य से आज भी हमारे दरमियान मौजूद हैं। हम न सिर्फ उन बड़े-बड़े नेताओं का ही, जिनसे हमारा राष्ट्र अच्छी तरह परिचित है, बल्कि उन असंख्य बहादुरों का भी सम्मान करते हैं, जिन्होंने अज्ञात रूप से और बिना किसी प्रतिफल की आशा से कठिन परिश्रम किया है, मुसीबतें उठाई हैं और कुर्बानियाँ की हैं।

यह क्रान्ति जिसके द्वारा स्वतन्त्र भारत का जन्म हुआ है संसार के इतिहास में अद्वितीय है। इतनी कम हिंसा और खून ख़राबी के द्वारा करोड़ों नर नारियों का भाग्य परिवर्तित करने वाली इतनी बड़ी घटना आज तक नहीं घटी है। यह एक पाशविक शक्ति दूसरी पाशविक शक्ति पर विजय नहीं, बल्कि मानवता और आज़ादी की भावना की विजय है, साम्राज्यवाद की अन्धी लोलुपता पर। महात्मा गांधी के प्रेरणात्मक नेतृत्व से ही यह सब सम्भव हुआ है और अगर हम किसी व्यक्ति को अपने राष्ट्र का जनक कह सकते हैं, तो वह गांधी जी ही हैं। उन्होंने आजादी की अहिंसात्मक लड़ाई में हमारी रहनुमाई की है और हमें इस आजादी को देशवासियों की सेवा के लिए सफल बनाने का मार्ग दिखलाया है। उनके प्रति हम श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

हमने उस हिन्दुस्थान की आजादी हासिल करने के लिये कोशिश की थी जो हमारे लिये अविभाज्य और एक था, लेकिन तो भी हमारे करोड़ों भाई बहन जो कल तक हमारे देशवासी थे आज वे एक अलग राष्ट्र के नागरिक बन रहे हैं। अति दुःखद होते हुए भी हमने इस विभाजन को स्वीकार किया क्योंकि स्वतन्त्रता के अभाव में एकता फूट में परिवर्तन हो गई थी और हमारे राष्ट्रीय जीवन के लिए विदेशी शासन से मुक्ति पाना नितान्त आवश्यक हो गया था। स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली गई है, अब एकता वापस आ सकती है, और वह एकता पहले से कहीं सच्ची और मज़बूत होगी।

हमें इसलिए निराश न हो जाना चाहिए कि इस स्वतन्त्रता में अखण्ड हिन्दुस्तान की शान न रह सकी। गत कुछ महीनों की दुखद घटनाओं में जिनसे भाई भाई का शत्रु बन गया और जिन्होंने इस राष्ट्र के सुन्दर चेहरे को बदनुमा बना दिया, हमारे दिलों पर विषाद की गहरी छाया डाल दी है तो भी जिस तरह एक घायल सैनिक आजादी के झण्डे को ऊँचा उठाये रखने में प्रसन्नता अनुभव करता है उसी तरह हम भी आज इस दिन के आगमन पर खुशियाँ मनाते हैं।

आज हमने जो कुछ प्राप्त किया है वह है अपने भाग्य को बनाने या बिगाड़ने की आजादी। यह सबसे बड़ा विशेषाधिकार और बड़ी से बड़ी जिम्मेदारी है। इस विशेषाधिकार और जिम्मेदारी में भारतीय संघ के सभी नागरिकों का हिस्सा होगा, चाहे वे किसी भी मजहब, सम्प्रदाय या दल के क्यों न हों। आज हर एक नागरिक इस बात की प्रतिज्ञा करे कि वह सामाजिक न्याय पर आधारित एक ऐसे प्रजातान्त्रिक समाज की स्थापना में अपनी तमाम शक्तियाँ लगा देगा जिसमें सारी शक्ति जनता के हाथों में हो और जिसमें सभी नागरिक को उन्नति का समान अवसर मिले।

आज हमारा दुश्मन हमारे बाहर नहीं, बल्कि हमारे अन्दर ही है। रोग, भुखमरी, गरीबी, अज्ञान और सबसे बढ़कर साम्प्रदायिक भावनाओं से उत्तेजित हिंसा और उपद्रव की प्रवृत्ति, ये ही हमारे वास्तविक दुश्मन हैं। इन्हीं दुश्मनों के मुक़ाबिले के लिए हमें अपनी समस्त शक्तियों को संगठित करना है। हर एक भारतीय का एक पवित्र कर्त्तव्य है कि वह उन दुश्मनों से लड़ने में सरकार की सहायता करे। इस नई लड़ाई में आत्मत्याग और आत्मानुशासन की भावना को उससे कहीं अधिक मात्रा में प्रदर्शित करने की जरूरत होगी जितनी कि हमने आज़ादी की लड़ाई में की थी।

कांग्रेस ने इस बात की स्पष्ट घोषणा कर दी है कि स्वराज्य जनता के लिए उस समय तक सच्चा स्वराज्य नहीं हो सकता जब तक कि एक ऐसे समाज की स्थापना नहीं हो जाती, जिसमें लोकतन्त्र का विस्तार राजनैतिक क्षेत्र से सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में हो जाय और जिसमें विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों को अधिकांश जनता के शोषण का मौका न मिले और न ऐसी घोर विषमता ही रह जाय जैसी कि इस समय मौजूद है। ऐसे समाज में प्रत्येक नागरिक को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, उन्नति करने का समान अवसर और व्यक्तित्व के विकास का पूर्णाधिकार मिलेगा। सिर्फ ऐसे ही समाज में जन-साधारण, सम्प्रदायवादियों, पूँजीपतियों और निरंकुश नौकरशाही के त्रिमुखी शोषण से मुक्त हो सकेगा। ऐसा समाज जो अपनी जनता की समृद्धि से व्यक्ति प्राप्त करेगा और उनके स्वेच्छित सहयोगी से एकता रखेगा, देश के उन अलग होने वाले हिस्सों को प्रोत्साहित करेगा कि वे हिन्दुस्थान में फिर से शामिल हो जायँ और उनके महान् गौरव के भागी बनें। ऐसे ही समाज का निर्माण करने के लिए आज प्रत्येक भारतीय प्रतिज्ञा करे। वन्देमातरम्।

नोटः—कांग्रेस कार्यसमिति द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव का हिन्दी अनुवाद ऊपर दिया गया है जो कि ता० १५ अगस्त ४७ की शाम को सार्वजनिक सभा में पढ़ा जाएगा। ता० १५ अगस्त के पहले समाचार पत्रों में इसका प्रकाशन न होगा। आप प्रेस में इसकी प्रतियाँ १५ अगस्त की मीटिंग में वितरण करने के लिए अपनी आवश्यकतानुसार छपवा लें।

गोवर्द्धन

लखनऊ — दफ्तर मंत्री

६ अगस्त ४७ — संयुक्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी

नये युग में भारतवर्ष का निर्माणकाल

१५ अगस्त को भारतवर्ष के संक्रमण-काल की समाप्ति हो गई, अर्थात् सत्ता ब्रिटिश शासकों के हाथों से निकल कर भारतीयों के हाथों में पहुँच गई। सो संक्रमण-काल गया। अब भारतवर्ष के सामने निर्माणकाल का प्रारम्भ है। सत्ता के बिना कोरी बुद्धिमत्ता की बातों से काम नहीं चलता। रचनात्मक कार्य भी शान्तिकाल में ही बनता है। जब से काँग्रेस की स्थापना हुई, वह ब्रिटिश सत्ताधारियों के साथ मुठभेड़ में ही लगी रही। उस मुठभेड़ में कभी नम्र बनकर, कभी उग्र बनकर, कभी अत्युग्र बनकर काम लिया गया। भारतवर्ष को जो कुछ मिला, उसकी क़तई आशा नहीं थी। इतने में यह स्वराज्य का, स्वतन्त्रता का सौदा पटा, यह कोई भारत का पुण्य शेष ही था। इस प्रकार का निहत्थों का यह आन्दोलन संसार में अभूतपूर्व ही है।

पर यदि अब कहीं भारतवर्ष ने पुरानी भूलों की पुनरावृत्ति की, तो फिर समझिए कि भारतवर्ष का नाम संसार से गया। इसलिए इस निर्माण-काल में भारतवर्ष को अपनी पुरानी भूलों का ध्यान रखकर सावधानता से मार्ग का क्रमण अथवा आक्रमण करना होगा।

वे भारत की भूलें कौन-कौन-सी हैं, जिनका ध्यान रखना होगा?

१—प्रथम भूल यह कि यह धर्म के वास्तविक स्वरूप को भूलकर धर्म की लकीरों पर चल पड़ा था, जिसके कारण वह अत्यन्त दुर्बल हो गया।

२—इसकी पाचन-शक्ति इतनी क्षीण हो गई कि यह अपने पुरातन पूर्वजों की भाँति अन्य जातियों को पचा न सका।

३—अपनों में से अपनों को ही बाहर निकाल देने में प्रवीण रहा, जिससे यह संख्या में निर्बल होता गया और अलक्षित रूप में अन्यों का बल बढ़ाता गया।

४—यवन-काल में इसका स्वधर्म-कर्म में कुछ तो दृढ़ विश्वास रहा, पर इस ब्रिटिश-काल में (गत २०० वर्ष) यह ईश्वर-विश्वासी न रहकर पैसे का दास बन गया। जिसका परिणाम हम गत वर्ष भी देख चुके हैं और पूर्व बंगाल और पश्चिमी पंजाब में अब भी देख रहे हैं।

५—इसको उचित था कि यह मध्यमार्ग पर चलता, पर यह या तो अतिधर्म की ओर चल पड़ा अथवा सर्वथा अधर्म पर उतर आया।

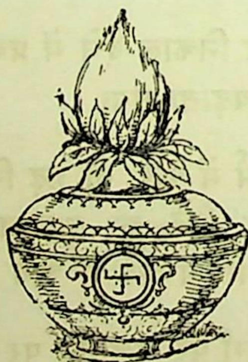
६—जब-जब यहाँ किसी दिशा से भी विदेशियों के आक्रमण होते तब इसमें यह बुद्धि नहीं रही कि आपस में चाहे जितने झगड़े रहते, सब मिलकर, एक साथ शक्ति लगाकर विदेशियों को निकालते।

७—आज-कल भारत में जिस प्रकार से राष्ट्रीय भाव जागृत हैं, उस प्रकार के एकता के भाव उस समय रहते तो, न तो ६०० वर्ष तक यवन-काल में गुलाम रहता और न ब्रिटिश सत्ता के दो सौ वर्षों में अनन्यगतिक होता।

इस प्रकार की अन्य भूलों का भी ध्यान रखना होगा। इस पाश्चात्य युग के ज्ञान-विज्ञान के समय में भारतवर्ष पाश्चात्य प्रदेशों की राज्य-प्रणाली को स्वीकार कर रहा है। इस प्रणाली के साथ इसके गुण, दोषों को भी भुगतना पड़ेगा। इसलिए इस निर्माण-काल में स्वधर्म, स्वसंस्कृति, स्वसभ्यता का ध्यान न रखेंगे, तो न जाने हम कहाँ जा गिरेंगे। आर्यसमाज को तो फिर एक सुवर्ण अवसर मिल रहा है कि इस निर्माण-काल में वह स्वधर्म, स्वसंस्कृति की रक्षा करके अपना विशेष स्थान बनावे। यदि गत साठ सत्तर वर्षों में आर्यसमाज राजनैतिक क्षेत्र में भी अपना कोई स्थान बना लेता तो, हिन्दुओं का अग्रणी होने से सबका सब हिन्दू समाज उसके पीछे हो लेता और आज या तो सीमा विभाजन ही नहीं होता, अथवा होता तो इसके एक-एक शब्द पर संसार ध्यान देता।

अब तो आर्यसमाज कभी राजनीति से अलिप्त होने की बात करता रहता है, कभी निर्जीव हिन्दू-सभा के पीछे चलने की चिन्ता में रहता है। आर्यसमाज तो समष्टि रूप में पिछड़ा हुआ है। अब इस निर्माण-काल में आर्यसमाज को सीधे राजनैतिक क्षेत्र में उतर पड़ना चाहिए। साथ साथ स्वधर्म, स्वसंस्कृति प्रचार का कार्य भी चलता रहे। राजधर्म-शून्य स्वधर्म और स्वधर्मशून्य राजधर्म के अन्तर को समझ कर चलना चाहिए। आर्यसमाज की गत शताब्दी में यदि कोई अक्षम्य भूल हुई, तो यही हुई।

"अबहूँ सोच समझ मतिमन्द"



अब क्या करना है ?

(आर्यमित्र—२१ अगस्त ४७)

१५ अगस्त धूमधाम से आई और भारत को स्वतन्त्रता के पथ पर डाल गई। कांग्रेस के सामने अब यही प्रश्न है कि अंग्रेजों ने जाना आरम्भ किया है, तब भविष्य में उसकी आवश्यकता रहेगी कि नहीं ? आवश्यकता अवश्य रहेगी और इसलिये रहेगी कि कांग्रेसी ध्येय और कांग्रेसी राज्य की पुष्टि करने के लिये एक दल—प्रबल दल अवश्य रहे। कांग्रेस से बढ़ कर कौनसा दल हो सकता है जो कि इस कार्य को पूरा कर सके। कांग्रेस अब तक गांधीवाद के आश्रय से—अहिंसात्मक पद्धति से—वह एक असाध्य अथवा दुःसाध्य विषय में विजय प्राप्त कर सकी है—अर्थात् २०० वर्ष के संसार में सबसे प्रबल राष्ट्र—अंग्रेज—के शासन को हटा सकी है।

किन्तु इस बात का ध्यान रहे कि कांग्रेस के भीतर एक छोटा-सा दल उठ रहा है जो कि चाहता है कि भारत की शासन-प्रणाली पाश्चात्य ढंग की समाजवाद-पद्धति के अनुसार हो। भारत के प्राचीन समाजवाद में वह आमूलचूल परिवर्तन करना चाहता है।

इधर कांग्रेस ने इंगलैण्ड की पार्लियामेण्टरी पद्धति को अपनाया है, पर वह भारतीय समाजवाद में दखल नहीं देना चाहती, पर वह अवश्यम्भावी बात है कि कांग्रेस के शासनकाल में क़ानूनों द्वारा भारतीय समाज की घटना में अनेक परिवर्तन होंगे, हिन्दू समाज को रुचे अथवा न रुचे। जिसके हाथ में सत्ता रहेगी, वह अपनी बात मनवावेगा ही। चाहे धर्म के नाम पर न मनवावेगा, चाहे यही कहता रहेगा कि प्रत्येक व्यक्ति तथा समाज अपने धर्म-कर्म के पालन में स्वतन्त्र हैं, पर वह देश के नाम पर अवश्य ही अनेक परिवर्तन करायेगा, जिसको कट्टर सनातनी पसंद न करेंगे और सुधारक आर्यसमाज ऐसे परिवर्तनों का स्वागत करेगा अवश्य।

किन्तु कांग्रेस का शासन उलटने और पाश्चात्य समाजवाद के ढंग का शासन स्थापित करने के लियें समाजवादी दल उभरेगा अवश्य, किन्तु एक और दल हिन्दू-हित के नाम पर कांग्रेस को तंग करता रहेगा। कांग्रेस को अब इन्हीं दो का मुकाबला करना पड़ेगा। समाजवादी लोग इतने शीघ्र सफल नहीं हो सकते, जितने कि हिन्दूसभा वाले। यदि इनमें त्याग तपस्या की भावना हो तो आगामी चुनावों में बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि हिन्दुस्थान तथा पाकीस्तान ये दो विभाग हिन्दू तथा मुसलिम संप्रदाय को लेकर चलते-चलते अंग्रेजों ने किये हैं।

अब तक हिन्दू सभा इसलिये सफल न हो सकी थी कि हिन्दू मुसलमानों का एक ही देश समझा जाता था, इसलिये प्रत्येक बात में मुसलमान भी अड़ङ्गा लगाते रहते थे और कांग्रेस भी उदार नीति

बरत रही थी। अब तो हिन्दूओं के नाम पर हिन्दुस्थान बन गया और मुसलमानों को पाकिस्तान दिया गया। हिन्दुस्थान में मुसलिम अड़ङ्गे का स्थान नहीं रहा और हिन्दुओं की अधिक संख्या-बल के नाम पर फिर उभरने तथा अपनी बात मनवाने का मौक़ा मिला। हिन्दूमहासभा वाले इस अवसर से लाभ उठा कर—भारत को हिन्दू स्टेट बनाना चाहते हैं। कांग्रेस ने इन्कार कर दिया है कि वे हिन्दू स्टेट नहीं मानते। वे तो रि-पब्लिक ढंग का प्रजातन्त्र मानते हैं। इसमें वोटों के समय जिस पक्ष की ओर हाथ अधिक संख्या में उठेंगे, वही पक्ष शासन कर सकेगा।

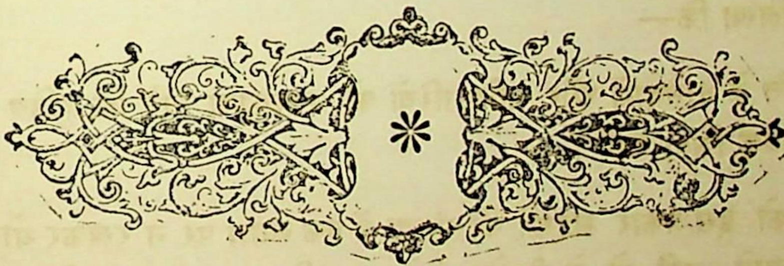
ये सब बातें हैं, पर कोई भूल से यह न समझ बैठे कि कहीं कांग्रेस अभी निर्बल होने जा रही है। हाँ, हिन्दू सभा की अपेक्षा समाजवादी अधिक गड़बड़ डालेंगे। इनके आन्दोलन के अस्त्र-शस्त्र, हड़ताल, काम रोको, काम बन्द करो इत्यादि रहेंगे और यह दल अपनी सफलता के लिए मज़दूर-किसान वर्ग पर भरोसा रखता है। कांग्रेस ने पहले ही इसका उपाय कर रक्खा है, वह यह कि ज़िमींदारी प्रथा को नष्ट करके वह किसानों को वश में कर रही है और इस प्रकार समाजवादियों के पास केवल मज़दूरों का बल शेष रह जाता है। इस विषय में भी कांग्रेस सतर्क है और कांग्रेस-किसान-मज़दूर दल की स्थापना करके समाजवादियों को निर्बल करने की चेष्टा में है। इस तरह 'रस्सा खेंच' चलेगी या रहेगी, पर गांधीवादी कांग्रेस अभी दस वर्ष तक तो प्रबल रहेगी ही। वह समाजवादियों को प्रसन्न रखने की चेष्टा करेगी। एक तो हिन्दी को सर्वत्र प्रमुख स्थान मिलेगा। दूसरे सर्वथा तो नहीं पर गोवध बहुत कुछ बन्द होगा।

अंग्रेज मिलिटरी के लिये ही अधिकतर गोवध अधिक संख्या में होता रहता था। वह मिलिटरी जा रही है। अब रहा मुसलमानों का प्रश्न, सो मुसलमान भी प्रत्यक्ष रूप में कुछ न करेंगे और त्योहार पर भी गोवध करने से स्वयं रुकेंगे। कांग्रेस भी, धर्म के नाम पर न सही—अर्थशास्त्र के नाम पर ऐसे कानून बनायेगी जिससे गोवध लगभग बन्द हो जायेगा।

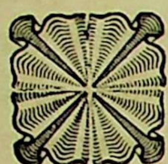
यह सब कुछ होगा, पर मेरे प्रिय आर्यसमाज, तेरे लिये क्या काम है अथवा रहेगा? यदि तुझ में बुद्धि हो तो आँखें उठा कर देख। तेरे लिए पाश्चात्य समाजवाद का कड़ा मुकाबला करके, उसको भारत में हाथ-पैर फैलाने देने से रोकना, यह क्या कम काम है। प्राचीन समाजवाद गया कि तू भी गया और तेरे साथ हिन्दू भी। एक बात और बस। हिन्दुओं को चाहिये कि समय-असमय कांग्रेस के विरुद्ध आन्दोलन न उठा कर, जनता में अच्छी तरह अपना प्रभाव जमावें और अपनी ओर अधिक से अधिक हाथ उठाने का प्रयत्न करें।

अंग्रेज थे तब एक वार भी तो, गोवध के बन्द करने के लिए सामूहिक आन्दोलन नहीं उठाया। अब कांग्रेस का राज होते ही एकदम इस प्रकार के आन्दोलन खड़े किए जा रहे हैं। कांग्रेस को अच्छी तरह सत्ता को अपनाने का समय भी नहीं दे रहे हैं। हिन्दू सभा कह रही है कि नौकरियों का अनुपात एकदम ८६ और १४ करो, संख्यानुरूप, यह नहीं देख रहे हैं, अभी राज्यसूत्र अच्छी तरह पकड़ने

नहीं पाये कि यह तकाना (?) प्रजातन्त्र-पद्धति जब आ रही है, नहीं नहीं आगई है, तब तो ऐसा होगा ही, पर अंग्रेजों ने जो पिछले २०० वर्षों में पक्षपात, अन्याय, अन्तःकलह के बीज बोये हुए थे, वे अब महावृक्ष के रूप में खड़े हैं। पहले इनको काट डालने तो दो। भारतवर्ष १९५० में सर्वथा बदल जायगा। लोग विशिष्ट परिवर्तनों को एक वर्ष में ही अनुभव करने लगेंगे। जरा धैर्य की आवश्यकता है। जरा बुद्धि की आवश्यकता है। संसार के सब छोटे बड़े राष्ट्रों का मुख अब भारत की ओर हो गया है। वे आश्चर्य से देख रहे हैं कि यह क्या हो गया। इण्डोनेशिया के श्री शरियर विपत्ति पड़ते ही भारत की ओर दौड़े और भारत ने एकदम उनको धैर्य और आश्वासन दिया! चढ़ते राष्ट्र की ओर सब आया करते हैं। संसार में गिरते का साथ कौन देता है। महाभारत के प्रारम्भ समय में बड़ा राजसूय यज्ञ हुआ था। उसमें एशिया खण्ड के सब राजे-महाराजे पधारे थे। उसके पश्चात् अभी-अभी एशियाटिक कानफरेन्स के अवसर पर उसी प्रकार का दृश्य दिखलाई पड़ा। क्या यह इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं हो रही? क्या इससे हिन्दुओं का गौरव नहीं बढ़ा? हिन्दू जाति अपनी उच्च संस्कृति के आश्रय से ही अब तक जीवित रही है। उसका फल यह हुआ कि २३०० वर्ष का सम्राट् अशोक का "धर्मचक्र" आज फिर भारत के झण्डे में चिह्न रूप में अंकित होकर हमको अपने प्राचीन गौरव को स्मरण दिला रहा है—भारत जग रहा है, भारत उठ रहा है।



जय हिन्द !　　　　　　　　　　बन्दे मातरम् !!　　　　　　　　　　जय हिन्द !!!



श्री नरदेवशास्त्री का वक्तव्य



(२१ अगस्त ४७)

प्रिय बन्धु,

पिछली वार मुझे १॥ मास तक देहरादून रहना पड़ा कांग्रेस कार्य से। ता० १५ अगस्त को स्वतन्त्रता दिवस मनाकर ता० २० अगस्त तक जिले भर की धूमधाम का समाचार सुनकर मैं २१ अगस्त को ज्वालापुर चला आया। जाना तो था मसूरी, पर इधर के अशान्तिजनक समाचारों ने इधर ही आने को विवश किया। यहाँ आकर देखा कि ज्वालामुखी फटने को ही है। किसी प्रकार लोगों को समझा बुझाकर शान्त किया, पर यह ज्वाला भीतर ही भीतर धधकती रही। ता० १४ सितम्बर को विस्फोट हो ही गया। जो दृश्य देखे गये, जो बातें सुनी गईं, जिस प्रकार चहुँ ओर अशान्ति का साम्राज्य रहा उसको निपुण लेखक भी लिख नहीं सकता। इसी बीच में मैं रुग्ण हो गया। इतने में समाचार आया कि देहरे में भी लङ्का काण्ड हो गया, ठंडी मसूरी भी गरम हो गई—रेल बन्द, तार बन्द, डाक बन्द, मार्ग बन्द, सिर पर करफ्यू, चहुँओर अशान्ति, ऐसे घिर गये, ऐसे घिर गये कि कुछ कहते नहीं बनता। आज लगभग १। मास हो गया, चैन नहीं। देहरे से जो समाचार छन छनकर आते रहे उसी से अनुमान कर सका कि कैसे हुआ, क्या हुआ। पर मुझे आश्चर्य ही हुआ कि देहरे में यह सब कैसे हुआ। ज्वालापुर ने तो अपना नाम सार्थक ही करके दिखाया। इन दिनों जो भी जरा समझ की बात करता शान्ति रखने के लिये कहता, उस बेचारे की आफत समझिये। पश्चिमी पंजाब; सिन्ध, फ्रन्टियर, बलूचिस्तान की ही प्रतिक्रिया है जो पश्चिमी यू० पी० के तेरह जिले भी गरम हो गये। मैंने माननीय पन्त जी को स्पष्ट शब्दों में लिखा कि—

१—लीगी मनोवृत्ति के थानेदारों और अधिकारियों को समझाया जावे कि दूषित मनोवृत्ति से काम न करें अथवा इनको पृथक् किया जावे।

२—शरणार्थियों को इस प्रकार सहस्रों की संख्या में एक स्थान पर न रखकर थोड़ों-थोड़ों को भिन्न भिन्न स्थानों में बसाया जावे, नहीं तो ये ही लोग पीछे अशान्ति का कारण बनेंगे। खाली पड़े रहने से इनको पंजाब के अनाचारों अथवा अत्याचारों की गाथा फैलाने के सिवाय काम नहीं।

३—पश्चिमी पंजाब से जो समाचार आ रहे हैं वे इतने भयंकर हैं कि लोग बेचैन हैं।

४—पाकिस्तान की सरकार पर जोर डाला जावे जो स्थिति को ठीक करे नहीं तो यू० पी० भी पश्चिमी पंजाब बन जायगा।

५—मुसलमान-बहुल प्रान्तों में हिन्दुओं को आराम नहीं और हिन्दु-बहुल प्रान्तों में भी हिन्दू दुःखी रहते हैं इसका कुछ तो प्रतिकार होना चाहिये ।

६—हमारी सरकार के विषय में प्रति-दिन यह धारणा बढ़ती जा रही है कि वह अब भी मुसलमानों को प्रसन्न रखने की नीति बरत रही है ।

७—हमारा इतना बड़ा प्रान्त, यहाँ इतने मुसलमान हैं पर ये लोग स्थान२ पर सभाएँ करके पाकिस्तान के अत्याचारों की निन्दा खुले तौर पर नहीं कर रहे हैं ।

८—ऐसी विपत्ति में कांग्रेस संगठन में घोर असन्तोष, वैमनस्य फैल रहा है ।

९—कांग्रेस की कोई नई नीति घोषित नहीं हुई ।

१०—यदि यही दशा रही तो कांग्रेस-संगठन विस्खलित हो जायगा—इत्यादि ।

अब प्रतीत होता है कि प्रान्त तथा केन्द्रीय सरकारें इन बातों को अनुभव कर रही हैं और यथा-शक्ति प्रतिकार भी हो रहा है । पर इन सरकारों के सामने पंजाब अथवा पाकिस्तान–पीड़ितों को किस प्रकार हिन्दुस्तान में सुरक्षित रूप में लाया जाय यही प्रश्न बड़ा प्रश्न हो रहा है। अब यह सरकार का ही काम है, जो उचित समझे, करे। लक्षों की संख्या में इधर से उधर जा रहे हैं, आ रहे हैं, मर रहे हैं, उस पर भी इन्द्र देवता का प्रकोप, बेचारों की क्या दशा हो रही है, ईश्वर ही जाने, वही रक्षक है ! सरकारें अपना काम कर रही हैं पर ईश्वरीय दण्ड-चक्र दया, न्याय का हाथ भी बड़े जोरों से घूम रहा है, यह मानना ही पड़ेगा। स्वतन्त्रता-दिवस की धूमधाम के पश्चात् ही इस प्रकार की घोर विपत्ति संसार के किसी भी राष्ट्र पर आज तक नहीं आई होगी । कांग्रेस गवर्नमेंट दृढ़ता, गम्भीरता और बुद्धिमत्ता से जटिल प्रश्न को सुलझा रही है । भारतवर्ष में जो बात भी होगी अपूर्व होगी । अहिंसा से स्वतन्त्रता आ गई पर इसके पश्चात् हिंसाकाण्ड इतना बढ़ा कि महात्मा गांधी भी चक्कर में पड़े सोच रहे हैं ।

अब मुझे आपसे यही कहना है कि एक आध मास में शरणार्थियों का प्रश्न हल हो जायगा । वे पूर्वी पंजाब में भारत के देशी राज्यों में अथवा हिन्दुस्तान के प्रान्तों में बसाये जायँगे। आप कांग्रेस संगठन को अक्षुण्ण बनाये रखिये । निखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी के आदेशानुसार चलते रहिए। इसमें आपका कल्याण है । कांग्रेस में भले ही दोष आगये हों, वह जैसी भी है आपकी है आपकी ही बनायी हुई है, उसी के आश्रय से आपको स्वतन्त्रता मिली है । ६-७ महीनेमें रहे–सहे बन्धन भी दूर होंगे। इस लिये कष्ट उठाकर भी कांग्रेस की रक्षा कीजिये–अधिक क्या लिखूँ ।

हमने अपने जीवन में, जिसके कभी न आने अथवा मिलने की आशा थी, उस स्वतन्त्रता को अपनी आंखों देखा, इससे हम समझते हैं कि हम से बढ़कर बड़भागी कौन होगा । इसके सामने संक्रमण–काल में आने वाले दुःख, क्लेश, जन-हानि, धन-हानि, प्राण-हानि तुच्छ है, नगण्य है ।

मैं देहरे से चलते समय प्रधानपद का चाज श्री धर्मदेवशास्त्री जी को दे आया था। श्री हुलास वर्मा वहाँ नहीं थे, किसी विपत्ति में फंसे हुए थे। मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, बार-बार बीमार पड़ जाता हूँ। देहरे बार-बार आने-जाने ठहरने में मुझे बड़ा क्लेश होता है। इसलिये मैं आप लोगों से सदैव के लिए छुट्टी लेने की चिन्ता में हूँ। अब तक विदेशी सरकार सिर पर थी, इसलिए कांग्रेस को उस सरकार को उखाड़ने तथा अपनी सरकार को स्थापित करने में ही ६०-६२ वर्ष लगाने पड़े। अब क्या है, अपनी ही सरकार है। अपनी ही "जमीन" अपना ही "आसमाँ" है। काँग्रेस का कार्य अपनी सरकार को पुष्ट करना ही रहेगा। और प्रत्येक भारतवासी का यह कर्तव्य ही है। मैं इस पद पर न रहता हुआ भी अपनी शक्त्यानुसार देश-धर्म कार्य में बराबर संलग्न रहूँगा, यदि स्वास्थ्य ने मेरा साथ दिया तो देहरा जिले वासियों के प्रेम को मैं कभी नहीं भूलूँगा।

नरदेवशास्त्री, ज्वालापुर

भाद्रपद शुक्ला १५-२००४ वि०

प्रधानमन्त्री के सेक्रेट्री का पत्र

कौंसिल हाऊस, लखनऊ

२३-६-४७

प्रिय शास्त्री जी,

आपका पत्र माननीय प्रधानमंत्री जी को मिला, धन्यवाद।

जिन बातों की ओर आपने पत्र में ध्यान दिलाया है। प्रान्तीय सरकार उसे पहिले ही से कर रही है फिर भी जिन लाइनों पर आपने कार्य को संचालित करने के लिये पत्र में लिखा है वह विचारणीय है। आवश्यक कार्यवाही की जायगी।

आशा है आप प्रसन्न हैं। योग्य कार्य।

कटारपुर और ज्वालापुर

(सन् १९१९ तथा १९४७)

भयंकर उपद्रव

पिछले व्यक्तव्य में मैंने ज्वालापुर तथा देहरे के लङ्काकाण्ड का उल्लेख किया है। सन् १९ में कटारपुर में—जो यहाँ से (ज्वालापुर से) चार मील पर है—ईद के अवसर पर बड़ा हत्याकाण्ड हुआ था। बीस-बीस सहस्र हिन्दू वहाँ तीन-तीन दिन तक पड़े रहे थे कि गोवध न हो। पर मुसलिम दरोगा मसीउल्ला बड़ा ही कट्टर मुसलमान था, वह चाहता था कि मुसलमानों की बात रहे। उस समय बा० गंगाप्रसाद एम्० ए० रुड़की सब डिविजन के एस० डी० ओ० थे। हिन्दुओं ने गौ छीन ली, कटारपुर को आग लगा दी। बड़ी पकड़-धकड़ हुई और सैकड़ों पकड़े गये, अन्धे लूले भी पकड़ लिए गए।

लगभग १०-११ मास तक मुकदमा चला और स्वा० ब्रह्मानन्द उदासी, ला० जानकीप्रसाद, डॉ० पूरणप्रसाद को प्राणदण्ड हुआ। श्री अत्रिवर्मा, चौ० रघुवीर सिंह आदि को कालापानी तथा लगभग डेढ़ सौ से ऊपर व्यक्तियों को तीन वर्ष से लेकर १० वर्ष तक का दण्ड हुआ। बा० मोतीराम (स्वा० मुक्तानन्द) को दस वर्ष का कारावास हुआ। स्व० ला० कृष्णचन्द जी को कालापानी हुआ पर फिर वे सुलतानपुर जेल में ही रक्खे गये थे क्योंकि स्वास्थ्य ठीक नहीं था—

इस इलाके में इतना बड़ा दंगा कभी नहीं सुना गया था—लाखों रुपये खर्च हुए-नॉर्टन जैसे बैरिस्टर आये—बा० ज्योतिःस्वरूप जी वकील ने सब बल लगाकर खर्च किया पर कुछ भी फल नहीं हुआ। मैंने अमृतसर में कटारपुर के सब समाचार महात्मा जी (गांधी) को सुनाये। आपने सलाह दी कि जिन्होंने मारा है स्पष्ट कह देवें तो उनको दण्ड भी कम होगा और शेष निरपराध छूट जायेंगे। पर प्रायः सभी अभियुक्तों ने यही बयान दिये कि वे उस दिन वहाँ नहीं थे, अमुक स्थान पर थे इत्यादि। सत्यकाम नामक एक बंगाली ने पुलिस के सामने बयान दिये कि महाविद्यालय के २५ ब्रह्मचारी गोशाला के खमानसिंह के साथ कटारपुर गये थे। इन्होंने भी आग देने में भाग लिया पर पुलिस के इन्सपेक्टर जनरल ने इस बात पर विश्वास नहीं किया। हमारे यहाँ उस समय जमालपुर के मल्लू और फहमी नामक दो मुसलमान नौकर थे। मुसलमानों ने इन पर बड़ा जोर डाला कि महाविद्यालय का नाम लेवें, इनको लोभ भी दिया गया, पर ये संस्था के स्वामिभक्त सेवक अटल रहे और स्पष्ट निषेध कर दिया। नहीं तो यहाँ उस समय ऐसा गदर था कि मुसलमानों ने जिसका भी नाम ले दिया फिर वह न छूटा, चाहे वह सापराध था अथवा निरपराध।

कटारपुर के उस नग्नकाण्ड के पश्चात् ता० १४ सितम्बर से २० सितम्बर तक ज्वालापुर से लेकर आसपास के ४-४, ५-५, १०-१० मील तक के ग्रामों में बड़े बड़े काण्ड हुए। इस काण्ड का कारण यह था कि यहाँ लीगी मनोवृत्ति का थानेदार था। उसका नाम ख्वाजा था। वह चाहता था कि यहाँ भी अलीगढ़ जैसा काण्ड हो जाय, हिन्दू बरबाद हो जायँ। इन्हें अलीगढ़ से यहाँ बदल दिया गया था। मुसलमानों ने छिपे २ बड़ी तैयारियाँ कर रक्खी थीं। दूसरा कारण यह था कि पश्चिमी पंजाब के हत्याकाण्ड की प्रतिक्रिया यू० पी० के पश्चिमी तेरह जिलों में हो रही थी। सहारनपुर जिला तो पंजाब से सटा हुआ है ही। तीसरा कारण यह हुआ कि फ्राण्टियर तथा पंजाब के पचास सहस्र पीडित यहाँ पड़े हुए थे। उनके द्वारा महीनों से पंजाब के अत्याचारों की गाथा का प्रचार तथा प्रसार हो रहा था। इसलिए हिन्दू भी गरम थे, मुसलमान भी गरम थे।

मुसलमानों ने कई बार निरर्थक बातें उठायीं पर पीछे से हिन्दुओं से क्षमा मांगनी पड़ी। ता० १४ सितम्बर को इन्होंने ही पहल की। फिर क्या था हृषिकेश, हरिद्वार से लेकर ज्वालापुर तक नरमुण्ड ही नरमुण्ड दिखलाई पड़ते थे, ऐसा जमघट हुआ और तीन घण्टे में मुसलमान हार गये, उनके घर उजड़ गये, मुसलमान अनाथ हो गये। २० हिन्दू मरे, १५० करफ्यू तोड़ने अथवा अशान्ति आर्डिनेन्स में गये, मुसलमानों में पचासों मारे गये, ७-८ सहस्र ज्वालापुर छोड़ कर भागे, पता नहीं कौन कौन किधर किधर गये। मुसलमानों नेअधिक संख्या में घातक अस्त्र एकत्रित किए थे, बड़ी भारी तैयारी थी इसमें सन्देह नहीं। मुसलमान भी ६०–७० विशेष विशेष व्यक्ति पकड़े गये, इनके घर सब स्वाहा हो गये।

ज्वालापुर —मुसलमानों से खाली हो गया। हरिद्वार, कनखल से तो ये पहिले ही भाग गये थे।

इसलामनगर उजड़ गया।

जगजीतपुर—मुसलमान पहिले ही चले गये थे।

गाडोवाली —सारा ग्राम फूँका गया, न हिन्दू रहे न मुसलमान। कितने मरे, पता नहीं।

धनपुरा —जल गया, हिन्दू अधिक मरे, मुसलमान कम।

जमालपुर —मुसलमानों का मुहल्ला जल कर खाक। मुसलमान ही मरे। हिन्दू दो एक।

सराय —हिन्दू १०–१२ मरे, मुसलमान भी मरे, ग्राम उजड़ गया।

एकड —मुसलमान उजड़ गये।

फेरुपुर —महन्त मारा गया, १०-१२ हिन्दू भी मरे। मुसलमान भाग गये।

बहादरपुर —मुसलमान पहिले से ही भाग गये।

कटारपुर —मुसलमान पहिले से ही भाग गये।

इब्राहिमपुर—मुसलमान उजड़ गये।

अलीपुर —उजड़ गया।

बहादराबाद—मुसलमान उजड़ गये।

बांगला —मुसलमान उजड़ गये।

रोहालकी —मुसलमान नष्टभ्रष्ट।

सलेमपुर —पहिले उजड़ गया, फिर मुसलमान आ गये फिर जाने को हैं।

सुलतानपुर—(कुनारी)–मुसलमान एकत्रित हैं, सारांश २० मील के प्रदेश में मुसलमान नामक प्राणी देखने को नहीं मिल रहा है। कहा जाता है कि मुसलमानों ने हमला करने का समय ता० १४ की रात्रि के बारह बजे रक्खा था। पर यहाँ तो दिन में ही काण्ड हुआ। यदि कहीं ता० १४ की रात्रि को ही काण्ड हो जाता—दिन में न होता, हिन्दू तो मरे धरे थे।

इधर तो यह हो ही रहा था ठीक इसी समय अथवा इससे पूर्व लक्सर में भी काण्ड हो गया था—उधर के कई ग्रामों में मुसलमानों के पैर उखड़ गये थे।

इसी समय अन्यत्र जिले में भी भयङ्कर बेचैनी फैली जो अब तक (ता० १० अक्तूबर ४७) है। सहारनपुर से भी गड़बड़ी के समाचार आरहे हैं।

इधर तो यह हुआ पर उधर देहरादून भी गरम हो उठा। मसूरी में काण्ड हो गया। एक सहस्र मुसलमान मसूरी छोड़ कर चला गया। देहरे में तो तीन बार काण्ड हुए, सहस्रों मुसलमान तो पहिले ही भाग चुके थे, सैकड़ों मारे गये। ग्रामों में भी हल्ला पहुंचा। सहस्रों शरणार्थी कैम्प में जा पड़े हैं।

पंजाब तथा फ्राण्टियर में लीग की कुनीति के कारण हिन्दू तथा सिक्खों पर जो अत्याचार हुए उसी की यह प्रतिक्रिया है कि मुसलमानों ने जैसा किया ठीक वैसा ही भुगत रहे हैं। पंजाब तथा फ्राण्टियर हिन्दू तथा सिक्खों से खाली हो रहा है तो पूर्वी पंजाब भी मुसलमानों से खाली हो रहा है। सिन्ध से भी हिन्दू सिक्ख आ रहे हैं और इधर से मुसलमान भी भाग रहे हैं। अब तो यू० पी० के मुसलमान भी बिस्तर बाँध रहे हैं। अब विहार, उड़ीसा, यू० पी० के मुसलमान भी कह रहे हैं कि उन्होंने पकिस्तान के लिये वोट देकर बुरा किया। अब कहते हैं कि हम यूनियन सरकार के प्रति वफादार भक्त रहेंगे। अब ऐलान निकाल रहे हैं कि ईद के अवसर पर गोवध नहीं करना चाहिये। कोई कोई इनके नेता यह भी कहने लगे हैं कि पाकिस्तान तथा हिन्दुस्थान को मिलाने का आन्दोलन मुसलमानों को ही करना चाहिए, इसी में कल्याण है। प्रयाग-विश्वविद्यालय के मुसलमान प्रोफेसर लिखते हैं कि पाकिस्तान

की मृगमरीचिका देख ली, मुसलमानों का भ्रम मिट गया इत्यादि सारांश इस प्रतिक्रिया से मुसलमानों की आँखें खुलीं—हिन्दुस्थान तथा प्रान्तीय सरकारें स्पष्ट कह रही हैं कि जो मुसलमान भारत का भक्त बन कर रहना चाहे रहे अन्यथा पाकिस्तान का मार्ग पकड़े लीगियों ने समझा था कि हम ही सब दबा लेंगे, पर अब वे देख रहे हैं कि मामला उलट गया। अब जिन्ना साहब कामनवेल्थ के राष्ट्रों से अपील कर रहे हैं कि हमारा झगड़ा निमटा दीजिये। अब लेने के देने पड़ गये तब अक्ल ठिकाने आ रही है।

इसमें संदेह नहीं कि इस प्रकार की जोरों की क्रांति संसार में कहीं भी, आज तक नहीं देखी गयी। महात्मागांधी जी भी चकित हैं कि क्या करें। पहिले तो कांग्रेस के नेता दृढ़ रहे कि भारत को बांटने नहीं देंगे, फिर अपने आप ही, झगड़े न बढ़ें, शान्ति से काम हो जाय इस विचार से समझौता करके बँटवारा कर लिया। अब यह कहने में कोई अर्थ नहीं है कि फिर वह समय आयेगा जब कि दोनों "स्थान" एक होंगे। जो हो अब पृथक् होगये, पृथक ही सही, पाकिस्तान वालों को अपने पापों का फल तो भोगने दो, प्रायश्चित्त करने दो।

भारतवर्ष एक बड़ी क्रान्ति में से निकल रहा है। संसार के राजनीतिज्ञों का मत है कि भारतवर्ष इस संकट से भी पार हो जायगा और एशिया का नेतृत्व करेगा। पंजाब में जो जनता की बदलौअल हो रही है उसमें अभी एक मास लगेगा। पूर्वी पंजाब की सरकार ने इनको बसाने का प्रबन्ध कर लिया है। भारत के देशी राज्य भी बसाने का प्रबन्ध कर रहे हैं। प्रान्तीय सरकारें भी बसा रही हैं। मार्च तक सब कार्य ठीक हो जायँगे। बड़े बड़े इंजीनियरों का कथन है कि जब सतलज का भाखरा डाम (बांध) बन जायगा और उसके द्वारा पूर्वी पंजाब में नहरें चल निकलेंगी तब पूर्वी पंजाब पश्चिमी पंजाब से अधिक सुन्दर, अधिक उपजाऊ, अधिक फल-फूल वाला प्रदेश हो जायगा। अभी तो हम इतना ही लिख कर इस प्रकरण को समाप्त करते हैं।

ज्वालापुर के पण्डे तथा हिन्दू जनता प्रसन्न है कि हरिद्वार तीर्थस्थान फिर पवित्र हो गया। ऐन-ए-अकबरी में लिखा है कि हरद्वार से चहुँ ओर १८ कोस तक की भूमि पवित्रभूमि मानी गयी थी अर्थात् यहां गोवध वगैरे नहीं हो सकता था।

मेरी अपनी तुच्छ सम्मति है कि पंजाब में जो लीगी प्रबल पड़े उसका कारण सिक्खों की अदूरदर्शिता है। जब जोर बाँधना था तब चुप रहे, जब चुप रहना था तब खड़े हो गये। समय की गति नहीं देखी। अब जो इन्होंने मार-काट प्रारम्भ की है यदि मार्च में ही पंजाब में डट गये होते तो बाऊण्डरी कमीशन Boundary Commission का निर्णय भी और प्रकार से हो जाता और पंजाब के मुसलमान इतने अनाचार तथा अत्याचार पर न तुलते।

अब तो हम देख रहे हैं कि हिन्दू तो मुसलमान पर किसी प्रकार विश्वास करने को तैयार नहीं हैं, उसको भारतवर्ष (हिन्दुस्तान) में देखना भी नहीं चाहते। कहते हैं कि जब हिन्दू तथा मुसलमान के नाम पर बँटवारा हो गया है तो हमारे स्थान में मुसलमान रहें ही क्यों? अब तो हिन्दुस्तान के सब प्रांतों

में लोकसंख्या के अनुपात से नौकरियाँ मिलेंगी। मुसलमानों को बहुत कम नौकरियां मिलेंगी। चुनाव भी सम्मिलित चुनाव होंगे। मुसलमान मुसलमान के लिए अथवा हिन्दू हिन्दू के लिये, पहिले की तरह वोट न दे सकेगा। अंग्रेजों के समय में उनकी कूटनीति तथा भेदनीति के कारण मुसलमान "व्याघ्र" बन कर डराते रहते थे। अब हिन्दुस्तान के लोकतन्त्र ने उनको "पुनर्मूषको भव" की उक्ति के अनुसार चूहा बनादिया है। अब रहेंगे तो मनुष्य बन कर रहेंगे नहीं तो जायँ अपने प कि (पि)-स्थान को।

बदला हुआ पूना

मुझे परदेश में रहते हुए ५३ वर्ष हुए। इतने लम्बे अरसे में मैं पूना केवल तीन वार जा सका। उस समय के पूने में और इस समय के पूने में बड़ा अन्तर देखा। फार्यूसन कॉलेज, भावे इन्स्टिटयूट ये दो कॉलेज पहिले ही थे। पर अब न्यू पूना कॉलेज, वाडिया कॉलेज, आदि अनेक नये कॉलेज तथा पचासों नये स्कूल खुल गये हैं। पूना दक्षिण का शिक्षाकेन्द्र है। इसमें ४०-५० सहस्र छात्र शिक्षा पाते हैं। छात्राओं के लिये भी पचासों छोटे-छोटे स्कूल तथा हाई स्कूल हैं। छात्र तथा छात्राओं की गतिविधि से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनकी वेश-भूषा में विचित्र परिवतन आगया है। नाटकों का स्थान सिनेमा ने ले लिया है। प्रभात फिल्म का केन्द्र भी देखा। क्या विचित्र संगठन है! शहर लगभग पांचगुना हो गया है। बम्बई की तरह पूना नं० १, पूना नं० २, पूना नं० ३, पूना नं० ४, पूना नं० ५ तक चल पड़ा है। महाराष्ट्र की धार्मिक कट्टरता ढीली पड़ गई है। महाराष्ट्र छात्र अपनी धोती छोड़ कर पजामा पहिन रहा है। बुजुर्गों की वह मरहटाशाही पगड़ी के दर्शन दुर्लभ से हो गये हैं। पाश्चात्य शिक्षा का पूरा पूरा नृत्य है!

लाहोर

(१८९४-१८९८)

(आगे सम्बन्ध मिलाने के लिए संक्षेप से दुहराना आवश्यक प्रतीत हो रहा है)

पूना से हम लाहोर भेजे गये। वहाँ दयानन्द हाई स्कूल में प्रविष्ट हुए। उस समय उसके हेडमास्टर थे मा० दुर्गाप्रसाद जी। मास्टर कर्मचन्द्र बी० ए०, मास्टर बद्रीदास बी० ए०, मास्टर बनवारी लाल आदि कई मास्टर थे। इस स्कूल में दो वर्ष रहने के पश्चात् हम यूनियन एकेडेमी में चले गये। यही स्कूल अब सरदार दयालसिंह कॉलेज बन गया है। लाहोर में हम आर्यप्रतिनिधि सभा के आर्य-विद्यार्थी आश्रम में रहते थे। उस समय बोर्डिङ्ग सुपरिण्टेण्डेण्ट थे मास्टर तोलाराम जी मुलतानी, बड़े दयालु पुरुष थे। हम दूर के निवासी थे इसलिये हम पर विशेष दया रखते थे। दयानन्द हाई स्कूल से हमने मिडिल (१८९६) में किया। यूनियन एकेडेमी से मैट्रिक (१८९८) में किया। फिर कहीं भी प्रबन्ध न हो सकने के कारण प्राईवेट रूप से एफ० ए० की तैयारी करते रहे—

यूनियन एकेडेमी में हमारे रेक्टर थे नन्दलाल सेन एम्० ए०, ये ब्रह्मसमाज के विचार के थे। हेडमास्टर थे श्री रजनीकान्त मुकर्जी एम्० ए०, श्री बी० घोष इंगलिश तथा इतिहास के अध्यापक थे। संस्कृत के अध्यापक थे श्री पं० गोकुलचन्द्र शास्त्री। सब अध्यापक हम पर अनुग्रह रखते थे।

उस समय आर्य विद्यार्थी आश्रम के हमारे साथी श्री पं० विश्वम्भरनाथ जी बी० ए० एल० एल० बी० अब आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सर्वेसर्वा हैं। उस समय के हमारे सहयोगी श्रीमान् कृष्ण बी० ए० प्रताप के व्यवस्थापक हैं। यूनियन एकेडेमी में पढ़ने वाले कई छात्र कई स्थानों पर मिले पर उनकी आकृति सामने आती है तो उनका नाम भूल जाता है और नाम याद आता है तो आकृति का पता नहीं। सब के सब स्मृतिपथ में कहाँ विलीन हो गये।

जालन्धर-गुजरानवाला

(१८८६-१९००)

वैदिक आश्रम में संस्कृताध्ययनार्थ प्रविष्ट हुए। निरीक्षक थे महात्मा मुन्शीराम। मुख्याध्यापक थे श्री पं० गंगादत्त शास्त्री व्याकरणाचार्य। यहाँ दो मास ही टिके होंगे कि आश्रम गुजरानवाला में बदल गया। वहाँ स्व० राय रलाराम प्लेटियर निरीक्षक बने। वहाँ पं० गंगादत्त शास्त्री जी का रायसाहब से मतभेद हो गया इसलिये श्री शास्त्री जी ने आश्रम छोड़ा, और सीधे हरद्वार आये। हम भी साथ हो लिये। उन दिनों गुरुकुल के खुलने का सामान हो रहा था। हम कनखल में भारामल के बाग में ठहरे थे। फिर हम बेलोन राजघाट (श्री पं० गंगदत्तशास्त्री जी की जन्मभूमि) में गये फिर इन्हीं के साथ सिकन्दराबाद गये, फिर हरिद्वार आये। फिर मुख्य संशोधक होकर,—

अजमेर

(१९००)

अजमेर वैदिक प्रेस में गये। वहाँ एक वर्ष तक रहे। शतपथ छप रहा था। हम हेड-संशोधक रहे।

❊ सिकन्दराबाद ❊

वहाँ से सिकन्दराबाद आकर एकदम (१९०१) ग्वालियर गये। वहाँ शास्त्री की तैयारी करते रहे—श्री महामहोपाध्याय रघुपति शास्त्री, श्री विद्यापति शास्त्री, श्री निशापति शास्त्री, से कादम्बरी, नलचम्पू तथा अन्य साहित्यशास्त्र पढ़ते रहे। (१९०३) में शास्त्री परीक्षा में उत्तीर्ण हुए और हमको डिप्लोमा मिला। कनवोकेशन लाहोर में सर चार्लस रिवाज (पंजाब के गवर्नर) की अध्यक्षता में हुआ। उस समय हमारे लाहोर के कतिपय सहाध्यायी बी० ए० की डिग्री लेने आये थे।

* फिर सिकन्दराबाद *

(१६०२)

फिर सिकन्दराबाद आये और एक वर्ष मुख्याधिष्ठाता रहे। श्री पं० नन्दलाल व्यास (रायकोट) श्री पं० धनीराम शास्त्री (लुधियाना) उस समय वहीं अध्यापक थे। हमने काशी से महामहोपाध्याय श्री जयदेव मिश्र के कनिष्ठ भ्राता पं० मधुसूदन मिश्र को बुलवा लिया था। पं० मुरारिलाल शर्मा तथा देवटा के पण्डित गंगासहाय पटवारी गुरुकुल के कार्यकर्ता थे। फिर इस गुरुकुल का प्रबन्ध आर्यप्रतिनिधि सभा संयुक्तप्रान्त के हाथों में गया और वही फिर गुरुकुल फर्रुखाबाद बना, फिर वही गुरुकुल वृन्दावन हो गया।

काशी

(१६०३-४)

पूरा डेढ वर्ष काशी में गया। श्री महामहोपाध्याय पं० अम्बादास शास्त्री जी से व्युत्पत्तिवाद, शक्तिवाद तथा रसगंगाधर पढ़ते रहे। श्री पं० रामयत्न झा ज्योतिषाचार्य से लीलावती, गोलाध्याय, गणिताध्याय का अध्ययन किया। हम काशी में श्री पं० परमेश्वरीदत्त आचार्य के पास नवाबगंज में रहते थे। बीच में १६०२-३ में भी हम कई मास काशी में रहे।

कलकत्ता

(१६०५-१६०६)

गुरुवर श्री सत्यव्रत सामश्रमी आचार्य फेलो एशियाटिक सोसाइटी बंगाल के चरणों में रह कर ऐतरेय, निरुक्त, ऋग्वेद आदि का अध्ययन किया।

-: कांगड़ी :-

(१६०६-१६०७)

गुरुकुल कांगड़ी में निरुक्ताध्यापक।

गुरुकुल फर्रुखाबाद

(१६०७)

गुरुकुल कांगड़ी से फर्रुखाबाद चले गये और वहाँ एक वर्ष तक आचार्य पद का कार्य करके महाविद्यालय ज्वालापुर आये तब से अब तक ४० वर्ष होने आये, बराबर किसी न किसी रूप में

महाविद्यालय का काम करते ही रहे। बीच में सन् १९१६ से ही कांग्रेस कार्य में पड़े। तब से उस कार्य को भी निभा रहे हैं। महाविद्यालय में आचार्य पं० गंगादत्त शास्त्री, श्री भीमसेन शर्मा, श्री पद्मसिंह शर्मा, श्री मास्टर हरद्वारीसिंह इन स्वर्गीय आत्माओं ने बड़ा काम किया। श्री पं० रविशंकर शर्मा (वर्तमान स्वा० आनन्दबोध तीर्थ) अब अत्यन्त वृद्ध हो गये हैं। ईश्वर भजन में संलग्न हैं।

महाविद्यालय ज्वालापुर तथा देहरादून

१९०८ से १९१५—मुख्याधिष्ठाता महाविद्यालय।

१९१५—गंगोत्री की यात्रा।

१९१६—महाविद्यालय में तथा राजनैतिक क्षेत्र में।

१९१७ से १९१९—भोगपुर में एकान्तवास ग्रन्थलेखन आदि।

१९१९ से १९२०—देहरादून राजनैतिक क्षेत्र में।

१९२०—प्रथम देहरा पोलिटिकल कानफेरेन्स सभापति पं० जवाहरलाल नेहरू। हम स्वागताध्यक्ष थे।

१९२१ दिसम्बर से १९२३ अप्रैल तक—कारावास देहरादून, मुरादाबाद, बरेली, लखनऊ, रायबरेली जेल (१५ मास)

१९२३—कारावास से आकर फिर महाविद्यालय के मुख्याधिष्ठाता।

१९२५—निखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन देहरादून। हम स्वागताध्यक्ष थे और स्व० श्री माधवराव सप्रे सभापति।

१९२६—आर्यप्रतिनिधि सभा संयुक्तप्रान्त का वृहदधिवेशन देहरादून। हम स्वागताध्यक्ष थे।

१९३०—कारावास, फिर महाविद्यालय के आचार्य तथा कुलपति। बीच में देहरे जिले के डिक्टेटर।

१९३२—कारावास, फिर महाविद्यालय के आचार्य।

१९४० से १९४१—कारावास।

१९४२ से १९४३—कारावास।

१९४४ से १९४७—महाविद्यालय के आचार्य।

१९४६ से १९४७—देहरा जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान।

१९४७ (१५ अगस्त)—देहरे में स्वतन्त्रता दिवस धूमधाम से मनाया।

१९४७ (अप्रैल) —महाविद्यालय की सेवा से निवृत्त।

१९४७ से १९५२ (अप्रैल)—देहरादून के क्षेत्र में।

१९५२ से १९५७—उत्तर प्रदेश के विधानसभा में।

हमारी यात्राएँ

१—जब से देश छूटा तब से दक्षिण की तीन वार यात्रा। सम्बंधियों से मिलने के निमित्त।

२—दो वार मद्रास की यात्रा।

३—एक वार लंका की यात्रा।

४—तीन वार पूना की यात्रा।

५—बम्बई कई वार।

६—दो वार सिन्ध की यात्रा।

७—एक वार गुजरात काठियावाड़ की यात्रा।

८—तीन वार गढ़वाल की यात्रा।

९—एक वार कुमायूँ की यात्रा।

१०—एक वार आसाम की यात्रा।

११—बिहार कई वार।

१२—दो वार फ्रण्टियर की यात्रा।

१३—एक वार काश्मीर की यात्रा।

१४—दो वार उड़ीसा की यात्रा।

१५—राजपूताने की यात्रा कई वार।

१६—एक वार आसाम की यात्रा।

कितने कांग्रेस अधिवेशन देखे

सबसे प्रथम १९१६ में लखनऊ कांग्रेस देखी। लोकमान्य तिलक तथा महात्मा गांधी से मिले। तब से जेल के दिनों को छोड़ कर प्रायः प्रत्येक कांग्रेस में गये। अब अहमदाबाद में कांग्रेस हुई थी तब हम मुरादाबाद जेल में थे। जब देहरा जिले की द्वितीय पोलिटिकल कानफरन्स हुई थी तब हम रायबरेली जेल में थे। बम्बई, मद्रास, कराची, लाहोर, अमृतसर, देहली, लखनऊ, कलकत्ता, गोहाटी, रामगढ़ आदि सभी कांग्रेस में हम गये थे। हम १९२० से ३१ तक ऑलइण्डिया कांग्रेस कमेटी के सदस्य रहे। प्रान्तीय कमेटी के भी सदस्य रहे दो वर्ष।

निखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन

१९२५ में हमने देहरे में १५ वाँ अधिवेशन कराया ही था। वृन्दावन तथा भरतपुर सम्मेलनों को भी हमने ही जाकर कराया। अबोहर (पंजाब) में भी हमें पूर्व ही जाना पड़ा। काशी सम्मेलन में भी हम

गये थे ।। एक वार कांग्रेस के अवसर पर मद्रास में सरोजनी नायडू की अध्यक्षता में सम्मेलन हुआ था। हम भी सम्मलित हुये थे। कलकत्ते में भी कांग्रेस के अवसर पर महात्मा गांधी की अध्यक्षता में सम्मेलन हुआ था। हम भी उपस्थित थे। श्री सुभाष बोस स्वागताध्यक्ष रहे। हम सम्मेलन की स्थायी समिति के बराबर सदस्य रहे हैं। कई वर्ष कार्यसमिति के भी सदस्य रहे। श्री बाबूराव पराडकर की अध्यक्षता में शिमले में भी बड़े जोर का सम्मेलन हुआ था। हम भी गये थे।

संपादक-सम्मेलन

दो वर्ष तक संपादक सम्मेलन के सदस्य तथा प्रधान मन्त्री रहे। फिर इस सम्मेलन का स्वरूप ही बदल गया। प्रारम्भ हमने ही किया था। हमारे पीछे श्री बनारसीदास चतुर्वेदी मन्त्री हुये थे।

हमारा स्वास्थ्य

गत ५० वर्ष में हमारा स्वास्थ्य अच्छा ही रहा। यद्यपि अनेक चिन्ताओं का आक्रमण रहा तथापि शारीरिक स्वास्थ्य ने बड़ा साथ दिया। १६२६ में जब आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त का बृहदधिवेशन देहरादून में हुआ था, तब उस अवसर पर स्वागताध्यक्ष के नाते भाषण देने सभा में जारहा था, तब मार्ग में फटी दरी में खडाऊँ के उलझ जाने से एकदम गिर पड़ा और वायु कुपित हुई। किसी प्रकार भाषण समाप्त किया और जाकर खाट पर लेट गया। वह रोग आमवात के रूप में परिवर्तित हो गया और महाविद्यालय में ८ मास तक पड़ा रहा। पूर्णरूप से स्वस्थ होने में पूरा एक वर्ष लगा। स्व० पं० रामचन्द्र वैद्य जी के उपचारों से स्वस्थ हुआ था। श्रीबलजितशास्त्री (सुपुत्र श्री चौ०ऋषिराम असगरीपुर जो अब स्वा० ऋतानन्द हैं) तथा गुजरात काठियावाड के ब्र० सत्यदेव जी ने बड़ी सेवा की।

इसके पश्चात् गत वर्ष भयङ्कर पेचिश से रुग्ण रहा। वायु का भी प्रकोप रहा। जलवायु परिवर्तनार्थ सिन्ध गया। बड़ा लाभ हुआ। पं० विष्णुदत्त वैद्य (कनखल) वैद्यराज हरिशंकर शर्मा, डा० श्यामबिहारी गुप्त के उपचारों से लाभ हुआ। पर दुर्बलता अबतक (४७) चली जा रही है पूरा एक वर्ष हुआ।

पूने की एक स्मृति

हमारा यज्ञोपवीत-संस्कार

हमारे यहां उपनयन संस्कार को "मुञ्ज" कहते हैं। हमारा यह संस्कार पूना में हुआ था और बड़ी धूमधाम से हुआ था। इसमें २००० रु० खर्च हुए थे जिसमें ७०० तो मेरी भिक्षा की झोली में ही आये थे। हमारे उपनयन-गुरु कृष्णाचार्य थे। हमारे "काशी" भेजने का भी अभिनय किया गया था,

पर घर के द्वार से ही लौटाया गया। हमको उस समय पता क्या था कि एक दिन सचमुच काशी जाना पड़ेगा विद्याध्ययनार्थ। हमको क्या पता था कि हमें अपने देश से ही वञ्चित रहना पड़ेगा।

दक्षिण देश में उपनयन-संस्कार बड़े ठाट-बाट से हुआ करते हैं। हमारे समय में तो हमने देखा कि विवाहों में इतना रुपया खर्च नहीं करते थे जितना उपनयन-संस्कार में खर्च करते थे। हमारे बड़े भाई नारायणराव की "मुञ्ज" में बहुत खर्च हुआ था। पिता जी ने नाच के लिये नर्तकियाँ भी बुलाई थीं। बन्धु भीमराव की मुञ्ज में भी यही दशा रही। उस समय पिताजी कट्टर पौराणिक थे। ऐसा योगायोग आया कि जब से पिताजी आर्यसमाज के विचार के हुए तभी से घर की दशा बिगड़ती गई। घर में बड़ी भारी चोरी हो गई। आभूषण आदि मिला कर लगभग २० सहस्र रु० की। इसमें माताजी तथा बहिन के सब आभूषण चले गये। माता जी के लिये यह बड़ा धक्का था। बैंक का रुपया मारा गया, दशसहस्र जिसके सूद से हम पढ़ते थे। पिता जी भी भेजते थे। माता जी को वातव्याधि लग गई, ऐसी कि बेचारी का उसी रोग से अन्त होगया। हमारे पिताजी तथा ताऊजी में हैदराबाद के मकान पर झगड़ा होगया। मकान ताऊजी ने ले लिया। पिता जी के हिस्से में ३६००० रु० आया पर क्रोध में उन्होंने रु० नहीं लिये। यद्यपि इस दशा के लिये आर्यसमाज के विचार का होना कोई कारण नहीं था, तथापि हमारी माता यही समझती रहीं। उनके मन में बैठे हुए विचारों को अन्त तक कोई निकाल न सका।

हमारे गुरु कृष्णाचार्य 'मुञ्ज' के पश्चात् बराबर दो मास तक आते रहे। प्रति दिन दोनों समय सन्ध्यातर्पण आदि कराते रहे। जब मैं यथाविधि सन्ध्या करने लगा तब आपने आना छोड़ दिया।

यह तो मैं कहीं लिख चुका हूँ कि हम मध्व संप्रदाय के वैष्णव हैं। हमारे कुल देवता का मन्दिर तिरुपति (मद्रास) में है। यह बालाजी का मन्दिर बड़ा प्रसिद्ध है। दक्षिण के समस्त वैष्णव इस के दर्शन से अपने को कृतार्थ समझते हैं।

हमारी बहिन का विवाह

इसी मन्दिर में हुआ था। इधर से पिताजी तथा हमारे अनेक सम्बन्धी बहिन सुन्दराबाई को वहां ले गये और उधर से वर पक्ष के लोग वरंगल से आये और हमारे कुलपुरोहित ने उनके फेरे डलवा दिये। इस मन्दिर में इस प्रकार वर्ष भर में सैकड़ों विवाह हो जाते हैं। इस में दोनों पक्ष वालों को बड़ा सुभीता रहता है।

बस अपनी बहिन का विवाह संस्कार तथा अपनी मुञ्ज इन दो संस्कारों के समय में ही मैं अपने देश में था, फिर तो ऐसा देश छूटा, ऐसा छूटा कि किसी भी अपने तथा अपने सम्बन्धियों के गृह्य-संस्कारों के अवसर पर न जा सका।

पूना महाराष्ट्र की कट्टर पुण्यभूमि है। पौराणिक गढ़ है। वहां के रहन-सहन, वहां का वातावरण वहां के त्यौहार, वहां के कथा वार्ता प्रसङ्ग, वहां के गुरुजनों का मेरे कोमल मन पर बड़ा प्रभाव रहा वहाँ घर में मूर्तिपूजा बराबर होती रहती थी। सब त्यौहार, रीति रिवाज पाले जाते थे। पिताजी के विचार

बदल गये थे पर ये सब रीति-रिवाज का पालन करते थे। माता तो महाकट्टर थी ही। मैं भी कभी कभी अपनी दादी के साथ पूजा-अर्चा में बैठ जाता था। हमारे गृहस्वामी श्री रंगनाथराव अंकलीकर भी बड़े कट्टर थे। बड़े होने पर, समझ आने पर हम सामाजिक विचार के तो हो गये पर अब समझ रहे हैं कि पौराणिक सनातन धम में जो श्रद्धा की सरसता थी, जो आनन्द था वह आर्यसमाज के शुष्क वातावरण में कभी नहीं मिला। आर्यसमाजिक तर्क ने पुराना बहुत कुछ छोड़ा, पर जो रखने योग्य था वह भी छोड़ा। यह समाज की भूल कहिये, कर्कश तर्क की लीला कहिये, अथवा जो कुछ कहिये—श्रद्धा-भक्ति के बिना धर्म भी क्या है? अन्धश्रद्धा को लोग दोष देते हैं पर इसने तो किसी प्रकार हिन्दू-धर्म को बचाये भी रक्खा पर आर्यसमाज का सुजाखी अर्थात् आँखें फाड़कर देखने वाली श्रद्धा ने हमें जगा तो दिया पर हमारा आनन्द ही जाता रहा।

हमारे नाना

हम जब पूने में थे तब एक वार हमारे नाना गोविंदराव गदग जि० धारवाड़ से आये थे। ४-५ मास रहे थे। हमारे दो मामा व्यंकटराव तथा रामराव भी आये थे। व्यंकटराव गदग में मामलेदार थे। रामराव व्यापार करते थे। एक हमारे दूर के सम्बन्धी और थे जिनका नाम भी व्यंकटराव (हत्तीब्यलगल) था। इन्होंने पूने में ही एक कारखाना खोल लिया था। पूना एक ऐसा अच्छा शिक्षा केन्द्र है कि जिसने यहाँ रह कर शिक्षा-दीक्षा नहीं पाई वह भी अभागा समझिये। शिवा जी छत्रपति की लीलाभूमि, लोकमान्य तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, न्यायमूर्ति महादेव गोविंद रानडे की क्रीड़ाभूमि है। अब तो पूना बहुत बढ़ गया है पर वहाँ का पार्वती का मन्दिर, चतुःशृङ्गी का मन्दिर, वहाँ का रायगढ़, सिंहगढ़ सब मुझे अब तक याद आ रहे हैं।

एक वार ताऊ हणमंतराव भी आये थे, कई महीने रहे। यह हम मानते हैं कि पूने के छूटने के पश्चात् जब हम लाहोर आये तब लाहोर भी पूने जैसा ही बड़ा केन्द्र था, फिर तो वह बढ़ता ही गया पर हमको पूने जैसा आनन्द नहीं मिला। लाहोर में आर्यों का गढ़ था। उस समय सनातन-धर्म तथा आर्यसमाज में बड़ी तनातनी रहती थी। अब तो भारत के विभाजन के कारण पंजाब के दो टुकड़े हो गये और अब पश्चिमी पंजाब, सिन्ध, बलूचिस्तान फ्रण्टियर में आर्यों की वह बात नहीं रही, न सनातनियों की वह बात है, उधर के सब हिन्दू इधर (हिन्दुस्थान में) आ रहे हैं और इधर के ४० लाख मुसलमान उधर जा रहे हैं। कायापलट ही जो हो रहा है। भारतवर्ष साँप की तरह अपनी पुरानी काँचली छोड़ रहा है।

पूने के दो दल

कट्टर पौराणिक	सुधारवादी
लो० तिलक	श्री रानडे
श्री धारप	श्री आगरकर
श्री नामजोशी	श्री गोखले
श्री पाटणकर	

इनके मुखपत्र

केसरी		ज्ञानप्रकाश
	फिर ये दल राजनैतिक दल बन गये	
गरम दल	(कांग्रेस में)	नरम दल
श्री तिलक और उनके साथी केलकर, खापर्डे, सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, विपिनचन्द्रपाल, ला० लाजपतराय आदि।		श्री रानडे श्री गोखले। श्री फिरोजशाह मेहता (बम्बई) आदि।

सूरत कांग्रेस तक

कांग्रेस की बागडोर गोखले पक्ष के हाथ में रही। लोकमान्य तिलक के माण्डले से लौटने के पश्चात् कांग्रेस बहुत गरम हो गई। सन् २० में कांग्रेस महात्मा गांधी के हाथ में गई तब से अब तक इन्हीं के हाथों में है और इन्हीं की रीति-नीति, सिद्धान्त कांग्रेस में बरते जा रहे हैं। ता० १५ अगस्त (४७) को भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य मिला और भारत दो भागों में बटा, हिन्दुस्थान तथा पाकिस्तान।

हमारे दो और प्राईवेट मास्टर

हम अपने और दो उपकारी मास्टरों का उल्लेख करना भूल गये—उनके विषय में दो शब्द न लिखें तो हम अक्षम्य अपराधी बनेंगे।

१-श्री तुकाराम जीवन दीक्षित

ये हमारे गृहस्वामी श्री रंगनाथराव अंकलीकर के भाँजे थे। ये हमको गणित पढ़ाया करते थे। इन्होंने हमको गणित में अत्यधिक प्रवीण बना दिया था। हम अपनी श्रेणी में गणित विषय में प्रथम रहा करते थे।

२-श्री लक्ष्मण मेघश्याम करंदीकर

ये पूने ही में रहते थे। फिर ये तथा दीक्षित जी निजाम राज्य में शिक्षा विभाग में काम करते रहे। श्री पिता जी ने ही इनको वहाँ लगवा दिया था। श्री करंदीकर जी हमको इंगलिश तथा मरहटी का अभ्यास कराते रहते थे। उपर्युक्त दोनों मास्टरों के हम पर बड़े उपकार हैं।

श्री दीक्षित जी के पुत्र श्री गोविंदराव हमको दो-तीन बार हैदराबाद में मिले। ये भी निजाम राज्य में नौकरी कर रहे हैं।

उस्मानाबाद के पिताजी के मित्र

स्व० श्री रंगनाथराव किरकशे वकील

ये बड़े सज्जन पुरुष थे। पिता जी के परम स्नेही थे, सायंकाल के समय घर पर आकर घण्टे दो घण्टों के लिये बैठा करते थे। जब हम उत्तर भारत आये तब भी ये हमारे साथ बराबर पत्र व्यवहार रखते रहे। उधर की एक एक बात लिखते थे। इनका पत्र पढ़ते थे तो हमको यही प्रतीत होता था कि हम उस्मानाबाद में ही खड़े हैं।

श्री नेमचंद वालचंद गांधी

ये उस्मानाबाद के नामी वकीलों में हैं। इनके पिता श्री वालचन्द सेठ बड़े नामी सेठ थे। नेमचंद जी के बड़े भ्राता श्री नानचंद भी प्रसिद्ध वकील थे। नेमचंद जी संस्कृत के भी अच्छे विद्वान् हैं। वैसे जैन हैं। हम जब कभी उस्मानाबाद जाते हैं तब इन्हीं के यहाँ ठहरते हैं। बड़े ही प्रेमी, सुस्वभाव के लोग हैं। पिछले साल ये किसी ऊँचे स्थान से गिर पड़े थे, पैर की हड्डी टूट गई थी तब से खाट पर ही पड़े हैं। बहुत उपचार किए। अब बम्बई में न्यू क्वीन्स स्ट्रीट में श्री तलवलकर के प्रसिद्ध होम में उपचार करा रहे हैं।

स्व० श्री गोविंदसिंह मनसबदार

हम इनके विषय में पीछे किसी प्रकरण में लिख आये हैं। इनके दो पुत्र श्री भीमसिंह तथा विजयसिंह पातूर (अकोला) में अपनी जायदाद की देखभाल कर रहे हैं। विजयसिंह तो कई वर्ष तक विलायत में रह आये है। श्री गोविंदसिंह जी की प्रथम स्त्री का पुत्र धर्मपाल गुरुकुल कांगड़ी का स्नातक था। श्री गोविंदसिंह जी ने आर्यसमाज के लिए बहुत धन व्यय किया। आपने अपनी सब पुत्रियों के विवाह दूर दूर संयुक्तप्रान्त आदि प्रदेशों में किये। हमको उत्तर भारत में भेजने में श्री गोविंद सिंह जी ही कारण बने।

श्री मास्टर यशवन्तराव विदुर

ये भी हमारे पिता जी के मनोरंजन का साधन रहते रहे। बड़े अच्छे गायक हैं। इनके तीनों लड़के अच्छे काम में लगे हुए हैं, और तुलजापुर (निजाम स्टेट) में अपने पुत्र के पास रहते थे।

स्व० श्री दत्तोपंत कुलकर्णी वकील

गत वर्ष (१६४७) में ही इनका स्वर्गवास हुआ। पिताजी का और इनका अत्यन्त स्नेह था। श्री दत्तोपंत बड़े ही विद्याव्यसनी थे। मरहटी के अच्छे लेखक थे। इन्होंने तुलजाभवानी देवी के मन्दिर के विषय में एक अच्छी पुस्तक लिखी है। ये अखबारों के ऐसे शौकीन थे कि दक्षिण के किसी भी प्रसिद्ध मरहटी दैनिक अथवा साप्ताहिक अथवा मासिक के लेखों के कटिंग (कतरन) इनके यहाँ देख लीजिये। ये वक्ता भी अच्छे थे। श्री रंगनाथराव किरकशे की भान्ति ये भी हमसे बराबर पत्रव्यवहार रखते रहे जिससे उस ओर के समाचारों को हम जान जाते थे। इस वर्ष अप्रैल में वे बद्रीनाथ धाम की यात्रा करने का संकल्प कर चुके थे पर दैवगति कि उनका देहावसान हो गया। अब उस प्रदेश में जिनसे हमारा घनिष्ठ संबन्ध है ऐसे दो एक ही व्यक्ति रहे होंगे। वैसे पिता जी के नाम से हमको सब कोई जानता है पर हम ही बहुत कम को जानते हैं।

गढ़वाल की प्रथम यात्रा

(१६३१)

एक वार हम अजमेर पट्टी में स्थित यमकेश्वर कानफरन्स में गये थे। हम ही कानफरन्स के सभापति थे। बड़ा जमघट था। लगभग छह सहस्र नर-नारी एकत्रित हुए थे। कोटद्वार, दादामण्डी आदि अनेक स्थानों में व्याख्यान देते हुए पैदल ही गये थे। गढ़वाल में इस प्रकार की यह प्रथम ही कानफरन्स थी। फिर कानफरन्स करा कर गौरीघाट के मार्ग से हृषीकेश रायवाला के सामने उतरे थे।

एक वार श्री जगमोहनसिंह जी के प्रथम असेम्बली के चुनाव में दुगड्डा गये थे। उस समय श्री पं० जवाहरलाल नेहरू तथा श्री पं० गोविंदवल्लभ पन्त भी पधारे थे। श्री जगमोहनसिंह जी के विरोध में गढ़वाल के बा० मुकुन्दीलाल बी० ए० बार-एट-लॉ खड़े हुए थे। मुकुन्दीलाल जी हार गये थे और जगमोहनसिंह जी की भारी वोटों से जीत हुई थी। इस चुनाव से गढ़वाल में कांग्रेस की धाक जम गई थी। हमारी यह यात्रा दुगड्डा तक ही रही।



(१६३१ प्रथमयात्रा)

मैंने गढ़वाल में क्या देखा ?

[नं० १]

गढ़वाली प्रमुख कार्य-कर्त्ताओं के आग्रह से मैंने गढ़वाल में डेढ़ मास तक भ्रमण करने का निश्चय किया था। तदनुसार मैं ता० २४ अप्रैल से ता० १ मई तक लंगूरपट्टी, डबरालस्यूँ, अजमेरपट्टी, उदयपुर पट्टी में घूमा, पचासों ग्रामों में गया, कई सभाएँ भी हुईं—इसके पश्चात् मुझे ज्वालापुर लौट जाना पड़ा। फिर ता० १६ मई से मैंने यह यात्रा प्रारम्भ की और अब की बार रामनगर मण्डी से गढ़वाल में प्रवेश किया। गढ़वाल और अलमोड़ा की सरहद पर होते हुए-ढकौली, मोहन, चिमटा, सल्डमहादेव, परसौली, डूंगरी, जड़ौंखाल, ब्यूरोखाल, भरौली, बंगार, कुंजवनेश्वर महादेव, पौरवाल, चमनोरखाल, नौगवां, एकेश्वर आदि अनेक स्थानों में लोगों को कांग्रेस और महात्मा गांधी के सन्देश सुनाते हुए हम पौड़ी (गढ़वाल की राजधानी) में ता० ३१ को पहुँचे—जहां जहाँ भी सभाएँ हुईं वहां वहां उत्सुक गढ़वालियों के झुण्ड के झुण्ड आते थे। गढ़वाली बच्चों और युवकों का उत्साह देखने योग्य था। प्रत्येक सभामें दस-दस, बीस-बीस ग्रामों के लोग दूर दूर से आते थे और सैकड़ों की संख्या में आते थे, जिनको देख कर हम पर्वतीय दुर्गम मार्गों के कष्टों को भूल जाते थे। हमारी यह यात्रा पैदल ही है और हमारी पार्टी में दस ग्यारह व्यक्ति हैं। इसलिये कष्टप्रद यात्रा भी सुखकर प्रतीत हो रही है। गढ़वाल में शिक्षा का प्रचार वेग से बढ़ रहा है, किन्तु शिक्षित समुदाय आलस्यवश अथवा न जाने किस कारण से गढ़वाल की उन्नति में पूर्ण रूप से भाग नहीं ले रहा है। यहां जो कुछ जागृति है वह नवयुवक और उत्साही वीर गढ़वाली बच्चों की वजह से है। यद्यपि हमारी इस यात्रा का उद्देश्य राजनैतिक जागृति करना, कांग्रेस का संगठन, गढ़वालियों में प्रेम का संचार, इत्यादि है, तो भी हम यहां की धार्मिक, सामाजिक दशा का पूर्ण अध्ययन कर रहे हैं और लोगों को सामाजिक हीन दशा को दूर करने का उपदेश देते जाते हैं। हमें यह देख कर प्रसन्नता हुई कि राजनैतिक आन्दोलन के प्रभाव से उच्च और नीच कहलाने वाली जातियों का वैमनस्य बहुत कुछ दूर हो रहा है किन्तु नीच अथवा अछूत कहलाने वाली जातियों की एक ही बड़ी शिकायत है, वह यह कि "हमने उच्च जातियों की बराबर सेवा शुश्रूषा की और सैकडों वर्षों से की और आगे भी करते रहेंगे किन्तु समस्त गढ़वाल में हमारे लिए जमीन का थोड़ा सा भी टुकड़ा नहीं है, जिस पर हम स्वतन्त्रता पूर्वक श्वास ले सकें। सब जिमींदारी उच्च कहलाने वालों की है, वे हमको रहने के लिये, मकानादि बनाने के लिये, खेती बाड़ी के लिये थोड़ी, थोड़ी जमीन देवें तो फिर हमको ऐसी कोई शिकायत नहीं"—यह इनकी शिकायत उचित ही प्रतीत होती है किन्तु गढ़वाल की ऐसी परिस्थिति होगयी है कि जिसके पास जमीन है उनको ही अपने निर्वाह के लाले पड़ रहे हैं, इसलिये ये लोग चाहें तो भी अपनी जमीन में से कोई भाग इनको नहीं दे सकते। इस परिस्थिति को देख कर गवर्नमेंट ने अछूत जाति को कहीं-कहीं कुछ-कुछ जमीन देने का

प्रलोभन देकर उसको अन्यों से पृथक् रखने की जो चेष्टा की है, अब तक विफल ही रही है, क्योंकि सरकार के आश्वासन कोरे हैं और उसने अब तक इन अछूतों के लिये कोई जमीन नहीं दी है। हमको यह देख कर प्रसन्नता हुई कि स्कूलों में अछूतों और अन्य जाति के बालक एक साथ पढ़ते हैं। उनमें परस्पर कोई भी घृणा का भाव नहीं है। असली बात यह है कि यहाँ जितने भी अछूत हैं, लोहार, बढ़ई आदि वे सब स्वावलम्बी हैं। और उच्च कहलाने वाले भी दरिद्र हैं, और इनका निर्वाह नौकरी खेती और मजदूरी से होता रहता है। जब उच्च कुल वाले ही दरिद्र हैं तो ये लोग अछूतों की आर्थिक स्थिति को कैसे सुधार सकते हैं। राजनैतिक स्थिति के सुधरे बिना किसी जाति की भी आर्थिक स्थिति सुधर नहीं सकती।

हमको यह देख कर दुःख हुआ कि इधर के कई भागों में ब्राह्मण और क्षत्रिय का प्रश्न उठा कर परस्पर बहुत संघर्ष उत्पन्न कराया गया है। यह स्वार्थियों की माया है। हम समझते थे कि गढ़वाल में आर्यसामाजिक लोगों की संख्या बहुत कम है पर यह भ्रम ही रहा। भले ही गढ़वाल में बाक़ायदा आर्यसमाजें न हों किन्तु आर्यसामाजिक विचार के सैकड़ों लोग हैं और नई पीढ़ी तो एकदम बौद्धिक दासता को दूर फेंकने पर उतारू हुई है। 'नमस्ते' तो अब केवल आर्यसमाजियों की सम्पत्ति नहीं रही, वह तो समस्त गढ़वाल की वस्तु है। जिधर जाइये 'नमस्ते', 'नमस्ते' सुनाई देगी। किन्तु नमस्ते शब्द को सुनकर कोई कहीं इस भ्रान्ति में न रह जाय कि सब कुछ आर्यसमाज ही है। असली बात यह है कि गढ़वाल में प्रथम-प्रथम जो आर्य उपदेशक या प्रचारक गये—और अब तक यह दशा रही है कि—

वह पहले ही डोमों और अछूतों का प्रश्न ले गये और उसी सर्कल में घूमते रहे। इसका उल्टा प्रभाव रहा—पर अब यह दशा सुधर रही है। देश के अछूतों और यहाँ के अछूतों में बड़ा भेद है। यहाँ कुओं पर चढ़ने का प्रश्न नहीं है, यहाँ मन्दिरों में जाने का प्रश्न नहीं है, यहाँ स्कूलों में लड़कों के एक साथ पढ़ने पढ़ाने का भी प्रश्न नहीं है,—अछूतों का प्रश्न है, केवल—'आर्थिक समस्या'—राजनैतिक स्थिति के सुधरते ही इनकी दशा भी सुधरेगी। थोकदार, ज़िमींदार आदि की सख्तियाँ हैं सही, किन्तु अब लोगों की आँखें खुल रही हैं। नयी पीढ़ी अब अपने बुजुर्गों के पापों का प्रायश्चित्त करने के लिये तैयार हैं। गढ़वाल की परिस्थिति ऐसी है कि यहाँ अभी खानपान और रोटी-बेटी का प्रश्न नहीं आ सकता—उच्च जातियों के खानपान व्यवहार में केवल 'भात' की छूत है बाकी क्षत्रियों और ब्राह्मणों और वैश्यों में किसी के हाथ की रोटी कोई खा सकता है—पूर्ण स्वतन्त्रता है।

हमको यह देखकर प्रसन्नता हुई कि स्कूलों में कन्यायें भी अधिक संख्या में पढ़ती हैं। नौगवाँ (तलाई पट्टी) के स्कूल में २३ कन्यायें शिक्षा पा रही हैं—इधर लड़के और लड़कियाँ साथ ही पढ़ते हैं। गढ़वाल की देवियों में पर्दाप्रथा की कुरीति नहीं है। वे स्वतन्त्रता-पूर्वक जहाँ चाहें घूम सकती हैं। गढ़वाल की देवियों की कष्ट-सहिष्णुता, परिश्रम, श्रद्धा, धर्मभावना, वीरता प्रशंसनीय है—कांग्रेस की बातों को खूब समझती हैं। गढ़वाली लोग वीर हैं, श्रद्धालु हैं, बुद्धिमान हैं किन्तु हैं दरिद्र, इनमें संगठन नहीं है। यदि इनमें संगठन हो जाय तो दरिद्रता भी दूर हो सकती है।

गढ़वाल की जन संख्या साढे पाँच लक्ष है—इनमें से लगभग डेढ लाख लोग मजदूरी पेशा, सरकारी नौकरी, और फौजी नौकरी में गढ़वाल से बाहर हैं। गढ़वाल में व्यापार का नाम नहीं। जल का कष्ट, जंगल का कष्ट, खेती बाड़ी का कष्ट, दुर्गम पर्वतमालायें, दुर्गम मार्ग इत्यादि बातों का अनुभव तभी हो सकता है जब कोई इधर पैदल यात्रा करे, ग्राम ग्राम घूमे, और दशा को स्वयं देखे। अब तक तो गढ़वाल की विद्या, बुद्धि, वीरता इत्यादि गुणों और दरिद्रता आदि अवगुणों का लाभ और लोगों ने ही उठाया है परन्तु अब लोगों की आँखें खुल गई हैं। राजनैतिक आन्दोलन के साथ ही वीर गढ़वालियों की आँखें खुल रही हैं, और गढ़वाल के नवयुवक गढ़वाल के बच्चों का देश प्रेम, उत्साह देख कर हम तो दंग रह गये—और हम देशवासियों को आश्वासन दिलाते हैं कि देश के किसी भी आन्दोलन में गढ़वाल किसी भी भारत के भूभाग से पीछे नहीं रहेगा। हम दक्षिण गढ़वाल की यात्रा समाप्त करके मध्य गढ़वाल में आगये हैं और इधर कुछ काल घूम कर हम उत्तर गढ़वाल जायँगे।

यद्यपि हमको दुर्गम और अगम्य मार्गों के कारण बहुत कुछ कष्ट हो रहा है तथापि हम गढ़वाल के धार्मिक और राजनैतिक क्षेत्र में बीजवपन अथवा बीजारोपण करते जा रहे हैं जिसका फल भविष्य में बहुत सुन्दर रहेगा। गढ़वाल प्राचीनतम ऋषिमुनियों का तपस्या-केन्द्र रहा है उसकी यात्रा से हमको बहुत लाभ पहुँच रहा है और अपनी इस यात्रा में हम गढ़वाली जनता को धर्म और देश का संदेश सुना रहे हैं। वे भी दूर दूर से आकर हमारे संदेश को श्रद्धापूर्वक सुन रहे हैं इसलिए हमारे आनन्द का पारावार नहीं है। सच पूछो तो जिस प्रकार हमारा दल घूम रहा है, ऐसे दल भिन्न २ मार्गों से आयें और समस्त गढ़वाल में घूम जायँ तो बहुत कल्याण हो। बस आज मैं इतना लिख सकता हूँ—अब तक सौ मील की यात्रा में हमने बारह जगह सभायें कीं और लगभग चार सहस्र नर-नारियों को देश और धर्म का सन्देश सुनाया।

पौड़ी (गढ़वाल)

मैंने गढ़वाल में क्या देखा?

[नं० २]

(गढ़वाल में आर्यसमाज का प्रवेश कैसे हुआ)

मैंने गत लेख में संक्षेप में गढ़वाल की दशा का स्थूल विवेचन किया था। यद्यपि हमारी इस यात्रा का उद्देश्य राजनैतिक आन्दोलन है तथापि सामाजिक विचार के बहुत से लोग आ-आकर—दूर-दूर से आ-आकर बराबर मिलते जा रहे हैं और ऐसे लोगों से बात-चीत करके—और स्वयं आँखों से देख

कर साक्षात् अनुभव करके गढ़वाल में आर्यसमाज के विषय में मुझे जो कुछ अनुभव प्राप्त हुआ है उसको लिखना उचित समझता हूँ जिससे नीचे देश के आर्य भाई यथार्थ दशा को जान सकें और गढ़वाल के विषय में व्यर्थ की भ्रान्तियों में न पड़े रहें—गढ़वाल में केवल पाँच समाजें हैं। १-पौड़ी, २-चाँदकोट, ३-लैन्सडाऊन, ४-दुगड्डा और ५-कोटद्वार।

इन पाँच समाजों में आर्यसभासद होंगे कोई ढाई सौ—इससे अधिक नहीं हैं। चार डी० ए० वी० स्कूल हैं। १-दुगड्डा (प्राईमरी), २-पौड़ी (मिडिल), ३-व्यूरोखाल (६ दर्जे तक), ४-चैलूसैन (८ दर्जे तक), इन सबकी अपनी बिल्डिंगें हैं, पर अभी यह नाजुक दशा में हैं। किन्तु उत्तरोत्तर उन्नति की पूर्ण आशा है। सन् १९१३ में स्वामी श्रद्धानन्द जी (उस समय के महात्मा मुन्शीराम) ने भगद्दूखाल में एक आर्य स्कूल खोला था, जो पीछे चल न सका। इसकी बिल्डिंग में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का छोटा सा स्कूल है। गढ़वाल में आर्यसमाज के प्रवेश का संक्षिप्त वृत्तान्त निम्न प्रकार है--सन् १९०० से पूर्व गढ़वाल में आर्यसमाज तो क्या एक भी आर्यपुरुष देखने को नहीं मिलता था।

सन् १९०० में स्वर्गीय पं० गंगादत्त जोशी (तहसीलदार पौड़ी), स्व० ठा० जोधसिंह सेटलमेंट ऑफिसर (सुल्ला-असवालस्यूँ), स्व० ठा० नरेन्द्रसिंह चीफ़ रीडर (रिंगवाड़ी-रिंगवालस्यूं) इन तीन महानुभावों के कारण प्रथम-प्रथम इधर 'नमस्ते' शब्द का प्रचार और आर्यसमाज का विचार प्रस्तुत हुआ। ठा० जोधसिंह सामाजिक विचार के तो थे पर इनका अधिक समय क्षत्रिय जातिसभा में व्यय होता था और क्षत्रिय जाति के उद्धारार्थ आपने बहुत उद्योग किया। स्व० श्री ठा० नरेन्द्रसिंह ने च्यवनकोट-निवासी श्री ठा० केसरसिंह जी को सत्यार्थप्रकाश पढ़ने की प्रेरणा की जिससे ठा० केसरसिंह जी दृढ़ आर्य विचार के बन गये—फिर इनके द्वारा च्यवनकोट में आर्यसामाजिक विचारों का प्रवेश हुआ।

ठा० सुरेन्द्रसिंह जी सेक्रेटरी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड पौड़ी को आर्य बनाने का श्रेय भी श्री स्व० ठा० नरेन्द्रसिंह को ही है। सन १९१४ से यह तथा श्री शिवानन्द जी महकमा जंगलात, ठा० आलमसिंह जी क्लर्क सिविल सर्जन पौड़ी, ठा० कोतवालसिंह प्रबन्धक डी० ए० वी० स्कूल पौड़ी आदि आर्यसमाज के कार्यों में संलग्न हैं। १९२१ में उदयपुर पट्टी में वहाँ के प्रसिद्ध कार्यकर्ता ठा० छवाणसिंह तथा ठा० गोपालसिंह जी ने उधर आर्यसमाज का खूब प्रचार किया। इनको अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ा किन्तु इनके अनथक परिश्रम का यह फल हुआ कि उस उदयपुर पट्टी में ४० प्रतिशत मनुष्यों ने मांस और ६० प्रतिशत मनुष्यों ने तम्बाखू का व्यसन छोड़ा। सन् १९२४ में पं० रेवानन्द शर्मा (बुधगाँव-लैन्सडाऊन) आगे आये और इन्होंने आर्यसमाज के कार्य को जिस तत्परता से किया और जिस प्रकार से कष्ट सहते रहे वह एक स्पर्द्धा का विषय है। आप पक्के आर्य मिशनरी हैं—अब भी बड़ी लगन से कार्य कर रहे हैं। अछूतोद्धार के कार्य में आपने बहुत कष्ट सहे। एक बार तो एकेश्वर महादेव के मेले में प्रचार करते हुए आपको तथा ठा० केसरसिंह आदि महानुभावों को कट्टर मदान्ध लोगों के हाथ बहुत मार खानी पड़ी। अछूतोद्धार के कार्य में बिजनौर आर्य प्रतिनिधि सभा ने भी बहुत सहायता पहुंचाई। श्री अर्जुनदेव ने भी बहुत काम किया किन्तु बहुत बेढंगे तरीके से। गढ़वाल

में अछूतों पर इतना अत्याचार नहीं होता है जितना कि बढ़ा बढ़ा कर अखबारों में छापा जा रहा है।

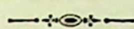
अछूत भाइयों में एक बड़ा दोष यह आगया है कि जहाँ आर्यसमाज द्वारा इनकी आँखें खुलीं कि बस वे आर्यसमाज के साथ सहयोग देकर काम नहीं करते। पृथक् अपनी जाति के संगठन में लग जाते हैं, अपनी बनाई हुई अछूत सभाओं और शिल्पकार सभाओं में लगे रहते हैं। इनमें भी बहुत से आर्य अछूत भाई अमन सभा की ओर झुक रहे हैं। कोई-कोई स्वामी अछूतानन्द आदि-हिन्दूसभा-प्रवर्त्तक की हाथ की कठपुतली बने हैं। यदि इनमें कोई लगन का आदमी है तो, परमहितैषी है तो, वे महाशय मस्तसिंह हैं जो लैन्सडाऊन में ड्राइवरी का काम करते रहते हैं। अपनी जाति के उद्धार हेतु जिन्होंने काम किया है उनमें श्री जयानन्द जी, श्री भगतराम जी, म० बुद्धिराम (दुगड्डा) इन तीनों के नाम उल्लेख योग्य हैं।

गढ़वाल में प्रारम्भिक दशा में जिनको समाज-सुधार की लगन थी उनमें कोटद्वार के स्व० पं० धनीराम का नाम लेना आवश्यक है। उनके सुयोग्य पुत्र श्री पं० कृपाराम मिश्र 'मनहर' सम्पादक गढ़देश, आर्यसमाज के प्रत्येक कार्य में योग देते हैं। पर सम्प्रति राजनैतिक क्षेत्र में विशेष काम करते रहते हैं। लैन्सडाऊन में मन्त्री म० टेकचन्द जी अलवरनिवासी और देहरे के बा० मिट्ठनलाल महकमा जंगलात, बहुत उत्साह से योग देते हैं। इस समय गढ़वाल के सौभाग्य से महाविद्यालय ज्वालापुर के स्नातक पं० रुद्रदत्तशास्त्री विद्याभूषण इधर प्रचार कर रहे हैं। पं० रेवानन्द जी आपके साथ हैं। पं० रुद्रदत्त गढ़वाली हैं और आशा है इनसे गढ़वाल को बहुत लाभ पहुँचेगा। आप नौटियाल ब्राह्मण हैं और पौड़ी के पास ही के रहने वाले हैं। आप आर्यप्रतिनिधि सभा यू० पी० के महोपदेशक हैं। खाटली पट्टी के ठा० कल्याणसिंह डुमैल निवासी भी बहुत लगन के आर्य हैं। पौड़ी और चैलूसैन में डी० ए० वी० स्कूलों की स्थापना से ईसाई मिशनरिओं का बल घटता जाता है।

इस तरह गढ़वाल में आर्यसमाज 'विरोध काल' और 'उपहास काल' में से निकल कर 'सहानुभूति' काल में आगया है। डी० ए० वी० कालेज देहरादून में गढ़वाल के सैंकड़ों बालक पढ़ते हैं और वहाँ से सैकड़ों युवक पढ़कर गढ़वाल में रहने लगे हैं। उनके द्वारा भी अलक्षित रूप से आर्यसमाज का प्रचार धीरे धीरे बढ़ता जाता है। राजनैतिक आन्दोलन के कारण गढ़वाल के आर्यपुरुषों और नवयुवकों का ध्यान उधर ही है और प्राणपण से देश सेवा करने के लिए तैयार हैं, यह सन्तोष का विषय है।

यह हुआ ब्रिटिश गढ़वाल का हाल, टिहरी गढ़वाल में एक भी समाज नहीं है। हाँ, आर्यविचार के पुरुष, आर्यसमाज से सहानुभूति रखने वाले व्यक्ति यत्र तत्र मिलेंगे। किन्तु डी० ए० वी० कालेज देहरादून में उधर के जो भी लड़के पढ़कर जाते हैं वे अवश्य ही कुछ न कुछ विचारों का प्रचार करते ही रहते हैं। बा० गंगाप्रसाद एम० ए० चीफ जज टिहरी के कारण उधर टिहरी राज्य में आर्यसमाज को सब कोई जान गया है। गढ़वाल में जब भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा था तब एक वार स्वा० श्रद्धानन्द और महात्मा हंसराज आये थे। उनके आगमन से भी उस समय आर्यसमाज के कार्य में कुछ प्रोत्साहन

मिला था। दुर्भिक्ष-संकट में आर्यसमाज द्वारा सहायता पाने से गढ़वाल सदैव के लिये कृतज्ञ बन गया था। इस तरह बिछड़ा हुआ गढ़वाल समय की गति के साथ पैर उठा रहा है, यह सन्तोष की बात है।



(द्वितीय यात्रा)

गढ़वाल की यात्रा

[३]

(यह यात्रा रामनगर, पौड़ी, श्रीनगर, केदारनाथ, बद्रीनाथ, देवप्रयाग, शितोनस्यूँ, कोटमहादेव, अद्वानी, कोटद्वार, हरिद्वार इस क्रम से हुई थी।)

(सिंहावलोकन—१९३१ जुलाई)



[स्मृति पटल में से जिस प्रकार स्मृति तन्तु निकलते जा रहे हैं उसी क्रम से लिख रहा हूँ। इसमें यात्रा विवक्षित नहीं है]

स्व० गिरिजादत्त नैथाणी

मैं अद्वानी से आगे दुगड्डे की ओर लौट रहा था—मार्ग में सहसा एक ग्राम आया—मैंने उसका नाम पूछा तो उत्तर मिला 'नैथाणा'। बस पूछिये मत मन की दशा क्या हुई। वह सौम्यमूर्ति पं० गिरिजादत्त नैथाणी एकदम आ लिपटे, मैं एकदम भौंचक्का-सा रह गया और सहसा चिल्ला उठा "अरे तुम कहाँ"—मेरा मन विह्वल हो उठा—उस मूर्ति की लेखन-स्फूर्ति की याद आयी। वह दीखने में जितना सौम्य था—उसकी लेखनी उतनी ही अधिक तीव्र थी, उस समय वह न्यायतुला पर तोल कर लिखता था, उस समय वह मित्र और शत्रु की परवाह नहीं करता था—'गढ़वाली' के पुराने लेख, 'पुरुषार्थ' के फड़कीले लेख इस बात के लिये पुष्ट प्रमाण हैं। कोई गढ़वाल का इतिहास लिखने बैठे तो वह पं० गिरिजादत्त नैथाणी को कैसे भुला सकता है। ओह, अब तो नैथाणी जी स्मृतियों के ढेरों में दबे छुपे पड़े हैं। स्व० गिरिजादत्त नैथाणी करारे निर्भीक, निष्पक्ष लेखक थे।

स्वर्गीय पं० घनानन्द मालदार

यदि वह जीवित होते तो हमारी गढ़वाल की यात्रा से परम प्रसन्न होते। हम जानते हैं कि हमारा टिहरी-विषयक आन्दोलन उन्हें पसन्द नहीं आता, पर हम यह भी जानते हैं कि यदि वे जीवित होते तो टिहरी में वर्त्तमान दृश्य के से दृश्य देखने में नहीं आते—पं० घनानन्द जी टिहरीनरेश के परम भक्त थे। पौड़ी से श्रीनगर जाते समय मार्ग में एक ग्राम में एक सफेद मकान चमका, पूछने से विदित

हुआ कि यह रायबहादुर घनानन्द मालदार का मकान है। स्व० घनानन्द जी ने गढ़वाल के लिये क्या किया अब सब कोई जान गये हैं, पर बहुत सी ऐसी बातें हैं, जिन परप्र काश डालना आवश्यक है। अब तक घनानन्द जी के भक्तों से यह नहीं हुआ कि वे स्व० पण्डित जी का एक सर्वाङ्ग-सुन्दर जीवन चरित्र छपाते। स्व० पं० गिरिजादत्त नैथाणी यह काम करने वाले थे पर वे भी चल बसे। जब तक गढ़वाल का चन्द्रवल्लभ ट्रस्ट रहेगा श्री पं० जी के नाम को कौन भुला सकता है–गढ़वाल के नवयुवक पं० जी के सदैव कृतज्ञ रहेंगे। मसूरी का घनानन्द हाई स्कूल भी पं० जी का स्मारक रूप है पर इसमें अभी बहुत कुछ उन्नति की गुञ्जायश है—हम आशा करते हैं कि समय पाकर यह स्कूल पूर्ण उन्नति करेगा–हमारे और पं० जी के बीच की जब पुरानी बातें याद आती हैं, तो जी भर आता है।

पं० तारादत्त गैरोला और पं० बृजमोहन चन्दोला

पण्डित तारादत्त गैरोला तथा श्री पं० बृजमोहन चन्दोला गढ़वाल के पुराने नेता हैं। नवयुवक गढ़वाल को इनका ढीलापन पसन्द नहीं है तथापि पं० तारादत्त जी व चन्दोला जी की विद्याव्यसनिता, दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता को सब कोई मानते हैं। श्री तारादत्त गैरोला का कफलसैणाश्रम देखने योग्य है। एकान्त सुरम्य उद्यानमय आवास तथा निवास किसके मन को नहीं हरते–पण्डित जी पुस्तकावलोकन और ग्रन्थ-लेखन में निमग्न रहते हैं और बाहर का कोई भी प्रसिद्ध पुरुष जो गढ़वाल आता है, वह पं० जी के आश्रम का अतिथि बने बिना नहीं लौटता। मैं पूर्ण आशा करता हूँ कि पण्डित जी 'गढ़वाल के ग्राम्यगीत' नामक जो पुस्तक लिख रहे हैं उससे गढ़वाल की वीरता का बाह्य जगत् को अच्छी तरह पता चल जायगा। गढ़वाल के सुयोग्य लेखक तथा कवियों को उचित है कि गढ़वाली साहित्य की अभिवृद्धि में सब प्रकार से योग देवें जिससे गढ़वाल की गुण-गरिमा को बाह्य जगत् भलीभाँति समझ सके। गढ़वाल में सुकवि और सुलेखकों की कमी नहीं है।

गढ़वाल का वकील मण्डल

गढ़वाल का वकील-मण्डल जितना दब्बू है शायद ही और किसी जिले का हो। यदि ये लोग निर्भीक भाव से राजनैतिक क्षेत्र में भी काम करें तो गढ़वाल को बहुत सहायता मिले। दिल सबका है, चाहते सब हैं कि काम हो, पर आगे आकर उत्तरदायित्वपूर्ण भार लेने के लिये कोई तैयार नहीं हो रहा है—यह बात वीर गढ़वाल के अनुरूप नहीं है--वकील-मण्डल को आगे आकर पथप्रदर्शन का काम हाथ में लेना चाहिये। 'वह करे तो मैं भी करूँ'–'वह आगे आवे तो मैं भी आऊँ' ऐसी बातों के करने का अवसर गया। वकीलों का स्वतन्त्र धन्धा रखते हुए भी यदि आप लोग आगे आने से घबराते हैं तो फिर आगे आने का अवसर यही है—असमय आगे आये या कुसमय आगे पैर बढ़ाये अथवा जब समय है तब चूके तब क्या होगा—आशा करते हैं कि स्वजिले के हित को ध्यान रख कर वकील-मण्डल सजग हो जायगा और संगठन के कार्य को हाथ में ले लेगा।

गढ़वाल का डिस्ट्रिक्ट बोर्ड

यह डिस्ट्रिक्टबोर्ड संसार से न्यारा है--इसका निरालापन गढ़वाल गये बिना, उसके मार्गों को खूँदे बिना, पता नहीं चल सकता। इसके अधीनस्थ स्कूलों में बालकों की शिक्षा-दीक्षा के लिये पर्याप्त साधन नहीं--सरकारी पंजा या हौव्वा बराबर इसके सिर पर रहता है। अबके न जाने किस पुण्य का उदय हुआ कि गढ़वाल जिला कानफरन्स के लिये कोटमहादेव स्कूल का रम्य अहाता मिला। बोर्ड की हीन दशा मेम्बरों की दुर्बल मनोवृत्ति के कारण है। आखिर यह दशा कबतक रहेगी? कभी तो इसका अन्त होगा?

गढ़वाल के पण्डे पुरोहित

गढ़वाल के पण्डों में भी कई ग्रेजुएट हो गये हैं और अगले वर्ष कई होंगे। श्री गुरुप्रसाद ध्यानी बी० ए० राणाकोट (देवप्रयाग) जैसों को देख कर किसका मन प्रसन्न नहीं होगा। पण्डों और पुरोहितों की स्वदेश-प्रियता भी प्रशंसनीय है। देवप्रयाग में घुसते ही पण्डा-कुमारों को स्वदेशी और खद्दर में देख कर प्रसन्नता होती है। गुप्तकाशी, श्री केदारनाथ, श्री बद्रीनारायण में यही हाल है। पण्डे पुरोहितों के बहुत से लड़के अंग्रेजी पढ़ते हैं। जब वह पूर्ण शिक्षित होंगे तब इनसे यहाँ पण्डागिरी होगी कि नहीं कौन जानता है। स्वाभिमान की जागृति के साथ ही, यजमानों के पीछे भागना, गिड़गिड़ाना आदि दैन्य-प्रदर्शन एकदम बन्द होगा।

मुझे कई पण्डा-कुमारों ने कहा कि वे इस प्रकार की पण्डागिरी छोड़ देंगे। क्यों नहीं पण्डागण परस्पर सुमति से ऐसा कोई मार्ग निकाल लेते जिससे परस्पर राग द्वेष भी न हो और अपना चरितार्थ भी स्वाभिमान-पूर्वक चला जाय। इस विषय में देवप्रयाग के पण्डा मुरलीधर, पण्डा वृन्दावन आदि से बहुत कुछ बात चीत हो चुकी है। पण्डा-कुमार स्वयं चाहते हैं कि इस दैन्यावस्था का अन्त हो जाय। यह सचमुच शुभ लक्षण है।

गढ़वाल की यात्रा लाइन के क्षेत्र

गढ़वाल में यात्रा लाइन में सर्वत्र क्षेत्रों की भरमार है। क्षेत्र वालों का विशेष ध्यान श्री बद्री-नारायण की यात्रा लाइन पर है, उससे उतर कर ध्यान है श्री केदारनाथ यात्रा लाइन पर, गंगोत्री-जमनोत्री लाइन पर इतना ध्यान नहीं। सर्वत्र कालीकमली वालों के क्षेत्र और धर्मशालायें हैं। श्री बद्रीनारायण में मैंने पंजाब सिंध वालों का भी एक क्षेत्र देखा। पंजाब सिंध वालों का ध्यान यात्रा लाइन की ओर क्यों नहीं गया इसका आश्चर्य है। कालीकमली वाले की धर्मशालाओं और क्षेत्रों से लोगों को आराम तो मिलता है पर इन धर्मशालाओं की संख्या बढ़नी चाहिए। हनुमान चट्टी आदि स्थानों में बड़ी धर्मशाला बननी चाहिए। कहीं २ धर्मशाला बहुत गन्दी रहती हैं, उनकी सफाई का बन्दोबस्त रहना चाहिये।

जो श्रीमान् यात्री हृषीकेश से विशेष पत्र ले जाते हैं या जिनके लिये विशेष रूप में लिखा जाता है वे जाते ही गरीब यात्रियों को कष्ट में डाल देते हैं जो पहिले से ही वहाँ उतरे हुए रहते हैं। उनको या तो स्थान छोड़ना पड़ता है या थोड़े स्थान में बहुतसों को रहना पड़ता है, जिससे असुविधा होती है। यदि धर्मशालायें बढ़ाई जावें तो यह दिक्कत दूर हो सकती है। कहीं २ बहुत अच्छी धर्मशालायें हैं, जैसे बनियाकुण्ड, मण्डल आदि स्थानों में। कहीं २ विकट घाटियों की चढ़ाई में प्याऊ आदि का अच्छा प्रबन्ध है। इन धर्मशालाओं के प्रबन्धक वैसे तो बहुत शिष्ट और परिश्रमी प्रतीत हुए। इस लम्बी-चौड़ी यात्रा में हम केवल देवप्रयाग, बनियाकुण्ड, आदि ७-८ धर्मशालाओं में टिके थे।

गढ़वाल के मन्दिर

कलाकौशल की दृष्टि से श्री केदारनाथ का मन्दिर सबसे उत्तम प्रतीत होता है। गढ़वाल प्रायः शैवप्रधान देश है। त्रियुगीनारायण व बद्रीनारायण को छोड़ कर प्रायः सर्वत्र गढ़वाल में महादेव के ही मन्दिर हैं। सल्ड महादेव, झल महादेव, एकेश्वर महादेव, कोट महादेव, बस महादेवों की लम्बी लड़ी है। प्रायः सभी मन्दिर छोटे २ हैं—जितना बड़ा उनका नाम है उससे भी बहुत छोटे मन्दिर हैं। बहुत से जीर्ण दशा में पड़े हुए हैं—दरिद्र किन्तु भक्त गढ़वाल का ध्यान मन्दिरों के जीर्णोद्धार की तरफ नहीं है। इन मन्दिरों में विशेष अवसर पर बड़े २ मेले लगते हैं जिनमें सहस्रों नरनारी एकत्रित होते हैं। तनिक भी ध्यान देवें तो बात की बात में जीर्णोद्धार हो जाय। सल्डमहादेव में रात्रि को मेला लगता है। यह विचित्र बात है। श्री बद्रीनारायण मन्दिर के अग्रभाग को विस्तृत बनाने का आयोजन होना चाहिये। दर्शनार्थी यात्रियों को संकुचित स्थान के कारण परिमित संख्या में भीतर दर्शनार्थ जाना पड़ता है और सैकड़ों यात्री प्रतीक्षा में बाहर खड़े रहते हैं—वैसे तो दर्शन सबको हो ही जाते हैं—

(गढ़वाली)

गढ़वाल की यात्रा

गढ़वाल के नवयुवक

श्री पं० भोलादत्त चन्दौला वकील का उत्साह, श्री भक्तदर्शन का त्यागभाव, श्री हरिशर्मा, मास्टर जगतसिंह, ठा० छवाणसिंह का परिश्रम, श्री सकलानन्द शास्त्री (डोभ इडवालस्यूं) पं० विश्वम्भर शास्त्री जसपुर (बनगड़स्यूं) और श्री मदनमोहन काला की लगन, ठा० गोपालसिंह, ठा० जोधसिंह, पं० रूप-चन्द (उदयपुर पट्टी) की संगठन-प्रियता, ठा० विशनसिंह (गुजडू पट्टी) का शान्त रीति से काम करने

और सबके सिर जोड़ कर काम लेने की रीति, श्री कृपाराम मिश्र 'मनहर' की धुन, श्री पानसिंह चामी (सल्ड तल्ला) व पं० रामप्रसाद नौटियाल की निर्भयता व संगठन-कुशलता किसके मन को मुग्ध नहीं करती। गढ़वाल में यह विशेष बात देखी कि जितने भी नये शास्त्री हैं वे सब देश कार्य में सोत्साह भाग लेते हैं। उनमें पुराने पण्डितों का सा लीचड़पन नहीं है। पंडित अनुसूयाप्रसाद बहुगुणा गढ़वाल भर में सबसे आगे आने योग्य व्यक्ति हैं—मैं क्या कहता हूँ, सारा गढ़वाल कहता है, पर आगे आवें तब न ? इसके अतिरिक्त यत्र तत्र सर्वत्र सैकड़ों होनहार नवयुवकों को देख कर किस स्वाभिमानी का हृदय आशा से भरित न होगा—

❀ ❀ ❀ ❀

गढ़वाल में पुस्तकालय

गढ़वाल में प्रजा की ओर से अथवा शासकवर्ग की ओर से केन्द्रस्थान में भी कोई सर्वाङ्ग परिपूर्ण सर्व विषयों की पुस्तकों से युक्त बृहत् पुस्तकालय नहीं हैं। गढ़वाल की यह बहुत भारी त्रुटि है। गढ़वाल इस प्रकार का अपना एक बृहत् ग्रन्थसंग्रहालय कब बना सकेगा ईश्वर जाने। अभी तो गढ़वाल को अपने भोजनाच्छादन की ही चिन्ता के मारे अवकाश नहीं। ग्रन्थसंग्रहालय तो राष्ट्र में स्फूर्तिसंचार, विद्याप्रचार तथा प्रसार कराने का उत्तम साधन है। इनमें संसार भर के राष्ट्रों के इतिहास, कला-कौशल की पुस्तकें, विज्ञान-साहित्य, धार्मिक साहित्य आदि रहना चाहिये। गढ़वाल में सैकड़ों सहस्रों उपाधि-धारी भी हुए और उनके मस्तिष्क के विकास के लिये साङ्गोपाङ्ग बृहत् पुस्तकालय संग्रहालय न हुआ तो वे उपाधिधारी भी क्या कर लेंगे।

❀ ❀ ❀ ❀

टिहरी व ब्रिटिश गढ़वाल

एक गढ़वाल के कई टुकड़े कर डाले गये और हम मूर्ख ऐसे कि आपस में भी अपने को एक दूसरे से पृथक् समझने लग गये। ब्रिटिश गढ़वाल वाले यदि टिहरी गढ़वाल के विषय में कुछ कहें सुनें लिखें तो टिहरी वाले कहते हैं तुम्हें टिहरी गढ़वाल से क्या मतलब ? इसके उत्तर में टिहरी गढ़वाल में कुछ होजाय तो ब्रिटिश गढ़वाल वाले यह कहें कि टिहरी से हमें क्या मतलब तो आश्चर्य ही क्या है। सच देखा जाय तो दो विभागों में दो प्रकार की शासनप्रणाली के होने पर भी गढ़वाल और गढ़वाली एक ही हैं। दोनों का वही पुराना सम्बन्ध है। दोनों के सुख-दुःख एक हैं—एक को दुःख हो जाय तो दूसरा बच नहीं सकता, फिर भी जिनको बुद्धि का अजीर्ण हो गया है वे कहते ही रहते हैं कि भाई तुम्हें टिहरी गढ़वाल की बातों से क्या मतलब ? सारा खेल बुद्धिभेद का है।

❀ ❀ ❀ ❀

गढ़वाल की देवियां

गढ़वाल की देवियां वीर हैं, श्रद्धालु हैं और परिश्रम का तो हाल ही न पूछिये। प्रातः ४ बजे से लेकर रात्रि के दश ग्यारह बजे तक वह जो परिश्रम करती हैं वह क्या किसी अन्य देश की देवियों के बस का है। राम का नाम लो। गढ़वाल जो जीवित है और श्वास ले रहा है वह केवल देवियों के बल बूते पर। गढ़वाल में निन्दनीय पर्दा प्रथा नहीं है, घर के काम काज में बाहर आने जाने में उनको पूर्ण स्वतन्त्रता है। जब देवियाँ गोल का गोल बांध कर लकड़ी या घास के लिये जंगलों में जाती हैं और गाती आती जाती हैं वह एक देखने योग्य दृश्य होता है। इन देवियों को महात्मा गांधी का नाम मालूम है। कांग्रेस को भी यह अच्छी तरह जानती हैं। कन्याओं में धीरे धीरे शिक्षा का प्रचार बढ़ रहा है। नौगाँव खाल के स्कूल में हमने २३ कन्यायें पढ़ती हुई देखीं। एक दिन बूबा खाल के पास देवियों का एक दल जंगलमें से काफल की कंडियां भरकर लारहा था और गाता आरहा था—कैसा अच्छा दृश्य था। कोई कैसे भूले।

❁ ❁ ❁ ❁

गढ़वाल के अछूत

पहले तो इनको अछूत कहना ही ठीक नहीं क्योंकि देश में जिस प्रकार अछूतों के साथ व्यवहार होता है वैसा कड़ा व्यवहार गढ़वाल में है ही नहीं। गढ़वाली स्कूलों में अछूतों के बालकों को अन्य सब लड़कों के साथ स्वेच्छापूर्वक बैठकर पढ़ते हुए हमने स्वयं देखा है। देश की व गढ़वाल की परिस्थिति में बहुत अन्तर है। गढ़वाल में अछूतों या डोमों का प्रश्न है आर्थिक प्रश्न। जब समस्त गढ़वाल की आर्थिक गुत्थी सुलझ जायगी तब इनकी भी आर्थिक दशा सुधरेगी इसमें सन्देह नहीं। ये लोग जमीन चाहते हैं पर जिनसे जमीन चाहते हैं उनकी दशा भी तो दयनीय है। किन्तु उच्च कहलाने वाले समय की गति को समझ कर जरा सहानुभूति का वर्ताव करें तो उससे उनका गौरव ही बढ़ेगा। इन डोमों में लुहार राज आदि स्वतन्त्र पेशे के सहस्रों लोग हैं जो स्वतन्त्रता-पूर्वक अपना निर्वाह कर रहे हैं। और बहुत से जटिल प्रश्न हैं—समय के बिना उनको कोई सुलझा नहीं सकता।

❁ ❁ ❁ ❁

गढ़वाल की सामान्य दशा

गढ़वाल अर्थदरिद्र है पर धीदरिद्र नहीं है। इसलिये जीवित भी है। पर इस की दरिद्रता और बुद्धिमत्ता अर्थात् गढ़वाल के गुण और गढ़वाल दोष इन दोनों से किसी ने अच्छी तरह लाभ उठाया है तो वह सरकार ने उठाया है। गढ़वाल इसको अनुभव करने लगा है। गढ़वाल भूलों का प्रायश्चित्त करना चहता है। गढ़वाल अपने गुणों से देश को भी लाभ पहुँचाना चाहता है। यह शुभ लक्षण हैं। गढ़वाल में परस्पर-विरोधी बहुत गुण हैं। वीर भी हैं और भीरु भी। वीर इसलिये कि इसकी समझ में

आजाय तो प्राण तक समर्पण करने को तैयार। भीरु इसलिये कि अभी बहुत सा भाग अपने स्वरूप को न समझने के कारण अज्ञान में है और डरता है। गढ़वाल बहुत शीतल भी है और बहुत गरम भी। यही गुण गढ़वालियों में भी आगया है। या तो एकदम गरम होंगे और या तो हिमालय की बर्फ की तरह ठंडे होकर अपनी जगह पर ही गल जायेंगे। गढ़वाल को मध्यम रेखा पर अभी चलना नहीं आया पर अब धीरे धीरे मध्यम रेखा पर आरूढ़ होकर बातें समझने लगा है। गढ़वाल अब अपनी सुरक्षिता के लिये उच्च पर्वत मालाओं और दुर्गम घाटियों पर भरोसा न रखे--यदि वह सुरक्षित व जीवित रहना चाहता है तो संघटित बने। यही एक उपाय है। हम अब इस सिंहावलोकन को समाप्त करके यह आशा करते हैं कि गढ़वाल समष्टिरूप में ऐसा यत्न करेगा कि जिससे भव्य भारत में समुचित स्थान मिल सके--इसी सदाशा के साथ यह लेख समाप्त किया जाता है। तथास्तु।

(गढ़वाली)

हम डॉ० कुशलानन्द गैरोला के चुनाव में गये थे।

[तृतीय यात्रा]

❁ गढ़वाल की यात्रा ❁

विस्तृत विवरण

(आर्य मित्र, १९४६)

श्री नरदेवशास्त्री जी कांग्रेस चुनाव कार्य से गढ़वाल गये थे। आपने दस दिन तक गढ़वाल का भ्रमण किया। उनकी यात्रा का विवरण उन्हीं के शब्दों में नीचे दिया जाता है जिससे पाठकों का मनोरंजन होगा।

"गढ़वाल" उत्तराखण्ड का विकट पर्वतीय प्रदेश है। जो देश में नीचे रहते हैं और जिन्होंने कभी पर्वतीययात्रा नहीं की, वे इस प्रदेश की विकटता को अनुभव नहीं कर सकेंगे। यहाँ यातायात के साधन शून्य के तुल्य हैं—चढ़ाई उतराई और विकट घाटियों के कारण चढ़ते उतरते आदमियों को बड़े संकट का सामना करना पड़ता है। दो-दो, चार-चार घरों के भी ग्राम हैं। यातायात का संकट, जंगलों के कट जाने से जल का संकट, देश की तरह बड़े-बड़े विस्तृत क्षेत्रों के अभाव के कारण अन्न-संकट इत्यादि के कारण गढ़वाल में दरिद्रता का साम्राज्य है। एक तिहाई से अधिक गढ़वाल के लोग निर्वाहार्थ गढ़वाल से बाहर भारतवर्ष में दूर-दूर तक चले जाते हैं। सरकार की फौज की भर्ती के लिए तो गढ़वाल एक वीर पुरुषों की मंडी है। २०-२०, ३०-३० रु० वेतन पर गढ़वाली नवयुवक सेना में भर्ती हो सकता है। इनकी वीरता ब्रिटिश साम्राज्य की नींव को दृढ़ करने के काम में ही आती है। इस प्रदेश में फौजी पेनशनर बहुत अधिक हैं। वैसे गढ़वाली बुद्धिमान् होते हैं, परिश्रमी होते हैं और होते हैं दृढ़ अध्यवसायी। गढ़वाल का शिक्षित समुदाय गढ़वाल के बाहर ही रहता है। जो अशिक्षित

समुदाय गढ़वाल से बाहर जाता है वह प्रायः भारत भर में फैला है और छोटी-छोटी नौकरियों तथा सेवाओं द्वारा अपने कुटुम्ब का पालन पोषण करता रहता है। यहाँ दो ही जातियों की प्रधानता है ब्राह्मण और क्षत्रिय, शेष सब शिल्पकार हैं जिनमें लुहार, राज, मिस्त्री, दर्जी आदि पेशे वाले हैं।

गढ़वाल दो भागों में बँटा है। ब्रिटिश गढ़वाल तथा टिहरी गढ़वाल। टिहरी गढ़वाल की दशा ब्रिटिश गढ़वाल से भी निकृष्ट है। ब्रिटिश गढ़वाल में कांग्रेस के लिये बड़ा उत्साह है पर टिहरी गढ़वाल में कांग्रेस के तिरंगे झण्डे फहराने की बात तो दूर रही सफेद गाँधी टोपी भी कोई पहन नहीं सकता। लोग गांधी टोपी को रंगा कर पहनते हैं—

गढ़वाल कट्टर सनातनियों का प्रदेश है। आर्यविचार के लोग भी मिलते हैं पर बहुत थोड़े। आर्यसमाज से सहानुभूति करने वाले बहुत हैं। यहाँ डोला-पालकी का प्रश्न बड़ा बल पकड़ गया था पर अब धीरे-धीरे लोग भी समझते जाते हैं और कहीं का कहीं इस प्रश्न को अतिरञ्जित रूप दिया है। दक्षिण गढ़वाल में तो इस विषय में सुभीता दिया जा रहा है पर उत्तरी गढ़वाल में अभी उतने सुभीते नहीं। कहीं कहीं तो उच्च वर्ण वालों को भी डोला पालकी से उतारना पड़ता है। देश के छूत अछूत और गढ़वाल के छूत-अछूतों की दशा में बहुत भेद है। गढ़वाल के छूत-अछूतों का प्रश्न गढ़वाल की भौगोलिक विकटता के अनुपात के अनुसार है, पर अब शिल्पकारों की आर्थिक दशा सुधरती जाती है और समस्त भारत की स्वतन्त्रता के प्रश्न के साथ साथ गढ़वाल की समस्या भी सुलझती जायगी ऐसी पूर्ण आशा है। आर्यसमाज के प्रचारक, उपदेशक जब प्रचारार्थ गढ़वाल में आते हैं तब प्रायः छोटी जातियों के यहाँ ही उतरते हैं, रहते हैं, खाते-पीते हैं, इससे उच्च वर्णस्थ गढ़वालियों की धारणा हो गई है कि आर्यसमाज के प्रचारक भी निकृष्ट वर्ण के हैं। प्रचारकों, उपदेशकों को उचित है कि वे गढ़वाल में आकर उच्च जातियों से भी संपर्क रक्खें। उनसे मिलें, मिलें-जुलें-जिससे व्यर्थ के भ्रम के कारण मार्ग में जो रुकावटें पड़ती रहती हैं वे दूर हो सकें। डोला-पालकी का प्रश्न अब बहुत देर रुक नहीं सकता। उच्च वर्ण चिढ़ सा गया है और कुछ चिढ़ाया भी गया है। पर बुद्धिमान् लोग समझते जाते हैं।

गढ़वाल में हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न नहीं है क्योंकि सौ में २ भी मुसलमान नहीं हैं, पर ब्राह्मण क्षत्रिय का प्रश्न काम करता रहता है। इस प्रश्न के उठाने में सरकारी नीति काम करती रहती है। यहाँ जब कोई काम उठाओ यह प्रश्न पहिले सामने खड़ा हो जाता है। इस काँग्रेस चुनाव में भी भीतर ही भीतर यह प्रश्न काम कर रहा है पर लोग सचेत हो गये हैं—सरकारी चाल चल न सकी।

गढ़वाल में कांग्रेस के लिये बड़ा उत्साह है। यहाँ के स्कूलों के छात्र बड़े तेजस्वी हैं 'जयहिन्द' नारों से गढ़वाल की घाटियाँ गूँज रही हैं। समस्त गढ़वाल के वोटरों की संख्या लगभग एक लक्ष के ऊपर है। कांग्रेस के दोनों उम्मीदवार सफल होंगे ऐसा दृढ़ विश्वास है।

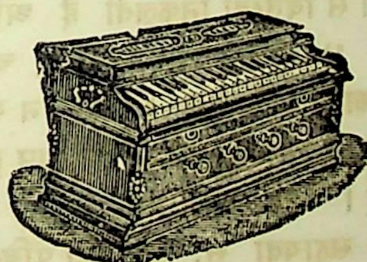
यहाँ आजाद हिन्द फौज के लगभग ५०० सैनिक छूटकर आ गये हैं। अभी २५०० सौ के लगभग विभिन्न सरकारी कैम्पों में बन्द हैं। उनके शीघ्र छूटने की आशा है।

गढ़वाली देवियों में साक्षरता का प्रचार तथा प्रसार बढ़ रहा है। पिछले सप्ताह समस्त गढ़वाल के स्कूलों में साक्षरता-दिवस मनाया गया।

इस समय गढ़वाल में भयंकर अकाल प्रारम्भ हो गया है। बाहर से अन्न नहीं आ रहा है। गढ़वालियों का प्रधान भोजन चावल है पर चावलों के अभाव में गढ़वाली बाजरा खाने लगे हैं। अन्न-कष्ट के कारण गढ़वाली जनता संतप्त है, वर्षाभाव के कारण खेती सूख रही है। भगवान् दया करें।

सरकार ने गढ़वाल मोटर सड़क पर चलने वाली लारियों के लाइसेन्स रद्द किये हैं। इससे यातायात के कष्ट बढ़ गये हैं—अन्नकष्ट के निरोध में पौड़ी में एक विराट् सभा हुई थी। एक डेपुटेशन डिपटी कमिशनर से भी मिला था। उसने कहा कि ३०००० तीस सहस्र मन गेहूँ के लिए सरकार को लिख दिया है। ईश्वर जाने अन्न कब आयगा क्योंकि नीचे देश में भी तो अन्न संकट है।

वीर गढ़वाल की दशा शोचनीय है। कांग्रेस मन्त्रि-मण्डल बनकर नयी सरकार के चलने तक क्या दशा होती है कौन जाने।



नीलमत पुराण

(काश्मीर कैसे बसा ?)

[१]

(१९२९)

[शास्त्री जी आजकल काश्मीर यात्रा कर रहे हैं, वहाँ से आपने कृपा कर काश्मीर के सम्बन्ध में कई सुन्दर लेख भेजे हैं, जिन्हें हम क्रमशः इन स्तम्भों में प्रकाशित करेंगे । आ० स०]

काश्मीर का इतिहास समझने के लिये पहले नीलमत पुराण की आवश्यकता है । पहले काश्मीर "सतीसरः" के नाम से प्रसिद्ध था और आजकल जो काश्मीर नाम से प्रसिद्ध है वहाँ छः मन्वन्तर तक बराबर बड़ा झील रहा । इतना बड़ा झील कि जो दो सौ मील लम्बा और सौ मील से एक सौ बीस मील चौड़ा था । कश्यप ऋषि जब तीर्थयात्रा प्रसंग से यहाँ आये तब उन्होंने जल के मार्ग निकाल कर काश्मीर को मनुष्यों के बसने योग्य बनाया । राजतरङ्गिणी प्रथम तरङ्ग श्लोक (१-२७) श्लोक २८ में लिखा है कि :—

उद्यद्वैतस्तनिष्यन्ददण्डकुण्डातपत्रिणा ।
यत् सर्वनागाधीशेन नीलेन परिपाल्यते ॥ (१-२८)

अर्थात् काश्मीर की पालना नागाधीश नील से होती है । पौराणिक कथा कुछ हो किन्तु साक्षात् देखने से भी प्रतीत होता है कि नील (नीलकुण्ड) अर्थात् वैरीनाग नामक झरने से ही काश्मीर की पालना होती है, यही मुख्य स्रोत है जहाँ से वितस्ता निकलती है और जो गूलर झील में होकर आगे झेलम कहलाती है । काश्मीर में लगभग ४०० स्रोत और सुन्दर २ चश्मे हैं । यदि ये चश्में और पुण्या वितस्ता नदी निकाल ली जाय तो फिर काश्मीर में कुछ भी शेष न रह सकेगा । पाँच सहस्र फुट की ऊचाई पर यह विस्तृत समतल भूमि कश्यप ऋषि की कृपा से ही प्राप्त हुई है । नीलमत पुराण के कर्त्ता अथवा संग्रहकर्त्ता पण्डित चन्द्रदेव हैं । जब अभिमन्यु (प्रथम) का शासन था तब बौद्ध पंडितों ने नागार्जुन नामक अपने प्रमुख नेता की सहायता से, काश्मीरी पंडितों को हराया और अपनी प्रबलता की स्थापना की, उसी समय में नील पद्धति का अनादर तथा लोप हुआ था । पीछे से आचारविहीन काश्मीरियों के लिये यह नीलमत पुराण बना । इसमें आचार-विचार त्यौहार आदि पद्धतियों का वर्णन है । इसमें आधुनिक राखी, अनन्त चतुर्दशी, यक्ष अमावास्या आदि त्यौहार तो नहीं हैं परन्तु बर्फ के गिरने का प्रथम दिवस तथा बुद्ध जन्मतिथि आदि विशेष उत्सव का जिक्र है ।

जिस दिन काश्मीर में पहले पहले बर्फ गिरती है अब भी खुशियाँ मनाई जाती हैं, बड़ा आनन्दोत्सव रहता है । यहाँ बर्फ न गिरे तो काश्मीर में न तो चश्में चलें न फलफूल की समृद्धि हो । बुद्ध

जन्मदिन अब नहीं मनाया जाता। आजकल काश्मीर के अवन्तीपुर में बुद्ध विहारों के जो अवशेष मिलते हैं उससे विदित होता है कि किसी समय बुद्धों की अत्यन्त प्रबलता थी। परिहासपुर आदि में भी बौद्ध अवशेष मिले हैं,---नीलमत पुराण इस प्रकार प्रारम्भ होता है। जनमेजय ने वैशम्पायन से पूछा कि महाभारत के युद्ध में सब राजे गये, काश्मीर का राजा क्यों नहीं गया। काश्मीर मण्डल का राजा गोनन्द किसी समय मथुरा में जरासंध का साथ देने गया था। वह वहीं कृष्ण से युद्ध करने में मारा गया। फिर कृष्ण कन्धाहार (गान्धार) गये, गोनन्द का पुत्र दामोदर कृष्ण के पीछे पीछे बदला लेने के विचार से वहीं पहुँचा और मारा गया। श्रीकृष्ण फिर काश्मीर आये और उसकी गर्भवती स्त्री का राज्याभिषेक किया। कुछ काल पश्चात् उसके पुत्र हुआ जो बालक होने से महाभारत युद्ध में सम्मिलित न हो सका।

नीलमत पुराण से विदित होता है कि कश्यप ऋषि ने जब तीर्थयात्रा की ठानी तब उनका विचार काश्मीर मण्डल देखने का नहीं था। जब काश्मीर मण्डल के अधिपति नील को पता चला तब वह कश्यप जी से कनखल में जा मिला और प्रार्थना की कि वे काश्मीर अवश्य पधारें। कश्यप जी ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की, जब कश्यप जी काश्मीर आये तब उन्होंने देखा कि ऐसा सुन्दर देश उद्ध्वस्त क्यों है। नील ने कहा कि दैत्यों ने नाश कर रक्खा है। तब कश्यप ने दैत्यों को शाप दिया, सतीसर से जब निकलने के मार्ग बनाये, काश्मीर को मनुष्यों के रहने योग्य बनाया। तभी कश्यप के नामपर काश्मीर नाम चला है। संसार में कहीं भी इतने उच्च पर्वतीय प्रदेश में इतना विस्तृत सुरम्य, समतल, फलपुष्प-समृद्धियुक्त कुङ्कुमक्षेत्र-शोभित, नागचतुःशत (४००) शोभित, चतुर्दिङ्नगराज परिवृत देश नहीं मिलेगा। उत्तराखण्ड का उत्तर भाग होने से काश्मीर को विशेष शोभा प्राप्त हुई है। असुर-प्रकृति के लोग अब काश्मीर के उत्तर भाग में और पश्चिम भाग में हैं, उच्च पर्वतीय प्रदेशों में रहते हैं। काश्मीर में जो तीन वस्तुएँ मिलती हैं वह स्वर्ग में भी दुर्लभ हैं। कल्हण कवि कहता है--

विद्या वेश्मानि तुङ्गानि।
कुङ्कुमं सहिमं पयः॥
द्राक्षेति यत्र सामान्यम्।
अस्ति, त्रिदिवदुर्लभम्॥

विद्या (नाना विद्याएँ), ऊँचे ऊँचे गृह, बर्फ मिश्रित जल, द्राक्षा (अंगूरादि) और केशर ये वस्तुएँ स्वर्ग में भी दुर्लभ हैं। गोनन्द राजा से लेकर कल्हण कवि के काल तक (११४२ ई० १०७० शाके) बावन राजे होगये थे---आज काश्मीर में कवि कल्हण की कही हुई सब बातें मिलती हैं किन्तु विद्या का केन्द्र नहीं है वह काश्मीर की विद्या आज हस्तलिखित पत्रों में भले ही बची हो साक्षात् कुछ भी देखने में नहीं आती। क्योंकि ९० प्रतिशत लोकसंख्या यवन हैं, १० प्रतिशत हिन्दू हैं, उनमें भी ब्राह्मणों की संख्या अति न्यून, उनमें भी पंडित कम, पंडितों में भी विद्वान् गिनती के योग्य, वे भी आधुनिक। उस कालरूपी भगवान् को नमस्कार जिसकी कृपा से यह परिवर्तन हुआ। गनीमत यही है कि यहाँ हिन्दू राज्य है।



काश्मीर की वर्त्तमान परिस्थिति

[२]

जो लोग देश की सी शहरों की शोभा देखने की इच्छा से यहाँ आयेंगे वे निराश होंगे। काश्मीर तो प्रकृतिदेवी का घर है जो पुरुष प्रकृतिदेवी का साक्षात् स्वरूप देखना चाहे--और सब स्वरूपों को एक ही स्थान में देखना चाहे उसके लिए काश्मीर एक आनन्द की वस्तु है। स्वर्गीय श्रीधर पाठक जी ने अपनी काश्मीर सुषमा में ठीक ही कहा है कि--

"अथवा विमल बटोर, विश्व की निखिल निकाई।
गुप्त राखि बे काज, सुदृढ़ सन्दूक बनाई॥
कै यह जादू भरी, बिश्व बाजीगर थैली।
खेलत में खुली परी, शैल के सिर पर थैली॥"

यदि यहाँ की सब आबादी हिन्दुओं की होती तो काश्मीर निवासियों का रहन-सहन और ही प्रकार का होता, किन्तु अपने ही जब पराये हो गये हैं और उन्हीं की संख्या प्रतिशत ६० है तब परिस्थिति का अन्य रूप में होना आश्चर्यजनक नहीं है। महाराजा रणवीरसिंह ने पंडितों से प्रायश्चित्तादर्श नामक एक सुन्दर ग्रन्थ बनवा कर इस प्रश्न का निपटारा करना चाहा था पर कतिपय अदूरदर्शियों के कारण जमाना पलटा न खा सका। हम एक ग्राम में द्राक्षाफल तथा मधु लाने गये। हमने उस मुसलमान कृषक से पूछा कि तुम्हारा क्या नाम है, उसने कहा रसूल-बट्ट (भट्ट)। हमने कहा तुम तो हिन्दू ब्राह्मण हो। उसने काश्मीरी भाषा में कहा और बड़ी करुणायुक्त भाषा में कहा 'हाँ जनाब बुजुर्ग तो हिन्दू ही थे, क्या किया जाय' महाराजा रणवीरसिंह के जमाने में ये लोग हिन्दू बनने के लिये तैयार थे किन्तु अदूरदर्शी पण्डितों की अदूरदर्शिता का फल विपरीत हुआ। पण्डितों के एक दल ने प्रायश्चित्त विधि बनाई तो दूसरे दल ने विरोध किया। अब तो जमाना बदल गया, परिस्थिति बदल गई अब तो यह परिवर्तन ब्रिटिश राज्य में भले ही सम्भव हो किन्तु हिन्दू राज्य में इनका पुनरुद्धार असम्भव है। राजतरङ्गिणी में जिक्र आता है कि एक यवन राजा ने जब इन भट्टों पर अत्याचार प्रारम्भ किया तब इन भट्टों ने—

"न भट्टोऽहं न भट्टोऽहं इत्युचुर्भट्टलुण्ठने"

मैं भट्ट नहीं हूँ, मैं भट्ट नहीं हूं ऐसा कह कर अपना धर्म छोड़ बैठे। इनके बालक कैसे सुन्दर, डील-डौल, सकल-सूरत, आकृति-विकृति वही हिन्दुओं की हाव-भाव ये ही हमारे किन्तु किया क्या जाय—

यहाँ प्रत्येक घर उद्योग-मन्दिर है। सब लोग उद्योगशाली हैं किन्तु बहु पत्यता (बहुत सन्तान वाला होना) इनको मारे डालती है। एक ग्राम में दो घर हुए तो दस-दस बीस-बीस छोटे-छोटे बालक देखेंगे। राज्य ने अब विवाह की मर्यादा पुरुष के लिये १८ वर्ष और स्त्री के लिये १४ वर्ष कर दी है

इसलिये अब स्थिति सुधरेगी। काश्मीर की विभूति का आनन्द अब परदेशी लूट रहे हैं इसलिये काश्मीरी लोगों की आय बढ़ने पर भी पहले की-सी सुख समृद्धि नहीं रही। लोगों के भाव और बाज़ारी भावों ने एकदम पलटा खाया है।

यहाँ राज्य की ओर से हिन्दी का प्रचार हो, हिन्दी 'कोर्ट लैंग्वेज' बनाई जाय, संस्कृत विद्या का पुनरुद्धार किया जाय, तो यहाँ की सभ्यता में बहुत परिवर्त्तन हो। यहाँ का वेश-भूषा, रहन-सहन प्रशंसनीय नहीं है। भाषा तो एकदम सबधान मेल की। यहाँ की सभ्यता तातारी-तुर्की, पठानी, मुग़ली और आर्य सभ्यता की रली-मिलो खिचड़ी है। काश्मीरी भाषा की लिपी तो कोई है ही नहीं, वही उलटी सुलटी फ़ारसी। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के अधिकारियों का एक डेपूटेशन महाराजा साहब की सेवा में आकर हिन्दी की बात कहे तो बड़ा लाभ हो। हिन्दुओं के सुन्दर मेले देखने से प्रतीत होने लगता है कि यह गन्धर्वों का देश है। गौरकाय, रेशम वस्त्रधारी हिन्दू ललनाओं का सौन्दर्य देखते ही बनता है। ऐसा प्रतीत होता है कि देवियाँ आकाश से उतरी हैं।

मुसलमानों के मेलों को देखकर प्रतीत होता है कि हम किसी प्रदेश में आये हैं। किसी जाति की सभ्यता नष्ट कर डालो, भाषा वेश, भाव बदल डालो फिर रह ही क्या जाता है। यहाँ गोवध नहीं होता इस लिये कोई झगड़ा नहीं है–किन्तु वैसे मुसलमान कट्टर हैं। परमात्मा की दया कि "मुल्ला-इज़्म" यहाँ नहीं घुसने पाया। परमात्मा की दया है कि राज्य में यत्र-तत्र सुन्दर-सुन्दर हिन्दुओं के तीर्थ, मन्दिर सुरक्षित हैं, परमात्मा की दया है कि हिन्दू राज्य कायम है। अंग्रेजी सभ्यता जोरों से घुस रही है इसका भी प्रभाव पड़ रहा है और प्रतिवर्ष सहस्रों विदेशी-परदेशी यहाँ आकर अपनी सभ्यता की छाप छोड़कर चले जा रहे हैं। इसका भी प्रभाव काश्मीर पर पड़े बिना नहीं रह सकता। मैं तो यही कहूंगा कि वर्त्तमान हिन्दू राज्य अपनी स्थिति सम्भाले रहे तो भी बड़ी बात है। अपना शिल्प, अपना व्यापार इनकी भी रक्षा करता रहे तो भी सौभाग्य, नहीं तो मैं देख रहा हूँ, जापान और इटालियन रेशम, काश्मीरी रेशम को दबा रहा है। अंग्रेजी वस्त्र काश्मीरी वस्त्रों से प्रतिद्वन्द्विता की ठान रहा है।

काश्मीर आकर ही मैं काश्मीर के इतिहास को समझ सका हूँ। यहाँ के वेषा-तन्तु (ताने-बाने) का साम्राज्य, यहाँ की शिल्प, यहाँ की नौका यात्रा, नौकोत्सव, यह सब साक्षात देखने से सम्बन्ध रखता है। ऐतिहासिक स्थल स्वयं देखे बिना अपना मर्म उद्घाटन नहीं करते। मध्य ऐशिया से तुर्क लोग कैसे आये, मुग़ल यहाँ किस मार्ग से घुसे यह बात उन गगनचुम्बी पर्वतमालाओं की उच्चतम घाटियों पर खड़े होकर देखने से ज्ञात होती है।

काश्मीर का इतिहास गृह-कलह से भरा है। काश्मीर देखने के लिए चतुर्मुख ब्रह्मा बनने की आवश्यकता है। एक ही समय में चारों ओर का नयन-सुभग दृश्य जो देख सके वह बड़भागी है। यहाँ आकर सबसे पहले अमरनाथ की यात्रा समाप्त करनी चाहिये, सबसे कठिन यात्रा यही है, फिर दूसरी यात्रायें सहज हैं। जो यात्री सबसे पूर्व पर्वतप्रदेश की यात्रा को समाप्त करके फिर समतल प्रदेश की यात्रा करेगा वह सुखी रहेगा। जलयात्रा सबसे सुगम और सुखकर है। जलयात्रा, स्थलयात्रा,

पर्वतयात्रा इन तीन प्रकारों से काश्मीर यात्रा समाप्त की जाती है। सबसे अच्छा समय अगस्त और सितम्बर का है। यह ऋतु यहाँ की गर्मी की ऋतु समझी जाती है। काश्मीर में केवल सत्ताईस इंच पानी बरसता है किन्तु ऊपर पर्वत की वर्षा से काश्मीर में भयंकर बाढ़ आया करती है, दो वर्ष से तो बाढ़ ने बड़ी हानि पहुँचाई है--काश्मीर देश वनस्पतियों का आगार है। कुष्ट (कुट) नामक प्रसिद्ध औषधि यहीं होती है जो ४०० रु० मन तक बिकती है—सारांश किसी दृष्टि से देखिये लोगों की वेश-भूषा और धर्म की ओर ध्यान न दिया जाय, केवल प्रकृतिं की लीला देखी जाय तो काश्मीर सचमुच इस लोक का स्वर्ग है—स्वर्गीय श्रीधर पाठक के शब्दों में—

प्रकृति यहाँ एकान्त बैठि, निज रूप सँवारति।
पल पल पलटति भेस, छनिद छबि छिनछिन धारति॥

विमल-अम्बु-सर-मुकुरन महँ मुख-बिम्ब निहारति।
अपनी छवि पै मोहि आपही, तन मन वारति॥

सजति सजावति सरसति हरसति, दरसति प्यारी।
बहुरि सराहत भाग पाय, सुठि चित्तर सारी॥
विहरति विविध विलास भरी, जीवन के मद्सनी।
ललकति, विलकति, पुलकति, निरकति थिरकति बनी ठनी॥

मधुर मंजु छवि पुंज छटा, छिरकति बन कुञ्जन।
चितवति, रिझवति, हँसति, डसति मुस्काति हरति मन॥

हमने साक्षात् इसका अनुभव किया। एक ही फेरे में समस्त काश्मीर का आनन्द लूटना कठिन कार्य है।

काश्मीर की वर्त्तमान परिस्थिति

(३)

काश्मीर का इतिहास क्या है, गृह-कलह का सुन्दर नमूना है। किसी देश के इतिहास में भी शीघ्र शीघ्र इतने परिवर्तन नहीं दिखाई पड़ेंगे। जब हिन्दू राज्य परम्परा रही तब भी गृह-कलह तथा परस्पर जिघांसा रही। जब यवन काल आया तब पहले-पहले काश्मीरियों ने तीर और कमठा और पत्थरों के ढेरों से यवनों का ढेर तो किया, किन्तु मन्त्रीमण्डल लोभ वश अनर्थ कर बैठता था—इसलिए काश्मीर सुलभता से यवनों के हाथ में गया। जब यवनों की प्रबलता हुई और यहाँ के राजाओं ने यवन दीक्षा ली तब हिन्दूधर्म तथा यवनधर्म दोनों साथ चलते रहे, एक ओर अरब के पण्डित का कुरान-पाठ और

दूसरी ओर कर्नाटक से लाए हुए वेदपाठियों का वेदपाठ, यज्ञ, हवन इत्यादि चलता रहा। राजाओं के कारण प्रजा ने भी यवनधर्मदीक्षा ली। यह इतिहास बड़ा मनोरञ्जक एवं रोमाञ्चकारी है। इसका यह प्रभाव हो गया कि काश्मीरी ब्राह्मणों ने भय से यवनधर्म की दीक्षा ली, किसी ने लोभ से ली--इसका अवशेष अब भी 'मुहम्मद पण्डित' कादिरबट्ट (भट्ट) आदि नाम आज भी देखे जाते हैं और ये लोग बतला रहे हैं कि छः सौ वर्ष पूर्व किस प्रकार वे जबरदस्ती यवन हो गये।

पंजाब में सिक्खों की प्रबलता होकर इधर उनका ध्यान न जाता तो हिन्दुओं की इतनी संख्या भी शेष रहती या न रहती यह एक प्रश्न है। सत्य बात यह है कि काश्मीर की प्रशंसा उधर मध्य एशिया और तुर्किस्तान तक पहुँच चुकी थी और यह प्रशंसा ही यवनों को यहां लायी और फिर यवन भारत में घुसे। पहिले पहले यह बात एक प्रकार से अच्छी ही रही कि ये लोग आते और लूटपीट कर चले जाते थे। चिरस्थायी तब हुए जबकि ये लोग भारत में दूर-दूर धावे मारकर सम्पत्ति लूट लाते। काश्मीर में प्राकृतिक श्री, फलफूल समृद्धि, शालि आदि तो थे किन्तु धन कुछ नहीं था। इसलिये यवनों का ध्यान भारत के दूसरे भागों की ओर गया। सिक्खों ने प्रथम-प्रथम इनका आक्रमण रोका। उत्तर में सिक्ख, दक्षिण में मरहठे, इन्होंने यवनों का बल घटाया और ऐसा आतङ्क जमाया कि फिर यवनों ने इधर देखना भी छोड़ दिया।

यह सौभाग्य की बात है कि काश्मीर में हिन्दू राज्य है। बाहर के यवन इस राज्य के नहीं हैं। यहीं के हिन्दू मुसलमान हो गये थे इसलिए परिवर्तित हिन्दू तथा हिन्दुओं में अब भी भाईचारे का वर्त्ताव चला जाता है। परस्पर कोई झगड़ा नहीं है। किन्तु कारीगरी सब मुसलमानों के हाथ में है। हिन्दू व्यापारी धनिक हैं सही किन्तु धन के सिवाय खेती, बाड़ी, मजदूरी, शिल्प सब कुछ मुसलमानों के हाथ में है। हिन्दुओं नें कारीगरी को क्यों छोड दिया, आश्चर्य है। काश्मीरी पण्डित उसका बहिष्कार कर देते हैं, उसको निकृष्ट समझते हैं जो ब्राह्मण कारीगरी का काम करता है। वैसे दस रुपये की नौकरी पर मरते हैं किन्तु दो रुपये रोज घर बैठे आयें ऐसा शिल्प नहीं सीखते। संस्कृत-विद्या नाम मात्र शेष है, काश्मीरी ब्राह्मणों के लड़के अंग्रेजी की ओर चल पड़े हैं। मुसलमान शिक्षा की ओर ध्यान नहीं देते इसलिए हिन्दू ही अधिक शिक्षित हैं।

काश्मीर राज्य को ७० लाख की आमदनी जंगलात से, ४० लाख की रेवेन्यू से और लगभग एक करोड़ की आमदनी अन्य रीति से है। ऐसा सुन्दर देश किन्तु लोगों का रहन-सहन गन्दा रहता है। प्राचीन अवशेष जो भूगर्भ से निकल रहे हैं वह सबके सब प्रायः बौद्धों के अवशेष हैं। अब तो समस्त काश्मीर में ढूँढने से भी दो चार बौद्ध मिलें तो मिलें। उत्तर में—तिब्बत में बौद्ध मिलेंगे, पश्चिम में मुसलमान पठानों की अधिकता है, पूर्व और दक्षिण में पंजाब है, वहां भी यवनों की संख्या अधिक है। इस प्रकार चहुँ ओर की परिस्थिति में काश्मीर में हिन्दूराज्य एक ईश्वरीय कृपा है। यह प्रदेश प्रकृति-रमणीय होने से अंग्रेजों को भी अत्यन्त प्रिय है। और प्रतिवर्ष मई से सितम्बर तक दो सहस्र गौरांगदेव तथा देवियां "गुलमर्ग" (पुष्पस्थान) में विराजते हैं। काश्मीर में गुलमर्ग को एक छोटी सी अंग्रेज-बस्ती ही समझिये। जाड़ों में भी चार-पाँच सौ अंग्रेज पड़े ही रहते हैं।

काश्मीर में बाहर के लोग जमीन नहीं खरीद सकते और न प्रजा ही बन सकते हैं। महाराज गुलाबसिंह जी के जमाने में जिनको हक मिल चुका, बस मिल चुका—अब तो पट्टे पर जमीन मिलती है और बीस वर्ष पश्चात् सब सम्पत्ति राज्य की हो जाती है। अंग्रेजों ने अपने बंगले बना लिये हैं, देवदारु से परिवृत इस पुष्पस्थान में वनश्री भी पूर्णरूप से रहती है, ऊपर बर्फ, बीच में देवदारु वन, इसके बीच साफ़ मैदान, नीचे काश्मीर के समतल प्रदेश के दृश्य, एक बहार रहती है।

चारों ओर से पर्वतमाला, फिर उनमें सैकड़ों स्रोतों की बहार एक अद्भुत चित्र है। काश्मीर में बाढ़ भी बढ़िया आती है। चार दिन वर्षा हुई कि लुड़का सब जल श्रीनगर की ओर, 'वितस्ता' घोर रूप धारण कर लेती है। रास्ते बन्द हो जाते हैं, मार्ग टूट जाते हैं, पहाड़ गिरने लग जाते हैं, दल, झील भर जाते हैं, नाले उमड़ जाते हैं, आना-जाना बन्द हो जाता है। सर्वत्र पानी पानी, और पानी ही हो जाता है। फलों में बादाम, अखरोट, आलू बुखारा, नासपाती, सेब, बग्गू गोशा, अंगूर, अनार आदि की बहार है, शाकों में प्राःय देश के सभी शाक मिलते हैं। शाल, दुशाला, पश्मीना, पट्टू, केशर, काशी सिल्क, जापान सिल्क (बोसनी) की साड़ियां के यहां ठट्ठ के ठट्ठ लगे हुए हैं। सुई के काम में काश्मीरी मुसलमान कारीगर अत्यन्त निपुण हैं।

जम्मू तथा श्रीनगर के देवमन्दिर देखने योग्य हैं। छःसौ वर्ष की पुरानी एक भव्य मसजिद भी है। सनातनधर्म सभा भी जोर पर है, एक संस्कृत साहित्यसमिति है वह कभी कभी जगती है। जम्मू तथा श्रीनगर में संस्कृत की दो एक पाठशालाएं हैं। राज्य पुस्तकालय अच्छा है, अंग्रेजी साहित्य पर्याप्त है। संस्कृत के ग्रन्थ इतने नहीं, हस्तलिखित ग्रन्थ बहुत थोड़े हैं। म्युजियम (प्रदर्शिनी) देखने से काश्मीर के पुराने वैभव का पता चलता है। राजभवन नये और पुराने दोनों ढंग के हैं। यूँ कहिये अब काश्मीर में नवयुग का प्रवश हो रहा है। पुराने ढर्रों के लोगों में कुछ व्याकरण, कुछ वेदान्त और कुछ ज्योतिष बचा है। यूनानी ज्योतिष भी साँस ले रही है। आधुनिक पंजाब के अनेक शास्त्री भी देखने को मिल रहे हैं। पुस्तकालय के साथ एक "रिसर्च डिपार्टमैंट" है जिसमें ५–६ पण्डित (संस्कृत तथा अंग्रेज़ी के) काम कर रहे हैं।

इस देश में क्षयरोग-पीड़ित जन भी बहुत आते हैं। बटोक में लगभग १२६ के क्षयरोगी टेण्ट लगाये पड़े हैं। इस स्थान पर एक असिस्टेन्ट सर्जन भी रहता है। पहलगाँव में भी लोग टेण्ट लगा कर उनमें निवास करते हैं और स्वास्थ्य सुधारते हैं। लारी का मार्ग, तार, टेलीफोन आदि के कारण काश्मीर यात्रा सुलभ हो गई है। यहाँ दलों (झीलों) की लोग प्रशंसा करते हैं किन्तु मेवाड़ के कृत्रिम झील (सागर) किसी दशा में भी सौंदर्य में काश्मीर के दलों से कम नहीं हैं। काश्मीर का समतल प्रदेश लगभग ५००० से ५५०० फुट तक ऊँचा है, चारों ओर पर्वतों की ऊँचाई ६०००फुट से धीरे-धीरे १४००० तक चली गई है—इसलिये समतल प्रदेश, पर्वत, दुर्ग, झील, नदी, नाले, वन आदि सभी दृश्य एक ही काश्मीर में एकसाथ देख लीजिये।

(आर्यमित्र, १६३०)

नेपाल का आन्दोलन

सन् ४२ में जेल जाने के पूर्व हमको कतिपय नेपाली मिले थे पर उन्होंने हमको कहा था कि गोरखपुर के रहने वाले हैं। यह हमको तब पता चला जब कि १६४४ के प्रारम्भ में सी० आई० डी० के अफसरों ने हमको तंग किया—

तंग करने का कारण यह था कि उपर्युक्त लोगों ने हमको नेपाल की कतिपय रोमांचकारिणी घटनाएँ सुनाईं थीं। हमने उनको अविकल रूप में 'अर्जुन' 'हिन्दुस्थान' आदि पत्रों में प्रकाशनार्थ भेज दिया था। उस लेख को प्रायः सभी प्रसिद्ध समाचार पत्रों ने उद्धृत किया। नेपाल गवर्नमेण्ट ने भारत सरकार को लिखा, सम्भवतः मुझ पर कोई अभियोग नहीं चला सकती थी। जेल में भी मुझसे कुछ भी पूछा नहीं गया। जब जेल से छूट कर आया तो सम्भवतः १६४४ के प्रारम्भ में सी० आई० डी० का एक बड़ा अफसर हरद्वार आया और मायापुर थाने में मुझे बुला भेजा। मैं गया तो मुझसे पूछा गया कि "वह नेपाल सम्बन्धी लेख किस आधार पर लिखा गया था" मैंने कहा कि गोरखपुर बस्ती के कुछ लोग मिले थे—सम्भवतः उनमें दो-एक साधु भी थे। उन्होंने मुझसे जैसा कहा मैंने प्रकाशनार्थ भेज दिया था—

प्रश्न—क्या आप उन व्यक्तियों का पता बता सकते हैं।

उत्तर—नहीं, मैंने उनसे पूछा भी नहीं।

प्रश्न—हमको सब पता लग गया है।

उत्तर—पता लगा है तो मुझसे क्यों पूछ रहे हैं।

प्रश्न—कृपया अब तो आप जाइये और जरा अपने कागज पत्र देख कर पता चलाइये कि कौन थे, कहाँ के थे, क्या २ नाम थे।

उत्तर—जेल जाते समय मैंने सब कागज पत्र जलाये थे, अब तो मेरे पास कोई आधार भी नहीं कि जिससे कुछ बतला सकूँ।

प्रश्न—बड़ी कृपा होगी हमारा सब काम अटका पड़ा है, पुलिस का काम ही है कि वह अनुसन्धान करे। वैसे आपके ऊपर कोई मामला नहीं। केवल आप उन लोगों का नाम बतलाइये, बस आपकी छुट्टी।

बीच में ही सहारनपुर के इन्स्पेक्टर बोल उठे "अजी इनको सब पता है पर ये बतलायेंगे नहीं" "आप तो पण्डित हैं, शास्त्री हैं, आशा है आप सत्य-सत्य-सत्य ही कहेंगे और कुछ छिपायेंगे नहीं"—

इस पर मुझे कुछ क्रोध आया और मैंने कहा "इन्स्पेक्टर साहब मैं पुलिस से सत्य और धर्म का उपदेश सुनने नहीं आया, आप जो कुछ करना है कर लीजिये"—

इन्स्पेक्टर—अजी आप तो नाराज हो गये। मैं इस लिये कह रहा था कि वह घटना असत्य है। पता चल जावे तो उन व्यक्तियों को दण्ड दिलाया जावे।

उ०—यदि घटना असत्य है तो नेपाल सरकार दो वर्ष तक क्यों चुप रही। उसको उन घटनाओं का खण्डन करना चाहिये था। फिर जब लेख छपे थे तभी जेल में मुझसे पूछना चाहिये था। अब कागज पत्र भी मैंने जला दिये। उस घटना को दो वर्ष भी होगये, अब मुझे कुछ भी याद नहीं—

सी० आई० डी० ऑफिसर—अच्छा आपकी इच्छा, मत बतलाइये। अमुक-अमुक शक्लवाला पहले पण्डों में आया था, वहाँ कई दिन ठहरा, हरिद्वार में भी ठहरा, ऐसी शक्ल का कोई व्यक्ति आपको याद आ रहा है।

उत्तर—नहीं,

ऑफिसर बोला आपको तीन दिन दिये जाते हैं। फिर अमुक तारीख को मिलिये। मैं उस तारीख को गया, फिर उसी प्रकार की चर्चा छिड़ी। मैंने स्पष्ट कह दिया कि कुछ पता नहीं चलता।

ऑफिसर ने मुझ से कहा कि अच्छा आप जो कुछ जानते हैं लिख दीजिए। उसने मेरे बयान भी लिख लिये और मुझसे लिखवा भी लिया और छुट्टी हुई।

चलते समय मुझसे बोला आप नाराज न होंगे। हमारा तो यही काम है। मैंने कहा धन्यवाद और मैं अपने स्थान को लौट आया—ये लोग मेरा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते थे। अधिक से अधिक मुझ पर "प्रिन्सेस प्रोटेक्शन एक्ट" लगा सकते थे जिसमें मुझे केवल छह मास का कारावास मिलता। मुझे नेपाल ले जाकर राज्य के सुपुर्द भी नहीं कर सकते थे क्योंकि मैं नेपाल-राज्य का निवासी नहीं था—

वह घटना इस प्रकार थी

नेपाल में कुछ नवयुवकों ने नेपाल-राज्य के विरुद्ध आन्दोलन उठाया था। कुछ पर्चे भी बाँटे थे। उनमें हमारा एक भूतपूर्व छात्र शुक्रराज-शास्त्री भी था—इस छात्र ने पहले भी कई बार वहाँ आन्दोलन उठाया था। आन्दोलन मुख्य सरकार के विरुद्ध तो नहीं था किन्तु अधिकारियों के विरुद्ध था। ये सब नवयुवक पकड़े गये, जेल में बन्द किये गये। शुक्रराज आदि चार को फाँसी हुई।

नेपाल में नगर के चारों दिशाओं में पेड़ पर उनको अलग अलग लटकाया गया था। उनकी छातियों पर लिख कर लटकाया गया था कि इन इन कारणों से इनको फाँसी लगाई गई है इत्यादि। अब्राह्मण लड़कों की यह दशा हुई। इनमें दो ब्राह्मण नवयुवक थे उनको सिर मुड़ा कर नेपाल राज्य से बाहर किया गया। यदि मैं नेपाल राज्य का निवासी होता तो भी ब्राह्मण होने के नाते मैं तो साफ छूट जाता क्योंकि ब्राह्मण था। ब्राह्मण अवध्य होता है—(मनु)

नेपाल के विषय में मैंने पहिले भी दो एक लेख लिखे थे किन्तु इस घटना वाले लेख में मैं नेपाल सरकार की दृष्टि में आ गया। नेपाल देखने की कई वार इच्छा हुई पर इस घटना के पश्चात् मैंने नेपाल जाने का विचार छोड़ दिया। चोरी-छुप्पी जा सकता था किन्तु वहाँ जाकर छुप नहीं सकता था क्योंकि नेपालनिवासी (पूर्व देहरादून के परिचित) बहुत से मुझे जानते थे।

टिहरी रवाईं काण्ड

इसी प्रकार टिहरी में एक बार रवाईं काण्ड हुआ था। उस समय पं० चक्रधर जुइयाल दीवान थे। मैंने दीवान के विरुद्ध लिखा था। दीवान ने 'मानहानि' का दावा करने की धमकी दी। पर गोस्वामी गणेशदत्त को टिहरी नरेश बहुत मानते थे। उनके बीच में पड़ने से कुछ नहीं हुआ।

इसी प्रकार "रघुनन्दन बहुगुणा" को हृषीकेश में टिहरी राज्य की सीमा के बाहर पकड़ कर टिहरी जेल में बन्द करने के विरुद्ध हमने बहुत आन्दोलन किया था। श्री रघुनन्दन बहुगुणा फिर छूट गये थे।

स्व० श्रीदेवसुमन

स्वर्गीय श्रीदेवसुमन के विषय में भी हमने बहुत आन्दोलन किया था। स्टेट के साथ पत्र-व्यवहार भी हुआ था। टिहरी स्टेट देहरादून के साथ लगी है इस लिये हमको इस स्टेट के विषय में बराबर २० वर्षों से किसी न किसी रूप में आन्दोलन रखना ही पड़ा। जब हम १६३१ में गढ़वाल गये थे तब श्री पं० चक्रधर दीवान का सन्देश आया था कि स्टेट में आकर रवाईं काण्ड की स्वयं जाँच करो और फिर अपने लेखों का खण्डन करो। मित्रों ने हमको जाने से रोका। उसके पश्चात् पं० चक्रधर दो वार हमसे मिले।

यही शिकायत करते रहे कि आपने हमारे विरुद्ध व्यर्थ का आन्दोलन उठाया। रवाईं के लोगों ने मुझसे कहा था कि यदि आपके विरुद्ध अभियोग चलेगा तो हम स्पष्ट रूप में गवाह बन कर आपकी पुष्टि करेंगे। औरों के लिये तो हम आने नहीं लगे। मैं दीवान के विरुद्ध था, चक्रधर के नहीं। कोट महादेव (शितोनस्यूं–गढ़वाल) कान्फरन्स में भी हम गये थे। यह कोटमहादेव पं० चक्रधर जी के ग्राम के पास ही है। इस कानफरन्स में रवाईं काण्ड के अत्याचारों के विरुद्ध प्रस्ताव पास हुआ था। श्री हरिगोविन्द पन्त कानफरन्स के सभापति थे। बड़ी जोर की कानफरन्स हुई थी! छह सहस्र गढ़वाली एकत्रित हुए थे।

हिन्दू-संसार

देहली के "हिन्दूसंसार" ने "एक दाक्षिणात्य" के कतिपय लेख प्रकाशित किये थे। इसमें चक्रधर दीवान के विरुद्ध लिखा हुआ था। उसमें यह भी लिखा था कि पं० चक्रधर "पिय्यकड़" हैं। इन्होंने श्री रावत बद्रीनाथ को कुवाच्य कहे इत्यादि। श्री रावत साहब भी देहरादून में साक्षी के रूप में आये थे। अभियोग में श्री पं० झावरमल मुख्य सम्पादक तथा पं० बाबूराम शर्मा सम्पादक को एक एक वर्ष की सादी कैद हुई।

पं० चक्रधर चाहते थे कि लेखक का नाम प्रकट किया जाय तो वे सम्पादकों को छोड़ देंगे। लेखक का नाम बतलाना सम्पादकीय शिष्टाचार के विरुद्ध था इसलिये सम्पादकों ने नाम नहीं बतलाये। पं० चक्रधर को सन्देह था कि ये लेख मैंने लिखे हैं। यदि सम्पादक नाम बतला देते तो अभियोग लेखक पर चलता। वस्तुतः ये लेख मेरे नहीं थे। मेरे एक मित्र ने लिखे थे। उनका नाम प्रकट करना उचित नहीं है। पं० झावरमल शेखावाटी (राजपूताना) राज्य के थे। मानहानि की धारा का वहाँ प्रवेश नहीं था, इस लिये वे जेल नहीं गये। पं० बाबूराम शर्मा अपना दण्ड भुगत आये।



हम सार्वदेशिक सभा के सदस्य हुए

(१६४७) मोरिशस द्वीप की चिट्ठी

आर्य प्रतिनिधि सभा मोरिशस

६-६-४६.

पत्र सं० १३५

श्रीयुत पूज्य शास्त्री जी

सादर नमस्ते ।

विदित हो कि गत ता० १५-३-४६ के पत्र द्वारा आपको सूचित किया था कि श्री आर्य प्रतिनिधि सभा मोरिशस ने आपको अपना प्रतिनिधि चुना है, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा में प्रतिनिधित्व के लिए।............

—माखनलाल मोहित

मन्त्री सभा

जब प्रथम पत्र आया था तब मैंने सार्वदेशिक सभा के मन्त्री को पूछा कि क्या मैं मोरिशस की ओर से प्रतिनिधि चुना गया हूँ ? क्या मोरिशस से आपके पास कोई सूचना आई है ?

कार्यालय से कोई उत्तर नहीं आया ।

जब यह दूसरा पत्र आया तब मैंने फार्म पर हस्ताक्षर करके सार्वदेशिक कार्यालय में भेजा तब १४-२-४७ का पत्र मेरे पास आया ।

श्रीमन् नमस्ते ।

इस सभा की अन्तरंग तिथि ६-२-४७ की बैठक में आपको आर्य प्रतिनिधि सभा मोरिशस की ओर से प्रतिनिधि स्वीकृत किया है । सूचनार्थ,

भवदीय

—गंगाप्रसाद उपाध्याय, मन्त्री

(एक ही वर्ष मेम्बर रहे पर किसी अधिवेशन में गये नहीं, धर्म सभा में भी नहीं गये)

श्री पं० रामदत्त शुक्ल जी का पत्र

(२३-१-४७) लखनऊ से

मान्यवर शास्त्रीजी महाराज प्रणाम,

गुरुकुल डौरली से भेजा हुआ आपका २८-११-४६ का कार्ड यथासमय मिला था किन्तु इस आशा से कि ३०-१२-४६ को विद्यासभा के अधिवेशन के अवसर पर महाविद्यालय में ही पत्रोत्तर रूप में पहुँच जाऊँगा, उत्तर न दिया किन्तु महाविद्यालय न पहुँच सका। उत्तर भी अभीतक न देसका। विलम्ब के लिए क्षमा करें।

आशा है कि यजुर्वेदालोचन[1] अथवा याज्ञवल्क्य-चरित अब तैयार होगया होगा। यदि होगया हो तो आगे प्रकाशित करने की व्यवस्था की जाय। जितनी शीघ्र छप जाय अच्छा है।

प्रथम[2] अतिसार फिर चोट के कारण आप व्याधिग्रस्त हुए और विशेष कष्ट में रहे यह जानकर खेद हुआ, परन्तु इसके पूर्व यदि इस सम्बन्ध में समाचार देते तो हम लोग आपके कृपा पात्र हो सकते थे।

यद्यपि वार्द्धक्य के कारण थोड़ी सी असावधानी से शरीरस्थ रोगों का प्रकोप स्वाभाविक है, तथापि मानसिक स्वास्थ्य का प्रभाव भी शरीर को स्वस्थ बनाये रखने में सहायक होता है। चिकित्सकों की सम्मति तो ठीक ही है कि आपको अधिक से अधिक विश्राम से रहना स्वास्थ्यकर होगा। फिर भी शरीरमात्र को परिश्रम से बचाये रखने पर भी मानसिक श्रम न करना आप जैसे व्यक्ति के लिए तभी संभव हो सकता है कि जब प्रापञ्चिक कार्यों से उपरति हो सके। क्योंकि संपूर्ण आयु पर्यन्त जिन क्षेत्रों की उथल-पुथल में सक्रिय और तन्मयता के साथ सहयोग प्रदान किया गया है, उनके सम्बन्ध में सहसा विरति साधारणतया संभव नहीं है। हां विशेष मनोबल से ऐसा भी हो सकता है।

किन्हीं का ऐसा भी सिद्धांत है कि यावज्जीवन कुछ न कुछ करते रहना चाहिये। फिर चाहे स्वास्थ्य बने या बिगड़े। ऐसे व्यक्ति जनहित अथवा स्वार्थसिद्धि को कोल्हू मानकर अपने को तेली का बैल मान लेते हैं और सदा चलते रहना ही परम पुरुषार्थ समझ कर सतत लगे रहना ही अपने अस्तित्व का औचित्य समझते हैं। ऐसे लोगों के लिए विश्राम का कोई न अर्थ है और न प्रयोजन।

१—यह ग्रन्थ श्री श्रीधर अण्णा शास्त्री वारे नासिककर ने मरहटी में लिखा है। शुक्ल जी की प्रेरणा से ही हमने इस ग्रन्थ का भावानुवाद किया है। फरवरी में श्री शुक्ल जी के पास भेज दिया था।

२—इस वर्ष (१९४६ जुलाई) हमको भयङ्कर अतिसार रहा। फिर अक्टूबर के अन्त में वायु का झटका लगा, चोट लगी, बड़े परेशान रहे। फिर श्री विष्णुदत्तवैद्य तथा श्री हरिशंकरवैद्य (मेरठ) ने उपचार किया। फिर हमने स्वास्थ्य-निमित्त सिन्ध की यात्रा की और बहुत लाभ हुआ।

—नरदेवशास्त्री

दूसरी ओर जो महानुभाव गति और स्थिति विज्ञान के तत्व को हृदयङ्गम करते हैं, वे गति के स्वाद को स्थिति में और स्थिति के स्वाद को गति में यथेच्छा अनुभव करते हैं। किन्तु यह सब तो आप सदृश मर्मज्ञ मनीषी महानुभाव के प्रति कहना धृष्टतामात्र होगा। हां केवल आपकी ही विभूति को स्मरण करा देना कदाचित् क्षम्य होगा।

गतिशील कार्यों में अपने जीवन के ६० से भी अधिक वर्ष आपने जिस सफलता के साथ लगादिये हैं, उसके स्मरणमात्र से प्रत्येक सहृदय व्यक्ति का माथा ऊँचा हो सकता है। उस दिशा में यदि आप जैसे महानुभावों को आप्तकाम कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी। यह बात और है कि अबोध लोगों ने आपके कार्य की महत्ता को भली भांति न समझ कर उनका यथोचित समादर करने में अपने को अयोग्य सिद्ध किया हो। परन्तु इससे आपकी सेवाओं का महत्व और अनुकरणीय प्रभाव किसी प्रकार से कम नहीं हो सकता है। किसी अंग्रेज कवि के शब्दों में "दाई सोल वॉज लाइक ए स्टार दैट डेल्ट अपार्ट" की उक्ति आपके लिये शब्दशः चरितार्थ है।

संभव है कि जगन्नियन्ता का व्याधियों द्वारा यही संकेत हो कि आप अब आगे स्थितिप्रधान अनुष्ठान में अपने यशस्वी जीवन के परिपक्व भाग को लगावें। इसमें भी परमार्थ और स्वार्थ दोनों की समान रूप से सिद्धि संभव है। क्योंकि नाटक के चतुर अभिनायक के लिए एक कर्मठ नायक का पात्र उतना ही महत्व रखता है जितना कि न्यायाधीश का अथवा तपोधन मुनीश का। अस्तु—

शेष सब क्षेम है। सब लोग आप को याद करते हैं।

भवदीय

रामदत्त शुक्ल

मेरे जीवन में शायद ही ऐसा दूसरा सुन्दर उपदेशात्मक, व्यङ्गपूर्ण प्रेमभाव-भरित और जीवन को हरित करने वाला पत्र मिला हो।

—नरदेवशास्त्री

यह निम्नपत्र हमने महाविद्यालय के प्रधान, मन्त्री, उपमन्त्री, मुख्याधिष्ठाता के पास (३०-१-४७) भेजा था।

ओ३म् तत्सत्, जय हिन्द

महाविद्यालय ज्वालापुर, 'इस समय'
वनस्पति भवन, देहरादून
माघ शुक्ला ८, २००२।

श्री..

इस वर्ष महाविद्यालय सभा के अधिकारियों का वार्षिक निर्वाचन होगा। मैंने यह निर्णय किया है कि भविष्य में महाविद्यालय के किसी पद को ग्रहण न करूँगा। इसलिए आपको सूचित कर रहा

हूँ कि यदि निर्वाचन के अवसर पर कोई व्यक्ति मेरा नाम किसी पद के लिये प्रस्तुत करें तो आप उनको प्रस्तुत न करने देंवे। इसी उद्देश्य से आपके पास यह पत्र भेज रहा हूं। आप इस पत्र के आधार पर इस विषय में किसी को भी रोक सकते हैं।

मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, मेरी इच्छा भी नहीं, मेरी शक्ति भी नहीं, तात्पर्य यह है कि सर्वथा मैं असमर्थ हूँ। सम्भवतः उत्सवावसर पर महाविद्यालय में उपस्थित न रहूँगा। अब महाविद्यालय में मेरा रहना केवल विश्रामस्थान के रूप में होगा। कार्यक्षेत्र के रूप में नहीं।

ईश्वर की कृपा से महाविद्यालय की प्रतिदिन उन्नति हो, यही मेरी हार्दिक मंगलकामना है।

इस पत्र की प्रति प्रधान महाविद्यालय सभा, मंत्री महाविद्यालय सभा, उपमंत्री महाविद्यालय तथा मुख्याधिष्ठाता महविद्यालय को भेजी गई है।

नरदेवशास्त्री वेदतीर्थ

आचार्य महाविद्यालय ज्वालापुर।

हमने (२७-६-४६) के आर्यमित्र में "मैं सेवानिवृत्त होना चाहता हूँ" शीर्षक पत्र छपवाया था—उसको पढ़कर जहाँ तहाँ से लगभग सौ पत्र हमारे पास आये थे। उनमें से हमने एक ही पत्र सुरक्षित रख छोड़ा था, वह पत्र यह है—

अहमदाबाद, ६-७-४६

परमपूज्य श्री आचार्य नरदेव जी शास्त्री
वेदतीर्थ महाविद्यालय ज्वालापुर।

आदरपूर्वक प्रणाम,

परमपूज्य आचार्य जी, इस सेवक को आपके दर्शन श्री पं० सत्यव्रत जी (वर्तमान स्वामी सोमतीर्थ) की कृपा से ब्रह्मचर्य आश्रम अनासागर अजमेर में सन् १६१५ या १६ में हुए थे जिसको लगभग ३१ वर्ष हो गये। उस समय से आपके प्रति मेरी श्रद्धा बढ़ती ही गई। इसमें सन्देह नहीं कि मैंने आजतक आपकी सेवा में कोई पत्र न लिखा और न अधिक दर्शन ही किये। वर्षों में कभी अकस्मात् दर्शन हो जाते थे, परन्तु मैं आपका सदैव अनन्यभक्त रहा हूं। आज आपका लेख २७ जून को 'आर्यमित्र' में पढ़ा। आपका चित्र भी देखा, खूब देखा और गद्गद् हो गया। प्रेम के आँसू निकल पड़े। धन्य है गुरुदेव आपको परन्तु आर्यसमाज की इस समय जो गति है, वह आप जैसे सेवक को अलग देखकर क्या शान्ति धारण कर सकेगी। यह सेवक सन् १६१३ से आर्यसमाज की सेवा कर रहा है। ५८ वर्ष की आयु है। ३३ वर्ष सेवा करते समाप्त हो गये.........

श्री चरणों का सेवक

जियालाल

अजमेर डी० ए० वी० कॉलेज की स्थापना करना और उसका चलाना पं० जियालाल शर्मा का ही काम है।

श्री पं० हरिशंकरशर्मा का पत्र

आगरा, ४-७-४६

पूज्यपाद राव जी महाराज,

सादर सविनय चरणस्पर्श ।

आपका कृपा कार्ड मिला और आज 'आर्यमित्र' में आपकी विज्ञप्ति भी पढ़ी। आपने धर्म समाज देश और साहित्य की जो सेवा की है वह स्वर्ण अक्षरों में लिखी जायगी। आप धन्य हैं। आपका तपस्वी जीवन आदर्श है। आप देश और समाज की विभूति हैं।

"आर्यमित्र" द्वारा जरा जन-जागरण करना है। आर्यसमाज में जीवन और विचार-स्वातन्त्र्य को प्रवेश करना है। सिद्धान्त-चर्चा तो बहुत होली। अब समाज को लोकगति के साथ कदम से कदम मिलाकर चलना चाहिये। आपको इस कार्य में मेरी पूरी सहायता करनी है। यदि समाज में कुछ भी जागृति आ सकी तो इसे मैं अपना पारिश्रमिक या उपहार समझूँगा। मुझे बँधी गत नहीं बजानी। इसके लिए कलम के मजदूर के पास शक्तियाँ बखेरने के लिए कहाँ से आई। विचारों पर टकों का प्रभाव न पड़े, अथवा वेतन लेने के कारण लोग मुझे 'जलील' न समझें—जैसा कि आर्य-समाज का रवैया है—इसलिए मैंने बिना वेतन के काम करना स्वीकार किया है। यद्यपि सभा वेतन देने को तैयार थी और है। अब आप बताइये आर्यसमाज की विचारधारा किस प्रकार की रक्खी जाय जिससे समाज का वास्तव में कुछ हित हो.........पहिले अङ्क के लिये क्रान्तिकारी लेख भेजें......।

दास

हरिशंकरशर्मा

एक और पत्र

धरमपुर देहली

६-८-४७

पूज्य शास्त्री जी

सादर प्रणाम ।

मैं सकुशल हूँ आशा है आप भी कुशलपूर्वक होंगे। अभी तीन चार दिन हुए २३ जनवरी ४७ का आर्यमित्र देखरहा था कि मुख्य पृष्ठ पर आपका फोटो और अन्दर "वह कौन हैं' शीर्षक में आप की कहानी पढ़ी। धर्म, देश, जाति, समाज, साहित्य की सेवामें त्याग तपस्या बलिदान का जीवन व्यतीत करने वाले की कुछ जीवन-झाँकी देखी। राजनैतिक, धार्मिक और साहित्यिक विचारों का एक साथ किस प्रकार त्रिवेणी की भान्ति मिलन हो सकता है इसका जीता जागता प्रमाण देखा। और इस संगम में स्नान का खूब आनन्द लूटा।

जीवन-परिचय बार बार पढ़ता था और मुसकराता था। मुसकराहट इस बात पर थी कि 'आर्यमित्र' के अनेक पाठकगण इस परिचय को दो तीन बार पढ़कर यूँही छोड़ देंगे। लेकिन इसका वास्तविक मूल्य तो उन लोगों के हृदय से पूछा जाय जिन्होंने इस डॉक्टर और इंजीनीयर बनने के स्वप्न देखने वाले मनुष्य को निकट से बैठ कर अध्ययन किया हो, मगजपच्ची की हो, लड़ा हो, भिड़ा हो, कभी सहमत हुआ हो, कभी असहमत हुआ हो। इस खारे पानी के नहीं, मीठे पानी के अथाह सागर में न जाने कितने रत्न और मोती छिपे पड़े हैं। लेकिन शर्त यह है कि उनको पाने की इच्छा रखने वाला पूरा गोताखोर हो। डुबकी लगाना खूब जानता हो। अनाड़ी अथवा नौसिखिया के कुछ हाथ पल्ले लगना बड़ा मुशकिल सा मालूम पड़ता है। वह तो शायद नीचे तक डुबकी लगाने के प्रयास में ही कहीं स्वयं ही न खो जाय।

कितनी हृदय की विशालता, कितनी गम्भीरता, कितना आकर्षक व्यक्तित्व पाया है हमारे डॉक्टर और इंजीनियर ने।

एक मामूली डॉक्टर और इंजीनियर तो अपने ही इलाके के रोगियों की और सड़कों की ही देखभाल करता है पर हमारा यह निराला डॉक्टर और इंजीनियर तो मानवजाति के रोगियों को स्वस्थ करने का भार अपने सिर पर उठाये फिरता है और जिसने सारे संसार की गन्दगी को दूर करने का ठेका लिया है। धन्य है वह डॉक्टर! और वह इंजीनियर!! उसकी इस अन्तिम इच्छा में कि शेष जीवन भी जनता की सेवा में व्यतीत हो, कितनी तड़प है, कितनी सिहरन है और कितती व्याकुलता है इसको वे ही जान सकते हैं जिन्हें इस दंगली और मँजे-मँजाये पहलवान से जोर करने का कभी अवसर प्राप्त हुआ हो।

आपका
×—×—×

(पत्र प्राईवेट था इललिये पत्रलेखक का नाम प्रकट नहीं किया जा रहा है)

[अब १६५७ में याद भी नहीं आरहा है कि इस पत्र के लेखक महानुभाव कौन थे]

श्री पं० रामदत्त शुक्ल का एक और पत्र

[गुरुपूर्णिमा के विषय में]

लखनऊ
व्यासपूर्णिमा २००३ (सन् ४६)

आयुरस्मासु धेहि, अमृतत्वमाचार्याय।
—अथर्व।

श्री तपोधान ब्रह्ममेधिन्,

व्यासपूर्णिमा के शुभ अवसर पर श्रौतचातुर्मास्य और स्मार्त गुरुपूजा इन दोनों की समन्वित स्मृति आप के द्वारा बड़ों, समकक्षों और छोटों के लिये देवपूजा, संगतिकरण एवं दान की यज्ञ भावना को

पत्रं-पुष्पं के लघुरूप में प्रस्तुत करता है। कालपुरुष के विपरीत संक्रमण के प्रभाव से वर्त्तमान समय में दैनिक विश्वजनीन संस्कृति की आत्मा तिरोहित सी हो रही है किन्तु पवित्र पर्वों के अवसरों पर उसके शरीर की रूपरेखा अब भी विश्वधारा संस्कृति की स्मृति को अंशतः चित्रित करने का प्रयास करती है।

आर्यजीवन के विकास का मूल आधार संस्कार-बलयुक्त अन्तेवासी का आचार्य के विश्वम्भर गर्भ में नैसर्गिक निवास है। ब्रह्म-तप और श्रम इन तीन सूत्रों से परिवेष्टित पवित्र मेखला ब्रह्मचारी की अज्ञानतमिस्रापूर्ण तीनों रात्रियों में रक्षा करती है। उत्कृष्ट आदर्श का निधिपा अपने ब्रह्मतेज के प्रभाव से अपने प्राणप्रिय शिष्य को सर्व प्रकार से विकसित करता है, और तप के प्रभाव तथा देव के प्रसाद से विद्याव्रतस्नातक राष्ट्र, बल और ओज इन त्रिविध निधियों का समर्थ शेवधि बनता है। ऐसे कर्मठ युवा विद्याव्रतस्नातक ऐहिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के कर्त्तव्यों का सफलता के साथ पालन करने में समर्थ होते हैं।

अपने जीवन में देशकालिक और विपरीत भावनाओं से सतत संघर्षमय प्रपंचों में सक्रिय भाग लेते हुए भी आपने अपने स्वरूप को सांसारिकता से अलिप्त रखने की सफल साधना का अनुष्ठान किया है। वर्त्तमान युग में इस प्रकार असिधाराव्रत की दीक्षा से दीक्षित विरले ही आचार्य मिल सकते हैं। आपसदृश आदर्श आचार्य के अनुग्रहभाजन बनने वाले अन्तेवासी वस्तुतः भाग्यवान् हैं।

अनेक वार आपका कृपापत्र पढ़कर भी मैं अपने को बड़ों, समकक्षों अथवा छोटों की कोटि में रखने में समर्थ न हो सका। तथापि अन्तेवासी को आयुष्य और आचार्य को अमृतत्व की उपलब्धि कराने वाले प्रत्येक बड़े, समकक्ष अथवा छोटे के प्रति मेरे हृदय में श्रद्धा, स्नेह और सद्भावना है। शेष कालान्तर में मिलने पर।

डाक हड़ताल के कारण कदाचित् पत्र के पहुँचने में विलम्ब हो, क्षमा करें।

रामदत्त शुक्ल

जब मैं देहरादून में स्वतन्त्रता-दिवस (१५ अगस्त) मना कर ज्वालापुर आगया तब मैंने श्री महावीर त्यागी जी को लिख दिया था कि मैं अब जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान पद से त्यागपत्र देने की सोच रहा हूँ। श्री त्यागी जी ने निम्नलिखित उत्तर भेजा—

त्यागी जी का पत्र

दिल्ली
२६-८-४७

पूज्य शास्त्री जी वन्दे !

आप का पत्र मिला। सचमुच अब चाव भी सूख गया। केवल मिनिस्ट्री के प्रस्तावों का समर्थन करना ही तो कांग्रेस का कार्य रह गया है। आपको अवश्य छुट्टी मिलनी चाहिये। आपने जितनी

गाड़ी चलाली उतना भी हर किसी को मयस्सर नहीं हो सकता है। फिर आपने समय भी ऐसा छाँटा है कि जब किसी को शिकायत भी नहीं हो सकती, क्यों कि जिस कार्य का (स्वतन्त्रता का) संकल्प किया था वह सम्पूर्ण हो गया। आपके आशीर्वाद का इच्छुक और आपके भक्तों में से एक—

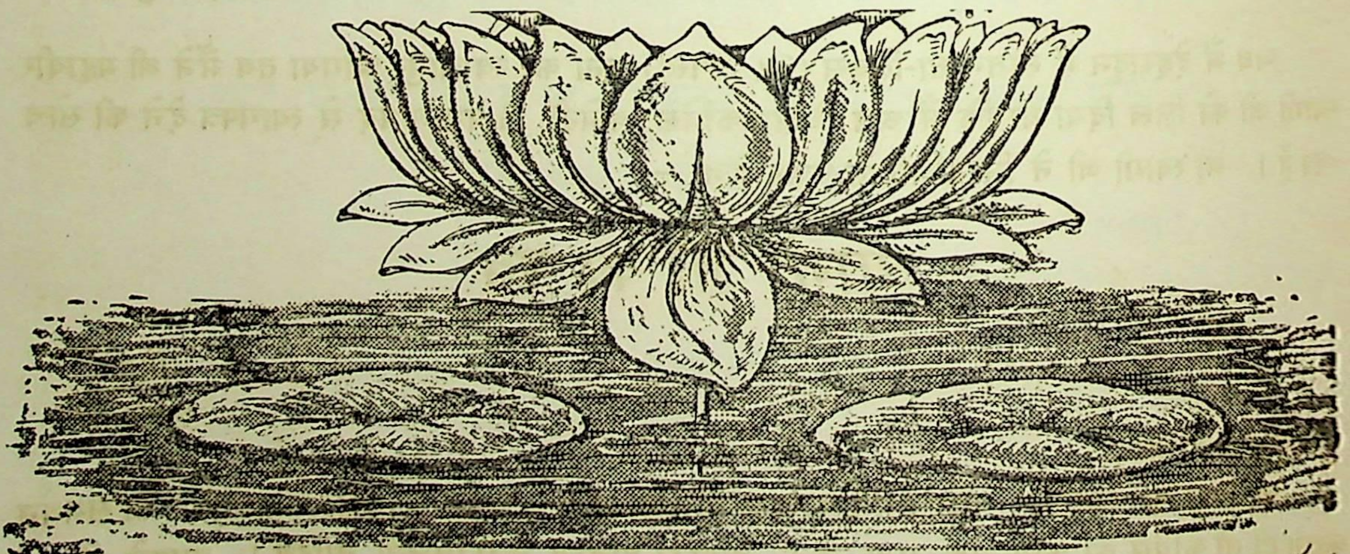
महावीर (त्यागी)

इनका पत्र आने के पश्चात् मैंने भी श्री धर्मदेवशास्त्री जी उपप्रधान जि० कां० क० (जिनको मैं चार्ज दे आया था) के पास अपना त्याग-पत्र भेज दिया कि मीटिङ्ग बुला कर त्यागपत्र प्रस्तुत करें।

झाँसी आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय

श्री धुलेकर एम्० एल्० ए० के पुरुषार्थ से झाँसी में आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय की स्थापना हो गई है। संयुक्तप्रान्त में यह अपने जैसी एक ही संस्था है। श्री धुलेकर जी हमारे प्रान्त के गण्य मान्य नेता हैं। हमारे जेल के साथी भी हैं। आपके आग्रह से हमने गत वर्ष (४६) इस विद्यालय की सिंडीकेट का सदस्य बनना स्वीकार कर लिया था।

श्री धुलेकर जी का हमारा बहुत पुराना परिचय है। झाँसी में निखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ था तब से घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ। आप अनुपम वक्ता, अनथक कार्यकर्ता हैं। आपने मातृ-अब्द कोष नामक ग्रन्थ भी लिखा है। आप संयुक्त प्रान्तीय असेम्बली के ह्विप (चेतक) थे तथा भारतीय लोकसभा के सामान्य सदस्य भी हैं। देहरादून में आया जाया भी करते हैं। मार्च (४७) में भोगपुर में जो कान्फरेन्स हुई थी उसके आप सभापति थे। देहरादून में वैद्य सम्मेलन के अवसर पर आपने जड़ी-बूटियों (४५) की प्रदर्शिनी का उद्घाटन किया था—आप हमारे प्रान्त के भूषण हैं। झाँसी की लक्ष्मीबाई के स्थान के होने से इनमें तदनुरूप तेज और ओज है।



विशेष सहायकों और विशेष प्रेमियों
का
परिचय

स्व० स्वामी आत्मस्वरूप जी

गुरुमण्डल आश्रम हरिद्वार के सर्वाधिकारी। १६१५ में मैं कई मास तक इनके यहाँ रहा। इन्होंने सब प्रकार से मेरा ध्यान रक्खा—गुरुमण्डल पुस्तकालय जो विस्खलित दशा में पड़ा हुआ था उसको मैंने ठीक किया, सूचिपत्र बनाया। यहाँ कई नये, संस्कृत के ग्रन्थ देखने को मिले। यहाँ हस्त-लिखित हरिवंशपुराण (सचित्र) है, जिसका मूल्य एक लक्ष रुपया बताया जाता है।

रायबहादुर स्व० घनानन्द खण्डूड़ी

ये गढ़वाल के प्रमुख व्यक्ति थे। टिहरी नरेश के कृपापात्र थे। गढ़वाल के मालदार कहलाते थे। इन्होंने समय २ पर मुझे बहुत आर्थिक सहायता पहुँचाई थी। ये हमारे परम भक्त थे। इनके द्वारा ही गढ़वाल के प्रमुख व्यक्तियों से मेरा परिचय हुआ जैसे टिहरी के दीवान भवानीदत्त जी, स्व० पं० तारादत्त गैरोला एम० ए० एल० एल० बी० वकील पौड़ी, स्व० पं० सदानन्द जी सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस टिहरी। इनके यहाँ टिहरी तथा ब्रिटिश गढ़वाल के प्रायः विशिष्ट व्यक्ति आया करते थे। १६१६ में इन्होंने ही मेरी गंगोत्री की यात्रा का प्रबन्ध किया था। ऐसा उत्तम प्रबन्ध था कि स्थान स्थान पर मुझे लोग मिलते थे और सब प्रकार का ध्यान रखते थे। इस यात्रा में अमृतसर के कर्मचन्द विद्यार्थी मेरे साथ रहे। उत्तरकाशी में इसी अवसर पर हमने २० दिन तक स्व० स्वामी रामतीर्थ जी के गुरु के दर्शन किये। योगी शंकरानन्द तथा स्वामी विमलानन्द तथा स्वा० सिद्धाश्रम जैसे महात्माओं के दर्शन किये।

जब गढ़वाल तथा कमायूँ में मि० विंडनहैम की कूटनीति के कारण ब्राह्मण-अब्राह्मण का प्रश्न छिड़ा तब इन्हीं पण्डित घनानन्द जी की प्रेरणा से इस विषय में मैंने बहुत लेख लिखे।

पण्डित जी जब आखरी वार बीमार हुए मैं लगभग एक मास तक देहरे ही रहा। इनके आग्रह से मैंने स्व० कविराज गणनाथ सेन को कलकत्ते से १०००) प्रतिदिन पर बुलाया था।

इन्होंने अपने छोटे भाई स्व० चन्द्रवल्लभ के स्मारक में चन्द्रशेखर ट्रस्ट बना कर इस ट्रस्ट को १। लक्ष रु० दिये थे। इस ट्रस्ट से गढ़वाली लड़कों की शिक्षा-दीक्षामें बड़ी सहायता मिलती रहती है।

पं० घनानन्द जी ने अपने जीवन काल में सैकड़ों गरीब गढ़वाली छात्रों का उद्धार किया। धनहीन किन्तु क्रियाशील पचासों व्यक्तियों को काम पर लगाया। टिहरी दरबार में आपका बहुत मान था। ब्रिटिश सरकार ने भी आपको रायबहादुर बनाया था।

आपके कनिष्ठ भ्राता श्री पं० राधावल्लभ जी खण्डूड़ी अधिकतर देहरादून और मसूरी में रहते हैं। ये भी जितना हो सकता है उपकार करते ही रहते हैं। पं० घनानन्द हमको जापान जाने तथा वहाँ दो वर्ष तक रहने का खर्च देने को तैयार थे, पर हमको पास-पोर्ट नहीं मिला।

स्व० लाला शिवचरण लाल

(भोगपुर—देहरादून)

मैं १९१६ के मध्य से १९१९ के प्रारम्भ तक भोगपुर में रहा। ला० शिवचरण लाल ने मेरी ऐसी सुन्दर व्यवस्था रक्खी थी कि मुझे यहाँ किसी प्रकार का पराया भाव दिखाई नहीं दिया। मेरे अथितियों का भी प्रबन्ध रखते थे। उन दिनों तो हम बिना पैसे के इलाके के १०० ग्रामों के राजा थे। टिहरी तक हमारी धाक थी। हमने यहाँ रहकर अपनी साधना की। कई ग्रन्थ लिखे। इधर की कन्या-विक्रय की कुप्रथा को बन्द कराया। शराब की भट्टियाँ बन्द करा दीं और लोगों के बहुत से कष्ट दूर किये। तब से इधर के लोग हमको बहुत मानते हैं। जब मैं कभी उधर जाता हूँ इसी घर का अथिति बनता हूँ। ला० शिवचरण लाल के भ्राता कुन्दनलाल भी हमारा पूरा पूरा ध्यान रखते हैं। इनके दूसरे दो भाई ला० राधेलाल तथा ला० यादोलाल भी बड़ी सेवा करते हैं।

यह इलाका हमारे रहने के कारण सरकारी कागजों में बागी इलाका समझा जा रहा है। एकबार तो फौजी सेना ने जाकर लोगों को बहुत डराया-धमकाया। अबकी बार बीस वर्ष पीछे (मार्च १९४७) में श्री धुलेकर एम्० एल्० ए० की अध्यक्षता में बड़ी कान्फरेन्स हुई। भोगपुर के लोगों ने बड़ा उत्साह दिखलाया। ला० कुन्दनलाल जी के सुपुत्र कृष्णचन्द्र उत्साही नवयुवक हैं। कांग्रेस मण्डल के मंत्री हैं। पं० सोमदत्त शर्मा प्रधान भी उत्साही नवयुवक हैं। श्री हरिसिंह नेगी इस भोगपुर इलाके के प्राण हैं।

तलाई

(मालकोट)

यह बहुगुणों की बस्ती है। स्व० पं० जयदेव जी बड़े उत्साही कार्यकर्ता थे। अब इस ग्राम के लोग देश कार्य में योग देते रहते हैं। श्री जयदेव जी के चिरंजीव श्री जगन्नयन बहुगुणा आयुर्वैदिक कॉलेज चला रहे हैं, आप महाविद्यालय ज्वालापुर में अध्ययन कर चुके हैं। श्री पं० भीमदत्त मालदार प्रत्येक कार्य में सहायक रहे हैं।

पं० ब्रह्मदत्तशर्मा ऊनियाल
(सूर्यधार–मालकोट)

पं० ब्रह्मदत्त उनियाल बड़े उत्साही व्यक्ति हैं, जब हम भोगपुर में रहते थे तब ये राणीपोखरी स्कूल में मास्टर और वहाँ के पोस्टमास्टर थे। हमें इनके कारण बड़ा सुभीता रहा। इनसे पूर्व रायपुर के एक पोस्ट मास्टर योगध्यानसिंह थे। इनको भी हम नहीं भुला सकते।

श्री नन्दलाल व्यास
(रायकोट–लुधियाना)

आपने हमको गुरुकुल सिकन्दराबाद को चलाने में पूरी पूरी सहायता दी थी। फिर जब हम महाविद्यालय में आये तब भी यहाँ एक वर्ष रह गये। आपके सब पुत्र अच्छे अच्छे स्थानों में लगे हुए हैं। श्री व्यास जी हमारे सहाध्यायी रहे हैं। व्याकरणशास्त्र के अच्छे पण्डित थे। इनके चारों पुत्र—हरिकृष्णशास्त्री, भवदेवव्यास इंजिनियर, मदनमोहन, चन्द्रशेखर सब अच्छे स्थान पर लगे हुए हैं।

श्री काशीराम

लाला काशीराम देहरादून को हम कभी नहीं भूल सकते जो हर समय हमारी सहायता करते रहे पब्लिक कार्य में।

श्री पं० निरन्तरदेव वैद्य
(देहरादून)

ये हमारे भक्त शिष्यों में से थे और एक सच्छिष्य की भान्ति बरताव रखते थे। इनकी वैद्यक अच्छी चलती थी। एक बार अपने पिताजी से रूठकर वे भाग गये थे। तब मैं अजमेर में था। मैंने इनको सिकन्दराबाद में कुछ काल अपने पास रक्खा, फिर घर भेज दिया। यह १६०२ की बात है।

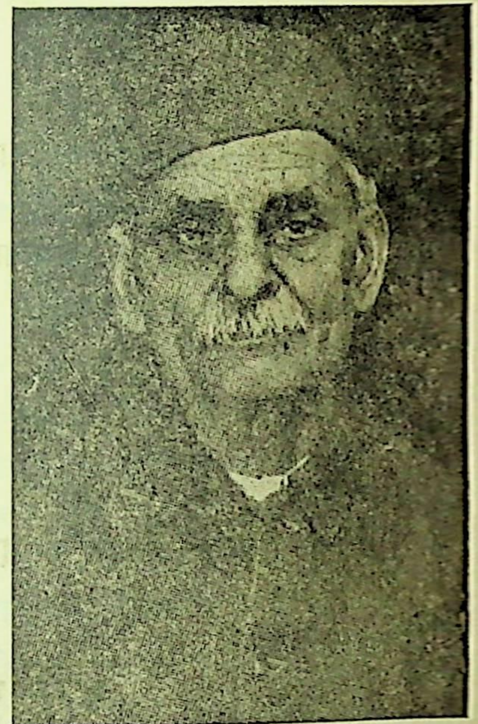
बाबू प्रतापसिंह
(भैरोंवाल-हुशियारपुर–पंजाब)

आप पहिले वर्षों अफरीका में रहे। फिर गुरुकुल कांगड़ी में खुला तब यहां भी काम करते रहे। श्री आचार्य गंगादत्त जी ने गुरुकुल छोड़ा तब आपने भी छोड़ा। फिर आचार्य जी तथा बाबूजी भोगपुर

(१९०६) रहने लगे। आचार्य जी जब महाविद्यालय में (१९०७) आये तब बाबूजी भी आये। यहाँ कई वर्ष तक रहे और महाविद्यालय के प्रारम्भिक कार्य में योग दिया। फिर आप लाहोर चले गये। फिर नासिक (दक्षिण) गये। अब उधर रहते रहते इनको २०-२२ वर्ष हो गये थे। उधर ही कारोबार है, उधर ही रहते हैं। (नासिक में ही इनका देहावसान हुआ।

श्री पं० शंकरदत्तशर्मा एम० एल० ए०

(मुरादाबाद)



ये हमारे १९०३ से ही साथी हैं। सिकन्दराबाद में ही आपका परिचय हुआ था। आप घोड़ी जि० बुलन्दशहर के ही निवासी हैं। जब हम सिकन्दराबाद से चले गये तब आप मुरादाबाद (१९०५) आगये तब से यहीं हैं। साधारण व्यक्ति थे पर अनथक पुरुषार्थ से वैदिक पुस्तकालय चलाया। फिर शर्मा मशीन प्रेस चलाया। म्युनिसिपल कमिश्नर बने फिर वर्षों से एम० एल० ए० हैं। उत्तम कोटि के जनहित में तत्पर रहने वाले व्यक्ति हैं। मुरादाबाद जिले के गाँधी हैं। १९४१ में बरेली जेल में एक वर्ष साथ भी रहे हैं। महाविद्यालय में तो वर्षों सहकारी अधिकारी रहे हैं। ये भी देहरादून के पं० अमरनाथ वैद्य शास्त्री की भान्ति हमारे सहकारी, सहयोगी रहे हैं। इन्होंने भी हमारा "गीताविमर्श" छापा था। इनके ज्येष्ठ पुत्र गणपतिशर्मा धीरे-धीरे पब्लिक में आरहे हैं। पं० शंकरदत्तशर्मा आर्यसमाज तथा कांग्रेस कार्य में अहोरात्र तत्पर रहते हैं। किसी समय कोई भी इनके यहां पहुँचिये, एकदम आपका कार्य करदेंगे, कहीं जाना पड़े तो साथ चल देंगे, अपने कर्मों की इनको कुछ भी परवाह नहीं रहती। अतिथिप्रिय इतने हैं कि इनके यहां भण्डार सदैव चलता ही रहता है। (गत वर्ष १९५५ मुरादाबाद में देहावसान)

स्व० श्री पं० जीवारामशर्मा

(मुरादाबाद)

आप अच्छे अध्यापक और उत्तम ग्रन्थ लेखक थे। आप धीरे धीरे विख्यात हुए। आपका सरस्वती प्रेस चल रहा है। आपके संस्कृत परीक्षोपयोगी भाष्यग्रन्थ, टीका ग्रन्थ, अनुवादात्मक ग्रन्थों की धूम रही है।

बावा राघवदास

(गोरखपुर)

आप दक्षिण के निवासी हैं। महाविद्यालय में दो वर्ष रह कर अध्ययन-अध्यापन का (१९१४) कार्य किया था। फिर भोगपुर में (१९१७) में हमारे साथ रहे। हमने पं० घनानन्द जी की प्रेरणा से इनको उत्तरकाशी (टिहरी) के मिडिल स्कूल में हेडमास्टरी पर भेजा था, वहाँ कुछ काल रह कर ये गोरखपुर चलेगये, वहाँ अनन्तस्वामी से दीक्षा ली और राघवेन्द्रराव के राघवदास बनगये। धीरे धीरे गोरखपुर के नेता बनगये। इन्होंने उधर बहुत काम किया और उधर की जनता इनको देवता मानती है। कौनसा आन्दोलन है जिसमें ये जेल न गये हों। कौनसा कार्य है जिसमें ये आगे न आए हों।

स्व० श्री पं० रामसहाय वैद्य

(मेरठ)

ये कतियावली जि० बुलन्दशहर के निवासी थे। अच्छे वैद्य बनकर मेरठ में ही रहने लगे थे और नामी वैद्यों में इनकी गणना होने लगी थी। बड़े उपकारी जोव थे। मुक्तहस्त से सबको सहायता देते रहे। मैं कई बार आर्थिक संकट में फँसा। जब इनको पता चला तब बिना मांगे ही, बिना लिखे ही चुपचाप सहायता पहुँचा दी। "आर्यसमाज का इतिहास भाग १" की छपाई में ये बड़े सहायक रहे।

रावत घनश्यामसिंह

(अजबपुर)

सन् १९३२ में जब सब लोग जेल चले गये थे तब पीछे कार्य चलता रहे इस विचार से हम दोनों पीछे रह गये थे। फिर हम दोनों अजबपुर की भट्टी पर पिकेटिंग करके जेल चले गये। उस वर्ष ये ही मेरे साथी रहे—मेरा बी क्लास था और इनका सी क्लास था। दोनों क्लास मिल कर हमने एक तीसरी नयी क्लास बनाली थी। १९४२ में भी ये मेरे साथ रहे। इनके बड़े भ्राता श्री नम्बरदार जयराम-सिंह हमारे बड़े भक्त हैं और जब जब हम देहरे जाते हैं तब तब अजबपुर अवश्य जाते हैं।

रावत पृथ्वीसिंहजी

(अजबपुर)

ये हमारे परम भक्त रहे थे। हमने जिस समय जिस काम में कुछ रु० लगाने अथवा देने को कहा बिना संकोच देते अथवा लगाते रहे। सन् १९२० में देहरे जिले की कानफरन्स में बड़ा सहयोग दिया था।

श्री महन्त परशुरामजी

(भरतमन्दिर हृषीकेश)

इनके विचार कुछ भी रहे हों, ये सार्वजनिक कार्यों में हमको बराबर सहायता देते रहे। १९२५ का निखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, जो देहरादून में हुआ था, आपकी सहायता के कारण ही पार पड़ा। आपने सम्मेलन के अतिथियों का स्वागत-भार अपने ऊपर लिया था। यदि आपकी सहायता न रहती तो हम सफल न हो सकते। आपने लगभग ३५००) रु० स्वागत में व्यय किया। लोग इस सहायता के लेने के विरुद्ध थे पर हमने इस विषय में किसी की नहीं सुनी। स्व० महन्त लक्ष्मणदास जी दरबार गुरु रामराय, तथा महन्त ओंकारदास भी अन्य विषयों में सहायक रहे। स्व० नाभानरेश श्री गुरुचरणसिंह ने भी चुपचाप सहायता पहुँचायी। सम्मेलन बहुत सफल हुआ।

श्री नेमचंद बालाचन्द गांधी

उस्मानाबाद के नामी वकील तथा सार्वजनिक कार्यकर्त्ता-इनके विषय में हम पूर्व लिख चुके हैं। ये सब प्रकार से सहायक रहते हैं।

स्व० श्री रंगनाथराव किरकसे वकील

इनके विषय में हम पूर्व लिख चुके हैं। ये तो पूरे पूरे सहायक रहे। देश छूटने के पश्चात् इन्होंने जितना हमारा ध्यान रक्खा, कदाचित् किसी ने रक्खा हो।

स्व० श्री गोविन्दसिंह मनसबदार

ये तो पिताजी के निधन के पश्चात् पितृतुल्य ही रहे हैं। इन्होंने समय समय पर सहस्रों रु० की चुपचाप सहायता की।

स्व० मास्टर तोलाराम जी

१८६४ नवम्बर में दक्षिण छूटा तब से लाहोर में दो वर्ष तो आनन्द से कटे। फिर जिस बैंक में हमारा रुपया रक्खा हुआ था, वह फेल हो गया। उससे प्रति छह मास २०० रु० सूद आता था। उससे हम पढ़ते थे। फिर हमारे बोर्डिङ्ग के सुपरिण्टेण्डेण्ट मास्टर तोला रामजी मुलतानी ने हमारी रक्षा की। हम इनके पास १८६४ से १८६८ तक रहे।

सार्वजनिक जीवन में पड़कर हम उस असिधाराव्रत को निभाते रहे। इसमें उपर्युक्त महानुभाव कारण हैं ही तथापि गुप्तरूप से हमको न जाने कहां से, सहायता मिलती रही। नहीं तो आर्यसमाज जैसी सोसाइटी में निभना ही कठिन था।

राजनैतिक, साहित्यिक क्षेत्र में भी गुप्तरूप से सहायता मिलती रही तभी तो इनमें सफल होते गये।

हमारे बहुत से मित्र बारबार पूछते रहे और जनता में भी बारबार यह प्रश्न उठता रहा कि हमारा इतना बडा खर्च कैसे चलता है। भगवान् करुणानिधान की कृपा से कभी कोई काम नहीं रुका चाहे छोटा हो अथवा बड़ा, मानसिक कष्ट अवश्य हुए—

कलकत्ते में हमारा मासिक व्यय १००) के लगभग होता रहा। पिता जी रुष्ट थे कि मैं बहुत खर्च कर रहा हूँ। मैंने पिता जी को लिखना छोड़ दिया और उन्होंने भी मेरी परीक्षा लेने के लिये रुपये भेजना छोड़ दिया—एक बंगाली डॉक्टर ने मेरा खर्च चलाया, वह मुझे जापान भेजने की चिन्ता में था। सब कुछ तैयारी हो ली थी, जब हमने पिता जी से आज्ञा मांगी तब उन्होंने लिखा कि "तुम्हारी माता बहुत बीमार है, तुम जापान चले जाओगे तो छह मास पश्चात् मरती तो आज ही मर जायगी"—हमारी माता भी हमारे ज्येष्ठ बन्धु नारायणराव द्वारा गुपचुप रुपये कभी कभी भिजवाती रही।

सहायता का अर्थ केवल रुपये पैसे की ही नहीं अपितु सब प्रकार की सहायता—

स्व० केशवशरण डुबलिस

(मवाना–मेरठ)

ये परम भक्त शिष्य थे। घर के बड़े सम्पन्न थे। श्री स्वा० शुद्धबोध-चरित्र को आपने अपने व्यय से छपवाया था। संवत् १९९० से दस बारह वर्ष तक महाविद्यालय में भोजनाच्छादन आदि का सब भार इन्होंने उठाया। मैं जब आगरे जेल में था (१९४३) तब आपका निधन सुना था। मैं जब बाहर था तब इन्होंने मुझसे कई वार पूछा था कि रुपये का सद्व्यय किस तरह किया जाय क्योंकि इनके पास रुपया बहुत था और इनके सन्तान नहीं थी। मैं यही कहता रहा कि सोच कर बतलाऊँगा, पर बतला ही न सका। नहीं तो कम से कम इनसे पचास सहस्र रुपया लेना कठिन नहीं था।

श्री लक्ष्मीकान्त मिश्र

मैं जब कभी मसूरी जाता था इनका अतिथि रहता था—ग्राम शाहपुर, टोलदैभत पो० लोहाट जि० दरभंगा के निवासी हैं। प्रतिवर्ष गरमियों में दो-दो मास इनके साथ रहा।

श्री स्व० सेठ मुरलीधर जी

आप हमारे बड़े सहायक रहे। जब तक जिये प्रतिवर्ष वर्ष भर की डाक का जितना खर्च और प्रत्येक कांग्रेस के महाधिवेशन तथा उधर के प्रदेश के जाने आने का खर्च बिना मांगे भेज दिया करते थे। हमने गढ़वाल की पहली जो यात्रा की थी उसका सारा व्यय भी आपने दिया था। हमारे साथ पहिले

तो १२ व्यक्ति थे, फिर ४० व्यक्ति हो गये थे। हमने गढ़वाल में एक सहस्र मील की यात्रा की थी। पुण्यतीर्थ-दर्शन और कांग्रेस-आन्दोलन दो ही मुख्य उद्देश्य थे।

स्व० श्री शिवबत्त जी

आप नारनौल जि० रेवाड़ी के निवासी थे। महाराज ग्वालियर श्री माधवराव जी के प्राईवेट सेक्रेटरी थे। मैं जब ग्वालियर गया था मुझे ठहरने के लिये कहीं जगह नहीं मिली तब अचानक आप से भेंट हुई और आपने अपने यहाँ मुझे ठहराया और बड़ों बड़ों से परिचय कराया था। महामहोपाध्याय श्री रघुपति शास्त्री, महामहोपाध्याय श्री रावजी शास्त्री से आपने ही परिचय कराया था। श्री शिवबत्तजी रामायण के बड़े भक्त थे।

स्वर्गीय प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद

(देहरादून)

आपका हमारा परिचय सन् १६०४ अथवा १६०५ का जब कि हम एक शास्त्रार्थ के लिए "खुर्जे" गये। वहाँ आप हाई स्कूल के हेडमास्टर थे, फिर आप डी० ए० वी० स्कूल देहरादून के हेडमास्टर बन कर आये। आप ही के अनथक परिश्रम का फल है कि अब यह स्कूल कॉलेज बन गया है। आपने देहरे के प्रत्येक सार्वजनिक कार्य में हमारा सहयोग दिया और अपने स्कूल को भी बचाये रक्खा। जब इनसे कोई काम कहा जाता था तब अपने स्कूल के छात्रों सहित उस कार्य में जुट जाते थे। १६२० की देहरे की पोलिटिकल कानफरेन्स, १६२५ का निखिल-भारतवर्षीय साहित्य सम्मेलन, १६२६ का आर्य-प्रतिनिधि सभा संयुक्तप्रान्त का महाधिवेशन तथा अन्य सभा-सम्मेलन आपके सहयोग के बिना सफल नहीं हो सकते थे। बीच में हम दो वष के लिए आर्यसमाज के प्रधान बनाये गये थे। लोगों के आपस में बड़े झगड़े थे। आपके सहयोग से ही हम गाँठों को सुलझा सके।

श्री लाला उग्रसेन जी बैरिस्टर

(देहरादून)

आप वर्षों देहरा म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन रहे। कोई ऐसा सार्वजनिक काम नहीं जिसमें ये योग न देते हों। सब कार्य कर देते हैं। किसी झगड़े में नहीं पड़ते और सर्वप्रिय हैं। आपने प्रत्येक सार्वजनिक कार्य में हमारा सहयोग दिया।

स्व० चौधरी बिहारी एम्. एल्. ए.

(देहरादून)

ये भी १६२० से हमारे साथी और सहयोगी रहे। कैसे मीठे कार्यकर्ता थे, कैसे मिलनसार थे! अब तो इनके छोटे भाई गिरधारीलाल यू०पी० के मिनिस्टर हैं। इनसे छोटे भाई सुन्दरलाल विधान परिषद्

में पहुँच गये हैं। १६२० में बिहारीलाल जी ने असहयोग में सरकारी नौकरी छोड़ी थी सो अन्त तक कांग्रेस कार्य में संलग्न रहे। दो-एक बार जेल में भी हमारे साथ रहे। योगायोग देखिए कहाँ देहरादून का जन्म और कहाँ दक्षिण का संगमनेर (जि० सतारा) वहाँ आप अत्यन्त रुग्ण रोग होकर गये थे। वहीं आपका देहावसान हुआ।

श्री रामदत्त शुक्ल

(लखनऊ)

आप स्वर्गीय पं० नन्दकिशोरदेव शर्मा महोपदेशक के सुपुत्र हैं। आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्तप्रान्त यू० पी० के प्राण हैं। वर्षों मन्त्री रह चुके हैं। आपका विद्याव्यासङ्ग प्रशंसनीय, स्वाध्याय बहुत बढ़ा-चढ़ा है पौरस्त्य तथा पाश्चात्य साहित्य में सुन्दर प्रगति रखते हैं। हमारे भक्त भी हैं और शक्त-भक्त हैं। समय समय पर हमारी खरी खरी आलोचना करके सत्यपरामर्श देते रहते हैं। ये जब छोटे थे स्व० पं० देवदत्तशास्त्री के पास रहते थे, तब से हम इनको जानते थे। तब हम गुरुकुल फर्रुखाबाद के आचार्य थे। इनके पिता जी का हमारा घनिष्ठ सम्बन्ध था। प्रतिवर्ष महाविद्यालय के जलसे में आते थे तब हमारी कुटिया में ही ठहरते थे। जब भी आते थे मुझे कह जाते थे कि रामदत्त को समझाओ, विवाह नहीं कराता है। मैं कह देता था कि भला रामदत्त हमारी कब मानने लगे। स्व० पण्डित वसन्तलाल जी महोपदेशक भी हमारे जलसे में आते रहते थे। जब पं० नन्दकिशोर देवशर्मा जी तथा पं० वसन्त लाल जी अपनी २ कढ़ाई पृथक् पृथक् चढ़ाते, अपनी २ पूरियाँ उतारते, उस समय इन दोनों की मनोरंजक बातचीत सुनने योग्य रहती थी। उन बातों से सुनने वालों को बहुत बौद्धिक सामग्री मिलती थी। [गत अमृतसर कांग्रेस में किसी उनके भक्त से पता चला कि आपका देहावसान हो गया]

श्री पं० नन्दकिशोर देवशर्मा जी आर्य समाज में यत्रतत्र मिलते ही रहते थे। शास्त्रार्थों में भी मिलते रहते थे। आप स्व० श्री पं० भगवानदीन जी के प्रमुख पृष्ठपोषक रहे—

श्री वासुदेवशरण आगरवाला एम्० ए०

आपका परिचय श्री पं० रामदत्त शुक्ल जी द्वारा हुआ था। आप मथुरा, लखनऊ आदि स्थानों में म्यूजियम के क्यूरेटर रहे। अब (४७) सेण्ट्रल म्यूजियम न्यू दिल्ली में क्यूरेटर हैं। पुरातत्व के प्रबल, प्रकाण्ड पण्डित हैं। वैदिक साहित्य के परम अभ्यासी हैं। जिनसे मिलने में हमको अत्यन्त आनन्द मिलता है उन विशिष्ट विद्वानों में हैं। अब (५७) काशी में हैं।

स्व० ठाकुर मनजीतसिंह एम्. एल्. ए.

(देहरादून)

आप देहरादून के होनहार नवयुवक थे। असहयोग आन्दोलन के समय कांग्रेस में आये। फिर आप दो बार एम्० एल्० ए० बने। चतुर कार्यकर्ता थे। देहरादून जिला कांग्रेस कमेटी के मन्त्री भी

रहे। ऑल इण्डिया कांग्रेस के मेम्बर भी रहे। इनके पश्चात् श्रीमती शर्मदा देवी (श्री महावीर त्यागी की धर्मपत्नी) एम्० एल्० ए० हुई। फिर स्वयं त्यागी जी एम्० एल्० ए० बने और अब तक हैं। अब तो विधान परिषद् में भी पहुँच गये हैं।

श्री मनजीत सिंह इतिहास के अच्छे ज्ञाता थे, अच्छे वक्ता थे। इनकी महात्वाकांक्षा बड़ी भारी थी। बीच में ही फूल कुम्हला गया। जहाँ तक पहुँच सकते थे पहुँच न सके, अन्त समय में ये कुछ विक्षिप्त से थे। देहरे में एक विचित्र बात है कि बाहर का जो आया वही इस क्षेत्र का सब कुछ बन बैठा। यहाँ के लोग उठते ही नहीं, उठते हैं तो अधिक काल ठहरते नहीं। विचित्र भूमि है।

श्री पं० जीवनदत्त जी शर्मा

(नरवर-नरौरा–बुलन्दशहर)

अपनी गाथा में मैं इस सहाध्यायी का उल्लेख न करूँ तो दोष का भागी बनूँगा। आप मेरे सहाध्यायी (१८६८-१६०३) रहे हैं। हम दोनों ने स्व० श्री पं० गंगादत्त शास्त्री जी के पास नवाह्निक महाभाष्य साथ पढ़ा था। अब २० वर्ष से आप गंगा जी के किनारे साङ्गवेद विद्यालय चला रहे हैं। बड़े त्यागी तपस्वी पुरुष हैं। हमारे संस्कृत के सहाध्यायियों में अथवा सतीर्थ्यों में, पं० विष्णुमित्र जी, पं० नन्दलाल व्यास, पं० जीवनदत्त शर्मा ये तीन ही जीवित हैं—शेष न जाने किस लोकलोकान्तर में हैं। पं० जीवनदत्त जी की पाठशाला में लगभग डेढ़ सौ छात्र पढ़ते हैं। सैकड़ों छात्र पढ़ गये। एकरस काम चल रहा है। आप वैसे स्वर्गीय श्री पं० भीमसेन शर्मा इटावानिवासी के पास भी अनेक विषयों का अध्ययन कर चुके थे। आपका भक्त-परिवार बड़ा है—सेठ साहूकारों की सहायता से यह पाठशाला चलती है। एक आर्यसमाज की संस्कृत पाठशालाएँ, गुरुकुल और विद्यालय हैं जहाँ इतना काम नहीं होता और हल्ला बहुत रहता है, झगड़ों का तो पूछिये नहीं। एक पं० जीवनदत्त जी की पाठशाला है जहाँ से सैकड़ों विद्वान् तैयार हो गये और कोई विज्ञापन नहीं, कोई उत्सव नहीं, कोई घोषणा नहीं। सच पूछो तो सनातनी पण्डितों की परम्परा ने ही संस्कृत विद्या को, वेदों, शास्त्रों और संस्कृत साहित्य को किसी प्रकार जीवित रक्खा है। आर्यसमाज में भी जो पण्डित आये हैं उन्हीं के द्वारा आर्यसमाज में थोड़े बहुत पण्डित बने हैं, उन्हीं का कुछ प्रभाव समझिए, संस्कृत का नाम चल रहा है। आर्यसमाज पचास वर्ष में ही थक गया। सनातनी पण्डितों की सहस्रों लक्षों वर्षों की परम्परा अब तक जीवित है। इसके रहस्य को जो जाने, वही पण्डित! पिछले वर्ष (५६ में) समाप्त।

स्व० श्री नरसिंह चिन्तामण केलकर

(निधन)

अक्टूबर ४७ (तृतीय सप्ताह) लोकमान्यतिलक के दक्षिण भुजास्वरूप श्री केलकरजी का निधन एक दुःखदवार्ता है। आपके निधन से श्री लोकमान्य तिलक के विचारवाले शिष्यों की शृङ्खला टूट-सी

गयी है। श्री केलकर कांग्रेस के भी परम भक्त तथा कार्यकर्ता रहे हैं। हमारा इनका परिचय ऑल-इण्डिया कांग्रेस कमेटी में हुआ था। क्योंकि वे भी मेम्बर थे और हम भी। १०-११ वर्ष बराबर इसी प्रकार कांग्रेस के अवसर पर भेंट हुई थी। आप अनुपम लेखक, उच्चकोटि के विद्वान, ग्रन्थकर्ता, संपादक थे। "केसरी" "मरहटा" तथा केसरीट्रस्ट को अन्त तक वे ही संभालते रहे। महाराष्ट्रभर में आपकी धाक थी पर भारत के गिनेचुने नेताओं में भी आपकी गिनती थी। आप लोकमान्य के समय में जैसे गरम थे वैसे ही गरम विचारों के उनके पश्चात् भी रहते तो कभी के कांग्रेस के प्रेसीडेण्ट बनगये होते। श्री सावरकर को हिन्दूमहासभा के कार्य में जोड़ने का काम इन्हीं का था नहीं तो वे भी कभी के राष्ट्रपति बन जाते।

स्व० श्री नारायण स्वामी

इसी वर्ष में श्री नारायण स्वामी जी का देहावसान हुआ। आप आर्य जगत् के कर्ता पुरुष थे—स्वामी श्रद्धानन्द के पीछे वर्षों तक आर्यजगत् की बागडोर इन्हीं के हाथ रही। अच्छे लेखक, प्रबन्धक मननशील, पुरुषार्थी व्यक्ति थे। संयुक्तप्रान्तीय प्रतिनिधि सभा के प्राण थे।

स्व० स्वा० परमानन्द संन्यासी

आगरा

हमारे परमहितैषी थे। अनथक मिशनरी स्पिरिट के उपदेशक थे। आपने बड़ौदे में भी बड़ा काम किया। मुख्य कार्यक्षेत्र उत्तर प्रदेश ही रहा—आपका देहावसान ग्वालियर लश्कर में हुआ।

स्व० स्वामी केवलानन्द सरस्वती

आप महाविद्यालय के परमहितैषी थे। आर्यसमाज में धार्मिक प्रवचन में इतनी बड़ी ख्याति प्राप्त करने वाला कोई नहीं हुआ। शान्त, गम्भीर स्वभाव के संन्यासी थे। आपका निगमागम विद्यालय दारानगरगंज-बिजनौर में चल रहा है।

स्व० स्वामी मङ्गलदेवजी संन्यासी

आगरा

आप हमारे साथ गुरुकुल सिकन्दराबाद में रहे। प्रबन्ध में बहुत सहायक रहे। फिर आगरा अनाथालय के संरक्षक रहे। वर्षों तक आप बड़ी लम्बी बीमारी में रहे। ६८ वर्ष की उम्र में आपका देहावसान हुआ। संन्यासियों में ऐसे उत्तम संन्यासी कम देखे गये हैं।

स्वामी आत्मानन्द सरस्वती

स्वा० दर्शनानन्द के परम भक्त, गुरुकुल पोठोहार (रावलपिण्डी) के संस्थापक। जब पंजाब बटा तब से स्व-संस्थापित साधन-आश्रम जगाधरी (अम्बाला) में रहने लगे हैं। वहाँ एक उपदेशक क्लास भी है—आज (१६५७) हिन्दी रक्षा आन्दोलन के प्रथम अधिनायक अथवा यूँ कहिये कि सर्वः-सर्वौ-सर्वे हैं। आप संस्कृत के बड़े विद्वान हैं। इनका पहिला नाम पं० मुक्तिराम उपाध्याय था। आप मेरठ जिले के निवासी हैं। संप्रति आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान हैं—पंजाब में हिन्दी सत्याग्रह के प्रवर्तक।

श्री आनन्द स्वामी

पहिले पंजाब कॉलेज विभाग की जागती ज्योति, संन्यास लेने के पश्चात् आर्यजगत् में धार्मिक भावना के प्रसार करने में सिद्धहस्त आनन्दस्वामी जी को कोई कैसे भुलाये—

ज्वालापुर में दंगा

२३-१०-४७—ज्वालापुर में दंगा ता० १४-६-४७ में हुआ था। तब से आज तक करफ्यू चल ही रहा है। ग्रामों में अशान्ति है ही। देहरे में भी करफ्यू चल रहा है। ता० २१-१०-४७ को देहरे में फिर मारकाट हुई इसलिए फिर जोर का करफ्यू लगा है। अभी ४-५ दिन हुए ज्वालापुर नहर के पुल पर लाहोरी गाड़ी में पाकिस्तानी जा रहे थे, फ्रण्टियर वालों ने हमला कर दिया। आधे घण्टे तक गाड़ी रुकी रही। मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून ये तीनों जिले उपद्रवग्रस्त घोषित हुए हैं। शरणार्थी हरिद्वार से अन्यत्र जा रहे हैं। पंजाब में अभी इधर से उधर हो ही रहा है। नवम्बर के अन्त तक यह बदलौअल समाप्त हो सकेगी। पं० सोमदत्त जी से ज्ञात हुआ कि देहरे जिले में १२०० के लगभग मुसलमान शुद्ध किये गये।

एक पत्र

(सितम्बर १३-६-४७ को देहरे से चला और २३-१०-४७ को ज्वालापुर पहुँचा, सवा मास में)

इन दिनों मैं इधर उधर बहुत रहा—पंजाब का चक्कर भी लगा आया हूँ। कांग्रेस की स्थिति चिन्ताजनक है। कांग्रेसी इस क्रान्तिकाल में अपने कर्तव्य का पालन नहीं कर रहे हैं। अपने कर्त्तव्य को न समझ कर सर्वत्र आपाधापी अन्धेरगर्दी में पड़े हुए हैं। कोई किसी के पीछे नहीं चलना चाहता। कांग्रेसी सरकारों को हमसे पुष्टि नहीं मिल रही है और न वह लेना ही चाहती है। आजकल सर्वत्र गालियाँ मिल रही हैं, इससे हमारी स्थिति भी विचित्र है। फिर भी कुछ एक तो कर्त्तव्य पालन कर ही रहे हैं।

चन्द्रमणि (पालिरत्न), देहरादून

(हमने लिख दिया कि घबराने की आवश्यकता नहीं सब ठीक हो जायगा —नरदेवशास्त्री)

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

इनकी हमारी मित्रता लाहोर से ही रही। फिर हम जब काशी गये तब ये वहाँ मिले—ये और स्व० गोकुलचन्द विद्यार्थी अगस्त्य कुण्ड में रहते थे। श्री गोकुलचन्द जी कहने को ही विद्यार्थी थे पर थे अच्छे बूढ़े—ये दोनों महानुभाव संस्कृतविद्या के अध्ययनार्थ काशी पहुँचे थे। दोनों कट्टर आर्यसमाजी। ऐसे कट्टर कि जब लोग सो जाते थे तब ये दोनों उच्च-स्वर से रात को बारह बजे गाया करते थे,—

'आर्यभूमि में सामाजिक
कल्पवृक्ष लगा गये'

यह भजन गाया करते थे। मुहल्ले के लोग समझ रहे थे कि ये कहाँ से आ गई बला—

तब मैं नवाबगंज (दुर्गाकुण्ड) में आचार्य पं० परमेश्वरीदत्त जी शास्त्री के घर पर रहा करता था। स्वा० सत्यदेव जी ने मुझे फटकारा कि कहाँ रहते हो, चलो हमारे साथ रहो। मैंने कहा मैं तो यहाँ अध्ययनार्थ आया हूँ, चुपचाप रहकर स्वार्थ साधूँगा। तब ये बड़े गरजे कि बड़े कमजोर हो। मुस्कराने के अतिरिक्त और उत्तर ही क्या था। भला ऐसे कट्टर लोगों का काशी में क्या काम था? फिर ये जो अमरीका गए वहाँ से लौट कर ही मिले देहरादून में। वहाँ ये डी० ए० वी० स्कूल में हेडमास्टर बने। एकाध वर्ष ही रहे। फिर समस्त भारत घूमे। बोलने वाले पक्के हैं, एक धूम सी मचादी सर्वत्र। लिखने की भी धुन रहती है, जैसे कि इनकी यात्रा सम्बन्धी पुस्तकें चलती हैं, जैसे कि संगठन के बिगुल बजते हैं—

कांग्रेस, आर्यसमाज, हिन्दूसभा सभी में आपने काम किया और पीछे सर्वतन्त्रस्वतन्त्र होकर विचरने लगे। इनमें काम करने की बड़ी शक्ति है। प्रज्ञाचक्षु होने पर भी इतना काम करते हैं कि आश्चर्य होता है—आपने अपनी समस्त सम्पत्ति 'सत्यज्ञान-निकेतन' नागरी प्रचारिणी सभा काशी को दे दी है। इस वृद्धावस्था में वही उनके निवास का केन्द्र है। सत्यज्ञान-निकेतन काशी नागरीप्रचारिणी सभा की पश्चिमी शाखा का भी केन्द्र है—

स्व० श्री डॉ० केशवदेव जी

जब हम वैदिक प्रेस अजमेर में हेड संशोधक बन कर गये थे (१६०२) तब आप वहाँ 'प्रेस' के मैनेजर रहे, फिर काशी में ही आप मिले—फिर आपने देहरादून में शक्ति आश्रम की स्थापना की। आप निखिलभारतवर्षीय आर्यकुमार सभा के प्रवर्तक थे। आप भी अमरीका हो आये थे—आपसे आर्यसमाज को बड़ी आशा थी, पर दैवेच्छा और थी।

संस्थापक महाविद्यालय

(तार्किक-शिरोमणि स्व० स्वामी दर्शनानन्दसरस्वती)

वैसे तो स्वामी जी ने कई गुरुकुल स्थापन किये जिनमें सिकन्दराबाद, बरालसी, बदायूँ, पोठोहार, ज्वालापुर के गुरुकुल प्रमुख हैं। इनमें सबसे बड़ा गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर ही है। उसकी संस्थापना संवत् १९६४ अक्षयतृतीया को हुई थी। वह अपने पचास वर्ष पूरे कर चुका है। सुवर्ण-जयन्ती मनाई जायगी अगले वर्ष।

आप पहिले पंजाब प्रतिनिधि सभा के प्रमुख स्तम्भ थे। म० मुन्शीराम जी की दाहिनी भुजा थे—संयुक्त प्रान्त में आकर आर्य प्रतिनिधि सभा के सर्वे-सर्वा हुए। अनथक प्रचारक, अपूर्व अद्वितीय महोपदेशक, शास्त्रार्थ-महारथी, आदर्श संन्यासी, कर्मयोगी थे। आपने अपने जीवन में आर्यसमाज के प्रचार के निमित्त चालीस सहस्र मील की यात्रा की होगी। लगभग छोटे मोटे ५००-६०० शास्त्रार्थ किये होंगे। आपने छोटे मोटे २०० ट्रेक्ट लिखे। यत्र तत्र १०००० व्याख्यान दिये होंगे।

आप जगरावाँ निवासी थे, अष्टवंशी सारस्वत ब्राह्मण थे। बड़े श्रीमान् घर में जन्म हुआ—आपका पूर्व नाम पं० कृपाराम था। आप काशी के प्रसिद्ध स्व० स्वा० मनीष्यानन्द जी के शिष्य थे। दर्शन-शास्त्रों में पटु थे—आपने कई दर्शनों तथा उपनिषदों का हिन्दी अनुवाद किया था—

काशी में तिमिर-भास्कर प्रेस चलाया था। विद्यार्थियों के सुभीते के लिए लागतमात्र पर संस्कृत की पुस्तकें काशिका महाभाष्य, दर्शनशास्त्र आदि देते थे। इस कार्य में उन्होंने अपने घर का एक लक्ष रुपया फूँका—

श्री पं० गंगदत्तशास्त्री आप ही के कारण जालन्धर के वैदिक आश्रम में आये थे। महात्मा मुन्शीराम ने स्वामी जी को लिखा था—स्वा० दयानन्द के पश्चात् एक तृतीयांश प्रचार का श्रेय स्वामी दर्शनानन्द को है—इनके पीछे इनके कनिष्ठ भ्राता स्वामी ब्रह्मानन्द जी ने महाविद्यालय को शक्ति भर सम्भाला।

(इनके विषय में विस्तृत रूप में महाविद्यालय के इतिहास में लिखा जायगा)

ता० २३ अक्टूबर—देहरे जिले में गांधी जयन्ती मनायी गई पर चन्दा न हो सका। होता कैसे लोगों के मन ही शान्त नहीं थे। हमने गांधी जयन्ती यहीं मनाली थी, ज्वालापुर में व्याख्यान भी दिया था।

ता० २४ अक्टूबर दशहरा—ब्रह्मचारियों के संमुख व्याख्यान "वर्तमान क्रान्ति का स्वागत करो।

ता० २६ अक्टूबर (४७)—कोरम (पर्याप्त उपस्थिति) न होने के कारण जिला कांग्रेस कमेटी की बैठक न हो सकी (देहरादून का समाचार).

ता० २८ अक्तूबर—(१) श्री भाई परमानन्दजी से भेट, जो गुरुकुल कांगड़ी में रुग्ण हैं।

(२) अफरीदियों ने काश्मीर पर आक्रमण कर दिया इसलिए काश्मीर महाराजा ने काश्मीर को इण्डियन यूनियन में मिलाने की प्रार्थना की। गवर्नर जनरल ने अस्थायी रूप से स्वीकार कर लिया और काश्मीर को फौजी सहायता भेज दी। वहाँ शान्ति-स्थापना होने के पश्चात् जनमत लिया जायगा। महाराजा ने शेख अब्दुल्ला को मंत्रिमण्डल बनाने के लिये कह दिया। काश्मीर में बड़ा उत्साह है—अफरीदियों से मुकाबला करने के लिये काश्मीरी जनता एकत्र हो रही है। स्वयंसेवक भरती हो रहे हैं।

ता० २६ अक्टूबर—(१) हवाई जहाजों द्वारा काश्मीर को फौज भेजी जा रही है।

(२) हैदराबाद अभी बीच में ही लटक रहा है। सुलह की बातचीत करने वाला पहिला प्रतिनिधि मण्डल निजाम ने तोड़ दिया। नया मण्डल भारत सरकार से बातचीत करेगा। भारत सरकार ने स्पष्ट कह दिया है कि वह अपने बीच में कोई स्वेच्छाचारी देशी राज्य को स्वतन्त्ररूप से रहने न देगी। या तो भारत में मिल जाओ अथवा एक वर्ष के लिये "स्टैण्ड स्टिल" के नियमानुसार सन्धि करलो। इस की भी शर्तें वे ही होंगी जो कि नवाब छतारी के प्रतिनिधि मण्डल के संमुख रक्खी गयी हैं।

३० अक्टूबर—महात्मा गांधी कहते हैं गवर्नर जनरल तथा भारतीय यूनियन ने ठीक किया कि काश्मीर को सहायता दी। वे कहते हैं यदि इस युद्ध में सारी की सारी भारतीय सेना मर जायगी अथवा शेख अब्दुल्ला आदि काश्मीर की रक्षा करते करते मर जायँगे तो मैं एक भी आँसू न ढालूँगा। महाराजा ने शेख अब्दुल्ला को राजभार सौंपने तथा शेख ने राजसूत्र सम्भालने में बड़ा ही गौरवपूर्ण कार्य किया। भारत में सर्वत्र हर्ष है कि काश्मीर भारतीय संघ में आगया।

३१ अक्टूबर—(१) जूनागढ़ का मामला चल ही रहा है। अस्थाई प्रजासरकार बढ़रही है, बारदौली जैसा अपूर्व युद्ध होरहा है। पर इस छोटी सी रियासत की गिनती ही क्या है। काठियावाड़ के वीर जगे।

(२) पश्चिम पंजाब से २३ लक्ष हिन्दू पूर्वी पंजाब तथा भारत में आचुके। पूर्वी पंजाब से ३७ लाख मुसलमान जा चुके। अभी कई लक्षों का अदल-बदल होगा। नवम्बर मास के अन्त तक पाकिस्तानी पंजाब तथा फ्रण्टियर में कोई हिन्दू न रहेगा। सिंध भी खाली होरहा है। पाकिस्तानी सरकार सब प्रकार के आश्वासन दे रही है फिर भी नहीं रुक रहे हैं। अब वे सिन्धियों को जबरदस्ती रोकना चाहते हैं। देखें।

(३) अमरीका के श्री होम्स (दो व्याख्यानों का सार) कहते हैं कि भारत विपत्तिजाल से पार होगया, अब इसका उज्ज्वल भविष्य है। वे कहते हैं कि (१) महात्मा गांधी का भारतीय जनतात्मापर अवर्णनीय प्रभाव (२) नेहरू मन्त्रिमण्डल की बुद्धिमत्ता जिससे भयङ्कर स्थिति काबू में आई और जिस शीघ्रता से काबू में आयी (३) पंजाब फ्रण्टियर आदि प्रदेशों में जनता जिस प्रकार लक्षों की

संख्या में इधर से उधर हो रही है—इन तीन बातों को देखकर चकित रह गया हूँ। इतिहास में इस प्रकार की क्रान्ति का उदाहरण नहीं देखा गया।

(४) एशियाई रीजनल कानफ्रन्स न्यू देहली में श्री जगजीवनराम के सभापतित्व में हो रही है।

(५) देहरादून पछवा में अभी तक अशान्ति चल रही है। पहिले यह प्रदेश शान्त था, अब अशान्त हो गया—मसूरी में तथा परवादून में मुसलमान नहीं रहे हैं। शहर के कैम्प में १००० शेष हैं। श्री लक्ष्मणदेव, श्री हुलासवर्मा, श्री कृष्णचन्द्र सिंगल के पत्र आये हैं।

(६) ज्वालापुर इलाके के ग्रामों में अब भी बेचैनी है। उस दिन एकड में फिर झगड़ा हो गया, ११ मुसलमान मारे गये।

(७) हरिद्वार के शरणार्थी यू० पी० के अन्यत्र कैम्पों में जारहे हैं। बिडला तथा हिन्दू पीडित संघ के कैम्प खाली हो गये। सरकार ने पंजाबियों को कह दिया है कि पूर्वी पंजाब चले जायँ। फ्रण्टियर वालों को वह इसी प्रान्त में कई जगह बसायेगी।

नवम्बर १, १९४७—श्री पं० हरिशङ्करशर्मा का "निराला" निकल गया। देखकर "मतवाला" की याद आ रही है। चार सम्पादक हैं।

❀ ❀ ❀ ❀

काश्मीर की स्थिति काबू में। हवाई जहाज द्वारा सेना जा रही है। डाक-तार विभाग भारत ने अपने हाथों में ले लिए हैं।

❀ ❀ ❀ ❀

देहरादून मुसलमानों से खाली होता जा रहा है।

❀ ❀ ❀ ❀

बहुत से पत्र आ रहे हैं जिनमें लिखा है कि मुझे त्यागपत्र (जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान पद से) नहीं देना चाहिए।

❀ ❀ ❀ ❀

नवम्बर २—म० खुशालचन्द जी सम्पादक "मिलाप" न्यू देहली से बातचीत "वर्तमान परिस्थिति" और काश्मीर के विषय में।

नवम्बर ३—श्री जवाहरलाल नेहरू प्रधान मंत्री इंडियन यूनियन का पाकिस्तान वालों को करारा जवाब। भगवानदास मुलतानी से देहरे जिले की स्थिति के विषय में बातचीत।

प्रान्त भर में ता० २७ अक्टूबर को यह प्रतिज्ञा ली गई।

संयुक्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी

प्रतिज्ञा

'हमने अंग्रेजों की गुलामी से छुटकारा प्राप्त कर लिया था, मुल्क की तरक्की का समय आ गया था, परन्तु अशान्ति ने हमारे पाँव में बेड़ियाँ डाल दी हैं जिससे जनता को बड़ा नुकसान पहुँच रहा है। इससे हम यह प्रतिज्ञा करते हैं कि अशान्ति की रोक-थाम में हम अपनी सारी ताक़त लगा देंगे।'

वह प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ और जमायतें, जो कल तक अंग्रेजों के साथ थीं और आजादी की लड़ाई तथा मुल्क की तरक्की की मुखालिफत करती आ रही थीं आज साम्प्रदायिक झगड़ों की आड़ में अशान्ति के हथियार से कांग्रेस पर हमला कर रही हैं। हमको विश्वास है कि कांग्रेस, जिसने ताकतवर अंग्रेजों को खत्म कर दिया है इनको भी खत्म कर देगी। कांग्रेस की ताक़त पर हम पूरा २ भरोसा रखते हैं।

'हमको महात्मा गाँधी, पं० नेहरू, पं० गोविन्दवल्लभ पन्त और कांग्रेस के दूसरे बड़े-बड़े नेताओं पर जिन्होंने कड़े वक्त में हमेशा हमारा साथ दिया है और अंग्रेजों की गुलामी से बचाने के लिये अपना तन, मन, धन सब कुछ न्योछावर कर दिया है, पहिले से भी कहीं ज्यादा विश्वास है। हमें यकीन है कि उनकी बताई हुई राह पर चलने से हमारी सारी मुसीबतें दूर हो सकती हैं।' हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम उनके आदेशों पर उसी तरह अमल करेंगे जिस तरह से आज से ३० साल पहिले से करते आये हैं। हम इस बात को मानते आये हैं कि हिन्दुस्थान के तमाम रहने वाले हिन्दू हों या मुसलमान, सिक्ख हों या ईसाई, सब एक कौम हैं। कोई दबाव हमको इस विश्वास से हटा नहीं सका। आज भी हम इस विश्वास पर कायम हैं और विश्वास रखते हैं कि हिन्दुस्थान सबका वतन है और सब हिन्दुस्थान के सपूत हैं। हिन्दुस्थान की तरक्की से सबकी तरक्की होगी और किसी एक सम्प्रदाय के नुकसान से सारे हिन्दुस्थान को नुकसान पहुँचेगा। हमको विश्वास है कि हिन्दुस्थान के वफादार बनने के लिए एक ही राष्ट्रीयता पर विश्वास रखना जरूरी है। हम अपने इस विश्वास को फिर दोहराते हैं।

अलगूरायशास्त्री
उपसभापति

नोट—यह प्रतिज्ञा २७ अक्तूबर से शुरू होने वाले पखवारों में सभाओं में ली जावेगी।

नवम्बर ४—कल लखनऊ में प्रान्त भर की कांग्रेस कमेटियों के मंत्री तथा प्रधानों की सभा होगी, पन्त जी का भाषण होगा।

—काश्मीर में आक्रमणकारी अफरीदी सेना की दुर्दशा हो रही है। स्थिति काबू में है। कई मुसलमान I.N.A. के लोग पकड़े गये हैं।

नवम्बर ५—श्री हुलास वर्मा जी को लिख दिया कि आगामी जिला काँ० क० मीटिंग में हमारा त्यागपत्र अवश्य प्रस्तुत करें।

नवम्बर ६—ता० १ नवम्बर से देहरे में करफ्यू नहीं रहा। जिला सर्वथा शान्त। स्वा० अर्जुनदेव से जिले बिजनौर की स्थिति ज्ञात हुई।

नवम्बर ७—श्री विद्याव्रत, श्री स्वा० भास्करानन्द श्री भवानीप्रसाद जी आदि से वर्तमान स्थिति के विषय में बातचीत।

नवम्बर ८, ९—पंजाब और फ्रण्टियर वालों की शिकायतें सुनीं, अनेक शिकायतें उचित जान पड़ती हैं।

नवम्बर १०—श्री भवानीदयाल संन्यासी का "प्रवासी" निकल आया। अच्छा पत्र है।

नवम्बर ११—बाग में जाते हुए मार्ग में बेल का काँटा लग गया, रात्रि भर बड़ा कष्ट रहा।

नवम्बर १२—जूनागढ़ में प्रजा की विजय हो गई। भारत सरकार ने अस्थाई रूप में राज्य का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया, अद्भुत कार्य हुआ, बिना रक्तपात के।

नवम्बर १५—हम संयुक्तप्रान्तीय सरकार द्वारा स्थापित प्रान्तीय शरणार्थी रक्षकदल के सदस्य नियुक्त हुए।

नवम्बर २१—जिला काँग्रेस की मीटिंग में हमारा त्यागपत्र प्रस्तुत हुआ निश्चय हुआ कि "शास्त्री जी से एक डेपुटेशन मिलकर बात करेगा", फिर त्यागपत्र आगामी मीटिंग में रक्खा जायगा।

नवम्बर २२, २३—आर्यभानु, कल्पवृक्ष, निराला आदि पत्रों को विशेष लेख भेजे।

नवम्बर २४—निजाम राज्य का नया डेपूटेशन फिर सरदार पटेल से मिला। देखें क्या होता है। आज देवोत्थान है-शुभ दिन है।

नवम्बर २८—(१) हैदराबाद राज्य के साथ "स्टैण्डस्टिल" पैक्ट एक वर्ष के लिए हो गया-शर्तें वे ही छतारी-डेपूटेशन वाली रहीं। माऊण्टबेटन ने स्पष्ट कह दिया कि छतारी-डेपूटेशन के साथ जो शर्तें तय हुई थीं उनमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

(२) श्री वीरेन्द्रनाथ मिश्र देहरादून से डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट का एक विशेष पत्र लाये जिसमें लिखा था कि डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट बहुत सी आवश्यक बातें करना चाहते हैं और ता० ३० को प्रान्तीय रक्षादल की मीटिंग भी है—

नवम्बर २९—डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पत्रानुसार मैं देहरे जा रहा हूँ—

नवम्बर ३०—देहरादून में प्रान्तीय रक्षादल जिला समिति में सम्मिलित हुए।

आत्म-कथा



पञ्चम भाग

संस्मरण



सर्वं कालवशादगात् स्मृतिपथं,
कालाय तस्मै नमः ।

(भर्तृहरि)

उस काल को नमस्कार जिसके वश में पड़ कर
हम सब कुछ भूल गये हैं ।

॥ ॐ तसत्त् ॥

* हैदराबाद का सत्याग्रह *

[१६३८-३६]

हैदराबाद के सत्याग्रह में आर्यसमाज के लगभग २०,००० सत्याग्रही पहुँचे थे। महाविद्यालय के लगभग ८० ब्रह्मचारी पहुँचे थे। तीन जत्थों में गये थे। स्वामी विवेकानन्द के नेतृत्व में, स्वामी आनन्द-प्रकाश के नेतृत्व में और श्री खुशालचन्द्र (आनन्द) के नेतृत्व में। इन तीनों जत्थों में लगभग छत्तीस ब्रह्मचारी थे। शेष भूतपूर्व ब्रह्मचारी अपने अपने स्थान से विभिन्न जत्थेदारों के नेतृत्व में गये थे। महाविद्यालय के जत्थे में जो ब्रह्मचारी गये थे उनमें प्रमुख श्री वाचस्पति शास्त्री, श्री प्रकाशवीर शास्त्री, श्री कपिलदेव शास्त्री, श्री भूदेव, श्री धर्मदेव आत्रेय, श्री हरिश्चन्द्र आत्रेय, श्री महावीर वर्मा, श्री हितपाल शास्त्री, श्री महेशचन्द्र शास्त्री, श्री विजयपाल आदि आदि।

मैं स्वयं तो न जा सका किन्तु पीछे से सत्याग्रहियों की खबर लेने के लिए गया और सर्वत्र जेलों में जाकर सत्याग्रहियों से मिला। बाहर अखबारों में डेक्कन क्रॉनिकल आदि में समाचार भेजता रहा। आर्यसमाज के समाचार पत्रों को भी लिखता रहा।

जेल में श्री चान्दकरण शारदा, श्री धुरेन्द्रशास्त्री आदि प्रमुख नेताओं से मिला, श्री महाशय कृष्ण आदि से तो मैं मनमाड में ही मिल गया था। हैदराबाद का सत्याग्रह एक अद्भुत सत्याग्रह था, कांग्रेस सत्याग्रहों से भी बढ़कर। कांग्रेस के सत्याग्रह में राजनैतिक स्वतन्त्रता की भावना थी तो आर्यों के सत्याग्रह में धार्मिक स्वतन्त्रता की भावना जग उठी थी। पंजाब का हिन्दी-रक्षा-समिति का सत्याग्रह (१८५७) भी बड़ा जोर दिखला रहा है, पर है यह भाषा-रक्षा के लिए। इसमें संस्कृति-रक्षा की भावना प्रबल है।

हैदराबाद सत्याग्रह में स्वा० विवेकानन्द जी का जत्था जो गया वह गुलबुर्गा में ही रहा। दूसरा जत्था स्वा० आनन्दप्रकाश तीर्थ का भी गुलबुर्गा जेल में ही रहा। पं० काञ्चीदत्त शर्मा इसी जत्थे में थे। कुछ ब्रह्मचारी हैदराबाद जेल में मिले, कुछ मेडक में, कुछ कहीं, कुछ कहीं। वैसे मैं सैकड़ों सत्याग्रहियों से मिला।

महाशय कृष्ण के जत्थे में ७०० व्यक्ति गये थे। यह जत्था मनमाड से स्पेशल ट्रेन से औरंगाबाद गया था।

औरंगाबाद जेल में भी महाविद्यालय के चौ० भगीरथलाल महेवड-निवासी आदि मिले।

श्री चान्दकरण शारदा करीमनगर में थे, श्री धुरेन्द्र शास्त्री नलगुन्द में थे, श्री चन्द्रमणि पालीरत्न और गुरुकुल के ब्रह्मचारी मेदक में थे।

मैं गुलबुर्गा, हैदराबाद, मेदक, नलगुन्द, उस्मानाबाद, औरंगाबाद आदि जेलों में गया था। गुलबुर्गा में वहाँ के कलक्टर श्री रिजवी ने मुझे बुलाया था। उनसे सत्याग्रह के विषय में कई घण्टे बातचीत हुई थी। इस यात्रा में गुलबुर्गा से लेकर वरंगल तक सी० आई० डी० बराबर लगे रहे। मैं मुलकी अर्थात् हैदराबाद का ही निवासी था इसलिए मुझे नहीं पकड़ा। हाँ जब हैदराबाद के स्टेशन पर उतरा तब पुलिस वाले थाने में ले गये और वहाँ मैं लगभग तीन घण्टे रहा। पीछे पूछताछ करके छोड़ा गया। पं० मुक्तिराम जी (अब के स्वा० आत्मानन्द जी सरस्वती) उस्मानाबाद जेल में थे। वहाँ मिलने गया तो ज्ञात हुआ कि उन्हें औरंगाबाद जेल में भेज दिया है। श्री जगदेव सिद्धान्ती उस्मानाबाद में ही थे।



मीर लायकअली को पत्र

[७-८-४८ को यह पत्र मीर लायकअली के पास भेजा गया था फिर ८-८-४८ को दूसरा पत्र भेजा गया—कोई उत्तर नहीं मिला]

To :—The Premier,
Nizam's State,
Hyderabad Deccan.

Sir,

I am a resident of Nizam's State. I left the State when I was of only thirteen and came to Northern India. Since then I am here in U.P. During these long years I had been visiting the state sometimes in order to see my relatives and kith and kins.

I had gone to Bombay in the last December to attend the All India Hindi Sahitya Sammelan (Hindi Literary Conference) there. Thence in the first week of January I went to Poona, thence to Dhond. I had a mind to go to Osmanabad via Barsi but hearing the tales of woe and plunder in the State I came back reluctantly.

My late lamented father Rao Sahib Shiriniwas Rao was the Superintendent of the Tulja Bhawani Temple and Estate at Tuljapur District Osmanabad. During his life-time my father had served the State in various capacities. My late uncle Rock Hanamant Rao had served the State in the Military Department under Captain Rock. My forefathers also had good relations with the State. My original name is Narsingh Rao but after coming to Northern India and after passing many Sanskrit Examinations my name was changed to Nardeva Shastri by 'Pandits. People on this side know me by this name only. When Arya Samaj had launched its Satyagrah in the State I had an extensive tour of the State. I had been the Principal of the famous institution called Mahavidyalya Jawalapur for many years. It is just last year that I retired.

Now-a-days where-ever I go I hear about the worst state of affairs in the State. the notorious Razakars are committing havoc everywhere.

They are killing and looting the Hindus outright. They are plundering and burning the villages. They are molesting helpless women and what not. Lakhs of Hindus have left the State. The Goondas and Razakars are responsible for the state of affairs. The military-men help them in these atrocities. How is this that the Nizam's Government watching all this in silent mood.

The Hyderabed State which once was renouned as Bhagyanagar, the city of fortune, has turned into lawless land. What does this all mean? Do the authorities think that they would be able to become independent by these fair or foul means. When the State is surrounded by Indian Union on all sides, to think of Independence is a foolish thing.

In fact they have learnt nothing from the History of the Nations. This is the people's age and the days of the Kings, Monarchs and Emperors are numbered. Don't they see that one by one the kings are falling. One by one the kings are going and leaving the States which they Governed. Those who mean to stick to their pet states are being turned out forcibly. Hyderabad State can not be an exception to this rule. Sooner the eyes of State authorities are opened the better for them. The cause of people must triumph in the end. Sooner or later the Responsible Government would be established in the State. I am grieved to here all these things regarding Hyderabed State. People on this side call it a Goonda Raj.

Late Nizam, father of the present Nawab, of Hyderabad was a kind-hearted man. He loved his subjects and people loved him much. The Hindus and Muslims of the State lived like brothers in his reign. People still remember him as their benefactor. It seems the present Nawab is surrounded by such officials who are working for their personal ends only, and keeping the Ala Hazrat in dark about the state-affairs in his State. Thus he is playing in the hands of Razakars who foolishly pose as the gardians and custodians of the State. This is ruining the State. These Razakars and Gundas forcibly convert the Hindus and shamelessly molest the helpless women. This means that the end of the Hyderabad State is near. In this people's age, in this age of democracy, they can never bring

Aurangzebi Rule in India. Even Aurangzeb could not finish the Hindus in his times. The religious fanaticisim would bring reaction in its own turn.

Accession to Indian Union is the only way which can save Hyderabad. There is no other way. Mr. Atley told the British Parliament in clear terms that they are not going to help the State in this matter. His blunt reply to Mr. Churchil must open the eyes of the Hyderabad Officials.

Sir, I wish that I should go to the State and see the things whith my own eyes. I am a resident of Hyderabed Deccan which is my birth place. Hence I crave your permission that I may be allowed to enter the State and visit important places therein so that I may be ablo to ascertain the true facts. When I get your permission I shall think of coming to the State. There should be no ban against my entrance. The Police or other officials should not harrass me.

As I have been a strict follower of Mahatma Gahdhi, therefore, there should be no aprpehension regarding me. I perfectly follow truth and non-violence as my guide.

Hoping to be excused for what I have written as all is written as a well-wisher of my State.

I am, Sir,
Yours faithfully,

NARDEVA SHASTRI
Ex-Principal, Mahavidyalya
Jawalapur, (Hardwar U.P.)

8-8-48

❀ ॐ ❀

मालव-मही का मुकुट-मणि माण्डवदुर्ग

स्थानानि तानि खलु सन्ति, न ते मनुष्याः ।

स्थान तो वे ही हैं, पर उस समय के वे मनुष्य कहाँ हैं ?

आचार्य श्री नरदेवजी शास्त्री, वेदतीर्थ

(इन्दौर की 'वीणा' जून–जुलाई १९४८)

[१]

माण्डू कहिये, प्राचीन नाम से मण्डप कहिये, माण्डव कहिये, है एक ही बात। है कोई २३०० वर्ष पूर्व का यह दुर्ग जिसका परकोटा ४२ मील लम्बा था, जिसमें सात लक्ष नर-नारी बसते थे, जिसमें बड़े २ बीस तालाब थे। जिसमें किसी समय भोजराजा के गुरु गोविन्दभट्ट का गुरुकुल अथवा विश्वविद्यालय था, जिसमें दशसहस्र छात्र विद्याध्ययन करते थे। उसी स्थान पर अब मुहम्मद खिलजी की कब्र है, उसी के सामने विशालकाय जामा मसजिद है, जो 'बाप की कचहरी' और खिलजी की कब्र 'बेटे की कचहरी' के नाम से प्रसिद्ध है। पास ही चरवा मसजिद है, जिसमें इस समय माण्डू में उपलब्ध मूर्तियों का संग्रह है।

इस किले में जो भी रहने आता था अथवा जो भी बसने आता था, उसको प्रति गृह से एक ईंट और एक रुपया मिलता था—इसीसे उस समय की इस नगर की श्री का पता चल सकता है।

श्री गोविन्द भट्ट के विश्वविद्यालय के विषय में बातचीत के प्रसंग में श्री पं० विश्वनाथ मालवीय सुपरवाइजर ने हमको भोज के ताम्रपत्र के दो श्लोक बतलाये—

भोज ने अपने गुरु गोविन्दभट्ट से कहा—

वाताभ्रविभ्रममिदं वसुधाधिपत्यम् ।
आपातमात्रमधुरो विषयोपभोगः ॥
प्राणास्तृणाग्रजलबिन्दुसमा नराणाम् ।
धर्मः सखा परमहो परलोकयाने ॥

अर्थ—यह जो पृथ्वी का आधिपत्य है, स्वामित्व है, यह तो एक वायु के झोंके के सदृश है। ये जो विषयोपभोग हैं वे ऊपर ऊपर से रमणीय प्रतीत होते हैं, पर परिणाम में दुःखद ही हैं। मनुष्यों के प्राण ऐसे हैं जैसे तृण के ऊपर का जलकण, न जाने कब नीचे गिर जाय। वस्तुतः परलोक में धर्म ही एक सच्चा मित्र है—

भ्रमत्संसारचक्राग्रधाराधारामिमां श्रियम् ।
प्राप्य ये न ददुस्तेषां पश्चात्तापः परं फलम् ॥

जोर से घूमती हुई संसार-चक्र की धारा के सदृश यह श्री चंचल है, चला है, चपला है। इसको प्राप्त करके जो लोग दान नहीं देते, उसका फल यही है कि फिर पश्चात्ताप करें।

ऐसा कह कर भोजराजा ने इस विश्वविद्यालय के नाम से कई गाँव कर दिये, जो कि नालछा आदि नाम से अब भी प्रसिद्ध हैं।

इस माण्डू में नीलकण्ठ नामक परमरमणीय स्थान है। इसके ऊपर निम्न शेर खोदा गया है—

तवाँ कर्दम तमामि उम्र, राह मसरूफ आबो गिल।
कि शायद एकदमे साहिब, दिले इन्साँ कुनद मंजिल॥

कारीगर कहता है कि मेरी समस्त आयु मिट्टी और पत्थर की चिनाई में गई। पर मैं यह समझता हूँ कि यदि किसी समय एक भी महात्मा, एक क्षण के लिये भी आकर यहाँ विश्राम करेगा, तो मैं अपनी इस चिनाई को, मेरे परिश्रम को, सफल समझूँगा।

आजकल इस नीलकण्ठ की पूजा-अर्चा-व्यवस्था श्रीराम-मन्दिर के महन्त श्री रामनारायणदासजी के हाथ में है। उन्होंने भर्तृहरि के वैराग्य-शतक के निम्न श्लोक वहां टँगवाये हैं—

१—धैर्यं यस्य पिता क्षमा च जननी......　　२—आयुर्वर्षशतं नृणां परिमितम्......
३—आयुः कल्लोललोलम्......　　४—यावत्स्वस्थमिदं शरीर......

हमने महन्त जी से कहा कि इन श्लोकों को संगमरमर के पत्थरों पर खुदवा कर दीवार में लगवा देवें। महन्त जी ने मान लिया है।

माण्डू सन् १३०० में मुसलमानों ने छीन लिया था—१७३५ में मरहठों ने उनसे छीना। २००० वर्ष पूर्व तो यही माण्डू मिहिर (मौर्य) शुङ्ग, कण्व, शातवाहन. चन्द्रगुप्त आदि की परम्परा के हाथों में था। जब यह मुसलमानों के हाथों में गया, उन्होंने उसका नाम शादियाबाद रक्खा। मण्डप शुभ-कार्य के लिए बनाये जाते हैं, उनमें आनन्दमङ्गल होता है, इसलिए मण्डप और शादियाबाद दोनों शब्द विभिन्न भाषा के रहते हुए भी समानार्थक ही हैं।

श्री याजदानी एम० ए० डाइरेक्टर ऑर्चियालॉजियन (निजाम गवर्नमेंट) और गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया के मुसलिम शिला-लेखों के विभागाध्यक्ष ने इस विषय में एक सचित्र पुस्तक प्रकाशित की है—Mandu-The city of joy. माण्डू-आनन्दनगर।

माण्डू में अकबर का शिला-लेख मिलता है—जिसका अभिप्राय यह है कि—

"लो, इस भवन में उल्लू ने अपना घोंसला बना लिया है—शिरवनशाह के ऊँचे महल में। वह चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा है कि वह तेरी शाने-शौकत कहाँ गई—वह तेरा वैभव कहाँ नष्ट हो गया?"

इस पुस्तक में श्री याजदानी साहब ने इस स्थान का मुसलिम-दृष्टि से विचार किया है और एकतरफा गीत गाये हैं।

श्री पं० विश्वनाथ मालवीय सुपरवाइजर माण्डू-दुर्ग ने "ग्लिम्पसेस ऑफ माण्डू" माण्डू के छुट-पुट संस्मरण नाम से एक छोटी पुस्तिका तैयार की है, उससे इस प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान का यथा-रीति पता लग जाता है। वह बड़ा इतिहास तैयार कर रहे हैं, जो कि तैयार हो जाने पर धार-राज्य-दरबार-द्वारा प्रकाशित होगा।

हमने श्री विश्वनाथ मालवीय जी से कहा कि मुसलिम बादशाहों ने हमारे पूर्वजों के स्मृति-चिह्नों को पूर्ण-रूप से विकृत कर डाला और उनको अन्य रूप दे दिया। यहाँ हिन्दू राज्य है, इसके रूप को ठीक क्यों नहीं करते ?

विनम्र उत्तर मिला कि, "एक ने गलती की, फिर उसी प्रकार की गलती हम क्यों करें ? उनके मिटाने से स्मृति-चिह्न नहीं मिट सकते, अपितु पूर्वजों के वे स्मृति-चिह्न सहस्र मुख से बोल रहे हैं।"

माण्डू के विषय में नवीं सदी के पूर्व का पूरा इतिहास नहीं मिल रहा है, पर कन्नौज के प्रतिहार राजा तथा उनके गवर्नर श्री सरमन के शासन-समय में यह स्थान महत्व को प्राप्त हो गया। उस समय इसका नाम मण्डपिका राज्य था। मण्डपिका, मण्डप दुर्ग, मण्डपाचल, मण्डपाद्रि, मण्डपतुङ्गदुर्ग, मण्डपगिरि, आदि इसी के पर्याय-वाचक नाम हैं।

इस माण्डू में पचासों स्थान देखने योग्य हैं, वैसे चलती दृष्टि से भी देखा जाय, तो पूरे तीन दिन चाहिएँ। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाय तो पूरे दो मास चाहिए।

इस पर्वत से नीचे नेमाड़ का दृश्य देखा जाय तो ठीक वैसा ही रमणीय दृश्य है—जैसे मसूरी पर्वत पर खड़े होकर देखने वाले के लिए नीचे देहरे का दृश्य !

इस पर्वतदुर्ग में खुरासानी, बड़ी ईमली, खिरनी, सागौन, आँवला आदि के वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं। इस माण्डू में बड़े-बड़े तालाब हैं जिनसे जनता को जल मिलता था। छोटे-बड़े मिला कर १२० तालाब थे, ऐसा कहते हैं। कहीं जल-प्रबन्ध की नालियों को देख कर मोहंजोदड़ो (सिन्ध का प्रसिद्ध नगर) की सभ्यता का स्मरण हो आता है।

श्री विश्वनाथ मालवीय जी ने हमें कुछ सिक्के भी दिखलाये, जो कि निज़ामशाही के सिक्कों से मिलते जुलते हैं।

यहाँ हमने भीलों के दो चित्र देखे। एक में एक भील ने अकेले ही एक शेर को मारा है इस बात का द्योतक चित्र है। दूसरे चित्र में दिखलाया है कि भील ने कई चोरों को पकड़ा है। इस समय इस किले में भीलों की ही बस्तियाँ तथा ग्राम हैं। भीलों की आठ पाठशालाएँ हैं। पाठशालाएँ सायंकाल को केवल एक घंटे के लिये लगती हैं।

श्रीराम-मन्दिर की ओर से एक 'श्रीराम-विद्यालय' चलता है जिसमें संस्कृत के छात्र विद्याध्ययन करते हैं और संस्कृत की परीक्षा देते हैं। श्री महन्त जी ने अब रामनवमी का मेला लगाना प्रारम्भ किया है, इससे ग्रामीण जनता में अपूर्व जागृति हो गई है।

इसके महन्त श्री ऋषिकुल हरिद्वार के स्नातक हैं। बड़े विद्वान् विनम्र दृढ़ अध्यवसायी पुरुष हैं। आपका शुभ नाम है श्री महन्त रामनारायणदास। आप उदार विचार के महन्त हैं।

सरसरी दृष्टि से हमने जो स्थान देखे उनके नाम ये हैं।

१—बाज बहादुर की कब्र (सन् १५०८)
२—होशंग की कब्र (१४३६)
३—जामी मसजिद (१४५४)
४—मुहम्मद खिलजी की कब्र (अशरफी महल) (१४४३)
५—जहाज महल (१४६६–१५००)
६—तवेली महल (१४०६–१५००)
७—हिण्डोला महल (१४०५)
८—मुन्ज तालाब
९—कपूर तालाब
१०—श्री नीलकण्ठ (१५७४)
११—रूपमती महल इत्यादि

इसके अतिरिक्त, रेवाकुण्ड, प्रतिध्वनि-मन्दिर (जैसा बोलो वैसा सुनो), दर्याखाँ की कब्र, एक खम्बा, जूना माण्डव, सोनगढ़, मक्खी महल, कस्तूरी महल, चम्पा बावड़ी, मञ्च शिकार, छप्पन महल, सागर तालाब, सात कोठरी आदि। मुसलमानी बादशाहों ने हजार-हजार आघात भले ही किये हों, पर आघात-प्रतिघातों में से आज भी हमारी सभ्यता और संस्कृति बोल रही है।—स्पष्ट बोल रही है, यह आश्चर्य की बात है—

भर्तृहरि ने ठीक ही कहा है—

सा रम्या नगरी, महान् स नृपतिः, सामन्तचक्रं च तत्।
पार्श्वे तस्य च सा विदग्धपरिषद्, ताश्चन्द्रबिम्बाननाः॥
उन्मत्तः स च राजपुत्रनिवहः, ते बन्दिनस्ताः कथाः।
सर्वं यस्य वशादगात्स्मृतिपथं, कालाय तस्मै नमः॥

वह सुन्दर नगरी, वह बड़ा राजा, वह उनका सामन्तमण्डल, वह पण्डित-परिषद्, वे सुन्दर स्त्रियाँ, वह मदोन्मत्त राजपुत्रों का झुण्ड, वे स्तुति-पाठक और वे उनकी कथाएँ न जाने कहाँ विलीन हो गईं—जिस काल के कारण ये बातें विस्मृति-पथ को प्राप्त हुईं, उस कराल काल को बार-बार नमस्कार।

माण्डव के ऐतिहासिक उत्थान-पतन की चर्चा अगले अंक में की जायगी।

[२]

पूर्व लेखाङ्क में हमने माण्डव के विषय में विहङ्गम-दृष्टि से लिखा था, इस लेखाङ्क में विशेष-दृष्टि से लिखेंगे।—यह माण्डू या माँडव धार से २२ मील के अन्तर पर आग्नेय कोण में है। यहाँ बी० बी० सी० आई० (रेलवे) के महू, इन्दौर अथवा रतलाम स्टेशन से पहुँच सकते हैं। यह तो हम कह ही चुके हैं कि गौरी बादशाहों ने इनका नाम शादियाबाद रक्खा था। जब प्रतिहारों (कन्नोज) का पतन हुआ, तब मालवा के परमारों ने उनकी अधीनता में न रह कर अपने आपको स्वतन्त्र घोषित कर दिया। सियक परमार तथा उनके उत्तराधिकारी मुञ्ज भोज, उदयादित्य के समय इनका प्रभाव बहुत बढ़ा और राज्य-विस्तार भी बढ़ा। भोज (१०१०) ने मण्डू में संस्कृत का एक बड़ा विश्वविद्यालय खोला था, इसीसे स्पष्ट है कि उस समय परमारों का वैभव उत्तरोत्तर बढ़ रहा था। इसी समय सहस्रों मन्दिरों का निर्माण हुआ और सुन्दर कलायुक्त प्रासादों और भवनों की संख्या भी बढ़ी। मध्यकाल में माण्डू जैनियों का तीर्थ-स्थान भी रहा है। १३०० में यहाँ ३०० जैन मन्दिर थे। इनके कलश स्वर्णमय थे। और सबके सब मन्दिर श्वेताम्बरों जैनों के थे। श्री जयसिंह देव परमार के जैन-मन्त्री पेथादकुमार ने सागर तालाब के किनारे १८ लक्ष रु० खर्च करके एक जैन-मन्दिर बनवाया था। इस मन्दिर के ७२ सुवर्ण-कलश थे। इस मन्दिर का नाम था—आदिनाथ। तेरहवीं शताब्दी में माण्डू की उन्नति की पराकाष्ठा थी। इस समय उत्तर-भारत में यवनों के आक्रमण हो रहे थे, इसलिये धनाड्य, ऐश्वर्य-सम्पन्न लोग सुरक्षा के विचार से माण्डू में बसने लगे। पृथ्वीराज चौहान और मुहम्मद गौरी के संघर्ष में पृथ्वीराज का पतन हुआ, और इसका प्रभाव यह रहा कि उज्जैन से राजधानो उठकर धार में बनी, वहां से फिर माण्डू गई। यह हम पूर्व लिख चुके हैं कि इसकी लोक-संख्या ७ लक्ष थी। यह है सन् १२७० की बात।

अब यवनों के आक्रमण धीरे-धीरे मालवा पर भी होने लगे। मुहम्मद गौरी के सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक ने उज्जैन तक धावा बोल दिया (११९६)। इसके पश्चात् देहली के सुलतान अल्तमश ने धार के महाराज देवपालदेव परमार को सुलह के लिये विवश किया और उसको (१२३१-३२) एक प्रकार के सामन्त बना डाला। पर इससे माण्डू का कुछ बिगड़ा नहीं और परमार राजा अपनी स्वतन्त्र-वृत्ति ही रखते रहे। यह बात उस समय के (१३०४) दिल्ली सुलतान अल्लाउद्दीन खिलजी को सहन नहीं हुई और उसने अपने सेनापति ऐल-उल-मुल्क मुलतानी को आज्ञा दी की माण्डू पर कब्जा करे, इसप्रकार एक लक्ष सेना और चालीस सहस्र अश्वसेना के बल पर माण्डू पर कब्जा किया गया। उस समय के माण्डू के मंत्री सेनापति कोकादेव की करारी हार हो गयी। यह समय द्वितीय भोज का था। इस प्रकार समस्त अपरिमित वैभव यवनों के हाथ में पड़ा और हिन्दू-संस्कृति के चिन्हों को नष्ट करने का उद्योग प्रारम्भ हुआ। और सौ वर्ष पश्चात् उन्हीं भग्न नष्टप्राय भवनों, प्रासादों, मन्दिरों की सामग्री से यावनी-सभ्यता के प्रासाद मन्दिर, तथा भवनों का निर्माण होने लगा। यह निर्माण किसी नवीन स्थान पर नहीं, अपितु, उन्हीं स्थानों पर, उन्हीं सामग्रियों से, पर यावनी-ढंग से किया जाने लगा। १३९८ में तैमूर के आक्रमण से देहली की सुल्तान-शाही समाप्त हो गयी। इस क्रांति में मालवा के गवर्नर दिलावर खाँ गौरी, गुजरात और खानदेश के गवर्नर स्वतन्त्र (१४०१) बन बैठे। दिलावर खाँ का पुत्र होशंगशाह ने माण्डू के महत्व का ध्यान रखकर इसे अपनी राजधानी बनाया और

स्वयं मालवा का प्रथम सुलतान बना। इसके तथा इसके चार उत्तराधिकारियों के समय में माण्डू का फिर भाग्योदय हुआ और इस समय जो यावनी-कला-कौशल के भग्नावशेषों के अंश दिखलायी पड़ते हैं, वे सूचित कर रहे हैं कि उनका समय क्या था?

यद्यपि दिलावर खाँ की राजधानी धार में थी, तथापि वह माण्डू में ही रहता था। जामा-मस्जिद को इसीने बनाया। (१४०१) पहले केवल पुरुष ही इसमें प्रार्थना करते थे, फिर यह महल महिलाओं की प्रार्थना के भी काम में आने लगा। इस मस्जिद के स्तम्भों पर दृष्टि डालिये तो पता चलेगा कि ये स्तम्भ हिन्दू काल के आदर्श हैं।

इसका पुत्र होशंगशाह लोकप्रिय सुल्तान था। इसने अपने राज्य का विस्तार भी किया और धाक भी बैठाई। गुजरात, देहली, जौनपुर, गुलबर्गा तक धावे बोल दिये। १४०५ में गुजरात के मुजफ्फरशाह ने माण्डू पर धावा बोल दिया, और होशंग को कैद कर लिया। यह गुजरात में एक वर्ष तक कैद रहा और इसके बाद किसी प्रकार मुजफ्फरशाह को प्रसन्न करके फिर माण्डू आगया। इसके समय में शत्रुओं ने कई बार माण्डू पर आक्रमण किये एक बार तो होशंगशाह ने ऐसा साहस किया कि व्यापार के मिष से उड़ीसा तक जा पहुँचा और वहां के राजा को पराजित करके ७५ हाथी ले आया। इसने अपने राज्य में, औषधालय, पाठशालायें, और विश्रामस्थानों का एक जाल-सा बिछा दिया। विशेष बात थी कि इसकी संस्कृत-साहित्य में पूर्ण अभिरुचि थी। यवनों के आक्रमणों के समय में जो विद्वान अथवा जो धनाढ्य जैन माण्डू से चले गये थे, उनके वशंजों को लाकर फिर बसाया और उन्हें उच्च पद पर आरूढ़ कर बड़े-बड़े खिताब या उपाधियां दीं। होशंगाबाद इसी का बसाया हुआ है। होशंगाबाद से माण्डू आते समय मार्ग में इसकी मृत्यु हुई। इसी के नाम से माण्डू में इसकी कब्र भी है। इसने अपने जीवन-काल में जिन प्रासादों, भवनों, मस्जिदों, का प्रारम्भ किया था, उनकी पूर्ति इसके बाद मुहम्मद खिलजी प्रथम और उसके उत्तराधिकारी गयासुद्दीन खिलजी के समय में हुई। मुसलमानों के समय में माण्डू के सभी मुसलमान शुक्रवार के दिन मस्जिद में प्रार्थना के लिये आते थे।

होशंग के पश्चात् उसका पुत्र गाजी खाँ सुलतान बना। इसका दूसरा नाम था मुहम्मद गौरी। यह निर्बल तथा अयोग्य शासक था। इसलिये होशंग के विश्वासपात्र जीजा मुहम्मद खिलजी ने राज्य को हथिया लिया। इसके समय में माण्डू की ख्याति इतनी बढ़ी कि इजिप्ट (मिश्र) तथा समरकन्द तक के दूत हिण्डोला-महल में दिखाई पड़ने लगे, और माण्डू यावनी-संस्कृति सभ्यता, धर्म-कला-कौशल का प्रधान केन्द्र समझा जाने लगा। खिलजी तो लड़ाई तथा धावे में ही रहता था। इसके पास एक लक्ष घुड़-सवारों की सेना थी। मेवाड़ के धावे में वह कभी आगे बढ़ता तो कभी हार खा कर पीछे हटता। यहाँ तक की अंत में मेवाड़ की एक विजय के उपलक्ष्य में खिलजी ने एक सात मञ्जिल का विजयस्तम्भ बनाया था। उधर चित्तौड़ के राणा ने भी चित्तौड़ में अपना विजय-स्तम्भ खड़ा कर दिया। खिलजी के राज्य में सर्वत्र सब प्रकार की उन्नति होने लगी और साथ ही माण्डू का ऐश्वर्य भी बढ़ा। अशरफी-महल में इसी खिलजी की कब्र है। १४६६ में इसका पुत्र गयासुद्दीन सुलतान बना। इसने चित्तौड़ के राणा रायमल के साथ लड़ाई में करारी हार खायी। इसके शेष जीवन में कोई विशेष घटना नहीं हुई।

इसके महल में १५००० युवतियाँ थीं। इनके लिये मुञ्ज-तालाब और चम्पा बावड़ी के पास बड़ा महल खड़ा किया था। आश्चर्य है कि यह ८० वर्ष तक की आयु का उपभोग ले सका। अंत में इसके लड़के ने इसे विष देकर मार डाला। सभी इतिहासकारों का मत है कि गयासुद्दीन दयालु तथा न्यायप्रिय शाह हुआ। जहाज-महल, हिण्डोला-महल तबेला महल कपूर तालाब तथा मुञ्ज तालाब इसीने बनवाये।

गयासुद्दीन के पश्चात् अपनी उम्र के ५१ वें वर्ष में नासिरुद्दीन सुल्तान बना। वह बड़ा अनाचारी और अत्याचारी सुल्तान था। इसकी क्रूरता का अन्त नहीं था। यह कालियादह–महल उज्जैन में मरा। इसीने ५ करोड़ रुपया खर्चा करके बाज बहादुर का महल बनवाया। नासिरुद्दीन के पश्चात् उसका पुत्र मुहम्मद द्वितीय (१५११) सुल्तान हुआ। गुजरात के सुल्तान बहादुर शाह ने (१५३१) माण्डू पर धावा बोल दिया। मुहम्मद परास्त हुआ और कैद किया जाकर गुजरात के मार्ग में दोहद में मारा गया और एक तालाब के किनारे दफनाया गया। बस उसकी मृत्यु के साथ ही खिलजी-वंश की समाप्ति हुई। बहादुर शाह अपने साथ अनन्त धनराशि ले गया। जब यह हुमायूँ द्वारा परास्त हुआ, तब यह इतना घबरा गया कि इसने मक्का में रहने का निश्चय किया और तीन-सौ बड़ी-बड़ी लोहे की सन्दूकों में कोष भर कर अपने मित्र कुन्स्तुनतुनियां के सुल्तान के पास भेज दिया। पर वह न मक्का गया और न वह कोष वहां से माण्डू ही लौटा।

हुमायूँ ने मन्दसौर में गुजरात के बहादुरशाह को हराया और तीन दिन तक वह माण्डू को लूटता रहा। पर जब वह किसी अत्यन्त आवश्यक कार्य से आगरे गया, तो पीछे से मालवे में घोर अराजकता फैल गयी। इस अवसर से लाभ उठा कर खिलजी सुलतान के एक दास मल्लू खाँ ने मुगल-अधिकारियों से सत्ता छीन ली, और सुल्तान कादिरशाह बन बैठा। छह वर्ष पश्चात् शेरशाह ने इसे परास्त किया और माण्डू सूर-राज्य का अंग बना। जब सूरी-शक्ति का ह्रास हुआ, तो सुजाअत खाँ का लड़का बाज बहादुर मालवे का सुल्तान बना। यह गानविद्या का अत्यन्त रसिक था। इसके दरबार में ४०० प्रसिद्ध गायक रहते थे। इसके राज्य में छह वर्ष तक बड़ी शान्ति रही। इसने रूपमती नाम की एक अत्यन्त रूपवती कुमारी से विवाह किया था। माण्डू ने इस प्रकार के प्रेममय-दम्पति कभी नहीं देखे थे। आमद खाँ ने बाज बहादुर शाह को परास्त किया और रूपमती को लेजाना चाहा, पर उसने विष खाकर आत्म-हत्या कर ली। बाज बहादुर दस वर्ष तक इधर उधर भटकता रहा, पर पीछे से उसने अकबर से दया–भिक्षा मांगी और वह २००० का मनसबदार बना दिया गया। रूपमती और बाज बहादुरशाह के अनन्य प्रेम की कई कहानियां प्रचलित हैं और आज भी रूपमती के महल में जाने पर इन प्रेमी–दम्पति का आभास सा होने लगता है। माण्डू में जो नीलकण्ठ नामक स्थान है, वहाँ अकबर के गवर्नर शाहबुदगाह ने एक मुगल कला-युक्त प्रासाद बनाया केवल आमोद-प्रमोद के लिये। उसकी दीवार पर माण्डू से खानदेश पर धावा करने के लिये अकबर के जाने और लौट आने के समय के शिला-लेखों में खोदे गये हैं।

अकबर तथा जहाँगीर ने इन स्थानों का जीर्णोद्धार किया था। जहाँगीर यहां के दृश्यों पर इतना मुग्ध हो गया था कि, हिण्डौला महल के उत्तर में उसने अपने लिये नाहरी–झरोखा नामक एक सुन्दर

महल बनवाया। इस स्थान का बड़ा महत्व है। जब इसका पुत्र खुरम दक्षिण को जीत कर लौटा तब इसी स्थान में उसका स्वागत किया गया और उसको शाहजहाँ की पदवी दी गई। दक्षिण के राजाओं से लाई हुई ६७८०००० रु० की धनराशि, और ४००० हाथियों को इसी के आंगन में खड़ा किया गया था, जिसको इसने अपने प्रासाद के छज्जे से देखा।

यहीं जहांगीर ने अपनी वर्ष-गांठ धूमधाम से मनायी और वह सुवर्ण से तोला गया। इङ्गलैण्ड के राजा जेम्स (प्रथम) के दूत सर थाँमसरो भी इस अवसर पर राजा की ओर से विविध प्रकार की भेंट लेकर उपस्थित हुये थे। नूरजहाँ ने भी यहाँ शबीबरात मनायी थी और यहाँ इस अवसर पर दो शेर भी मारे।

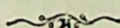
शाहजहाँ भी माण्डू में कुछ काल तक ठहरा, पर पीछे से उसने अपने पिता के विरुद्ध बगावत कर दी। औरंगजेब ने भी माण्डू के द्वार बनवाये, जो पीछे जाकर आलमगीर गेट कहलाये। औरंजेब ने १६६८ में इस दुर्ग के परकोटे की मरम्मत करायी थी। इसके पश्चात् उत्तराधिकारी बहादुर-शाह भी कुछ दिन के लिये यहाँ आकर ठहरा था।

जब मुगल-साम्राज्य का पतन हुआ तब दक्षिण के मरहठे जोर पर थे। पवाँर, होल्कर, सेन्धिया की सहायता से बाजीराव पेशवा ने अंतिम मुगल-गवर्नर दयाबहादुर को १७२८ में तिरला नामक स्थान में परास्त किया। इस प्रकार यह माण्डू धार के पवाँर-वंश के हाथों में आया। धार-दरबार माण्डू के ऐतिहासिक-स्थानों की सुरक्षा के निमित्त प्रतिवर्ष बहुत धन व्यय करते हैं। माण्डू धार राज्य का गौरव-स्थान है—मालवे का मुकुट-मणि है।

संक्षेप में यह है माण्डू का इतिहास, जो कि श्री विश्वनाथ मालवीय सुपरवाइजर की पुस्तिका के आधार पर लिखा गया है। सारांश, स्थान वे ही हैं पर न जाने उस समय के वे महा-महिशाली पुरुष कहाँ हैं ? क्या संसार में कोई स्थिर रहा है ? क्या स्थिर रह भी सकता है ?

नोट—इन्दौर आने के पूर्व हम बम्बई हिन्दी साहित्य सम्मेलन में गये थे। वहाँ से पूना होकर खाण्डवा आये। खाण्डवा से इन्दौर गये। पूने में खूब सैर की, पं० गोपीवल्लभ उपाध्याय बराबर साथ रहे। हैदराबाद इसलिये नहीं गये कि हमारे गाँव वालों ने हमको वहाँ जाने से रोका था। वहाँ बड़े भारी उपद्रव हो रहे थे।

—नरदेवशास्त्री



शासकवर्ग को मर्यादाएँ बताना पत्रकार का कर्तव्य

पत्रकार लक्ष्मी के दास न बनें

संयुक्त प्रांतीय हिन्दी पत्रकार—सम्मेलन (मेरठ) के स्वागताध्यक्ष

आचार्य श्री नरदेवशास्त्री का भाषण

(पंचायती राज १२ दिसम्बर १९४८)

सोलहवें हिन्दी साहित्य सम्मेलन (वृन्दावन) के अवसर पर कतिपय मित्रों ने श्री बाबूराव पराडकर सम्पादक 'आज' काशी की अध्यक्षता में सम्पादक-सम्मेलन का आयोजन किया था। उस समय मैं इस सम्पादक सम्मेलन का मंत्री चुना गया था। इससे अगले वर्ष भरतपुर सम्मेलन में श्री पं० बनारसीदास चतुर्वेदी मंत्री चुने गये थे। "स्वल्पारम्भः क्षेमकरः" इस न्यायोक्ति के अनुसार ही दो-तीन वर्ष यह कार्य चला। फिर हिन्दी सम्पादकों की अर्थदरिद्रता, अनवधानता आदि के कारण केवल ४० ही सम्पादक इसके सदस्य रह गये थे। यह सम्मेलन हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साथ दो तीन वर्ष चल कर बन्द हो गया। कई बार प्रयत्न किया गया किन्तु दरिद्र भारत में सम्पादक-सम्मेलन न चेत सका। वर्षों पश्चात् अब ४-५ वर्ष से पत्रकार सम्मेलन के रूप में कार्य चमक निकला है। अखिल भारतवर्षीय पत्रकार सम्मेलन भी चेत गया है पर वह केवल हिन्दी पत्रकारों का ही सम्मेलन नहीं है, हाँ प्रान्तीय हिन्दी पत्रकार सम्मेलन अवश्य ही चेत गये हैं।

भारतवर्ष की स्वतन्त्रता के साथ ही भारतवर्ष के सम्पादकों की स्थिति गति-विधि में अपेक्षित परिवर्तन हो गया है। भारतीय सम्पादक-समाज दासता के युग में ब्रिटिश सत्ता का दास तो था ही पर उसको धनपतियों की दासता में भी रहना पड़ा, इस प्रकार दुहरी दासता में भी जिन मनस्वी पत्रकारों और सम्पादकों ने भारतीय स्वतन्त्रता के लिए प्राणपण से चेष्टा की उनके प्रति आज भारत अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट कर रहा है। भारतवर्ष के हृदय-सम्राट् स्व० लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक तथा योगिराज अरविन्द ने उस समय पत्रकारों का मार्ग दर्शन किया था, जब कि केवल "स्वराज्य" शब्द के उच्चारण मात्र के लिये बड़े से बड़ा प्रायश्चित्त भोगना पड़ता था। उनकी ही परम्परा का अनुसरण कर संसार भर के पत्रकार-मूर्धन्य महात्मा गांधी ने भी वह कार्य किया जिसको देख कर संसार चकित है। उन्होंने भारतीय पत्रकारों का मस्तक संसार में ऊँचा उठा दिया।

प्रारम्भिक दशा में सम्पादक तथा पत्रकारों को अर्थ-दरिद्रता के कारण बड़ा कष्ट उठाना पड़ा इसीलिए पचासों सम्पादक पत्रकार लक्ष्मी के उपासक बन गये, इसलिए उनकी लेखनी लक्ष्मी-पुत्रों की

उपासना में लगी रही। इस से उनकी लेखनी का ओज जाता रहा अथवा कम हो गया। अनेक पत्रकार तत्कालीन ब्रिटिश-सत्ता की महत्ता के गीत गाने में लग गये थे, इसलिए जनता-जनार्दन के हृदय में उनको स्थान नहीं मिला, हाँ जो विपरीत परिस्थितियों में भी अपने उद्दिष्ट मार्ग पर डटे रहे, जिन्होंने सरस्वती-आराधना का असिधारा-व्रत नहीं छोड़ा, जिन्होंने चला अथवा चपला लक्ष्मी के कटाक्षों का पात्र बनना स्वीकार नहीं किया, उन्हीं पत्रकारों का जन्म सफल हुआ, उन्हीं के पुण्य-प्रताप से भारत स्वतन्त्र हुआ।

अंग्रेजी-सत्ता के साथ ही अंग्रेजों की महत्ता भी गई, उनकी महत्ता के साथ ही उनके आचार-विचार-प्रचार के अनेक प्रकार बदल रहे हैं, किन्तु हमारे देश का पत्रकार अभी कई वर्ष तक अंग्रेजी रंग-ढंग के प्रचार के साधनों तथा पद्धतियों को अपनाता ही रहेगा, क्योंकि भारतीय विधान परिषद् ने पाश्चात्य राष्ट्रों की राज्य-पद्धति को स्वीकार कर लिया है इसलिये उस प्रकार की शासन-पद्धति को चलाने के लिए उसी रंग-ढंग का भारतीय सम्पादक-समाज, पत्रकार-समाज अपेक्षित है।

समय की गतिविधि ही बतला सकेगी कि सम्पादक-समाज अथवा पत्रकार को अपनी विचार-पद्धति को किस प्रकार, किस ओर मोड़ना पड़ेगा और लेखनी की प्रवाह-धारा किधर बहानी पड़ेगी।

मैं पत्रकारों का ध्यान एक बात की ओर विशेषरूप से आकर्षित करना चाहता हूँ कि भारत की संस्कृति का पोषण भी आपका एक मुख्य कर्तव्य बन जाना चाहिये। अपना स्वराज्य और संस्कृति दोनों साथ साथ चलें तब भारत अपने गत गौरव, गत वैभव को प्राप्त कर सकेगा। आपको मातृ-भाषाओं पर बल देना ही होगा, हिन्दी राष्ट्रभाषा का पोषक बनना ही पड़ेगा। हिन्दी भाषा को राज-भाषा के सम्मानास्पद पद पर लाकर बैठाने के लिए उद्योग करना ही होगा,—क्योंकि भाषा का धर्म, संस्कृति, साहित्य और कला से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

पत्रकार-समाज स्वराज्य, विदेशी शासन-पद्धति, तथा स्वसंस्कृति इन तीनों का काम किस प्रकार किस युक्ति से साधता है यही एक कुतूहल का विषय रहेगा। जहाँ शासन-चक्र स्वसंस्कृति का बाधक होगा वहाँ पत्रकार का कर्तव्य होगा कि वह निर्भय होकर उस शासन के उस अंश में विरोध करे—मैं तो इस से आगे भी जाऊँगा, मैं कहता हूँ कि पत्रकार का कर्तव्य है कि वह अपनी लेखनी का ऐसा उपयोग करे जिससे विधान परिषद् द्वारा परिष्कृत तथा स्वीकृत शासन-पद्धति ही हमारी संस्कृति की सर्वात्मना पोषक बने।

ब्रिटिश शासनकाल में हिन्दी पत्रकारों ने बहुत उन्नति की है। दैनिक, साप्ताहिक, अर्द्ध-साप्ताहिक, पाक्षिक, मसिक पत्र-पत्रिकाओं की संख्या प्रचुर मात्रा में बढ़ गई है। स्वराज्य में यह उन्नति शतगुण, सहस्रगुण बढ़ जायगी इसमें सन्देह नहीं। शासक-चक्र द्वारा भारत में जिस अनुपात से शिक्षा का प्रसार होता जायगा, उसी अनुपात से पत्रकार-कला और पत्रकारों का भाग्य चमकेगा।

यदि पत्रकार प्रत्येक उचित और अनुचित कार्य में सरकार का साथ देते हैं तो प्रजा बिगड़ेगी, यदि प्रजा का साथ देते हैं तो शासकवर्ग बिगड़ेगा। इस प्रकार की दुहेरी कैंची में से युक्तिपूर्वक निकल कर दोनों को सन्तुष्ट रखने का प्रयत्न करना, हमारा काम होगा।

भारतीय पत्रकार पाश्चात्य पत्रकारों का अन्धानुकरण न करें। पत्र चाहे उनकी रीति-नीति पर चलें किन्तु भारतीय पत्रकार-कला अपनी रीति-नीति-संस्कृति की पोषक रहे तो भारत का अनन्त उपकार हो सकता है। इस कार्य के लिए भारतीय पत्रकारों को सबसे पूर्व अपने मस्तिष्क को भारतीय बना लेना चाहिये। अपना ही किन्तु विदेशी बना हुआ मस्तिष्क यह कार्य नहीं कर सकेगा।

अब तक मस्तिष्क अपना था पर उसमें भरा हुआ मसाला विदेशी था। हाथ अपना था पर विदेशी के संकेत पर चलकर विदेशी का काम करता था।

लेखनी अपनी ही थी पर वह विवश होकर कुछ और ही लिखती जाती थी। अपनी बात दब कर लिखती थी, पूरी तरह लिख नहीं पाती थी। झिझक-झिझक कर लिखा करती थी। इस प्रकार पत्रकारों का बुद्धि-वैभव औरों के ही काम आता रहता था।

अब ये सब बातें पलटती जा रही हैं पर एक ही दुःख की बात है कि पत्रकार नामक प्राणी सरस्वती का कट्टर भक्त न रह कर अब पाश्चात्य प्रभाव के कारण कहिये अथवा और किसी अन्य कारण से कहिये अनुचित रूप में लक्ष्मी का उपासक बनता जा रहा है। लक्ष्मी सरस्वती के सिर पर चढ़ कर बोलना चाहती है। यदि वह अनुचित रूप से लक्ष्मी का उपासक बनेगा तो वह अपना ओज और तेज खो बैठेगा। चाहे जितने संकट आयें किन्तु उसको अपनी विद्या, बुद्धि, लेखनी को किसी मूल्य पर नहीं बेचना चाहिए। उसका ध्येय तो यही रहे कि चाहे लक्ष्मी आये अथवा जाये, सिर पर कृपाण धाराएँ भले ही लटकें, साक्षात् यमराज भी क्यों न सिर उतारने के लिए तैयार होकर आवे किन्तु मेरी मति मेरे धर्म से, मेरे कर्तव्यपथ से किसी दशा में भी, तनिक भी विचलित न होने पावे। पत्रकार इस धारणा को दृढ़ रक्खें। यदि पत्रकार ही अपने पथ से अथवा पद से च्युत होगया तो शासकवर्ग को कौन मर्यादाएँ बतलायेगा? शासकवर्ग तथा प्रजावर्ग में कौन सौमनस्य अथवा सामञ्जस्य स्थापन करेगा? फिर कौन देश, धर्म तथा संस्कृति की रक्षा करेगा। पत्रकार तो राष्ट्र, देश, जनपद के मुख हैं। मुख को तो मुख का सा मुख्य कर्म ही तत्परता से करते रहना चाहिये।



नोट—इस सम्मेलन के सभापति प्रसिद्ध पत्रकार श्री उग्र जी थे।

श्री महावीर त्यागी का पत्र

(देहरादून के ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन के विषय में)

हैदराबाद
२८-४-४८

पूज्य शास्त्री जी वन्दे,

आपको समाचार तो सब मिल ही गये होंगे। मैं इधर बंगलौर के रास्ते पर हैदराबाद में हवाई अड्डे से यह पत्र लिख रहा हूँ। २ ता० तक आ सकूँगा।

इस बीच में आपसे प्रार्थना है कि आप तुरन्त देहरे पहुँच कर स्वागत के कार्य को सम्भाल लें। बिना आपके हम से कुछ न हो सकेगा। आप इसमें आचार्य हैं। मेरे थोड़े लिखे को बहुत समझें। जीवन में आ० इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक फिर देहरा न हो सकेगी—

आपका
महावीर

यह आपको ज्ञात हो गया होगा कि देहरादून जिले पर ऑल इण्डिया कांग्रेस के करने का भार आगया है। आप भी उसमें पूरे हिस्सेदार हैं। कई कार्य आपके सुपुर्द हैं। आप पत्र को देखते ही चल दीजिये। क्योंकि आपके बगैर यहाँ का सब कार्य अधूरा पड़ा है। त्यागी जी दूसरी तारीख तक बाहर जा रहे हैं। इस चिट्ठी को तार समझिए। पूरी सहातता और पूरा समय दीजिए।

हुलासवर्मा, देहरादून
३०-४-४८

कार्यालय स्वागत समिति देहरादून से।

तीन चार दिन पूर्व मैंने वैद्य जी से कहा था कि शास्त्री जी आयेंगे तो यहाँ सफल हो जायगा। आप तो आना नहीं चाहते, कहिये पुरोहित के बिना यज्ञ कैसे सफल हो। यदि आप मेरी प्रार्थना नहीं मानेंगे तो फिर त्यागी जी से पत्र लिखवाऊँगा, फिर तो मानोगे।

सोमेन्द्र मुकर्जी
३०-४-४८

ऑल-इण्डिया कांग्रेस कमेटी

का

महाधिवेशन

समारोह, व्याख्यानों की झड़ी, जनसंमर्द, भाग-दौड़, धूम-धक्कड़

(देहरादून-मई १६४६)

[१]

कहाँ देहरादून का, भारतवर्ष के एक कोने में, हिमालय की उपत्यका में पड़ा हुआ छोटा सा जिला और कहाँ ऑल-इण्डिया-कांग्रेस कमेटी का महाधिवेशन !! स्वीकार करने को तो देहरे वालों ने स्वीकार कर लिया, पर तैयारी करते हुए नानी याद आई सबको। ईश्वर की कृपा से महाधिवेशन बड़े समारोह के साथ प्रारम्भ तथा समाप्त हुआ। देहरे को वरदान है कि इसके इस प्रकार के सभी समारोह धूमधाम से सम्पन्न होंगे चाहे पीछे कुछ काम रहे अथवा न रहे। चन्दा एकत्रित करने में कितना जोर लगाना पड़ा, देहरे के धनी मानी सज्जनों ने भी किस प्रकार मुक्तहस्त सहायता दी, किस प्रकार इधर से उधर आने जाने दौड़धूप में कितने सैकड़ों गैलन पेट्रोल फूका गया होगा, बिजली, तांगा, भोजनप्रबन्ध, निवास-व्यवस्था, कार्यकर्ता तथा स्वयंसेवकों की व्यवस्था पर कितना खर्च हुआ होगा, इसको कांग्रेस स्वागतसमिति ही ठीकठीक बतला सकेगी। इसके अतिरिक्त जिन धनी सज्जनों ने अतिथि-सत्कार का भार अपने ऊपर लिया, जिन्होंने चाय-पानी का भार उठाया, उनकी कथा तो पृथक् ही रही। फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टिट्यूट के अधिकारी, सर्वे डिपार्टमेंट, डिस्ट्रिक्ट हेल्थ ऑफिसर्स, पी० डब्ल्यू० डी० प्रान्तीय तथा केन्द्रीय विभाग, देहरे के म्युनिसिपल बोर्ड आदि आदि ने सहायता दी और कर्तव्य पालन किया वह भी प्रशंसनीय है।

अपने राम की डयूटी तो फॉरेस्ट रिसर्च इंस्टिट्यूट कांग्रेस कैम्प में लगाई गई थी और वही एक प्रकार से रिसेप्शन कमेटी का ऑफिस बन गया था। वहाँ जितनी चहल-पहल रहती थी वह कहीं भी अन्यत्र नहीं थी। पास ही पोलिस कैम्प, सी० आई० डी० कैम्प, मोतीलाल कैम्प, शर्मदा कैम्प, सरोजिनी कैम्प, रासबिहारी कैम्प, मालवीय कैम्प आदि थे। स्टेशन से सीधी मोटरें, बसें आदि आती थीं वह हमारे कैम्प में ही ठहरती थीं, फिर ए० आई० सी० सी० के प्रतिनिधियों को वहीं से पृथक् पृथक् कैम्पों में भेजा जाता था।

कतिपय हाई कमाण्ड के नेताओं को छोड़ कर और जो स्वेच्छा से अन्यत्र अथवा नगर में टिके थे, उन दस-बीस प्रतिनिधि अथवा मिनिस्टरों को छोड़ कर शेष २०० मेम्बर तथा उनके साथी मिला कर

लगभग १५० कुल, ३५० व्यक्ति एफ० आर० आई० में ही टिके। इसके अतिरिक्त चिकागो रेडियो का स्टाफ, फारमेशन ब्यौरू का स्टॉफ, सब वहीं हमारे पास थे। ठहरने के लिये अंग्रेजी फैशन के सुन्दर सजधज वाले कमरे, बैठकें थीं। खाने को सब छोटे बड़ों के लिये गुरु के लङ्गर के सदृश कई लङ्गर थे, दोनों ढंगों के। पर्ची ले जाओ और खाओ। किसी से एक पाई भी वसूल नहीं की। देहरे के गौरव का प्रश्न था, सब ने मनोयोग से कार्य किया।

फॉरेस्ट रिसर्च इंस्टिट्यूट और उसके विशाल हॉल को देख कर बम्बई वाले भी दङ्ग रह गये। यद्यपि मार्ग-दर्शक पट्टिकाएँ सर्वत्र लगाई गईं थीं तथापि लोग मार्ग भूल जाते थे। एक दिन तो टण्डन जी टहलने गये जब लौटे किधर से किधर निकल गये। स्वयंसेवकों ने उनको ठीक स्थान में पहुँचा दिया। मुझे तो एक स्थान में ही बैठे बैठे नेताओं तथा महानेताओं के दर्शन मिल गये।

बड़े हॉल में दो दिन तक ए० आई० सी० सी० की बैठक रही। पहिला दिन तो वही लन्दन के समझौते के प्रश्न में गया। लन्दन समझौते का विरोधी पक्ष अत्यन्त दुर्बल था। बाबू राजेन्द्रप्रसादजी, श्री पन्त जी, श्री टण्डन जी आदि के सामने कौन टिक सकता था। रहे-सहों की रगड़पट्टी श्री नेहरूजी ने ही कर दी। दूसरे दिन दो-दो घर की बातें थीं, इसलिये अधिवेशन गुप्त रूप से हुआ।

शहर में ता० २० से ही क्रम से श्री कालावेंकटराव तथा पट्टाभि (प्रथम दिन), श्री राजेन्द्रबाबू, श्री पन्त जी, श्री टण्डन जी (द्वितीय दिन), श्री नेहरू (तृतीय दिन), श्री सरदार पटेल (चतुर्थ दिन) आदि के व्याख्यान हुए। वह व्याख्यानमाला क्या थी, देहरे जिले की जनता के लिये कुम्भपर्वी थी। वैसे मेरठ डिविजन के सभी जिलों से दर्शक आये थे। देहरे में प्रायः नेता आते ही रहते हैं, धूम-धड़ाका होता ही रहता है, पर इतना बड़ा समारोह फिर कभी होगा कि नहीं कहना कठिन है। वैसे महाधिवेशन में २५००) रु० देने वालों से लेकर ५०) रु० के टिकट वाले थे। देहरादून तथा सहारनपुर के कार्यकर्ताओं को विशेष रूप में ५-५ के टिकट मिले, शेष जो जेल नहीं गये थे किन्तु कांग्रेस के जो कार्यकर्ता थे, उनको १०-१० का टिकट लेना पड़ा। इस प्रकार महाधिवेशन और उसकी धूमधाम सानन्द सम्पन्न हुए। देहरे का सौभाग्य कि ऐसा बड़ा समारोह आया, सानन्द समाप्त हुआ। इस समारोह को नई पीढ़ी वर्षों तक स्मरण करेगी।

पत्रकारों के लिये नगर में विशेष व्यवस्था थी। रेंजर्स स्कूल में ठहरे थे और इंडियाना होटल में भोजन व्यवस्था थी। बड़े छोटे मिला कर ६०-७० पत्रकार थे। इसके अतिरिक्त असोशियेटेड प्रेस तथा युनाईटेड प्रेस के भी थे। फिल्म वाले भी थे, फोटोग्राफर भी कई दर्जन थे जिनके कैमरे "क्लिक-क्लिक-क्लिक" चलते ही रहते थे।

ता० २० को सभापति का जलूस निकला। बड़ा समारोह था। लोग कहते थे अब ऐसे जलूसों की क्या आवश्यकता है। बाजार खूब सजे थे।

ता० २३ को यहाँ से तीस मील पर डाक-पत्थर के पास श्री नेहरूजी ने जमना डाम की आधारशिला रक्खी। वहाँ भी लगभग १००० व्यक्ति पहुँच गये थे। इन्हीं दिनों ईस्टर्न कैनाल रोड नं० २६ में एक प्रदर्शनी हुई थी जिसका उद्घाटन श्री पन्त जी ने किया था।

[२]

नं १ में साधारणतया मैंने धूम-धक्कड़ का हाल लिखा था। अबकी वार स्वतन्त्र दृष्टि से कतिपय बातें लिखना चाहता हूँ।

लोगों को भीतर हाल में किसी प्रकार जाने की किस प्रकार उत्सुकता थी इस बात को तटस्थ दर्शक ही भली भाँति जान सकता है। जो स्वयं उत्सुक हो वह दूसरे की उत्सुकता की ओर अधिक ध्यान नहीं दे सकता। उसको तो अपनी पड़ी रहती है कि मेरी उत्सुकता कैसे मिटे।

(१) एक सम्पादक (बाहर के) को प्रेस पास नहीं मिला, उसने हमको लिखा कि पास नहीं मिला यह मेरे दुर्भाग्य कि ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के दुर्भाग्य!! मैंने लिख दिया कि अपने ही दुर्भाग्य समझिये, कमेटी का दुर्भाग्य क्यों?

(२) स्वयंसेवक अधिकतर इसी लालसा से कांग्रेस सेवादल में भरती हुए थे, अथवा अन्य स्वयं-सेवक-दल द्वारा आये थे कि किसी प्रकार हाल में जाने को मिले। काम करके इच्छापूर्ति हो जाय तो कोई शिकायत नहीं, पर ऐसे मौके पर बिल्ले लगाकर आने वाले स्वयंसेवक का आना अथवा काम के होते ही फिर एकदम चले जाने वाले स्वयंसेवक को क्या कहा जाय? मेरी परीक्षा में तो केवल १०-१२ स्वयंसेवक ऐसे थे जिनको सच्चे अर्थों में स्वयंसेवक कहा जा सकता है, शेष साधारण थे।

एक दिन मेरे पास रात्रि ९ बजे दो ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के सदस्य आये और कहने लगे हमारी खाटें किसी ने उठालीं, कृपया पांच खाटें दिलवा दीजिये। वालण्टियर सब थके हुए थे, कोई काम पर जाने को राजी नहीं हुआ, बड़ी कठिनता से किशनपुर के दो वालण्टियर राजी हुए, पर खाटें थीं बोझिली, तब बाबूलाल, श्यामलाल आगे बढ़े और किसी प्रकार दो फेरों में सरोजिनी नायडू कैम्प में खाटें पहुँचीं। क्या हमारा अनुशासन और क्या हमारा काम!! मुझे तो मेम्बरों के सम्मुख लज्जित होना पड़ा। वे महानुभाव भी कैसे थे जो दूसरों की खाटें उठा ले गये और जरा धैर्य नहीं रक्खा।

(३) अपने आपको कार्यकर्त्ता समझने वालों का पैर प्रायः मोटरों में ही रहता था। आये, चक्कर मार गये, जरा ठहरने को कहा गया तो घड़ी दिखलादी और कहा काम है, चल दिये। दिखावे की हद थी। प्रत्येक मुख पर 'मैं' जोर से बोल रही थी।

(४) जिस दिन प्रेसिडेण्ट का जलूस था उस दिन सारे एफ० आई० आर० कांग्रेस कैम्प में मैं अकेला था। मोहनलाल गौतम अचानक आये मुझे अकेले को देखकर दंग रह गये। पंजाब के सरदार प्रतापसिंह कैरों और अन्य अनेक सज्जन पधारे थे, उन सबको स्थान पर भेजना मेरा ही काम होगया था। क्या हम लोग कर्तव्य को समझते हैं?

(५) यह बात मैंने दुःख से देखी कि प्रथम तो दो-चार ही सच्चे कार्यकर्त्ता दिखलाई दिए फिर जैसे जैसे कमेटी (ऑल इण्डिया) के दिन समीप आये तब कार्यकर्त्ताओं और उनके मित्रों की संख्या बढ़ती गई और ता० १९–२० को कार्यकर्त्ता इतने अधिक बढ़ गये कि कोई कार्य ठीक नहीं बैठता था। जब पूछा जाता था तो एक दूसरे पर दोष लगा कर चलते बनते थे। यह क्या कर्तव्य-पालन! यह क्या नैतिकता!

(६) हाल के गेट पर भी देखा गया कि स्वयंसेवक अपने आदमियों को अन्दर आने देते थे टिकिट न होने पर भी। कार्यकर्त्ताओं में भी आपाधापी थी ही।

(७) पता नहीं टिकिट बेचने वालों ने बेचते समय क्या आदर्श रक्खा था। जेल जाने वाले कार्यकर्त्ताओं को ५) के टिकट देने की बात समझ में आसकती है पर कार्यकर्त्ता ब्लाक में जेल न जाने वालों की संख्या भी कम नहीं थी। बेचारे पचासों कांग्रेसी रह गये। खद्दरधारी धक्के खाते रह गये और अन्य प्रकार के लोग १०) के टिकट लेकर घुस गए। पहिले कहा गया कि टिकिट १००, ५०० और ५०) तक के मिलेंगे। जब १०) के टिकिट दिये गए तब इस बात का ध्यान रखना चाहिये था कि केवल कांग्रेस वालों को ही मिलते, क्योंकि कार्यकर्त्ताओं के ब्लॉक में अन्यों की शोभा नहीं थी।

(८) मैं समझता हूँ इधर-उधर भागा भागी दौड़ा-दौड़ी में पैट्रोल बहुत फुका। अनावश्यक, आवश्यक का ध्यान नहीं रहा। उदाहरणार्थ फॉरेट रिसर्च का कैम्प हमेशा तंग रहा इस विषय में। कन्या स्वयंसेविकाएँ ता० २१ को प्रातः आईं, उनकी संख्या बीस होगी। पर अन्य स्वयंसेवकों की संख्या केवल ६०, ७० थी और ता० २१ को विद्यार्थी कांग्रेस के स्वयंसेवक आये थे। इस प्रकार थोड़े स्वयंसेवक होने के कारण क्षण क्षण पर दिक्कत होरही थी। बेचारे कैम्पों में जायँ, अन्य काम करें कि क्या करें।

(१०) देहरे के सौभाग्य से काम तो सब हो ही गए। पर जब मैं भीतर से देखता हूँ तो मुझे ग्लानि होती है कि भीतर से हमारा संगठन कितना खोखला है। हम में से अधिकतर कर्त्तव्य क्या है और उसका पालन कैसे होना अथवा कैसे करना चाहिये, अभी समझे ही नहीं, अधिकतर दिखावा आपाधापी और 'मैं' चलती रहती है। ऐसे शुभ अवसरों पर भी हम अपने तुच्छ मतभेदों को नहीं भूलते–यह क्या नैतिकता है? यह क्या ढंग है!

(११) श्री महावीर त्यागी को हम भाग्यशाली कहेंगे कि चहुँओर इतनी दुर्बलताओं के रहते भी इतना बड़ा कार्य इतनी बड़ी सफलता से पार हो गया और देहरे का गौरव बढ़ा। पर बाहर गौरव बढ़े और हम भीतर खोखले रहें तो उस गौरव से क्या लाभ?

(१२) स्वागत समिति के किन किन सदस्यों ने मनोयोग से भेदभाव भुलाकर रात-दिन एक कर दिया उनकी नामावली मैं देना चाहता था पर मैं ऐसा नहीं करूँगा। क्योंकि इस प्रकार नाम लिखने से जिसका नाम मैं नहीं लिखूँगा वही लाल आँखें कर लेगा। वैसे मैंने निजी तौर पर उनका अभिनन्दन कर दिया है।

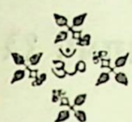
(१३) बाहर से आने वाले अथितियों में भी मैंने देखा कि बहुत से ऐसे रोबराब से आते हैं जो स्वयंसेवकों को कुछ समझते नहीं। छोटासा कार्य भी अपने हाथों से नहीं करना जानते, जरासी भी सहनशीलता नहीं रखते। कमरे के सामने सामान रक्खा है, भीतर उठाकर लेजाने में भी शर्म आती है। दो जगह तो मुझे कुली बनना पड़ा। ऑलइण्डिया कांग्रेस कमेटी के मेम्बरों में यह भाव रखना चाहिये कि हम जहां जारहे हैं वहां जनता के सेवक बनकर जायँ। ये लोग थोड़ी दूर भी जाना हो तो मोटर-कार मांगते हैं, यह क्या मेम्बरी हुई, ये कैसे जनता के सेवक।

प्रेस वालों के मिजाज का हाल लिखूँ तो आप दंग रह जायँगे। कैसी शान गाँठते हैं! ईश्वर ही बचावे।

(१४) अन्त में मुझे एक बात पूछनी है कि अंग्रेजी राज्य के चले जाने पर भी क्या हमारे नेताओं के खानपान, रहनसहन, बोलचाल आदि के ढंग अंग्रेजों जैसे ही रहेंगे अथवा उनमें भारतीयता भी आयेगी? रातदिन महात्मा गांधी जी तथा "अहिंसा" की बात करने वाले तथा व्याख्यान झाड़ने वाले नेतागण कभी भोजनादि में निरामिष भी बनेगें। इन होटलों के ढंग कब बदलेंगे।

—नरदेवशास्त्री





महात्मा गान्धी के संस्मरण



(विजय, १९४८)

आचार्य नरदेवशास्त्री

[१]

जब महात्मा गांधी, अफरीका से पहिले पहिले आये थे, तब हरिद्वार भी आये थे, महाविद्यालय के जलसे में भी पधारे थे। तब आपने "निर्भय बनो" इस विषय पर १५ सहस्र की उपस्थिति में भाषण दिया था।

दूसरी वार जब आये तब महाविद्यालय में ही तीन दिन ठहरे—पुस्तकालय में। आपने बड़े ब्रह्मचारियों से भी बातचीत की थी। आपने प्रत्येक से पूछा कि अध्ययन-समाप्ति के पश्चात् क्या करोगे? किसी ने कुछ कहा, किसी ने कुछ कहा, पर रुद्रदत्त नामक ब्रह्मचारी ने कहा कि 'अभी कुछ समझ में ही नहीं आया है कि क्या करूँ', महात्मा गांधी बहुत प्रसन्न हुए कि ब्रह्मचारी ठीक कहता है।

दिसम्बर सन् १९२१ में देहरादून में मैं जब पकड़ा गया और मुझे १५ मास का कठोर कारावास और २००) दण्ड मिला। तब बड़े दिन की छुट्टियों में अहमदाबाद में कांग्रेस थी। देहरादून के श्री हंसराज कक्कड़ आदि बहुत से सज्जन अहमदाबाद गये थे। जब वे महात्मा गांधी जी से मिलने गये तब उन्होंने उन लोगों से कहा "नरदेवशास्त्री को जेल में पहुँचा कर कांग्रेस देखने आ गये।" दो तीन वार इसी बात को दुहराया। बेचारे लोग चुपचाप सुनते रहे।

जब कांग्रेस हो चुकी तब एक व्यक्ति मुझसे मुरादाबाद जेल में मिलने के लिए आया। उसने यह हाल मुझको सुनाया। उसने यह भी बतलाया कि कांग्रेस के प्रमुख गेट पर उस समय तक पकड़े गये २५० व्यक्तियों के नाम मोटे मोटे अक्षरों में लिखे गये थे। उसमें मेरा नाम भी था।

महात्मा जी का मेरा दृढ़ परिचय यहीं से समझिये। फिर तो प्रायः कांग्रेस के अधिवेशनों में, ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठकों में मिलना होता ही था। दो एक वार मैं वर्धा में भी मिला।

महात्मा गाँधी जी का जब देहरादून तथा सहारनपुर के जिले में दौरा हुआ था मैं लगभग १३ दिन तक उनके साथ रहा। महात्मा गाँधी एक सप्ताह तक मसूरी में भी ठहरे थे।

❀ ❀ ❀ ❀

उसी अवसर पर देहरादून श्रद्धानन्द अनाथालय की आधारशिला महात्मा जी के कर-कमलों द्वारा रक्खी गयी थी। मैंने लक्सर स्टेशन पर जाकर इस काम के लिये उनकी अनुमति ली थी।

❀ ❀ ❀ ❀

मुरादाबाद प्रान्तीय कांग्रेस के अधिवेशन में भी मैं महात्मा जी से मिला था। तब अलीभाई भी पधारे थे।

❀ ❀ ❀

महात्मा गांधी मुझ पर बहुत कृपा दृष्टि रखते थे। जब कोई हरिद्वार का अथवा देहरे का व्यक्ति उनसे मिलता तो मेरे विषय में अवश्य पूछते थे।

❀ ❀ ❀ ❀

महात्मा गांधी अब की बार मसूरी गये थे। मैं ज्वालापुर में अत्यन्त रुग्ण था, न जा सका। महात्मा गांधी जी ने लिखा था कि रुग्ण हो तो आने की आवश्यकता नहीं।

❀ ❀ ❀ ❀

अब की बार महात्मा गांधी और श्री जवाहरलाल नेहरू जब हरिद्वार आये थे तब मैं श्री जवाहर लाल जी से तो मिल सका पर महात्मा जी से न मिल सका। क्योंकि मूर्ख विरोधियों ने हुल्लड़ कर दिया।

❀ ❀ ❀ ❀

एक बार सीतापुर प्रान्तीय कांग्रेस के अवसर पर मैंने आपसे पूछा कि, आप सत्य, अहिंसा सत्याग्रह जैसी बातों को वर्तमान राजनीति में ला रहे हैं और आत्मिक बल पर स्वराज्य लेने की बात कर रहे हैं। यह बात आपको कैसे सूझी, कहां से सूझी, कहां से स्फूर्ति मिली।

आपने मुस्करा कर कहा—

वसिष्ठ और विश्वामित्र की कथा से स्फूर्ति मिली। विश्वामित्र हार गये, वसिष्ठ की विजय हुई और अंत में विश्वामित्र वसिष्ठ के चरणों में आ गिरा। जो बात इन दो महापुरुषों में हुई, वही बात दो राष्ट्रों में नहीं हो सकती क्या।

[२]

गोखले ने यूँ कहा— "महात्मा गाँधी मिट्टी में से वीर उत्पन्न कर सकता है।"

राजनीति में सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह जैसे सिद्धान्तों को लाकर उसके द्वारा स्वतन्त्रता की प्राप्ति करा देना महात्मा जी की भारतवर्ष के लिये एक अपूर्व देन है।

❀ ❀ ❀ ❀

जब हैदराबाद का आर्य-सत्याग्रह चल रहा था मैं सन्देह में पड़ गया था। इधर मैं कांग्रेस का प्रमुख कार्यकर्त्ता था उधर प्रमुख आर्यसमाजी, क्या करता—मैंने महात्मा जी से पूछा। उन्होंने मुझे अलिप्त रहने का परामर्श दिया था। मैं सत्याग्रह में तो नहीं गया पर सत्याग्रहियों की खबर लेने, उनकी दशा को देखने के लिये हैदराबाद अवश्य पहुँचा। लगभग १२ छोटे बड़े जेलों में जाकर सत्याग्रहियों से मिला।

❀ ❀ ❀ ❀

एक बार जब मैं वर्धा गया तो इनके सेक्रेटरी कहने लगे आपने पहिले नहीं लिखा था, पहिले अनुमति नहीं प्राप्त की, इस लिये मिल नहीं सकते।

मैं—अब मैं आ ही गया हूँ तो मिलने दीजिये। मैं क्या करूँ, वर्धा हैदराबाद के मार्ग में आ गया है। मिलने का विचार हुआ इसलिए उतर पड़ा हूँ।

सेक्रेटरी—नहीं, आप नहीं मिल सकते।

मैं—आप महात्मा जी को मेरे आने की सूचना तो दीजिये, वे आज्ञा देंगे तो मिल लूँगा, नहीं तो चला जाऊँगा।

बहुत कहने पर सेक्रेटरी गये और वापस आकर बोले कि बापू बुला रहे हैं।

मैं कमरे में गया और मिला। महात्मा जी अच्छी तरह मिले। उस समय वे हजामत बनवा रहे थे। कोई पाँच छह मिनट बातें हुई थीं कि सेक्रेटरी मुझसे बोले कि बस अधिक नहीं और कुछ पूछना है तो पत्र द्वारा पूछिये। मैं अड़ ही गया और मैंने दो-तीन मिनट और ले लिये।

❀ ❀ ❀ ❀

जब आप देहरे के दौरे पर आये थे, तब हमने छह जगह प्रोग्राम रक्खा था। जब श्री कृपलानी जी से हमने लुक्सर में यह बात कही तब वे बिगड़े और बोले कि प्रोग्राम एक ही जगह रहेगा। मैंने कहा एक ओर तो आप पैसा भी चाहते हैं, दूसरी ओर आप मीटिंगें भी नहीं होने देते। मैं महात्मा

जी के पास गया और उनसे कहा। उनका मौन था, उन्होंने सिर हिलाकर स्वीकृति दे दी। महात्मा जी लुक्सर में सूरजमल की धर्मशाला में रात भर टिके थे। फिर हम महात्मा जी को छह जगह ले गये। अनाथालय में, पोलिटिकल कानफ्रेंस में, डी० ए० वी० कॉलेज में तथा अन्य स्थानों में।

❀ ❀ ❀ ❀

कृपलानी जी ऐसे वज्र-हृदय थे कि देहरे में स्टेशन से उतर कर मोटर में बैठते ही श्री भगवत-प्रसाद मोटर ड्राइवर को प्रेरणा की कि मोटर तेजी से ले चले। मैंने भगवतप्रसाद से पहिले ही कहा था कि इस विषय में कृपलानी जी की न सुनें क्योंकि कृपलानी जी से ऐसी ही सम्भावना थी।

❀ ❀ ❀ ❀

एक व्यक्ति ने पूछा कि आपको जो अभिनन्दन पत्र दिये जाते हैं आप नीलाम कर देते हैं, यह क्या ?

महात्मा जी बोले कि मैं इन सहस्रों अभिनन्दनों को कहाँ रक्खूँ, मेरे पास स्थान कहाँ है ? उनको नीलाम करके जो पैसा मिलता है वह किसी देशकार्य में लगा देता हूँ।

"यह तो ऐतिहासिक वस्तुएँ हैं"।

महात्मा जी बोले इनमें क्या ऐतिहासिक है, मेरे गीत गाये गये हैं और कुछ नहीं।

❀ ❀ ❀ ❀

एक ने पूछा कि जो जाति प्रतिदिन १५ करोड़ रुपया युद्ध में खर्च करती है वह जाति आपके चर्खे से डर कर यहाँ से भाग जायेगी क्या ?

महात्मा जी ने कहा—

मेरे मन में जो कुछ है, उसका शतांश भी मैं नहीं कहता और जो कुछ मैं कहता हूं उसका सहस्रांश भी लोग करके नहीं देते। जनता को कार्य में लगा रखना अत्यन्त आवश्यक है इसलिये मोटी मोटी बातें जो उनकी समझ में आ सकती हैं, कहता हूं और उनको काम में लगाये रखता हूं।

❀ ❀ ❀ ❀

बम्बई की ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक में स्वयं श्री अभ्यंकर (नागपुर) ने महात्मा जी से कहा की महात्मा जी मैं तो ज़मीन पर चलने वाला एक तुच्छ व्यक्ति हूं। आप आकाश में उड़ने वाले व्यक्ति हैं। मुझ जैसे व्यक्ति को समझाइये तो सही कि मैं क्या करूँ, आपके पीछे कैसे चलूँ, 'कैसे उड़ूँ।'

स्व० अभ्यंकर के भाषण को सुन कर महात्मा जी बोले कि इस भाषण को सुन कर तो मैं दंग रह गया और मेरे पैर के तले की मिट्टी खिसक रही है पर मैं स्वानुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि अहिंसा का अस्त्र एक अमोघ अस्त्र है।

× × × ×

एक बार शायद कानपुर में—स्व० केलकर ने कहा था कि गुलाब के जल से प्लेग के कीटाणु दूर नहीं हो सकते महात्मा जी ! महात्मा जी मुस्कराये और बोले कि मैं कहता हूं आप मेरी तरह चलें तो कुछ भी असम्भव नहीं है।

इसी ऑल इंडिया कमेटी में श्री जिन्ना भी समुपस्थित थे। आपने कहा कि "नहीं महात्मा जी" कदापि नहीं, रक्त क्रान्ति के बिना ब्रिटिश यहाँ से जाने वाले नहीं हैं।

× × × ×

जब लखनऊ कांग्रेस में महात्मा गाँधी पहिले पहिले पधारे थे उसी वर्ष लोकमान्य तिलक भी माँडले से छूट कर आये थे। लखनऊ में "एक लिपि विस्तार परिषद् में", कांग्रेस में तथा अन्य स्थानों में महात्मा गांधी ने लोगों के "अंग्रेजी अंग्रेजी" की चिल्लाहट की परवाह न करके भाषण हिन्दी में ही दिये।

× × × ×

कलकत्ता कांग्रेस के अवसर पर जो विशेष हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ था। उसमें जब चन्दा एकत्रित करने का समय आया तब श्रोताओं में से चन्दा एकत्रित करने के लिये १५-२० नाम प्लेटफॉर्म से लिए गए। मैं महात्मा जी के पीछे बैठा हुआ था। महात्मा जी ने जमनालाल बजाज से कहा कि नरदेव जी का नाम भी ले लीजिये। मेरा नाम बोला गया और मैंने चन्दा एकत्रित करके दे दिया।

× × × ×

गोहाटी कांग्रेस के अवसर पर महात्मा जी ऑल इण्डिया की बैठक में न आ सके थे। अपनी कुटी पर ही रहे। कमेटी में बहुमत से पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास हुआ। श्री श्रीनिवास आयंगर (सभापति) महात्मा जी के पास घबराये हुए गए और महात्मा जी को लिवा लाये और पुनर्विचार के पश्चात् महात्मा जी के मनका सा प्रस्ताव पास हुआ। इस मीटिंग में स्वा० विवेकानन्द के भ्राता भूपेन्द्रनाथ दत्त भी आये थे।

× × × ×

कलकत्ता कांग्रेस में भी महात्मा जी ने श्री जवाहरलाल नेहरू और श्री सुभाष बोस (नेता जी) का पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास नहीं होने दिया था। यही पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव फिर लाहोर

में जाकर जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में पास हुआ—अब तो भारत स्वतन्त्र हो गया—श्री नेहरू स्वतन्त्र भारत संघ के प्रथम प्रधान मंत्री हैं और महात्मा गांधी चल बसे हैं। दैवी विचित्रा गतिः।

× × × ×

गोखले ने कहा था 'गांधी के सम्मुख कोई असत्य भाषण नहीं कर सकता'।

× × × ×

आश्रम के प्रारम्भिक दिनों में, गांधी जी प्रायः रोज ही थोरो की Life Without Principle, रामदास स्वामी का 'मनाचे श्लोक' और बनियन के Pilgrim's Progress आदि पढ़ कर उस विषय में चर्चा करते थे। वहाँ हर वक्त उपस्थित रहने वालों में डॉ० हरप्रसाद देसाई थे। एक दिन प्रार्थना के अन्त में गांधी जी के हाथ के अंगूठे पर एक मधुमक्खी बैठी। गांधी जी ने उसे उड़ाया नहीं बल्कि उसे वहीं बैठे रहने देकर ध्यानपूर्वक उसकी ओर देखते रहे, ठीक उसी प्रकार जैसे कोई वैज्ञानिक किसी पदार्थ के गुण दोषों का आविष्कार कर रहा हो। डा० हरप्रसाद को बात कुछ विचित्र सी लगी, कुछ देर ठहर कर वे बोले 'उड़ा दीजिए उसे' बेकार कहीं डंक न मार दे।

गांधी जी हँस कर बोले—आप भूलते हैं, अभी अगर मैं इसे उड़ाने की कोशिश करूँ तब ही यह डंक मारेगी। अगर मैं इसी तरह चुपचाप बैठा रहूंगा तो यह अपने आप उड़ जायेगी। गांधी जी की कहने की देर थी कि मधुमक्खी उड़ गई। गांधी जी फिर खिलखिला कर हँस पड़े।

[३]

गांधी जी ने एक बार कहा ज्यादा ताकत की इच्छा नहीं रखनी चाहिये, जरूरत से ज्यादा ताकत इकट्ठी होने पर शरीर में विकार उत्पन्न करती है, और आत्मशक्ति का ह्रास करती है। मैं जब अफ्रीका में रहता था तो २१ मील पैदल चल कर वकालत करने जाता था और शनिवार को तो ४२ मील पैदल सफर करता था। बड़े सवेरे उठकर, रात को बनाई हुई रोटियां और नींबू का अचार साथ में बांध लेता था, रास्ते के झरने में स्नान करके आफिस पहुँचता और साथ की रोटियां खाकर काम में लग जाता था। शनिवार को छोड़कर रोज शाम के समय गाड़ी में लौटता था। शनिवार को जाना और आना मिल कर ४२ मील होते थे। इसलिये शरीर में कितने काम की जरूरत होती है उतनी ही ताकत की इच्छा होनी चाहिये, जरूरत के बगैर नहीं।

× × × ×

राजनैतिक उत्तेजनापूर्ण वातावरण में गांधी जी ने ही एक छात्र से कहा, 'तुम युवक हो, मैं तुम्हें बता रहा हूँ कि यौवन में निर्दोष आनन्द पाने का रास्ता कौन सा है।

मैं तो जालिम की तलवार की धार को बिल्कुल भूँठा कर देना चाहता हूँ। सबसे अधिक तेज धार वाले हथियार से नहीं, बल्कि इस आशा में उसे निराश करके कि मैं शरीर बल से उसका मुकाबला करूँगा। इसके बदले में जिस आत्मबल से उसका प्रतिकार करूँगा उसे देखकर वह शांत रह जायगा पर अन्त में उसे उसका लोहा मानना ही पड़ेगा, जिस के फलस्वरूप उसका तेजोनाश नहीं होगा बल्कि वह ऊँचा उठेगा। इस पर यह कहा जा सकता है कि यह तो आदर्श अवस्था हुई। तो मैं कहूँगा कि हां, यह अवस्था ही है।

❀ ❀ ❀ ❀

एक सुधारक का काम तो यह है कि जो हो सकने वाला नहीं दीखता है, उसे खुद आचरण द्वारा प्रत्यक्ष करके दिखादे।

❀ ❀ ❀ ❀

अहिंसा का अर्थ अधिक से अधिक प्रेम है, अहिंसा ही परम धर्म है, केवल उसीके बल पर मानव जाति की रक्षा हो सकती है।

❀ ❀ ❀ ❀

अहिंसा और सत्य अभिन्न हैं, एक का ध्यान करो कि दूसरा पहले ही आ जाता है।

❀ ❀ ❀ ❀

धरती पर कोई शक्ति ऐसी नहीं, जो शान्तिप्रिय, कृतसंकल्प और ईश्वरभीरु जनों के आगे ठहर सके। संसार के समस्त शस्त्र-भंडारों के मुकाबले में भी अहिंसा अधिक शक्तिशाली है।

❀ ❀ ❀ ❀

अहिंसा के लिये सच्ची विनम्रता चाहिये, क्योंकि अहं पर नहीं, केवल ईश्वर पर निर्भर होने का नाम अहिंसा है।

❀ ❀ ❀ ❀

बम्बई में एक बार मैं उनसे मिलने गया था। तब वे मणिभवन में रहते थे। मैं जब उनके पास बैठा था तो एक ब्राह्मण भीतर आया और "यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत!" इस गीता श्लोक को जोर से बोलने लगा, महात्मा गान्धी ने उसको धमका कर चुप किया।

❀ ❀ ❀ ❀

जब महात्मा गांधी की डाक आयी तब आप सावधानता से पत्रों को खोलते रहे। कैंची लेकर लिफाफे के एक सिरे का बारीक कोना काटते थे। जिसमें कागज वगैरह डाले जाते थे वह टोकरी वहाँ

नहीं थी। उन्होंने लिफाफे का एक फटा हुआ भाग अपने बांये हाथ में लेलिया और पत्र पढ़ने लगे। पास स्वयंसेवक खड़ा था, वह अपनी भूल समझ गया और झट टोकरी ले आया तब महात्मा गांधी ने वह फटे हुए लिफाफे का कागज उस टोकरी में डाला।

❀ ❀ ❀ ❀

हरिद्वार की बात है–कुम्भ के दिनों की। कनखल भारामल के दरवाजे में हमारी प्रचार सभा थी। महात्मा जी को निमन्त्रण दिया गया। महात्मा जी ठीक समय पर आये। स्व० पं० वासुदेव भजनोपदेशक ने एक ऐसा पद्य गाया जिसका यह आशय था कि महात्मा जी हमको न भूलें।

महात्मा जी ने उत्तर में कहा कि—

"मुझे इस भजन में न भूलने की कड़ी बहुत पसन्द आई–यदि मैं जब जेल जाने के लिये बुलाऊँ तब आप आने के लिये तैयार रहें तो मैं आपको नहीं भुला सकता। यदि आप तैयार न हों तो आपको याद रखने का लाभ ही क्या है?" लोग इस बात पर हँस पड़े। उस सभा में महात्मा मुन्शीराम जी भी पधारे थे। चौ० रामभजदत्त भी आये थे।

❀ ❀ ❀ ❀

जब महात्मा जी दूसरी बार महाविद्यालय में आये थे तब उत्सव की समाप्ति के दिन रात्रि को महाविद्यालय सभा का चुनाव था। उस समय महाविद्यालय में दो दल थे। रात्रिभर चुनाव का हल्ला रहा, सवेरे महात्मा जी ने मुझसे पूछा कि रात क्या था। मैंने कहा चुनाव था, इस बात पर उन्होंने मुझ से कहा कि इंग्लैंड में बच्चे एक खेल खेला करते हैं। वे मक्खी को पकड़ कर सुई भोंक देते हैं और बेचारी मक्खी विवश हो कर पंख फड़फड़ाती रहती है, लड़के हँसते रहते हैं। यही हाल पब्लिक का है। पब्लिक कार्यकर्त्ताओं के प्राणों के साथ इसी प्रकार की खिलवाड़ करती रहती है। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं को सावधान होकर चलना चाहिए।

❀ ❀ ❀ ❀

जब महात्मा गांधी सहारनपुर जिले के दौरे में सहारनपुर पधारे तब बा० मेलाराम वकील के अथिति रहे। भोजनोत्तर महात्मा गांधी जी ने मेलाराम जी से पूछा कि जब मैं पहिले एकवार आया था तब एक मेलाराम जी के यहां ठहरा था। बाजार में दो उनकी छोटी छोटी कोठरियाँ थीं। स्थान कुछ ऐसा ही था, टूटी फूटी कुरसियाँ थीं, वे कौन से मेलाराम थे। बा० मेलाराम ने हाथ जोड़ कर कहा कि "यह वही सेवक है" बड़ी खिल्ली उड़ी, बड़ा कहकहा रहा क्योंकि इस समय जिस कोठी में महात्मा जी उतारे गये थे वह एक बड़ा भव्य बंगला था। उस समय के मेलाराम और इस समय के मेलाराम में बहुत अन्तर था।

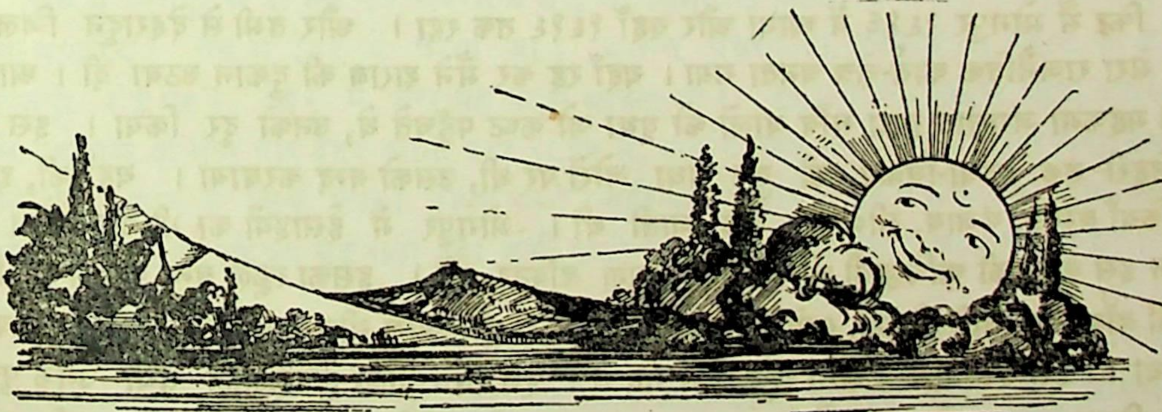
मसूरी में जब महात्मा गांधी आये और अपने निवास स्थान से सभा में जाने लगे तो मार्ग में बीस पच्चीस पहाड़ी व्यक्ति आये और उन्होंने ध्यान से देखा महात्मा जी को। महात्मा जी के साथ १००-१५० व्यक्ति थे। एक पहाड़ी ने पूछा अरे तुम में कौनसा महात्मा है ? जब मैंने उनको बतलाया कि ये महात्मा हैं तो आश्चर्य से देखने लगे। उनकी समझ में नहीं आया कि नेकर पहननेवाला भी महात्मा हो सकता है। वे तो महात्मा शब्द से प्राचीन जटा-जूटधारी महात्मा को ही महात्मा समझे बैठे थे। महात्मा गांधी जटा-जूटधारी नहीं थे। इसलिये मेरे कथन का उनको विश्वास नहीं आया।

❀ ❀ ❀ ❀

एक अंग्रेज ने आकर कहा जरा ठहरिये, मैं आपका फोटो लेना चाहता हूँ। महात्मा जी ने नहीं माना और बराबर चलते ही रहे और सिर को ऊपर उठाया ही नहीं। वह अंग्रेज आगे जाकर किसी ऊँची जगह पर बैठ कर प्रतीक्षा में रहा और जब महात्मा जी ऊँचाई पर चढ़ने लगे तब एकदम चित्र ले लिया। फिर थोड़ी देर में महात्मा जी के पास आकर बोला, आपका फोटो तो मैंने लेलिया। महात्मा जी मुस्करा गये।

❀ ❀ ❀

कहाँ तक लिखें-लिखें तो एक ग्रन्थ तैयार होगा।



देहरादून के संस्मरण

(देहरादून के संस्मरण शीर्षक से श्री पं० नरदेव जी शास्त्री की ऐतिहासिक-लेखमाला)

(दून समाचार, जून-नवम्बर—१९४९)

[१]

मैं १९०७ में प्रथम प्रथम हृषीकेश आया था। तब तो हृषीकेश सुन्दर तपोवन था, नगर नहीं बन गया था, और आजकल जैसी घिच-पिच भी नहीं थी। नगर में ही इतनी शान्ति रहती थी कि जैसी जंगल में। मैं कैलाश के पास स्व० स्वा० ब्रह्मानन्द एक सीधे-साधे सच्चे साधु थे, उनके यहाँ रहा। रहा हूँगा मैं उस समय हृषीकेश में एक मास तक। इन्हीं दिनों में मैं दो बार बद्रीनाथ धाम की सड़क पर बीस-बीस मील तक गया और लौट आया। दो बार नीलकण्ठ का भी आनन्द लिया। आजकल का हृषीकेश उस समय के हृषीकेश के मुकाबले में नरक है। देहरादून के जिले में यह मेरा प्रथम ही आगमन था। फिर अगले वर्ष १९०८ में दस-पाँच दिन के लिये मुझे भोगपुर जाना पड़ा, क्योंकि मेरे संस्कृत के गुरु जलवायु-परिवर्तनार्थ भोगपुर में गए थे, उनसे मिलना आवश्यक था। तब से भोगपुर वालों के साथ हमारा घनिष्ठ सम्बन्ध चला जाता है।

फिर मैं भोगपुर १९१६ में आया और यहाँ १९१९ तक रहा। और तभी से देहरादून जिला शनैः शनैः मेरा राजनैतिक कार्य-क्षेत्र बनता गया। यहाँ रह कर मैंने शराब की दुकान उठवा दी। आन्दोलन करके महकमा जंगलात द्वारा गाँव वालों को वृथा जो कष्ट पहुँचते थे, उनको दूर किया। इस इलाके में टिहरी तक कन्या-विक्रय की दुष्ट प्रथा जोरों पर थी, उसको बन्द करवाया। यहाँ की, इधर की लड़कियाँ बम्बई, पंजाब, सी० पी० तक जाती थीं। भोगपुर में ईसाइयों का भी अड्डा था। मिस ब्रूमन इस अड्डे की अधिष्ठात्री थीं। बड़ी निपुण डॉक्टर थीं। इसका स्कूल बन्द कराया। फिर भी इसकी डॉक्टरी चलती ही रही, क्योंकि आसपास दस-दस बीस-बीस मील तक कोई सरकारी दवाखाना नहीं था। इस तरह हमको लोग खूब जान गए थे। हम स्व० लाला मुसद्दीलाल तथा उनके पुत्र स्व० लाला शिवचरणलाल के कृतज्ञ हैं कि हम पर सरकार की कुदृष्टि रहने पर भी बराबर तीन वर्ष तक हमको आश्रय दिया और हमारे तथा प्रतिदिन आने वाले हमारे अथितियों का खर्च श्रद्धापूर्वक चलाया।

पीछे १९१९ में हम देहरे में साक्षाद् राजनीति में आये. १९२० में जो प्रथम प्रथम राजनैतिक सम्मेलन हुआ था, उसके हम स्वागताध्यक्ष थे। श्री पं० जवाहरलाल नेहरू सम्मेलन के सभापति थे। इस कानफ्रेन्स में समस्त जिला सजग हो उठा था। १९१९ में हमने गाँव-गाँव में प्रचार किया। गाँव

के लोगों में बड़ी जागृति उत्पन्न हुई थी। उस वर्ष हम जिले के मंत्री और बाबू बुलाकीराम प्रधान थे। १९२१ में हमको १५ मास का कठोर कारावास मिला।

इस बात को यहीं छोड़ कर हृषीकेश की दो-एक बातें लिखनी चाहिये। महन्त परशुराम हृषीकेश के जिमींदार तथा भरत मन्दिर के महन्त हैं। इनके साथ स्व० बावा कालीकमली वाले रामनाथ तथा स्व० स्वा० मङ्गलनाथ का घोर विरोध रहता था। महन्त परशुराम जी में वशिष्ठ जैसा एक बड़ा गुण था, सहनशीलता का। इसी गुण के कारण वह तर गये और इनका विरोधी मण्डल हार गया। अब तो वातावरण शान्त है। इधर के पहाड़ी इलाके में क्या दूर दूर तक ऐसा बुद्धिमान महन्त देखने को नहीं मिलेगा जो ऐसे प्रबल विरोध में भी पैर जमाए बना रहा अपने स्थान पर। एक समय तो मुझे तथा हमारे स्वर्गीय मित्र श्री पं० पद्मसिंह जी साहित्याचार्य को भी महन्त जी के पक्ष में लेखनी उठानी पड़ी, क्योंकि साधु-मण्डल अनुचित ढंग पर अन्याय पर तुला हुआ था। फिर १९२५ में हम महन्तजी को विस्तृत कार्यक्षेत्र में लाये और देहरे के पन्द्रहवें हिन्दी साहित्य सम्मेलन के महारथियों, प्रतिनिधियों का समस्त स्वागतभार आपने उठाया। उस सम्मेलन में भी हम ही स्वागताध्यक्ष थे। महन्त जी ने दिल खोल कर स्वागत किया, तब से आपका नाम संयुक्तप्रान्त तथा प्रान्त के बाहर गया। अब तो उनके चिरंजीव पुत्र श्री शान्तिप्रपन्न शर्मा एम० एल्० ए० हैं। अब तो महन्त जी को कौन नहीं जानता।

---

[२]

जब मैं भोगपुर में था तब पं० अमरनाथ वैद्य का निमन्त्रण आया कि वसन्त पंचमी मनायी जायेगी, कृपया पधारिये। तब मैं देहरे में आया था। बसन्त पंचमी का समारोह था महन्त जी के बाग में सहारनपुर रोड पर। देहरे में मेरा यह प्रथम भाषण था। लगभग ३-४ सहस्र श्रोता उपस्थित थे। इससे पूर्व मुझे दो-तीन बार देहरे आना पड़ा १९१५ में, क्योंकि स्व० बाबू ज्योतिःस्वरूप महाविद्यालय के प्रधान थे। काम के लिये आना पड़ता था। यहीं पर 'पिताजी आपके भक्त बन जाँय' वाले लाला बलदेव सिंह जी से परिचय बढ़ गया और कभी कभी मैं मोहनाश्रम में ठहर जाया करता था।

पं० अमरनाथ वैद्य का तब से जो परिचय हुआ वह परिचय दृढ़ होता गया। यद्यपि कई बातों में हमारे परस्पर मत-भेद रहते हैं, पर व्यक्तिगत सम्बन्ध बराबर स्थिर रहे। क्या आर्यसमाज में, क्या कांग्रेस में, क्या साहित्यिक क्षेत्र में, सब जगह मिलजुल कर ही काम हुआ। लोग पूछते हैं कि जब आते हो वहीं क्यों ठहरते हो। उत्तर यह है कि उन्होंने आज तक मेरे कामों में कभी किसी प्रकार की बाधा नहीं डाली। जब आता हूं शास्त्री वाला कमरा खाली हो जाता है। मैं सुखपूर्वक रहता हूं। मेरे अतिथि भी आतिथ्य पाते हैं और अब यहाँ रहते रहते मेरा तो मौरूसी अधिकार भी होगया है। यह बात नई शुष्कहृदय पीढ़ी में आ गई है कि जरा मत भेद हुआ कि पृथक। जरा सी मन

की सी बात नहीं हुई कि सदा के लिये बोल-चाल-व्यवहार बन्द। हम पुराने लोग जहाँ तक बने निभाते ही हैं।

पं० अमरनाथ जी किसी समय देहरे के सर्वे-सर्वा रहे हैं। विशेषकर आर्यसामाजिक क्षेत्र में। वैसे इनका हाथ हर क्षेत्र में रहता रहा। वैसे सबसे पूर्व स्व० स्वा० विचारानन्द जी तथा वैद्य जी मिल कर काम करते थे। फिर जैसे सार्वजनिक कार्यक्षेत्र में होता ही रहता है, उग्र मतभेद रहा, फिर मिले, फिर अलग हुए। हमारे साथ भी स्वामी जी रहे पर न वे आगे चलना जानते थे, चाहते अवश्य थे। और पीछे भी रहना नहीं चाहते थे, इसलिए उनका निभाना कठिन था, तथापि हमने जहाँ तक हमसे पार बसाई निभाते ही रहे। वैसे वे अनथक काम करने वाले थे। पहिले कांग्रेस में रहे, फिर हिन्दू सभा में रहे, फिर साधु-मण्डल बनाया। आपने अभय मठ भी बनाया था, पर पीछे चलाने वाला कोई नहीं रहा। लोग भूल गये।

जिस महन्त जी के बाग में सबसे पहिले मैं वैद्य अमरनाथ जी से मिला था, दो वर्ष पूर्व वहीं पर वैद्य जी के उद्योग से वैद्य सम्मेलन हुआ था। स्वा० १०८ महन्त लक्ष्मणदास जी का परिचय हरिद्वार के एक कुम्भ पर तथा ऋषिकुल के उत्सव में हुआ था, फिर देहरे में तो उनके दर्शन हो ही जाते थे। आप प्रत्येक शुभ कार्य में सहायक रहते थे। आप लोकोत्तर सच्चरित्र महन्त थे। आपने तथा स्व० महन्त ओंकारदास जी ने सन् २५ में निखिल भारतवर्षीय साहित्य सम्मेलन में बड़ा योग दिया था। सम्मेलन के सभापति थे लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के पट्ट शिष्य श्री माधवराव सप्रे। लोग अभी तक उस सम्मेलन को याद करते हैं। स्व० महन्त लक्ष्मणदास जी के गद्दी के उत्तराधिकारी श्री महन्त १०८ इन्दिरेशचरणदास जी बड़े ही सुयोग्य सच्चरित्र विद्वान् महन्त हैं।

---

[३]

मैं समझता हूँ स्व० बाबू बुलाकीराम जी बैरिस्टर सबसे पहले जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान थे। प्रधान मन्त्री श्री स्व० कृपाराम स्वामी थे। फिर पं० देवरत्न जी मन्त्री हुये। श्री ठा० चन्दनसिंह राष्ट्रीय स्कूल के प्रबन्धक थे। कुछ काल कांग्रेस में रहने के पश्चात् इनका रुख हिन्दू महासभा की ओर रहा। फिर निजी परिस्थितिवश ये अन्यत्र चले गये। आजकल ग्वालियर में किसी अच्छी जगह पर हैं। बा० बुलाकीराम जी अंग्रेजी और संस्कृत दोनों के विद्वान थे। कॉसमापोलिटयन् नाम का अंग्रेजी समाचार-पत्र निकालते थे। बाबू जी बड़े ही निर्भय व्यक्ति थे। सरकारी अधिकारी सदा इनसे भय खाते रहते थे। हमको तिलक भूमि, ला० बलवीरसिंह की भूमि, गांधी रोड पर २०००) में मिल रही थी। केवल जमींदार महन्त को २०००) देना पड़ता। परन्तु बाबू जी की समझ में नहीं आया और वे इस बात पर अड़े रहे कि महन्त को रुपया देने की आवश्यकता नहीं, वैसे ही मिल जायगी। मामला उलटा पड़ गया। यदि उस समय वह जमीन दो हजार रुपये देकर ले ली जाती तो आज उस

स्थान पर कांग्रेस का एक भव्य भवन देखने को मिलता। आज लोगों ने लाखों रुपया खर्चा करके वहां अपने-अपने भवन बना लिये हैं।

स्व० ठा० मनजीतसिंह जी देहरा जिले के होनहार नवयुवक थे। जब हमने इनको प्रथम बार एम० एल० ए० के लिये खड़ा किया था तब इनके मुकाबले में लाला श्यामलाल वकील तथा श्री दर्शनलाल वैरिस्टर खड़े हुए थे। जीत तो मनजीतसिंह जी की हुई। दूसरी बार भी ये खड़े हुए तब बाबू उग्रसेनजी इनके विरोध में खड़े हुये थे तब भी श्री मनजीतसिंह जीते। इस चुनाव में बा० उग्रसेन की ओर से लाला लाजपतराय जी भी आये थे। मनजीतसिंह जी भी जिले के मन्त्री रहे। फिर असहयोग के प्रारम्भ में टापू मोची के भाग्य खुले। उसके पश्चात् स्वर्गीया शर्मदादेवी एम० एल० ए० बनीं। उनके त्याग-पत्र देने के पश्चात् श्री महावीर त्यागी एम० एल० ए० बने। १६४२ की धूमधाम के पश्चात् फिर जब चुनाव हुआ तो श्री त्यागी जी ही चुने गये। इनके किसी समय अत्यन्त प्रिय और पीछे के प्रतिद्वन्द्वी चुहड़पुर के पं० देवदत्त बुरी तरह से हारे। वस्तुतः देवीदत्त त्यागी जी के लिये कोई मुकाबला नहीं था। श्रीमती शर्मदादेवी ने स्व० रामचन्द्र जी कुकरेती को बुरी तरह हराया।

अस्तु यह जो हुआ सो हुआ। एक बात सोचने की है कि देहरे की भौगौलिक स्थिति ऐसी है और इस भूमि का प्रभाव ऐसा है कि कोई काम पूरा नहीं होने पाता। तिलक भवन के लिये मैंने तथा मनजीतसिंह ने यत्न किया था और उसके लिये म्युनिसपैलिटी ने स्थान (जहां इस्लामिया स्कूल है) देने का निश्चय किया था, किन्तु मुसलमान मेंबरों ने विरोध किया इसलिये कमिश्नर मेरठ ने मन्जूरी नहीं दी। विवश होकर दानदाताओं को रुपये लौटाने पड़े। लाजपतराय का स्मारक बनाने का यत्न किया गया तो तिलकभूमि (बलवीरसिंह जी की भूमि) ही हाथों से जाती रही। राष्ट्रीय स्कूल तो एक-आध वर्ष चलकर बन्द हुआ। ठा० पूर्णसिंह के दान से डी० ए० वी० स्कूल बना पर वह कानपुर डी०ए०वी० के नाम से फला। यहां का डी० ए० वी० अब कहीं एम० ए० तक आ पाया है।

मैं ऐसे अनेक दृष्टांत दे सकता हूँ। जिस भूमि में आकर अंग्रेज स्वयं फेल हुए, वहां हमारी ही क्या गति होती। अंग्रेजों ने चाहा कि देहरे को काश्मीर की तरह फलवाला प्रदेश बनायें, फेल हुए। उन्होंने चाहा शराब की बड़ी भारी भट्टी खड़ी करदी जाय, फेल हुए। मसूरी में १० लाख का बड़ा कारखाना था, नष्ट हो गया। उन्होंने चाहा था कि कांच के कारखाने खोलें, कामयाब नहीं हुए। उन्होंने चाहा कि रेशम के कारखाने खोलें, फेल हुये। इस तरह मैं देख रहा हूँ यहाँ काम तो बड़े जोरों से उठते हैं पर अधिक काल नहीं टिकते, पूर्ण नहीं होते, सब काम अधूरे रह जाते हैं।

एक बात और है, बाहर से कोई आये उसको मैदान खाली मिलेगा। यहां वालों को इसकी परवाह नहीं, कोई नेता आये, कोई नेता बन बैठे। स्थानिक कार्यकर्त्ताओं में इस बात की कमी है कि वे स्वयं आगे नहीं बढ़ते और पिछलगू रहते हैं, पर कभी कभी बिगड़ते हैं तो बिगाड़खाता भी बुरी तरह करते हैं। पता नहीं भूमि का क्या और कैसा प्रभाव है।

देहरादून चाहे छोटा सा जिला है पर है बड़े मार्के का जिला। क्यों न हो ? यह तो ब्रिटिश शासन का गढ़ रहा है। फॉरेस्ट कालेज यहाँ, मिलिटरी कालेज यहाँ, सर्वे का मुख्य कार्यालय यहाँ, मिलिटरी का गढ़ यहाँ, मसूरी महाराणी यहाँ इस प्रकार देहरे का महत्व है ही। संसार भर के लोग यहाँ दृश्य-दर्शनार्थ आते रहते हैं। इसके अतिरिक्त देश के नेता यहाँ आते ही रहते हैं।

यहाँ सबसे प्रथम जिला कानफ्रेंस पं० जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व में हुई जिसमें ला० लाजपतराय, डा० किचलू, श्री शंकराचार्य, श्री आसफअली, श्री स्टोक्स, पं० नेकीराम आदि आये थे। बड़ी रौनक रही थी। इसी प्रकार प्रान्तीय कानफ्रेंस बड़े जोर की हुई जिसके सभापति स्व० पं० मोतीलाल नेहरू थे। इसमें वल्लभभाई पटेल, प्रान्त के बड़े बड़े नेता, श्री चित्तरंजनदास पधारे थे। मुख्य पौलिटिकल जिला कानफ्रेंसें कई हुईं और एक प्रान्तीय हुई। जिसके अतिरिक्त निखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन हुआ, हिन्दू महासभा हुई, आर्य-प्रतिनिधि सभा का समारोह हुआ और कहने को कह सकते हैं कि क्या २ नहीं हुआ।

जब से स्वराज हुआ है तब से महानेता तथा प्रान्तीय नेताओं को देहरे के बिना सरता ही नहीं। एक ऑलइण्डिया कांग्रेस कमेटी का समारोह शेष रह गया था सो वह भी देहरे की शान के अनुरूप हो गया। महात्मा गांधी जब दक्षिण अफरीका से प्रथम प्रथम पधारे थे तब देहरे भी आये थे। आर्यसमाज में व्याख्यान भी दिया था। देहरे आने के पूर्व हरिद्वार आये थे। महाविद्यालय में दो बार आये थे, हम पर बड़ा प्रेम करते थे। फिर एक बार दौरे में आये थे तब श्रद्धानन्द अनाथालय की आधारशिला रख गये थे और तृतीय जिला कानफ्रेंस में भी सम्मिलित हुए थे। मसूरी में भी १४ दिन रहे थे। जिले भर से आपको १६०००) रु० मिला था। सन् ३० में लोकमान्य तिलक फण्ड में देहरे वालों ने १६०००) रु० एकत्रित किया था। चोहड़पुर वालों के ही ३०००) रु० थे। चोहड़पुर में एक तिलक भवन भी है। देहरे जिले के साथ टिहरी स्टेट है। यहाँ जो आन्दोलन होते रहते हैं उसका प्रभाव स्टेट और गढ़वाल तक पहुँचता रहा है और देहरे के कार्यकर्ताओं ने स्टेट और गढ़वाल के आन्दोलनों में बड़ा भाग लिया है।

यहाँ डी० ए० वी० कालेज है जिसके स्वर्गीय प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद जी अपने हाथ पैर बचाकर देहरे के प्रत्येक आन्दोलन में बराबर योग देते रहे हैं। देहरादून का प्रसिद्ध खड्गबहादुर कॉलेज का विद्यार्थी था। इसने महात्मा गांधी जी को लिख भेजा था, अपने हाथ से चाकू मार कर शरीर के रक्त से लिख भेजा था कि "ब्रिटिश शासन को यहाँ स्थिर करने में गुरखाओं ने जो पाप किया है उसका मैं प्रायश्चित्त करना चाहता हूँ। महात्मा गांधी जी ने खड्गबहादुर को साबरमती आश्रम में बुला लिया था। वह डांडीमार्च (कूच) में महात्मा जी के ८० परखे हुये अनुयायियों में से एक था। पता नहीं वह अब कहाँ है, इस लोक में कि परलोक में ? ब्रिटिश अधिकारियों की उसके लिए आज्ञा थी कि खड्गबहादुर को जिन्दा पकड़ लाओ। उसको इतना भयंकर समझा जाता था। वह देहरे का सुभाष बोस था।

श्री सुभाष बोस भी फॉरवर्ड ब्लॉक के प्रेसिडेण्ट की हैसियत से एक वार देहरे पधारे थे। हम लोग तो जेल में थे किन्तु देहरे वालों ने आपका खूब स्वागत किया था। श्री जवाहरलाल नेहरू तो यहां की जेल को घर बनाये बैठे थे। देहरे में कितनी वार आये और कितनी वार न जाने उनका स्वागत हुआ। जब देहरे में अफगान दूत-मण्डल आया था, तब सरकार ने श्री नेहरू जी को जिला छोड़ जाने की आज्ञा दी थी। क्योंकि चार्लिविली होटेल में श्री जवाहरलाल नेहरू का अफगान मण्डली के साथ एक ही होटेल में रहना पसन्द नहीं था। इस अपमान का बदला हमने पं० जवाहरलाल नेहरू को प्रथम जिला पौलिटिकल कानफरेन्स का सभापति चुनकर लिया।

देहरा जिला प्रत्येक सत्याग्रह में प्रमुख भाग लेता रहा है। सन् १९२१ में केवल मैं, व्रजलाल फरासी (गुजराड़ा) मानसिंह और भोगपुर के दो व्यक्ति जेल में गये थे १९३०, १९३२, १९३८, १९४०, १९४२ में तो जाने वालों की संख्या बढ़ती ही गई। अनेकों ने अपनी वीरता से देहरे के नाम को अमर कर दिया। यह एक लम्बा इतिहास है कभी पूरा प्रकाश डालेंगे। सन् १९१९ से हमको कई वार डिक्टेक्टर बनना पड़ा था। क्या क्या अनुभव हुए एक लम्बी कहानी है, फिर सही। श्री त्यागी जी हमारे पुराने परिचित हैं, रत्नगढ़ से ही सन् १९०८ से ही। हुलास वर्मा भी तभी से परिचित हैं, जब से वे महाविद्यालय में हमारे साथ रहे, होगी कोई १९१२ की बात। मास्टर रामस्वरूप जी को सन् १९१६ से ही जानते हैं जब वे भोगपुर में मास्टर थे। श्री चन्द्रमणि जी को हम गुरुकुल कांगड़ी से ही जानते हैं, जब वे पढ़ते थे।

[५]

स्व० महामना मालवीय जी का भी पूरा-पूरा सम्पर्क रहा। प्रायः वे जलवायु-परिवर्तनार्थ देहरे तथा मसूरी आते रहते थे। देहरे में वे मोहनाश्रम में टिकते थे। मसूरी में काशीवालों की कोठी में टिकते थे। मुझे तो कई वार मसूरी में एक-एक मास तक उनके साथ सत्सङ्ग का अवसर मिला। श्री गोविन्द-वल्लभ पन्त जी भी प्रायः देहरे आते रहे। देहरा जेल में भी दो वार रहे। पेशावर काण्ड के हवलदार चन्द्रसिंह ने भी देहरे को दो वार सुशोभित किया था। मेरठ षड्यन्त्र के लगभग २५-३० अभियुक्त एक-वार गरमियों में मेरठ से यहां जेल में लाकर रक्खे गये थे। तब इनके स्वागत-सत्कार का भार हम पर आ पड़ा था। हम प्रतिदिन जेल में जाकर इनकी देखभाल कर आते थे। अभियुक्तों में, श्री निमकर, कासले, कदम (बम्बई के) तथा बङ्गाल और यू० पी० के भी थे। श्री त्यागी जी के जेष्ठ भ्राता धर्मवीर एम० ए० भी थे, जो पीछे छूट गये थे।

एक वार हमने (१९१६ में) गङ्गोत्री-जमनोत्री की यात्रा की थी। तब स्वर्गीय घनानन्द जी मालदार ने हमारी यात्रा का पूरा प्रबन्ध कर दिया था। हमने गढ़वाल की तीन-चार वार यात्रा की थी। दो वार तो चुनाव के सम्बन्ध में यात्रा हुई, श्री जगमोहनसिंह जी के चुनाव में तथा श्री कुशलानन्द जी गैरोला के चुनाव में।

टिहरी के प्रायः सभी आन्दोलनों में थोड़ा बहुत हाथ हमारा रहा है। रँवाईं काण्ड के अत्याचार के विरुद्ध हमने खूब आन्दोलन किया था। उस समय दीवान चक्रधर जुयाल ने हमारे विरुद्ध कार्यवाही करने की ठानी थी, पर सफल न हुए। सुमन-काण्ड में भी हमने आन्दोलन किया था। सुमन तो रहा नहीं पर उसका त्याग तथा बलिदान व्यर्थ नहीं गया। देहरा जिला कांग्रेस कमेटी टिहरी तथा उस समय के ब्रिटिश गढ़वाल के प्रत्येक आन्दोलन में साथ देती रही है। बहुगुणा काण्ड में भी बड़ा द्वन्द्व रहा, पीछे वे छोड़ दिये गये। जब पं० भवानीदत्त ऊनियाल दीवान थे तब टिहरी की शान्ति तथा समृद्धि के लिये ख्याति थी। चक्रधर जी के समय में अशान्ति ही अशान्ति रही। अब तो टिहरी में प्रजा के प्रतिनिधि शासन कर रहे हैं और स्टेट प्रान्त में विलीन होने को है। हमने एक वार दोनों गढ़वाल को मिला कर सहस्र मील की पैदल यात्रा की। हमारे साथ और भी सज्जन थे। गढ़वाल में खूब चहल-पहल रही।

इस किस्से को यहीं छोड़ कर हम देहरा म्युनिसिपैलिटी की ओर आते हैं। लिखने में हमने क्रम का कोई ध्यान नहीं रक्खा है। जैसी स्मृति उठती है, वैसा २ लिखते हैं। जब हमने देहरे में प्रवेश किया था, पं० आनन्दनारायण चेयरमैन थे। वे सर्वे सर्वा थे। एक प्रकार से राजाओं जैसा ठाट था। इनके समय में मुसलमानों ने खूब जोर बांधा। पं० आनन्दनारायण मधुर स्वभाव के व्यक्ति थे। मैं उनको तब से जानता था जब कि वे ऋषिकुल-हरिद्वार के प्रधान थे। इनके पश्चात् श्री बा० उग्रसेन जी का राज्य रहा। उन्होंने बड़ी दक्षता से काम किया। वर्षों तक अंग्रेज, मुसलमान तथा हिन्दू मेंबरों को प्रसन्न रखा। कांग्रेस के जोर वाले दिनों में खुरशेदलाल जी चैयरमैन हुए। इनके समय में जल-टैक्स काण्ड के विषय में बड़ा आन्दोलन रहा। नगर-सभा ने बड़ा द्वन्द्व मचाया था। श्रीमती पण्डित ने आकर मामला शान्त किया। जब कांग्रेस वालों ने झण्डे का प्रश्न लेकर त्याग पत्र दिया तब गर्गाध्याय चला। उसके विषय में कुछ न लिखना ही अच्छा। आगे की राम जाने।

यहां का डिस्ट्रिक्ट बोर्ड प्रांत भर में गरीब डिस्ट्रिक्ट बोर्ड रहा। कांग्रेस का बहुमत न रहने पर भी प्रभाव कांग्रेस का ही रहा। श्री शांतिप्रपन्न जी वर्षों चैयरमैन रहे और श्री डंगवाल जी वर्षों तक शिक्षा-विभाग के चैयरमैन रहे, अब वे ही बोर्ड के चैयरमैन हैं। यदि गत चुनाव में डंगवाल जी चैयरमैनी के लिये न खड़े हुए होते, शाँतिप्रपन्न जी को चैयरमैन बनने देते तो, एम० एल० ए० के चुनाव में डंगवाल जी ही को कांग्रेस की ओर से खड़ा किया जाता और वे ही चुने जाते। पर कौन समझता, चलो जो पद पल्ले पड़ा वही सही। त्यागी जी के अकस्मात् त्याग पत्र से यह चुनाव का अवसर आ पड़ा था।

[६]

लोग न जाने क्यों प्रायः पूछते रहते हैं, और कभी २ हितैषी बन कर सहानुभूति भी प्रकट करने लगते हैं कि मैंने इतना काम किया फिर भी मैं पीछे क्यों रहा, अर्थात् एम्०एल्०ए० क्यों नहीं बना अथवा

बनने की चेष्टा क्यों नहीं करी। यह तो स्पष्ट है कि मैं ऐसी सहानुभूति का पात्र नहीं हूँ। सहानुभूति उसके लिये चाहिये कि जो एम० एल० ए० बनना चाहता तो था पर न हो सका। यहाँ तो उलटी बात यह है कि मैं कभी भी एम्० एल्० ए० बनना नहीं चाहता था। दूसरों को एम्० एल्० ए० बनाने वाला कभी भी एम्० एल्० ए० से छोटा कहा अथवा माना नहीं जा सकता, लोग यह बात भूल जाते हैं। दूसरी यह बात कि छुटपन से ही मेरी ऐसी प्रकृति बन गई थी कि मैं इस प्रकार की प्रारम्भ में ऊपर २ सुखदायक और परिणाम में क्लेशदायक प्रवृत्ति में फँस नहीं सकता था। यद्यपि देहरे वालों ने मिलकर मुझसे कभी भी यह नहीं कहा था कि आप खड़े हो जाइये, पर स्व० महामना मालवीय जी ने अवश्य ही कहा था कि मैं उनकी नैशनेलिस्ट पार्टी की ओर से खड़ा हो जाऊँ। उस समय इस पार्टी का कांग्रेस से समझौता हो गया था और मैं चाहता तो हो सकता था, किन्तु मुझे यह बात पसन्द नहीं थी। देहरे से न सही, सहारनपुर जिले से अवश्य हो सकता था। देहरे से भी एम्० एल्० ए० पद के लिए लालायित लोगों की संख्या कम नहीं थी।

देहरे में जब कभी जितनी बार भी मैंने जिला कांग्रेस का कार्यभार सम्भाला, अथवा डिक्टेटरी सम्भाली, तब ही सम्भाली जब सर्वसम्मति देखी। सम्भव है देहरे के लोग मुझसे एक स्वर से खड़े होने के लिये कहते तो मेरे मन में आ जाती और मैं खड़ा हो जाता। पर जिस प्रकार से चुनाव लड़े जाते हैं अथवा होते हैं, उस प्रकार की चुनाव-पद्धति को मैं ठीक नहीं समझता था और न ही मुझमें "भिक्षां देही" कहने की आदत थी। आगे जो हो, लोग जाने एम्० एल्० ए० आदि को क्या समझ बैठे हैं!

जिस प्रकार के लोग वहाँ पहुँचे हैं, उनमें से योग्य व्यक्तियों को छोड़ कर अन्यों पर दृष्टि डाली जाय तो स्पष्ट होगा कि ऐसे ऐसे लोग पहुँचे हैं जो इस कार्य के लिये सर्वथा अयोग्य थे और किसी तरह पहुँच गये थे। क्या आप देखते नहीं कि विधान परिषद् में ऐसे लोग पहुँच गये हैं कि जिनके पुरखाओं में भी 'विधान' की बात को समझने वाला कोई न था। यदि विधान परिषद् में कतिपय मद्रासी महाराष्ट्र, बंगाली अथवा यू० पी० के कतिपय विधान-शास्त्री न हों तो इस विधान परिषद् में रक्खा ही क्या है। वैसे ही प्रजातन्त्र के नाम पर कोई भी, किसी तरह वहाँ पहुँच चुका है और कतिपय विधान-शास्त्री विधान बना कर आगे रखते जाते हैं। शेष खाली हाथ उठाते जाते हैं। अब जब कि भारत संघ ने ब्रिटिश पद्धति की प्रजातन्त्र प्रणाली स्वीकार करली है तो ऐसी ऐसेम्बलियों में योग्य और अयोग्य मेम्बरों का मिश्रित झमेला रहेगा ही।

और एक विशिष्ट बात यह है कि जिसके पास चुनाव के लिए लड़ने का खर्च न होगा, वह चुनाव लड़ ही नहीं सकता चाहे कितना ही योग्य क्यों न हो। पहिले तो चुनाव लड़ने वाला कांग्रेसी हो। फिर उस पर ऊपर प्रान्त वालों की कृपा हो, खड़े होने वाला व्यक्ति कुछ दाव पेंच भी जानता हो। यदि किसी प्रकार जिले से नाम गया हो तो ऊपर से भी स्वीकृति मिले, इस बात के लिये सतर्क हो। फिर वहाँ भी यह देखा जाता है कि खड़े होने वाला व्यक्ति अपना खर्च कर सकेगा कि नहीं। इतने झमेले

में से निकले, और अन्य कष्टों को सहे, ग्राम २ भटकता फिरे, गिड़गिड़ाता फिरे, फिर चुनाव में कामयाब हो। तब समझिये उसके प्राण में प्राण आयें।

अस्तु मैं लिख ही चुका हूँ कि मैं क्यों नहीं खड़ा हो सका। और यह बात लोग समझें या न समझें एम्० एल्० ए० होने की मुझे लालसा न कभी थी और न है। और न मैं अपने आपको, इस प्रकार एम्० एल्० ए० न होने से अथवा विधान परिषद् में न पहुँचने से हीन समझता हूँ। एक चक्रवर्ती राजा का पटवारी बनने में क्या गौरव है। हम तो वेदान्तशास्त्री हैं। परिणामवाद को मानने वाले हैं।

साधारण जनता, अज्ञ जनता की दृष्टि में किसी प्रकार कम समझे जाने पर भी तत्वार्थ में अपने विशिष्ट स्थान पर खड़े हैं। जहाँ खड़े होकर नीचे देखने में हमको यह दिखलाई पड़ता है कि अपने आपको बहुत ऊँचा समझने वाले लोग, अथवा साधारण बेसमझ जनता जिनको ऊँचा पहुँचा हुआ समझती है, वे लोग बहुत नीचे खड़े हैं, बहुत नीचे खड़े हैं। हम उन सबका अभिनन्दन करते हैं कि वे अपने को ऊँचा समझ कर, उसी अज्ञानावस्था में अपने आपको कृतकृत्य समझ रहे हैं। हम आनन्द में हैं, उसको साधारण जन नहीं समझ सकेंगे। इसमें हमारा कोई दोष नहीं है। फिर एक बात और है, जब किसी प्रकार, झूठे या सच्चे त्यागी, तपस्वी नाम से मशहूर हुए हैं, तब रागी बनने में हमारी कौनसी बड़ी महत्ता थी। जनता की दी हुई डिग्री को मानना ही चाहिये, चाहे उसमें तथ्य हो या न हो।



[७]

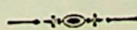
कांग्रेस कोई सात्विक पुरुषों का अखाड़ा नहीं है, यद्यपि महापुरुष महात्मा गांधी ने इस को सात्विक बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया तथापि सात्विक, अहिंसक, सत्यवादियों, का अखाड़ा बन नहीं सका। केवल महात्मा गांधी के कारण केवल इने-गिने कुछ महापुरुष सात्विक बन सके, अन्यों ने कुछ काल के लिये सत्य, अहिंसा को नीति के तौर पर मान लिया था। कांग्रेस ने स्वाधिकार की प्राप्ति के लिये लड़ना सिखाया इसलिये कांग्रेस राजस सोसाइटी रही है। राजस में सदा अहंकार जागृत रहता है, अन्धकार और प्रकाश दोनों रहते हैं, जिस समय जिस उद्देश्य से प्रवृत्त होते हैं, उन्हें सफलता मिलती है, तब आनन्द मिलता है। पर जब सफलता नहीं मिलती क्लेश, कलह बढ़ता है। सभा सोसायटी, समाज में अहंकार से अहंकार टकराता रहता है। परस्पर झगड़े बढ़ते हैं। राजस गुण के अधिकार में यह अपरिहार्य है।

कांग्रेस में सरकार के साथ झगड़े चलते ही थे और साथ साथ अपनी २ बढ़ाई के लिये आगे बढ़ने के लिये, परस्पर झगड़े चलते ही रहे और पार्टियाँ बनती गई तो देहरादून ही इस नियम का अपवाद क्यों बनता। यहां भी परस्पर कलह, क्लेश, ईर्ष्या-द्वेष पनपे ही और पनपते रहे हैं। पर मैं

मध्यवर्ती मार्ग पर चलता रहा और जहाँ तक पार बसी पार्टियों को सम्भालता रहा। मेल डालने का यत्न करता रहा, पर पूर्ण रूप से सफल न हो सका क्योंकि परस्पर ईर्ष्या, दीर्व द्वेष का मेरे पास उपाय ही क्या था। मैंने महामना रानडे के जीवन से एक बात अवश्य सीखी है, वह यह कि लोगों के गुणों पर दृष्टि रक्खो और उस विषय में उनका आदर करो। इसलिये मैं प्रत्येक के गुणों पर ही दृष्टि देता रहा, और यह समझ कर चलता रहा हूँ कि अपने २ दोष का सब कोई भागी है, वह अपने दोषों का फल स्वयं भोगेगा।

किसी का किसी के साथ रागद्वेष से होता क्या है? दुष्ट पुरुष के गुण भी उभरेंगे ही और अच्छे पुरुष के दोष भी उसको हानि पहुंचायेंगे ही। दुष्ट पुरुष अपने समस्त दोषों के साथ कुछ काल के लिए उभरेगा भी तो अधिक काल टिक न सकेगा। अच्छा गुणी मानी पुरुष पीछे रहा तो किसी न किसी समय संसार उसकी पूजा करेगा ही, इसलिये जहाँ तक मुझसे बना मैंने यत्न किया कि जिले में शान्ति से काम हो, अच्छा काम हो, ठोस काम हो। मुझे पूर्ण सन्तोष है कि मैं अपना कर्तव्य निभा चुका। अब जिनके कन्धों पर बोझ है अथवा आगे जिन पर बोझ पड़ेगा वे जानें और उनका काम जानें। मेरी नीति सदैव यह रही है कि मैं इस जिले के प्रत्येक शुभ, उन्नतिप्रद कार्य में योग देता रहूं और शेष से पृथक् रहूं। मुझसे मतभेद रखने वाले व्यक्ति भी इस बात को मानेंगे कि इस विषय में मैं बराबर एकरस रहा। मैंने अपने से मतभेद रखने वालों के गुणों का सदैव आदर किया है। मेरे साथ व्यर्थ द्वेष-भाव रखने वालों के साथ भी मैंने मित्रता का भाव रक्खा है। इससे अधिक मैं कुछ नहीं लिखना चाहता।

मैंने सदैव सत्य बात पर ही किसी का साथ दिया है चाहे उसका मुझसे कितना ही मतभेद क्यों न रहा हो, और प्रत्येक उचित-अनुचित बात पर साथ नहीं दिया है। लोग अब तक यह नहीं समझ रहे हैं कि त्यागी जी तथा श्री खुर्शेदलाल जी की पार्टी के साथ भी मेरे उग्र मतभेद रहे हैं, पर मैं अन्य लोगों के सदृश बाजार में अथवा चौराहों पर ढंढोरा नहीं पीटता रहा। मधुर शब्दों में उनके गुण दोष उनको समझाता रहा। दूसरी ओर दूसरी पार्टी के लोगों के साथ भी प्रेम रहा पर उनकी अनुचित बातों से मैं बचता रहा। जो लोग काम कुछ भी नहीं करते थे, सैंत-मैंत में नाम चाहते थे, उनकी अनधिकार चेष्टा को देख कर मुझे दुःख होता था पर मेरा वश ही क्या था। जो लोग सदा झगड़े खड़े करने पर उतारू रहते थे, अनुचित ढंग से दूसरों को नीचा दिखाने की चेष्टा करते रहते थे, उनके लिये मेरे हृदय में कभी स्थान नहीं रहा। मेरी अपनी अनेक त्रुटियाँ रहते भी देहरावासियों ने मुझे सम्भाल लिया, मुझसे प्रेम रक्खा, मुझसे काम लिया, मैं उनका कृतज्ञ हूँ।



[८]

श्री त्यागी जी बिजनौर छोड़ कर यहाँ आये, अजबपुर में रहे। कांग्रेस के निर्भय कार्यकर्ता थे ही, कांग्रेस-कार्य में अनथक सेवक की भाँति गांव २ में पैदल घूमे और एम्० एल्० ए० हुए। उधर से उधर

ही विधान परिषद् में पहुँचे। बीच में प्रान्त में उग्र मतभेद होने के कारण कांग्रेस तथा एम्.एल्.ए. पद से त्याग-पत्र दे बैठे थे। अब फिर देहरे में ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के स्वागताध्यक्ष होने के कारण फिर कांग्रेस में आने का अवसर मिला। आगे देखना चाहिये क्या धुन सवार रहती है। त्यागी जैसा निर्भय व्यक्ति देखने को नहीं मिलेगा। जीवन भर में १०-१२ बार जेल गये होंगे। कष्ट की गाथा पूछिये ही नहीं। वह तो त्यागी जी के मुख से ही सुनने योग्य है। देहरे में कांग्रेस के इतिहास में त्यागी जी का नाम भुलाया नहीं जा सकता। हठी, अहंकारी स्वभाव के कारण आपको कभी कभी बहुत ऊँचा-नीचा देखना पड़ा।

श्री खुर्शेदलाल जी म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन के रूप में आगे आकर फिर एकदम डिप्टी मिनिस्टर के रूप में भारत संघ में पहुँचे। बड़े चतुर पुरुष हैं, समय को खूब पहिचानते हैं। सहनशील पुरुष हैं।

श्री मास्टर रामस्वरूप जी साधारण स्कूल मास्टरी से चल कर कष्ट उठाते २ अब म्युनिसिपल बोर्ड के शिक्षा सुपरिण्टेण्डेण्ट हैं तथा जिले व नगर के प्रसिद्ध कार्यकर्ताओं में माने जाते हैं। आपकी वक्तृत्व-शक्ति उल्टी चल पड़ती है तब संघटन को विघटित भी कर डालती है। वैसे हृदय के सरल सज्जन पुरुष हैं "हठ में हठ हमीर हठ" को चरितार्थ करते हैं।

प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के प्रतिनिधि रूप में पहिले ठा० मनजीतसिंह रहे, फिर मैं कई वर्ष प्रतिनिधि रहा, फिर त्यागी जी रहे फिर सोमेन्द्र मुकर्जी व कृष्णचन्द्र वकील रहे। फिर खुर्शेदलाल जी भी रहे। स्वर्गीय बिहारीलाल जी भी रहे। स्वर्गीय बिहारीलाल जी हमारे जिले के मधुर कार्यकर्ता रहे। श्री मनजीतसिंह के पश्चात् आप जिले के मंत्री रहे, फिर असेम्बली के मेम्बर भी हुये। ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी में १६२० से मैं मेम्बर रहा १६३०-३१ तक। फिर श्री त्यागी जी तथा खुर्शेदलाल जी का नम्बर आया।

श्री हुलासवर्मा जी का कार्यक्षेत्र समाज और कांग्रेस दोनों में रहा है। आपकी त्याग-तपस्या प्रशंसनीय है। उसी का फल यह है कि आप कई वर्ष से जिले के उपप्रधान तथा आज कल प्रधान हैं। मेरी तथा श्री खुर्शेदलाल जी की अनुपस्थिति में स्थानापन्न प्रधान रहते रहे हैं। जिसके हो लेते हैं पूरा साथ निभाते हैं।

श्री शान्तिप्रपन्न जी को मैं तब से जानता हूँ जब पहले इनके पिता श्री महन्त जी से परिचय हुआ था। मधुर व्यवहार स्वाभाविक है।

श्री चन्द्रमणि जी का कार्यक्षेत्र दोनों है। आर्यसमाज तथा कांग्रेस। व्यवहार कुशल हैं। अक्खड़ तथा कठोर स्पष्टवादी हैं। धुन के पक्के हैं।

मैं तो भूल ही गया। श्री नारायणदास भार्गव जिले के माने हुए कार्यकर्ता हैं। इस इंजन में बड़ी भारी शक्ति है। वेग से चलने लगे तो ६० मील एक्सप्रेस की चाल रहती है। यह इंजन उल्टा

भी इतने ही वेग से चलता है। इनको साथ लिए बिना देहरे का कोई कार्य नहीं हो सकता। इनकी जोड़-तोड़ ऐसी कमाल की है कि जिले के कीचड़ में न फंस कर बाहर रहते तो प्रांत के बड़े नेता होते।

मास्टर मथुराप्रसाद जी—अक्खड़पने से आपने भी बहुत कष्ट सहे। आपने गत ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के अवसर पर भेदभाव भुला कर अपने आपको काम में झोंक दिया था। पार्टीमैन न रहें तो सबसे आगे आसकते हैं।

श्री कृष्णचन्द्र सिंहल—वर्षों पूव आगे आजाना चाहिये था। उतावलापन और अस्थिरता के कारण जितना बढ़ सकते थे बढ़ न सके, जितना आगे जा सकते थे जा न सके। किसी एक पक्ष के होकर रहते तो कहीं से कहीं पहुँच गये होते। आगे देखना चाहिये।

श्री डंगवाल जी—धुन के पक्के, हृदय के कड़े भी, कोमल भी, हठी भी, सुनते भी खूब हैं. सुनाते भी खूब हैं। फिलॉसफरों की सी झलक रहती है। ५ मिनट के कार्य को ५० मिनट लगायेंगे। जिस बात को पांच मिनट में कह सकते हैं घण्टा लगायेंगे। वर्षों तक सफल जिला प्रधान रहे हैं। मैं तो इतना ही समझ सका हूँ। समझने में भूल हो सकती है।

आशा है इन संस्मरणों के कारण लोग मुझ से व्यर्थ न बिगड़ेंगे।

अन्य विषयों में आगे कभी लिखेंगे। इनके लिये पृथक् अध्याय चाहिये। जिले भर के लोगों का हाल लिखना है।

[६]

थोड़े से इने-गिने लेखों में देहरादून के तीस वर्षों के संस्मरण लिखना सहज काम नहीं है। उसका लिखना किसी प्रकार सहज माना भी जाय तो भी घटनाओं का क्रमबद्ध उल्लेख तो नितरां कठिन है ही। इसलिये आगे-पीछे का ध्यान न रख कर स्मृति पटल में से जिस जिस प्रकार से भी संस्मरण निकलते जारहे हैं, उसी प्रकार लिखता जा रहा हूं। जैसा भी लिख रहा हूँ दून-समाचार के वाचकों का मनोरंजन होगा ही।

सन् १९२०-२१ की धूमधाम में हाथीबड़कला के पं० अनन्तराम बाजा का उल्लेख न करना कृतघ्नता होगी। 'बाजा' गोरखाली में कहते हैं ब्राह्मण को। यह बाजा गुरखों का पुरोहित था। मिलिटरी वालों को सन्देह हुआ कि यह बाजा फौज की खबरें बाहर शास्त्री जी के पास पहुँचाता रहता है और बाहर के आन्दोलनों की खबरें भीतर ले जाता है। बस इसी सन्देह में बेचारे को डाकरे तथा गुरखाली पल्टनों से निकाला गया। अनन्तराम बाजे ने हमारा पूरा २ साथ दिया।

इस धूम-धाम के समय स्वर्गीय चौधरी बिहारीलाल जी ने सर्वे डिपार्टमेंट से जहां कि वे नौकर थे, त्यागपत्र दे दिया। उस समय उस विभाग में गांधी टोपी पहनने वाले यही अकेले थे। १९२० की

कान्फ्रेंस में भाग लेने के कारण अनेक महानुभावों को नौकरी से अलग होना पड़ा था। तब से बिहारीलाल जी जो राजनैतिक क्षेत्र में उतरे थे अन्त तक जमे रहे। इनके पिता स्व० चन्दालाल जी कट्टर सामाजिक पुरुष थे। बिहारीलाल जी आर्यसमाज के भी स्तम्भ थे। दो एक वार जेल में यात्रा भी कर चुके थे। अन्त उनका हुआ दक्षिण के संगमनेर (सतारा) में जाकर जहां कि वे इलाज के लिये गये थे। इन्हीं के छोटे भाई गिरधारीलाल जी आजकल हमारे प्रांत में जेल आदि विभाग के मिनिस्टर हैं। इनसे भी छोटे भाई श्री सुन्दरलाल विधान परिषद् के सदस्य हैं।

१९१९-२०-२१ की धूम-धाम में श्री दिनकर शर्मा, एम० ए० का नाम उल्लेखनीय है। अनुपम वक्ता, धुन के कार्यकर्त्ता रहे। गांव २ के प्रचार में हमको इनसे बड़ी सहायता मिली। १९२५ तक तो वे कांग्रेस के साथ रहे फिर मतिविपर्यय के कारण कांग्रेस को छोड़ बैठे। आजकल आप वकील हैं, १९२५ के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन में आपने योग दिया था।

एक और महानुभाव का उल्लेख भी वांच्छनीय है। वे हैं डॉक्टर कीर्तिदेव। आपने ग्राम २ में जाकर (विशेषतः परवादून) हमारा हाथ बटाया था। अब लगभग १० वर्षों से मसूरी में पानी का इलाज करते हैं।

मुझे सन् याद नहीं आरहा है, है यह चकरौते की बात। आर्यसमाज का उत्सव होरहा था। रात्रि के ९ बजे थे। कुछ गोरों ने आकर समाज के शीशे फोड़कर उनके छेदों में से भीतर गोलियां चलाईं। हाहाकार मच गया। पं० जयकृष्ण दरोगा मारे गये जो भीतर बैठे हुये थे। गोरों की जयकृष्ण जी के साथ अनबन थी। वे गोरों की मनमानी नहीं होने देते थे। इस घटना से जिले भर में सनसनी फैल गयी थी। प्रश्न यह था कि वहां जाय कौन और तहकीकात करे कौन। जिले के अधिकारी मुझ पर कड़ी दृष्टि रखते थे, इसलिये मैं छुप नहीं सकता था। चकरौते से मेरे पास कई पत्र आये (दस्ती) कि कृपया इधर मत आइये। यह छावनी है, आते ही पकड़े जाओगे और हमको भी आपत्ति में डालोगे।

मैं चुप-चाप रेल से सहारनपुर गया, वहां से लारी द्वारा चोहड़पुर पहुँचा, वहां से सब समाचार लेकर कालसी गया। वहां ६-७ दिन रह कर सब सामग्री एकत्रित करके लीडर (प्रयाग) में मैंने अंग्रेजी में कई लेख लिखे। सम्पादक को लिख दिया कि मेरा नाम न छापे। जब लेख निकले जिलाधिकारियों में बड़ी खलबली मची, पर वे जान न सके कि कौन लिख रहा है। जनता में भी कतिपय मेरे विश्वासपात्र मित्रों को छोड़कर इस बात को कोई नहीं जानता था। पत्र लिख कर मैं सहारनपुर जाने वाली डाक की लारी के ड्राइवर को दे देता था और वह सीधे सहारनपुर ले जाकर वहां डाक में डाल देता था। चकरौता, चोहड़पुर, कालसी, देहरादून के डाकखाने वाले टापते रह जाते थे। सरकारी हुक्म थे कि चकरौता के विषय में कोई तार वगैरह बाहर जाने न पाये, जिस पत्र पर सन्देह हो वह रोक लिया जावे।

मैंने चोहड़पुर से तार देना चाहा, पर पोस्टमास्टर घबरा गया और बोला 'महाराज मेरी नौकरी चली जायगी, मुझ पर कृपा रखो।" फिर तार न जा सका। मैं कालसी आर्यसमाज में ठहरा रहा, किसी

को भी सन्देह न हुआ। मंत्री या प्रधान रामप्रसाद जी इस बात को जानते थे। वहाँ उन्होंने और स्व० पं० मुकन्दराम जी (चोहड़पुर), स्व० पं० राजाराम जी (चोहड़पुर) ने आवश्यक सहायता दी। स्वर्गीय सब-इनस्पेक्टर श्री पं० जयकृष्ण जी तब से मेरे परिचित थे जब कि मैं भोगपुर में था। वे रानीपोखरी थाने के इंचार्ज थे। इनके पश्चात् रानीपोखरी में चौ० इन्द्रसिंह थानेदार हुये। इन्होंने हमको खूब दिक किया।

इनके पश्चात् एटा जिले के श्री दीनदयालु थानेदार आये, इनके जमाने में इलाके की जनता को कोई कष्ट नहीं हुआ। एक दिन दारोगा जी कई सिपाही लेकर भोगपुर पहुँचे। मेरे पास आये, बाहर पुलिस को खड़ा किया जिससे कोई आने न पाये। मैंने कहा, कहिए कोई वारण्ट है क्या ? हँस कर बोले कोई वारण्ट नहीं है, मैं तो प्रार्थना करने के लिये आया हूँ। "यह आपका दलबल सहित आना क्या अर्थ रखता है" मैंने मुस्करा कर कहा। वे बोले आप जानते हैं मैं किस ढंग से काम कर रहा हूं। प्रजा को तनिक भी कष्ट नहीं पहुँचाता। एक पाई की भी रिश्वत नहीं लेता। कृपया आप मेरे चाल-चलन के विषय में मुझे एक प्रमाणपत्र लिख दीजिए। मैं उसको सुरक्षित रूप से अपने ट्रंक में रख छोडूँगा।

मैंने एक सर्टिफिकेट लिख दिया और दारोगा जी हँसते हुए चले गये। जब तक वे नहीं गये, सारे भोगपुर में एक बेचैनी थी कि "न जाने क्या होने वाला है।"

---

[१०]

१९२४ में देहरे में अतिवृष्टि के कारण बड़ी बाढ़ आई थी। ८-१० दिन के लिए हरिद्वार तक का रेल मार्ग बन्द था। देहरे में तो एक सप्ताह के लिए डाक बन्द, तार बन्द, मार्ग बन्द सब कुछ बन्द ही बन्द था। हरिद्वार में भी बेहद बाढ़ थी। यह था अक्तूबर का महीना। इन्हीं दिनों में १५वाँ निखिल भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन था। हम तो निराश हो चुके थे कि सम्मेलन न हो सकेगा, किन्तु ईश्वर की कृपा से सम्मेलन होने के ७-८ दिन पूर्व ही मार्ग ठीक हो गया और स्व० श्री माधवराव सप्रे के सभापतित्व में सम्मेलन की खूब धूम रही। स्व० महन्त लक्ष्मणदास, स्व० महन्त ओंकारदास, महन्त परशुराम जी भरतमन्दिर ने पूरा २ सहयोग दिया। श्री टिहरी नरेश ने प्रतिनिधियों के ठहरने के लिए राजा-भवन दे दिया था। भारतवर्ष के प्रसिद्ध २ साहित्यिक महारथी पधारे थे। किस किस का नाम लिखें। तथापि श्री टण्डन जी, स्व० श्री जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी (कलकत्ता), श्री जगन्नाथ शुक्ल आयुर्वेदपंचानन (प्रयाग), श्री स्व० शिवप्रसाद गुप्त (काशी) आदि कोई दो सौ प्रतिनिधि थे। नाभा-नरेश प्रतिदिन आते रहे, प्रिंसिपल लक्ष्मणप्रसाद (डी० ए० वी०) ने दलबल सहित योग दिया। कवि दरबार में श्री जयचन्द्र विद्यालंकार ने समय बाँध दिया था। कवि-सम्मेलन,

नाटक, प्रदर्शिनी आदि की धूम रही। इस बाढ़ का वृत्तान्त मैंने लीडर को भेजा था। क्योंकि मैं स्वयं देहरे से हरिद्वार तक पैदल जाकर सब स्थिति देख चुका था। बाढ़ क्या थी, छोटा सा प्रलय समझिये।

सन् १९२६ में आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्तप्रान्त का महाधिवेशन डी० ए० वी० कॉलेज में हुआ। हम ही स्वागताध्यक्ष थे। स्व० श्री बाबू घासीराम वकील के सभापतित्व में आर्यों का यह समारोह भी देखने योग्य हुआ। इसमें श्री लाला आर्यकिशोर जी गुप्त ने हमको बड़ी सहायता दी थी। समस्त भोजनादि स्वागत का प्रबन्ध इन्हीं के हाथों में था।

यहाँ प्रथम दिन स्वागत भाषण देने के लिये जब मैं हॉल में जा रहा था तो मार्ग में एक दरी फटी हुई थी, उसमें पैर उलझ कर मैं गिर पड़ा। आँखों के सामने अंधेरा छा गया। किसी प्रकार सम्हल कर मैं प्लेटफॉर्म पर पहुँचा, जैसे तैसे मुद्रित भाषण पढ़ा और फिर जाकर लेट गया। अचानक गिरने से शरीर भर में वायु कुपित हो चुकी थी। किसी प्रकार ज्वालापुर पहुँचा। वहाँ स्व० वैद्यराज पण्डित रामचन्द्र जी ने ७-८ मास तक मेरा इलाज किया। मैं उठ नहीं सकता था, बैठ नहीं सकता था, चल फिर नहीं सकता था। आमवात के कारण संत्रस्त था। हमारे शिष्यगणों ने हमारी सेवा की एकनिष्ठता से। हमने समझा था कि हम गये, रह भी गये तो किसी काम के नहीं रहेंगे, पर विधाता का विधान और ही था। मैं दीर्घकाल पश्चात् चङ्गा हो गया, चङ्गा न होता तो आगे की जन्मपत्री को कौन भुगतता।

देहरादून में कोई भी काम उठता तो मैं कतिपय विशिष्ट महानुभावों से अवश्य ही परामर्श कर लिया करता था। उनमें श्री बाबू उग्रसेन जी, श्री लाला आर्यकिशोर जी तथा बाबू जयन्तीप्रसाद जी मुखत्यार विशेष पुरुष थे। स्व० लाला हरप्रसाद जी भी अच्छे परामर्शक थे।

देहरे में पं० जवाहरलाल के नेतृत्व में जो प्रथम राजनैतिक कानफ्रेंस हुई, उसमें श्री शंकराचार्य भारती तीर्थ (शारदापीठ), डॉ० किचलू, श्री आसफअली, श्री स्टोक्स (शिमला), श्री पं० नेकीराम जी, श्री ला० लाजपतराय जी आदि पधारे थे। लखनऊ की देवी सत्यवती ने अपने भाषणों से जनता को हिला दिया था। श्री हंसराज कक्कड़ जी के होटल में श्री ला० लाजपतराय टिके थे।

उस समय देहरे में एडम्स नामक एक बड़ा ही विचित्र तथा वहमी कलक्टर रहता था। श्री बेन्स जाइण्ट मैजिस्ट्रेट थे, फिर वे मेरठ के कमिश्नर हो गये थे। बेन्स श्री जवाहरलाल जी के विलायत के साथी थे, इसलिये वे स्वयं उनसे मिले।

एडम्स चाहता था कि कानफ्रेंस बन्द की जाय। पर उस समय स्व० श्री पं० आनन्द नारायण जी, श्री बाबू उग्रसेन जी आदि के बीच में पड़ने के कारण विघ्न-बाधा दूर हो गई। एडम्स ने मुझे बुला कर, क्योंकि मैं स्वागताध्यक्ष था, कहा कि लिखित रूप में दो कि कानफ्रेंस में कोई राजद्रोहात्मक भाषण नहीं होगा। मैंने कहा कि मैं कोई ऐसी गारण्टी नहीं दे सकता। आपके सी० आई० डी० रहेंगे। इनकी रिपोर्ट से आपको ज्ञात हो जायगा कि अमुक ने राजद्रोहात्मक भाषण दिया है, तब आप उस पर मुकदमा चला सकते हैं।

देहरे में १४४ धारा लगा दी कि पं० जवाहरलाल जी नेहरू का जलूस न निकल सके। हम लोग तो जलूस निकालने पर तुले हुए बैठे थे ही। जब जलूस स्टेशन से चल दिया तब एडम्स ने कहला भेजा कि जलूस निकाल सकते हो।

१६२१ दिसम्बर में जिस मैजिस्ट्रेट ने मुझे १५ मास का कठोर कारावास दिया था, उसका नाम था हरचन रोडर। वैसे बुद्धिमान् मैजिस्ट्रेट था किन्तु था पूरा अथवा आधा गोराशाही। मैंने तो उसे स्पष्ट कह दिया कि मैं उसे मैजिस्ट्रेट नहीं मान रहा हूँ। बड़ा बिगड़ा। इसकी और बाबू बुलाकीरामजी की जब तब मुठभेड़ हो जाती थी। तिलक भूमि के मैदान में १४४ धारा तोड़ने के कारण स्व० ठा० मनजीतसिंह तथा बीसियों स्वयंसेवकों को उसने बैंत से पीटा था। लोग भी डटे रहे और अन्त में उसको हार खानी पड़ी।

मुझे जो कठोर दण्ड दिया गया था वह ११६ क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेंट एक्ट की धारानुसार था। हर्रावाला में जो मीटिङ्ग हुई थी उसमें मैंने स्वयंसेवकों की भरती की थी। जिले भर में से २००० स्वयंसेवक एकत्रित हुये थे। बाबू बुलाकीराम सभा के प्रधान थे। ठा० चन्दनसिंह कमाण्डर थे। देहरे में ११४ धारा लगी हुई थी। देहरे के चारों ओर छह मील तक हम बोल नहीं सकते थे। इसलिये हमको यह सभा हर्रावाला स्टेशन के सामने तार के बाहर खेतों में करनी पड़ी थी। जनत की उपस्थिति होगी कोई ६००० की।

मुझे उस समय के कोतवाल सरदार हरनामसिंह ने पकड़ा था। जेल के दरवाजे पर जमघट होगा कोई दो सहस्र जनता का, बड़ी चहल पहल रही।

१६२१ दिसम्बर ता० १३ को मेरा फैसला जेल में हुआ। देहरे के सभी प्रसिद्ध वकील एकत्रित थे। यहाँ से मैं मुरादाबाद जेल में भेजा गया, वहाँ से बरेली ले जाया गया, वहाँ से लखनऊ, वहाँ से रायबरेली, रायबरेली से १६२३ अप्रैल में छूटा। सीधे देहरे आया। नारायण मुनि आदि मुझे लेने लक्सर गये थे। उन्हीं दिनों म्युनिसिपैलिटी के चुनाव की धूम थी। कांग्रेस ने ५ उम्मीदवार खड़े किए थे उनमें से चार आये। मुसलमानों में श्री फारुखी जी का नाम लेने योग्य है जो सदा हमारा साथ देते रहे। काश्मीरी ख्वाजा अब्दुल अजीज को भी भुलाया नहीं जा सकता, जो १६२१ से बराबर साथ देते रहे हैं और कष्ट उठाते रहे हैं।

---

[११]

'प्रथम जिला कांफ्रेन्स' १६२१ मार्च को हुई। सभापति पं० जवाहरलाल नेहरू थे, यह तो मैं पहले लिख चुका हूं। द्वितीय जिला कानफरन्स १६२२ में डोईवाला में हुई। इसमें भी श्री जवाहर-

लाल जी पधारे थे। भोगपुर के लाला कुन्दनलाल तब मन्त्री थे। इनका पुरुषार्थ प्रशंसनीय रहा। इन्होंने हमारे पीछे अच्छी तरह काम संभाला। देहरे में दफा १४४ लगाई गई थी, इसलिये कानफरन्स डोईवाला में करनी पड़ी। 'तृतीय राजनैतिक कानफरन्स' १६२८ में हुई, जब महात्मा गांधी देहरे में पधारे थे और मसूरी में भी ८-१० दिन रहे थे। 'चतुर्थ राजनैतिक कानफरन्स' श्री हरिश्चन्द्र बाजपेयी की अध्यक्षता में चूहड़पुर में हुई थी। ये दिन जापान-युद्ध के थे। जर्मनी, जापान, इटली एक ओर और इंगलैन्ड, अमरीका रूस आदि नौ राष्ट्र एक ओर थे। उस समय हम जिले के डिक्टेटर थे। यह तो मैं पूर्व लिख चुका हूँ कि जब हम जेल में थे, रायबरेली में, तब सम्भवतः १६२२ की ही बात है प्रांतीय पोलिटिकल कानफरन्स स्व० श्री मोतीलाल नेहरू जी की अध्यक्षता में हुई थी।

तीन वर्षों में जिन२ इलाकों में अपने यहां धूमधाम से अनेक वार स्थानिक कानफरन्सें कीं उनकी नामावली संक्षेप से देता हूँ :—

एक वार 'मसूरी में' श्री एम० एन० रॉय की अध्यक्षता में। एक वार "ऋषीकेश में" स्वा० केवलानन्द जी के समय में हमारी अध्यक्षता में और दूसरी वार एम० एन० रॉय के सभापतित्व में। 'भोगपुर में' ५-६ वार। २-३ वार तो हम ही अध्यक्ष रहे। एक वार श्री सेठ दामोदर स्वरूप रहे। फिर एक वार श्री धुलेकर एम० एल० ए० रहे। (गङ्गल में) दो वार (मालकोट में) दो बार, (वरकोट में) दो वार, (रानीपोखरी) तीन वार, एक वार पं० जवाहरलाल नेहरू आये थे दौरे में। स्वर्गीय चौधरी बुधसिंह सभापति थे। (डोईवाला) तीन वार, दो वार जवाहरलाल एक वार पन्त जी पहुँचे थे। (द्वारा) दो वार (थेवा) मालदेवता ३-४ वार (गुजराडा) कई वार (राजपुर) कई बार, (झाजरा) एक वार।

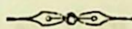
आमवाला नालापानी, डाण्डा-लखोण्ड, रायपुर, गूजरोंवाली, तुनवाला, हर्रावाला, बालावाला नकरौंदा, अजबपुर, पौंधा, भाऊवाला, गलजवाड़ी, बड़वा, (विनहार) रुद्रपुर, राजपुर, जोहड़ी, बाडवाला कालसी, चकरौता, टिमली और न जाने कहां कहां लोगों ने कई वार समारोह किये। विपत्तिकाल में अजबपुर ने भी दो तीन वार कानफ्रेन्स की। सन् १६३२ में मास्टर रामस्वरूप ने हमारा बड़ा साथ दिया। प्रांत के कौन कौन से नेता नहीं आये और क्या क्या नहीं हुआ ? सब कुछ हुआ और जिले की जनता ने सब कुछ देखा।

स्वर्गीय जनों में पं० मुकन्दराम चोहड़पुर, पं० राजाराम चोहड़पुर, लाला शिवचरणलाल भोगपुर, पं० देवरत्न देहरादून, लाला ऊधोराम देहरादून, ला० मित्रसेन देहरादून, बाबू बुलाकीराम जी तो सर्वे सर्वा थे ही। ठा० मनजीतसिंह, ला० हरप्रसाद देहरादून, स्वामी विचारानन्द देहरादून, स्वामी केवलानन्द ऋषीकेश, चौ० बुधसिंह राणीपोखरी, पं० प्यारेलाल रायपुर, हरनामसिंह मालदेवता, पद्मसिंह (गुजराड़े के पास न जाने कौनसा ग्राम है—मैं भूलता हूं), थानों के लाला मेहरचन्द्र, ला० केदारनाथ देहरादून, बाबू ज्योतिस्वरूप वकील देहरादून, ला० चण्डीप्रसाद प्रज्ञाचक्षु, बा० चण्डीप्रसाद वकील (पहिले कई वर्ष काँग्रेस में रहे फिर नहीं रहे), श्री रामचन्द्र कुकरेती जब पहिले पहिले विलायत से आये थे १॥ वर्ष कांग्रेसी रहे, फिर चुनाव में कांग्रेस का मुकाबला ही करते रहे। ठा० पृथ्वीसिंह अजबपुर

सदा काँग्रेस के साथ रहे । प्रिन्सिपल लक्ष्मणप्रसाद तथा उनका कालेज भी बराबर साथ देता रहा ।

गढ़वाली के सम्पादक श्री पं० विश्वम्भरदत्त चन्दोला, जो आजकल वृद्धावस्था के कारण विरक्त हैं, सदा कांग्रेस का विरोध ही करते रहे हैं । कभी २ साथ भी देते रहे हैं । टिहरी के दीवान चक्रधर के मामले में मानहानि के मुकदमे में आपको इक वर्ष का कारावास भुगतना पड़ा । मानहानि के मुकदमे में श्री चटर्जी बैरिस्टर तथा श्री नारायण मद्रासी मुआफी मांग कर छूटे थे ।

एक बार दीवान चक्रधर जी ने देहली के 'हिन्दूसंसार' पर मानहानि का मुकदमा चलाया था । बद्रीनाथ के रावल श्री वासुदेव नम्बोदरी को गोलियां देने के मामले में हिन्दूसंसार ने कुछ लिखा था । दीवान जी को 'पियक्कड़' बतलाया गया था । इसमें सम्पादक पं० झावरमल तथा पं० बाबूराम को एक२ वर्ष की सादी कैद हुई थी । बाबूराम जी ने तो कैद काट ली थी, पं० झावरमल शेखावाटी रियासत के रहने वाले थे, जा बैठे वहाँ । मानहानि का वारण्ट देशी रियासत में नहीं चलता था, बस साफ बच गये । देहरे आये थे, पर वकील चण्डीप्रसाद ने सलाह दी कि चले जाओ, मौज करो ।



[१२]

हम १९३० में नमक सत्याग्रह में जेल गये थे । श्री डंगवाल जी, श्री त्यागी जी, श्री बिहारीलाल जी मैं, विचारानन्दजी सब एकदम एक साथ पकड़े गये थे । फिर फैजाबाद भेजे गये । वहां से जब लौटे तब देहरे ने टापू महाशय को एम० एल० ए० बना दिया था । फिर १९३२ में फिर १९३८ में, फिर १९४० में व्यक्तिगत सत्याग्रह में, फिर १९४२ के विप्लव में जेल गये । श्री त्यागी जी अन्यत्र पकड़े गये थे इसलिये वे तो फिर आगरे जेल में ही मिले । हुलासवर्मा लखनऊ में पकड़े गये वे वहीं रहे । हम ५० विशिष्ट व्यक्ति आगरे भेजे गये थे । व्यक्तिगत सत्याग्रह (१९४०) में श्री डंगवाल जी, श्री त्यागी जी, श्री खुरशेदलाल जी, श्री कृष्णचन्द जी, मैं और न जाने कौन २ बरेली सेण्ट्रल जेल में गये थे । श्री चन्द्रमणि जी तथा जिले के अन्य लोग चुनार के किले में भेजे गये थे । जिले के कप्तान ज्योतिप्रसाद जेल की फेरियाँ करते ही रहे ।

श्री सोमेन्द्र मुकर्जी ने बीच में फारवर्ड ब्लाक में होने के कारण बड़ा कष्ट उठाया । एक बंगाली और वह भी फॉरवर्ड ब्लाक वाला, गिलोय और वह भी नीम चढ़ी । इनको बड़े कष्ट झेलने पड़े । ये बीच में जिले के जी० ओ० सी० रहे । वर्षों के पश्चात् अब इसी वर्ष इन्होंने ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के अवसर पर जी खोल कर काम किया । रावत घनश्यामसिंह १९३२ के पिकेटिंग में हमारे साथी रहे जेल में । इन्होंने और हमने अजबपुर की शराब की भट्टी पर पिकेटिंग किया था । दरबारासिंह कोतवाल का जमाना था । श्री शान्तिप्रपन्न जी (१९४२) देहरे जेल में रहे । श्री नारायण मुनि

ने स्वास्थ्य ठीक न रहने पर भी वीरता के साथ जेल-जीवन के कष्टों का मुकाबला किया। जेल के अधिकारियों के साथ अड़े ही रहते थे।

श्री पं० अमरनाथ जी को जो एक वार जेल हुई थी, वह हमारे ही कारण। क्योंकि हम वनस्पति भवन में रहते थे और सब आन्दोलनों का सूत्रपात यहीं से होता था। ये भी कब तक बचते। हम चार वार वनस्पति भवन से ही पकड़े गए थे। नमक सत्याग्रह की जेल को भुगत आने के पश्चात् जब हमने और मास्टर रामस्वरूप जी ने जिले में दौरा किया, तब हम दोनों पर १०८ धारा का वार होने लगा था। गाँधी—इरविन समझता हो गया इसलिये बच गये, नहीं तो एक वर्ष और नापना पड़ता।

देहरादून जिला छोटा होने पर भी काम तो ऐसा ही करता रहा जैसा बड़े जिलों का। बराबर की टक्कर का काम रहा। क्या कानफरन्सों में, क्या नेताओं के स्वागत-सत्कार समारोह में, क्या चन्दों में क्या सत्याग्रहों में, किसी बात में प्रांत के किसी भी बड़े जिले की टक्कर का काम रहा।

१६२१ में अहमदाबाद कांग्रेस में महात्मा गांधी की आज्ञा से एक बड़ा मुख्य द्वार बना था। उस समय सत्याग्रह में जेल में गये हुए प्रमुख २५० व्यक्तियों का नाम मोटे २ अक्षरों में लिखा गया था। उसमें देहरादून से हमारा भी नाम था। सबसे पहिले, क्योंकि जिले के अक्षरानुक्रम से नाम लिखे गये थे। हमने अपने आपको धन्य माना, जब हमने यह बात सुनी।

एम-एन् रॉय इधर उधर जेल भुगत कर, फिर देहरे जेल में आए थे, इनकी बड़ी ख्याति थी। यहीं छूटे यहीं रहने लगे। हमने समझा था कि देहरे के भाग्य से एक और महापुरुष देहरे को मिल गया, पर थोड़े दिनों में ही इन्होंने रंग पलटा, अपनी डेमोक्रेटिक पार्टी बनाई। प्रांत के लिये डेलीगेटों का जो चुनाव हुआ उसमें त्यागी जी ने इनको अच्छी तरह पछाड़ा। दो ही व्यक्ति इनको हरा सकते थे, या तो मैं अथवा त्यागी जी।

तब से देहरादून में रहते हुए भी श्री एम्-एन रॉय जी को लोग सर्वथा भूल गये। इस सार्वजनिक जीवन में ऊँच नीच देखना ही पड़ता है। जिसने काम किया है वह कौन है जो बचा है। इस सार्वजनिक जीवन में कभी अपने साथियों से बिछड़ना पड़ता है, कभी परस्पर विरोध हो जाता है। कभी जनता ऊपर उठाती है, कभी देवता मान कर पूजती है, कभी जमीन पर पटक देती है। जिसमें धैर्य हो, धुन हो, वही पार पा सकता है। जनता फिर उठाकर सिर पर बैठा लेती है।

अभी तो बहुत लिखना है, जरा साँस ले लूँ। वाचकवृन्द धैर्य रखें।



[१३]

हमारे जिले में जौनसार बाबर भी एक विचित्र प्रदेश है। है तो यह केवल साठ हजार का प्रदेश पर यहां के रीति-रिवाज, रंग-ढंग त्रिभुवन से न्यारे हैं। शर्मदा त्यागी के एम० एल० ए० के चुनाव में

इस प्रदेश में कांग्रेस की ओर से अच्छी जागृति हुई थी। मास्टर रामस्वरूप जी भी एक बार जौनसार गये थे। सोमेन्द्र मुकर्जी, एक बार कई कई मास वहाँ ठहरे और सात हजार मेम्बर बनाये थे। सबसे प्रथम मेरा जौनसारियों से परिचय सन् १९२० की प्रथम राजनैतिक कानफ्रेंस में हुआ था। इस कानफ्रेंस में लगभग सौ जौनसार-बावरी आये थे। इनमें ५०-६० तो ऐसे थे जिन्होंने कभी रेल नहीं देखी थी। जब कानफ्रेंस समाप्त हुई तो इनमें से कई मेरे पास आये और कहने लगे, हमारे साथ एक आदमी भेज दो स्टेशन तक, हम रेल देखना चाहते हैं। मुझे तो आश्चर्य हुआ किन्तु मैंने इनके साथ एक आदमी कर दिया। जब वे रेल इंजन आदि देख आये तब वे प्रसन्नचित्त दिखलाई पड़ते थे।

एक बार मैं जब चोइड़पुर गया था तब लखवाड़ के चौ० शेरसिंह स्याने मिले थे। उन्हीं से मैंने जौनसार बावर के विचित्र मनोरंजक वृत्तान्त सुने। वैसे मैं चकरौते तक दो तीन बार गया हूँ, पर भीतर जौनसार में घुस कर देखने का सौभाग्य नहीं मिला। लखवाड़ के सेवकसिंह, पं० मोतीराम आदि ने कई बार बुलाया पर जा नहीं सका। पर जौनसार बावर के विषय में मैंने अखबारों में कई बार लिखा। अब अखबार की वे कतरनें मुझे नहीं मिल रही हैं। कांग्रेस के सम्पर्क से वहाँ के लोग जाग गये हैं और सरकार भी वहाँ की स्यानाचारी प्रथा को बदलने की चिन्ता में है।

यहाँ के लोग बड़े परिश्रमी, सच्चे हैं। इनमें पंचायती प्रथा भी बहुत पुरानी है। किन्तु इनका सामाजिक जीवन जैसा चला आता था वैसा ही है। श्री धर्मदेव जी शास्त्री के वहाँ जाने से खलबली तो बहुत मची, किन्तु सुधार न हो सका। कुरीति-प्रथारूपी साँप को पूँछ से पकड़ कर झाड़ना चाहिए था, किन्तु शास्त्री जी ने उस साँप को मुँह से पकड़ने का उद्योग किया, पर पकड़ न सके। उपकारी शास्त्री जी को उपकार के बदले में अपकार मिल रहा है। स्याने अब समझने लग गये कि समयानुसार अपनी वृत्ति में परिवर्तन करना पड़ेगा।

स्व० सोमप्रकाश वकील का भी जागृति-आन्दोलन में बड़ा हाथ रहा। अब यह दशा है कि कोल्टा जाति एक तरफ और स्याने और अन्य जाति एक तरफ! दो चार कांग्रेसी भी स्यानों से मिल गये हैं। दो सिरों के दो पृथक आन्दोलन चल पड़े हैं। स्पष्ट दो धारायें चल रही हैं। मध्यम मार्ग अपेक्षित है। जाति-विद्वेष के आश्रय से कोई सुधार असम्भव। जब भारत में नया युग आगया है, तब जौनसार बावर जैसे प्रदेश नये युग के प्रभाव से बच नहीं सकते। शिक्षा प्रचार तथा प्रसार के साथ २ वहाँ की जनता की मनोवृत्ति बदलेगी अवश्य।

जौनसार में धैर्यशाली पुरुष ही काम कर सकते हैं। वहाँ एकवृत्ति धारण करके वर्षों तक पड़े रह कर जनता में रलमिल कर जो व्यक्ति काम करेगा वही सफल हो सकेगा।

जौनसार बावरी अपने धर्म के पक्के हैं, जिस बात को वे मानते हैं, वे उसको ऐसे ही नहीं छोड़ेंगे। हमें आशा करनी चाहिए कि थोड़े ही वर्षों में जौनसार बावर के लोग नीचे के देशी प्रदेशों की तुल्यता करने लगेंगे। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के गत चुनाव में जौनसारियों ने अच्छी दिलचस्पी दिखाई। डिस्ट्रिक्ट

बोर्ड में उनके मेम्बर ढंग से काम करते हैं, कांग्रेस का भी साथ देते रहते हैं। जौनसार-बावरियों में सब दोष ही दोष हैं, यह बात नहीं है। सब रीति-रिवाज़ खराब ही खराब हैं, सो यह बात नहीं। यहाँ के लोग अतिथि-प्रिय हैं, श्रद्धालु हैं, वीर हैं, परिश्रमी भी परले सिरे के हैं। अपने झगड़ों को पंचायत-द्वारा निपटा लेते हैं। अङ्गरेजी ज़माने में इनको कोर्टों का चस्का पड़ गया।

इनके यहाँ केवल अपने काम के लिए मद्य बनाने अथवा निकालने की छुट्टी है, कोई रोक नहीं। वहां पुलिस नहीं, स्याने ही सब कुछ हैं। इस प्रदेश में लगभग सौ स्याने रहते हैं, फिर भी पिछड़ा हुआ है। अब स्कूलों की संख्या बढ़ रही है। हस्पताल भी बढ़ेंगे। चलते-फिरते हस्पताल भी रहेंगे। जल का प्रबन्ध भी होगा। सारांश, जौनसार-बावर के सुधार में भले ही थोड़ी बहुत देर हो, पर अन्धेर नहीं है। अङ्गरेजी ज़माने में शिक्षा-दीक्षा प्राप्त अनेक लोग, नीचे अच्छे २ पद पर हैं। इस नवयुग में जौनसार की बाबत नये २ समाचार सुनने के लिए तैयार रहना चाहिए। जौनसारियों को कोर्ट का चस्का लगा है उससे देहरे के अनेक वकील मोटे पेटवाले होगये हैं। नई पंचायत-प्रथा में वकीलों की तोन्द लटक पड़ेगी, इसमें सन्देह नहीं। अब तो गांवों में वकीलों का काम नहीं रहा। १६१६ में कितने थोड़े वकील थे देहरे में। गिनती के २०-२५, अब तो कचहरी में रेवड़ का रेवड़ भरा पड़ा है। चीलियों में धर्मदेव शास्त्री जी का अशोक आश्रम है। कार्यप्रणाली में परिवतन की आवश्यकता है।

---

[१४]

नये युग में देहरे में उत्साही नवयुवकों की कमी नहीं है, पर कार्य-क्षेत्र में आने पर ये डगमगा जाते हैं। कभी कांग्रेस में रहते हैं, कभी छोड़ जाते हैं। कभी सोशियालिस्ट बन जाते हैं, थोड़े से नवयुवक प्रच्छन्न कम्यूनिस्ट भी हैं। १६४२ के आन्दोलन में इन्होंने कांग्रेस का झण्डा हाथ में लेकर एक ओर सरकार का हाथ बटाया, दूसरी ओर अपना प्रचार किया, पर जनता ने इनकी एक भी नहीं सुनी। कम्यूनिस्टों का पहिले तो कोई ईश्वर नहीं, और यदि कोई ईश्वर है तो वह रूस में ही रहता है। सोशियालिस्ट भी एक प्रकार से नास्तिक हैं। इनका समाजवाद पाश्चात्य ढंग का है। यह भारतवर्ष के लिए उपयोगी सिद्ध न होगा। पाश्चात्य समाजवाद तो केवल शहरी मिल मजदूरों का वाद है। रूस का साम्यवाद तो केवल किसान मजदूरों के काम का है।

जिनके सिद्धांतों में ईश्वर नहीं, ईश्वर-विश्वास नहीं, कर्मफल और ईश्वरीय न्याय पर विश्वास नहीं, वे सिद्धांत भारतवर्ष की भूमि में पहिले तो उगेंगे नहीं, उगेंगे तो फलेंगे नहीं। यह तो कम्यूनिस्ट तथा सोशियालिस्टों का थोड़ा बहुत झमेला है, वह अङ्गरेजों के समय में अङ्गरेजी शिक्षा में लालित-पालित—पोषित-दीक्षित नगण्य लोगों की अनधिकार चेष्टाएँ हैं, जो किसी अंश में किसी समुदाय के असन्तोष को प्रकट करते रहते हैं। हमें ऐसे वादों से क्या प्रयोजन अथवा उनसे क्या लाभ जो हमारी संस्कृति तथा सभ्यता के नाशक हों। जिस अथवा जिन वादों ने पाश्चात्य राष्ट्रों और देशों को ही

सुख-समाधान से बैठने नहीं दिया, जिनकी अपनी जन्मभूमि में ही इतनी विषमता है, वे बाद हमको सुख पहुँचायेंगे, ऐसा समझना मूर्खता की पराकाष्ठा है।

भारतसंघ ने पाश्चात्य ढंग की प्रजातन्त्र प्रणाली को स्वीकार किया है सही, किन्तु अनुभव के पश्चात् अपने देश काल के अनुरूप इस प्रणाली में परिवर्तन करना पड़ेगा।

इस पाश्चात्य प्रजातन्त्र-पद्धति में अधिकार-लिप्सा के लिए अनेक पार्टियों का जन्म होगा, जिनके अपने २ नारे होंगे। सोशियालिस्ट, सोशियालिस्ट रिपब्लिकन, कम्यूनिस्ट, गांधीवादी कांग्रेसी आदि आदि अनेक पक्ष-विपक्ष चलेंगे, किन्तु जो पक्ष भारतीय संस्कृति और सभ्यता की बात करेगा वही पक्ष पनपेगा, बढ़ेगा, बाकी पक्ष समुद्र की ज्वारभाटा की भांति कभी बढ़ेंगे भी कभी घटेंगे भी। हमारे देश के नवयुवकों को सोच समझ कर, राष्ट्र का हित-अहित जानकर किसी पक्ष-विपक्ष में पड़ना चाहिये।

आज कल तो हम यह हाल देख रहे हैं कि कांग्रेस से नाराज हुए कि झट सोशियालिस्टों में जा मिले। वहां देखा कि कोई पूछता नहीं तो फिर कांग्रेस में आ मिले। बहुत से तो कांग्रेस में जब उनकी चलती नहीं तब धमकी देने लगते हैं कि हम सोशियालिस्ट बनेंगे। हम यह भी देख रहे हैं कि इधर कांग्रेस के प्रतिज्ञापत्रों पर हस्ताक्षर करके भी प्रच्छन्न रूप में कांग्रेस के विरुद्ध प्रचार करते रहते हैं, समाजवादियों का प्रचार करते रहते हैं। यह कैसी ईमानदारी है। इस तरह की कभी इधर और कभी उधर की नीति नवयुवकों को कहीं का न रहने देगी। कांग्रेस की रीति-नीति पसन्द नहीं है तो स्पष्ट कहो और छोड़ कर जाओ जहाँ चाहे। शेर की खाल ओढ़ कर गीदड़ मत बनो। हमारे जिले में अब तो कम्युनिस्ट हैं ही नहीं। हाँ एक सच्चा कम्युनिस्ट था, नागेन्द्रदत्त सकलाने का। वह तो टिहरी स्टेट के जन-आन्दोलन में वीरतापूर्वक काम आगया और अपने नाम को अमर कर गया।

हमारे जिले में सोशियालिस्ट नाम वाले हैं चालीस-पचास। पर नाममात्र के ही हैं। अब तो उन्होंने यह कहना प्रारम्भ कर दिया है कि कम्युनिस्टों का इलाज हम करेंगे। सोशियालिस्टों के नेता यही कह रहे हैं। अच्छा है सोशियालिस्ट और कम्युनिस्ट आपस में निपट लेवें और कांग्रेस अपना काम अच्छी तरह करने के लिये खुली रहे।

स्वतन्त्रता के पश्चात् कांग्रेसियों ने ही कांग्रेसियों को स्वार्थवश बदनाम करना प्रारम्भ किया। सोशियालिस्ट और कम्युनिस्ट भी कांग्रेस से बाहर हुए। उन्होंने भी यही राग अलापना शुरू किया। इस लिये साधारण जनता को भी कांग्रेस की बुराई करने के लिये मुख खोलने का अवसर मिला। यह बात नहीं है कि कांग्रेस में स्वार्थी लोग घुसे नहीं हैं। हैं, बहुत हैं, पर सावधान रह कर उनको पृथक् किया जाना चाहिए। हमारा ध्यान संख्या बढ़ाने की ओर न रह कर, गुणीजनों को बढ़ाने की ओर होना चाहिये। जिस करुणानिधान भगवान् की कृपा से कांग्रेस स्वतन्त्रता-प्राप्ति के युद्ध में सफल हुई, वही भगवान् कांग्रेस वालों को सुबुद्धि देवे, जिससे कांग्रेस फिर एक बलशाली संगठन बन कर भारत का ही नहीं, संसार का मार्ग-निदर्शन कर सके।

[१५]

पं० द्वारकानाथ रैना वकील को कौन भुला सकता है, जिनकी स्फूर्ति-दायिनी कविताओं को सुन कर देहरा तथा बाहर की जनता मुग्ध हो जाती थी। बेचारे पुत्र-कलत्र विहीन होकर काश्मीरी अपनी जन्म भूमि में गये थे। किन्तु विधाता का विधान था कि इनको तनिक भी आराम न मिले। गत कबायली द्वारा लूटपाट में बारामूला में सर्वस्व लुट गया। किसी प्रकार ये और इनके सम्बन्धी प्राण लेकर फिर भारत लौटे। मैंने इनको चिथड़े पहिने हुए देखा, तब मेरा मन अस्वस्थ हो गया। किसी प्रकार अपने दिन पूरे कर रहे हैं। शेष दिन ऋषीकेश में पूरा करना चाहते हैं। जब दिन फिरते हैं तब कौन किसका साथ देता है।

हंसराज कक्कड़ वकील सदा एकरस चले आ रहे हैं। किसी पद की लालसा नहीं। जितना काम बतला दोगे उतना श्रद्धा भक्ति से कर देगें फिर न किसी के लेने में न देने में।

श्री किशोरीलाल गुप्त—आपने प्रारम्भिक दिनों में मसूरी में आर्यसमाज और कांग्रेस दोनों को भलीभांति सम्भाला था। फिर अपनी निज स्थिति को सम्भालते हुए देहरे से बाहर मुजफ्फरनगर जिले में रहे। अब वर्षों पश्चात् फिर देहरे लौट आये हैं। इनके पीछे ख्वाजा अब्दुल अजीज आदि ने मसूरी कांग्रेस को सम्भाला था। किसी प्रकार ख्वाजा आदि दो चार व्यक्ति कांग्रेस को सम्भालते रहे। उनमें रामकृष्ण वर्मा, गोपालदत्त डिमरी, नत्थीराम ममगांई आदि का नाम उल्लेख योग्य है। अब ये लोग दूसरे कैम्पों में हैं। दो वर्ष से श्री अमीचन्द गुप्त, श्री महेन्द्र जैन, श्री ओमप्रकाश गुप्त, श्री धर्मवीर वर्मा आदि काम कर रहे हैं।

श्री पुष्करनाथ तनखा—मसूरी के बहुत पुराने कार्यकर्त्ता हैं। एकरस चले आरहे हैं। तिलक लाईबरेरी को मूर्तस्वरूप देकर स्वावलम्बी बनाना इनका ही कार्य है। किसी समय म्युनिसिपल बोर्ड के चेयरमैन भी रहे।

श्री पं० शीशरामजी शर्मा—राजपुर के एकरस स्थिर कांग्रेस के कार्यकर्त्ता रहे हैं।

निरंजनलाल अजित—इन्होंने प्रारम्भिक दिनों में बड़े कष्ट उठाये। बम्बई गये, वहां के आन्दोलनों में बराबर काम करते रहे। फिर एक वार मद्रास में कारावास भी भुगत चुके। अब भगवन्तपुर में हैं।

श्री जोगाराम (राजपुर)—अनथक कार्यकर्त्ता हैं। खादी के कट्टर प्रेमी, खादी प्रचार में मर-खप चुके।

श्री ज्योतिप्रसाद (राजपुर)—अनादिकाल से जिले के कप्तान चले आते हैं, पर आर्थिक दशा में तंगी के कारण दुःखी हैं। इनकी कुछ व्यवस्था होनी चाहिये, नहीं तो भविष्य में कुछ भी काम न कर सकेंगे।

श्री पं० रामलाल (भगवन्तपुर)--कांग्रेस के पुराने भक्त, न सावन सूखे न भादों हरे।

गुजराड़ा—यहाँ के नययुवकों में कांग्रेस के लिये बड़ा उत्साह रहा है। किन्तु कतिपय नवयुयक विरोधी कैम्प में बह गये। वैसे गाँव ने प्रत्येक आन्दोलन में बड़ा साथ दिया। पं० रामसहाय वैद्य इसके प्रधान चले जाते हैं।

तुनवाला—यहां मैं कह सकता हूँ कि मास्टर हरस्वरूप ने कांग्रेस की ज्योति को जगाये रक्खा।

बालावाला—पं० सोहनलाल शर्मा बड़े पुराने कार्यकर्त्ता रहे हैं। स्व० पं० फकीरचन्द जमींदार तथा इनमें सदैव तनातनी रही है। इसलिये ये गुजराड़ा छोड़कर बालावाला में जा बसे। प्रारम्भिक दिनों में इन्होंने बड़ा कार्य किया।

डोईवाला—डोईवाले में पुराने कार्यकर्त्ताओं में श्री ईश्वरचन्द, श्री ज्वालाप्रसाद तथा श्री कृष्णदत्त-वैद्य का नाम उल्लेखनीय है। फिर सरदार बख्तावरसिंह, श्री मोहनलाल आदि ने बागडोर सम्भाली। श्री कृष्णदत्त जी ने आर्थिक संकटों के कारण बड़े कष्ट उठाये हैं। धुन का आदमी है। बख्तावरसिंह के जमाने में डोईवाला चमक उठा था।

गढूल—गढूल में बहादुरसिंह, केशरसिंह आदि ने कांग्रेस को सम्भाले रक्खा।

मालकोट— पहिले पहिले नारायणसिंह ने बड़ा काम किया। फिर पंचमसिंह तथा गौरीश वर्मा ने काम सम्भाला।

भोगपुर—यहाँ कुन्दनलाल आदि ने काम सम्भाला था। अब भी जब कभी काम पड़ता है तब यही हाथ बटाते हैं। इनके साथ श्री हरिसिंह नेगी आदि का नाम उल्लेख योग्य है। आजकल पं० परशुराम प्रधान हैं।

रानीपोखरी—पं० प्यारेलालशर्मा, इनके बड़े भाई लछमनप्रसाद, श्री पृथ्वीसिंह, श्री बहादुरसिंह आदि ने काम चला रक्खा है। बहादुरसिंह जिले के मन्त्री भी हैं। स्व० बुधसिंह के निधन से बड़ी हानि हुई है।

जोली—पं० खेमचन्द, मालदार गुलाबसिंह, पं० पन्नालाल शर्मा तथा स्वर्गीय जालिमसिंह ने बड़ा काम किया। पन्नालाल कुछ काल से ढीले तथा अस्थिर हैं।

चकरौता—चकरौता, मसूरी मौसम में (सीजन) चमक उठते हैं। फिर छह मास कोई हलचल नहीं रहती। स्वर्गीय सोमप्रकाश मिश्र वकील आदि ने काँग्रेस की ज्योति को जगाये रक्खा। मिश्र जी जिले के नामी कांग्रेसी हैं।

ऋषीकेश—पं० सीताराम वैद्य, माधोराम डोभाल ने बड़ा काम किया। स्व० देवकीनन्दन गुप्त ने भी बड़ा काम किया था। श्री सदानन्द पुराने कार्यकर्त्ता हैं। श्री परिवर्तन स्वामी की मण्डली गंभीरता

[१५]

पं० द्वारकानाथ रैना वकील को कौन भुला सकता है, जिनकी स्फूर्ति-दायिनी कविताओं को सुन कर देहरा तथा बाहर की जनता मुग्ध हो जाती थी। बेचारे पुत्र-कलत्र विहीन होकर काश्मीरी अपनी जन्म भूमि में गये थे। किन्तु विधाता का विधान था कि इनको तनिक भी आराम न मिले। गत कबायली द्वारा लूटपाट में बारामूला में सर्वस्व लुट गया। किसी प्रकार ये और इनके सम्बन्धी प्राण लेकर फिर भारत लौटे। मैंने इनको चिथड़े पहिने हुए देखा, तब मेरा मन अस्वस्थ हो गया। किसी प्रकार अपने दिन पूरे कर रहे हैं। शेष दिन ऋषीकेश में पूरा करना चाहते हैं। जब दिन फिरते हैं तब कौन किसका साथ देता है।

हंसराज कक्कड़ वकील सदा एकरस चले आ रहे हैं। किसी पद की लालसा नहीं। जितना काम बतला दोगे उतना श्रद्धा भक्ति से कर देंगे फिर न किसी के लेने में न देने में।

श्री किशोरीलाल गुप्त—आपने प्रारम्भिक दिनों में मसूरी में आर्यसमाज और कांग्रेस दोनों को भलीभांति सम्भाला था। फिर अपनी निज स्थिति को सम्भालते हुए देहरे से बाहर मुजफ्फरनगर जिले में रहे। अब वर्षों पश्चात् फिर देहरे लौट आये हैं। इनके पीछे ख्वाजा अब्दुल अजीज आदि ने मसूरी कांग्रेस को सम्भाला था। किसी प्रकार ख्वाजा आदि दो चार व्यक्ति कांग्रेस को सम्भालते रहे। उनमें रामकृष्ण वर्मा, गोपालदत्त डिमरी, नत्थीराम ममगांई आदि का नाम उल्लेख योग्य है। अब ये लोग दूसरे कैम्पों में हैं। दो वर्ष से श्री अमीचन्द गुप्त, श्री महेन्द्र जैन, श्री ओमप्रकाश गुप्त, श्री धर्मवीर वर्मा आदि काम कर रहे हैं।

श्री पुष्करनाथ तनखा—मसूरी के बहुत पुराने कार्यकर्त्ता हैं। एकरस चले आरहे हैं। तिलक लाईबरेरी को मूर्तस्वरूप देकर स्वावलम्बी बनाना इनका ही कार्य है। किसी समय म्युनिसिपल बोर्ड के चेयरमैन भी रहे।

श्री पं० शीशरामजी शर्मा—राजपुर के एकरस स्थिर कांग्रेस के कार्यकर्त्ता रहे हैं।

निरंजनलाल अजित—इन्होंने प्रारम्भिक दिनों में बड़े कष्ट उठाये। बम्बई गये, वहां के आन्दोलनों में बराबर काम करते रहे। फिर एक बार मद्रास में कारावास भी भुगत चुके। अब भगवन्तपुर में हैं।

श्री जोगाराम (राजपुर)—अनथक कार्यकर्त्ता हैं। खादी के कट्टर प्रेमी, खादी प्रचार में मर-खप चुके।

श्री ज्योतिप्रसाद (राजपुर)—अनादिकाल से जिले के कप्तान चले आते हैं, पर आर्थिक दशा में तंगी के कारण दुःखी हैं। इनकी कुछ व्यवस्था होनी चाहिये, नहीं तो भविष्य में कुछ भी काम न कर सकेंगे।

श्री पं० रामलाल (भगवन्तपुर)--कांग्रेस के पुराने भक्त, न सावन सूखे न भादों हरे।

गुजराड़ा—यहाँ के नययुवकों में कांग्रेस के लिये बड़ा उत्साह रहा है। किन्तु कतिपय नवयुयक विरोधी कैम्प में बह गये। वैसे गाँव ने प्रत्येक आन्दोलन में बड़ा साथ दिया। पं० रामसहाय वैद्य इसके प्रधान चले जाते हैं।

तुनवाला—यहां मैं कह सकता हूँ कि मास्टर हरस्वरूप ने कांग्रेस की ज्योति को जगाये रक्खा।

बालावाला—पं० सोहनलाल शर्मा बड़े पुराने कार्यकर्त्ता रहे हैं। स्व० पं० फकीरचन्द जमींदार तथा इनमें सदैव तनातनी रही है। इसलिये ये गुजराड़ा छोड़कर बालावाला में जा बसे। प्रारम्भिक दिनों में इन्होंने बड़ा कार्य किया।

डोईवाला—डोईवाले में पुराने कार्यकर्त्ताओं में श्री ईश्वरचन्द, श्री ज्वालाप्रसाद तथा श्री कृष्णदत्त-वैद्य का नाम उल्लेखनीय है। फिर सरदार वख्तावरसिंह, श्री मोहनलाल आदि ने बागडोर सम्भाली। श्री कृष्णदत्त जी ने आर्थिक संकटों के कारण बड़े कष्ट उठाये हैं। धुन का आदमी है। वख्तावरसिंह के जमाने में डोईवाला चमक उठा था।

गड्डूल—गड्डूल में बहादुरसिंह, केशरसिंह आदि ने कांग्रेस को सम्भाले रक्खा।

मालकोट— पहिले पहिले नारायणसिंह ने बड़ा काम किया। फिर पंचमसिंह तथा गौरीश वर्मा ने काम सम्भाला।

भोगपुर—यहाँ कुन्दनलाल आदि ने काम सम्भाला था। अब भी जब कभी काम पड़ता है तब यही हाथ बटाते हैं। इनके साथ श्री हरिसिंह नेगी आदि का नाम उल्लेख योग्य है। आजकत पं० परशुराम प्रधान हैं।

रानीपोखरी—पं० प्यारेलालशर्मा, इनके बड़े भाई लछमनप्रसाद, श्री पृथ्वीसिंह, श्री बहादुरसिंह आदि ने काम चला रक्खा है। बहादुरसिंह जिले के मन्त्री भी हैं। स्व० बुधसिंह के निधन से बड़ी हानि हुई है।

जोली—पं० खेमचन्द, मालदार गुलाबसिंह, पं० पन्नालाल शर्मा तथा स्वर्गीय जालिमसिंह ने बड़ा काम किया। पन्नालाल कुछ काल से ढीले तथा अस्थिर हैं।

चकरौता—चकरौता, मसूरी मौसम में (सीजन) चमक उठते हैं। फिर छह मास कोई हलचल नहीं रहती। स्वर्गीय सोमप्रकाश मिश्र वकील आदि ने काँग्रेस की ज्योति को जगाये रक्खा। मिश्र जी जिले के नामी कांग्रेसी हैं।

ऋषीकेश—पं० सीताराम वैद्य, माधोराम डोभाल ने बड़ा काम किया। स्व० देवकीनन्दन गुप्त ने भी बड़ा काम किया था। श्री सदानन्द पुराने कार्यकर्त्ता हैं। श्री परिवतन स्वामी की मण्डली गंभीरता

से काम करती रहे तो ऋषीकेश बड़ा केन्द्र हो सकता है। मधुर नीति के बिना केवल उत्साह का उतना फल नहीं। इनमें बड़ी शक्ति है। शक्ति का सदुपयोग हो तो ठीक है। जितनी शक्ति है, उतनी उपयोग में नहीं आरही है। परिवर्तन स्वामी ऋषीकेश का मोह छोड़ें तो बाहर बड़े कार्यकर्त्ता बन सकते हैं। चेला चेतराम अनथक कार्यकर्त्ता हैं।

लांगा-तौली—ठा० धर्मसिंह पुराने कट्टर कांग्रेसी हैं।

रुद्रपुर-यह इलाका पहिले तो बड़ा सजग था पर कुछ काल से ढीला है। पुराने कांग्रेसी दयाराम हैं।

पष्टा (विनहार)—नाम लेने लायक दो चार व्यक्ति अच्छा काम कर रहे हैं। दर्शनसिंह जी सबको सम्भालते हैं।

बाडवाला—धर्मसिंह वीर आदमी हैं, डटे हुये हैं।

कालसी में श्री धर्मदेवशास्त्री जी, श्री ज्योतिस्वरूप वैद्य, मातबरसिंह, रामप्रसाद जी गाड़ी को हांके जा रहे हैं।

सहिया—ठा० कलीराम आदि ने अच्छा काम किया था, पर स्यानाचारी में जा फँसे।

चुहड़पुर—पहिले २ स्व० मुकन्दराम, पं० राजाराम शर्मा ने बड़ा साथ दिया था। फिर कुछ काल पं० देवीदत्त चमके, पर पीछे श्री एम० एन० रॉय के पन्थ में जा मिले। लाला सेवाराम एकरस अनथक, कष्ट-सहिष्णु कार्यकर्त्ता चले आ रहे हैं, बड़ा काम किया है। जरा कड़े आदमी हैं। मधुरता से बरतें तो सारा इलाका इनका ही समझिये। श्री पं० ऋषिकुमार वैद्य मन्त्री भावुकता से काम करते रहते हैं।

तिलवाड़ी—पुराने कार्यकर्त्ता झब्बीलाल जी हैं।

कण्डोली—श्री मदनमोहन समाजवादी हो गये। श्री सूरतसिंह जीते-जागते कांग्रेसी रहे हैं।

झाझरा—श्री पं० रघुनाथप्रसाद वैद्य ने यहां बड़ी जागृति की। अब वे बिजनौर जिले में बदल गये हैं। यहाँ कई अच्छे उत्साही नवयुवक हैं।

बीच के इलाके में—सहसपुर, हरियावाला, होरावाला, डूँगा, विधौली, हरिपुर आदि में श्री कुदेशा वैद्य, पिताम्बरसिंह, सुदर्शनसिंह, गुरुप्रसाद आदि काम कर रहे हैं। सबका नाम लिखना कठिन कार्य है।

सहसपुर—सदा ढीला रहा है। जब कोई आन्दोलन उठता है, तब खास सहसपुर के तो नहीं आस-पास के इलाके के लोग उठ खड़े होते हैं।

---

[१६]

जिले की कार्यकर्त्री देवियां

श्रीमती सरस्वती देवी सोनी—धुन की पक्की, इस देवी ने महात्मा गांधी का चरखा ऐसा सम्भाला है कि इनके कारण ही नगर तथा जिले में चरखे का नाम बचा हुआ है ।

श्रीमती श्यामादेवी—कट्टर कांग्रेसी देवी है । जब चाहे जेल में भेजो तैयार, अपनी धुन की पक्की हैं। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की प्रदर्शिनी का जब वहिष्कार किया था तब यह अकेली ही देवी थी जिसने अन्य स्वयंसेविकाओं के साथ बड़ा काम किया ।

हमारे जिले में सुशिक्षित देवियों की कमी नहीं है, पर आगे आती नहीं न जाने क्या बात है ।

श्रीमती रामरक्खा देवी—श्री हंसराज कक्कड़ की धर्मपत्नी हैं। बड़ी उत्साह-शालिनी देवी है। प्रत्येक कांग्रेसी कार्य में उत्साह से आगे बढ़ने वाली देवी है ।

स्व० शर्मदा देवी—बड़ी चतुर देवी थी । इनको सार्वजनिक कार्य कराने का ढंग आता था, बोलने वाली भी पक्की । काम में रातदिन एक करने वाली थी । वह जिले की पहली एम० एल० ए० थी । उनके निधन से श्री त्यागी जी का ढंग ही बिगड़ चला । पर त्यागी जी ने अपने आपको संभाला और सार्वजनिक कार्यों में डट गये और जिले के संकुचित वातावरण से निकल कर प्रांतीय कांग्रेस के कुछ काल मंत्री भी रहे ।

स्वर्गीय श्रीमती विद्यादेवी—स्वर्गीय ला० ठाकुरदत्त की धर्मपत्नी । इन्होंने प्रारम्भिक दशा में देहरे में, जिले भर में खादी का अच्छा प्रचार किया । बोलने वाली भी अच्छी थीं । इनके पुत्र श्री सुरेन्द्रनाथ पुरी एम० एन्० रॉय के पन्थ के हैं ।

श्री सरस्वती देवी—न जाने कहां हैं । यह श्री छाजूराम जी की सुपुत्री थी । अच्छी कार्यकर्त्री थी, इनकी भाषा शैली सुमधुर थी ।

श्रीमती शकुन्तला देवी एम० ए०—यह देवी (नारायण मुनि की पुत्री) देहरा जिले की भूषण हैं। पहले पहले बड़ा काम किया । अब तो अपने पतिदेव श्री विद्याभूषण जी एम० ए० के साथी बिहार प्रांत में अपने कार्य में लगी हुई हैं । पं० विद्याभूषण एम० ए० बिहार के प्रसिद्ध कांग्रेसी हैं । इन्होंने पहले जेल में बड़े कष्ट झेले हैं ।

श्रीमती मंगला उपाध्याय—पिछले दो तीन वर्षों में इस देवी ने महिला कांग्रेस के लिये काम किया, नगर काँग्रेस कमेटी की प्रधाना भी रही । इनको जिले की स्थिति का परिज्ञान नहीं था, इसलिए पक्ष-

विपक्ष में बह गयीं। पर समय के साथ अनुभव भी मिल गया है। किसी पक्ष-विपक्ष में न पड़कर अपना करती रहे तो यह देवी बड़ा काम कर सकती है।

नगर के कार्यकर्त्ता

श्री कृष्णचन्द्र सिंहल वकील—आगे आए रक्खे हैं, पर धैर्य और मधुरता और विचारों में स्थिरता चाहिये।

श्री शान्तिस्वरूप गुप्त वकील—अभी तक काँग्रेस के साथ रहे होते तो जिले में मान्य हो जाते। बीच में भटके रहे। अब आशा है काँग्रेस में स्थिर रहेंगे और आगे आगे बढ़ेंगे। इनकी काम करने की शैली मधुर है।

श्री धमस्वरूप रतूड़ी इनमें नेता बनने के गुण हैं, पर गुण से काम न लेवें तो किसका अपराध।

श्रीराम शर्मा प्रेम (कविरत्न)—कैसा अद्भुत कवि है, एक बार तो जनता में प्राण डाल देता है। कांग्रेस के बने रहें तो ठीक।

श्री गौतमदेव विद्यालंकार—बहुत अच्छे प्रबन्धक हैं। धुन है, सब कुछ है पर झिझक झिझक कर पैर रखते हैं यही त्रुटि है।

श्री जगदीश वैद्य—बड़े अनुभवी वैद्य हैं। कांग्रेस के प्रत्येक कार्य में आगे आते रहते हैं, बड़े उत्साही व्यक्ति हैं, इनकी सूझ बड़ी दूर की रहती है।

श्री लक्ष्मणदेव—संलग्नता से कार्य करते हैं। इनमें अपेक्षित मधुर स्वभाव है, पर आगे आने की इच्छा ही नहीं, यह कैसी मुसीबत।

श्री रामदत्त गुप्त—सरल प्रकृति, शान्त कार्यकर्ता हैं। इनमें उमंग भी है। उमंग स्थिर नहीं रहती।

श्री गुरुदत्त वैद्य—इनसे कोई काम लेने वाला हो तो काम देते रहेंगे।

श्री हरप्रसाद—इनमें उत्साह भरने की आवश्यकता है।

श्री सुरेन्द्रनाथ वैद्य—अच्छे लेखक हैं, कवि हैं। सब कुछ हैं पर आगे आने में झिझकते हैं। आगे आना चहिये।

वैसे नगर तथा जिले में अच्छे अच्छे नवयुवक हैं। पर पता नहीं क्यों नहीं आगे बढ़ते हैं। जो बढ़ते भी हैं शीघ्र उदास हो जाते हैं। दून की मिट्टी ही ऐसी है।

[१७]

डिस्ट्रिक्ट बोर्ड प्रदर्शिनी का बहिष्कार—डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ने एक प्रदर्शिनी की थी। कांग्रेस की ओर से उसका बहिष्कार किया गया था। बहिष्कार के प्रारम्भ में स्वा० विचारानन्द, पं० अमरनाथ वैद्य, मैं, तथा अनेक सज्जनों ने जलूस निकाल और बड़ी परेड पर पहुँचे, जहाँ प्रदर्शिनी थी। जब तक प्रदर्शिनी रही तब तक लगभग ४०० स्वयंसेवकों ने काम किया। डंगवाल जी के इलाके के २०० स्वयंसेवक थे। इस बहिष्कार से जिले भर में खूब हलचल रही। श्री सन्ता पृथ्वी ने स्वयंसेवकों के लिये लङ्गर खोल दिया था।

मिलिटरी प्रदर्शन—जब भोगपुर बहुत गरम हो गया था तब वहाँ मिलिटरी ने अपना प्रदर्शन किया था। मिलिटरी ने कई वालण्टियरों को पकड़ा, उनको बेत मारे, उनको मशीगन के सामने खड़ा किया, धमकाया कि अगर उपद्रव करोगे तो इस तोप से उड़ा देंगे। स्वयंसेवकों में श्री पं० ज्योतिःस्वरूप, श्री स्व० बुधसिंह, श्री भंगु, श्री मोहन तथा पं० परशुराम थे।

हिन्दू-मुसलिम दंगे—इस जिले में वैसे तो हिन्दू-मुसलिम दंगे दो एक वार हुये। एक वार पहिले हुआ था जिसमें मसजिद के ठेले वालों ने बड़ा भाग लिया। स्व० लाला ऊधोराम जी, मित्रसेन वैद्य आदि अनेक व्यक्तियों पर मुकद्दमे चले, पर अन्त में कुछ नहीं बना।

दूसरा उपद्रव सर्वसामान्य था, १९४७ में जब कि देश का बटवारा हुआ, ये उपद्रव मसूरी तथा देहरे में विशेषरूप से हुए और यत्र तत्र ग्रामों में भी। पछवा तथा परवादून में भी।

शरणार्थी—इस जिले में शरणार्थियों की संख्या लगभग पचास सहस्र है, जिनको अन्यत्र जाने के लिये कहा जा रहा है, पर वे यहीं रहना चाहते हैं। यहाँ मुख्य केन्द्र प्रेमनगर का है। नगर में भी शरणार्थी यत्र तत्र बसे हैं। ऋषिकेश में भी ३-४ सहस्र हैं। इन शरणार्थियों के कारण देहरे का रूप विकृत हो गया है। शनैः शनैः दशा काबू में लाई जा रही है, पर जब तक उन्हें बाहर न भेजा जायेगा दशा सुधरेगी नहीं। गत महायुद्ध तथा शरणार्थियों के कारण देहरे की लोकसंख्या द्विगुण से भी अधिक हो गई है। छोटा सा जिला है, अपना ही निर्वाह कठिन, फिर यह शरणार्थियों की आपत्ति! सरकार इनको यहाँ से हटाने की चिन्ता में है।

पं० अनन्तराम बाजा—(हाथीबड़कला) पुराने कांग्रेसी हैं-बड़े उत्साही।

डाण्डा (राणीपोखरी)—पं० जीतराम शर्मा का नाम रह गया। वे रैनापुर डाण्डा मण्डल के प्रधान हैं। अच्छे कार्यकर्ता।

श्री सुरेशचन्द्रदास—कांग्रेस के एकनिष्ठ कार्यकर्ता हैं। जिले के डिवलपमेंट के वर्षों से प्रधान हैं। चर्खे के प्रेमी हैं।

श्री लाला चण्डीप्रसाद (हनुमान चौक)—आप नगर कांग्रेस कमेटी के प्रधान रह चुके हैं। आप नगर के अनथक कार्यकर्ता हैं।

ब्र० हरिजीवन—हृषीकेश के गम्भीर कार्यकर्ता तथा जिले के प्रचार-मंत्री। उत्साही कार्यकर्ता हैं, और अच्छे वक्ता भी। श्री सरदारीलाल जी भी कुछ काल मण्डल के प्रधान रहे।

गङ्गल इलाका में—सुखवीर वर्मा निर्भय उत्साही स्वयंसेवक। श्री जवाहरलाल नेहरू के सामने भी डटने वाला।

मालकोट इलाके में—श्री गौरीश वर्मा अनथक कार्यकर्ता।

मसूरी के कार्यकर्ताओं में उत्साही विष्णुस्वरूप वर्मा का नाम लिखना रह गया। आप अछूतोद्धार में प्रयत्नशील रहते हैं।

तलाई-थानों—तलाई के स्व० जयदेव बहुगुणा, स्व० मंगलानन्द बहुगुणा, स्व० दर्शनलाल बहुगुणा कांग्रेस के उत्साही कार्यकर्ता थे। पं० भीमदत्त, पं० भवानीदत्त, श्री सेनपालसिंह आदि कांग्रेस के परम सहायक हैं।

भोगपुर में—स्व० नारायणसिंह का नाम उल्लेख योग्य है।

बरकोट में—स्व० पं० गणेशदत्त शर्मा बड़े ही उत्साही कार्यकर्ता थे।

हृषीकेश में—केवलाश्रम के स्व० स्वा० केवलानन्द कांग्रेस के प्राण थे।

अभी जिनके नाम रह गये और नाम याद नहीं आ रहे हैं, उन सबका मन से कृतज्ञतापूर्वक संस्मरण।

स्वा० ब्रह्मानन्द—न जाने इस समय कहाँ हैं। इन्होंने प्रारम्भिक दिनों में कांग्रेस प्रचार में बड़ा योग दिया। प्रभावशाली वक्ता हैं।

स्वा० अमानन्द (बंगाली)—इन्होंने हमारे काम में बड़ा योग दिया। पता नहीं कहाँ हैं।

श्री ध्रुवसिंह—सज्जनता की प्रतिमूर्ति हैं। वस्तुतः जिला तथा नगर कांग्रेस को जीवित रखने वाले विश्वासपात्र, सच्चे सेवक, सिपाही।

श्री कुन्दनलाल आढ़ती (देहरा)—१९१९ से कांग्रेस में आये, ३-४ वर्ष बड़े जोरों से प्रत्येक कार्य में साथ दिया, अब भी कांग्रेस-भक्त हैं।

श्री दीपचन्द कुकरेती (वकील)—किशोरावस्था से ही कांग्रेस कार्य में योग देते चले आये हैं। पूर्वावस्था में बड़ा उत्साह रहा। अब स्वकार्य में संलग्न हैं।

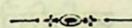
श्री इन्द्रसिंह (कारगी-मण्डल काँवली)—जिला कांग्रेस के वर्षों उपमंत्री रहे।

ला० बाबूलाल (ला० केदारनाथ जी के सुपुत्र)—संगठन-कुशल कार्यकर्ता। जब चाहें जिस कार्य में जुटा दीजिये।

श्री पं० दीपचन्द फरासी (करणपुर)—नगर के गम्भीर कार्यकर्ता। श्री सुन्दरलाल (डोभालवाला) उत्साही कांग्रेस सेवक। श्री फकीरचन्द बड़े फुरतीले कार्यकर्ता हैं।

नगर में—श्री गुरुप्रसाद शर्मा, श्री श्यामलाल गुप्त आदि अनेक उत्साही नवयुवकों के नाम उल्लेख योग्य हैं, जिन्होंने आन्दोलन के मध्यकाल में उत्साह से काम किया। इस समय गुरुप्रसाद खुशीराम लायब्रेरी के पुस्तकाध्यक्ष हैं। श्री श्यामलाल जी ठेके का काम करते हैं। ये लोग काम करते तो नेता बने बनाये होते।

बाहर के—प्रारम्भिक दिनों में महाविद्यालय ज्वालापुर के स्वा० आनन्दप्रकाश तथा स्वा० विवेकानन्द कांग्रेस के प्रचार में बराबर योग देते रहे। इनके व्याख्यानों का ग्रामवासियों पर अच्छा प्रभाव पड़ता रहा। स्वा० विवेकानन्द जी को जिले में आन्दोलन के कारण एक बार कारावास भी भोगना पड़ा।



[१८]

गत १७ लेखों में अत्यन्त संक्षिप्त रूप में 'देहरादून के संस्मरण' लिखे गये हैं। मुझे आशा है कि 'दून समाचार' के पाठकों को उससे बहुत कुछ आनन्द प्राप्त हो गया होगा। क्रमवार संस्मरणों का लिखना कठिन कार्य था, तथापि यत्न किया गया कि कोई विशिष्ट घटना रहने न पाये। निखिल भारतवर्षीय १५वें हिन्दी साहित्य सम्मेलन में जो १९२५ में हुआ था, उसके साथ श्री जयचंद विद्यालंकार के नेतृत्व में सफल कविदरबार हुआ था।

इन संस्मरणों को लिखते हुए हमारे मण्डलों के कितने ही कार्यकर्ताओं के नाम छूट गये हैं। थानों के स्वर्गीय ला० मोहरसिंह, तलाई के स्वर्गीय दर्शनलाल, स्व० पं० जयदेव और स्व० पं० मंगलानन्द, बरकोट के स्व० पं० गणेशादत्त, भोगपुर के स्वर्गीय बुधसिंह। किन किन का नाम लिखूँ, बहुत याद करने पर भी तो याद नहीं आ रहे हैं।

एक बार हमारे प्रधानत्व में जिला कांग्रेस कमेटी ने निश्चय किया था कि देहरे जिले की कांग्रेस का इतिहास तैयार किया जाय। इस कार्य के लिये एक उपसमिति भी बनाई गई थी। श्री चन्द्रमणि जी उसके संयोजक बनाये गये थे। पर वे बेचारे भी क्या करते, बार बार लिखने पर भी मण्डलों के थोड़े लोगों ने ही कुछ लिख भेजा, जिसके आधार पर 'दून समाचार' में उन्होंने कुछ एक मण्डलों के वृत्तान्त प्रकाशित भी किए। इनमें मैं ही एक पुराना व्यक्ति था जो सबसे अधिक जानता था। मैंने यह समझ

कर कि कहीं मैं ही घटनाओं को भूल न जाऊँ इस लिये मैंने यह लेखमाला प्रारम्भ की और आज यह लेखमाला समाप्त हो रही है।

गढ़वाल के संस्मरण मैंने जानबूझ कर नहीं लिखे क्योंकि देहरादून के संस्मरणों में गढ़वाल के संस्मरणों को मिलाना उचित प्रतीत नहीं हुआ। 'देहरादून गढ़वाल के इतिहास' में मैंने सब बातें विस्तृत रूप में लिखी हैं। 'मेरी कारावास की रामकहानी अथवा १९२१ की धकापेल' में सन् १९२३ तक का सब हाल आ जाता है। जिला कांग्रेस कमेटी का कर्तव्य है कि वह अपनी ओर से देहरे की कांग्रेस का इतिहास तैयार करके छापे। यह न हो सके तो श्री चन्द्रमणि जी ही, उनके पास जितना मसाला पहुँच चुका है उसके आधार पर एक छोटा-सा इतिहास अपने प्रेस की ओर से छापें, यह पुस्तक खूब खपेगी। घाटे का तो प्रश्न ही नहीं।

एक बात और लिख कर समाप्त करता हूँ। वह यह कि देहरे की कांग्रेस का बाहर बहुत बड़ा नाम है। इसके जितने काम हुए, एक से एक बढ़ कर रहे, पर खेद की बात है कि अब तक जिले का अपना स्वतन्त्र कांग्रेस भवन नहीं बन सका है। देहरे की कांग्रेस जनों की आपसी मुठभेड़ के कारण ही यह कार्य न हो सका। नहीं तो देहरे के लिये कांग्रेस भवन खड़ा करना कौनसा कठिन कार्य था। इस वर्ष देहरे में ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी का सफल महाधिवेशन हुआ। इसके खर्च में से लगभग ६५०० रु० बचा है जो बैंक में जमा है। म्युनिसिपैलिटी ने बड़ी परेड के पास कुछ भूमि कांग्रेस के निमित्त दी है। यदि जिला और नगर के सज्जन सिर जुटा कर काम करें तो बात बात में ही भव्य कांग्रेस भवन खड़ा हो सकता है। अब तो सुनते हैं कि कांग्रेस वालों के झगड़े और झंझट शान्त हो गये हैं। अब क्यों देर हो रही है।

मुझे पूर्ण आशा है कि अब लोगों का ध्यान इस अत्यन्त आवश्यक कार्य की ओर जायगा। इस प्रकार जिला तथा नगर कांग्रेस कमेटी कब तक क्रियाकर्म में पड़ी रहेगी। अब क्रियाकर्म में रहने के दिन नहीं रहे।



देहरादून में राष्ट्रभाषा और जेलयात्री सम्मेलन

देहरादून (डाक से) गांधी जयन्ती के अवसर पर गांधी जयन्ती के मंत्री श्री सुदर्शन वैद्य द्वारा आयोजित राष्ट्रभाषा सम्मेलन श्री नरदेव शास्त्री के सभापतित्व में १४ अक्टूबर को टाउन हाल में बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन की विशेषता यह थी कि भारत की सभी प्रमुख भाषाओं तथा बृहत्तर भारत के द्वीपसमूहों के व्यक्तियों ने अपनी वेशभूषा तथा भाषा में सभापति महोदय का स्वागत किया। मंच पर लगभग डेढ दर्जन देशों के प्रतिनिधि अपने अपने देशों की वेशभूषा में बैठे

नोट—देहरादून के संस्मरणों में नं० ३ में ही नं० ४ मिल गया है जोकि "देहरादून वैसे चाहे छोटासा जिला है" इस वाक्य से प्रारम्भ होता है। आगे नं० ५ से क्रमाङ्क ठीक है। —संशोधक।

हुए सुशोभित हो रहे थे। सारा हाल इन प्रतिनिधियों की भाषा को सुनने के लिये लालायित था। प्रारम्भ में बालिकाओं ने स्वागत-नृत्य किया और सभापति महोदय को माला पहनाई। तदुपरान्त वन्दे मातरम् का गायन हुआ। अब क्रमशः नेपाल, भारत, वर्मा, इण्डोनेशिया, आयरलैंड, फ्रांस इंग्लैण्ड आदि देशों के प्रतिनिधियों ने अपनी भाषा में सभापति महोदय का स्वागत किया। यह दृश्य बड़ा ही मनोहर था।

सभापति महोदय ने गांधी जी द्वारा हिन्दी सीखे जाने का जिक्र किया। गांधीजी ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने कांग्रेस में सर्वप्रथम हिन्दी में बोलने का श्रीगणेश किया। गांधीजी हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सभापति बनाये गये और इन्हीं के प्रयत्नों से मद्रास जैसी अहिन्दी प्रांतों में भी हिन्दी प्रचार-समिति की स्थापना हुई और लाखों व्यक्तियों ने राष्ट्रभाषा सीखी।

सम्मेलन में दो प्रस्ताव रक्खे गये। प्रथम प्रस्ताव में दिवंगत साहित्य-सेवियों को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। दूसरे प्रस्ताव में सरकारों तथा जनता दोनों से अपील की गई कि वे शीघ्र से शीघ्र अपना कार्य हिन्दी में करना प्रारम्भ कर देवें। सम्मेलन में उत्तरप्रदेश, बिहार, राजस्थान, बम्बई आदि राज्यों को अपने राज्य में हिन्दी का व्यवहार करने पर बधाई दी।

गांधी जयन्ती का अन्तिम सम्मेलन जेलयात्री–सम्मेलन मा० रामस्वरूप जी के संयोजकत्व में श्री पं० नरदेवशास्त्री के सभापतित्व में १५ अक्टूबर को बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ।

इस सम्मेलन में जिले भर के कई सौ जेलयात्री आये थे। इनके अतिरिक्त पंजाब तथा सीमा–प्रान्त के भी बहुत से जेलयात्री उपस्थित थे। प्रारम्भ में सब का परिचय कराया गया। परिचय के बाद सभापति महोदय ने एक शोक–प्रस्ताव उपस्थित किया जिसमें दिवंगत साथियों के प्रति कृतज्ञता प्रकट की थी। सबने खड़े होकर इसे स्वीकृत किया।

दूसरा प्रस्ताव जेलयात्रियों के इतिहास लिखने के सम्बन्ध में था। इसे लिखने के लिए मास्टर रामस्वरूप जी के संयोजकत्व में एक उपसमिति बना दी गई। इसके सदस्य श्री नरदेवशास्त्री, श्री महन्त इन्द्रेशचरण दास, श्री श्रीराम शर्मा 'प्रेम', श्री अमरनाथ, सीमाप्रांत के श्री पुरुषोत्तमदास जी तथा बुद्धि-प्रकाश जी चुने गए।

तीसरा प्रस्ताव श्री श्रीराम शर्मा ने उपस्थित किया जिसमें श्री खडगबहादुर तथा रणजीतसिंह के परिवारों की सहायता के लिए सरकार से प्रार्थना की गई। श्री खडगबहादुर बड़े ऐतिहासिक पुरुष हैं, जिन्होंने कलकत्ते के सेठ हीरालाल का एक महिला की इज्जत उतारने पर वध कर दिया था। सारे देश में आपको फांसी की सजा से बचाने के लिए आन्दोलन हुआ। अपनी जाति की ओर से आप गांधी जी की डांडीयात्रा में सत्याग्रही बने। इसके पश्चात् आप पर एक षडयन्त्र का मुकदमा चलाया गया जिसमें आप फरार हो गये। आज तक उनका कोई पता नहीं है। इनकी दो बहने हैं, जिनकी शादी नहीं हुई है, अपनी विधवा माता के साथ गरीबी में जीवन यापन कर रहीं हैं। इसी प्रकार की श्री रणजीतसिंह की भी एक करुण-कथा है। इनका परिवार भी भूखों मर रहा है।

चौथा प्रस्ताव राजनीतिक कारणों से जेल जाने वाले अथवा अन्य प्रकार से सताए जाने वाले साथियों का संगठन करने के सम्बन्ध में था। इसके लिये भी एक उपसमिति का निर्माण किया गया।

(हिन्दुस्तान—२१-१०-५१)

खरी-खरी बातें

चुनाव पद्धति की त्रुटियाँ

(दून-समाचार, २२ सितम्बर १६५१)

चुनाव पद्धति की सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि यह अधिकतर पैसों पर निर्भर है। जिसके पास २५०) रु० नहीं हैं वह चुनाव का फार्म कैसे भरे। फिर जिसके पास पैसे नहीं हैं वह लखनऊ के फेरे कैसे डाले। फिर किसी प्रकार प्रार्थना-पत्र स्वीकार हो जाये तो चुनाव के प्रारम्भ से चुनाव-समाप्ति तक जो भयंकर खर्च पड़ता है उसको कोई कैसे भुगते। पैसों के अभाव में मनस्वी पुरुष तो किसी से रुपये उधार लेकर प्रार्थना-पत्र तो देगा नहीं, न ही वह मिन्नत, खुशामद करने के लिये लखनऊ जायेगा, ऐसी दशा में जिनके पास चार पैसों का जोर रहता है वे ही आगे आते हैं।

ऐसे लोग कांग्रेसी हों तो चिन्ता नहीं, पर जिन्होंने कांग्रेस का कभी भी, कोई भी काम नहीं किया और सदा विरोध ही करते रहे, वे भी तो अवसरवादी बन कर कांग्रेस का फार्म भर देते हैं। और पार्लियामेंट-बोर्ड ऐसों को भी अवसर दे देता है। यह तो कांग्रेस की दुर्बलता ही है कि वे सभी स्थानों पर कांग्रेसी उम्मीदवारों को नहीं खड़ी कर सकती है। चाहे ऐसा करने में उसको कहीं कहीं हार ही क्यों न खानी पड़े, पर है यही असूल की बात।

चुनावों में कांग्रेस यह देखती है कि कौन उम्मीदवार अपना खर्च उठा सकता है। और कौन नहीं। किस का कम खर्च होगा।

सारांश, अभी कांग्रेस का पूरा २ ध्यान कांग्रेस के तपे-तपाये किन्तु निर्धन कांग्रेसी उम्मीदवारों की ओर नहीं गया। चुनाव के रंग-ढंग ही ऐसे रखे गये हैं कि जिसके पास पैसे नहीं वह चाहे कितना ही ईमानदार तपा-तपाया कांग्रेसी हो और रह चुका हो, वह हो ही नहीं सकता। समस्त काण्ड पैसों का है, न कोई योग्यता को पूछता है, न कोई पिछले कार्य को देखता है। प्रान्तीय कांग्रेस अच्छी तरह जानते हुए भी कि प्रत्येक स्थान में कौन योग्य अथवा सुयोग्य व्यक्ति हैं, इस बात का ध्यान नहीं रखती। चाहिये यह था कि वह ऐसे व्यक्तियों से स्वयं प्रार्थना करती कि आप खड़े हो जाइये, प्रान्त ऐसे व्यक्तियों का सब खर्च उठायेगा।

अब श्री टण्डन जी तथा श्री नेहरू जी स्पष्ट कह रहे हैं कि जिन्होंने उम्मीदवारी के फार्म नहीं भरे हैं, उन अच्छे योग्य व्यक्तियों में से ही उम्मीदवार चुनने चाहियें। वैसे चुनाव में जाति-पांति का नाम नहीं है, तो भी प्रच्छन्नरूप में यह देखा ही जाता है कि किस जाति के लोग किस केन्द्र में अधिक हैं और वहाँ उसी जाति के (कांग्रेसी) व्यक्ति को अथवा जिसने कांग्रेस फार्म पर हस्ताक्षर किये हैं ऐसे गैर कांग्रेसी को (उसी जाति के) खड़ा करने में कांग्रेस की बात रह जायेगी। यह भी बड़ी दुर्बलता है।

ब्राह्मण ने असेम्बली में अथवा पार्लियामेंट में जाकर कोई वेदपाठ करना नहीं है, क्षत्रियों को वहाँ जाकर कोई तलवार नहीं चलानी है, वैश्य ने वहाँ जाकर कोई तराजू तोलनी नहीं है, और शूद्र या अछूत ने वहाँ जाकर कोई झाड़ू नहीं लगानी है। जो भी योग्य हो (चाहे जो हो) उसी को भेजना चाहिये। किन्तु इन बातों का ध्यान कौन रखता है?

इस चुनाव में सैकड़ों व्यक्ति केवल अपनी जाति की वोट पर खड़े हो रहे हैं। अछूत तो केवल अछूतों की वोट पर निर्भर हैं, उनके लिये तो स्थान भी सुरक्षित हैं, उनके लिये तो दस वर्ष की छुट्टी भी है। परिगणितों की भी यही दशा है।

केवल योग्यता के बल पर उम्मीदवारों को भेजने का चुनाव जिस दिन होगा वही भारतवर्ष में सुदिन होगा। तब तक इस प्रकार के अज्ञ-विज्ञ करोड़ों वोटरों के बिना समझे अथवा दबाव से अथवा देखा-देखी, डाले जाने वाले वोटों के दुष्परिणामों को भुगतना ही पड़ेगा। जो बाजी ले गया सो ले गया, जो रह गया सो रह गया।

अस्तु! मनस्वी पुरुषों को इस बात पर खेद नहीं करना चाहिये और न किसी के सम्मुख गिड़गिड़ाना चाहिये। अयोग्य पुरुष योग्य स्थानों पर बैठ रहे हों, अथवा जा रहे हों तो इससे योग्य व्यक्तियों का कुछ बिगड़ता नहीं है। कौए यदि मेरु पर्वत के शिखर पर जा बैठें तो क्या उससे संसार में कौओं की क़दर बढ़ेगी या कोयलों की क़दर घटेगी? जो योग्य हैं और जिनको योग्य स्थानों पर बैठने का अवसर मिलेगा, वह भाग्यशाली हैं। केवल उनका यही दुर्भाग्य की उनकी नकेल अयोग्यों के, मूर्खों के हाथों में रहेगी। इसमें वश किसका। प्रजातन्त्र का विधि-विधान ही ऐसा है। अज्ञ-विज्ञ, विद्वान्-अविद्वान्, धनी-मानी, और दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि सबको एक ही साथ बहना पड़ेगा।

कांग्रेस का ६६ वर्ष का इतिहास

३३ वाक्यों में, १८८५ से १९५१

(दून समाचार, १८ अगस्त १९५१)

दादाभाई नौरोजी, गोखले आदि का समय

१—पहिले पहिले जब कांग्रेस चली तब उसका केवल एकमात्र यही उद्देश्य था कि वह ब्रिटिश साम्राज्य की छत्रच्छाया में ही रह कर स्वराज्य प्राप्त करे।

२—इस प्रकार के स्वराज्य प्राप्त करने का एकमात्र उपाय यही रहा—प्रार्थना, अनुनय, विनय, भिक्षां देही इत्यादि।

३—जब २५ वर्ष तक यही ढर्रा रहा किन्तु फल नहीं के तुल्य रहा, तब इसी में से गरम पक्ष उत्पन्न हुआ।

तिलक आदि का समय

४—लोकमान्य तिलक इस गरम पक्ष के अग्रणी रहे।

५—इन्होंने स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, हम उसको लेकर ही रहेंगे, यह मन्त्र दिया। स्वदेशी, होमरूल आदि आन्दोलन चलाये।

६—सूरत कांग्रेस में नरमों और गरमों में झगड़ा हो गया। लोकमान्य तिलक सरकार के रोष-भाजन बने, छह वर्ष का कठोर कारावास मिला।

७—१९१६ में लखनऊ कांग्रेस में फिर नरम गरम इकट्ठे हुए।

८—१९१९ को अमृतसर में कांग्रेस बहुत गरम बन गई। पंजाब में विचित्र परिस्थिति रही, मांटेगू-चेम्सफोर्ड स्कीम (द्वैध-शासन) स्वीकार हुआ।

९—१९२० में लोकमान्य का निधन, कांग्रेस-सूत्र महात्मा गांधी के हाथों में, असहकार आन्दोलन का श्रीगणेश।

१०—महात्मा गांधी के समय में रौलट एक्ट, खिलाफत आन्दोलन आदि चले, जिनका पर्यवसान सत्याग्रह-आन्दोलन में हुआ और भारतवर्ष में अपूर्व जागृति हुई।

११—कांग्रेस का उद्देश्य 'शान्त और समुचित उपायों से स्वराज्य प्राप्ति' हो गया।

१२—साधन अहिंसात्मक असहयोग, सत्याग्रह आदि रहे।

१३—कई वार सत्याग्रह हुए, प्रत्येक सत्याग्रह में कांग्रेस का बल बढ़ता ही गया। सत्याग्रह भी चलता रहा और बन्द भी होता रहा।

१४—लाहोर कांग्रेस में पण्डित जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व में पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

१५—१६४२ में 'अङ्गरेजो चले जाओ' का उद्घोष हुआ। बड़ा तीव्र आन्दोलन उठा। दमन अतितीव्र था। भारतवर्ष की स्थिति को जानने के लिये कई कमीशन आये। सर क्रिप्स एक मसविदा लेकर आये, महात्मा गांधी ने अस्वीकार कर दिया। सर क्रिप्स कहते रहे कि या तो इस मसविदे को स्वीकार करो अथवा निषेध करो।

१६—१६४६ तक बड़ा झमेला रहा। मुसलिम लीग तथा कांग्रेस में किसी प्रकार का समझौता न हो सका। कुछ काल केन्द्रीय सरकार में दोनों का सम्मिलित शासन चला। एक का मुँह उत्तर को तो दूसरे का दक्षिण को रहा। समझौता न हो सका।

कांग्रेस का समय

१७—१६४७ की १५ अगस्त को स्वतन्त्रता मिली, पर देश का विभाजन हो गया, जिसके पश्चात् बड़ा संहार-काण्ड प्रवृत्त हुआ एक कोटि जन संख्या का इधर से उधर परिवर्तन भी हुआ।

इन चार वर्षों में

१८—शासन सूत्र कांग्रेस के हाथों में ही रहे।

१६—कांग्रेस ने सब प्रकार के विचार वालों से ही काम चलाया।

२०—सब राजे भारत सरकार के झण्डे के नीचे आये।

२१—जूनागढ़ पाकिस्तान की ओर चला था, उसको अपने हाथ में ले लिया।

२२—हैदराबाद को पुलिस एक्शन द्वारा सीधा किया।

२३—भोपाल के नवाब को भी, जो राजाओं में भेद-भाव डालना चाहते थे, सीधा किया गया।

२४—काश्मीर पर पाकिस्तान ने सहसा आक्रमण कर दिया, उसके साथ युद्ध करके काश्मीर को बचाया गया। अब मामला यू० एन० ओ० में चल रहा है, अभी झगड़ा चल रहा है। दोनों ओर से तनातनी चल रही है।

२५—भारत के अन्तःस्थ उपद्रव शान्त हो गये, किन्तु पाकिस्तान के वार वार वचन-भंग, सीमा के उपद्रव आदि के कारण अशान्ति रहती है।

२६—पूर्वी पाकिस्तान तथा पश्चिमी बंगाल में पंजाब की सी दशा हो चली थी, किसी प्रकार समझौता होकर शान्ति हो चली थी, पर अब जब कि पाकिस्तान युद्ध करने पर तुला हुआ है, जहाद बोल रहा है तब शान्ति की सम्भावना नहीं। भारत सरकार ने भी स्वात्मरक्षार्थ सीमाओं पर (सर्वत्र) फौजें भेज दी हैं और पाकिस्तान चिल्ला रहा है कि भारत पाकिस्तान पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा है और दुहाई दे रहा है अंग्रेजों की, अमेरिकनों की, और यू० एन० ओ० की। देखें क्या होता है।

२७—चार वर्ष में कांग्रेस ने जो कुछ किया और विकट परिस्थियों के कारण जो कुछ न कर सकी, वह स्पष्ट है।

२८—बने हुए नये विधान के अनुसार भारत में संसार का सबसे बड़ा चुनाव काण्ड होने वाला है।

२९—'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे' प्रारम्भ हो गया है और अनेक पार्टियाँ चुनाव के अखाड़े में उतर रही हैं।

३०—सबका उद्देश्य यह है कि जैसे भी हो कांग्रेस सरकार न रहने पावे।

३१—एक ओर कांग्रेस और उसके असंख्य साथी और उसके महारथी हैं, तो दूसरी ओर समाजवादी पार्टी, साम्यवादी पार्टी, हिन्दूसभायी और उसके साथी, पीपल्सपार्टी (श्यामाप्रसाद मुकर्जी की) जनता पार्टी (मुसलिम लीग वाली), प्रजा पार्टी (जिमींदारों की), प्रजा पार्टी (दादा कृपलानी आदि की), जनसंघ (पंजाब का), और अन्य अनेक दल तथा इसके अतिरिक्त स्वतन्त्र दल।

३२—कांग्रेस के अन्दरूनी ताजे झगड़े के कारण पं० नेहरू ने कांग्रेस की कार्यकारिणी से त्यागपत्र दे दिया है, तो उधर कांग्रेस-अध्यक्ष श्री टण्डन जी ने भी।

३३—कुछ भी हो ये नेता लोग कांग्रेस को सम्भाल ही लेंगे।

हम तो यही कहते हैं कि "यतो धर्मस्ततो जयः" जिधर भी धर्म का अधिक अंश होगा, जिधर भी सुनीति-सद्भाव होगा, उधर ही जीत होगी।

१९५२—संविधान के अनुसार प्रथम महाचुनाव हुआ। कांग्रेस का प्रबल बहुमत रहा।

१९५७—संविधान के अनुसार द्वितीय महाचुनाव हुआ। इसमें कांग्रेस का केन्द्र में प्रबल बहुमत रहा किन्तु स्टेटों में बहुत कुछ उलट-पुलट रहा। केरल में कम्यूनिस्ट प्रबल रहे।

काश्मीर का झगड़ा चला ही जा रहा है यू० एन० ओ० में। वैसे काश्मीर भारत में मिला हुआ है। जितना भाग पाकिस्तान ने दबा लिया है वह अभी उसी के पास है।



कांगड़ी के वे दिन

[लेखक—आचार्य श्री नरदेव जी शास्त्री वेदतीर्थ ज्वालापुर]

(आर्य, दिसम्बर १९४९)

[१]

कांगड़ी के उस समय के पुराने व्यक्तियों में मैं अकेला ही शेष हूँ। महात्मा मुन्शीराम, महात्मा खुशीराम, ला० रामकृष्ण वकील (जालन्धर) म० सालिग्राम भण्डारी, बा० नन्दलाल, प्रो० रामदेव, प्रो० बालकृष्ण, प्रो० गोवर्धन, प्रो० सियाराम, बा० प्रतापसिंह—गुरुवर श्री काशीनाथ जी शास्त्री, श्री पं० गंगादत्तजी शास्त्री (स्व० शुद्धबोध तीर्थ), श्री पं० भीमसेन शर्मा साहित्याचार्य, पं० पद्मसिंह शर्मा, श्री विनायक गणेश साठे, श्री योगेश्वर जी ज्योतिषी (कनखल)—इनमें श्री साठे जी प्रतापसिंह जी को छोड़ कर सभी दिवंगत हैं और न जाने किस लोक-लोकान्तर को सुभूषित कर रहे हैं—हाँ मैं दो नाम और भूल गया। एक पं० सूर्यदेवशास्त्री व्याकरणाचार्य तथा दूसरे मास्टर हरिगोपाल।

जब गुरुकुल का प्रारम्भिक रूप था तब गुजरानवाला में वैदिक आश्रम में इन्द्रचन्द्र हरिश्चन्द्र, लव, कुश, जयचन्द, चन्द्रमणि, गुरुदत्त आदि आठ दश ही लड़के थे, मैं ही इनका प्रथम संरक्षक था। जब महात्मा मुन्शीराम गुजरानवाला से कांगड़ी चले तब उनके साथ तेतीस ब्रह्मचारी थे। पं० गंगादत्त शास्त्री पहिले ही हरिश्चन्द्र जी को लेकर कनखल में भारामल के दरवाजे के ऊपर रहने लगे थे। मैं भी कुछ काल वहीं रहा। पं० बाशीराम जी वजीराबादी कांगड़ी में ब्रह्मचारियों के लिये फूस की कुटियाएं बनाने में व्यस्त थे—यह बात सन् १९०० जून की है।

आज गुरुकुल को स्थापित हुए ५० वर्ष होते हैं और सुवर्ण जयन्ती मनाने का भी योग प्राप्त हुआ है। पर उस समय में और इस समय में आशातीत अन्तर है। प्रारम्भिक गुरुकुल को सतयुग कह सकते हैं तो इस वर्तमान गुरुकुल को कलियुग का प्रथम चरण कह सकते हैं। उसको प्राचीनता का प्रतीक कह सकते हैं तो इसको नवयुग का संकुल रूप कह सकते हैं। वहां ३३ ब्रह्मचारी थे तो यहां ३३० ब्रह्मचारी समझिए।

गुरुकुल की प्रारम्भिक दशा में मैंने भी ३-४ मास पढ़ाया था। यद्यपि मेरा नाम उस समय के रजिस्टर में नहीं मिलेगा तथापि गुरुवर पं० गंगादत्तशास्त्री जी के कारण मुझे यह काम करना पड़ा। फिर मैं १९०५ से १९०८ तक बड़ी श्रेणियों को निरुक्त, नवान्हिक महाभाष्य, किसी को अनुवाद आदि पढ़ाता रहा। फिर तो मैं फर्रुखाबाद गुरुकुल का आचार्य होकर चला गया, और वहाँ से महा-

विद्यालय ज्वालापुर आया, तब से यहां मुख्याधिष्ठाता, आचार्य गुरुकुलपति आदि कई रूप में रहा। बीच बीच में मुझे राजनैतिक कार्यक्षेत्र को भी सम्भालना पड़ा—यह लम्बा किस्सा है, यहीं छोड़ता हूँ। महाविद्यालय को भी ४० वर्ष हो गये। पार का कांगड़ी गुरुकुल अब इधर ही आ गया है और महाविद्यालय और गुरुकुल कांगड़ी की खेतों की सीमाएं मिल रही हैं। गुरुकुल के इधर आने के पश्चात् पं० विश्वम्भरनाथ जी भी चल बसे—हरिश्चन्द्र राजामहेन्द्रप्रताप के साथ सेक्रेट्री बनकर जो विलायत गये थे उनका कुछ पता ही नहीं लगा। राजासाहब ३२ वर्ष विदेश में रहकर वापिस आ भी गये, और अपने ढंग से देश कार्य कर रहे हैं।

स्व० पण्डित गंगादत्त शास्त्री गुरुकुल में पांच वर्ष रहे फिर चले गये, उनके पश्चात् पं० भीमसेन जी, प्रो० सियारामजी, पं० यागेश्वर जी, श्री साठे जी चले गये, सबसे पीछे मैं आया—ऐसा क्यों हुआ, क्या कारण हुए, इत्यादि बातों के न तो कहने का अवसर है न उचित ही प्रतीत होता है। फिर कुछ वर्ष पश्चात् गुरुवर काशीनाथ जी भी महाविद्यालय में आये और ६ वर्ष रह कर काशी चले गये। वहीं उनका देहावसान हुआ जैसी की उनकी इच्छा थी। महाविद्यालय में भी मैं पुराने में अकेला शेष हूं और जो आता मिलता है, वह यही कहता है कि "अब तो पुरानों में आप ही अकेले शेष हैं" जब अभी ऐसा कह रहे हैं और कहते रहेंगे तब मैं भी कब तक यहां अथवा इस संसार में शेष रहूँगा। अब तो सेवानिवृत्त दशा में वर्ष भर में ४-५ मास ज्वालापुर में रहता हूँ। अपनी सुन्दर कुटिया है और आराम से रहते हैं। जब कांग्रेस का कार्य होता है बाहर आते हैं।

मैं जब कांगड़ी में था तब विशेष घटना यह हुई कि महात्मा मुन्शीराम जी की विरोधी पार्टी ने इनके विरुद्ध एक बड़ा तूफान उठाया था, तब महात्मा जी ने एक बड़ी पुस्तक उत्तर में लिखी थी जिसका नाम "दुखी दिल की पुरदर्द दास्ताँ" था।

इस पुस्तक के छपने पर विरोधी दल एकदम शिथिल पड़गया। गुरुकुलों के उन वर्षों के उत्सव भी आदर्श उत्सव रहते थे, क्या मजाल किसी की कोई वस्तु गुम होजाय। पहिली पहिली श्रद्धाएं, पहिला पहिला गुरुकुल, पहिले २ उत्सव, सतयुग की-सी छटा थी। स्थान-महात्म्य भी कोई वस्तु होती है। पुराने स्थान में तपोवन की आभा थी तो नया स्थान रजोगुणी ठाठ का एक बड़ा अखाड़ा है, जिस में पुरानी बात है तो सही, पर इतनी दब गई है कि एक खासा-चोखा नये ढंग का एक बड़ा कॉलेज और बोर्डिङ्ग हाऊस प्रतीत होता है और नये ढंग के विश्वविद्यालय के मार्ग पर चलने की तैयारी कर रहा है। पहिले वह सहकारी छाया और सम्पर्क से सर्वथा अलिप्त रहने वाला प्राचीन रंग का बड़ा शिक्षणालय था तो अब सरकार से अधिक सम्पर्क बढ़ाकर उसकी सहायता की भी अपेक्षा कर अथवा रख रहा है। हाँ वह सरकार विदेशी थी तो यह सरकार अपनी है इतना अन्तर तो है पर यह सरकार अभी तक विदेशी पद्धति को स्वीकार कर उस पर चल रही है आगे देखना चाहिये।—वर्तमान सरकार द्वारा गुरुकुल अपना पृथक् चार्टर्ड विश्वविद्यालय बनाने की बात भी सोच रहा है। सरकारी सहायता लेने की अपेक्षा अपना ही विश्वविद्यालय अच्छा। अपने कार्य में सर्वथा स्वतन्त्र तो रहें—उसपर किसी का अनुचित अंकुश तो नहीं रहेगा।

अस्तु, समय जैसा भी कराये। समय बड़ा बलवान है, कोई विरला ही समय की गति से बच कर दृढ़ता-पूर्वक अपनी ही गति पर चलता रहता है। साधारण व्यक्ति तो समय के साथ बदलते हैं। बोलते हैं, बहते हैं।

समय एव करोति बलाबलम्। प्रणिगदन्त इतीव शरीरिणाम्॥
शरदि हंसरवाः परुषीकृत-स्वरमयूरमयूररमणीयताम्।
(माघ)

कोकिल का मधुर कण्ठ वसन्तऋतु में ही भाता है। शरदऋतु में हंसों की ही तूती बोलती है। वर्षाऋतु में केका अर्थात् मयूर के शब्द ही अच्छे लगते हैं। अपना अपना समय है—गुरुकुल काँगड़ी की वह बात महात्मा मुन्शीराम जी के साथ ही गई तो महाविद्यालय ज्वालापुर की वह बात भी स्वामी शुद्धबोध तीर्थ जी के साथ ही चली गई।

ओ हो, मैं क्या लिखने लगा था और लेखनी का प्रवाह किधर बह गया। मैं लिख रहा था उन दिनों की कांगड़ी की बात—जहां से बात छूटी वहां से चलिये। मैं जब वहां था पटियाला में, पटियाला स्टेट ने स्व० राय ज्वालाप्रसाद आदि १०-११ व्यक्तियों के विरुद्ध अंग्रेजों के विरुद्ध षडयन्त्र करने का अभियोग चलाया था।

आर्यसमाज के लिये यह नया संकट था। महात्मा मुन्शीराम छुट्टी लेकर गये, वहाँ वकालत की और सब को छुड़ा लाये। सिविल और मिलिटरी गजट के उन दिनों में छपे हुए म० मुन्शीराम जी के वे अंग्रेजी लेख बड़े मार्के के थे।—उन लेखों ने बड़ा तहलका मचा दिया था। महात्मा मुन्शीराम जब तक छुट्टी पर थे जालन्धर के ला० रामकृष्ण वकील स्थानापन्न मुख्याधिष्ठाता रहे।

मैं इस लेखमाला को ७-८ अङ्कों तक चलाऊँगा। पाठकवर्ग धैर्यपूर्वक पढ़ें। मैं वर्तमान गुरुकुल के विषय में कुछ भी नहीं लिखूँगा इसलिये लेखमाला मेरे कांगड़ी के दिनों तक ही सीमित रहेगी।

---

[२]

हां मैं और दो तीन नाम तो भूल गया—स्व० अमनसिंहजी (भूमिदाता) बड़े सज्जन दानी पुरुष थे। वे कांगड़ी ग्राम का दान न करते तो गुरुकुल उधर पंजाब में ही रह जाता क्योंकि एक पक्ष बड़ा प्रबल था कि गुरुकुल पंजाब में ही रहे। गुरुकुल के लिये हरद्वार में भीमगोड़े के पास खडखडी ग्राम भी मिल रहा था। वह ग्राम स्व० बा० ज्योतिःस्वरूप वकील का था। दूसरा स्थान कनखल में गंगा किनारे पं० बस्तीराम की पाठशाला का था। नगर के समीप होने से ये स्थान उचित नहीं समझे गये। इस विषय में स्व० ला० अमनसिंह नजीबाबादी ने उद्धार किया।

स्व० मुन्शी तोतारामजी नायबतहसीलदार ग्वालियर ने भी प्रारम्भिक दिनों में बड़ा काम किया था, इनका लड़का शङ्कर बी० ए० क्षयरोग से ज्वालापुर में मर गया था।

बालकृष्ण नामक एक क्लर्क रहते थे। गोविन्दराम नामक और एक क्लर्क रहते थे। दोनों पता नहीं कहां हैं। पं० विष्णुमित्र जी (सोमदत्त विद्यालंकार के पिता) अध्यापक थे। आजकल कन्या गुरुकुल में रहते हैं।

गुरुकुल में मेरी कुटिया गंगा किनारे थी। पास ही आनन्द वाटिका थी जिसमें गुरुवर काशीनाथ जी रहा करते थे और दो एक उनके बलिया के विद्यार्थी।

मैं लिख चुका हूँ कि श्री पं० गंगादत्त जी शास्त्री संस्कृत विभाग के प्रधान थे और रामदेव जी अन्य सब विभागों के मुख्य थे। शिक्षा-विभाग में इस प्रकार दुहेरी काम चलता था। मुझे दोनों विभागों में काम करना पड़ता था।

इसके अतिरिक्त ब्रह्मचारियों की वाग्वर्द्धिनी सभा का भी मैं ही सभापति था।

इसके अतिरिक्त ब्रह्मचारियों के खेलों के समय में निरीक्षक रूप में मुझे उपस्थित रहना पड़ता था। मैं सब प्रकार के खेलों में निपुण था इसलिये मुझे वह कार्य भी करना पड़ता था।

लड़कों की तैराकी के समय में भी विष्णुमित्र जी और मुझको रहना पड़ता था।

डाक्टरों में पहासू खुर्जा के डा० लक्ष्मीदत्त काम करते रहे। फिर डा० सुखदेव जी काम करते रहे।

उन दिनों गुरुकुल की ख्याति बढ़ रही थी। साधारण लोग जो दूर दूर से आते थे, गुरुकुल का अर्थ ही नहीं समझते थे। कोई गुरुकुल को गुरुकुण्ड ही समझते तथा कहते थे। कोई मुन्शीराम को ही गुरुकुल समझते थे।

महाशय धर्मपाल (अब्दुलगफूर) को देखने के लिये बड़े लोग आते थे।

एक बार महात्मा मुन्शीराम जी के आग्रह से (हम महात्मा जी को प्रधान जी कहते थे। आगे जहाँ कहीं इनका नाम आयेगा वहां प्रधानजी करके ही लिखेंगे) मैंने हमारे वेदगुरु आचार्य श्री सत्यव्रत-सामश्रमी फेलो एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बेंगाल, प्रोफेसर (वेद) कलकत्ता युनिवर्सिटी को गुरुकुल के उत्सव पर भेजा था—उस उत्सव में बड़ी धूम धाम रही तब मैं कलकत्ते में ही था।

जालन्धर के पं० मेलाराम शास्त्री तथा पं० रलियाराम शास्त्री भी उस समय यहां अध्यापक थे।

स्वा० दर्शनानन्द और म० मुन्शीराम जी

पंजाब में दोनों ने बहुत काम किया और महात्मा पार्टी के स्तम्भ भी कहलाये जाते थे। जालन्धर के वैदिक आश्रम को जब पं० की आवश्यकता पड़ी तब स्वा० दर्शनानन्द जी की प्रेरणा से ही पं० गंगादत्त शास्त्री जालन्धर आये थे। यू० पी० में दोनों के आने पर ही परस्पर सम्बन्ध बिगड़ गये।

१६०२ से पूर्व जैसे आप दोनों के सम्बन्ध थे, वैसे बने रहते तो संभव है ज्वालापुर में महाविद्यालय की स्थापना ही नहीं होती। स्वा० दर्शनानन्द जी गुरुकुल के प्रथम महोत्सव में सम्मिलित हुए थे। इस बात को बहुत कम लोग जानते हैं। बा० सीताराम जी ने (जहाँ अब महाविद्यालय है) अपना बाग आर्य-प्रतिनिधि सभा पंजाब को दिया था। लाहोर के उत्सव पर दान बोला भी गया था किन्तु प्रधान जी को यह स्थान पसंद नहीं आया जो कुछ हुआ हो, फिर यह स्थान स्वा० दर्शनानन्द जी को मिला जहाँ विद्यालय खुला।

स्व० पण्डित विश्वम्भरनाथ जी

१८६४ से १८६८ तक लाहोर में हम दोनों आर्य-विद्यार्थी आश्रम में रहे, तभी से परिचय चला आता था।

स्व० श्री रामदेव जी

इनका हमारा परिचय लाहोर से ही था। पहिले ये डी० ए० वी० कालिज के पक्ष के थे फिर महात्मा पार्टी में आगये—माँगने में बड़े सिद्धहस्त थे। प्रधान जी के पीछे इन्होंने गुरुकुल को खूब चलाया और खूब धन माँगा।

महाशय कृष्ण

महाशय कृष्ण का हमारा परिचय भी लाहोर का ही है, अब तक वही सम्बन्ध चला आता है।

हमारे कांगड़ी में रहते समय प्रायः इन तीनों से मिलना-जुलना होता ही रहा।

एक विशेष बात

जब महाविद्यालय में पं० गंगादत्त शास्त्री आ बैठे, पं० भीमसेन जी, पं० पद्मसिंह जी भी आ बैठे। तब इन तीनों ने मुझ को प्रेरणा की कि मैं भी महाविद्यालय में आऊँ। उधर मुन्शीराम जी कहते थे कि गुरुकुल के लाइफ़ मेम्बर बन जाओ। मैंने यह स्थिति पिताजी रावसाहेब पं० श्रीनिवासरावजी को लिखी। उन्होंने मुझे तार दिया कि Join Kangri कांगड़ी जाओ। उस समय मैं कांगड़ी चला जाता तो आज उधर का ही एक प्रमुख व्यक्ति कहलाया जाता—एक वार श्री रामदेवजी ने भी मुझ से प्रबल प्रेरणा की थी कि मैं कांगड़ी गुरुकुल (गुरुकुल इधर आगया था) में जाऊँ—मैंने उत्तर दिया कि कर्ण की तरह एक वार जग में राधासुत प्रसिद्ध हो जाने के पश्चात् कुन्तिसुत कहलाना उचित नहीं। अर्थात् महाविद्यालय के नाम से ख्याति होजाने के पश्चात् कांगड़ी के कहलाने में ठीक नहीं।

महाविद्यालय में आने के पश्चात की गुरुकुल तथा महाविद्यालय की स्पर्द्धा तनातनी, लेखालेखी की जब याद करता हूँ तो अब हँसी आती है कि यह सब क्यों हुआ। आकाशवाणी उत्तर देती है कि "भवितव्यता ही ऐसी थी", "होनहार ही ऐसी थी"।

[३]

आज प्रबन्ध सम्बन्धी कुछ बातें लिखने लगा हूँ। प्रधान जी प्रातः ३ बजे उठते थे और ३॥ बजे तक स्नान संध्या से निमट कर आश्रम में एक वार घूम जाते थे। आश्रम की सब व्यवस्था श्री पं० गंगादत्त जी शास्त्री के अधीन थी। इस प्रकार दोनों की निरीक्षकता में बहुत अच्छा प्रबन्ध रहता था।

पं० गंगादत्त जी शास्त्री को व्यायाम का एक प्रकार से व्यसन ही था इसलिए प्रातः स्नान-ध्यान के पश्चात् किन्तु हवन से पूर्व स्वयं व्यायाम करते और लड़कों को भी व्यायाम कराते। हवन में कभी २ प्रधान जी (म० मुन्शीराम जी) १०-१०, १५-१५ मिनिट के धर्मोपदेश देने आया करते थे। वे न आये तो पं० गंगादत्त शास्त्री जी ही उपदेश देते थे।

पठन-पाठन के समय एकाधवार पं० गंगादत्त शास्त्री जी, कमरों से बाहर ही बाहर होकर निकल जाते थे। मास्टर रामदेव जी (मास्टर इसलिए लिख रहा हूँ कि वे उस समय हेड मास्टर थे) कमरों के भीतर आकर व्यवस्था देख जाते थे। तीसरी बारी प्रधान जी की रहती थी। इसलिए कई वार निरीक्षण रहता था। स्नान करते समय संरक्षकगण ब्रह्मचारियों के साथ रहते थे। भोजन के समय भी। अध्यापकों को वारी-वारी से लड़कों का संरक्षक भी बनना पड़ता था। वातावरण ऐसा बन गया था कि जो संरक्षकी करता था और जो व्यक्ति भोजन भण्डार में करता था उसको समान की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। वे लड़कों में मामूली साधारण व्यक्ति समझे जाते थे। मैंने जब इस स्थिति को देखा तब प्रधानजी से स्पष्ट कह दिया कि न तो मैं भण्डार में भोजन करूँगा, न ही संरक्षक बनूँगा। इसलिये मैं दोनों उपाधियों से बच गया। मेरा भोजन मेरी कुटिया पर आता था। पठन पाठन प्रबन्ध में मुझे दो के अधीन रहना पड़ता था, एक गंगादत्तशास्त्री जी के तथा रामदेव जी के। मैंने इस विषय में भी यह व्यवस्था ले ली कि मुझे जो कुछ कहा जावे पं० गंगादत्तशास्त्री जी की मार्फत कहा जावे। म० मुन्शीराम जी मुझे जो कुछ कहलाना होता था शास्त्री जी द्वारा ही कहलाते थे।

यह तो मैं लिख ही चुका हूँ कि क्रीड़ा के समय मेरा ही प्रबन्ध रहता था, किसका मैच होगा, कौनसी श्रेणी कहाँ खेलेगी, छोटे कहाँ खेलेंगे, बड़े कहाँ इत्यादि सब प्रबन्ध मेरे अधीन रहता था। फुटबाल कबड्डी, क्रिकेट, वृक्षारोहण, दौड़ आदि चलते हो थे। वृक्षारोहण के समय प्रधान जी स्वयं उपस्थित रहते थे। पं० गंगादत्त जी वृक्षारोहण के विरुद्ध थे। कभी कभी छुट्टियों में पास की पहाड़ियों और जंगलों में सब के सब निकल जाते थे। पीलु फल के दिनों में ब्रह्मचारीगण टोलियाँ बाँधकर निकल जाते थे।

तैराकी के विषय में मैं पूर्व ही लिख चुका हूँ।

भोजन का प्रबन्ध उत्तम रहता था। प्रातराश में दूध के साथ कभी कुछ कभी कुछ नित्य नियम से मिलता था। दुपहर की छुट्टियों में भी दूध मिलता था। फिर दर्शकों द्वारा भी मिठाई तथा फलों, किशमिश, बादाम आदि की रेल-पेल रहती ही थी। आठवें दिन खीर, पूरी, हलवा चलता ही था।

वाग्वर्द्धिनी सभा में प्रति सप्ताह नियत विषय पर भाषण, कभी वादविवाद, कभी निबन्ध-वाचन चलता था। एक सप्ताह संस्कृत में, तो दूसरे सप्ताह हिन्दी में। हिन्दी-संस्कृत में सबसे अच्छा बोलने वाले ब्र० हरिश्चन्द्र तथा ब्र० ब्रह्मदत्त थे। ब्र० बुद्धदेव जी चुलबुले विद्यार्थी थे। मधुर कण्ठ होने के कारण श्लोक बोलने में उत्तम माने जाते थे। जब कोई प्रसिद्ध दर्शक बाहर से आया कि इनको श्लोक सुनाने के लिये बुलाया समझिये। बुद्धदेव जी के पिता पं० रामचन्द्र जी गुरुकुल में काम कर चुके हैं। एक मास्टर सुन्दरसिंह बी. ए., बी. टी. हुआ करते थे। अपने काम में पूरे डिक्टेटर थे। किसी की नहीं सुनते थे।

आश्रम में उस समय देशी तेल के दीपक जलते थे किन्तु फिर भी मिट्टी के तेल के प्रकाशमय उजले लेम्पों का प्रवेश हो गया था।

ब्रह्मचारियों का प्राईवेट वेश श्वेत वस्त्र था, पठन पाठन के समय का तथा सार्वजनिक बाह्यवेश पीतवस्त्र रहा, बड़ी शोभा रहती थी।

भीमसेन नामक छर्रा जिला अलीगढ़ का एक बहुत ही छात्रप्रिय माली वाटिका में रहता था। आश्रम के सामने इसी ने एक सुरम्य वाटिका बनाई थी। पीछे इस वाटिका में एक रहट भी लग गया था।

म० मुन्शीराम जी के दो प्रिय नौकर थे चिन्ता और बन्ता। इन्हीं दो से सबको काम पड़ता था। एक पंजाबी नाई था जिसका नाम मैं भूल गया हूँ। गुरुकुल की डाक शामपुर डाकखाने से आती थी।

डिंगा के एक भक्तराम जी भी कार्यालय के एक प्रमुख कायकर्ता थे। एक वार एक फॉरेस्ट रेंजर से इनकी हाथापाई हो गई थी। म० मुन्शीराम जी मुझको प्रायः विशेष पत्र व्यवहार के विषय में कार्यालय में बुला लिया करते थे। अंग्रेजी में विज्ञ होने के कारण भी और हिन्दी के मेरे अक्षर उनको अच्छे लगते थे इस लिए भी।

रामदेव जी अंग्रेजी में बहुत लिखते थे तो बीच बीच में जहाँ संस्कृत ग्रन्थों के प्रमाण आजाते थे, जगह खाली छोड़ रखते थे और फिर मुझे बुला ले जाते और खाली स्थानों में प्रमाण लिखवाते। मित्र होने का यह मुझे दण्ड था।

गुरुकुल में एक अंग्रेजी क्लब भी था जिसके प्रधान श्री रामदेव जी थे और अन्य अध्यापक लोग भी समय समय पर भिन्न २ विषय में बोला करते थे। कभी २ बाहर वाले भी बोला करते थे। एक वार बिजली के गिरने से गृहस्थियों के क्वार्टर में आग लग गई थी और पास ही स्टोर था, बड़ी हानि हुई थी। कोई खतरा होता था या आ पड़ता था तो यज्ञशाला की घण्टी द्वारा सबको सूचना दी जाती थी और सब पहुँच जाते थे।

उस समय चहुँ ओर घना जंगल ही जंगल था। हिंस्र पशुओं का साम्राज्य था। बिच्छुओं और सर्पों की भी बहुतायत थी। बिच्छू का विष गंगाजी के अतिशीत जल में हाथ रखने से कम हो जाता

था पर स्थान सूज जाता था। कई वार मैंने सांप और बिच्छू पकड़ कर बिच्छू द्वारा सांप को कटवाया, सांप भी बिच्छू के डंक से घबराता था। ब्रह्मचारियों को कनखल हरिद्वार नहीं जाने दिया जाता था, कभी २ ब्रह्मचारी गंगा जी के पार के किनारे किनारे जाकर चण्डी और अञ्जनी की पहाड़ी पर चढ़ कर कनखल और हरिद्वार के दृश्य देख आया करते थे।

ब्रह्मचारियों तथा कुलवासियों का स्वास्थ्य प्रायः अच्छा ही रहता था किन्तु गला फूलने की बीमारी ने तंग कर रक्खा था। पहिले पहिले मलेरिया भी तंग करता रहा। वैसे कोई विशेष बीमारी न थी। हाँ टाइफाइड का भी कभी २ जोर रहा करता था।

[४]

अब मैं संपर्क में आये हुये व्यक्तियों, पण्डितों और मास्टरों के स्वभाव के विषय में कुछ लिखता हूँ।

१–म० मुन्शीराम—काम के समय कड़े से कड़े फिर सबसे हेल मेल। जिस से बिगड़े फिर वह गुरुकुल में रह न सका।

२–म० खुशीराम—प्रायः अलग रहते थे।

३–ला० रामकृष्ण—मैंने इनको कभी हँसते नहीं देखा।

४–बा० नन्दलाल—अत्यन्त कठोर-प्रकृति। पर उत्तम प्रबन्धक।

५–मास्टर रामदेव—अपने लिखने पढ़ने से काम। मास्टरों से अध्यापकों से कम मिलते थे। वैसे इनके पास जाय तो हिल मिल जाते थे।

६–प्रो० बालकृष्ण—बड़े हँस-मुख व्यक्ति। सदा प्रसन्न।

७–प्रो० गोवर्द्धन—सज्जन पुरुष, किसी के लेन में न देन में।

८–प्रो० साठे—सौम्यमूर्ति।

९–प्रो० सियाराम—आध्यात्मिक पुरुष।

१०–श्री गंगादत्त शास्त्री—इन में बड़ा आकर्षण था, जो इन से एक वार मिला मुग्ध हो जाता था।

११–श्री गुरुवर काशीनाथ जी—सतयुग के पण्डित, आज कल ऐसे पुरुष कहाँ मिलते हैं।

१२–पं० विष्णुमित्र जी—वैसे हँसमुख पर कभी कभी साथियों से बुरी तरह बिगड़ जाते थे।

१३-बा० प्रतापसिंह—व्यवहार में दक्ष, अति सावधान। उलझनों में पड़ने वाले और उलझनों को सुलझाने वाले।

१४-शालिग्राम भण्डारी—सब को फटकारने वाले। जो इनकी बातें सुनकर मुस्कराए तो वे भी हँस पड़ते थे। इन से सब डरते थे ऐसे गुणी अपने काम में।

१५-श्री विश्वम्भरनाथ—रोब दोब के आदमी थे। डिक्टेटरों में मुन्शीराम जी की पॉकेट एडीशन, वैसे प्रसन्नमुख। कभी क्रोध चढ़े तो दुर्वासा के अवतार।

१६-पं० योगेश्वर जी—कट्टर समाजियों को ज्योतिष विद्या से आश्चर्य में डालने वाले। पण्डित, वैद्यराज ज्योतिषाचार्य तीनों के गुण इन में।

१७-डॉ० सुखदेव—बड़े ही सरल, बड़े ही कड़े, बड़े ही मिलनसार और बड़े के साथ बड़े और छोटे के साथ छोटे।

पं० भीमसेन जी—विनोदी साहित्यिक, रोगी होने के कारण कभी २ चिड़-चिड़े।

पं० पद्मसिंह जी—स्वभावविनोदी पर अभिमानियों के साथ अभिमानी।

म० तोताराम—पूरे कायस्थ, वैसे सज्जन, सब पर अपना रोब गांठने की धुन रहती थी।

डॉ० लक्ष्मीदत्त पहोसूवाले—कभी भी जाओ हँसते मिलेंगे।

डॉ० रामस्वरूप—(कुछ ही काल रहे) बड़े सज्जन, रोगियों की परिचर्या में सावधान काम से काम।

लब्बूराम नायड—गुरुकुल के परमभक्त और म० मुन्शीराम के प्रत्येक बात में सलाहकार, रुपया एकत्रित करने में एक ही आदमी।

ला० सोमनाथ—(रोपड़ लुधियाना के) एक वर्ष संरक्षक रहे, आप जैसे उत्साही आर्य कम मिलेंगे।

नन्दलाल व्यास—छात्रप्रिय अध्यापक।

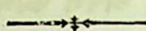
मेलाराम शास्त्री (जालन्धर)—चलते पण्डित।

रलाराम शास्त्री—गम्भीर पण्डित। इस प्रकार के अधिकारी, कर्मचारी पण्डित, प्रोफेसर, अध्यापक थे जिनके सम्पर्क में मुझे आना पड़ा था।

समाचार पत्र

प्रायः गुरुकुल की खबरें सद्धर्म-प्रचार में छपती थीं फिर सत्यवादी में छपने लगीं। सत्यवादी के सम्पादकों में श्री रुद्रदत्त जी सम्पदकाचार्य भी कुछ काल के लिये आगये थे! पं० पद्मसिंह शर्मा भी

रहे हो। और म० मुन्शीराम का प्रकाशन विभाग इतना जबरदस्त था कि भारतवर्ष भर के समस्त हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी पत्रों में बराबर खबरें छपती रहती थीं। रामदेव जब से आये तब से तो प्रकाशन की एक ही धूम थी। कभी २ इस कार्य में मेरी भी पकड़ हो जाती थी, उस समय कलम के बहादुरों में मेरी भी गिनती हो रही थी।



[५]

अब दो पण्डितों के विषय में परिचयात्मक लेख लिख कर यह लेखमाला समाप्त करता हूँ :—

श्री पं० गंगादत्त शास्त्री

बेलोन—(राजघाट-बुलन्दशहर) इनका जन्मस्थान। बड़े भाई पुजारी थे। पिता पं० हेमराज वैद्यक करते थे। वैद्यक शास्त्री जी की पैतृक-सम्पत्ति रही है। आपने ज्योतिष खुर्जे में पं० किशोरीलाल जी से पढ़ी। खुर्जे से भाग भाग कर घर आ जाते थे। एक दिन बड़े भाई ने डाँटा तो कहने लगे कि मुझे काशी भेज दो। भाई ने ज़रा ताने से कहा कि हाँ जरूर काशी भेजूँगा, वहाँ जा कर तू महाभाष्य पढ़ कर आयेगा। फिर क्या था गंगादत्त का स्वाभिमान भड़का। रात का समय देख कर पैदल ही मथुरा चल पड़े। वहाँ स्वा० दयानन्द के शिष्य पं० उदयशंकर रहते थे, उनसे अष्टाध्यायी पढ़ी। फिर कानपुर होकर पैदल ही पैदल काशी पहुँचे। वहाँ गुरुवर काशीनाथ जी से व्याकरण, वेदान्त, न्याय पढ़ा। श्री पं० हरनामदत्त जी भाष्याचार्य जी से समग्र महाभाष्य पढ़ा, काशिका का पारायण कर डाला।

इस प्रकार सात वर्ष तक घोर परिश्रम के पश्चात् गंगदत्त की गिनती व्याकरण के पंडितों में होने लगी—इनके भाई घर पर बीमार थे, बार बार बुलाया गया कि घर लौटो। ये यही लिखते रहे कि महाभाष्य समाप्त नहीं हुआ है। भाई का देहान्त हो गया। गंगादत्त क्रोधी जीव थे इसलिए 'रिसी' जी कहलाये (उधर की भाषा में रिस क्रोध को कहते हैं रिसी जी अर्थात् क्रोधी) जब काशी से लौटे तब 'रिसी' जी के "ऋषि" हो गये। फिर सब लोग इनको ऋषि जी नाम से ही पुकारते रहे। म० मुन्शीराम तथा स्वा० दर्शनानन्द जी की प्रेरणा से वैदिक आश्रम जालन्धर में संस्कृताध्यापक बन कर आये।

आश्रम जब गुजरानवाला में गया तब ये भी वहीं गये, फिर गुरुकुल में आये। पाँच वर्ष रहे। फिर दो एक वर्ष ऋषिकेश भोगपुर में रहे। फिर १९०७ में महाविद्यालय में आये। यहीं संन्यास ले कर स्वामी शुद्धबोध तीर्थ बने। यहीं इनका देहावसान हुआ। आर्य समाज में इस प्रकार एक लगन से संस्कृत व्याकरण तथा संस्कृत विद्या का प्रचार करने वाला अनथक पण्डित कोई नहीं हुआ। इनको जगन्नाथपुरी की शंकराचार्य की गद्दी मिल रही थी, क्योंकि वहाँ के बड़े शंकराचार्य श्री १००८ स्वा० मधुसूदन तीर्थ इन्हीं के कुनबे के बड़े ताऊ लगते थे। स्वामी शुद्धबोध जी ने स्पष्ट मना कर भेजा। ऐसे निःस्पृह थे।

पं० भीमसेन साहित्याचार्य (आगरा निवासी) पं० पद्मसिंह साहित्याचार्य, इन पंक्तियों का लेखक प्रारम्भ में व्याकरणादि के विषय में इन्हीं के शिष्य रहे। फिर अन्य विद्याएँ अन्यों से पढ़ीं। आर्यसमाज में जो थोड़ा बहुत संस्कृत का चमत्कार दिखलाई पड़ रहा है यह सब स्वा० शुद्धबोध जी के तप और स्वाध्याय का फल है। यह गुरुशिष्य-परम्परा अभी चल रही है।

स्वामी जी अपने विषय के निपुणतम प्राध्यापक महोपाध्याय थे। व्याकरण जैसे शुष्क विषय को भी शिष्यों के गले के नीचे सरलता से उतार देते थे। वैसे शरीर में पहलवान् थे। छात्र-वत्सल गुरु थे। ये दलबन्दी से सर्वथा पृथक् रहते थे। जहाँ मानसम्मान भंग की सम्भावना देखी कमण्डलु उठा कर चल देते थे। यदि पं० गंगादत्त काशी में ही रहते तो काशी के गिने हुए, माने हुए पण्डितों में होते पर आर्यसमाज के भाग्य खुलने थे।

स्वामी जी ने रुपये पैसे के लोभ से कभी वैद्यिक नहीं की, ये सनातनियों में होते या रहते तो ज्योतिष से बहुत धन कमाते और आर्यसमाज में भी रहते हुए वैद्यक करते तो धनी हो जाते, वैद्यक द्वारा निर्धनों को ही लाभ पहुँचाते रहे।

मद्रास में एक बार वहाँ परिया नामक अछूतों पर अत्याचार की पराकाष्ठा हुई थी तब आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब ने पण्डित जी तथा ला० शिवदयाल एम० ए० को स्थिति का अध्ययन करने के लिये मद्रास प्रांत में भेजा था। तब इन दोनों ने मद्रास त्रावनकोर, मलाबार तक यात्रा की थी। कुम्भघोण (दक्षिण की काशी) के पण्डितों से पं० जी का शास्त्रार्थ भी हुआ था पर हुआ था व्याकरण में।—

पं० जी जैसे पण्डितप्रवर विद्वानों के कारण ही आर्यसमाज का गौरव बढ़ा है, लोग माने या न मानें। लोग उनकी याद करें या न करें। वे तो अपना काम एकनिष्ठता से कर गये।

---

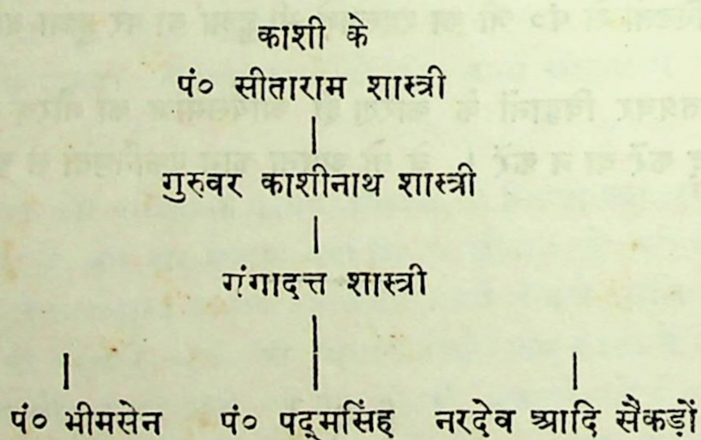
[६]

गुरुवर काशीनाथ जी

आप गुरु क्या थे गुरूणां गुरुः थे। आपका जन्म बलिया का, छाता नामक ग्राम का। आपके पिता नामी पण्डित थे अपने इलाके में। आपका व्याकरण तथा दर्शनशास्त्र का ज्ञान कुछ तो पैतृक है और उसकी पूर्णता तथा विकास काशी के क्या भारतवर्ष के प्रसिद्ध स्व० नैयायिक सीताराम शास्त्री द्रविड़ के चरणों में बैठकर हुआ। आप काशी में नगवा में रहते थे और अस्सीघाट पर मैथिलस्वामी की

पाठशाल में प्रधान पण्डित रहे, वर्षों तक । इनको १४ रु० मासिक मिलते थे । वहां से हम इनको कांगड़ी लिवा लाये । पहिले पहिले १००) मासिक भेंट मिलते रहे । फिर १२०) हो गये थे । कांगड़ी में १५ वर्ष रहे, महाविद्यालय में ६ वर्ष रहे, फिर काशी चले गये । इनकी इच्छा थी कि काशी में ही शरीर छूटे । इतना अधिक ध्यान रखते थे कि किसी कार्यवश घर गये तो दूसरे दिन ही लौट आते थे। यहां से—ज्वालापुर से जाकर ब्राह्म महाविद्यालय में (कलकत्ते के एक बड़े सेठ की पाठशाला) पढ़ाते रहे। महामना मालवीय जी की बड़ी इच्छा थी कि वे हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में पढ़ाएं। पर गुरुजी ने नहीं माना इसलिये कि विश्वविद्यालय काशी की पञ्चक्रोशी के मार्ग से परे रह जाता है। आप पुरानी काशी को ही काशी मानते थे । मणिकर्णिका घाट के आस पास ही रहना चाहते थे । आपका विद्यालय काशी विश्वनाथ के पास ही था । प्रतिदिन दर्शनार्थ जाते रहे । जब तक शरीर में शक्ति रही बराबर गंगाजी का स्नान करते रहे । मुझ पर बड़ा ही प्रेम करते रहे, बड़ी कृपा रही । सच पूछो तो अंग्रेजी शिक्षा-दिक्षा को छोड़ने के बाद मेरा उद्धार तो संस्कृत विद्या के गुरुओं ने ही किया । मनुष्य गुरुओं की कृपा से तर जाता है इसका अनुभव मुझे है, क्या नदिया, क्या कलकत्ता, क्या ग्वालियर, क्या काशी, जहाँ गया सद्गुरु ही सद्गुरु मिले ।

गुरूजी के बड़े पुत्र स्व० श्री हरिनाथ शास्त्री जी भी बड़े विद्वान थे । छोटे पुत्र रघुनाथशास्त्रीजी संस्कृत कॉलिज काशी में अध्यापक हैं। व्याकरण, वेदान्त (नव्य तथा प्राचीन) सहित्य के प्रकाण्ड पण्डित हैं । हममें बड़ी आस्था रखते हैं इतने बड़े पण्डित होकर भी । हमारी परम्परा इस प्रकार रही।



आगे फिर गुरुकुलों में परम्परा चली पर अब वह गुरुशिष्य-भाव कहां शेष है—

"सर्वं कालवशादगात् स्मृतिपथं, कालाय तस्मै नमः" (भर्तृहरि)

आर्य जगत् में संस्कृत विद्या जीवित जागृत रहे जिससे समाज का गौरव चिरस्थायी हो यही अभिलाषा करता हुआ इस लेखमाला को समाप्त करता हूँ। जैसा याद आया, लिखता गया, न क्रम देखा न कुछ । आशा है आर्यों को यह लेखमाला रुचेगी ।

परिशिष्ट

पूर्व आठ लेखों के लिखने के पश्चात् कई बातों का स्मरण हो आया जो पूर्व लेखों में रह गयीं।

गुरुकुल के प्रारम्भिक ५-६ वर्षों में निम्नलिखित महानुभाव भी गुरुकुल में कार्य कर गये थे।

श्री छेदीलाल बार-एट-ला

(जबलपुर सी० पी०) केवल ४-५ मास ही रहे होंगे। आप सी० पी० (मध्यप्रदेश) प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के प्रधान थे।

श्री बा० घनश्यामसिंह गुप्त

ये भी ६-७ मास ही रहे होंगे। अब आप सी० पी० धारासभा के स्पीकर हैं। कई वर्ष तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान भी रह चुके हैं।

श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

ये हैदराबाद राज्य में नामी चित्रकार थे। भाग्य ने ऐसा पलटा दिया कि चित्रकार से एकदम वैदिक अनुसन्धानक बन गये। गुरुकुल में आने से इनकी चित्तवृत्ति ने पलटा खाया। अब तब से बराबर वैदिक अनुसन्धान कार्य में सर्वात्मना संलग्न हैं। आपका 'वैदिकधर्म' प्रसिद्ध है ही। आपके पुरुषार्थ (मरहठी) मासिक पत्र ने महाराष्ट्र में हलचच मचा रक्खी है। आपने वैदिक ग्रन्थों का शुद्ध मुद्रण आदि अनेक कार्य दक्षता से चलाये। पचासों ग्रन्थों का हिन्दी तथा मरहठी अनुवाद किया। पहिले आपका स्थान औंध (सतारा) दक्षिण था फिर पिछले सतारा के उपद्रव के पश्चात् अब आप (सूरत) गुजरात में आ गये हैं—ऐसी धुन के महानुभाव कब मिलेंगे। बम्बई हिन्दी साहित्य सम्मेलन में आप राष्ट्रभाषा परिषद् के सभापति रहे और आपका भाषण चिरस्मरणीय हो गया है। आपके सुपुत्र भी संस्कारानुरूप प्रसिद्ध चित्रकार हैं। विलायत भी हो आये हैं।

आपके विचारों तथा कार्य-प्रणाली से कोई सहमत हो या न हो किन्तु दक्षिण में आर्यसमाज की धाक बैठने में बड़ा काम किया है। आप इतने वृद्ध होते हुए भी तरुण की तरह काम करते रहते हैं।

मैं गुरुकुल में कैसे आया

मैं १९०४ से कलकत्ते में ही स्व० श्री आचार्य सत्यव्रत सामश्रमी, फेलो एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल तथा यूनिवर्सिटी लेक्चरार ऑफ वेदाज की सेवा में था। १९०६ के प्रारम्भ में श्री पं० गंगादत्त-शास्त्री जी का तार गया कि "शीघ्र आओ, आवश्यक कार्य है।" मैं कांगड़ी आया, पूछा कि क्यों बुलाया है तब शास्त्री जी ने कहा कि अब यहीं रह जाओ, निरुक्तादि पढ़ाया करो। मैंने मना कर

दिया और कहा कि अभी मुझे कलकत्ते में ही रहना चाहिये। ६-७ दिन तक यही परस्पर विचार होता रहा, इतने में जालन्धर का साप्ताहिक सद्धर्म-प्रचारक का नया अंक आगया। उसमें क्या देखता हूँ कि यह छपा है कि नरदेवशास्त्री कलकत्ते से आ गये हैं और निरुक्त पढ़ाने लग गये हैं। मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। मैं म० मुन्शीरामजी के पास गया और पूछा कि यह समाचार कैसे छपा, मैंने तो यहाँ गुरुकुल में रहने की स्वीकृति नहीं दी थी। उत्तर मिला तुम्हारे गुरूजी ने ही कहा था तब मैंने छाप दिया। तब क्या हो सकता था। गुरूजी ने गला घोंट ही दिया, मुझे रहना ही पड़ा।

एक बात और कि मैं निरुक्त में कहाँ तक प्रवीण हो गया हूँ—पढ़ा सकता हूँ कि नहीं, इस बात की जाँच के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक स्व० पण्डित पूर्णानन्द जी को मेरे पीछे लगा दिया। वे मुझसे निरुक्त पढ़ते रहे। मैंने प्रतिदिन दो-दो, तीन-तीन पाठ कराते हुए बीस दिन में ही निरुक्त बँचवा दिया। पं० पूर्णानन्दजी ने रिपोर्ट दी कि नरदेवशास्त्री जी को तो निरुक्त कण्ठ पड़ा है, खूब बँचवाते हैं।

मैं यही नहीं कह सकता हूँ कि इस प्रकार की जाँच के लिए स्व० पण्डित जी को क्यों मेरे पीछे डाला गया और किसकी प्रेरणा चली। मैं इनकी परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया, वैसे तो मैं पास था ही। मेरे पास बड़े गुरू सामश्रमीजी का प्रमाण पत्र था।

महात्मा मुन्शीरामजी ने मुझसे कह रक्खा था कि कोई बात गु० कु० के हित की हो तो कहा करो। इस आज्ञा के अनुसार जब कभी हम कुछ कहने जाते तो वे हँसकर कह देते थे कि इस बात को तो मैंने दो वर्ष पूर्व सोचा था—इस बात को तो मैं जानता हूँ, ठीक कर रहा हूँ—जब हमने यह ढंग देखा तो फिर बार-बार उनको सुझाव देना छोड़ दिया।

कोई लिखे तो उन दिनों की बातों को कहाँ तक लिखे। बहुतसी बातें विस्मृत हैं, बहुतसी अर्द्ध-विस्मृत हैं। चाहे जो हो—एक बात सत्य है—वह यह कि गया समय फिर हाथ आता नहीं। काल भगवान् जो जो करावे, जो जो दृश्य दिखलावे सब कुछ करना और देखना पड़ेगा।

कालाय तस्मै: नमः।



स्व० पं० विश्वम्भरनाथ जी

(अर्जुन—२५ अप्रैल १९४९ ई०)

अबकी बार कांगड़ी गुरुकुल के महोत्सव पर कोई बात खटकने वाली थी तो वह स्वर्गीय पण्डित विश्वम्भरनाथ जी के अभाव की थी। मैं उत्सव में प्रायः दो तीन बार गया, व्यासपीठ पर कुछ काल बैठा भी रहा, किन्तु उनकी वह सौम्यमूर्ति देखने को नहीं मिली। मिलती भी कैसे क्यों कि काल कराल उनको महोत्सव से १५ दिन पूर्व ही उठा ले गया था। इतना अच्छा गुरुकुल का उत्सव हो गया पर मेरा तो जी ही नहीं लगा।

मैं विश्वम्भरनाथ जी को सन् १८९४ से ही जानता था। उसी वर्ष हमारे स्वर्गीय पिता रावसाहब श्रीनिवासराव जी मुझे साथ लेकर बच्छोवाली आर्यसमाज के महोत्सव पर गये थे और उन्होंने मुझे वहाँ के आर्य विद्यार्थी आश्रम में प्रविष्ट कराया था। हम इस बोर्डिङ्ग में रहते थे और पढ़ने जाते थे मास्टर दुर्गाप्रसाद जी के दयानन्द हाई स्कूल में।

श्री विश्वम्भरनाथ जी उस समय इसी बोर्डिङ्ग में थे और वहीं हमारा और इनका परिचय हो गया था। उस समय के वहाँ के छात्रों में जियालाल जी (जो जस्टिस जियालाल के नाम से प्रसिद्ध हो गये), श्री नवनिधिराय (जो फिर डॉ० धर्मवीर बने), श्री डॉ० गणेशदत्त जी, कर्मचन्द विद्यार्थी आदि आदि पचासों विद्यार्थी थे। बड़े छात्र बोर्डिङ्ग के आउट-हाऊसेज (बाहर के छोटे २ कमरों) में रहते थे। और हम छोटे २ छात्र मुख्य कोठी में ही रहते थे।

हमारे सुपरिंटेण्डेण्ट थे स्वर्गीय मास्टर तोलाराम जी जो कि आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के स्तम्भ थे। इसी बोर्डिङ्ग में हमारा विश्वम्भरनाथ जी से स्नेह सम्बन्ध बढ़ा और उनके अन्तिम क्षण तक वह सम्बन्ध स्थिर रहा। देव (विश्वम्भरनाथ जी के ज्येष्ठ पुत्र जो शिमला में एडवोकेट हैं) का पत्र आया था जिसमें लिखा था कि मृत्यु के दिन भी वे आपको (अर्थात् मुझे) याद करते रहे और सोचते रहे कि दो संस्थाओं को कैसे मिलाया जाय।

दो संस्थाओं से मतलब गुरुकुल और महाविद्यालय से है। मुझे यह भी पता लग गया था कि वे मुझे नई दिल्ली बुलाने की चिन्ता में थे और एक स्नातक द्वारा श्री विश्वनाथ जी विद्यालंकार सहायक मुख्याधिष्ठाता से पुछवाया भी था कि शास्त्री जी ज्वालापुर में हैं कि नहीं। इधर विश्वनाथ जी ने लिख भी दिया था कि मैं यहीं हूँ किन्तु पत्र पहुँचने के दिन ही वे चल दिये थे!!!

तारीख ३ अप्रैल प्रातः ९ अथवा १० बजने का समय था कि श्री प्रियव्रत जी आचार्य गुरुकुल कांगड़ी मेरे पास आए और उन्होंने मुझे दुःखद समाचार सुनाया। मेरे मन की जो दशा हुई उसको मेरे

अतिरिक्त कौन जान सकता है। मुझे न तो योगी का पता ज्ञात था और न ही देव का शिमले का पता। मैंने तुरन्त हाईकोर्ट के पते पर देव को और महाशय कृष्ण जी को नई दिल्ली के पते पर समवेदना के पत्र लिखे। इस प्रकार मेरे एक पुराने साथी का सदैव के लिये विछोह हुआ। मेरे ऐसे बड़े बन्धु का वियोग हुआ जिनके पृथक् पृथक् कार्यक्षेत्र थे किन्तु जीवन भर में एकसा ही सम्बन्ध रहा।

मैं आर्य विद्यार्थी आश्रम में चार वर्ष रहा। हम लोग बोर्डिङ्ग से लाइन बांध कर स्कूल में जाया करते थे और उधर से डी० ए० वी० कॉलेज के बोर्डिङ्ग के छात्र लम्बी कतार बांध कर डी० ए० वी० स्कूल में जाया करते थे। दोनों की कतारें कभी २ रास्ते में ही मिल जाया करती थीं, तब मैं विश्वम्भर नाथ जी से पूछता था कि दो पृथक् बोर्डिंग, दो पृथक् स्कूल, दो पृथक् समाजें, दो पृथक् प्रतिनिधि सभाएँ—ये क्यों? तब ये कभी २ पुरानी बातें सुना डालते थे।

एक बार मैं इनके साथ लुधियाना आर्यसमाज के महोत्सव पर गया था। तब पिता जी भी वहाँ आये थे। महात्मा मुन्शीराम जी तथा लेखराम आर्य मुसाफिर के व्याख्यानों ने लुधियाने में एक विचित्र रौनक कर रखी थी। अस्तु यह बात बीच में ही याद आ गई। हाँ तो हम जब स्कूल से वापस आते थे तब सायंकाल के समय दोनों बोर्डिङ्ग से रावी के किनारे तक टहलने जाते थे, कभी दौड़ भी लगाते थे। यह क्रम प्रायः नित्य का था। रावी हमारे बोर्डिङ्ग से २॥ मील के अन्तर पर थी।

सारांश जब बोर्डिङ्ग से बाहर टहलने, सैर-सपाटा करने के लिये निकलते थे तब हम दोनों प्रायः साथ ही रहते थे। उनको पैदल सैर-सपाटे का बड़ा अभ्यास था। यह आदत अन्तिम दिन तक बनी रही। जब किसी काम के निमित्त कांगड़ी आते थे तो प्रातःकाल ही उठ कर अथवा कभी कभी सायंकाल के समय मेरे पास अवश्य आते और विवश होकर मुझे इनके साथ जाना पड़ता और इच्छा न रहते भी कभी चार चार मील, कभी आठ मील की सैर करनी पड़ती।

विश्वम्भरनाथ जी का नम्बर खाने में प्रथम था, जब खाने बैठते तो रसोइया हार खा जाता रहा। एक बार सब छात्र शहादरे की ओर घूमने गये। प्रातः गये सो सायंकाल ४॥ बजे बोर्डिङ्ग में आये। मैं और विश्वम्भर जी सबसे पहिले बोर्डिङ्ग में पहुँचे और हमारा रसोइया प्रतीक्षा में बैठा ही था। हमारा लंगर १५ छात्रों का था। मुझे स्मरण है कि हम दोनों ने मिल कर ५५-५६ रोटियां खाई थीं। रसोइयां झींकता ही रह गया था।

एक बार गर्मियों की छुट्टियों में हम बोर्डिंग में ही रहे। विश्वम्भरनाथ जी भी रहे। सारे बोर्डिंग में २० छात्रों से अधिक न होंगे। लड़कों को सूझा कि आज खीर बनाई जाय। खीर बन गई और लड़के तृप्त होकर सोचने लगे कि पचाने के लिये कहीं बाहर जाया जाय। सात-आठ छात्र बाहर निकले, थोड़ी दूर पर बाहर एक अमरूदों का बाग था, लड़कों ने अमरूदों पर हाथ मारना प्रारम्भ किया। रखवाला एक पन्द्रह वर्ष का मुसलमान का बालक था। वह मना करता रहा पर लड़के कब सुनने वाले थे। हाथ मारते गये। रखवाला रोता-चिल्लाता पास के बागवालों के पास गया और हम क्या देख रहे हैं कि १०-१५ मुसलमान लट्ठ हाथ में लिये दौड़ते हुए आ रहे हैं। मैंने कहा विश्वम्भरनाथ

जी इन अमरूद तोड़ने वाले लड़कों के साथ हमारी भी मरम्मत होगी, क्या किया जाय। हाथापाई होने लगी। विश्वम्भरनाथ जी ने एक लड़के को जोर से चिल्ला कर कहा कि बोर्डिंग में दौड़ कर जाओ और एक दम घण्टी बजा कर सौ डेढ़-सौ लड़को को खबर दो, अभी इनका इलाज किया जायगा। बोर्डिङ्ग में कितने लड़के हैं मैं जानता था, मुझे हँसी भी आ रही थी पर हँसने का समय नहीं था। बोर्डिंग की घण्टी बजी, शेष लड़के दौड़े दौड़े आये और कहने लगे घबराओ नहीं, तब मुसलमान रखवालादार होश में आये और हम भयंकर मार-पीट से बचे। फिर सुलह हो गई और रखवालादार मुसलमानों ने वैसे ही हमको बीस तीस अमरूद दिये। हम लोग खिलखिलाते हुए आगे चल पड़े।

एक वार डी० ए० वी० बोर्डिंग हाऊस के सैकड़ों लड़के झगड़ा करने के लिये आर्य विद्यार्थी आश्रम पर चढ़ आये। इधर भी डेढ़ सौ से कम विद्यार्थी नहीं थे। उस समय कुछ दिनों के लिये स्वर्गीय भगत रेमलदास जी हमारे सुपरिण्टेण्डेण्ट बन कर आये थे। उनके और स्वर्गीय पैरामल धवन एक्सट्रा एसिस्टेन्ट कमिश्नर के समझाने से मार पीट रुक गई। विश्वम्भरनाथ जी वैसे गम्भीर भी परले सिरे के थे पर कभी २ लट्ठ पर भी उतर आते थे। कबड्डी में (लम्बी और बन्द दोनों) में जिस पक्ष में खेलते थे तो दूसरे पक्ष वालों की मुसीबत आ जाती थी। ऐसी जोर की लात मारते थे या ऐसे जोर से पकड़ कर घसीटते थे कि पूछिये नहीं।

स्वर्गीय चिरंजीवलाल भारद्वाज भी श्रीगोविंदपुर के रहने वाले थे। इन्होंने आर्य बिरादरी चलाई थी। इस सभा का नाम जनता में सिरमुन्नी पार्टी प्रसिद्ध था। विश्वम्भरनाथ जी इस पार्टी के भी अग्रणी थे।

वैसे विश्वम्भरनाथ जी बोर्डिंग तथा स्कूल के प्रिय छात्रों में थे। इनका हमारा साथ १८९८ में छूटा। हमारा तो यू० पी० में ही, विशेषतः हरद्वार अथवा गुरुकुल या ज्वालापुर में मिलना होता रहा।

वैसे विश्वम्भरनाथ जी छात्रदशा में मध्यम वर्ग के छात्र थे, पर किताब के इतने कीड़े थे कि परीक्षा में कभी अनुत्तीर्ण नहीं हुए और एक बात विशेष यह थी की उन्होंने जिस क्षेत्र में हाथ डाला उसमें सदा सिद्धहस्त ही रहे। क्या आर्यप्रतिनिधि सभा, क्या गुरुकुल, क्या स्कूल जिसमें भी हाथ डाला, सफल ही रहे। इनको चुपचाप ठोस कार्य करने में ही आनन्द आता रहा। नाम की लालसा तनिक भी नहीं थी, किन्तु ऐसे पक्के निश्चयी थे कि सभा में अथवा गुरुकुल में वे ही वे थे और उनकी इच्छा के बिना पत्ता नहीं हिलता था। महाशय कृष्ण के ये दक्षिण भुजा थे। गुरुकुल तथा प्रतिनिधि सभा के प्राण थे, आत्मा थे, स्वभाव से निरभिमान, मिलनसार थे, किन्तु अपनी बात के धनी थे। यू० पी० में आने के पश्चात् देहरादून में मोहिनी भवन में १॥-२ मास तक साथ ही रहे और मैं भी इनके कुटुम्ब का एक प्राणी बन गया था।

गुरुकुल कांगड़ी के ज्वालापुर की भूमि में महाविद्यालय के पास ही आने के पश्चात् तो प्रायः आपका यही यत्न रहा कि दोनों संस्थाएँ एक हो जाएँ। वे स्वर्गीय स्वामी शुद्धबोध तीर्थ जी के पास

आकर घण्टों बातचीत करते रहे। मुझसे तो बातें होती ही रहतीं थीं। यहाँ के अधिकारीवर्ग से भी मिलते रहते थे। निःशुल्क, सशुल्क का पचड़ा होने के कारण बात नहीं बन सकती थी। कुछ इधर के और कुछ उधर के महारथियों के मानापमान का प्रश्न भी खड़ा हो जाता रहा।

परन्तु उनकी अन्तिम समय तक यही प्रबल इच्छा बनी रही कि अब दोनों ओर के वे पुराने महारथी नहीं रहे, वे पुरानी बातें नहीं रहीं, और दोनों गुरुकुलों के खेत तक आपस में सट गये हैं तब पृथक होने में क्या लाभ है। वह इस इच्छा को लेकर ही चल बसे, यह उनकी सदिच्छा कभी पूरी हो सकेगी कि नहीं, कौन कह सकता है। पर जब भारत ही बदल रहा है तब इन दोनों संस्थाओं में इतनी ऊँची भावना क्यों नहीं जागृत हो सकेगी, यह बात समझना कठिन है।

इस विषय में अधिक लिखने का मेरा अधिकार नहीं है। क्यों कि महाविद्यालय में मैं जल-कमलवत् रहता हूँ और आर्यजगत् के सभी गुरुकुल मेरे ही हैं, ऐसी भावना बना चुका हूँ। आखिर गुरुकुल कांगड़ी पर हमारा भी कुछ अधिकार है। श्री विश्वम्भरनाथ जी के विषय में और बहुत कुछ लिखा जा सकता है किन्तु आज इतना ही पर्याप्त है।

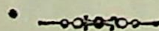
यह उनके बड़े पुत्र का पत्र है

नं० ११ झाँबरी मैनशन्स
करोल बाग
(नई दिल्ली)
५-४-४६

आदरणीय आचाय जी, चरणस्पर्श !

दुःख है पूज्य पिता जी (जो आपके प्रिय बालसखा तथा परम मित्र थे) आज १। बजे हम सबको छोड़ कर चल दिये, पहिली और दूसरी अप्रैल के बीच की रात्रि में, हृदयक्रिया बन्द होने से। मृत्यु के पहिले दिन भी वे आपको याद करते रहे। वे कांगड़ी के उत्सव पर आने की सोच रहे थे। यदि आते तो महाविद्यालय में आपसे तो अवश्य मिलते। पर ईश्वर की इच्छा और ही थी। अब पिताजी चल बसे तो आप पूर्ववत् हम बच्चों का ध्यान रखते रहियेगा।

आपका कृपापात्र
देवेन्द्र



लोकप्रिय शासन में टिहरी की उन्नति

(हिन्दुस्थान, ६ जनवरी सन १९४९ ई०)

टिहरी में विधान परिषद की स्थापना हो ही गई। हम लोगों के पास निमन्त्रण पहुँच ही गये थे और टिहरी के भयंकर शीत की बात को सुनकर तो जी वहाँ जाने से घबराता था पर टिहरी जैसे छोटे राज्य में भी भारत संघ जैसी बड़ी विधानपरिषद का अनुकरण हो रहा है यह हमारे लिए एक कतूहल की बात थी इसलिए हम लोग सीधे वहीं पहुँचे।

जाते ही हमने देखा कि लोकपरिषद के लोग दुन्द मचा रहे हैं। "राजा को रहने दो", "उत्तरदायी शासन लेके छोड़ेंगे" इत्यादि नारे लग रहे थे। गत चुनाव में २५ सदस्य प्रजामंडल (कांग्रेस) के आ गये थे। २ स्वतन्त्र थे, ४ लोक परिषद के थे, जो यह चाहते हैं कि राजा सिर पर बना रहे।

महाराज ने अपने पक्ष के सदस्य लाने की चेष्टा की। ख-(खसिया क्षत्रिय), ब-(ब्राह्मण) प्रश्न खड़ा किया गया। पर हो गया वही "जो राम रचि राखा" अर्थात् कांग्रेस की विजय हुई। ता० २७ दिसम्बर १९४८ को यह दिन नियत हुआ था, तदनुसार विधान परिषद का उद्घाटन हुआ!

टिहरी नरेश का भाषण सुनने योग्य था। बाहर के अतिथियों का ध्यान रखकर वह हिन्दी में ही बोले, नहीं तो भाषण गढ़वाली भाषा में होता और बाहर के अतिथि देखते ही रह जाते। महाराज ने कहा हमारा यह वंशपरम्परागत राज्य १३०० वर्ष का पुराना है। मैं तो पहिले ही भारतीय संघ में सम्मिलित हो गया था और अन्तःकालीन सरकार की स्थापना हो गई थी। छह महीने हो गये थे इसलिए चुनाव आवश्यक था और चुनाव हो गया। मैंने किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया। हां, जब जब मुझसे पूछा जाता था तब तब मैं अपनी सम्मति स्पष्ट देता रहा। यह जो चुनाव हुआ है इसमें चुनाव के विषय में २० स्थानों से शिकायतें आई हैं। इसका निर्णय भी अनुसंधान कमेटी ही करेगी। अब नई विधान परिषद का कार्य है कि यह ऐसा विधान बनाये, ऐसा रुख पकड़े, जिससे प्रजा की बात रहे और टिहरी की परम्परा का भी ध्यान रहे।

पश्चात् श्री मोहनलाल गौतम (प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के मन्त्री) का भाषण हुआ। जो कि 'रामाय स्वस्ति रावणाय स्वस्ति' के ढंग का था। एक प्रान्तीय मन्त्री को जैसा बोलना चाहिये था, वैसा न बोले अथवा न बोल सके।

इसके पश्चात् महाराज चले गये, फिर सभापति के आसन को श्री ज्योतिप्रसाद (चीफ मिनिस्टर) ने ग्रहण किया। स्व० श्री देवसुमन को श्रद्धांजलि, शहीदों को श्रद्धांजलि, सकलाना के दो स्वर्गीय वीर श्री नागेन्द्रदत्त तथा श्री मौलीराम को श्रद्धांजलि होकर विधान परिषद के सभापति का सर्वसम्मति से चुनाव हुआ और श्री पुरुषोत्तम रतूड़ी सभापति चुने गये।

दूसरे दिन प्रातःकाल ८॥ बजे कांग्रेस सेवादल का रजत जयन्ती दिवस था, इसलिए यहाँ की शाखा ने भी मनाया। इस अवसर पर हमने तिरंगे झण्डे तथा प्रजातंत्र का महत्त्व समझाया। जनता अच्छी संख्या में उपस्थित थी। हमारी सभा के सामने "राजा को रहने दो" वालों का जमघट था, पर हमारी सभा के होने तक वे शान्त रहे और फिर अपनी सभा की।

दस मास की प्रगति

लगभग १० बजे प्रेस कांफ्रेंस हुई। उसमें अन्य अनेक विशिष्ट व्यक्ति भी आमन्त्रित थे। लगभग डेढ घण्टे तक यह रही। प्रश्नोत्तर भी हुए। दस मास में स्टेट में क्या क्या हुआ और कैसी प्रगति हुई इसकी रिपोर्ट सुनने को मिली। पहिले शराब की ८५ भट्टियां थीं, अब केवल एक भट्ठी है। वहां से ४ अन्य स्थानों को शराब भेजी जाती है। पहिले लगभग सौ स्कूल थे अब ४०० हो गये हैं। इनमें ४-५ मिडिल स्कूल हैं, एक कालेज है, दो हाई स्कूल हैं। लोग अपने खर्च से स्कूल के मकान खड़े कर रहे हैं, पर अध्यापकों की कमी है। मोटर सड़कों में वृद्धि हो रही है। टिहरी से कई और सड़कें बन रही हैं, कई समाप्त हो चुकी हैं, पर बेगार-प्रथा के सर्वथा नष्ट होने से सड़कों के बनवाने पर बड़ा खर्च पड़ रहा है। पिछले वर्ष जंगलात की लकड़ी के ठेके कम चढ़े थे, क्योंकि स्टेट में गड़बड़ थी। इस वर्ष ३० लाख के ठेके चढ़ चुके हैं। जहाँ जहाँ संभव हो सका है छोटी छोटी नहरों को निकालने का प्रबन्ध हो गया है। जिन ग्रामों में जल की कठिनाई है वहाँ छोटी छोटी बावड़ियों का प्रबन्ध कर रहे हैं। कहीं कहीं बड़े बड़े तालाब बंधवाने का प्रबन्ध हो रहा है। यहाँ इस स्टेट में अन्न की कमी रहेगी ही। अन्न के लिये बाहर के प्रदेशों पर निर्भर रहना पड़ेगा। तथापि कहीं कहीं जंगल तोड़कर जमीन बढ़ाने का प्रबन्ध सोचा जा रहा है। जंगलात में प्रजा को अनेक सुभीते मिले हैं।

एक जाति ऐसी है जिनकी लड़कियाँ बाहर जाती हैं, वेश्यावृत्ति करती हैं। इस प्रथा को बन्द किया जा रहा है। उनको शिक्षा-दीक्षा देकर समाज में ऊँचा स्थान दिलाने का प्रबन्ध होगा। स्टेट ने एक भूगर्भविद्या-विशारद रख छोड़ा है जो जाँच कर रहा है कि टिहरी की भूमि में क्या क्या खनिज पदार्थ मिल सकते हैं। इस प्रकार विवरण बतलाया गया। पर यह देखकर दुःख हुआ कि (ख-ब) का प्रश्न अब भी है और बेसमझ लोग उसमें उलझ रहे हैं। अन्त में यह राज्य संयुक्तप्रान्त में विलीन होगा ही, पर वर्तमान मन्त्रिमण्डल चाहता है कि अभी ४-५ वर्ष इसी प्रकार पृथक् रहकर स्टेट के लोगों की मनोवृत्ति ऐसी बना ली जाय। स्टेट के लोगों को जमीन का नजराना भविष्य में नहीं देना पड़ेगा। मूल्य पर जमीन मिला करेगी। यहाँ की वर्षा बरसकर नीचे ही जाती है, यहाँ का जंगल नीचे देश के लोगों के ही काम आता है। यहाँ की जड़ी बूटी नीचे ही जाती है, यहाँ के नदी-नाले नीचे के देश को ही समृद्ध करते हैं। यहाँ की विद्या बुद्धि से अन्यों को ही लाभ होता है, यहाँ की वीरता से अन्यों को ही लाभ पहुँच रहा है। इत्यादि सोचकर अब संभवतः 'टिहरी गढ़वाल-टिहरी गढ़वालियों के लिये' इस दृष्टि से शासन होगा। पर यह कबतक चलेगा ? स्वतन्त्र इकाई कबतक रहेगी ? अन्त में यह स्टेट संयुक्तप्रान्त में विलीन होगी। अच्छा है कुछ काल स्टेट का मन्त्रिमण्डल स्वतन्त्र रहकर भी देख ले।

महाराज का स्वप्न तो पूरा नहीं उतरेगा। लोक परिषद में हो हल्ला तो बहुत पर प्राण कम। मन्त्रिमण्डल उनके हो हल्ले की ओर ध्यान न देकर हाथी की तरह चुपचाप गम्भीरता से आगे बढ़ रहा है यह सन्तोष की बात है। मन्त्रिमण्डल में दृढ़ एकता है यह भी प्रसन्नता की बात है और आशा है भविष्य में यह दृढ़ता स्थिर रहेगी। संयुक्तप्रान्त की सरकार की ओर से जो चीफ मिनिस्टर हैं श्री ज्योतिप्रसाद जी, उन्होंने अबतक बड़ी बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता से मन्त्रिमण्डल का साथ दिया।

टिहरी की प्रजा भोली भाली है, अशिक्षित है, अबतक संसार से पृथक् ही रही है, हिमालय की गोद में एक ओर पड़ी रही है। जब यह बाह्य संपर्क में आयगी, प्रजा शिक्षित होगी, प्रजातन्त्र की उपयोगिता को पूर्णरूप में समझेगी तब भव्य भारत में इस छोटी किन्तु विस्तार में ४५०० वर्गमील वाली रियासत का भी महत्वपूर्ण भाग होगा इसमें सन्देह नहीं।❀

श्री विद्याधरशास्त्री का पत्र

॥ श्रीहरिः ॥

बीकानेर
८-१-४६

श्रीमत्सु परमान्येषु प्रणामाः
क्षन्तव्योऽपि श्रोतव्यः।

अत्र कुशलं तत्रास्तु। वर्षों के बाद सेवा में इस पत्र को भेज रहा हूँ। अभी कल टिहरी के विषय में आपके वक्तव्य को पढ़ा था। क्षमा चाहता हुआ सबसे पहिले मैं यह स्पष्ट करदूँ कि राज्यों के विषय में आपकी नीति से मेरी नीति में भेद है और आशा करता हूँ कि आप भी लाखों की जीविका और करोड़ों की सुव्यवस्था के लिये सत्य के नाम पर साहस के साथ हमारी रक्षा के लिये कुछ प्रकाशित भी अवश्य करेंगे।

आज रियासतों के रहने का कोई साधन नहीं है, पर फिर भी १०-१५ रियासतें अब भी भारत में हैं। आपको यह मालूम होगा कि प्रत्येक राज्य के राजाओं पर आपके अनुसार हजारों कुटुम्बों के पालन-पोषण का भार रहता है। राजाओं के द्वारा स्थापित अनेक धार्मिक मन्दिर-क्षेत्र और तीर्थ-प्रबन्ध भी हैं। प्रत्येक राज्य में विभिन्न विभागों में हजारों नौकर रहते हैं।

राज्यों के टूटने पर इनकी जो दुर्गति होती है वह अवर्णनीय है। आप अलवर पधारें, भरतपुर जावें या किसी विन्ध्यप्रदेश की रियासत में, सर्वत्र हजारों नौकर विभागों के टूटने पर बेकार हो गये। हजारों राज्याश्रित कुटुम्बों के रोटी पानी का कोई ढंग नहीं रहा। जो शहर आनन्द से मस्त थे वे राजधानी के टूटने पर रघुवंश की अयोध्या के समान हो गये। राज्यों में जो प्राचीन समय से धार्मिक-परम्पराएँ

❀टिहरी में २७ दिसम्बर १६४८ ई० को नवनिर्मित विधान-परिषद का उद्घाटन हुआ। श्री नरदेवशास्त्री ने उसका विवरण देते हुए टिहरी के जो जो संस्मरण लिखे हैं उनसे वहाँ हुई उन्नति तथा वहाँ की स्थिति जानने में मदद मिलेगी, ऐसी आशा है।

चली आती थीं उनके टूटने पर वहाँ धार्मिक दशहरे आदि के जुलूस भी निकलने बन्द हो गये। संस्कृत के पण्डितों की दुर्गति हुई, संस्कृत पाठशालाएँ बन्द हुईं, यह सब कुछ हुआ पर आप लोग इससे व्यथित न होकर प्रसन्न हुए। कारण एकमात्र कारण यहाँ के पिछले दिनों के प्रचार ने राजा नाम की वस्तु को एक भयंकर भूत सिद्ध कर दिया और उसको हटाने के नाम पर चाहे कुछ भी आफत क्यों न आये वह सह्य है पर राजधानी नहीं रहनी चाहिये।

हमारे बीकानेर के प्रश्न को लीजिये। यह रेगिस्तान है, आये दूसरे साल दुर्भिक्ष पड़ते हैं। बीकानेर राजधानी के न होने पर यहाँ का यह नगर किसी काम का नहीं रहेगा। न कोई व्यापार है न कोई यातायात का केन्द्र है और न कोई तीथ है। राजधानी के अनेक डिपार्टमेन्ट इसके टूटने पर हजारों बेकार भी होंगे।

भूमि २३ हजार वर्गमील। यहाँ ३ करोड़ की आमदनी है, १३ लाख प्राणी हैं, पूरा प्रजा को शासन का अधिकार दिया जा रहा है पर फिर भी इसको तोड़ा जा रहा है। बे-मतलब के ब्लेक मार्केटिंग और अव्यवस्था के सहचर आजकल २-३ स्वार्थी कांग्रेस के लीडर मिनिस्टर बनकर जैसी धांधली और जगह करते हैं वैसी ही यहाँ भी करना चाहते हैं।

जिन राज्यों में पिछले ५०० वर्षों से एक गौ के रक्त का भी पात नहीं हुआ और जिनके राज्य में आर्य संस्कृति आनन्द से पनपती रही आज हठात् उनको Secular जिसका अनुवाद भी अध्यात्मिक राज्य छपा है, उस राज्य के रूप में परिणत किया जा रहा है।

प्रत्येक नवनिर्मित संघ में अव्यवस्था है, नये बनाये जा रहे हैं। जब जनता में सब अधिकार हैं और जब जनता जागरुक है तो उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई काम क्यों किया जाता है। जिस दिन वह चाहेगी अपने आप मर्ज हो जायगी। डरा-धमका कर उसको भयभीत क्यों किया जाता है। आप कभी पधारकर यहाँ की जन-भावना को देखें।

समयानुकूल सब कुछ होता है परन्तु फिर भी प्राचीन नियम यह है कि —'देशे काले च पात्रे च' प्रत्येक देश में नीति एक समान नहीं हो सकती। देश की परिस्थिति को देखे बिना केवल नेतृत्व के नाम पर किसी काम को करना परमात्मा के राज्य में न्यायोचित नहीं होगा।

आप लोगों की बात का प्रभाव होता है। आप लोग वास्तविक परिस्थिति का अध्ययन अवश्य करें। आपने परसों विधान सभा में उड़ीसा के युधिष्ठिर मिश्र का व्याख्यान पढ़ा होगा। उसने जो कुछ कहा वह सच कहा पर आज कोई सुनने वाला नहीं। आशा है आप परिस्थिति को समझकर कोई ऐसा वक्तव्य देंगे जिसमें गवनमेण्ट से यह कहा जाय कि वह जनता की भावना के विरुद्ध मर्ज के काम में जल्दबाजी न करे।

आपका—

विद्याधरशास्त्री एम० ए०

डूँगर कालेज, बीकानेर।

सुमन का बलिदान सफल हुआ

(हमारा सन्देश)

शाबाश, गढ़वालियो ! तुम से ऐसी ही आशा थी

इन्दौर २५-१-४८—यद्यपि मैं लगभग एक मास से दक्षिण तथा मध्य भारत की यात्रा में संलग्न हूँ और आप लोगों से बहुत दूर हूँ तथापि समाचार पत्रों में टिहरी के आन्दोलन तथा सत्याग्रह की उन्नति के समाचारों को नियम तथा ध्यानपूर्वक पढ़ता रहता हूँ। कोई समय था और यह समय सहस्रों, लक्षों वर्ष पूर्व से चला आ रहा है जब कि—

राजा कालस्य कारणम् ।

राजा काल का कारण है। राजा जैसा चाहे अच्छा बुरा समय ला सकता है, राजा के हाथ में ही सब कुछ है, ऐसा माना जाता था । माना ही नहीं जाता था अपितु राजा और प्रजा दोनों का दृढ़ विश्वास था। हमारे धर्मशास्त्रकार, इतिहासकार इस बात को बराबर मानते चले आये हैं। इसी कारण से राजा लोग धर्मपूर्वक शासन करते थे और प्रजा भी धर्मपूर्वक मर्यादा का पालन करती थी।

समय की गति के साथ, भारतवर्ष की भी गति बदली। ये लक्ष्मी के वेग को सहन न कर सके और खण्ड खण्ड हो गये। इसी दशा में नौ सौ वर्ष के परचक्र और परदास्य ने इनकी शक्ति को छिन्न-भिन्न कर डाला। अंग्रेजों के दो सौ वर्ष के शासनचक्र ने तो इनको सर्वथा पंगु बना डाला। साम्राज्य-लोलुप अंग्रेज चले गये तो अब इनकी आंखें खुलने लगी हैं और अभी ऐसे अनेक राजा हैं जिनकी आँखें नहीं खुली हैं। टिहरी नरेश भी इनमें से एक थे। इन्होंने समय की गतिविधि को न समझा। संसार के मानचित्र पर दृष्टि डालकर अपनी वृत्ति तथा प्रवृत्ति में समुचित परिवर्तन नहीं किया। यह न देखा कि साम्राज्य तथा भौतिकवाद के पाश्चात्य अर्द्ध-गोलार्द्ध में भी राजे महाराजे गद्दियों को छोड़ने के लिये विवश हो गये हैं, विवश किये जा रहे हैं और शेष रहे सहे भी विवश होंगे।

गत १५ अगस्त के पश्चात् भारतवर्ष में भी युग पलटा और ६६५ छोटे बड़े राजा महाराजा नवाबों में से २-४ को छोड़कर सब प्रजा को अधिकार सौंप रहे हैं, उनको उत्तरदायित्व शासन दे रहे हैं। वह युग—"राजा कालस्य कारणम्" का गया। अब युग है—'प्रजा कालस्य कारणम्' का।

टिहरी की प्रजा और प्रजामंडल ने युगधर्म का ही पालन किया और राजा को विवश किया और भारतवर्ष के समस्त देशी राज्यों के प्रजामण्डलों से अपूर्व कार्य करके दिखलाया इसलिये मैं इनको इस विजय पर हार्दिक बधाई देता हूँ, हार्दिक अभिनन्दन कर रहा हूँ। टिहरी वालों ने सिद्ध करके दिखला दिया कि—"क्रियासिद्धिः सत्वे भवति महतां नोपकरणे" क्रिया की सिद्धि बाह्य उपकरण अथवा साधनों में नहीं है अपितु भीतरी सात्विक शक्ति में।

[जब हमने इन्दौर में सुना कि टिहरी प्रजामण्डल की विजय हुई तब मैंने "युगवाणी-देहरादून" के लिए यह सन्देश भेज दिया था]

ये विधान-सभाएँ क्या हैं?

(विधान सभा के विषय में पहिला लेख)

बोलने की दुकानें

(हिन्दुस्थान—२१ सितम्बर १९५२)

उस दिन मैं एक मराठी पत्र पढ़ रहा था। उसमें उसके संवाददाता का लन्दन का एक लेख था। उसमें उन्होंने पार्लमेंट के विषय में संवाद देते हुए लिखा था कि "पार्लमेंट (बोलने की दुकान) दो दिन तक बन्द रहेगी।" उक्त संवाददाता ने पार्लमेंट को "बोलने की दुकान" लिख कर वस्तुतः एक सत्य तत्व को प्रकट किया है। वस्तुतः ये विधान सभाएँ, परिषदें, पार्लमेंट, अपर हाऊस हैं क्या? "बोलने की दुकानें" ही तो हैं। जहाँ जनता के प्रतिनिधि समय-समय पर एकत्र होकर बोलते हैं और खूब बोलते हैं। असम्बद्ध भी बोलते हैं और सुसम्बद्ध भी बोलते हैं। और सब बैठकों में बोलने वालों की शब्दों की गणना की जाए तो न जाने कितने करोड़ शब्द बोलते होंगे एक वर्ष में। जिनको बोलना नहीं आता वे चुप रहने में ही सन्तोष कर बैठते हैं। अभी अभी भारतीय संसदीय कांग्रेस पालमेंटरी कमेटी में नेहरू जी ने कहा था कि प्रतिनिधियों के दो काम हैं, एक तो भीतर अच्छे वक्ता तैयार करना, विधान सभाओं या परिषदों में जो समितियाँ बनाई जाती हैं वे केवल परामर्शदात्री समितियां रहेंगी, इत्यादि। मतलब यह है कि ये विधान सभाएँ, ये परिषदें, यह पार्लमेंट, यह अपर हाऊस नए प्रतिनिधियों के लिये कॉलेज का काम देंगे, जहाँ ये प्रतिनिधि अपना राजनीतिक वैधानिक ज्ञान बढ़ायेंगे।

हमारा उत्तरप्रदेशीय कांग्रेस विधान-सभाई दल तो अभी से सब प्रान्तों से आगे बढ़ गया है इस विषय में। एक लम्बी विषयसूची छपा कर सदस्यों में वितरित की है और अनुरोध किया है कि सभासद् इन विषयों में अपनी रुचि का एक विषय चुन कर उस पर निबन्ध लिख लाएँ।

हमने अपने मन में सोचा कि अच्छे इस वृद्धावस्था में इस राजनीतिक विद्यालय में दाखिल हुए। अब निबन्ध लिखा करेंगे, इनसे बोलना-बैठना सीखेंगे।

बोलने की उत्कट लालसा

एक विचित्र बात है कि सदस्यों में भी बोलने की उत्कट लालसा बनी रहती है। जो पुराने हैं वे अपने दल के प्रेरक (ह्वीप) द्वारा पहले ही अपने नाम अध्यक्ष के पास भेज देते हैं। उनको तो समय मिलता ही है किन्तु किसी बिल अथवा विधेयक पर आम बहस चल पड़ती है तब सबको बोलने

की छुट्टी रहती है। एक वक्ता बोल कर बैठा कि एकदम दस-बीस-पच्चीस सदस्य अपने अपने स्थान पर खड़े हो जाते हैं। अब अध्यक्ष महोदय की दृष्टि जिस पर पड़ती है, वह जिसका नाम ले लेता है, वह बोलता है, वह बैठा कि फिर अन्य बोलने वाले एकदम एकसाथ खड़े हो जाते हैं, फिर भी अध्यक्ष जिसको अनुज्ञा देता है वही बोलता है।

यह क्रम तब तक चलता ही रहता है जबतक कि कोई उठ कर यह प्रस्ताव न करे कि अब यह विवाद बन्द किया जाय। अध्यक्ष महोदय सदस्यों से पूछते हैं कि जो विवाद करने के पक्ष में हैं वे 'हां' कहें। फिर 'हां' की आवाज गूँजती है। फिर 'नहीं' वालों से पूछा जाता है और वे भी चिल्लाते हैं और रहते हैं वे भी कितने! विवाद बन्द होने का प्रस्ताव पास हो जाता है। फिर विधेयक के पारित (पास) करने न करने में सम्मति ली जाती है। कभी 'हां', 'नहीं' पूछ कर, कभी हाथ उठा कर, और आवश्यकता पड़े तो मतदान-पेटिका में मतदान डलवा कर निर्णय किया जाता है।

जिसको इन विधान-सभाओं या परिषदों में बोलने का समय मिला, वह अपने को कृत-कृत्य ही समझता होगा। और जिस चुनावक्षेत्र का वह प्रतिनिधि है उस चुनावक्षेत्र की जनता भी समझती होगी कि हमारा प्रतिनिधि, हमारा वकील अच्छा बोला। बोलने वाले सभी का नाम और भाषण समाचार पत्रों में छपता है सो बात नहीं। प्रस्तावक, अनुमोदक का नाम अवश्य छपता है अथवा समर्थकों में किसी किसी अच्छे अथवा प्रसिद्ध वक्ता का नाम भले ही छपे, शेष का तो यदा-कदा नाम मात्र छपता है और बहुत से तो 'इत्यादि बोले' के इत्यादि में आ जाते हैं। तो क्या जो विधान सभा तथा परिषदों में बोलते हैं वे ही अग्रगण्य हैं, अथवा अग्रगण्य माने जाने चाहिएँ? वस्तुतः यह बात नहीं है। बहुत से अच्छे अच्छे वक्ता भी नहीं बोलते और विस्मयपूर्वक दूसरों के भाषण सुनते रहते हैं।

बातें जो ऊपर यानी मंत्रिमंडल से तय होकर आती हैं वे ही रहती हैं, वे ही मानी जाती हैं और वे ही पास होती हैं। कभी कोई उपयुक्त बात जान पड़ी तो ऊपर वाले मानते हैं, नहीं तो ऊपर से आया हुआ प्रस्ताव 'वेदवाक्यवत्' माना जाता है। मंत्रिमंडल बहुत कम परिवर्तन को स्वीकार करता है। प्रतिपक्षी बोलते हैं, अड़ंगे लगाते हैं, संशोधन प्रस्तुत करते हैं, पर कौन मानता है? क्योंकि मंत्रि-मंडल को अपने प्रतिनिधियों की 'हाँ' का भरोसा रहता है, हाथों का भरोसा रहता है। वहाँ तो व्यक्तिगत मत या अन्तरात्मा की आवाज का कोई मूल्य नहीं है।

दल की इच्छा ही व्यक्ति की इच्छा। एक बार दल में घुसे, हस्ताक्षर किए, प्रतिज्ञायें कीं कि फिर वह व्यक्ति गंगा-यमुना में अन्य नदी नालों की भांति मिल कर गंगा-यमुना हुआ समझिए। इस वर्तमान प्रजातन्त्र में यही एक विचित्रता है। यह प्रजातन्त्र भी एक जड़ मशीनवत् चलता रहता है। इसमें अज्ञ, विज्ञ, अतिविज्ञ प्रतिनिधियों के मत का सम-समान ही मूल्य है। वस्तुतः देखा जाय तो प्रजातन्त्र होने पर भी ऊपर वालों का ही तन्त्र चलता रहता है। मैं तो अनुभव करता हूँ कि इस पाश्चात्य प्रजातन्त्र में कभी परिवर्तन करना पड़ेगा। अथवा मैं पूछता हूँ कि एक वार अपने चुनावक्षेत्र

से चुने जाकर, इन विधान सभाओं में जाकर वहाँ के प्रतिज्ञापत्रों पर हस्ताक्षर करने के पश्चात्, विद्वान् से विद्वान, विज्ञ से विज्ञ, अनुभवी से अनुभवी प्रतिनिधि के व्यक्तित्व का क्या अवशेष रह जाता है।

'यस मैन' बने रहो

हमारे नेता, हमारे अग्रगण्य, हमारे मार्गदर्शक सदा सावधान रहते हैं कि चुनाव में सफल हो कर आए हुए प्रतिनिधियों में बहुसंख्यक उनके साथ रहें। यदि इस प्रकार की सावधानता न बरती जाए तो स्वयं तथा दल के कमजोर पड़ने की आशंका रहती है और एक दल और उसमें भी एक बड़ा गुट और उसमें भी एक तीसरा गुट होकर दल में असन्तोष बढ़ता जाता है। और कभी कभी छोटे २ गुट सिर उठा कर अड़ंगे डालने लगते हैं और कभी कभी पृथक् हो कर विरोध में खड़े हो जाते हैं। इस विषय में कांग्रेस का पिछला अनुभव स्पष्ट है। इसलिये कांग्रेस दल ने पहले ही प्रत्येक से लिखा लिया है कि 'जब दल कहेगा हम त्याग पत्र दे देंगे।'

इसका दूसरा अर्थ यह भी हुआ कि जब आप यह समझें कि यहाँ गुजारा नहीं, अथवा यह समझें कि अपनी आत्मा की आवाज का यहाँ कोई मूल्य नहीं' तब आप चुपचाप त्याग पत्र देकर स्वतन्त्र हो जाएँ। फिर जो चाहें करें, जो चाहें कहें, आप स्वतन्त्र हैं। परन्तु जब तक आप दल में हैं, अनुशासन में रहना ही होगा, आपको आत्मा माने, न माने, वही करना होगा, वही करना पड़ेगा, वैसा ही उठना, बैठना, बरतना होगा जैसा दल का बहुमत है अथवा रहेगा।

जो प्रतिनिधि विधान सभाओं या परिषदों में जाते हैं वे ही योग्य या साक्षात् ज्ञान के अवतार हों, सो बात नहीं है। इन प्रतिनिधियों का केवल यही अर्थ है कि वे प्रजा का बहुमत लेकर आये हैं और उसी विधि-विधान की संपुष्टि करेंगे जिसको कि हमने स्वीकार किया है। जिनको अंग्रेजी में 'यस मैन' कहा जाता है वे ही तो ये हैं, जो पहले उस ओर के आज्ञाकारी थे, अब इधर के हैं। पहले वे विदेशियों का बल बढ़ाते रहते थे, विदेशी राज्य का हाथ बटाते रहते थे अब वे ही अपने ही लोगों द्वारा संचालित स्वराज्य की संपुष्टि कर रहे हैं। पहले विदेशी मशीन विदेशियों द्वारा संचालित रहती थी। अब वही मशीन है पर हाथ बदल गए हैं। मशीन हमारे हाथों में है—इसके पुराने पहिये बदलने पड़ेंगे, कील-कांटे दुरुस्त करने होंगे, तब जाकर यह मशीन ठीक प्रकार से चल कर हमारा काम कर सकेगी—यही संक्षेप से इस 'बोलने वाली दूकान' की कथा है। आज तो मैं इतना ही लिख सकता हूँ कि इन बोलने की दुकानों में हम जितना बोलते हैं, वहाँ संयम से काम लेवें, जितना उचित और यथार्थ है उतना ही बोलें और समय का सदुपयोग करें, तो समय तथा व्यय का सदुपयोग होकर ये दुकानें हमारे देश के लिये अधिक लाभकारी होंगी।



मैं किस तरह एम० एल० ए० हुआ
और
विधान सभा में क्या अनुभव मिला

[१९५२]

यह भी एक मनोरंजक घटना है। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि कभी ऐसा अवसर आयेगा। किन्तु जीवन में कभी कभी ऐसी अभूतपूर्व, अकल्पित, पूर्व से अतर्कित घटनाएँ हो ही जाती हैं और गीता का वह वाक्य याद आता है जिसमें भगवान् कृष्ण ने अर्जुन से कहा है कि —

कर्तुं नेच्छसि, यन्मोहात,
करिष्यस्यवशोऽपि तत् ।

तुम जिस बात को मोह से करना नहीं चाहते, उसी को तुम्हें विवश होकर करना पड़ेगा।

है सन् १९५१ की बात। भारतीय नये संविधान के अनुसार भारतीय प्रजातन्त्र के प्रथम चुनाव के लिये प्रान्त प्रान्त में नाम दिये जाने लगे। पार्लियामेण्टरी बोर्ड नामों की पड़ताल करने लगी और बहुत से उम्मीदवारों के नाम निश्चित भी हो गये थे और वे उम्मीदवार अपनी अपनी तैयारियाँ भी करने लगे। मैं भी निश्चिन्त था कि इस प्रकार का कोई बवाल मेरे सिर पर नहीं पड़ने वाला है। पर न जाने किस तरह मेरे हितैषियों को मेरे नाम को भेजने की सूझी। मुझे बिना पूछे ही मेरा नाम प्रवेश फीस सहित (सौ रुपये) चुनाव बोर्ड के पास भेज दिया गया। बहुत दिनों तक यह बात मुझसे छिपाई रक्खी। स्थान २ से मेरे विषय में पत्र, तार बोर्ड के पास भिजवाये गये। भेजने वालों को समय का ध्यान न रहा और न जाने उनका प्रार्थना पत्र बोर्ड के पास पहुँचा और वहाँ की गुटबन्दी में लेट पहुँचे हुए प्राथना पत्रों पर विचार ही नहीं किया गया बोर्ड द्वारा। मुझे जब इस बात का पता चला कि ऐसा हुआ तो मैं प्रसन्न हुआ कि एक बला टली। मुझे खड़ा ही होना अभीष्ट था तो मैं उसी समय जब संविधान से पहिले चुनाव हुआ था और महामना मालवीय जी ने अपनी दल की ओर से मुझे खड़े होने को कहा था, खड़ा हो सकता था और विधान सभा में जा सकता था। मालवीय जी ने मुझसे कहा कि क्यों नहीं खड़े होते। मैंने कहा वोटरों की लिस्ट में मेरा नाम नहीं है। उन्होंने कहा कि अब भी दस रुपये भरकर वोटर लिस्ट में नाम लिखा सकते हो। मैं चुप हो गया क्योंकि मुझे यह काम पसन्द नहीं था। सबसे बड़ी चिन्ता थी चुनाव के खर्च की। मालवीय जी इसका प्रबन्ध कर देते, पर न जाने क्यों मेरा जी नहीं चाहा। पीछे कांग्रेस और मालवीय जी के दल में समझौता हुआ और कांग्रेस ने वहाँ अपने उम्मीदवार नहीं खड़े किये जहाँ मालवीय दल के (नैशनेलिस्ट पार्टी) उम्मीदवार खड़े हुए थे। दूसरी दिक्कत यह थी कि देहरे से शर्मदादेवी जी खड़ी की जा रही थीं। एक देवी आगे आ रही थी और

सौजन्य इसी बात में था कि उन्हें जाने दिया जाता। और हमने उन्हीं के लिये जी तोड़ कोशिश की और देवी जी सफल हुईं। वह ६ मास भी रहने नहीं पाईं। उन्होंने त्यागपत्र दिया, उनके पश्चात् स्वयं त्यागी जी खड़े हुए। बस इस बात को यहीं छोड़ता हूँ।

मैं ऊपर कह चुका हूँ कि उत्तर प्रदेश की पार्लियामेण्टरी बोर्ड ने बिलम्ब से आये हुए सभी प्रार्थना पत्रों को रद्द किया, उसमें मेरा नाम भी रद्द हो गया। यह स्मरण रहे कि मैंने अबतक स्वयं कोई प्रार्थना पत्र नहीं दिया था। अस्तु अब हमारे हितैषी मित्रों ने ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी में प्रयत्न किया। कमेटी ने कहा कि शास्त्री जी का प्रार्थना पत्र कहाँ है। तब श्री जैनबहादुर जैन, श्री हुलास वर्मा और श्री हरीराम मित्तल आदि का एक डेपूटेशन मेरे राजपुर में आया जहाँ कि मैं छिपा हुआ था और कहा कि देहरे जिले की नौका मझदार में है, इस कागज पर हस्ताक्षर कर दीजिये, नहीं तो देहरा डूबता है। १०-२० मिनिट मैं चुप था, क्योंकि मैं किंकर्तव्यविमूढ़ था। बहुत हिचकिचाया। अन्त में ईश्वरीय संकेत ऐसा ही है तो यही सही, ऐसा कहकर मैंने उस कागज पर (प्रार्थना पर) हस्ताक्षर कर दिया। मैंने उस समय स्पष्ट कह दिया कि चुनाव लड़ने के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं। लोग यह कहकर चले गये कि आप चिन्ता न करें सब हो जायगा। किन्तु उनके मन में यही होगा कि ये अपना प्रबन्ध स्वयं कर लेंगे, क्योंकि कोर्ट में उम्मीदवारी के प्रार्थना पत्र दाखिल करने के दो घंटे पहिले तक मेरे पास एक पाई भी नहीं थी। दो मित्रों के पास गया २५०)-२५०) उधार लाया, जमानत के रु० भरे और वोटर लिस्ट मोल ली और अपना कार्यालय खोल दिया वनस्पति भवन में।

यह तो मुझे पता लग गया था कि मेरा नाम आ गया है पर केन्द्रीय बोर्ड से कोई सूचना नहीं आई थी। वह सूचना तब मिली जब कि मैं अपना नाम देकर कचहरी से बाहर आ रहा था। यह था त्रिपाठी कमलापति का तार। दिल्ली में क्या हुआ, कैसे कैसे हुआ, किस किस ने क्या क्या कहा, कौन अनुकूल रहे और कौन प्रतिकूल इत्यादि बातें लिखने की नहीं हैं। बस इतना ही लिखना पर्याप्त है कि हमारा नाम आगया और गाड़ी चलने लगी। श्री कृष्णचन्द्र सिंगल, जिनको पहिले प्रान्तीय बोर्ड ने उम्मीदवारी का टिकिट दे दिया था और जो अपने लिये काम भी करने लगे थे और दौड़-धूप के लिए प्रान्त से जीप भी लाये थे, बेचारे बड़े सन्देह में पड़ गये और अन्त में हमारे विरोध में ही डट गये। फिर क्या हुआ, कैसे हुआ, किस प्रकार मेरे समस्त बिरोधी हारे, केवल हारे ही नहीं, सबकी जमानतें जब्त हुईं, इन सब बातों को मैं क्या लिखूँ, जिले का बच्चा बच्चा जानता है। यह बात अच्छी हुई कि पहिले परवादून का चुनाव होकर उसका परिणाम भी घोषित हो चुका था। पछवादून का चुनाव पीछे हुआ। इससे यह लाभ हुआ कि परवादून की विजय का प्रभाव पछवादून पर पड़ा और वहाँ भी कांग्रेस की विजय हुई, नहीं तो न जाने क्या हो जाता।

सन् १९५२ फरवरी ८

अब हम विजयी होकर विधान सभा में पहुँचे। जनता के हर्षोल्लास की बात तो देखते ही बनती थी। हम विधान सभा में गये, वहाँ शपथविधि हुई और हम लोग जनहित के कार्य में तत्पर हुए।

आज साढ़े तीन वर्ष होते हैं। चुनाव की अवधि पाँच वर्ष की है इसलिये और डेढ़ वर्ष में दूसरा चुनाव भी आरहा है। वहाँ जाकर हमने जनहिताय क्या-क्या किया इसको क्या लिखें। सैकड़ों होनहार एम० ए०, बी० ए० उपाधिधारियों को सदाचारी होने के प्रमाणपत्र दिये। पचासों को निःशुल्क शिक्षा देने की व्यवस्था की। सैकड़ों शरणार्थियों के अपेक्षित कार्यों में सहायता की। कितनों के व्यक्तिगत काम किये, इनका तो कोई हिसाब ही नहीं। जनता के वन-विभाग सम्बन्धी कष्टों को सरकार तक पहुँचाया और अनेक कष्ट दूर करवाये। आब-पाशी के बढ़े हुए कर के विरुद्ध आन्दोलन किया। ग्राम की जनता के जल-कष्टों को दूर कराने की चेष्टा की। थानों में एक नहर बनवाने में योग दिया। भोगपुर में एक हाईस्कूल की स्थापना करवायी। श्री १०८ महन्त इन्दिरेशचरण जी की कृपा से स्कूल उन्नति पर है। प्राइमरी स्कूलों के कष्टों के विषय में सरकार का ध्यान आकृष्ट किया। सौंग के पुल के विषय में उद्योग किया।

इस वर्ष बजट में ५॥ लाख रु० रखवाने पर भी पुल के बनवाने की चेष्ठा नहीं हो रही है, यह आश्चर्य है। श्री गिरधारीलाल निर्माण मन्त्री ने बहुत यत्न किया कि पुल के निर्माण का श्रीगणेश हो किन्तु हमारे नये निर्माण मन्त्री श्री विचित्र नारायण कह रहे हैं कि पहले अन्य अत्यन्त आवश्यक कार्य हो लेवें तब देखेंगे। मसूरी के सुधार के लिये आन्दोलन किया। राजपुर के सुधार के लिये भी यत्न किया पर सरकार ध्यान ही नहीं दे रही है। अन्त में हमने यह देखकर कि सरकार पहाड़ी इलाकों की उन्नति की ओर ध्यान नहीं दे रही है, उत्तरप्रदेश के विभाजन के विषय में राज्य पुनर्गठन आयोग के सामने अपना वक्तव्य प्रस्तुत किया।

गढ़वाली महागढ़वाल की, अथवा हिमाचल वाले महाहिमाचल की बात करते रहे। मुख्य आन्दोलन यह रहा कि पश्चिमी १६ ज़िलों को उत्तरप्रदेश से पृथक् किया जाय और हो सके तो दिल्ली के साथ, न हो सके तो पृथक् ही एक स्टेट बनाई जाय, जिसमें आगरा, मेरठ, रोहिलखंड आ जाय। इस विषय में पश्चिमी ज़िलों के लोगों ने अपने अपने वक्तव्य दिये। कमीशन सब बातें सुनकर गया है। आगे वह जैसा करे अथवा भारत सरकार जैसा करे, क्योंकि कमीशन भारत सरकार द्वारा नियुक्त हुआ है।

गोहत्या-निषेध के विषय में हमने प्रबल प्रयत्न किया और अब इस सम्बन्ध में एक विधेयक विधान सभा के सम्मुख उपस्थित है। संस्कृत शिक्षा की उन्नति की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित किया। संस्कृत कॉलेज बनारस के सरस्वती पुस्तकालय का सुधार करवाया। संस्कृत कॉलेज बनारस को संस्कृत का विश्वविद्यालय बनाने की बात सरकार के सामने रखा। आयुर्वेद के उद्धार का प्रश्न भी रखा गया। पूर्णतः मद्य-निषेध की बात भी कही गई। वर्तमान शिक्षा-दीक्षा के दोषों का प्रबल दिग्दर्शन कराया गया। राज्यपद्धति के भी दोष बतलाये गये। सारांश, जो कुछ हो सकता था किया—लेखों द्वारा, विशेष स्मृतिपत्रों द्वारा तथा समय-समय पर विधान सभा में भाषणों द्वारा और हम कर ही क्या सकते थे। हमारे पास हमारे जिले का काम तो है ही पर अन्य जिलों से भी काम आते थे और आते रहते हैं।

जनता से सम्पर्क

रखने में हमने कोई बात उठा नहीं रक्खी। समय-समय पर अपने चुनावक्षेत्र में गये और स्वयं लोगों के दुःख सुने और उनके प्रतिकार के लिये चेष्टा की। सारांश प्रजा का एक भी दुःख हमने नहीं छोड़ा जिसके विषय में जिलाधिकारी अथवा प्रान्ताधिकारियों का ध्यान न दिलाया हो। इसके अतिरिक्त जनसम्पर्क के लिये मुझे ऐसा अच्छा स्थान—वनस्पति भवन—मिला हुआ है कि ऐसा अच्छा स्थान शायद प्रान्त भर में किसी के ही नसीब में हो। कचहरी के साथ सटे हुए होने के कारण जिले भर के लोग मुझे सुभीते से मिलते रहते हैं और प्रतिदिन मेरे विचार और सन्देश जनता तक और जनता के विचार और सन्देश मुझ तक पहुँच जाते हैं। डाकखाना भी वनस्पति भवन में ही है, तार की व्यवस्था भी हो गई है। पास ही श्री चन्द्रमणि जी का प्रेस है, फोन है, सारांश सभी सुभीते हैं।

इस प्रकार मेरा अपने चुनावक्षेत्र में संपर्क मसूरी, राजपुर, देहरादून शहर, कैंटोनमेंट और परवादून के ऋषीकेश, राणीपोखरी, डोईवाला, गढ्ढूल—मालकोट आदि मिलाकर लगभग ३५० ग्राम हैं, बराबर रहता है। मैं जब शहर में रहता हूँ शहर की देखभाल करता ही हूँ। कभी-कभी पछवादून के काम भी निकल आते हैं।

इस बात को याद रखिए

संस्कृत विद्या का प्रचार-प्रसार, महाविद्यालय ज्वालापुर जैसी संस्था का संचालन, आर्यसमाज का काम, शिक्षा का काम, हिन्दी-साहित्य, संस्कृत-साहित्य आदि काम भी मेरे सिर पर हैं, और अन्य कामों में भी मेरा समय व्यतीत होता रहता है। मेरी समस्त आयु ही धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक, शैक्षिक कामों में गई और मैं स्वतन्त्रता-पूर्वक ही काम करता रहा। अब कर्म-धर्म-संयोग से विधान सभा में पहुँच गया हूँ। मुझसे कोई यह आशा करता हो कि छोटे-छोटे कार्यों के लिये भी मैं मन्त्रियों के यहाँ हाजरी दिया करूँ, उनके सामने गिड़गिड़ाया करूँ, उनके इर्द-गिर्द चक्कर काटा करूँ, तो यह कार्य मुझसे न हुआ, न होगा।

हाँ, सब के सुख-दुःखों के विषय में लिख दिया करता हूँ और अत्यन्त आवश्यकता होती है तब मिलता भी हूँ और प्रबल अनुरोध भी करता हूँ। हाँ, मुझमें एक भारी त्रुटि है—वह है, जीप के न रहने की, जो दिनभर चक्कर काटा करूँ।

वाचकों को ध्यान रखना चाहिये कि यह प्रजातन्त्र है। इसमें एक-एक कार्य के लिये छह-छह मास लग जाते हैं। आप मिनिस्टर को लिखिए, वह सेक्रेटरियों को लिखेगा, वे जिलाधिकारियों से पूछेंगे, फिर उत्तर प्रत्युत्तर चलेंगे, फिर महीनों के पश्चात् किसी बात का निर्णय होगा। फिर भीतर की गुटबन्दी की बात ही मत पूछिए। मन्त्रिगण किन की बात पहले सुनते हैं, किसका काम पहले करा देते हैं, इस बात को आप ही समझने का कष्ट कीजियेगा।

छोटे मोटे कामों के लिए लिखिये तो उत्तर मिल जायगा कि विचार हो रहा है। आपका पत्र अमुक विभाग में भेज दिया गया है, वहीं से लिखा पढ़ी करें। वहाँ तो 'तत्काल कार्य करा दो' ऐसा कोई मन्त्री लिखे तो समझ लो कि कम से कम आठ दिन और अधिक से अधिक एक मास लगेगा। साधारण बातों के लिये छः छः मास लगते हैं । किसी किसी काम के प्राण तो लम्बी लिखा पढ़ी में ही समाप्त हो जाते हैं। प्रजातन्त्र में इस प्रकार देरी हो जाती है सही।

जो विधान सभा की बात, वही जिले की समझ लीजिये। जब कलेक्टर, सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस आदि जिलाधिकारी हमारे यहाँ नहीं आते तब हम ही क्यों उनके यहाँ व्यर्थ फेरे डालते रहें, यह बात मेरी समझ में नहीं आई। इसलिये मैं तभी इन लोगों के पास जाता हूँ जब कोई अपरिहार्य कार्य हो, नहीं तो कोई बात हुई तो लिख दी। मैं तो किसी एम० एल० ए० को किसी जिलाधिकारी से कम नहीं समझता। डेढ़ डेढ़ लाख जनता का प्रतिनिधि–जनता के राज्य में–हेय, कम समझा जाय तो जनता और प्रतिनिधि दोनों के दुर्भाग्य समझिये, और क्या ?

जिले में बीसियों कमेटियाँ हैं। उन सबका प्रधान कलेक्टर अथवा डी. एम. ही रहता है। एम. एल. ए. प्रत्येक कमेटी का मेम्बर होता है सही, किन्तु वर्ष भर में ५ मास तो लखनऊ में जाते हैं, वह मीटिंग में नहीं जा सकता। पीछे मीटिंगें हो जाती हैं। जब जिले में, विशेषतः देहरे में रहना हो और उन दिनों में कोई मीटिंग हो तो जा सकते हैं। काम तो कोई रुकता नहीं, अकेला एम० एल० ए० भी जाकर क्या कर लेगा।

सारांश यह है सच्ची सच्ची व्यवस्था जो कि चल रही है। बेकारी इतनी बढ़ रही है कि पूछिये नहीं। सिफारिशों की बात भी जिनकी चलती है चलती है, नहीं चलती नहीं चलती। अपने राम तो खुशामद की बात जानते नहीं। कभी कभी लोग भी ऐसी अनुचित सिफारिशें चाहते हैं कि लिखते लज्जा आती है। अवश्य ही एम० एल० ए० जनता का प्रतिनिधि है। उसका मुख्य काम यही है कि वह जनता के सुख-दुखों की बात यथार्थ रूप में सरकार के पास पहुँचा देवे। बस इतना ही उसका काम है। वह कोई सर्वशक्तिमान व्यक्ति नहीं जो सब कुछ करा देवे।

मैं तो प्रजा का व्यक्ति हूँ। प्रजा की खरी खरी बातें सरकार को सुनाता हूँ तो सरकार रुष्ट होती है। यदि "सरकार करे सो न्याय" वाली बात कहता हूँ तो प्रजा कहती है "अब तो स्वयं सरकार बने हैं, हमारी बात क्यों सुनेंगे।" इत्यादि । दोनों को प्रसन्न रखना टेढ़ी खीर है।

मेरी आत्मा सन्तुष्ट है जैसी कि परिस्थिति थी, उस परिस्थिति में भी मैंने अपने कर्तव्य का पालन यथाशक्ति किया। एक बात और यदि जिला कांग्रेस अथवा मण्डल कांग्रेस एम० एल० ए० लोगों का हाथ बटायें तो बड़ा काम हो सकता है। पर इन कमेटियों की कोई स्थिति ही नहीं। मरे जा रहे हैं अधिकार के लिए। मर रहे हैं पद-लोलुपता में। अकेला एम० एल० ए० क्या क्या करे, कहाँ कहाँ जाय। इन कांग्रेस कमेटियों का एक ही काम रह गया है, जब कोई चुनाव आवे तब और जब कोई मिनिस्टर आवे तब जगना और फिर सो जाना।

मेरा अपना अनुभव है कि जो लोग देश का ठोस रचनात्मक काम करना चाहते हैं उनको इन विधान-सभाओं अथवा परिषदों में जाना ही नहीं चाहिये। इसमें न तो इधर का काम ही होता है और न उधर का। इसमें सन्देह नहीं कि एम० एल० ए० अथवा एम० पी० होने का लालच भी बहुत बड़ी, बहुत बुरी बला है, पर सच्चे देशभक्तों को यह मोह रोकना ही चाहिये। अध्यात्म में रुचि रखने वालों को भी इस प्रकार की रजोगुणी प्रवृत्ति को रोकना चाहिए, नहीं रोकेंगे तो सदा अशान्त रहेंगे। विशेष महापुरुषों को छोड़कर शेष सदस्य तो केवल "हाँ" "नहीं" करने के धनी हैं। वहाँ तो ब्रेन-ट्रस्ट (Brain Trust) ही काम करता है। ऊपर के चन्द बुद्धिमान् अग्रणी जो करते हैं वही होता है। वे जिस बात को चलाते हैं, वही बात चलती है। प्रजातन्त्र तो चुनाव तक ही सीमित रहता है। जहाँ एक बार विधानसभा तथा परिषदों में पहुंचे कि भीतर अधिनायकता की तूती बोलती रहती है। वर्तमान प्रजातन्त्र इसी प्रकार चलते हैं। जब हमने उस पद्धति को संविधान द्वारा स्वीकार किया है तो उस प्रकार से चलना ही होगा और कोई गति ही नहीं है। पर, हमारी अन्तरात्मा कह रही है कि यद्यपि हमने युगधर्म को मानकर इस प्रकार की प्रजातन्त्र-पद्धति को स्वीकार कर लिया है तथापि कतिपय वर्षों के अनुभवों के पश्चात् वर्तमान संविधान में भारतीय रूप के परिवर्तन करने ही होंगे।

जो भारत एक सहस्र वर्ष पर्यन्त पर-दास्य, पर-चक्र सहता रहा वह अब भी, इस युग में भी, ऐसा कोई उपाय ढूँढ कर निकालेगा कि जिससे भारत—भारत बन सके और वह पाश्चात्यों के अन्धानुकरण से अपने आपको बचा सके।

देखिये कालचक्र क्या करता है।

इस समय तो हमको यह बड़ी प्रसन्नता है कि हम स्वतन्त्र हैं। दूसरी बड़ी प्रसन्नता है कि भारत पुनरपि संसार के प्रमुख राष्ट्रों की पंक्ति में बैठने योग्य हो गया है। तीसरी प्रसन्नता यह है कि भारत संसार में शान्तिस्थापना के लिए केवल सचेष्ट ही नहीं अपितु कटिबद्ध हो रहा है। चौथी प्रसन्नता यह है कि संसार के राष्ट्र प्रत्येक जटिल प्रश्न को सुलझाने के लिये भारतवर्ष का मुख निहार रहे हैं। पांचवीं अन्तिम प्रसन्नता यह है कि संसार के राजनैतिक सूत्र न्यू दिल्ली से संचालित होने लगे हैं। भविष्य की बात भविष्य के गर्भ है, उसके विषय में मुझ जैसा तुच्छ व्यक्ति क्या कह सकता है।

जब हम स्वतन्त्र हुए और हमको स्वराज्य मिला, महात्मा गांधी समझ रहे थे कि कांग्रेस का काम समाप्त हुआ। वे चाहते थे कि लोकसंघ के रूप में कांग्रेस के लोग ठोस और रचनात्मक कार्य करें। क्योंकि, देश स्वतन्त्र हो गया तो क्या, ठोस रचनात्मक कार्यों के बिना स्वतन्त्रता पनप नहीं सकती। पर, जिन्होंने स्वतन्त्रता के लिए इतने कष्ट झेले थे, फल उपस्थित होने पर उसको क्यों छोड़ते। आखिर जो होना था हुआ। अंग्रेज जाते जाते भारत की सत्ता कांग्रेस को ही सौंप गया। कांग्रेस का ही अधिकार था। तबसे, १९४७ से, देश के शासन की बागडोर कांग्रेस के ही हाथ में है। अन्य दल भी हैं पर वे इतने समर्थ कहाँ हैं। कांग्रेस की बात अभी बहुत वर्षों चलने वाली है। आगे जो हो।

अस्तु, मैं अब इस संक्षिप्त रामकहानी को समाप्त करता हूं। और उत्तराखण्ड निवासियों का, विशेषतः देहरादून और गढ़वाल-निवासियों का अत्यन्त कृतज्ञ हूं उस प्रेम के लिये जिस प्रेम के द्वारा उन्होंने मुझे अपनाया और मुझे अब तक निभाया, और मैंने भी यथाशक्ति उनकी सेवा में किसी प्रकार की कमी नहीं रक्खी। जब भी, जिस प्रकार की सेवा की आवश्यकता पड़ी मैं तत्पर ही रहा। उन सब सहयोगियों के आभार माने बिना, मैं इस लेख को समाप्त नहीं कर सकता जिन्होंने सब प्रकार से सभी कार्यों में निर्व्याज योग दिया और देशसेवा में भाग लेकर कर्तव्य का पालन किया।

चुनाव आय-व्यय

दो मित्रों से ढाई ढाई सौ रुपया उधार लाया। अन्य परिचितों से भी उधार लिया तब काम चला। पीछे लोगों ने सम्भाल लिया। मैं जब चुनाव के लिये खड़ा हुआ, तब मेरे पास एक पैसा भी नहीं था। इस चुनाव में प्रान्तीय पार्लियामेंटरी बोर्ड द्वारा प्राप्त २५००) सहायता के अतिरिक्त, १०००) श्री दर्शनलाल चायवाला, ५००) श्री राधावल्लभ खण्डूडी, ५००) श्री महन्त इन्दिरेशचरणदास, ५००) ला० कृष्णचन्द्र नाहरसिंह, १००) ला० कैलाशचन्द्र गुप्त भोगपुरी, १००) श्री भगवानदास मुलतानी, २००) श्री रामचन्द्र ठेकेदार, १००) ला० काशीरामजी आदि ने सहायता दी थी। श्री शान्तिस्वरूप वकील ने भी १००) एकत्रित किये थे। जिस किसी मित्र से हमने उधार लिये थे वे सब रुपये लौटा दिये। चुनाव में लगभग ५५००) व्यय हुए, जो रुपये बच गये थे वे ऐसे लोगों में बाँट दिये गये जिनको आर्थिक संकट दुःख दे रहा था।

१९५२ मई—१९५७ मार्च

आय—मासिक द्वारा लगभग १२०००)

भत्ता, मार्गव्ययादि द्वारा ५०००)

———

योग १७०००)

व्यय—लखनऊ, ज्वालापुर, देहरादून तथा दक्षिण की यात्राएँ, प्रति वर्ष की कांग्रेस यात्राएँ तथा जनसंपर्क के कार्य में जिसमें परिभ्रमण, वक्तव्य-प्रकाशन, परिपत्र-वितरण, मुद्रण तथा नाना प्रकार के चन्दे आदि सम्मिलित हैं।

१००००) रु०

दान, गरीबों की सहायता आदि में ४०००) रु०

शेष सब इस आत्मकथा के समर्पण कर रहा हूँ।

एक विशेष बात

हमारे विधान सभा में चुने जाने से हमारे भक्तमण्डल ने अपना हाथ खेंच लिया। गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर को भी बहुत हानि पहुँची क्योंकि लगभग ५-६ वर्ष से मैंने उसकी तरफ देखा भी नहीं—हमारे महाविद्यालय के स्नातकों ने जिस किसी प्रकार गाड़ी चलाई। अब मेरा शरीर इतना ढीला पड़ गया है कि मैं महाविद्यालय के लिए कुछ कर भी नहीं सकता, केवल परामर्श दे सकता हूँ। हाँ, निवास का मुख्य स्थान महाविद्यालय ही रहेगा।

दिसम्बर १९५१ में चुनाव आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। [ऑल इण्डिया पार्लियामेंटरी बोर्ड न्यू देहली ने टिकिट दिया था।]

३१ जनवरी (१९५२) को पोलिंग हुआ।

[मेरा नाम आने के पूर्व श्री पं० अमरनाथ वैद्य, श्री हरिराम मित्तल, श्री ला० बाबूलाल, श्री हुलासवर्मा आदि आदि ने बड़ी दौड़ धूप की।]

८ फरवरी (१९५२) को गजट हुआ।

× × × ×

१९ मई को विधान सभा में शपथविधि।

× × × ×

१९५७ मार्च ३१ से स्वेच्छापूर्वक निवृत्त

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि यदि मैं इस वार भी खड़ा होता तो मुझे टिकिट अवश्य मिलता और मैं चुना भी जाता किन्तु :—

(१) मेरा स्वास्थ्य गिर रहा था। वायुप्रकोप रहने लगा। लखनऊ में बाईसिकल के धक्के से गिर गया था तब से वायु का प्रकोप बढ़ा।

(२) लखनऊ का जलवायु अनुकूल नहीं पड़ रहा था।

(३) डॉक्टरों, वैद्यों ने सलाह दी कि मैं निवृत्त हो जाऊँ।

(४) विधान सभा में केवल 'हाँ' अथवा 'नहीं' कह कर हाथ उठाने में कोई लाभ नहीं। मैं ७८ वर्ष का हो गया हूँ। किसी नये व्यक्ति के लिये स्थान को रिक्त करना उचित होगा। इस उम्र में इस तरह पड़े रहने में शोभा नहीं है। इत्यादि कारणों से चुनाव से चार मास पूर्व ही मैंने समाचर पत्रों को सूचना भेज दी थी कि मैं चुनाव में खड़ा नहीं हूँगा। उसी समय पार्लियामेंटरी बोर्ड को भी लिख दिया था कि कोई मेरा नाम प्रस्तुत न करें तो न मानें, न ध्यान देवें।

द्वितीय महा-चुनाव

(१६५७)

यद्यपि केरल और उड़ीसा (उत्कल) को छोड़ कर कांग्रेस को सर्वत्र बहुमत मिला और उन उन प्रान्तों में कांग्रेसी सरकारें भी बनीं तथापि कांग्रेस को यत्र तत्र सर्वत्र घोर विरोध सहना पड़ा। यत्र तत्र सर्वत्र कांग्रेस के महारथियों को परास्त होना पड़ा—इस विपरीत दृश्य के कारणों को ऑल-इण्डिया कांग्रेस ने सोचा और वह अब कांग्रेस-विधान में आवश्यक परिवर्तन करने जा रही है :—

उलट फेर के कई कारण हैं।

(१) लोगों में अधिकार-मद आगया।

(२) पदलोलुपता जाग ग।

(३) जन-सम्पर्क छूट गया।

(४) कांग्रेस में अवसरवादी घुस आये।

(५) कांग्रेस सरकार ने बहुत कुछ किया किन्तु पहिले पहिले नगरों की ओर ही ध्यान दिया। अब उसको अपनी भूल सूझ गई है और द्वितीय पंचवर्षीय योजना ग्रामों का ध्यान रख कर चलाई जायेगी। प्रथम पंचवर्षीय योजना में ग्रामों की ओर इतना ध्यान नहीं दिया गया था।



गोरक्षा के विषय में

श्री माननीय पन्त जी को पत्र

श्री माननीय पन्त जी,

कुछ दिन हुए कि यहां की जनता का एक प्रतिनिधि मंडल मेरे पास आया था और उसने प्रांत में कानूनन् गोवध बन्द करने के विषय में चर्चा चलाई थी। और मुझ से अनुरोध किया कि आप जनता के प्रतिनिधि हैं। जब जनता की भावना का आदर नहीं किया जा रहा है तब आपको विधानसभा की सदस्यता का त्याग पत्र देना चाहिये। मैंने उत्तर दिया कि जिस कांग्रेस पार्टी के टिकट पर मैं विधान सभा का सदस्य हूँ, उसकी गति-विधि यथार्थ रूप में जाने बिना मैं कुछ नहीं कह सकता। गोसम्वर्द्धन समिति की रिपोर्ट सरकार के पास पहुँच गयी है, विचार हो रहा है। विचार हो कर सरकार किसी न किसी रूप में कोई विधेयक लायेगी तब देखा जायगा कि क्या होता है।

आज खबर मिली है कि एक और प्रतिनिधि मंडल हमारे पास आने वाला है। वह आयेगा तब चर्चा होगी ही।

किन्तु यह बात समझ में नहीं आ रही है कि जब उत्तर प्रदेशीय सरकार यह समझ रही है और कह रही है कि पूर्वापेक्षा-अंग्रेजों के समय की अपेक्षा गोवध बहुत कम हो गया है, नाम मात्र रह गया है, तब जो कुछ भी हो रहा है, उसको विधि-विधान के अनुसार बंद करने में सरकार की क्या हानि होती दिखाई देती है। जनता की भावना का आदर करने से उत्तरप्रदेश की सरकार का गौरव द्विगुण हो जायगा और इस प्रश्न को लेकर समय समय पर जो कांग्रेस सरकार का विरोध होता रहता है, वह बन्द हो जायेगा और कांग्रेस का मार्ग खुला हो जायगा। ऐसा सुन्दर अवसर मिल रहा है और सरकार ध्यान नहीं दे रही है। यह आश्चर्य है। जहां तक विधान सभा के सदस्यों से बातचीत हुई, मैं इस निर्णय पर पहुँच चुका हूँ कि हृदय से सब मुसलमान भी चाहते हैं कि एक बार तो यह झगड़ा समाप्त ही कर देना चाहिये। वैसे खुशामदी सदस्य आपके सामने जो कुछ कहें।

जब गोसम्वर्द्धन समिति बनी थी, आपने विधान सभा में स्पष्ट कहा था कि हमारे यहां गोवध होता ही नहीं। बिठूर में आपने कहा कि कुछ कुछ होता है। कृषिमंत्री ने अपने वक्तव्य में तथा पार्टी मीटिंग में मानलिया है कि गोवध होता है पर अत्यल्प। अन्य प्रकारों से भी यह वार्ता स्पष्ट है कि जितना गोमांस इस प्रदेश से दिल्ली प्रदेश में जाता है, उतना किसी और प्रदेश से नहीं। दिल्ली म्युनिसिपैलिटी ने अपनी सीमा में गोवध बन्द कर दिया है। पर इसको वह क्या करे कि उत्तर प्रदेश से यहां गोमांस जाता है। दिल्ली के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता डॉ० युद्धवीरसिंह मुझसे एक बार कहते थे।

इस कथन में कोई सार नहीं है कि कानूनन् गोवध बन्द कर देने से गोवध बढ़ जायेगा। यह कथन भी असंगत तथा तर्कशून्य है कि यदि कानूनन् गोवध बन्द किया जायगा तो इतनी बड़ी गो-संख्या की रक्षा किस प्रकार होगी। क्या इन तर्कशून्य बातों का अर्थ यह नहीं होता कि गोवध होते रहना चाहिये, हम रक्षा नहीं कर सकते अथवा हम असमर्थ हैं। यह कथन भी सारशून्य है कि कानूनन गोवध बन्द नहीं हो सकता। यदि कानूनन कोई सुधार नहीं हो सकता तो सरकार प्रतिदिन सुधार के कानून क्यों लाती और पास करती है।

गोधन की रक्षा के लिये गोचरभूमि का यत्र, तत्र, सर्वत्र प्रबन्ध करना सरकार का काम है। उसने इस विषय में कभी पूरी तरह ध्यान नहीं दिया। केवल गोसदनों को खोल कर सरकार कभी इस प्रश्न को हल न कर सकेगी। जमींदारी उन्मूलन के समय इस बात का ध्यान रखा जाना उचित था। कोई ध्यान नहीं रखा गया और लोगों ने इंच भर भी स्थान नहीं छोड़ा, जहाँ गोवंश अथवा अन्य पशु भलीभांति चरें। प्रजा को किसी प्रकार का भी कष्ट होता है तो उसके लिये सरकार ही दोषभागी है—

"राजा राष्ट्रकृतं पापं
शिष्यपापं गुरुस्तथा"

❀ ❀ ❀ ❀

"राजा कालस्य कारणम्"

❀ ❀ ❀ ❀

प्रतिनिधि होने के नाते प्रजा का दुःख आप तक पहुँचाना मेरा कर्तव्य है। यदि प्रजा की भावना को दबाया गया तो, यदि इस विषय में अक्षम्य विलम्ब किया गया तो सरकार की अर्थात् हमारी ही हानि होगी, कितनी और किस प्रकार इसकी अभी कोई कल्पना भी नहीं की जा सकती। लोग कहते हैं कि जब राम और कृष्ण की भूमि के टुकड़े नहीं हो सकते तो गोवध जैसी हेय बात राम और कृष्ण की भूमि में क्यों हो रही है।

अपृष्टस्तस्य तद्ब्रूयात्
यस्य नेच्छेत्पराभवम्।

नीति कहती है कि मनुष्य जिसका पराभव न चाहे उसके बिना पूछे ही हित की बात कह डाले, आगे वह सुने न सुने, वह जाने।

इसी नीति के अनुसार मैंने दो शब्द लिखने का साहस किया है, धृष्टता के लिए क्षमा।

नरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ
सदस्य विधान सभा।

गोरक्षा के विषय में सम्मतियाँ

[हमने जो परिपत्र विधानसभा और विधान परिषद् के सदस्यों के नाम लिखा था, उत्तर भारत में उस पर बड़ी भारी चर्चा रही। प्रायः सभी हिन्दी समाचार पत्रों ने उसको उद्धृत किया था और इस विषय में हमारे पास सैकड़ों पत्र आये जिसमें से दस बीस पत्रों का सारांश दे रहे हैं]

निःसन्देह आपके विचार सामाजिक और व्यावहारिक हैं।

धर्मदेवशास्त्री, कालसी

गोवध-निषेध कानून बनाने के लिये मसौदा, अतिशीघ्र विधानसभा में प्रस्तुत करें।

पूर्णचन्द, प्रधान
आर्य प्रतिनिधि सभा
(उत्तरप्रदेश)

इस प्रकार का परिपत्र आपकी महत्ता का प्रतीक है। क्या इतनी निर्भीकता अन्य सदस्यों में भी होगी-बिना सहयोग के सफलता में विलम्ब होगा ही।

हरिश्चन्द्र वैद्य, देहरादून

ज्ञात होता है कि एक आर्य एम० एल० ए० का आर्यत्व जाग उठा, आर्यनेता होने के नाते आपने कर्तव्य पालन कर दिया।

ओम्प्रकाश पुरुषार्थी, सेनापति
अखिल भारतीय आर्यवीर दल
दिल्ली।

प्रतीत होता है आपका प्रसुप्त ब्रह्मतेज राजतेज पर हावी होना चाहता है।

प्रकाशवीरशास्त्री, चन्दौसी

जनमत यह है कि आपने अच्छा कर्तव्य पालन किया। इसको सबने ही आवश्यक तथा उपयोगी समझा। आपकी प्रशंसा हो रही है।

अमरनाथ वैद्यशास्त्री, देहरादून

कानून केवल "गोवध" की रोक के लिए नहीं, अपितु समस्त दुग्ध देने वाले पशुओं के लिए हो।

हकीम ब्रजलाल वर्मन्, मथुरा

इसी प्रकार के पत्र लोकसभा तथा राज्यपरिषद् के सदस्यों के पास भिजवाइये।

(स्वर्गीय) स्वा० स्वतन्त्रानन्द

उत्तरप्रदेशीय सरकार किसी भले कार्य को करने में भी अकारण इतना विलम्ब करना सीख गई और अपयश कमा रही है।

मलखानसिंह (एम० एल० ए०)
अलीगढ़

आपने बड़ा ही पवित्र काय किया।

(स्वामी) ध्रुवानन्द प्रधान
सार्वदेशिक सभा देहली।

आपने सारे देश की समस्या अपने हाथों में ले ली, इस अग्नि-परीक्षा में ईश्वर आपको सफल करे।

बाबूलाल वर्मा प्रान्तीय रक्षक दल
ऋषीकेश

आपने अपनी स्थिति तथा विधान सभा के कर्तव्य को स्पष्ट रूप में प्रदर्शित किया है।

स्वर्गीय हरनन्द शास्त्री, देहरादून

गोरक्षा के विषय में इतना सुन्दर लेख है कि कट्टर से कट्टर पन्थी के दिल को भी हिला सकता है। अब यदि विधानसभा गोरक्षा का कानून न बनायेगी तो उस पर कलंक ही लगेगा।

आशाराम शर्मा अग्निहोत्री,
मुजफ्फरनगर

क्या गोरक्षा लिए बैठे हो, पहिले अछूतों का तो उद्धार करलो।

एक अछूत एम० एल० ए०

सरकार गोवध-निषेध कानून बनाने में क्यों हिचक रही है, यह निश्चय है कि आगामी चुनाव में यह प्रश्न महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर लेगा।

(आचार्य) बृहस्पतिशास्त्री

दसियों पत्र

"क्या झगड़ा खड़ा कर दिया है, क़ानून बन जाने से गोवध बन्द न हो सकेगा, जनता ही स्वयं ध्यान दे।"

इटावे के एक महाशय

कांग्रेस छोड़कर हिन्दूमहासभा में आइये और चुनाव लड़िये।

आपने साहसपूर्ण मार्ग प्रदर्शन किया है—

सुदर्शन
प्रचार विभाग,
राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, देहरादून।

आपने अपने हृदय की बीमारी और जो आपको तंग करते हैं, उनका इलाज किया है।

नित्यानन्द गोरखा
नेहरू ग्राम, देहरादून।

लोग विधान की धारा ४८ और सरकारी विशेषज्ञों की सम्मति प्राप्त होने पर भी गोहत्या बन्द नहीं करते हैं, राष्ट्रीय दृष्टि से भी अनुचित करते हैं—

सुरेन्द्रसिंह
प्रचार-विभाग गोहत्यानिरोध-समिति,
दिल्ली ६।

आपने जो इतना साहस किया, धन्यवाद।

सुखदेवसिंह मंत्री
भारतगोसेवक समाज, दिल्ली ६।

आपने बड़े सुन्दर और प्रभावशाली शब्दों में अपने साथियों से अपील की है। दुःख तो यह है कि कांग्रेस के महान् अध्यक्ष जो कुछ कहते हैं कांग्रेस ही नहीं प्रत्युत जनता भी उसी को तोते की तरह दोहराती रहती है। देखें आपके सदस्य क्या २ हिम्मत करते हैं।

मदनमोहन सेठ
(भू० पू० प्रधान आ० प्र० सभा, उत्तर प्रदेश)

राजनीति में अरण्यरोदन भी आवश्यक है। इस नीति के अनुसार आन्दोलन भी आवश्यक है। आपने तो खरी बात कही है—

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल
हिन्दू विश्वविद्यालय काशी

हम सब प्रकार की मदद करेंगे।

राजा वीरेन्द्रशाह
जगमनपुर (जालौन)
(ये संयुक्तदल के सदस्य हैं)

आपने हाँ में हाँ मिलाने वालों के कान खोल दिये—

गोपीवल्लभ उपाध्याय
इन्दौर।

दसियों एम्० एल्० ए०-ओं के पत्र

बात तो ठीक है पर इसका समय नहीं है। व्यर्थ की अशान्ति फैलेगी—

यहाँ आपके साहसिक पग की चर्चा है, आपने अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया है, आपने निर्भीक होकर वह कार्य कर डाला जिसको शायद और कोई न कर सकता।

धर्मेन्द्रनाथ मंत्री
आ० स० देहरादून।

(हमने इस आशय का एक परिपत्र सभासदों के नाम भी भेजा था। इस परिपत्र की इतनी अधिक चर्चा रही कि स्टेट्समैन जैसे अंग्रेजी पत्रों को भी उस पर टिप्पणी लिखनी पड़ी)

सर सीताराम ने जो (गोसंवर्द्धन जांच समिति के प्रधान थे) लिखा कि—

कृपापत्र वक्तव्य प्रति सहित मिला, धन्यवाद। मेरे विचार में सत्याग्रह करके हानि पहुँचाई गई है। आन्दोलन विधिपूर्वक रहता तो ठीक था। अस्तु, अब तो बात यह है कि आन्दोलन इस बात पर होना चाहिये कि गोसंवर्द्धन-समिति की रिपोर्ट शीघ्रातिशीघ्र जनता के सम्मुख आवे, अंग्रेजी-हिन्दी पत्रों में। जनता को पता चले कि समिति ने क्या कहा है और उसमें विविध सम्प्रदाय के सदस्यों ने क्या मत प्रकट किये हैं। तब ही तो एकाग्र मन से, एक स्वर से कोई बात निश्चित रूप से कही जा सकती है।

[स्मरण रहे उत्तर प्रदेश की सरकार ने लगभग एक वर्ष तक रिपोर्ट दबा रक्खी थी]

—नरदेवशास्त्री

उत्तर प्रदेश में गोवध पर पूर्ण प्रतिबन्ध

सरकार द्वारा नियुक्त समिति की सिफारिश

लखनऊ, १८ जनवरी—उत्तर प्रदेश गोसंवर्द्धन जांच समिति ने राज्य सरकार से सिफारिश की है कि सरकार को कानून द्वारा गोवध पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाना चाहिये। यह २१ सदस्यों की समिति राज्य सरकार ने दिसम्बर सन् १९५२ में सरकार द्वारा की, राज्य विधान सभा को दिये गये आश्वासन के अनुसार अप्रैल सन् १९५३ में नियुक्त की थी जिसके अध्यक्ष डा० सीताराम हैं।

समिति की रिपोर्ट में, जो आज प्रकाशित की गई, बताया गया कि उत्तर प्रदेश के निवासियों की एक बड़ी संख्या की धार्मिक भावनाओं के अलावा राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था, राष्ट्रीय सम्पदा तथा राष्ट्रीय सद्भावना के लिये यह जरूरी है कि गोवंश की रक्षा की जाय। इस उद्देश्य से अन्य कारवाइयों में समिति का दृढ़ मत है कि गाय तथा उनके वंश के वध पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया जाय। समिति सरकार द्वारा हाल ही में भेजे गये उस विधेयक का समर्थन नहीं करती जिसमें गोवध पर आंशिक प्रतिबन्ध लगाया गया है।



TOTAL BAN ON COW SLAUGHTER

U.P. INQUIRY COMMITTEE'S RECOMMENDATION

LUCKNOW, Jan. 18.

THE Gosamvardhan Inquiry Committee, whose report was officially released here today, has urged a "total ban once for all" on cow slaughter throughout the State by legislation in the "interest of national economy, national health and national goodwill."

As an immediate measure, the committee, which was set up on April 4, 1953, in terms of Article 48 of the Constitution, has called for stoppage of slaughter in unauthorized premises on pain of heavy penalties.

The committee which was headed by Dr. Sita Ram, former High Commissioner for India in Pakistan, views with disfavour the Government of India Bill, recently circulated to State Governments, suggesting a partial ban.

For a total ban to be effective the committee suggests awakening of "mass consciousness in favour of the cow and her breed" by non-official agencies

CATTLE WELFARE

The committee, in its 136-page report which includes appendices, has also exhaustively dealt with the wider question of cattle welfare. Its recommendations in this respect are:

(1) Formulation of a definite agricultural policy on an all-India basis with particular emphasis on the relationship of soil, plant and animal;

(2) Establishment of a full-fledged animal nutrition section and an agrostological section;

(3) Reorientation of agricultural practices;

(4) Study of the trend of population of different classes of livestock at the time of each quinquennial census;

(5) Enactment of legislation to provide for registration and licensing of goshalas and their proper working;

(6) Regulation and supervision of cattle markets all over the State through legislation, and

(7) Enactment of legislation for control of livestock diseases, and improvement.

ENACTMENT OF LAW

The committee reject the argument that the State Government is not competent to enact such a law. It points out that several other States, such as Rajasthan, Madhya Pradesh, Bhopal, Madhyabharat, Mysore and P.E.P.S.U. had already enacted such laws. Moreover, on May 1, 1954, the Attorney-General expressed the view in the Lok Sabha that under the Constitution only States could pass such a legislation.

Disagreeing with the argument about excess of cattle in India, the committee says that even with the existing numbers production will have to be increased at least three times to meet the minimum requirement of milk. It is necessary to maitain the present cow population in the State for replacing the present bullock power. The "cry for a reduction in the number of cattle" is "an excuse for following the line of least resistance." Nothing, the committee says, will be easier than to advise the Government to adopt "an attituds of 'laissez faire' or pusillanimity."

On the problem of milk supply the committee says that the answer lies not so much in eliminating the poor strata of cattle as in husbanding the present resources. It answers the argument that there is not enough food for useless cattle and men at the same time and suggests ways and means for meeting the deficit. Once adequate nutrition is assurcd and the requisite breeding plans are adopted. the breed of heifers and bullocks will improve in the course of a few generations.

The State, the committee goes on, doubtless be faced with the problem of a limited number of old and descrepit animals. For housing them, the committee suggests, apart from provision of gosadans, Statewide propaganda so that cultivators themselves take up their maintenance. Using them for agriculture operations has also been suggested.

TOTAL BAN

The committee felt that it must intervene and must not leave such an important matter as cow salaughter "simply to the good sense or kindly feelings of the people." Total ban was nothing new. For a long time it obtained during the Moghul rule. The exigencies of the situation recently forced the Sind Government and the Governmen of West Punjab to impose a ban.

The committee in a resolution observed: "Apart from the deeply-rooted religious sentiments of a very large number of residents of U.P., it is not only desirable but also imperative in the interests of national economy, national health and national goodwill to save the cow and her progeny. The committee is strongly of the opinion that the slaughter of tha cow and her progeny should be totally banned."

Calling for as high cattle welfare priority as that of defence the committee admits that "this vast undertaking will mean considerable expenditure but thinks that it will be suicidal to allow a policy of drift to continue."

It observes: "If we can save the cow and her progency, it will indeed be a unique achievement worthy of our culture and tradition. The magnitude of the task should not deter us."

The committee has recommended the launching of a Statewide movement for increasing fodder production. The animal nutrition section should deal with extensive field of animal nutrition and effective utilization of fodder and concentrates and the agrostological section with the problem of improvement of pastures in forests as well in villages.

A gaushala development board has been recommended with a view to watching the progress of these institutions and to canalize their development on scientific lines. The committee feels that maintenance of cattle in cities should only be limited to individuals, who possess the requisite facilities for housing and rearing of such stock. Licensing of milch herds in urban area on the lines of the Bombay Cattle Control Order, 1949, has been recommended.

The committee has suggested methods for combating wild cow and stray cattle menace. Strict enforcement of the Cattle Trespass Act, registration of cattle, rounding up of stray cattle by special catching squads to be apointed by local administration are some of the several recommendations made by the committee.

For improving the breed of cattle and for increasing the produce and and ensuring the purity of dairy products the committee has recommended:

(1) Maintenance of photographic record of each generation of animals in the herd at State farms to enable the progress to be checked;

(2) Purchase of animals from key village areas and artificial insemination centres by offering better prices for bulls and guaranteed remunerative prices for pedigreed animals so as to provide incentive for breeding of better animals, subsidy to private breeders and gaushalas;

(3) Establishment of a statistical section in the Animal Husbandary Department so as to evolve methods for the determination of the quality of the series produced at farms and key villages;

(4) Subsidizing the maintenance of heifers, particularly in breeding tracts on which depends the supply of breeding sires;

(5) Remodelling of agricultural farm on the lines of mixed farms so that some animals depending on the available land and fodder resources may be maintained there for providing breeding sires;

(6) Arrangement for the castration of undesirable male stock, sterility of unproductive cows, branding of breeding bulls, control over the dedication of stud animals on religous grounds;

(7) Registration of outstanding animals in each village and restrictions on their export outside the State;

(8) Ban on the export of good milch cows;

(9) Maintenance of breeding bulls to be an important statutory duty of village panchayats and this should be incorporated in the Panchayat Raj Act;

(10) Traning of villagers in elementary veterinary aid etc.

MILK SUPPLY

Approving distribution of milk by co-operative societies the committee urges initiation of a pilot scheme in some cities like Kanpur, Banaras, Allahabad, Agra or Lucknow. City *gwalas* should be removed from municipal limits and housed in adjoining rural areas and the city should be entrusted to a co-operative concern.

To ensure purity of dairy products, the committee has recommended that vegetable ghee should be discouraged and to guard against adulteration, it should be sold in the form of oil or as a coloured product.

The committee recommended that higher post-graduate cources for training of officers should be introduced at the U.P. Veterinary College at an early date.

The report concludes with the hope that the Government and the public at large, irrespective of class, creed or community, will give due considetation to the recommendations.

श्री आचार्य नरदेव जी शास्त्री वेदतीर्थ द्वारा विधान सभा में बजट के अवसर पर दिये हुए

भाषण का सार

(२४ मार्च १९५४)

अध्यक्ष महोदय !

आज मैं प्राचीन ढंग का पण्डित शास्त्री बजट पर बोलने के लिये खड़ा हूं—आशा है सब सदस्य-गण मेरी बात को ध्यानपूर्वक सुनेंगे। हमारे धर्मशास्त्र अथवा राजशास्त्रानुसार शासनचक्र चलाने के लिये सात अंगों की आवश्यकता रहती है—

(१) राजा (२) प्रजा (३) प्रकृति अर्थात् मंत्रीमण्डल (४) सुहृद् (५) बल (६) कोष तथा (७) गुप्तचर। इन सात अंगों में बजट (आय-व्यय-पूरक अनुदान) का सम्बन्ध कोष से है। जिस राजा का कोष क्षीण है, वह दुर्बल है। जिस राजा का कोष पूर्ण, वह सबल है। इसीलिये राजा अथवा शासक को चाहिये कि वह अपना कोष बढ़ाये, पर ऐसा करते समय इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिये कि प्रजा को किसी भी व्यर्थ के कर-भार से कष्ट न पहुँचे। राजा कर-भार तभी लगा सकता है, जब उसमें कर से शतगुण देने की शक्ति हो। सूर्य किरणों द्वारा पृथ्वी का जल खेंचता है पर देता भी तो है सहस्रगुण वर्षारूपेण। हमारे धर्मशास्त्रानुसार एक मत ऐसा है कि जिसके अनुसार राजा प्रजा की आय का चतुर्थांश ले सकता है। दूसरा मत यह है कि प्रजा की आय का षष्ठांश ले सकता है। राजा को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि--

सर्वेभ्यः कोपेभ्यः प्रकृतिकोपो बलीयान्

सब कोपों से प्रकृति अर्थात् प्रजा का कोप बलवान् होता है। राजा सदा ऐसा बर्ते जिससे प्रकृति अर्थात् प्रजा का कोप उभड़ने न पावे—प्रजा सदा सन्तुष्ट रहे। बड़े हर्ष की बात है १९५४-५५ के बजट में प्रजा पर कोई नया टैक्स नहीं लगाया गया है, पर इससे पूर्व इतने कर लगे हैं उनका क्या होगा—

अध्यक्ष महोदय,

मैं एक बार एक राजा के महल में गया था, वहाँ मैंने एक ऐसा चित्र देखा, जिसके सामने खड़े होकर देखने में वह सिंह का चित्र दिखलाई पड़ता था, एक कोने से देखें तो व्याघ्र दिखलाई पड़ता था, दूसरे

कोने से देखा तो उष्ट्र (ऊँट) जान पड़ता था—इस बजट को भी वित्त मंत्री ने ऐसी कुशलता से बनाया है कि वह सामने बैठे हुए विरोधियों को और ही दिखलाई पड़ रहा है, कांग्रेस बैंचों पर बैठे हुए लोग और ही कुछ देख रहे हैं और विधान सभा के बाहर के लोग और ही कुछ समझ रहे हैं। मैं समझ रहा हूं कि स्थान भेद के कारण ही यह दृष्टि भेद हो रहा है।

विरोधी पक्ष को इस बजट में एक भी गुण नहीं दिखलाई दे रहा है। सरकारी पक्ष को इसमें एक भी दोष नहीं दिखलाई पड़ रहा है। और वह दोषों के होते हुए भी मेज पीटते ही रहते हैं। समालोचक वह है जो गुण को गुण तथा दोष को दोष निर्भयतापूर्वक कह सकता हो। गुण को दोष, और दोषों को गुण बतलाने वाला व्यक्ति यथार्थ समालोचक नहीं है।

अध्यक्ष महोदय,

इस सदन में बजट पर जिस गम्भीरता से विचार होना चाहिये, वह नहीं हो रहा है, और बहुत सी ऐसी बातें चल पड़ती हैं जो व्यर्थ ही समय का अपव्यय करती हैं, जिनमें तथ्यांश कम रहता है।

हमको इंगलैण्ड की पोलिटिकल एकॉनामी, पाश्चात्य अर्थशास्त्र की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए, किन्तु भारतीय दृष्टि से विचार करना चाहिये। कौटिलीय अर्थशास्त्र में चाणक्य ने स्पष्ट कहा है कि—

सुखस्य मूलं धर्मः
सुख का मूल धर्म है।
धर्मस्य मूलमर्थः
धर्म का मूल है अर्थ।
अर्थस्य मूलं राज्यम्
राज्यस्य मूलं विनयः
राज्य का मूल है विनय।

अर्थात् राज्य का मूल विनय अर्थात् शिक्षा है। उसकी हमारे देश में कैसी अथवा कितनी दुर्दशा है, अथवा हो रही है। न कोई ऊँचा नैतिक स्तर है न कुछ, एक ढर्रा-सा चल रहा है। मैं कहता हूं कि जब विनय अर्थात् शिक्षा राज्य का मूल अर्थात् जड़ है तब समस्त योजनाओं को छोड़ कर हम पहिले अपने लड़कों को ही ठीक मनुष्य बनाने का प्रयत्न करें तो कितना अच्छा हो—

हमारे धर्मशास्त्रानुसार राजा को व्यापार नहीं करना चाहिये। वैसे नियन्त्रण कर सकता है किन्तु राजा ही व्यापार करने लगेगा तो प्रजा के पास ही क्या रह जायगा। जब प्रजा के पास कुछ नहीं रहेगा तो राजा टैक्स क्या वसूल करेगा? सरकार ने परिवहन विभाग को अपने हाथ में लिया है, क्यों नहीं प्रजा को काम करने देते?

इसी प्रकार हमारी चिकित्सा विदेशी औषधियों के द्वारा हो रही है। और भारतवर्ष का धन पानी की तरह विलायत को जा रहा है। क्षयरोग को मिटाने के लिये बी० सी० जी० के टीके लगाये

जा रहे हैं, स्कूल के लड़कों को हैरान किया जा रहा है। इस तत्व को हम नहीं समझ रहे हैं कि—

यस्य देशस्य यो जन्मी,
तज्जं तस्यौषधं हितम्।

जो मनुष्य जिस देश का है उसके रोग भी उसी देश की औषधि से दूर हो सकते हैं। जन्मभूमि की औषधियाँ ही हितकर हो सकती हैं। हमारे गुरु स्व० श्री सत्यव्रत सामश्रमी फेलो एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल के जांघ पर एक बड़ा फोड़ा हुआ था। उसको गांव के एक कविराज ने एक विशेष पत्ती को बाँध कर ऐसा आश्चर्य दिखाया कि आठ दिन में फोड़ा अपने आप दब गया और पता भी न चला कि कहाँ गया—उस पत्ते में यह विचित्रता थी कि एक ओर से बाँधो तो फोड़ा फूटता था और दूसरी ओर से बाँधो तो फोड़ा दब कर बैठता था। ऐसे ही एक बड़े रईस को आधशीशी का रोग था, जब बड़े बड़े डॉक्टर, कविराज दूर न कर सके तो एक गांव के बूढ़े ने मामूली किसी जड़ी से दूर कर दिया था। इसलिए भारतवासियों के लिए भारतीय पद्धति की चिकित्सा ही उपयुक्त है।

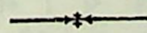
यद्यपि हमने अपने संविधान में पाश्चात्य पद्धति के प्रजातन्त्र को स्वीकार किया है तथापि अनुभव के पश्चात् भारतीय वातावरण के अनुरूप परिवर्तन करना ही पड़ेगा—

इस प्रजातन्त्र-पद्धति को सिखलाने वाले हमारे गुरु थे गौरांग महाप्रभु, ब्रिटिश सरकार। गुरु की दी हुई विद्या गुरु को ही ले बैठी और वह चला गया।

आज थोड़े ही हमने स्वराज्य की बात सीखी है। अङ्गरेजों के आने के पूर्व भी हमारे पूर्वजों का स्वराज्य था, उन्होंने भी स्वराज्य-सुख देखा था। इसलिए हमको प्राप्त स्वराज्य की सावधानता से रक्षा करनी चाहिये और आय-व्यय को देखकर, प्रजा के सुख समाधान का ध्यान रखकर वर्तना चाहिए।

अध्यक्ष महोदय,

यह भी देखने की आवश्यकता है कि प्रजा में इतना असन्तोष क्यों है ? किसान वर्ग जिसके लिये कांग्रेस ने इतना किया, इतनी सहायता पहुँचायी, उसके लिये जमींदारी-उन्मूलन भी किया, वह वर्ग भी असन्तुष्ट है, क्या कारण है ?



इलाहाबाद यूनिवर्सिटी (संशोधन) विधेयक, १९५४

नरदेव शास्त्री (जिला देहरादून)—श्रीमान् उपाध्यक्ष जी कल श्रीमान् शिक्षामन्त्री जी ने हम लोगों के सम्मुख इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विषय में अपनी स्पष्ट सम्मति दी है और इस बात के लिए मैं उनको बधाई देता हूँ कि उन्होंने अपना मत देने में जो भीतर की त्रुटियाँ हैं उनकी तरफ भी निर्भय होकर सभासदों का ध्यान दिलाया है। मैं उस प्रस्ताव का जो कि उधर के मेम्बर की ओर से आया है

कि फिर यह प्रवर समिति के पास भेजा जाय या संयुक्त प्रवर समिति के पास भेजा जाय विरोध करता हूँ और जो विधेयक सम्मुख प्रस्तुत हुआ है इसी का समर्थन करता हूँ और साथ ही २-४ सुझाव देना चाहता हूँ। यह जो विश्वविद्यालय शब्द है वह कोई आधुनिक गढ़ा हुआ शब्द है। हमारे प्राचीन साहित्य में इस प्रकार का विश्वविद्यालय शब्द इन संस्थाओं के लिये उपयुक्त नहीं होता था। पाणिनि ने जो कि संसार के एक विचित्र व्याकरण-शास्त्र के प्रेरक हुये हैं उन्होंने तक्षशिला का जिक्र किया है। तक्षशिला रावलपिंडी से कोई ४० मील के अन्तर पर है और किसी समय में इस तक्षशिला में २० हजार विद्यार्थी पढ़ते थे और २ हजार प्रोफेसर थे।

इसी प्रकार नालन्दा के पास भी एक विश्वविद्यालय था जिसमें १० हजार विद्यार्थी पढ़ते थे और १,००० प्रोफेसर थे। वहाँ छात्रों को लेने की यह प्रक्रिया थी कि जो छात्र जिस विषय का विशेष पंडित बनना चाहता था वह विश्वविद्यालय के द्वार पर जाता था। वहाँ ७-८ पंडित रहते थे जिनको कि द्वार-पंडित कहा जाता था। उन द्वार पण्डितों के पास जाकर जब वह छात्र यह कहता था कि मैं भीतर जाना चाहता हूँ और अमुक विषय का अच्छी तरह से अध्ययन करना चाहता हूँ तो वे द्वार-पण्डित लोग उसकी परीक्षा लेते थे और कुछ काल वहीं द्वार पर उसे रखकर इस बात की जाँच करते थे कि वास्तव में यह शिक्षा लेने के योग्य विद्यार्थी है कि नहीं, इसकी मेधाशक्ति इतनी है कि नहीं कि जिस विषय का यह अध्ययन करना चाहता है उसको भलीभाँति अध्ययन कर सकता है या नहीं। जब उनकी अनुमति मिल जाती थी तब वह भीतर प्रवेश करता था और उन पंडितों के पास भेजा जाता था जिनका विषय वह अध्ययन करना चाहता था। एक इस विधेयक में प्रश्न आया है कि छात्र बहुत हो गये हैं और छात्रों की संख्या कम करनी चाहिये।

उपाध्यक्ष जी मुझे यह बात अच्छी नहीं जँची क्यों कि हमारे प्राचीन साहित्य में कुलपति के लक्षण लिखे हुए हैं कि जो २० हजार छात्रों को अन्न, वस्त्र देकर विद्याध्ययन करा सके उसका नाम कुलपति है। विधेयक में कहीं भी कुलपति का लक्षण नहीं लिखा है। गवर्नर कुलपति हो सकता है या जिसको प्रोफेसर लोग चुनें वह हो सकता है, तो यह हमारे प्राचीन साहित्य में दिये हुए अर्थ से मेल नहीं खाता है। हमें तो जितनी छात्रों की संख्या बढ़े उतना ही हर्षित होना चाहिए था। अभी हमारे एक मित्र कनाडा गये थे। मैंने उनसे पूछा कि वहाँ क्या विचित्र बात देखी। तो उन्होंने एक स्कूल बतलाया, वह विश्वविद्यालय रहा होगा, जिसके विषय में उन्होंने कहा कि बहुत अद्भुत वस्तु देखी जिसमें ६ हज़ार कमरे थे और ३ हजार बराण्डे थे। मैं कल्पना ही नहीं कर सका उनके पत्र से कि ६ हजार कमरे और ३ हजार बराण्डे कितने विस्तृत भूमि प्रदेश में होने चाहियें और एक एक कमरे में अगर ३० विद्यार्थी और एक-एक अध्यापक बैठे तो कितने विद्यार्थी होने चाहियें। मेरे ख्याल से ३०-३० विद्यार्थी तो एक-एक कमरे में पढ़ते ही होंगे।

इस प्रकार यह बात मेरी समझ में नहीं आई कि छात्रों की संख्या घटाई जाय, क्यों न उसको बढ़ने दिया जाय। इतना होना चाहिये कि जो विशेष अध्ययन के लिये आयें, तो पुराने ढंग की तरह, विज्ञ प्रोफेसरों या विद्या-विशारदों को रखा जाय, और अच्छी तरह से जाँच करके विद्यार्थी को अन्दर

छोड़ दिया जाय। हमारे विश्वविद्यालय आज न ऐसी स्थिति में हैं कि बाहरी देशों से विद्यार्थी पढ़ने चले आयेंगे। लेकिन यहाँ जो तक्षशिला और नालंदा के विश्वविद्यालय थे, जिनके अब सिर्फ अवशेष रह गये हैं, उनमें सारे संसार के लोग विद्याध्ययन के लिये आते थे। इसीलिए मनु ने भी लिखा है कि ऐ संसार के लोगो, अगर तुम्हें चरित्र की शिक्षा प्राप्त करनी है तो भारतवर्ष में आओ और यहाँ आकर मनुष्य कैसे बनता है इसकी शिक्षा प्राप्त करो। एक पाश्चात्य विद्वान नोटोविच हुआ है जो तिब्बत तक आया था। उसने लिखा है कि जीसस खाइस्ट जिसके जीवन के १६ वर्षों का पता नहीं है कि कहाँ बिताया। उसको कोई पाली भाषा में ग्रन्थ मिला है, उसके आधार पर उसने लिखा है कि जीसस खाइस्ट नालन्दा में आया था। उसने वहाँ शिक्षा दीक्षा प्राप्त की। फिर उसने अपने देश में जाकर प्रचार किया। जो ईमान की सबसे बड़ी बात ईसामसीह की मानी जाती है—"सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वां सवपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥" मैं तुम्हें सारे पापों से छुड़ा दूँगा। मुझ पर दृढ़ विश्वास करो। यहीं से गई थी।

इस विधेयक में एक बात की कहीं चर्चा नहीं है। छात्रों और अध्यापकों या प्रोफेसरों या विद्या-विशारदों के बीच में सौमनस्य लाना और परस्पर द्वेष का न होना। और जैसे दुर्दश्य आज देखने को मिलते हैं, उनके निवारण का कौन सा ऐसा नियम है। कुलपति होंगे गवर्नर, उपकुलपति का चुनाव होगा। फिर यह भी विशेषता बतलाई गई कि इस विधेयक में इस बात का ध्यान रक्खा जाय कि कम से कम विश्वविद्यालय जो चुनाव के अखाड़े बन गये हैं, अध्यापकों की नई, विद्यार्थियों तक की यूनियनें बनती जा रही हैं, तो सौमनस्य लाने के लिये और शिक्षा प्रणाली में जो बुराइयाँ फैल रही हैं, कौन उपाय हैं। अच्छाइयां जो हैं वह तो अच्छी ही हैं। अगर इसमें अच्छाइयाँ न होतीं तो शिक्षा दीक्षा देने वाले डेढ़ सौ वर्ष हमारे ऊपर कैसे बैठे रहते। फिर सर्वथा अंग्रेजी शिक्षा को दोष नहीं दे सकते।

महात्मा गाँधी जिन्होंने सत्य अहिंसा का पाठ पढ़ाया वह यूनिवर्सिटी की देन है। लेकिन ऐसे लोग गिने चुने हैं। हरएक यूनिवर्सिटी को गाँधी और तिलक जैसे छात्र नहीं मिल सकते। ऐसे महापुरुषों का मिलना ऐसा ही है जैसे कि दृष्टान्त दे रहा हूँ। जिन्होंने साँपों को पकड़ा है, या जिन्होंने सांपिनी को देखा है वह यह कहते हैं कि जो सांपिनी अंडा देती है और अंडा बड़ा हो जाता है तो कुण्डली बनाती है, सांपिनी बीच में अंडा रखती है। जब अंडा फूट जाता है और साँप का जो बच्चा कुण्डली से बाहर निकल गया वह तो बच गया। और जो कुण्डली के बीच में रहा उसे सांपिनी खा जाती है।

ऐसे ही तिलक और गाँधी जैसे महापुरुष मिले हैं जो सांपिनी के बच्चों की तरह से इस कुण्डली में से निकल गये थे। इसीलिये वह भारतीय सभ्यता के रूप में सामने आये थे। इस विधेयक में यह दोष है। धीरे-धीरे वह दूर हो जायगा क्योंकि मनुष्य जब चाहता है तो वह दूर हो जाता है। शिक्षा का इतना जटिल विषय है कि इसके लिये राधाकृष्णन् ने संसार के सारे विश्वविद्यालय देख डाले। उन्होंने कितनी बड़ी बड़ी पोथियाँ लिख डालीं, कितनी-कितनी कमेटियाँ बनीं लेकिन इस बात का कोई हल न निकल सका जिसमें यह बतलाया गया होता कि छात्रों और गुरुओं में सौमनस्य कैसे हो, जो यह खाई है, त्रुटि है वह कैसे दूर हो। पहले हमारे गुरु और शिष्य एक साथ बैठते थे और एक मंत्र पढ़ते थे। यह

नहीं कि जाते ही एकदम हाजिरी ले ली गई और पढ़ाना शुरू कर दिया। जो जो विषय वह पढ़ते-पढ़ाते थे उसके लिये अलग अलग शान्तिपाठ होते थे। जैसे ग्रामर पढ़नी शुरू की तो उसके लिये अलग शान्तिपाठ होता था। सामान्य शासन पढ़ते थे तो गुरु और शिष्य एक साथ बैठते थे और उसके लिये अलग शान्तिपाठ होता थाः—

योगेन चित्तस्य पदेन वाचां,
मलं शरीरस्य च वैद्यकेन। इत्यादि।

इस नीचे के मंत्र में मुख्य बात यह है कि हम एक दूसरे से द्वेष न करें। चौथे चरण में शिष्य कहता है "हे गुरु" और गुरु कहता है "हे शिष्य"। गुरु और शिष्य दोनों के लिए एक कायदा होना चाहिये। गुरु तो चुस्त हो और शिष्य आलसी हो तो इससे काम बनेगा नहीं। गुरु तो सवेरे से शाम तक पढ़ाने के लिये तैयार हो और शिष्य कहता हो कि आज हम नहीं पढ़ेंगे, इसलिए दोनों की प्रवृत्ति एक सी होनी चाहिए।

सह नाववतु सहनौ भुनक्तु,
सहवीर्यं करवावहै
तेजस्विनावधीतमस्तु
मा विद्विषावहै।

इसका यह अर्थ है कि एक दूसरे की रक्षा करें। गुरु भी शिष्य की रक्षा करे और शिष्य भी गुरु की रक्षा करे। यह छात्र शब्द इसलिए है कि जिस तरह छत्री वर्षा से बचाती है उसी तरह से छात्र-रूपी छत्र गुरु को बचाये, उसकी रक्षा करे, उसके ऊपर कोई आक्षेप न आने दे और सब प्रकार से रक्षा करे।

विद्यार्थी तभी सफल होता है जब दोनों का परिश्रम बराबर हो। हम परिश्रम करें और तुम न करो या हम न करें तो यह ठीक नहीं होता। सफलता की कुंजी यही है कि जो पढ़ाने वाला है और जो पढ़ने वाला है उन दोनों में किसी प्रकार का द्वेष न हो। ये जितनी बातें उठती हैं उनका एक मात्र कारण यह निःशुल्क शिक्षा का न होना है। विद्यार्थी सोचता है कि वह तीस तीस रुपये फीस देता है, अतः वह अध्यापकों को नौकर समझता है और अध्यापक समझता है कि उसे ३००) रुपये मिलते हैं, हस्ताक्षर कर दो फिर चाहे बैठो या न बैठो।

इस प्रकार की प्रवृत्ति का यह परिणाम होता है कि न तो गुरु शिष्य की तरफ ध्यान देता है और न शिष्य गुरु की तरफ ध्यान देता है। एक अनाचार, अविश्वास और एक अजीब वातावरण है। इतनी बड़ी बड़ी योजनायें बनीं लेकिन भारतवर्ष के गुरु और छात्र के हृदय के बीच में जो अंधकार है वह वैसा का वैसा ही बना रहेगा तो मैं सोचता हूँ कि ये योजनायें कैसे कार्यान्वित होंगी, इनसे क्या फायदा होगा। मूल चीज मनुष्य को मनुष्य बनाने वाली शिक्षा है। मैं तो चाहता हूँ कि छात्रों की संख्या ५ हजार न होकर १० हजार हो और इसके साथ एफिलियेटेड कालेज या स्वीकृति दिये हुये कालेज का प्रतिबन्ध

न रखिये। मैं तो प्राचीन ढंग की बात कर रहा हूँ मानिये या न मानिये, हाथ आपकी तरफ ही उठेगा। तो मेरा यह सुझाव है कि जो विद्यार्थी विश्वविद्यालय के द्वार पर जाय और वहाँ जाकर परीक्षा दे और कहे कि मैं प्राचीन शास्त्र या फिलास्फी पढ़ना चाहता हूं और आप देखें कि वह योग्य है तो उसे वह शिक्षा दी जाय।

चाणक्य कौटलीय अर्थशास्त्र का बनाने वाला कितना बड़ा पंडित हो गया है। हम सब उसके सामने अपना सिर नीचा करते हैं। वह तक्षशिला का पढ़ा हुआ था। आज इस प्रकार के छात्र हमारे यहाँ से निकलते नहीं हैं, जो जाते हैं विलायत जाते हैं।

इसके लिये कोशिश नहीं होती कि इतने विश्वविद्यालय न खोल कर एक ऐसा विश्वविद्यालय हो जहाँ पढ़ने के लिये दूर-दूर के संसार के कोने कोने से विद्यार्थी आयें। संस्कृत के विषय में यह अब भी है, अन्य विषयों के बारे में चाहे जो कुछ हो। जब मैं काशी के अन्दर पढ़ता था तब वहाँ पर एक रूस का विद्वान् आया था। तो उसने मुझसे संस्कृत में पूछा कि यहाँ पर संस्कृत विषय की पुस्तकें बेचने वाली दुकानें कहाँ पर हैं। उसने मुझे बतलाया था कि उसको साहित्यदर्पण लेना है। मैंने कहा चलो मैं बतला दूँ। उसको साहित्यदर्पण की आवश्यकता थी। तो मैंने उससे पूछा कि आप इसका क्या करेंगे। उसने बतलाया कि मैं संस्कृत का प्रोफेसर हूं। और साहित्य विषय का ही प्रोफेसर हूँ। इस लिए साहित्यदर्पण पढ़ने के लिये मैं काशी आया हूं। कहने का तात्पर्य यह है कि काशी में आने पर मनुष्य एक स्वाभिमान का अनुभव करता है कि मैं पढ़ने के लिये काशी आया हूँ। उसका बड़ा भारी सम्मान समझा जाता है। इस प्रकार से मैंने यह कहा कि संस्कृत के विषय में अभी तक लोगों के हृदय में इस प्रकार की भावना है।

अब जहाँ तक एफिलियेटेड कालेजों की बात है वहां पर भी ऊपर से ही प्रभाव पड़ता है। ऊपर से जब रद्दी वस्तु आयेगी तो नीचे सब रद्दी ही होती जायेंगी, वहाँ पर अच्छी कहाँ से आयेगी। यही कारण है कि जिस प्रकार का वातावरण हम चाहते हैं वह नहीं बन पाता है। इस कारण हमारे माननीय मंत्री जी और जो शिक्षाशास्त्री हैं उनको इस पर बड़ी गम्भीरता से विचार करना चाहिये। एक बात पर मुझे यहाँ पर बड़ा आश्चर्य हुआ करता है। जब से यहाँ पर विधान सभा में आया हूं मैं प्रायः कम बोलता हूं। मैं पहले भी कहता था कि मुझ जैसा पुरातन शिक्षाशास्त्री वहाँ पर जाकर क्या करेगा। लेकिन फिर भी मैं कभी २ यहाँ पर बोल लेता हूँ।

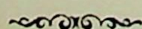
मुझे यहाँ पर सन्त तुकाराम जी का एक वाक्य स्मरण आया। उसका अर्थ यह है कि जो जो होता रहे उसको देखते जाओ। और चुप बैठ कर क्या होता है इसको देखते जाओ। मुझे यह बात बहुत अच्छी मालूम हुई किन्तु मैं तो कभी २ यहाँ पर कुछ बोल ही लेता हूँ, फिर भी देखता ही रहता हूँ। मैं प्रायः यह सोचता रहता हूँ कि यहाँ पर जो बिल आते हैं, विधेयक आते हैं तो वह चिरकाल तक रहने नहीं पाते हैं। यह उसी प्रकार से है जैसे कोई इंजीनियर मकान बनावे और फिर उसको बना कर यह समझने लगे कि नहीं इधर एक दरवाजा होना चाहिए, इधर खिड़की ठीक नहीं है, इधर नया दरवाजा होना चाहिये, और इधर एक रोशनदान होना चाहिये। ऐसी ही यहाँ पर कानून बनाने वालों की गति हो रही है।

मगर यह बात समझ में नहीं आती है। यहाँ पर जो विधेयक प्रवर समिति के पास भेजा जाय। मेरी सम्मति में कम से कम उन लोगों को चुप रहना चाहिए। यह किस प्रकार से सोचते हैं तो यह एक अजीब बात मालूम होती है। पहला वाचन जब होता है तो वह लोग बोलते हैं, दूसरे वाचन के समय भी बोलते हैं और जब तृतीय वाचन होता है तब तो एक हद ही हो जाती है। कम से कम तृतीय वाचन के समय तो मनुष्य को कुछ नियंत्रण रखना ही चाहिये।

मैंने यह २,४ बातें कहीं हैं। मुझे आशा है कि हमारे देश के शिक्षाशास्त्री इस विषयपर गम्भीरता से विचार करेंगे। हमारे प्राचीन शिक्षाशास्त्री जो होते थे उनके सामने इस प्रकार के प्रश्न रहते थे। मनु ने भी इस विषय में कहा है कि यदि कोई शिक्षाशास्त्री राजा का अन्न खा ले तो उसका तेज नष्ट हो जाता है, ब्राह्मण ही एक ऐसा होता है जो दूसरों को बल देता है और अगर उसके पास तेज नहीं होता है तो फिर अन्य प्रजाजनों में किस प्रकार से बल आयेगा। इसलिये स्वतन्त्र वातावरण में बैठ कर इस प्रकार के विषय पर चिन्तन करना चाहिये। इसी कारण कहा गया है कि 'मा विद्विषावहै'। आजकल समझ में नहीं आता कि शिक्षाशास्त्रयों का न जाने क्या उसूल है।

एक शिक्षाशास्त्री से पूछा गया कि अच्छी शिक्षा कैसे हो, तो उन्होंने बताया कि बड़ी बड़ी बिल्डिंगें हों। भला बड़ी बड़ी बिल्डिंग से पठन-पाठन का क्या सम्बन्ध है। किसी के पास बड़ी बड़ी बिल्डिंग्स हों और अध्यापक अच्छे न हों तो। किसी के पास सब साधन हों लेकिन अध्यापक और विद्यार्थी थर्ड क्लास के हों तो। यदि विद्यार्थी खड़े होकर पढ़े तो क्या हानि होगी। कहा जाता है विद्यार्थियों को मार कर नहीं पढ़ाना चाहिये, पहले विद्यार्थियों को मारते थे यह ठीक नहीं है। कोई कहता है १०-५ बेंत अलग ले जाकर मार देने चाहिये जिससे दूसरे विद्यार्थियों पर उसका असर न पड़े। इस प्रकार के अनेक नियम बनते हैं लेकिन सौमनस्य पढ़ाने का कोई प्रबन्ध नहीं किया जा रहा है। मेरा विचार है कि चाहे जो कोई प्रबन्ध क्यों न हों लेकिन अध्यापक और विद्यार्थी में सौमनस्य नहीं होता तो अध्यापन का कार्य ठीक प्रकार से चल नहीं सकता।

एक और बात है। आज कल लोगों को धर्म के नाम पर अत्यन्त चिढ़ हो गई है। जब आप सत्य को मानते हैं तो मैं पूछना चाहता हूँ कि क्या आप धर्म को नहीं मानते। इस विषय पर एक लोकोक्ति कहना चाहता हूँ। नगर की सीमाओं के बाहर प्रभात कुटीर (चुङ्गीघर) म्युनिसिपैल्टिज़ की होती है जो बाहर से नगर में आने वाली सड़कों के किनारे होती हैं। यहीं से मोटर, गाड़ियां आदि जाती हैं और यहाँ पर उनसे टैक्स लिया जाता है। एक किसान बाहर से ५ बजे सायं गाड़ी भर कर चला और वह इस प्रभात कुटीर पर आया। उसने सोचा किसी प्रकार से इस टैक्स से बचना चाहिये। यद्यपि उसे पता न था कि किसी भी प्रकार उससे नहीं बच सकता क्योंकि जो सड़क जाती है उसके प्रत्येक कोने पर वह कुटी पड़ती थी इसलिए वह सरक्यूलर रोड़ पर चल पड़ा। उसने अपनी गाड़ी को दूसरी ओर को मोड़ दिया। रात भर वह गाड़ी चलती रही और अन्त में उसने देखा कि वही कुटी उसके सामने थी। इसी प्रकार से हमारे शिक्षा-शास्त्री हैं जो कि धर्म के नाम पर डरते रहते हैं।



उत्तरप्रदेश विधानसभा की कार्य-सूची

[उत्तरप्रदेश विभाजन सम्बन्धी हमारा संशोधन]

मंगलवार, दिनांक २२ नवम्बर, सन् १९५५ ई०, समय १२ बजे दिन

नेता सदन निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुत करेंगे—

"यह सदन राज्य पुनस्संगठन आयोग की सिफारिशों से सामान्यतया सहमत है और इस बात पर जोर देता है कि उत्तरप्रदेश राज्य को, केवल ऐसे सीमा सम्बन्धी छोटे-मोटे सन्धान (adjustments) को छोड़ कर जो आवश्यक हों, वर्तमान रूप में बना रहना चाहिये।

क्रम-संख्या प्रस्तावक का नाम	संशोधन का रूप
१—श्री नरदेवशास्त्री	प्रस्ताव के स्थान पर निम्नलिखित रख दिया जाय— "यह सदन राज्य पुनस्संगठन की सिफारिशों से जहां तक पश्चिमी जिलों का सम्बन्ध है असहमत है और श्री के० एम० पणिक्कर के नोट का स्वागत करता है।"
२—श्री श्रीचन्द्र	प्रस्ताव के स्थान पर निम्नलिखित रख दिया जाय। "यह सदन राज्य पुनस्संगठन आयोग के माननीय श्री के० एम० पणिक्कर के नोट से पूर्णतया सहमत है और इस बात पर आग्रह करता है कि श्री के० एम० पणिक्कर के प्रस्तावित नये प्रदेश में देहरादून, टेहरी-गढ़वाल और गढ़वाल उत्तरप्रदेश से, महेन्द्रगढ़ पेप्सू से अम्बाला डिवीजन पंजाब से, अलवर, भरतपुर धौलपुर राजस्थान से, सम्मिलित एक अलग नया प्रदेश जिसकी भाषा, रहन-सहन, रस्म-रिवाज और संस्कृति एक सी है, बना दिया जाय।"
३—श्री दीनदयालु शास्त्री	प्रस्ताव के स्थान पर निम्नलिखित रख दिया जाय— "यह सदन राज्य पुनस्संगठन आयोग की सिफारिशों से सहमत है पर इस बात पर जोर देता है कि श्रीयुत पणिक्कर के सुझाओं में आवश्यक परिवर्तन और परिवर्द्धन करके इस प्रदेश के पश्चिमी जिलों में एक पृथक् और नया राज्य कायम किया जाय। इस नये राज्य में दिल्ली, पंजाब, पटियाला संघ, राजस्थान और मध्यभारत के समीपवर्ती किंवा हिन्दी भाषा-भाषी भाग भी शामिल हों।

क्रम-संख्या	प्रस्तावक का नाम	संशोधन का रूप
४—	श्री वीरेन्द्रशाह	प्रस्ताव के स्थान पर निम्नलिखित रख दिया जाय— "यह सदन राज्य पुनस्संगठन आयोग की सिफारिशों से सामान्यतया सहमत है, पर साथ ही भौगोलिक तथा अन्य विशिष्ट आधारों पर वर्तमान विन्ध्य प्रदेश तथा वर्तमान मध्यभारत के मोरेना, भिंड, शिवपुरी व ग्वालियर जिले उत्तर प्रदेश राज्य में मिलाये जाने पर जोर देना आवश्यक समझता है।"
५—	श्री झारखंडे राय	प्रस्ताव की पंक्ति १ में शब्द "की" के बाद शब्द "बहुतसी" जोड़ दिया जाय।
६—	श्री झारखंडे राय	प्रस्ताव की पंक्ति २ के प्रथम शब्द "है" के बाद पूर्ण विराम रख दिया जाय तथा उसके बाद के सभी शब्द निकाल कर उसके स्थान पर शब्द "परन्तु इस बात पर जोर देता है कि उत्तर प्रदेश राज्य का तथा भारत संघ के अन्य हिन्दी भाषा भाषी प्रदेशों–बिहार, बिन्ध्य प्रदेश, मध्य प्रदेश (हिन्दी), मध्यभारत, दिल्ली पूर्वी–पंजाब का हिन्दी भाषी भाग-का अधिक वैज्ञानिक, उप-भाषावार, एवं सुसंगत फिर से बटवारा होना चाहिये और इस प्रकार निर्मित देशों में एक प्रदेश (विहार और उत्तर प्रदेश के भोजपुरी जिले को मिलाकर) भोजपुर-प्रदेश अवश्य होना चाहिये।
७—	श्री रामभजन शर्मा	प्रस्ताव की पंक्ति ३ शब्द "को" के बाद सब शब्द निकल कर उसके स्थान पर शब्द जैसा कि वह वर्तमान समय में है कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार वैसा ही रहना चाहिये।" रख दिये जायँ।
८—	श्री व्रजभूषणमिश्र	प्रस्ताव के अन्त में निम्नलिखित वाक्य बढ़ा दिया जाय— "साथ ही सदन सिफारिश करता है कि उत्तर प्रदेश के खनिज सम्पत्ति सम्बन्धी अभाव को दूर करने के अभिप्राय से विन्ध्य प्रदेश का पूर्वी भाग जो मिर्जापुर तथा इलाहाबाद जिले एवं बुन्देलखण्ड से संलग्न है, इस प्रदेश से मिला दिये जायं।"

आज्ञा से,

लखनऊ

राधेरमण सक्सेना,

२२ नवम्बर, १६५५।

सचिव विधान सभा,

उत्तरप्रदेश

उत्तरप्रदेश विधान मंडल कांग्रेस दल ८ कौंसिल हाऊस,

लखनऊ, २५-११-१९५५

व्हिप

कांग्रेस पार्टी के सभी सदस्यों की सेवा में ।

प्रिय बन्धु,

आज चार दिन से राज्य पुनरसंगठन आयोग की रिपोर्ट पर बहस हो रही है । लगभग सभी सदस्यों ने अपना मत प्रकट कर दिया है । कांग्रेस दल के सभी सदस्यों को अपनी राय प्रकट करने की पूरी स्वतन्त्रता थी ।

जो प्रस्ताव माननीय मुख्य मन्त्री जी ने पेश किया है, वह कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटी की राय से बना है। इस कारण कांग्रेस दल के किसी सदस्य का इसके विरुद्ध वोट करना अनुशासन के विरुद्ध होगा ।

आज शाम को सदन में इस पर राय ली जायगी । इस कारण प्रत्येक सदस्य को रह कर उस पर राय देनी है । प्रत्येक सदस्य को प्रस्ताव के पक्ष में वोट देना है, किन्तु यदि कोई सदस्य किसी कारण से पक्ष में वोट देना न चाहे तो वह तटस्थ रह सकता है ।

आपका साथी,

मंगला प्रसाद

मुख्य सचेतक

[हम १५-१६ व्यक्ति तटस्थ ही रहे-बहुत से सदस्य हाथ उठाने के डर से आये ही नहीं]

नरदेवशास्त्री

उत्तरप्रदेश विभाजन सम्बन्धी भाषण

[२२ नवम्बर १९५५]

श्री नरदेवशास्त्री (जिला देहरादून)—अध्यक्ष महोदय मैं उस समय जबकि मैंने संशोधन वापस लिया था तो यह कह रहा था कि विचित्र बात यह है कि प्रान्तीय सभाओं में वादविवाद होने के बाद यहां से जो निर्णय जाते हैं उन सब के पहुँचने के पश्चात् ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी को सोचकर कोई निर्णय करना चाहिये था । किन्तु बात ऐसी ही हुई कि पहले उन्होंने निर्णय ले लिया फिर निश्चय किया कि अमुक तारीख तक सब विधान सभायें, विधान परिषद् या राज्य परिषद् अपना निर्णय देंगी । मैं अनुशासन में रहते हुए भी और इस प्रजातन्त्र में आने पर भी, अध्यक्ष महोदय—मैं इस बात को कभी नहीं मान सकता हूँ कि जिधर ज्यादा हाथ उठते हैं उधर ही सत्य होता है । लेकिन यह बात और है

कि मैं अनुशासन में होने के कारण चुप हो जाऊँ, मौन धारण करलूँ। लेकिन यह मान नहीं सकता कि जिधर कम हाथ उठते हैं उधर असत्य ही होता है।

मैं विचित्र परिस्थिति में हूँ और अंग्रेजी के पढ़ने के पश्चात् शास्त्रों का अध्ययन कर चुका हूँ, इसलिए मैं जब कभी भी बोलने के लिये खड़ा होता हूँ तो दो विचारधारायें मेरे सामने आ जाती हैं कि सभा में जाकर मनुष्य को सत्य बोलना चाहिये या मौन रह जाना चाहिए। उस समय यह सोचना पड़ता है कि प्रिय सत्य बोलूं या फिर मौन ही रहूँ। ऐसे समय में शास्त्रकारों के दो मत हैं कि "मौनात्सत्यं विशिष्यते" अगर तुम में हिम्मत है तो मौन को छोड़ो और सत्य बोलो। एक मत यह भी है कि "सत्यात् मौनं विशिष्यते" यानी यदि किसी में ऐसी बात हो कि दुर्बल हो या भय हो, दबता हो और सत्य कहने की शक्ति न रखता हो तो मौन धारण करले और तीसरा यह भी है कि सभा में से उठकर चला जाय तो इसमें वह हर विपत्ति से भी बच जायगा। विदुर ने कहा है कि "सकारणं व्यपदेशं तु कुर्यात्" यदि तुम में हिम्मत नहीं है तो बहाना बनाकर चले जाओ। मैं आज सत्य का आश्रय लेने वाला हूँ और कुछ कहता हूँ।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि यह जो विभाजन का प्रश्न है यह आज का नहीं है बल्कि जब ब्रिटिश गवर्नमेंट यहाँ थी तब का है। मेरा सम्बन्ध देहरादून से १६०७ से है। १६०५ में बंगाल पार्टिशन का प्रश्न सामने आया और कहा गया कि यह एक सैटल्ड फैक्ट है लेकिन पॉलिटिक्स में कोई सैटल्ड फैक्ट नहीं हुआ करता है। फिर भी दिल्ली राजधानी बनी और बंगाल प्रान्त जैसा था वैसा नहीं रहा। पॉलिटिक्स में सैटल्ड फैक्ट नहीं होता है। शासकों की नीति भी भिन्न प्रकार की होती है, जैसे एक गणिका की होती है। "वेश्याङ्गनेव नृपनतिरनेकरूपा" जैसे गणिका कभी नर्म कभी गर्म, कभी रुष्ट और कभी प्रिय होती है उसी प्रकार शासन की दशा है। इसलिए राजनीति की बातों पर भरोसा रखना बड़ी कठिन बात है। क्योंकि शासक वर्ग इसमें सत्य की और धर्म की भी परवाह नहीं करते हैं। इसलिये कहा है कि "न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः, न ते वृद्धा ये न वदन्ति धर्मम्" कहने का आशय यह है कि वह सभा सभा नहीं है जहाँ पर कोई वृद्ध न हो, यथार्थ बात का कहना जो ठीक न समझता हो वह धर्म नहीं है और वह सत्य नहीं है जो छल से भरा हुआ हो। इसलिए मैं राजनीति की बात को छोड़कर यह कहना चाहता हूँ कि हम सोचा करते थे और यह अफवाह थी कि देहरादून वगैरह में कि यह जो नई दिल्ली की राजधानी बनी है, यह एक आगे चलकर प्रान्त बन जायगी जिसमें अम्बाला, देहरादून और मेरठ डिवीजन वगैरह इसके अधीन रहेंगे।

इसलिए यह कहना कि आज ही कोई विभाजन का बम्बडर आ गया यह बात नहीं है। यह न मालूम अंग्रेजों ने क्यों नहीं बनाया और यह क्यों नहीं हुआ। फिर गलती तो अपने आप करोगे और दोष दूसरों को दोगे? गलती अपने आप करेंगे और दूसरों को देशद्रोही कहेंगे? कमीशन को मुकर्रर करने के लिये कौनसा प्रार्थना-पत्र आ गया था? आंध्र के लोगों ने जब आन्दोलन किया तो कैसे आपने आंध्र को १०,१५ दिन के अन्दर ही रामलू की मृत्यु के उपरान्त एक प्रदेश मान लिया? यह किसकी गलती है? जब ब्रिटिशों का शासन था तो आपने कहा था कि जब हमारा स्वराज्य हो

जायगा तो हम प्रान्तीय भाषाओं के आधार पर प्रान्त बनायेंगे । फिर आपने आन्ध्र को पृथक् बनाकर लोगों में इस प्रकार की आकांक्षा उत्पन्न की कि इस प्रकार होने से पृथक् राज्य बनेंगे। मैंने रिपोट को पूरा पूरा पढ़ा है । उसमें मैं कमीशन वालों की नियत पर कोई बात नहीं कहूँगा और इस प्रकार की कोई बात कहना सभ्यता के विरुद्ध भी बात है।

जैसे कि हमारे एक भाई ने कहा कि श्री पणिक्कर ने किसी प्रान्त के पेट में छुरा भोंक दिया, शायद राष्ट्र के पेट में छुरा भोंकने की बात कही थी। तो मैं समझता हूं कि ऐसी बात किसी विधान सभा के सदस्य के कहने लायक नहीं है। फिर हम यह देखते हैं कि कमीशन ने ऐसा कोई मापदण्ड नहीं रखा कि जिसके आधार पर यह प्रान्त बनाये गये हों। या तो यह होता कि हम चार करोड़ की आबादी का प्रान्त बनायेंगे। ऐसा होने से गवर्नर भी घट जाते और प्रान्तीय सभायें भी घट जातीं। लेकिन ऐसा कोई मापदण्ड निश्चित नहीं किया गया और पणिक्कर जी की जो बात है उसमें तो उन्हें जैसा भान हुआ वैसा उन्होंने कह दिया ।

मैं यह बताना चाहता हूँ कि मैंने विभाजन का पक्ष क्यों लिया। मैं दोनों तरफ के इतिहास को जानता हूँ। इतिहास में कभी ऐसा नहीं हुआ है कि किसी एक देश की सीमायें एक सी रही हों, कम ज्यादा न हुई हों। मुझे आश्चर्य होता है जब आप विभाजन के नाम से डरते हैं। तुमको ऋण चाहिये; धन चाहिये और विभाजन से डरते हो, तो कैसे होगा ? घर में विभाजन न हो तो सब नष्ट हो जायेंगे। विभाजन तो अच्छी चीज है, उसके खिलाफ कैसे जा सकते हो ? अधिकार बाँटते हो तो विभाजन करते हो, घर में प्रबन्ध करते हो तो विभाजन करते हो, विभाजन से कैसे डरते हो ? इसलिये इस प्रान्त की यह कोई नई बात नहीं है। यह १६ जिलों की बात है। मैंने इसलिए हस्ताक्षर किये कि मैं जिस जिले का रहने वाला हूँ वहां ८० फीसदी गढ़वाली रहते हैं और जब पणिक्कर जी का डेपुटेशन वहाँ आया तो मैं उनके साथ था। मेरी राय तो १६ जिलों की थी, लेकिन वहाँ के गढ़वाली जो थे वे चाहते थे कि हिमाचल प्रदेश से हमारे रीति-रिवाज मिलते हैं तो हमको उसके साथ मिलाया जाय। श्री हृदयनाथ कुंजरू ने उनसे कहा कि अगर तुम इस बात से असन्तुष्ट हो कि तुम्हारी ओर यू० पी० सरकार अधिक ध्यान नहीं देती और तुम्हारे सुधार के लिये पूरा प्रयत्न नहीं करती तो हम यह सिफारिश कर देंगे कि यू० पी० सरकार पहाड़ी प्रदेशों की ओर पूरा ध्यान दे । तो इस बात पर गढ़वालियों ने कहा कि हम यू० पी० में रहना ही नहीं चाहते।

मैं देहरादून का प्रतिनिधि हूं और उत्तराखण्ड से मेरा सम्बन्ध है, गढ़वाल से भी मेरा सम्बन्ध है, तो क्या कांग्रेस सरकार का सदस्य होने से मुझको वह नहीं बोलना चाहिये कि जो वहाँ के लोग क्या चाहते हैं ? वहाँ के लोगों की यह राय थी कि अगर हिमाचल प्रदेश बनाकर देहरादून को राजधानी बना दिया जाय तो ठीक होगा। तो प्रजा की यह राय होने से मुझको यह लिखना पड़ा कि इसके विषय में वहाँ विभाजन होना चाहिये। मैंने संस्कृत पढ़ी है। मनुस्मृति में लिखा है कि आर्यावर्त जो था वह उत्तर में हिमाचल, दक्षिण में विन्ध्य, पूर्व और पश्चिम में समुद्र जहाँ तक था। लेकिन आर्यावर्त कभी घट गया और कभी बढ़ गया। महाभाष्य में आया है कि अरवली से लेकर बिहार के कालकवन तक यह देश

आर्यावर्त बन गया था। वहाँ तक हमारा यह आर्यावर्त फैला हुआ था, इतना बड़ा था। बहुत से देशों का तो आज नक्शे में पता नहीं लगता है।

इसलिये पॉलिटिक्स में यह कहना कि इस प्रकार से कोई कमी या ज्यादती नहीं हो सकती यह मेरी समझ में नहीं आता। जो लोग कहते हैं और नेता लोग उपदेश करते हैं कि हमारे देश के तीन शत्रु हैं। प्रान्तीयया, साम्प्रदायिकता, और जातीयता। जब हमारी यू० पी० के नेता लोग बोलते हैं तो उसमें मुझे प्रान्तीयता की गन्ध आती है। क्योंकि वे यह नहीं कहते कि हम भी उसी के साथ हैं। महाराष्ट्र के बारे में एक भी यू० पी० वाले ने यह नहीं कहा कि बम्बई को महाराष्ट्र से क्यों अलग किया जाता है। किसी ने यह बात नहीं कही है। सब अपने अपने कायदे की बात सोचते हैं। कोई नहीं कहता है कि ऐसा नहीं होना चाहिये। जब अपना मामला आता है तो कहा जाता है कि अन्याय हो रहा है। हमने १०, १५ आदमियों ने विभाजन की बात कही तो हरद्वार में एक शिविर लगाया गया और कॉपियाँ बाँटी गईं कि उत्तर-प्रदेश अविभाज्य है।

क्या यह बहुत बड़ी बगावत है, जिससे उत्तर-प्रदेश नष्ट भ्रष्ट हो जायगा। हमने अपनी राय को बतलाया जो कि शासन के असन्तोष से वहाँ पर प्रकट हुई, उसी को सरकार तक पहुँचाया। सत्य प्रकट करने के कारण हमको देशद्रोही कहा गया। क्या आपने हमसे ज्यादा संगठन किया है? क्या आपने हमसे ज्यादा जनता की सेवा की है और देश के लिये कष्ट उठाया है? जनता की भावना को देखकर हमने भी उस आवाज़ को ऊपर तक पहुँचाया तो फिर कौन सा ऐसा विरोध का काम किया। मैं पचास पचपन वर्ष से उत्तर-प्रदेश में रहा इसलिए यहीं का नागरिक हूं। मैं शोलापुर के पास एक गाँव का रहने वाला हूँ। लेकिन महाराष्ट्र के बारे में मैंने एक भी शब्द नहीं कहा, क्योंकि प्रान्तीयता नहीं लाना चाहता था।

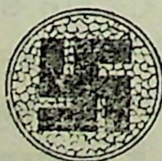
श्री अध्यक्ष—आपका समय समाप्त हो रहा है।

श्री नरदेवशास्त्री—मैं तो अभी १०-५ वर्ष और जिन्दा रहूँगा।

श्री अध्यक्ष—मेरा मतलब आपके बोलने के समय से है। वैसे आप १०, २० वर्ष, भगवान् करे, जीवित रहें।

श्री नरदेवशास्त्री—जो संशोधन मेरे नाम पर था उसकी वजह से मुझको १०, १५ मिनट और ज्यादा मिलने चाहियें। इतनी रियायत तो हमको मिलनी ही चाहिए।

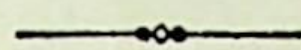
श्री अध्यक्ष—आपका समय समाप्त हो गया।



वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय

इस सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश की विधानसभा में वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय सम्बन्धी जो विधेयक उपस्थित हुआ उस पर बोलते हुये १६५६ में

श्री नरदेवशास्त्री वेदतीर्थ ने जो भाषण दिया उसका सारांश



आजकल विश्वविद्यालय शब्द नवीन युग के अनुरूप नवीन अर्थ रखता है। प्राचीन समय के विद्यापीठ व्यापक अर्थ रखते थे, और धर्म और संस्कृति के आधार पर चलते रहते थे। आजकल के विश्वविद्यालय स्वधर्मनिरपेक्ष हैं और संस्कृति के आधार पर व्यवस्थित नहीं हैं। मैं वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय की पुष्टि करने के लिये खड़ा हूँ और शिक्षामन्त्री को इस विधेयक पर बधाई देता हूँ। मैंने तक्षशिला विद्यापीठ की वह भूमि देखी है जो कि कभी १४ मील में फैला हुआ था और जहां कभी २०००० छात्र अध्ययन करते रहते थे, और २००० प्राध्यापक थे। जहां कभी चाणाक्य और चन्द्रगुप्त ने विद्याध्ययन किया था। विद्यापीठ की बड़ी ख्याति थी। इसी प्रकार नालन्दा में भी जहां दश सहस्र छात्र पढ़ते थे और एक सहस्र अध्यापक थे।

नोटोविच कहता है कि ईसामसीह ने इसी नालन्दा में कुछ काल निवास किया था, शिक्षा प्राप्त की थी। वर्तमान संस्कृत कालेज बनारस के पीछे भी १७५ वर्ष का इतिहास है। वैसे तो काशी सदा से भारतवर्ष का संस्कृतविद्या का केन्द्र रहा है, जहां संसार भर के विद्याप्रेमी आते रहे। जहां बैलन्टाइन विन्सेन्ट जैसे जर्मनदेशीय प्रिन्सिपल और महामहोपाध्याय गंगाधर शास्त्री, दामोदर शास्त्री, हरनाथशास्त्री और बालकृष्ण शास्त्री जैसे प्रकाण्ड विद्यागुरु विद्यादान करते थे। जिस कालेज के "पण्डित" नामक संस्कृत मासिक पत्र की बड़ी ख्याति थी। पाश्चात्य संस्कृत के विद्वान् भी उस पत्रिका से स्फूर्ति पाते रहे। ऐसा वह संस्कृत कालेज अब विश्वविद्यालय बनने जारहा है। मैं जब काशी में अध्ययन करता था (१६०२) तब यहां सत्ताईस सहस्र छात्र विद्याध्ययन करते थे। इनके लिये सैकड़ों अन्न-क्षेत्रों का प्रबन्ध था और सभी निःशुल्क शिक्षा प्राप्त करते थे। इन्हीं छात्रों में से प्रतिवर्ष व्याकरण, साहित्य, षड्दर्शन, पुराण, धर्मशास्त्र, मीमांसा, वेद आदि विषयों के सैकड़ों विद्वान् बन जाते थे और भारत भर में फैलकर विद्यादान करते थे।

आज कल समय की गति से उस समय की वे अवस्थाएँ और व्यवस्थाएँ नहीं रहीं। जिन संस्कृत के विद्वानों और परम्परा ने यवनकाल और गौराङ्ग महाप्रभुओं के काल में भी, केवल कर्तव्य-बुद्धि से संस्कृतविद्या की रक्षा की, वे ही इस स्वराज्य काल में हीन दशा को प्राप्त हुए और पेट का जटिल प्रश्न सम्मुख आया। विद्या और धर्म में ह्रास होने लगा। अब तो वाराणसी में क्या सर्वत्र

संस्कृति का मूल संस्कृत विद्या का ह्रास हो गया है। परम्परायें ढीली पड़ रही हैं। ऐसे समय में वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय विधेयक, संस्कृत विद्या की रक्षा और दिक्षा में सहायक होगा। इन साढ़े चार वर्षों में यही एक विधेयक आया है जो मेरे काम का है। इस विधेयक में दो बातें विशेष हैं। एक तो समस्त भारतीय प्रदेशों के छात्र इस विश्वविद्यालय की परीक्षा दे सकते हैं।

दूसरी बात यह कि विदेशी छात्र भी इस विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में सम्मिलित हो सकेंगे। इस प्रकार काशी की महत्ता अक्षुण्ण बनी रहेगी। काशी केवल उत्तरप्रदेश का ही संस्कृत का केन्द्र न रहकर, संसार भर का केन्द्र बना रहेगा।

यह सत्य है कि यह विधेयक प्रान्त के अन्य आधुनिक विश्वविद्यालयों के विधेयकों के ढंग का बन गया है। अच्छा होता कि यह विधेयक संस्कृत के ढंग का, अपने अनोखे ढंग का बनाया गया होता, किन्तु हम भी क्या करें वर्तमान समय की गतिविधि, अवस्था-व्यवस्था, राज्य-शासन को देखते हुए—

"सर्वनाशे समुत्पन्ने
अर्द्धं त्यजति पण्डितः"

इस न्याय से इस वर्तमान संस्कृत विश्वविद्यालय के ढांचे को स्वीकृत कर रहे हैं। आशा रखते हैं आगे जाकर ढांचा ठीक हो सकेगा—

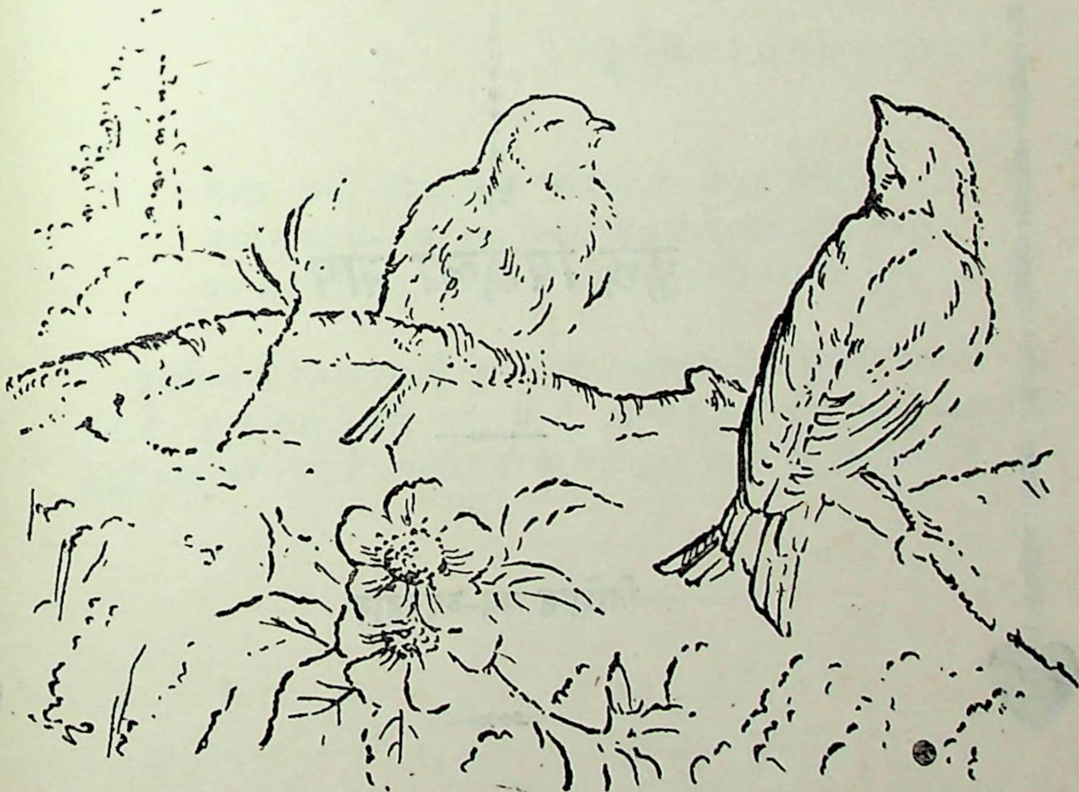
भारत में ज्ञानविक्रय सर्वथा निंद्य समझा जाता रहा है, इसलिये यहाँ की विद्याध्ययन-परम्परा सदा सर्वदा निःशुल्क ही रही है। आशा है यह संस्कृत विश्वविद्यालय इस विशेषता की रक्षा करेगा और विश्वविद्यालय के छात्र निःशुल्क शिक्षा प्राप्त करते रहेंगे।

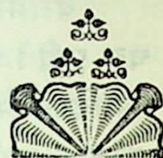
लोग कहते हैं कि संस्कृत विद्या मर चुकी, पर यह उनका मिथ्या भ्रम है। संस्कृत विद्या अपने वैदिक तथा अन्य प्राचीन साहित्य, दर्शन, पुराण इतिहास आदि के कारण अमर है और इस स्वराज्य-काल में वह पुनः बल पकड़ जायगी क्योंकि राष्ट्रभाषा हिन्दी संस्कृत के बिना सच्चे अर्थों में राष्ट्रभाषा न बन सकती है और न पनप सकती है।

यदि भारतवर्ष कोरे पाश्चात्य ढंग के स्वराज्य का अनुभव करता रहेगा और अपनी संस्कृति का स्रोत संस्कृत को खो बैठेगा तो भारतवर्ष अपने स्वरूप को ही खो बैठेगा। कोई सत्ता उसको बचा न सकेगी। इसलिये इस संस्कृत विश्वविद्यालय के विधेयक का मैं समर्थन करता हूँ। हमारे शिक्षा-मंत्री ने प्रवर समिति में सभी प्रकार के संस्कृतप्रेमी सदस्य और विद्वान् शास्त्रियों को रक्खा था और प्रायः सर्वसम्मति से ही यह विधेयक तैयार हुआ है और इस विधेयक के सम्बन्ध में संशोधन भी बहुत थोड़े और साधारण से आये हैं। मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूँ। जब भारत में हमारा ही सब कुछ था तब भारत में बड़े बड़े विद्यापीठ थे ही किन्तु सहस्रों गुरुगृहों में भी विद्याध्ययन-परम्परा चलती रहती थी, जहां से छात्र तैयार होकर बड़े-बड़े विद्यापीठों में जाते थे और उसकी शोभा को द्विगुण करते थे।

वर्तमान समय में सोमनाथ के उद्धार के साथ ही संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना की बात चल पड़ी। अब तो कुरुक्षेत्र में भी एक संस्कृत विश्वविद्यालय बनने जा रहा है। पंजाब सरकार भी इस विषय में चेत गई है। दिल्ली भी एक संस्कृत विश्वविद्यालय चलाने की चिन्ता में है। इस प्रकार भारत के सभी प्रदेशों में संस्कृत विश्वविद्यालय बनेंगे, तो संस्कृत विद्या पुनः जागृत होकर अपना चमत्कार दिखला सकेगी। इस संस्कृत विश्वविद्यालय में नये युग के अनुरूप, नये ज्ञान-विज्ञान का चञ्चूप्रवेश भले ही हो जाय किन्तु अपनी प्राचीनता की विशेषताओं की रक्षा और दिक्षा का ध्यान भले रखना ही होगा। केवल संस्कृत के उपाधिधारी छात्रों की संख्या बढ़ाना मात्र इसका उद्देश्य न होकर इसका उद्देश्य संस्कृत विद्या की प्राचीन रीति-नीति, परम्परा की रक्षा करना भी होगा।

उत्तरप्रदेश में लगभग १७०० संस्कृत पाठशालायें हैं पर सहायता के अभाव में मुरझा गई हैं। इन १७०० संस्कृत पाठशालाओं में से केवल १०० विद्यालय आदर्श माने गये हैं। उन्हीं को सहायता मिलती है। सरकार को इन मुमूर्षु विद्यालयों और पाठशालाओं की मुक्तहस्त से सहायता करनी पड़ेगी, तभी यह संस्कृत-विश्वविद्यालय फलेगा-फूलेगा।



आत्म-कथा



कुछ पिछला शेष

विशिष्ट पत्र-व्यवहार




❀ सर्वं कालस्य चेष्टितम् ❀

—बलि

सुख-दुःख काल की मुट्ठी में

युनक्ति कालः क्वचिदिष्टवस्तुना,
क्वचित्त्वरिष्टेन च नीचवस्तुना।
तथैव संयोज्य वियोजयत्यसौ,
सुखासुखे कालकृते प्रवेद्म्यतः।

(शङ्करदिग्विजय में अभिनवगुप्ताचार्य)

काल कभी इष्ट, प्रिय वस्तुओं से मिला देता है—
कभी नीचों से मिला देता है तथा संकटों में डाल देता है—
इस प्रकार मिलता भी रहता है और विछोह भी करा देता है—

इसलिये मैं समझ रहा हूँ कि सुख-दुःख काल के किए हुए हैं, काल के लाये हुए हैं—सुख-दुःख उसकी मुट्ठी में हैं, वह कभी मुट्ठी खोल देता है और कभी मुट्ठी बन्द कर लेता है, उसकी मुट्ठी का पता नहीं चलता कि उसमें क्या है।

❀ ॐ तत्सत् ❀

कुछ पिछला शेष

ज्वालापुर महाविद्यालय-जयन्ती

[वैशाख १९९२]

नेता और प्रेमियों के सन्देश

(संयोजक—श्री नरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ द्वारा प्राप्त)

श्री महात्मा गांधी जी का आशीर्वाद

महाविद्यालय की जयन्ती सुख-शान्ति से उत्तीर्ण हो और नित्य उसकी उन्नति बनी रहे।

वर्धा ७-३-३५ —मो० क० गांधी

श्री देश—भक्त जमनालाल बजाज़

जयन्ती की बात सुन कर प्रसन्नता हुई। मेरी परमात्मा से प्रार्थना है कि गुरुकुल महाविद्यालय अपने आदर्श पर क़ायम रहते हुए पूर्ण उन्नति करे।

वर्धा १२-३-३५ —बजाज

श्री बाबू श्रीप्रकाश जी प्रधान संयुक्तप्रान्तीय कांग्रेस कमेटी

मेरी तरफ से शुभ-कामना है कि ज्वालापुर महाविद्यालय दिन-प्रतिदिन उन्नति करता जाय और जिस कार्य के लिये उसमें इतने कर्णधार इतने आत्म-त्याग के साथ कटिबद्ध हैं उसमें वे सदा सफलता पाते रहें। आपने मुझे इस शुभ अवसर पर स्मरण किया इसके लिये कृतज्ञ हूँ।

काशी १५-३-३५ —श्रीप्रकाश

श्री पण्डित लक्ष्मीधर वाजपेयी, दारागंज, प्रयाग

महाविद्यालय ज्वालापुर ने आर्यजाति में विद्या और धर्म का जो प्रचार किया है, उसका प्रभाव बहुत गहरा और बहुदूर व्यापी है। इस विद्यालय ने अनेकानेक उद्भट विद्वान् और कार्यदक्ष पुरुष उत्पन्न करके देश का असाधारण उपकार किया है। मैं सदैव से इस विद्यालय का भक्त और एक छोटा-

सा शुभचिंतक रहा हूँ और इस अवसर पर भी परमकृपालु विश्व भगवान् से प्राथना करता हूँ कि वह इस संस्था को शक्तिशाली बनावे, जिससे उत्तरोत्तर यह संस्था और भी वेग के साथ देश और समाज की सेवा कर सके।

८-३-३५ —लक्ष्मीधर वाजपेयी

श्री साहब जी आनन्द स्वरूप, दयालबाग—आगरा

आशा है कि यह उत्सव अपने उद्देश्य में सफल होगा और हमारी शुभ-कामना है कि आप का महाविद्यालय पूर्ववत् देश और जाति की सेवा में तत्पर रहे। यही हमारा इस अवसर पर संक्षिप्त हार्दिक सन्देश है।

१६-३-३५ —आनन्दस्वरूप

श्री पण्डित तारादत्त गैरोला एम० ए०, पौड़ी—गढ़वाल

वर्तमान स्थिति को देख कर मेरा यह विश्वास है कि हमारी शिक्षा-प्रणाली संतोषजनक नहीं। स्कूल कॉलेजों की शिक्षा-प्रणाली चाहे उनमें अंग्रेजी पढ़ाई जाय, चाहे संस्कृत अधिक शोचनीय है, उससे देश में बेकारी तथा अशान्ति बढ़ रही है। अतः आप सरीखे नेताओं को महाविद्यालय, ऋषिकुल और गुरुकुलों द्वारा नवयुवकों को वास्तविक शिक्षा देने का प्रयत्न करना उचित है। हमको अपना दृष्टिकोण बदलना चाहिए। विद्याध्ययन नौकरी के लिये नहीं किन्तु देश-सेवा, साहित्य-सेवा तथा समाज-सेवा के लिये होना चाहिये। हमको यही उच्च उद्देश्य विद्यार्थियों के सामने रखना चाहिये, हमको इन संस्थाओं में ऐसे मिशनरी तैयार करने चाहियें जो स्वार्थत्यागी हों, देशभक्त हों, विद्याप्रेमी हों। सारांश यह है कि हमारे ब्रह्मचारियों का जीवनोद्देश्य 'सरल जीवन और उच्च विचार' का होना चाहिये, यही मेरा विनीत सन्देश है।

१६-३-३५ —तारादत्त गैरोला

श्री मदनमोहन सेठ एम० ए०, प्रधान संयुक्तप्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा

मेरी सम्मति में आदर्श की दृष्टि से ज्वालापुर महाविद्यालय निःसन्देह एक अप्रतिम संस्था है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय की उच्च शिक्षा के प्रसार का काय इस समय भारत के अनेक शिक्षणालयों द्वारा सम्पन्न हो रहा है, परन्तु निःशुल्क शिक्षा-दान के उच्चादर्श का पालन इस साधन-हीन संस्था ने जैसा गत २५ वर्षों में किया है, वैसा अर्वाचीन भारतीय शिक्षालयों के इतिहास में कोई अन्य उदाहरण सहज ही दृष्टिगोचर नहीं होता। आधुनिक समय में समृद्ध राष्ट्र की अथवा स्वाधीन राज्य की सहायता के बिना किसी शिक्षणालय द्वारा प्राचीन तथा नव्यज्ञान की उच्चतम शिक्षा का निःशुल्क वितरण प्रायः असम्भव बन गया है। फिर भी मेरी हार्दिक कामना है कि महाविद्यालय द्वारा उसके शिक्षार्थियों के ज्ञान-क्षितिज की परिधि निरन्तर अधिकाधिक विस्तृत होती रहे।

—मदनमोहन सेठ

श्री प्रिंसिपल देवीचन्द जी एम० ए०, दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर (पंजाब)

आप के गुरुकुल के विद्यार्थियों को मेरा यह सन्देश है कि वे आर्यसमाज व वैदिक-धर्म द्वारा अपने देश व अपनी जाति के उत्थान के लिये प्रयत्न करें। महर्षि दयानन्द के मिशन को फैलाने की अत्यन्त आवश्यकता है—हिन्दू दिन प्रतिदिन संख्या में न्यून होते जाते हैं, इन की संख्या को बढ़ाने के लिये उद्यत होवें और हिन्दू जातियों को हिन्दू बनावें। हिन्दू बच्चों व स्त्रियों को अन्य धर्म में जाने से रोकें।

आप के विद्यार्थियों को मैं निर्भयता, त्याग, तपस्या, ब्रह्मचर्य-पालन, ईश्वर-भक्ति, देश-भक्ति, जाति-सेवा, वैदिक-धर्म-प्रेम, सत्यप्रेम, नीति-निपुणता, दृढ़ विश्वास व कर्मयोग का उपदेश करता हूं। परमात्मा उनके जीवन को ऊँचा बनावे और उनको सच्चा आर्य मिशनरी बनावे।

२४-३-३५

—देवीचन्द

श्री बलवीरसिंह स्थविर विद्यापीठ काशी

महाविद्यालय ज्वालापुर जिस प्रकार अनेक विघ्न-बाधाओं का सामना करते हुए गत २६ वर्षों से उच्च संस्कृत शिक्षा देने का प्रयत्न कर रहा है उसके संचालक तथा कार्यकर्ता बधाई के पात्र हैं। ईश्वर से प्रार्थना है कि आप की संस्था इसी प्रकार अपने आदर्श पर दृढ़ रहते हुए सब विघ्न-बाधाओं को पार करती हुई अपने कार्य को सुचारु रूप से चलाती जाय।

—बलवीरसिंह

श्री पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल आयुर्वेदपञ्चानन, दारागंज प्रयाग

महाविद्यालय प्राचीन आदर्श से चलने वाला संस्कृत शिक्षा का उत्तम केन्द्र है। यह एक संतोष का विषय है कि गुरुकुल महाविद्यालय से निकले हुए स्नातक प्रौढ़ विद्वान् हैं तथा होते हैं। इस विषय की विद्यालय की सफलता अवश्य अभिनन्दनीय है और यही एक बात संचालक वर्ग के लिये अभिमान के योग्य है। आशा है कि भविष्य में विद्यार्थियों की योग्यता के साथ व्यवहारिक-ज्ञान की वृद्धि पर भी विशेष ध्यान दिया जाय तो गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के स्नातक समाज के लिये और भी अधिक उपयोगी हो सकेंगे। इस रजत-जयन्ती के समय में आप का और आपके साथ ही विद्यालय के समस्त संचालकगण का अभिनन्दन करता हूँ और संस्था की अब तक की सफलता के लिये बधाई देता हूँ।

यद्यपि निःशुल्क संस्था होने के कारण संचालकवर्ग को अहर्निशि उसकी सफलता के लिये सचेष्ट रहना पड़ता है, किन्तु यही बात उनकी निरन्तर प्रयत्न-शीलता का प्रमाण है। और यह बतलाती है कि संस्था का भविष्य उज्ज्वल है। संचालक वर्ग की यह तत्परता विद्यार्थियों में निःस्वार्थ देशसेवा, निरन्तर उद्योगप्रियता और भारतीय प्राचीन सभ्यता का अभिमान जागृत करती रहती है। यह गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का विशेष आदर्श है।

(चै० कृ० ६-१९९१)

—जगन्नाथप्रसाद शुक्ल (आयुर्वेद-पंचानन)

श्री अवधेश शर्मा, भारत-धर्म महामण्डल काशी

आप का उत्साह देख कर यहाँ की कौंसिल के सदस्य बड़े प्रसन्न हुए। यहाँ के साधु-ब्राह्मणों का आशीर्वाद जानें। हम आपके उत्सव की सफलता चाहते हैं और सदा साथ हैं।

इस कार्यालय को सदा अपना समझें। हम उस लक्ष्य में विश्वविद्यालय के चरणों में प्रार्थना करते हैं कि आप लोगों की धर्मबुद्धि बढ़े और आपके द्वारा सनातन धर्म का उपकार हो।

२५-३-३५ —अवधेश शर्मा

श्री पं० बदरीदत्त पाण्डे, कूर्मांचल-केसरी, अलमोड़ा

महाविद्यालय की रजत-जयन्ती का शुभ समाचार सुन कर आनन्द हुआ। मैं आप सब लोगों को इस शुभ अवसर पर सानन्द बधाई देता हूँ। शरीर ठीक न रहने से लाचारी है, इस समय वहाँ न आ सकूँगा।

महाविद्यालय आप ही के परिश्रम तथा त्याग का फल है। यह महाविद्यालय एक बड़े विश्वविद्यालय में परिवर्तित हो जावे, जहाँ से देशभक्त, कर्मवीर तथा उद्योगी पुरुष निकल कर देश, समाज विशेष कर ग्रामों की सेवा में तल्लीन हो जावें।

मैं आपके विद्यालय की उत्तरोत्तर वृद्धि चाहता हूं।

६-३-३५ —बदरीदत्त पाण्डे

श्री पं० बालकृष्ण जी शर्मा सम्पादक "प्रताप" कानपुर

मुझे बहुत आनन्द हुआ कि "कुल" का रजत-महोत्सव होने वाला है। आपने निःशुल्क शिक्षण की प्रथा चला कर, अनाथों, निर्धनों और हिन्दू जाति के ऊपर बहुत उपकार किया है। आप सज्जनों के त्याग, जाति-सेवा, धर्म-प्रेम से 'कुल' की उन्नति हुई है। परमात्मा करे कि प्रतिदिन कुल की उन्नति व प्रगति होती जावे।

३१-३-३५ —बालकृष्ण

श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, सम्पादक "वैदिक धर्म" औंध (सतारा)

आपका निमन्त्रण पत्र प्राप्त हुआ। मेरे अन्तःकरण में आपके विद्यालय से बड़ा प्रेम है। मैं इस महाविद्यालय की उन्नति ही चाहता हूं। आपके विद्यालय के कई छात्र अपनी तेजस्विता के साथ धर्म-जागृति का काम कर रहे हैं। इनका कार्य देख कर मैं समझता हूँ कि विद्यालय ने कार्य कर के दिखलाया है।

इस के पूर्व का समय भिन्न था, वह अब व्यतीत हो चुका है, अब ऐसा समय आ गया है कि जिस में वेदादि शास्त्रों के निष्पक्षपात अन्वेषण होने की आवश्यकता है। यदि आपका महाविद्यालय

शास्त्रान्वेषण करने का भार अपने ऊपर लेगा, शास्त्र के सिद्धान्त सप्रयोग सिद्ध करके बतलावेगा, तो उसका महत्व भविष्य काल में चिरस्थायी होगा। आशा है कि आप प्रयत्न करके अपने महाविद्यालय में "अन्वेषण विभाग" खोलेंगे, और यथाशास्त्र अन्वेषण का कार्य करेंगे। मैं इसी को अत्यन्त उपयोगी समझता हूँ।

—श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

श्री चौबे रामदुलारेलाल जी एम० ए० फतहगढ़

ज्वालापुर महाविद्यालय एक आदर्श गुरुकुल है, और महर्षि स्वा० दयानन्द जी सरस्वती के आदेशानुसार अपना संचालन कर रहा है। निःशुल्क शिक्षादान और शास्त्र-विधान का पालन कर रहा है, दूसरी ओर सामाजिक परिस्थिति तथा नीति–रीति से ऊपर उठने में अपने संचालकों (भूतपूर्व तथा वर्तमान) तथा अध्यापकों के साहस एवं स्वार्थत्याग का अनुकरणीय उदाहरण दे रहा है। महाविद्यालय के लिये मेरी हार्दिक शुभ-कामना के संदेश को उदारता-पूर्वक ग्रहण कीजिये।

ईश्वर से सविनय प्रार्थी हूँ कि वह दयापूर्वक उपर्युक्त विद्यालय के जयन्ती-समारोह को मंगलमय बनावे और सफलता प्रदान करे।

३१-३-३५ —रामदुलारेलाल

श्री तम्मा शास्त्री वाइस प्रिंसिपल मेरठ कॉलेज

खेद है कि मैं जयन्ती के अवसर पर उपस्थित न हो सकूँगा। मैं आपकी संस्था का अभ्युदय चाहता हूँ। मैं अपने आपको इस योग्य नहीं समझता कि स्फूर्तिदायक सन्देश भेजूं, पर इतना अवश्य चाहता हूँ कि आपकी संस्था वर्ष-प्रतिवर्ष उन्नत होती रहे और बाह्य जगत् में ऐसे नवयुवक भेजने में समर्थ हो सके जो अपने जीवन में अन्य सांसारिक अभिवांछाओं की अपेक्षा, कर्तव्य को प्रमुख स्थान देवें। आपके यहाँ के ब्रह्मचारी इस बात में दृढ़-विश्वासी हों कि संसार में कर्तव्य ही स्वयं एक उत्तम पारितोषिक है, जब कि वह केवल कर्तव्य-बुद्धि से किया जाय। मैंने अपने समस्त जीवन में छात्र-वृन्दों में इसी उच्च तत्व के संचार का प्रबल प्रयत्न किया, किन्तु इसमें मुझे कम सफलता मिली। इसका कारण मैं अपनी न्यूनता समझता हूँ। शुभ-आकांक्षा और उचित सम्मान के साथ पत्र को समाप्त करता हूँ। थोड़ी सी सहायता भिजवा रहा हूँ, स्वीकार कीजिये।

१-४-३५ —तम्मा शास्त्री

श्री पं० रामशंकर जी त्रिपाठी सम्पादक "लोकमान्य"

श्री पं० देवव्रतशास्त्री, सम्पादक "नवशक्ति" पटना

श्री पं० सीताराम जी चतुर्वेदी, सम्पादक "सनातनधर्म" काशी

श्री पं० भद्रसेन जी गुप्त, सम्पादक "सञ्जय" देहली

श्री पं० चन्द्रशेखर जी वाजपेयी एम० ए० हेडमास्टर, डी० ए० वी० हाई स्कूल, मुजफ्फरनगर

इन महानुभावों ने भी शुभ-कामना के सन्देश भेजे हैं।

भाई परमानन्द जी लाहोर

ज्ञान का दीपक जो भी जलाये रखता है वह संसार के आदर का पात्र है। सत्य, शिव, सुन्दर और स्वास्थ्य के ज्ञान की किरणें अभी कई घरों में नहीं पहुँची। शरीर के दिये में प्रेम की बत्ती जलने से प्रकाश होगा। इस प्रकाश को सर्वत्र फैलाना ही मनुष्य का धर्म है।

३-४-३५ —भाई परमानन्द

श्री माधव श्रीहरि अणे, नई दिल्ली

धर्मस्य देशस्य कुलस्य नित्यम्, देवस्य वेदस्य च सेवनार्थम्।
भूयान्मनोबुद्धिशरीरसत्वम्, विद्यार्थिनामार्यकुलाश्रयाणाम्॥

वर्ष प्रतिपदा १९९२ —अणे इत्युपाह्वः श्रीहरिसूनुः माधवशर्मा

श्री रामनारायण मिश्र, काशी

इस महाविद्यालय ने प्राचीन आर्य संस्कृति की रक्षा करके देश का बड़ा कल्याण किया है। आशा है कि जयन्ती के उपरान्त आपके कार्य में दूनी सफलता होगी।

३-४-३५ —रामनारायण मिश्र



पत्र-पुष्प

मेजर चन्दोला का पत्र

१ परेडग्राऊण्ड रोड
पूना नं० १
६ दिसम्बर ४७

श्रद्धेय शास्त्री जी प्रणाम,

आपके दो कृपा-पत्र मिले। हार्दिक धन्यवाद। आपकी लेखनी का प्रसाद प्रायः दश वर्ष के उपरान्त मिला। कृतकृत्य हुआ। मेरे दाहिने पाँव में जन्म से ही चक्र बना था। इस कारण मुझे बारह वर्ष अपनी जन्मभूमि से वनवास लेना पड़ा। विदेशों में चक्कर लगाता रहा। चरणहीन होना पड़ा।

हिन्दी माता की गोद में मेरा स्थान प्रत्यक्षरूप में रिक्त रहा, किन्तु अब अपने पूज्य पुरुषों की छाया में शरणार्थी होकर आया हूं। लाज आप लोगों के हाथ है। ठुकरा दो या प्यार करो। मैं एक राष्ट्र का साधारण सैनिक कवि हूँ। जैसा मेरे सैनिक जीवन में कठिन नियन्त्रण है, वैसा ही मेरे साहित्यिक जीवन में भी कड़ी साधना छिपी है। मैं चाहता हूँ कि मुझे भी जी-भरकर हिन्दी-साहित्य की सेवा करने का अवकाश तथा प्रोत्साहन मिले। फिर देखना मैं ज्वालामुखी पर्वत की नाईं फट पड़ूँगा। अपना कलेजा आपके सामने काग़ज पर धर दूँगा। आप आश्चर्यचकित होकर मेरी ओर स्नेहभरी दृष्टि से देखेंगे। मेरे थके कन्धों पर थपकी मारकर मुझे पथप्रदीप दिखावेंगे। और इस प्रकार एक दिन सूर्यास्त के पूर्व ही मैं अपने अभीष्ट स्थान पर बेरोक-टोक पहुँच जाऊँगा, इसका श्रेय क्या आप ले सकेंगे? कहिये न?

आप भारत के आधुनिक युग-प्रवर्तकों में से एक महान् विभूति हैं। हमारे संस्कृत-साहित्य के प्रथम 'वेदतीर्थ' हैं। वृद्धावस्था में भी आपका हृदय एक हरा-भरा मैदान है, जिस पर मुझ जैसे अनेक खिलवाड़ी सोत्साह खेल रहे हैं। आप धन्य हैं। आपका जीवन एक अपूर्व मानवशक्ति का केन्द्र है। एक जीती-जागती साधना, एक निष्काम तपस्या—एक असाधारण विद्वत्ता का ज्वलन्त उदाहरण है। परमपिता आपका हाथ दीर्घकाल तक हम जैसे शरणार्थियों के मस्तिष्क पर रहने दे, यही एकमात्र कामना है।

हाँ यह मेरा सौभाग्य है कि मैं अपने मनोनीत आदर्शवीर शिवाजी की पुण्य-नगरी में एक वर्ष से रहता आया हूँ। मेरा घर पूना स्टेशन से थोड़ी दूर पर ही स्थित है। कैम्प में 'अशोक टॉकीज' के पास सबसे पहला नम्बर का सरकारी बंगला है। आप कभी दर्शन दें तो मैं कृतार्थ होऊँगा। साहित्य सम्मेलन का आगामी अधिवेशन सुना है, बम्बई में होगा। कृपया सूचना दीजिए ताकि मैं भी सम्मिलित हो सकूँ। सम्मिलित होने का प्रयत्न कर सकूँ। श्री माखनलाल चतुर्वेदी का पत्र आया था। उन्होंने मेरी रचनाओं को 'कर्मवीर' में भी 'विजयदशमी' और दिवाली के अवसर पर प्रकाशित किया, बड़े सहृदय हैं।

आपका पुराना शिष्य तथा सेवक
रत्नाम्बरदत्त चन्दोला

[बम्बई हिन्दी साहित्य सम्मेलन में हम भी गये थे। सम्मेलन में आप भी पधारे थे। सम्मेलन के पश्चात् हम पूने गये, वहां इनके अतिथि रहे। बड़ा आनन्द आया १०-१२ वर्ष के पश्चात् मिलने में। आपकी कविताएँ भी सुनीं। आप अब पेन्शनर मेजर हैं, महाराष्ट्र की राजधानी पूने में हिन्दी की सेवा कर रहे हैं।

आप देहरादून के प्रसिद्ध गढ़वाली के 'सम्पादक' श्री विश्वम्भरदत्त चन्दोला के कनिष्ठ भ्राता हैं। फिर एक बार आप देहरे में भी आये थे। सैनिक कवि हैं, अपने जैसे आप ही एक]।

—नरदेवशास्त्री

हिन्दीसाहित्य सम्मेलन प्रयाग

२४-१०-४८

मान्यवर,

'हिन्दुस्तान' के पिछले अंक में अपने विद्वत्तापूर्ण वक्तव्य एवं लेख से आपने राष्ट्रभाषा हिन्दी की जो सेवा की है वह सराहनीय है। राष्ट्रभाषा के इस संकट के अवसर पर आपके वक्तव्य में भारतीय संघ की ९८ प्रतिशत भावना का पुट है। यह तो विदित ही है कि हिन्दी के उत्थान के लिये आप सतत् प्रयत्नशील रहे हैं किन्तु निकट भविष्य ही में राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर महत्वपूर्ण निर्णय होगा। ऐसी परिस्थिति में आपसे निवेदन है कि कम से कम सप्ताह में एक दिन राष्ट्रभाषा हिन्दी के पत्र में फिर कोई लेख या वक्तव्य लिखकर समाचार पत्रों में प्रकाशित करें। आपके इस स्तुत्य कार्य से भारतीय जनमत को उद्‌बोधन मिलेगा, जिसकी इस समय सर्वाधिक आवश्यकता है।

—सहायक मन्त्री

लाँग माऊराटेन (मॉरिशस)

१६-११-४६

आपके शुभ समाचार न मिलने से चिन्तित हूँ। इस वर्ष १५० यात्री मॉरिशस से भारत जारहे हैं। कृपया आप मुझे एक प्रमाण पत्र देदीजिए, महाविद्यालय के आचार्य की हैसियत से। इस प्रमाण-पत्र में मेरी योग्यता, भाषण-शैली, कवित्व, चाल-चलन आदि का उल्लेख हो—

पूज्य पिता जी, चाचाजी प्रणाम करते हैं ।

भवदीय
चरणचञ्चरीक
ठाकुरप्रसाद मिश्र

पूर्व का पत्र

१८-१-४६

पत्र मिला, बड़ी प्रसन्नता हुई । ब्रिटिश सरकार हर प्रकार से भारतीयों की प्रगति में सहायक है । गांवों में Village council नामक संस्थाएँ सरकारी देखरेख में चलती हैं । इसी संस्था द्वारा जनता का अधिक हित होता रहता है । Co-Operative Credit Society द्वारा किसानों का खूब भला होता रहता है । इसकी पूँजी जबरदस्त है । Barclay's International Bank बड़ी सहायता देता रहता है ।

यह सब कुछ होते हुए भी भारतीय लड़कों की शिक्षा का कुछ अच्छा प्रबन्ध नहीं है । यदि कोई हिन्दी के अखबारों को देख कर एक आधी पंक्ति भी समझ ले तो उसको अभिमान हो जाता है कि हम ही पन्त, प्रेमचन्द, निराला हैं—रेडियो भी चल रहा है ।

अगले वर्ष संवत् २००६ में भारत आने का विचार कर रहा हूँ । आपका पिछला पत्र लोगों ने पढ़ा, लोग बड़े प्रसन्न हुए ।

—ठाकुरप्रसाद मिश्र

७-८ वर्ष हुए शामली जिला मुजफ्फरनगर में एक बड़ा सम्मेलन हुआ था । हम ही उसके सभापति थे । लगभग पचास हजार ब्राह्मण एकत्रित हुए थे समस्त मेरठ डिविजन-दिल्ली आदि से । तब यह अभिनन्दन-पत्र दिलाया गया था । यद्यपि यह ब्राह्मणों का सम्मेलन था तथापि हमने व्यापक-दृष्टि से ही संचालन किया । किसी प्रकार की कटुता नहीं आने दी ।

—नरदेवशास्त्री

❀ ॐ ब्रह्मणेनमः ❀

अनन्तश्रीविभूषित, वैदिकवाङ्मय–विचक्षण, देदीप्यमानराष्ट्र–हीरक, सौजन्यमूर्ति, लब्धप्रतिष्ठ, तपोनिष्ठ,

आचार्यप्रवर श्री नरदेवशास्त्री वेदतीर्थ

के करकमलों में सादर सस्नेह समर्पित

(२६ जून–१९५०)

अभिनन्दन पत्र

धर्मस्य राष्ट्रस्य कृते सहर्षं, जातो रथो वैदिक संस्कृतेश्च ।
समर्पितं जीवनमेव येन, जयत्यसौ श्री नरदेवदेवः ॥

परमादरणीय आचार्यचरण !

उत्तरप्रदेश की लघीयसी नगरी शामली में आज आपके पदार्पणानुग्रह से यहाँ की भूमि का एक-एक रज कण रोमहर्षित हो रहा है । सम्मेलन में सामूहिक मानववृन्द का हृदयारविन्द–आपके पावन एवं कल्याणभाजन दर्शन पाकर परम प्रफुल्लित हो रहा है, तथा आपको अपने मध्य में विभूषित देखकर प्रमुदित हो कृतार्थता एवं गरिमा का अनुभव कर रहा है ।

महामान्यवर !

आपके द्वारा धर्म, राष्ट्र, विद्या तथा वैदिक संस्कृति के हितार्थ आजीवन समर्पित नानाविध सेवाओं के विषय में ऐसा कौन अभागा भारतीय है, जो अपरिचित होगा । उन सबका परिगणन तथा वर्णन यद्यपि हमारी शक्ति से बाहर की वस्तु है तथापि "वागूजन्मवैफल्यमसह्यशल्यं गुणाद्भुते वस्तुनि मौनिता चेत्" इस उक्ति के अनुरूप आप जैसे पुण्यश्लोक–महानुभावों के पवित्र चरित्रों का सङ्कीर्तन करने में अपना कल्याण और गौरव समझ कर "तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्" की भांति हम एतदर्थ प्रयास कर रहे हैं ।

सुगृहीतनामधेय !

आपने बाल्य-काल में कठोर ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर देववाणी की आराधना की, गुरुजनों की शुश्रुषा से वैदिक वाङ्मय ही नहीं प्रत्युत अखिल शास्त्रों का गम्भीर अध्ययन कर अपनी असाधारण प्रतिभा–प्रभा से पण्डितमंडल में प्रमुख स्थान प्राप्त किये, और गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर जैसी निःशुल्क शिक्षा संस्था में आचार्य पद प्राप्त कर शतशः शिष्यों को वेदाङ्गादि विविध प्राचीन अर्वाचीन विषयों का तुलनात्मक अध्यापन कर अपने यशःसौरभ से दिगदिगन्तों को सुरभित किया ।

विद्वद् धौरेय !

आपके अध्यापन काल में ही देश में राष्ट्रीयता की बाढ़ आई। आपने उसमें भाग ले कर अपने त्यागमय जीवन और कर्मठता से देश के आबालवृद्ध, आपामरप्रज्ञ सभी के हृत्पटल पर अपनी कार्यशक्ति की अमिट मुद्रा अङ्कित कर दी, राष्ट्रीय संग्राम में आप जैसे वीतराग तितिक्षु वीरसैनिकों के प्रबल पराक्रम के परिणामस्वरूप ही वैदेशिक साम्राज्यवाद की जड़ें हिल गईं, और शताब्दियों से परतन्त्रता की श्रृङ्खला में निगडित भारतवर्ष का भाग्य-भास्कर उदय हो गया, राष्ट्रीय क्षेत्र में आप सर्वदा उनके साथी रहे हैं जो आज राष्ट्र के समुज्ज्वल रत्न हैं। आप का जीवन राष्ट्रीय है।

वेदविद्यापयोधे !

आप संस्कृत वाङ्मय के प्रौढ़ विद्वान् हैं। गीताविमर्श, ऋग्वेदालोचन, आर्येतिहास-आदि ग्रन्थरत्नों का निर्माण कर आपने संस्कृत वाङ्मय की श्रीवृद्धि की है। धार्मिक क्षेत्र में आप पक्षपात-रहित सत्यप्रिय व्यक्ति हैं। प्राचीन-कालिक ब्राह्मणों के आदर्श की आप सजीव मूर्ति हैं। आपका राष्ट्रीय जीवन धार्मिकता, मितभाषिता, सत्यप्रियता से ओत-पोत है, वैदिक धर्म और संस्कृति के आप मूर्त रूप हैं। हम कहां तक आपके गुणगणों का वर्णन करें, आप अपने पवित्र विचार एवं आचरणों से समस्त राष्ट्र में वन्दनीय हैं।

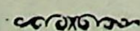
महात्मन् !

स्वतन्त्रता स्वर्णिम प्रभात में जबकि समस्त राष्ट्र उन्नतिपथ की ओर अग्रसर हो रहा है तब वर्णाश्रमधर्मसेवी समाज की प्रचलित कुरीतियों के कारण अवनतिशीलता को देख आज सुधार की कामना से हमने श्री चरणों का आश्रय लिया है। आप जैसे महान् नियन्ता को पाकर हम प्रमुदित हो रहे हैं। हमें आज अपना भविष्य उज्ज्वल दीख रहा है। हमें आप वह मार्ग प्रदर्शित करें जिससे हम प्रचलित सामाजिक कुरीतियों के दृढ़बन्धन को तोड़कर प्राणिमात्र की हित कामना रखते हुए पुनः प्राचीन भारतीय संस्कृति को दृढ़ कर सकें। हमें पूर्ण आशा है कि आपके सान्निध्य में हम अवश्य सफलता प्राप्त करेंगे। हम अन्त में पुनः आपका अभिनन्दन करते हुए अनन्त कोटि ब्रह्माण्डनायक परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि आपको चिरायु स्वस्थ एवं शक्तिसम्पन्न करे जिससे आप अहर्निशि राष्ट्र की कल्याण कामना करते रहें।

अचलाञ्चलचञ्चलोन्मुखी, सुखितां यच्छतु वेदभारती।
शरदां शतमस्तु जीवनम्, जगदीशो वितनोतु तेऽवनम् ॥

हम हैं आपके—

वृहत् समाजसुधार सम्मेलन शामली के सदस्य



❀ शाहजहाँपुर का एक विचित्र पत्र ❀

शाहजहाँपुर
१२-६-५०

आदरणीय वीर सेनानी,

सादर, सप्रेम नमस्ते।

१—मैं आपके संपर्क में आकर देश की वर्तमान परिस्थिति और आर्यसमाज की नीति से परिचित होकर एक निष्कर्ष निकालना चाहता हूँ और आशा करता हूं कि आप मुझ युवक की इस प्रार्थना को स्वीकार करके अवश्य कुछ न कुछ समय देंगे। विस्तार की बातें मिलने से ही सम्बन्ध रखती हैं।

२—मेरी इच्छा है कि मैं इसी प्रकार आर्यजगत् के उच्चश्रेणी के सुलझे हुए नीतिज्ञ नेताओं की एक समिति आप ही की अध्यक्षता में बुलाऊँ और उसमें अपने विचार रखकर सबका परामर्श लूँ। अभी यह मेरा व्यक्तिगत प्रयास होगा और अतिथि रूप में अपने व्यक्तिगत विकास के लिए यह सत्संग आप जैसे विद्वानों को बुलाकर चाहता हूँ, जिसका किसी संस्था आदि से कोई सम्बन्ध न समझा जावे और न अनुशासन-रहित कार्यवाही समझी जावे।

३—अतः आपसे प्रार्थना है कि आप इस सम्बन्ध में उपयुक्त आर्यनेताओं के नामों से सूचित करें ताकि उनकी भी स्वीकारी लेकर आने के लिये प्रेरित करूँ। स्थान शाहजहाँपुर ही उपयुक्त रहेगा। समय के विषय में आप लिखें। शेष सब प्रबन्ध यथाशक्ति करूँगा ही। आपके आशीर्वाद का आकांक्षी—

—एक आर्य

[इनको लिखा गया कि आप इस उलझन में न पड़ें। किसी समय महाविद्यालय के उत्सव में पधारें। वहाँ बातचीत हो सकेगी।

—नरदेवशास्त्री]

श्री फूलचन्द गान्धी स्वास्थ्य-मन्त्री का पत्र

बेगमपेठ, हैदराबाद (दक्षिण)
१६-६-१६५०

सादर प्रणाम,

आपका आशीर्वादात्मक पत्र मिला। वृद्ध पुरुषों द्वारा इस कार्यसिद्धि के समय जो आनन्द प्रकट किया गया उसी से मेरा उत्साह और भी अधिक बढ़ रहा है। अब हाथ में लिए हुए नये काये में भी आपके आशीर्वाद से सफलता मिलेगी। आप हैदराबाद आयें तो मेरे पास ही ठहरिये।

आपका नम्र

फूलचन्द गाँधी

[आपने रजाकारों के उपद्रवों के समय जनरक्षा का बड़ा काम किया था। आप वर्षों राज्य के स्वास्थ्य-मन्त्री रहे। मैं हैदराबाद कांग्रेस में गया था तब आपसे मिल न सका, आप कांग्रेस महाधिवेशन के कार्य में इतने व्यस्त थे। श्री फूलचन्द जी हमारे गांव उस्मानाबाद के निवासी हैं। —नरदेवशास्त्री]

श्री सुन्दरलाल कोठारी का पत्र

(ये पहिले कांग्रेसी थे बड़े अच्छे ठोस कार्यकर्ता, फिर समाजवादी हो गये)

जिला किसान मजदूर प्रजापार्टी
आढ़त बाजार, देहरादून
५-६-५१

श्रद्धेय शास्त्री जी,
विनम्र प्रणाम।

कुछ दिन हुए आपका कृपापत्र श्री मुकर्जी द्वारा मिला था। और मैं आपको उत्तर देने की चिन्ता करता रहा लेकिन कुछ कारणों से विलम्ब हुआ। क्षमा करेंगे-ऐसी आशा है।

यह ठीक है कि मैं प्रजापार्टी में शामिल हो गया हूँ और वह भी अपनी एक निश्चित विचारधारा के अनुसार ही है। मैंने जिन कारणों से कांग्रेस में शामिल होना स्वीकार किया था, ठीक उन्हीं कारणों से कांग्रेस छोड़ी भी और प्रजापार्टी में सम्मिलित हुआ।

आपने लिखा है कि कांग्रेस-संस्था को छिन्न-विच्छिन्न करने की चिन्ता को छोड़कर रचनात्मक कार्य करोगे। रचनात्मक कार्य तो हमारी कार्यप्रणाली का श्वास है जो कि होना अत्यावश्यक है। लेकिन जहाँ तक कांग्रेस के छिन्न-विच्छिन्न करने की बात है, हम चाहे ऐसा करें या न करें, कांग्रेस तो अब उस स्टेज पर है कि उसने खत्म होना ही है। दुनिया की कोई शक्ति उसे नहीं बचा सकती। जिस संस्था की सेवा का मानदण्ड सत्ता-प्राप्ति ही रह गया हो, भला सत्ता तो सदा रहने वाली चीज नहीं है अथवा नहीं होती। अगर त्याग और सेवा की होड़ अब भी कांग्रेस में चल पड़े तो हम क्या दुनिया में इसको कोई मिटा नहीं सकता।

आप निश्चय समझिए, हम जो कुछ भी करेंगे वह सुशिक्षित व्यक्ति की तरह ही करेंगे। आशा है आप आशीर्वाद देते रहेंगे।

विनीत—
सुन्दरलाल कोठारी

[आप डोभालवाले के निवासी हैं]

(१)

शारदापीठ के शङ्कराचार्य श्री १००८ स्वामी भारतीकृष्णतीर्थ महाराज ने प्रसन्न होकर

"वेदवेदाङ्गकेसरी"

उपाधि प्रदान की थी, आप महाविद्यालय में कई वार पधारे थे, रहे थे।

यह बात १६४८ की है।

(२)

ऋषिकुल विश्वविद्यालय हरिद्वार की पण्डित-मण्डली

द्वारा

शिक्षा-विषय में संमान के लिए

"काव्यशास्त्राभिरुचि, विद्याव्यसनिता, गुण-ग्राहकता, सत्य-प्रियता, व्यवहार-कुशलता, एवं वाक्-पटुता आदि गुणों को देखकर—"

(जैसा कि प्रतिष्ठापत्र में लिखा है)

"भारतीभूषण"

उपाधि दी थी [१८-४-१६५०]

[हमने आज तक इन उपाधियों को अपने नाम के साथ न कभी लगाया और न किसी अवसर पर इनका उपयोग किया। हमारी प्रतिज्ञा थी कि हम सरकारी नौकरी नहीं करेंगे इसलिये "शास्त्री" (पंजाब) तथा वेदतीर्थ (कलकत्ता) के सरकारी प्रमाणपत्र भी हमने फाड़ डाले थे]

१६-६-५०

नरवर—बुलन्दशहर

श्री १०८ स्वर्गीय पं० ज्वालादत्त जी महाराज कान्यकुब्ज कश्यपगोत्री हमारे गुरुजी थे। उनके समीप एक पुस्तक हस्तलिखित 'शिल्प-शास्त्र' देखने को छोड़ आया था। उनका सामान जिस व्यक्ति के पास पहुंचा है, उनसे पता चला कर उस विद्यारत्न को देशोपकार बुद्धि से खोज करानी चाहिये। उस पुस्तक का पता चलाइये।

जीवनदत्त शर्मा

संचालक आचार्य

[आर्यमित्र में लेख भेजा] साङ्गवेदविद्यालय—नरवर

१-५-५१

(देहरादून)

पूज्य गुरुजी,

नमस्कार !

मैं प्रायः पत्र नहीं लिखा करता हूँ किन्तु न लिखने के कारण मेरी श्रद्धा-भक्ति कम नहीं है। हमारे यहाँ जिला कांग्रेस में बड़े झगड़े हैं। मैं चाहता था और हूँ कि ये झगड़े समाप्त हो जाएँ। मैंने अपनी ओर से श्री सिंगल जी से प्रार्थना की थी कि समझौता कर लेवें किन्तु वे तैयार नहीं हैं।

जिला कांग्रेस कमेटी में हमारा बहुमत है। मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि आपकी छत्रच्छाया और आशीर्वाद हमारे ऊपर रहना चाहिए। मैं आपसे सलाह और आशीर्वाद लेने शीघ्र आऊँगा।

मेरे योग्य सेवा लिखें।

आपका—

शान्तिप्रपन्न

२-५-५१

(मसूरी)

मेरा नम्र निवेदन है—अपने राष्ट्र की जय हो जाने पर अब विजय सम्पादन करना आप जैसे महानुभावों पर निर्भर है। जो वरदान हमें मिला है कहीं अभिशाप में न परिणत हो जाय, भगीरथ प्रयत्न करने की आवश्यकता बढ़ गई है।

—विश्वम्भरदत्त ऊनियाल

७-५-५१
(मंगलौर)

इस जिले के ब्राह्मण आपके सभापतित्व एक वृहद् ब्राह्मण-सम्मेलन करने की तैयारी में हैं। उनकी इच्छा है यह सम्मेलन आपके सभापतित्व में हो।

चन्द्रभानुशास्त्री
संयोजक जिला ब्राह्मण सभा

(लिखा कि स्वीकार नहीं है)

२६-५-५१
(देहरादून)

आपका कृपा पत्र मिला—सम्मान-प्रदान सभा में जब पत्र सुनाया जा रहा था तब ऐसा लगा मानो स्वयं आपकी सौम्यमूर्ति सभा में बोल रही है—इस पत्र से मुझे बहुत बल मिला.................. ....अपने स्वास्थ्य को सम्भाले रखिये......................आपका जीवन राष्ट्र की एक महती निधि है..................।

—गयाप्रसाद शुक्ल

२६-६-५१
(देहरादून)

आपका पत्र मिला—'कल्याण' में जो आज की डाक से मिला है, आपका लेख "संस्कृत के पण्डित और अंग्रेजी के विद्वान्" ऐसे उत्तम लेख के लिये आपको बधाई। खरे-खरे विचार प्रकट करने से बुराइयाँ दूर होंगी।

—विश्वम्भरदत्त चन्दोला

१-१०-५१
(उज्जैन)

साहित्यिक जीवन में बिना तिकड़मबाजी के गुजारा नहीं—अपने राम में इस गुण का सर्वथा अभाव है—यथालाभ सन्तोषरूप में ब्राह्मणवृत्ति का पालन हो रहा है—इसे ही मैंने अपना सौभाग्य समझा है। पैसा होता तो शायद मैं भी छल-कपट-दम्भ में प्रवृत्त होता।

—गोपीवल्लभ उपाध्याय

आर्यसमाज के विद्वान्, पौरस्त्य-पाश्चात्य-वैदिक-साहित्य-मर्मज्ञ श्री भगवद्दत्त रिसर्च स्कॉलर का विशिष्ट पत्र,

लाहोर—विनिर्गत पं० भगवद्दत बी० ए०
भारतीय इतिहास विशेषज्ञ

भारतीय साहित्य भवन
६६२६, लएब्रेरी रोड
६–११–५१
(देहली)

श्री श्रद्धेय आदरणीय पण्डित जी,

नमस्ते !

आपका कृपा-कार्ड मेरठ मिल गया था। उसके संकेत भावपूर्ण थे। अभी ११ बजे 'श्री स्वाध्याय' में आप का लेख पढ़ा है।

मेरे हृदय में आप से अनेक विषयों में मतभेद होते हुए भी आप के प्रति आदर का भाव अत्यधिक रहा है। आप संस्कृत के विशिष्ट पण्डित हैं। आप के विचार आर्यत्व लिए रहते हैं। आप से बहुत बहुत आशाएँ हैं।

मैं अपना भाषण आपको भेज रहा हूँ। कृपा करके सब काम छोड़ कर इसे पढ़ कर अपना विचार लौटती डाक लिखें। यदि मैं और आप विचार विनिमय के पश्चात् एक कार्य-सरणी निकाल सकें तो महान् उपकार हो सकेगा।

मेरे भाषण को किसी ने छापा नहीं। मैंने भाषण के आरम्भ में घोषणा की थी कि कांग्रेसी-पत्र इसे छापेंगे नहीं। उस समय अधिकाधिक उपस्थिति थी। सैकड़ों श्रोता स्पष्ट-विचार लेकर गए हैं। आर्य-जनता उत्सुक है, पर नेतृत्व ठीक नहीं है। आप इस काम को हाथ में लें। ढंग बन सकता है।

क्या आप पार्लिमेंट में आ सकते हैं। पूरा लिखें।

मैं गत ४ मास से अस्वस्थ हूँ। २ मास यकृत् के भयानक रोग से ग्रस्त रहा। अब रोग से मुक्त हूं। परन्तु पथ्य के कारण घी, दुग्ध खा-पी नहीं सकता। क्या आप २–३ दिन यहाँ आकर रह सकते हैं। अकर्मण्य रहना व्यर्थ है। और ज्ञान रख कर कुछ न करना पाप है। साधारण पत्रों में लेखों का कोई लाभ नहीं।

आप पूरा विचार कर लिखें। आप में अनेक शक्तियाँ हैं, पर आप ने उनसे पूरा काम नहीं लिया। देखें, भविष्य में आप क्या संकल्प करते हैं। कृपया लिखें कि आर्ष–शास्त्रों में आपका दैनिक स्वाध्याय कितने घण्टों का रहता है।

—भगवद्दत्त

श्री श्रद्धेय वाजपेयी जी के पत्र

(भू० पू० सम्पादक भारतमित्र, सभापति हिन्दी साहित्य सम्मेलन काशी, वर्तमान सदस्य विधान-परिषद् उत्तरप्रदेश)

[१]

नजरबाग लखनऊ
२६-८-५१

श्रद्धेय शास्त्री जी,

सप्रेम नमस्कार। आशा है आप प्रसन्न होंगे। इस पत्र का उद्देश्य है आपसे सहायता प्राप्त करना। हमने हिन्दी पत्रों का इतिहास लिखने का संकल्प किया है। परन्तु आप जैसे विद्यावयोवृद्धों के सहयोग और सहायता के बिना यह काम पूरा नहीं उतर सकता। पुराने साप्ताहिक और मासिक पत्रों के विषय में आपको जो जो बातें स्मरण होंवे लिखकर भेजने की कृपा करें। आज के सम्पादक कुछ जानते बूझते नहीं हैं। इसलिये इनसे कोई सहायता नहीं मिल सकती।

देहरादून और हरिद्वार आदि से कई पत्र निकले थे, पर अस्त हो गये। इनके विषय में नहीं तो भारतोदय के विषय में तो आप लिख ही सकते हैं। आपके शिष्य श्री क्षेमचन्द्र सुमन ने कहा था कि शास्त्री जी बहुत कुछ पुरानी बातें बता सकेंगे, इसलिये आपको कष्ट दिया है। क्षमा करेंगे।

भवदीय—
अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी

[२]

नजरबाग लखनऊ
२२-६-५१

प्रिय शास्त्री जी,

नमस्कार। आपका भेजा हुआ पैकेट कल मिल गया। आपकी इस कृपा के लिये अनेक धन्यवाद। आपने इतनी जल्दी पत्रों का विवरण भी भेज दिया, परन्तु अनेक पत्रों में सूचना निकालने पर भी किसी सम्पादक ने कुछ भी मसाला नहीं भेजा। हमारे मित्र बाबूराव जी पराडकर से तो पत्र का उत्तर भी नहीं मिला। नागरी प्रचारिणी सभा को जवाबी पोस्टकार्ड भेजे। जब प्रायः २० दिन हो गये, तब उत्तर आया 'जवाबी पोस्टकार्ड की कोई आवश्यकता न थी। सभा सदा आपकी सेवा के लिये प्रस्तुत है।'

एक तो वर्तमान सम्पादकों को कुछ पता ही नहीं क्योंकि ऐसे विषयों से उन्हें अनुराग नहीं हैं। परन्तु जो कुछ जानते भी हैं जैसे हमारे मित्र पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल हैं उनके लिये भी लिखना पढ़ना कठिन हो रहा है। हमने उन्हें अप्रैल में पहले लिखा था। इसके बाद जून और जुलाई में भी लिखा पर अभीतक वे कुछ या तो पता न लगा सके या लिख न सके।

हमारे पास हैदराबाद के वेंकटलाल जी ओझा की प्रकाशित हिन्दी समाचार पत्र सूची है। इसके आधार पर हमने कोई सौ पृष्ठ लिख लिये। सोचा कि लोगों की जानकारी से लाभ उठाना और असत्य वर्णन यथासाध्य न जाने देना चाहिये, इसलिये लोगों को पत्र भी भेजे, पर कहीं से कुछ नहीं आया। जिन लोगों ने कुछ लिख भेजा, उनका ज्ञान तो सीमित था ही, शुद्ध लिखना भी कठिन था। विचार है कि एकबार इसके लिये काशी और कलकत्ते की यात्रा करें। हैदराबाद तो दूर है। वहाँ अकेले जाना भी कठिन है।

इसके बाद प्रश्न होता है कि इस इतिहास की ही क्यों उपयोगिता होगी? इसे कौन खरीदेगा और कौन पढ़ेगा? विचित्र स्थिति है। विशेष फिर, कृपा रखियेंगा।

भवदीय

अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी

[मैंने वाजपेयी जी की आज्ञा का पालन कर दिया था। —नरदेवशास्त्री]

श्री रामदत्तशुक्ल के पत्र

(१)

रामदत्तशुक्ल एम्० ए० एल० एल० बी०
हाईकोर्ट लखनऊ

आजाद रोड-लखनऊ
२६ अक्टूबर १६४६

श्री श्रद्धास्पद रावजी (शास्त्री जी) महाराज, प्रणाम।

लगभग दो मास पूर्व आपका एक कार्ड और एक लम्बा पत्र आया था। दोनों में एक ही विषय पर बल दिया गया था। सोपपत्तिक मार्मिक विवेचन था। दोनों पत्रों को कई बार पढ़ गया, मनमें अनेक विचार उठे। आर्यसमाज की उन संस्थाओं की ओर विशेष ध्यान दिया गया जिनके उच्च आदर्श थे और जिनके आस्थावान् कार्यकर्ताओं ने इतना परिश्रम किया था। कइयों ने तो भावना-वश अपना जीवन ही इन संस्थाओं में लगाया था। फिर परिवर्तित देश काल परिस्थिति पर भी दृष्टि

डाली जिनके उग्रप्रभावों को सहने की क्षमता उन संस्थाओं में नहीं के बराबर है—बड़ा आन्तरिक क्षोभ और क्लेश अनुभव हुआ, इसलिये कि "हम प्रचण्ड ज्वालाओं में से तो साफ़ बच कर निकल आये पर दुर्दैव से धुएँ में हमारा दम घुटने लगा"—

जो ग्रन्थिबन्धन, आयोजन या पुनर्मिलन अध्यवसाय चल रहा था वह प्रायः सम्पन्न हो गया होगा अथवा हो रहा होगा। यदि हो गया तो किस रूप में, अभीतक इसका पता न लगा।

आपके पत्र में अनेक वार उल्लेख मिलता है कि यदि ४, ५ व्यक्ति तन्मयता के साथ जमकर बैठ जायँ तो, सब कार्य ठीक होंगे। यह बड़े मर्म की बात अवश्य है, किन्तु फिर एक बात विचारणीय रह जाती है, वह यह है कि संस्थाओं के शरीरों की रक्षा के लिये व्यक्ति उत्सर्ग करें या संस्थाओं की आत्मा का परिरक्षण मुख्य महत्व का समझा जाय। बस इसी विषय में मौलिक मतभेद और विचार-भेद होने के कारण यह कठिन सा प्रतीत होता है कि लोग अपने जीवन को जैसा आप चाहते हैं, उस प्रकार का तपाने के लिए तत्पर हो सकें। यह तो हो सकता है और कदाचित् होगा भी कि किसी न किसी रूप में स्टेट द्वारा संचालित या पोषित अन्य संस्थाओं की भांति तथाकथित आर्यसंस्थाएँ भी स्कूल, कॉलेज, महाविद्यालय या विश्वविद्यालय के शरीरों को धारण कर मास-स्केल में (सामुदायिकरूप में) वही स्टाफ (मसाला) तैयार करने लगें या उससे निम्न श्रेणी का, जैसा उन शिक्षासंस्थाओं में तैयार होता रहता है।

आप तो सब प्रकार का अनुभव रखते हैं। क्या आप नहीं देख रहे हैं कि आज जब अंग्रेज शासन की बागडोर छोड़ कर चला गया है और हम भारतीयों को एक प्रकार से भूमिधर बना गया है अर्थात् राजनैतिक दासता-पाश से अब हम मुक्त और स्वतन्त्र हो गये हैं, तो आर्थिक सांस्कृतिक और औद्योगिक अर्थों में स्वयं ही अपने को स्थान स्थान और समय समय पर जकड़वाने के लिए उत्सुकता के साथ संलग्न हैं।

दुर्भाग्य की बात है कि अभूतपूर्व समारोह के साथ जिन प्रधानमन्त्री महोदय का संसार स्वागत कर रहा है और जो गाँधीवाद से एटमवाद को पराभूत करने के स्वप्न देख रहे हैं, वे ही वामनरूप धारण करके बलिरूप पाताल के अधिपति से अन्न, धन और विशेषज्ञ, वैज्ञानिकों की याचना कर रहे हैं और इधर,—

"दैहिक, दैविक भौतिक तापा,
रामराज नाहिं काहुहि व्यापा।"

रामराज्य के इस आदर्श का स्वप्न देखने वाले भारतीय शासकों के हाथों से भारतीय प्रजा का कितना इष्ट या अनिष्ट हो रहा है। दूसरे शब्दों में बबूर के बीज बोकर हम अंगूर की अधिक से अधिक उपज प्राप्त करना चाहते हैं। इस श्रमशीलता को क्या नाम दिया जाय, क्यों कि अब तो हमारी करतूत जैसी है, उस का फल हम भुगतने के लिए विवश हैं। अब और किसको कोसा जाय।

इस दुर्दशा का मूल कारण है साम्प्रदायिकता, धार्मिक साम्प्रदायिकता से अनिष्ट अवश्य हुआ, किन्तु भारत-विभाजन के साथ उसका अन्त सा हो गया किन्तु उसके उपरान्त जो राजनैतिक साम्प्रदायिकता, आर्थिक साम्प्रदायिकता, सांस्कृतिक सांप्रदायिकता एवं औद्योगिक साम्प्रदायिकता का प्रादुर्भाव हुआ, उनसे देश परित्रस्त और परिक्लान्त हो रहा है।

आज ऐसा विरला ही मनुष्य मिलता है जो यह भावना रखता हुआ प्रतीत न होता हो कि जिस पार्टी, समूह, दल, संघ, समाज या संस्था में वह है, उसके अतिरिक्त भी कहीं कोई सच्चा और अच्छा भला मनुष्य हो सकता है।

धारणा तो ऐसी बन गई है कि मेरे घर में ही सब गुणी लोग हैं और बाहर सब निकृष्ट लोग हैं। इसी का नाम घोर सांप्रदायिकता है। फिर नाम उसका जो कुछ भी हो। इस साम्प्रदायिकता को पनपाने के लिये महान् पुरुषों के नाम 'शुद्ध घी' के साईनबोर्ड से कम चमत्कारिक प्रभाव नहीं रखते हैं। ऐसा सम्प्रदाय की ओर से आन्दोलन करने वाला अनुभव करता फिरता है।

एक अनुरोध आपसे यह है कि आप कष्ट करके एकवार स्वा० जी की गोकरुणानिधि पढ़ें। उसमें भी अन्त में जो एक विधान 'गोकृष्यादिरक्षिणी सभा' का दिया हुआ है, उसके उद्देश्य ध्यान से पढ़कर अपनी सम्मति इस विषय में दे दें कि क्या वर्तमान समय में इस प्रकार की कोई सर्वथा असाम्प्रदायिक और ऐहिक सुख-साधक बनना किसी अर्थ में भी उपादेय हो सकता है।

इस विधान के उद्देश्यों में सार्वकालिकता, सार्वभौमिकता, और सार्वजनीनता स्पष्ट प्रतीत होती है कि जिसके कारण इस प्रकार के संगठन का सदस्य प्रत्येक देश का नागरिक बिना किसी भेदभाव के बन सकता है। आपकी सम्मति आने पर पुनः लिखा जायगा। पत्र और बड़ा न हो जाय इसलिये विराम। अत्रस्थ सबका अभिवादन।

भावत्कः
रामदत्त शुक्ल

---

[२]

ज्वालापुर
२७-६-५०

वानप्रस्थ आश्रम से महाविद्यालय के देवाश्रम को गया। वहाँ पारिजात पुष्पों की अनवरत वृष्टि से देवलोक (आपका स्थान) दिव्य और सुगन्धित पाया। उसके आनन्द को व्यक्त वायु ही उठाता रहता है। उसके द्वारा कितने अव्यक्तों को सुगन्धि पहुँच रही होगी, कौन जानता है।

आप शैलराज के क्रोड़ में प्रकृति-सौन्दर्य का अनुभव कर रहे होंगे अथवा मर्त्यलोक के प्राकृत योगों के स्थान पर सूक्ष्मवृत्ति उद्रेक-जनित अध्यात्मप्रसाद का उपयोग कर मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा

का समन्वित प्रसाद को प्राप्तकर, चित्तप्रसाद का अनुभव कर रहे होंगे..............वानप्रस्थाश्रम रज तम का अखाड़ा प्रतीत होता है। दैवीसम्पद् की प्रतिष्ठा अथवा सात्विकता कोमल केलिको आरोपित कर उसको इस झाड़-झंखाड में पनपाने वाले गुलाब का तेल निकालने जैसा भीषण व्यापार है। कुटिल प्रपञ्चपूर्ण काई की अनेकों तयें पड़ी हैं।

—रामदत्त शुक्ल

[३]

लखनऊ
६-१०-५१

जून के अन्तिम सप्ताह में आपका देवाश्रम (देवलोक) देखा। फिर सितम्बर में भी दो दिन वहाँ रहने का योग मिला। आपके बिना आपकी आश्रम कुटी निष्प्राण प्रतीत हो रही थी। ऐसा होना स्वाभाविक ही था। पर्वतस्थ आप जिस दृष्टि से भूखण्ड प्राणियों के देखते हैं। भूखण्ड के लोग भी मर्त्यभावापन्न चक्षु से पर्वतशिखरों को देखते हैं। इन दोनों दृष्टियों में बड़ा अन्तर है।

लखनऊ में कांग्रेस-साधकों का पुण्योदय पक्ष चल रहा है। टिकिट प्राप्ति के लिये जिस संलग्नता आस्था, धृष्टता और जिस श्वानवृत्ति का सतत प्रदर्शन हो रहा है और नवग्रह जिन विचित्र प्रेरणाओं से प्रभावित हो रहे हैं और सौदा करने में मग्न हैं, उसकी उपमा के लिये कोई समकक्ष घटना मिलना कठिन है। आश्चर्य है आप सदृश विशुद्ध देशहित साधक तपस्वियों के लिये इस टिकिट घर में कोई पूछ नहीं है। यहाँ लम्बी पूँछदार पशु घोड़े समझे जाते हैं।

—रामदत्त शुक्ल

[४]

लखनऊ,
२३-१०-५१

आप मेरठ आर्य महासम्मेलन में भी उपस्थित न होंगे और आगामी निर्वाचनों में भी सत्तारूढ़ सूत्र-संचालकों द्वारा वरण न किये जायेंगे यह दोनों बातें एक अर्थ में ठीक ही हैं। किन्तु सार्वजनिक जीवन से नितान्त अलिप्त रहने वाले वीतराग महानुभावों के लिये तो वस्तुतः कोई रस नहीं हो सकता। उनके लिये तो "अरतिर्जनसंसदि" गीता का यह उपदेश उपयुक्त है।

लोकसंग्रह में सतत संलग्न कर्मनिष्ठों के लिये संभवतः इसी प्रकार की अरति अभिलषणीय नहीं मानी जाती है। व्यक्तिगत रूप से निःस्पृह होकर भी लोकहितार्थ ऐसे कार्य किये ही जाते हैं कि जिनका परमार्थतः कोई मूल्य और महत्व नहीं होता है। फिर ऐसे कार्य से लोकहित होने की संभावना को अस्वीकार भी कदाचित् नहीं किया जाता।

—रामदत्त शुक्ल

[५]

लखनऊ, १४-७-५१

हिमालय के सुरम्य एवं शीतल क्रोड में विराजमान आपकी अन्तःस्थिति और परिस्थिति दोनों में ही तदनुरूप अन्तर हो गया होगा। कदाचित् इसी परिवर्तन के समस्थली की परितप्त वात और घर्म को छोड़कर लोग पर्वत रात्रि की विषम, कर्कश, कठोर भयावह पर रमणीक गुफाओं की शरण लेते हैं परन्तु भारत की आज क्या स्थिति है।

" Studying India is like leaning over the brink of an abyss from which a timeless past seems to arise envelop and penitrate one's every being: it means experiencing a terrible climate in which life and death intermingle, where human density is almost pathological and where an intence atmosphere eloquently expresses the primacy spiritual. "

स पर आप सदृश गम्भीर एवं दूरदर्शी विचारक समुचित दृष्टि से दृष्टिपात करके साधारण नागरिकों का सूचिमेद्य अज्ञानान्धकार में पथ-प्रदर्शन सफलता-पूर्वक करने में समर्थ हो सकते हैं।

—रामदत्त शुक्ल

[६]

लखनऊ, १८-७-५१

आज गुरुपूर्णिमा है किन्तु वर्तमान धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र में गुरुशिष्य-परम्परा का तो सर्वथा लोप-सा प्रतीत होता है। सर्वत्र विद्याभ्यास का विक्रय और क्रय हो रहा है। परम्परा को पुनर्जीवित करने के लिये श्रद्धालुओं ने आचार्यकुल और गुरुकुलों की स्थापना की थी परन्तु नई बोतल में पुरानी मदिरा जिस प्रकार रह सकती है, इसी प्रकार इन संस्थाओं का भविष्य भी हुआ। स्वभावतः शनैः शनैः यह सब आधुनिकता की ओर ही 'यन्त्रारूढानि मायया' के अनुसार निकलती सी प्रतीत हो रही हैं।

वैदिक शाश्वत सत्य और ऋतों और तदनुकूल व्रतों से सर्वथा विपरीत राज्य-शासन तन्त्र में उच्छेद ही हो सकता है, हो भी रहा है। फिर कौन किस का गुरु और कौन किसका शिष्य है। सबके अधिकार समान किन्तु कर्तव्य किसी का कुछ भी नहीं रहा है। अधिकार-लिप्सा मात्र से प्रेरित हैं। पशु अपनी पाशविक आवश्यकताओं रोटी, वस्त्र, निवास, औषध प्राप्ति के लिए हीनता के साथ संलग्न है। इसी सिद्धान्त के अनुसार विधान की रचना की गई है। उस विधान के अनुसार ३६ कोटि भारतीयों में से १८ कोटि मतदाता विनायक या वानर को निर्वाचित करेंगे। अपनी योग्यता के अनुरूप वानर-निर्वाचन की संभावना अधिक है, विनायक की न्यून। धर्मनिरपेक्षिता की दृष्टि से तो वानर ही सोलह आने योग्य होगा। विनायक की प्रवृत्ति धर्मापेक्ष होने से, अनधिकारी समझा जायगा।

—रामदत्त शुक्ल

लन्दन का पत्र

(श्री शन्तिसदन—लन्दन)

२६-३-१६५१

(१)

भगवान् की कृपा से भारत में ब्राह्मण के घर जन्म पाया। बालकपन में ही धर्म और विद्या से प्रेम हो गया। वेद-शास्त्र-पुराण आदि की शिक्षा पाई। कृष्ण की भक्ति ने जीवन में एक नई ज्योति प्रकट कर दी। मैंने अपने जीवन को विद्या-प्रेम और धर्म-प्रचार में बिताने का इरादा कर लिया।

दस वर्ष तक भारत के अनेक नगरों में धर्म और ज्ञान का प्रचार करता रहा। बद्री, केदार आदि की यात्रा की।

भगवान की प्रेरणा हुई कि चल, अब संसार में गीताधर्म का प्रचार कर। उन्हीं की दया से जापान, चीन आदि देशों में धर्म-प्रचार किया।

सन् १६२६ में अंग्रेज-देश में आया। प्रचार शुरू किया। अनेक कठिनाइयों का सामना किया। सिवाय राम के कोई सहायक न था। ईसाई लोग तंग दिल देखे गये और किसी भारतवासी को धर्मप्रेमी न पाया।

बीस साल बीते तो मैं ऑक्सफोर्ड के ट्रिनिटी कॉलेज में गीताधर्म पर भाषण करने गया। वहाँ अध्यापक एच० एच० प्राइस से परिचय हुआ। आपने मुझे अच्छे प्रेम से साथ दिया। आपने गीता-धर्म की दीक्षा ली और तन मन से प्रचार में सहायता देने लगे। मैंने गीता का सारांश अंग्रेजी में उलथा किया। श्री प्राइस ने उसका संशोधन किया। आज वे जगत्-प्रसिद्ध ऑक्सफोर्ड में प्रोफेसर हैं। अब भी मेरे परम मित्र तथा शान्तिसदन के सहायक हैं। संसारप्रसिद्ध धुरन्धर विद्वान डाक्टर ब्रॅड से परिचय हो गया, ये भी मेरे सहायक होगये और योगानुसार ध्यान-क्रिया में योग देने लग गये।

एक अंग्रेज महिला पचास साल से वेदान्त का अध्ययन कर रही थीं। इतिहास और विज्ञान में कुशल थीं। प्रचुर-धनवती थीं। उनका नाम मिसेस मेरी मिचीमन। आपने मेरे एक-दो भाषण सुने और आपको विश्वास हो गया कि वेदान्त में मेरा धर्मप्रचार किसी स्वार्थवश नहीं है। इसलिए

नोट :—श्री हरिप्रसादशास्त्री जिनका कि यह पत्र है हमारे पुराने महाविद्यालय के साथी हैं —नरदेवशास्त्री

उन्होंने मुझे एक अच्छा मकान दिखला दिया। मकान का किराया ६०००) रु० वार्षिक और अन्य वार्षिक खर्च आपने देना स्वीकार किया। यह वही स्थान है जिसको शान्तिसदन कहते हैं और जहाँ मेरा निवास है।

यहाँ एक पुस्तकालय है और साथ ही रामध्यान-भवन भी। यहाँ प्रति सप्ताह तीन बार गीता, उपनिषद्, धर्म का प्रचार होने लगा। मेरे व्याख्यानों का संग्रह प्रकाशित हो गया है। इस पुस्तक का नाम है Wisdom from the East, वुइजडम् फ्रॉम दी ईस्ट। विद्वानों ने बहुत पसन्द किया। 'योगवासिष्ठ' का सार भी अङ्गरेजी में कर डाला है। धीरे २ मेरे नाम पर बीस ग्रन्थ प्रकाशित हो गये। सूरदास, तुलसी, कबीर, हरिश्चन्द्र आदि कवियों के विषय में अनुवाद छपवा कर प्रकाशित किये। सम्पूर्ण रामायण का गद्य-पद्य भी अनुवाद रूप में तैयार है। राम त्रैमासिक पत्र भी छपता है।

उपदेश में आने वाले लोगों में से अनेक नर-नारियों ने ध्यान-भजन में शिक्षा ली और भारतीय नाम को धारण कर लिया है। आज कल ऐसे शिष्यों की संख्या २०० के लगभग है। उनमें से—निम्नलिखित परिचय कराने योग्य हैं,—

रोवेरिवा, डचेस ऑफ सोमरसेट—चार वर्ष तक शान्तिसदन में रह कर ध्यान भजन करती रहीं।

लेडी नेयरी वेव—आप कोई सात वर्ष से सहायिका हैं। अति प्रसिद्ध खानदान से हैं।

लेडी हैलीडे— यहाँ के जगत्प्रसिद्ध विद्वान् की धर्मपत्नी हैं—दस साल से शान्तिसदन की श्रद्धा से सेवा कर रही हैं।

आप शान्तिसदन के जीवन और प्रभाव पर दृष्टि डालिये। हजारों नवयुवक और युवतियाँ स्कूल कॉलेजों में गीता-शास्त्र का अध्ययन कर रहे हैं। इस समिति के शिष्य जो तीन सौ से अधिक हैं नित्य भगवान् का भजन करते हैं। मद्य, मांस, गोमांस आदि का त्याग किया है। सरल जीवन बिताते रहते हैं। वेदान्त का अभ्यास करते रहते हैं। कई पंचदशी तथा शाङ्कर भाष्य विचारते रहते हैं। सन्मार्ग पर चलते रहते हैं।

दस बालकों ने मेरी प्रेरणा से एम० ए० पास किया है, और अब धर्मप्रचार में लगे हैं। इनको शाङ्कर-सिद्धान्त का ज्ञान है। प्रतिसप्ताह यहाँ के कैक्सटन हॉल में कोई न कोई धर्म, योग, भक्ति पर व्याख्यान होता ही रहता है।

तीस नर-नारियाँ ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर, तत्वानुसन्धान में संलग्न हैं। ये एकादशी का व्रत रखते हैं। सब प्रकार के आराम को त्याग महामन्त्र का जाप करते रहते हैं। जो लोग शान्तिसदन की कन्याओं को देखते हैं वे इनके शान्ति, सरलता, त्यागभाव आदि गुणों पर मुग्ध हो जाते हैं।

सायंकाल कोई पचास सत्संगी भगवान् कृष्ण के मूर्ति की आगे भजन कीर्तन करते हैं। जब हिटलर के आक्रमण हो रहे थे तब भी हमारा भजन-कीर्तन कभी बन्द नहीं हुआ।

"हरे राम हरे कृष्ण
हरे कृष्ण हरे हरे"

की गूँज होती ही रही, जयघोष होता ही रहा।

—हरिप्रसादशास्त्री



मेरी भी राम कथा सुनिये

(२)

शान्ति सदन
३० लैन्सडाऊन क्रीसेण्ट
लन्दन डब्ल्यू ११
१६ मई १६५१

प्रियवर मित्र,

मेरी भी रामकथा सुनिये। न जाने किस दिन की प्रेरणा से भारत से चल जापान १६१५ में आया। धर्मोपदेश मात्र अभीष्ट था। वहाँ के कॉलेजों में प्रचार करता रहा। वासदा युनिवर्सिटी में शिक्षा देने लगा। जापानी पुलिस और भारतीय युवा जो अपने को देशभक्त कहते थे खिलाफ हो गये। धर्म प्रचार न करो, अंग्रेजों के खिलाफ प्रचार करो कह कर गालियाँ देने लगे—

१६१८ में चीन में आया, सन येट सेन के अनुरोध से आया। जापानी भाषा सीख चुका था, जापानी इतिहास, काव्य-कला आदि से प्रेम हो गया। चीन के कई प्रसिद्ध कॉलेजों में इतिहास और धर्म पर शिक्षा दी, सैर की। राम की उपासना मन में भरी थी, उसी से बन गया, नहीं तो विषय-कूकर बन मारा मारा फिरता। दूसरा कारण जिसने पतन से रोका वह विद्या-प्रेम था। यही पागलपन अधर्म से हटाता रहा। चीन में एक उच्च कुल की जापानी कन्या से जिसके माता पिता को मैं जानता था, विवाह किया। ३२ साल से यह नारी-रत्न मेरे दुःख और किंचित् सुख में भाग लेती रही है। धैर्य और धर्म की प्रतिमूर्ति है। कभी भी वैमनस्य नहीं हुआ।

अब २२ साल से यहाँ हूँ। यहाँ के कतिपय लोगों ने प्रेम और श्रद्धा से साथ दिया है। ऑक्स-फोर्ड और केम्ब्रिज के प्रसिद्ध विद्वानों ने सहायता कर "शान्तिसदन" स्थापित किया। छोटा सा मकान है, किराये पर लिया है। ८०० पौंड वार्षिक खर्च है। सब अङ्गरेज धर्मभक्त होते हैं।

दस युवा एम्० ए० पास कर संस्कृत सीख रहे हैं और अन्य नगरों में गीता तथा धर्मप्रचार करते हैं। बीस ग्रन्थ प्रकाशित हो रहे हैं। बाल्मीकीय रामायण का उल्था छप रहा है। प्रति सप्ताह तीन वार उपदेश करता हूँ केवल दर्शनशास्त्र अथवा हरिभजन का प्रचार। श्रोताओं की संख्या पचास से ऊपर। एक त्रैमासिक 'सेल्फ नॉलेज' भी प्रकाशित होता है। लगभग ५०० नरनारी गीता, पञ्च-दशी का पाठ और ध्यान करते हैं। सबने तमाखू, मद्य, मांस को त्याग दिया है। सादा जीवन धारण किया है। भगवान् की दया से मुझे अब मन पर काबू है, पूरा तो नहीं। रागद्वेष-रहित मन विद्या और धर्म का भक्त है। न नाम चाहिये और न धन चाहिये।

अब शरीर मधुमेह रोग ने दबाया है। ७० साल की आयु हो गई है। पूर्वकृत पापों पर प्राय-श्चित्त कर रहा हूँ। आपको सदा याद करता रहा हूँ। ज्वालापुर गुरुकुल की रिपोर्ट भेजिए। मुझे अब भी गुरुकुल से प्रेम है। कोई सेवा कर सकूँ तो लिखिए।

आपका प्रेमी सेवक
हरिप्रसादशास्त्री



शान्ति सदन
३० लैन्स डाऊन क्रीसेण्ट
लन्दन डब्ल्यू ११
२-७-१९५१

(३)

भगवान्,

आपका पत्र मिला, मन आमोद से पूर्ण होगया। अच्छा सुनिए। सन् १९१३ या इसके लगभग मैं ज्वालापुर महाविद्यालय एक युवा मित्र काव्यतीर्थ के साथ गया था, आपसे मिलने। आपकी सादगी, धर्मप्रेम, स्वार्थरहितता, विद्या ने मन पर प्रभाव डाला। मैं महाविद्यालय का सदस्य बनगया। ३० रुपया चन्दा दिया। आपका साथ देता रहा। आपका पक्ष अपना धर्म समझा। जब से आपकी याद प्रायः आया करती है। राम जाने, आपको भूला नहीं।

मेरा जन्म बरेली नगर में हुआ था। पिताजी स्टेशन पर रेलबाबू थे। बचपन से प्रेम की आदत होगई थी। माता पिता से प्रेम, गली में खेलने वालों से प्रेम, सहपाठियों से प्रेम, निःस्वार्थ प्रेम, फिर प्रकृति से प्रेम, शास्त्र काव्य आदि से प्रेम! अन्त में घर घर बसा जगत् में अधिष्ठानरूप राम से प्रेम। युवावस्थाने अनेक वार पापों के कूप में गिराया, धर्म को भुलाया तोभी भगवान् ने बचाया, प्रेम ने सहारा दिया। बाहरी केदार आदि की यात्रा ने भगवान् की मूर्ति प्रकृति में दिखादी।

संस्कृत, अंगरेजी, फारसी का अध्ययन प्रेम से किया। स्वामी रामतीर्थ जी से अति प्रेम होगया। बहुत कुछ सीखा। एक वार सरकारी नौकरी करी पर दिल न लगा। छल, गरूर, कपट से मन

घबराता रहा। एक कुर्ता और धोती में प्रचार। सनातन धर्म का यहां परवाना बना। जहां गया जनपद ने आदर दिया, पर पण्डितजन खिलाफ हो गये। कारण यह था कि मैं उपदेश में विज्ञान आदि का आश्रय लेता था और उनका उपदेश युक्तिशून्य रहता था। अनेक उपायों से निभाया, खैर मन तो पापरहित था। किसी से द्रोह नहीं था। पैसा पास नहीं, प्लेग हैजा आदि ने सताया।

जंग आगया। एक मित्र की सहायता से जापान को चलदिया, वहां भी संकीर्ण-मन देशभक्तों ने अनेक दुःख दिये। मैं विश्वभक्त था, देश भी विश्व का एक अंग है। मुझे इंग्लैण्ड से द्वेष न था। एक बार किसी ने मेरे घात की ठानी। वह चरित्र रहित, ठग और दुष्ट जीवन बिताता था।

मुझे अपना दास समझिए। महाविद्यालय में अब भी प्रेम है। कोई सेवा कर सकूँ तो लिखिये। अब मधुमेह रोग ने शरीर कमजोर कर दिया है, कभी कभी चलने-फिरने में भी कष्ट होता है। अंग्रेज मित्र ने एक मोटर भेंट कर दी है।

भारत आने का विचार तो है पर कहीं रहने को स्थान नहीं। एक भाई धनवान् है, पर उससे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। दूसरा भाई गरीब है। भगवान् की दया से यश, धन, गौरव की इच्छा नहीं। मरगया तो क्या परवाह! जीता रहा तो विज्ञान, प्रेम, धर्म-सेवा, ध्यान-भजन में रमण करूँगा।

"यथा नियुक्तोऽस्मि, तथा करोमि"।

आज्ञा दीजिए कि आपका प्रेम मन में बसाकर उनदिनों को याद करलूँ जब महाविद्यालय में सूखी दाल रोटी खाते थे और प्रेम से रहते और वार्तालाप करते थे।

कोई २१ साल से हिन्दी न लिखी, न बोली। अंगरेजी, जापानी, चीनी भाषा का व्यवहार रहा। संस्कृत प्रतिदिन बाँचता हूँ।

संपूर्ण वाल्मीकि रामायण अंग्रेजी उल्था किया है। छप रहा है।

आपका प्राचीन दास
हरिप्रसादशास्त्री

शान्तिसदन
३० लैन्सडाऊन क्रीसेंएट
लन्दन डब्ल्यू ११
६-१०-१९५१

(४)

भगवान्,

नमोनमः,

अभी मैं जीवित हूँ, जगत् की चाल-ढाल देख रहा हूँ। जैसे शरद् का चन्द्रमा संसार और

अन्य लोगों को देखता है। वह अन्य लोगों को देखता हुआ अपनी चाल चलता जाता है। न जाने किस देव की प्रेरणा से यह संसार चक्र चल रहा है। कौन जाने और कौन जाने कैसे ?

भारत में विद्याप्रचार और धर्मप्रचार की आवश्यकता है। देवभक्ति और शैतानभक्ति एक ही बात हो रही है, गोटे के महाकाव्य में यह बात दिखलाई गई है। "जयहिन्द" ठीक है पर 'जयधर्म' भी जरूरी है। और सुनिए, शान्तिसदन अपने नव भवन में जाने वाला है। यह यूरप में पहिला ही योगमन्दिर है, इसमें विशाल पुस्तकालय है। वेद, शास्त्र, इतिहास काव्य, आदि के ५००० ग्रन्थ हैं।

शरीर तो शरीर ही है, दिन दिन क्षीण होता जारहा है। पर राम की दया से राग-द्वेष छूटते जारहे हैं। मन शान्ति और भजन चाहता है। बहुत मिल लिए। बहुत जगत् देख लिया। बहुत सुख-दुःख भोगे, शोक-मोह देख लिये। तत्व यह निकला कि विद्याप्रेम, रामभजन और चुपचाप परोपकार कर। दोष-दृष्टि कट रही है। भारत के पुत्र मुझे गाली दें और निकम्मा कहें तो अच्छा ही है। इसमें मेरा भला ही है। अंग्रेज प्रशंसा करें, जापानी प्यार से मिलें, चीनी छल की बातें करें, ठीक है तुम्हारा भला हो। भवभूति उत्तर रामचरित्र, गोटे, तुलसी, बाल्मीकि आदि काव्यों का विचार करो।

मन को ईश्वर और विद्याप्रेम में साधा तो, धूर्तजन अनेक बाधाएँ डालेंगे।

इन दिनों लन्दन में हजारों (भारतीय) नरनारी चलते फिरते दिखलाई देते हैं। इनके चेहरे सुस्त हैं। अनेक अपने नववस्त्रों को देखकर ही प्रसन्न हैं... ... ... (पढ़ा नहीं जाता)

नया एलेक्शन कुछ अधिक भलाई करता नहीं दीखता। गान्धी जी ने पोलिटिकल आजादी दिलायी पर धर्म न सिखाया। सत्यप्रेम, वेद-अध्ययन, काव्यरुचि नहीं सिखाई।

मेरा मन यही चाहता है कि गंगातट पर एकान्त में शान्ति के साथ उपनिषद्-विचारों में शरीर त्याग दूँ। अपना जीवन अति सादा है। मान और यश की इच्छा नाम को भी नहीं है राम और प्रातः सायं दो रोटी मिल जायँ और बस। और क्या चाहिए।

अभीतक महाविद्यालय की कोई रिपोर्ट नहीं आयी।

आशा है आपका शरीर अब अच्छा होगा। आज कैक्सटन हॉल में प्रसिद्ध प्रोफेसर एच० एच० प्राइस के आधिपत्य में मैंने धर्मघोष किया। ३००० श्रोता आये थे। कई सप्ताह से पांच मित्र इस सभा की तैयारी में लगे थे। १५० रेल के स्टेशनों पर विशाल नोटिस लगाये थे।

ऑक्सफोर्ड का पत्र

(५)

ये यह पूछ रहे हैं कि संस्कृत की शिक्षा किस प्रकार प्राप्त की जाय जिससे भारतीय संस्कृति का ज्ञान हो जाय और वे इंगलैण्ड में उसका प्रचार कर सकें।

—नरदेवशास्त्री

New College Oxford
(England)

Dear Sir,

Respectful Greetings.

I am a member of Shanti Sadan, the academy founded in London by Dr Hariprasad Shastri for the study and practice of Adhyatma Yoga.

I am trying to learn to read Sanskrit here in the University course and also to learn to read Hindi (for witch there is no official institution here). Dr. Shastri has suggested to me that I should write to you and ask, in a general way, whether you could give me any help or advice. My progress during one year has been poor, though this is partly to be explained by the absence during that time of the regular Professor in India.

There is a good library of Sanskrit books, but the actual teaching is done by European professors in a European fashion. The official course includes the study of the Rig Veda and of the Buddhist language Pali, but does not include Hindi. Still I have learnt to read Hindi slowly and have read part of "Prem Sagar" and of Professor Baldev Upadhya's "Shri Shankaracharya." In Sanskrit however I still find great difficulty in making out the meaning of even the easiest passage.

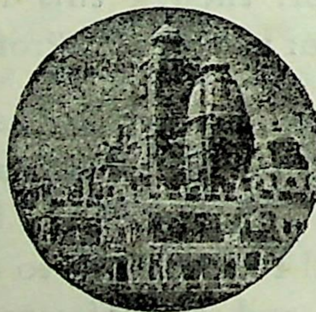
Perhaps you will not mind if I ask you to send me a word general encouragement and advice. I was in India with the British Army during 1945-1946 and visited Hardwar, Rishikesh and Lakshman Jhula, as well as Brindavan and Mathura.

I would very much like to acquire a real knowledge of the great culture of India, and try to help to transmit it to the people of England. There are also a few other Englishmen in Shanti Sadan who hope one day to acquire some knowledge of Sanskrit.

Your respectful servant

Tony Alston

टॉनी अल्स्टन



❀ ॐ ❀

डायरी के पन्ने

मुख्य-मुख्य घटनाएँ

(१९५२)

ता० १६ नवम्बर—डी० ए० वी० कॉलेज में ऑल इण्डिया डिबेट। 'संसार में युद्धप्रथा आवश्यक तथा अपरिहार्य', हम निर्णायक थे। लखनऊ वाले ट्रॉफी ले गये। १८—प्रान्तीय राजनैतिक कॉनफरन्स को सन्देश 'आत्मनिरीक्षण आवश्यक' सम्मेलन काशी में हो रहा है। २१—'अपने क्षेत्र को जानो' ३६ प्रश्नों के उत्तर ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी तथा प्रान्तीय कमेटी में भेजे। २७—डिस-एबल्ड असोसियेशन में भाषण। २९—'अमरीका में नीग्रो के विषय में तथ्य' पुस्तक पढ़ी। राष्ट्रपति के जन्म दिन के उपलक्ष में बधाई भेजी।

लखनऊ

३०—श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी से विविध विषय पर चर्चा।

ता० २ दिसम्बर—विधान सभा में जौनसार बाबर बिल आया। ४—श्री मञ्जूरअली सोख्ता से बातचीत विधान सभा के विषय में। ५—काशी के श्री गोपालशास्त्री दर्शनकेशरी संस्कृत की उन्नति के विषय में। ६—करपिया (बाराबंकी) किसान सम्मेलन के सभापति रहे। ११—स्व० श्री लक्ष्मीधर वाजपेयी के विषय में हि० प्र० सभा कानपुर को लिखा। ११—आर्य जगत् के प्रसिद्ध कार्यकर्ता चौबे रामदुलारे एडवोकेट का फतहगढ़ में देहावसान। १२—विधान सभा में राजकुमार रणञ्जयसिंह जी का गोवध-निषेध का प्रस्ताव आया। मुख्यमन्त्री ने जाँच कमेटी बैठाने का आश्वासन दिया। १३—हम हैदराबाद की कांग्रेस की स्वागत समिति के सदस्य बने। १६—श्री रामलु (आन्ध्र) का देहावसान। अब निश्चित ही आन्ध्र-प्रान्त बनेगा पृथक्। १७—श्री नेहरू तथा राधाकृष्णन् की घोषणा पृथक् आन्ध्र प्रान्त बनेगा। १८—मेरठ, रोहिलखण्ड, कमायूँ डिवीजन के समाचार पत्रों का इतिहास लिखकर श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी को दे दिया। वे'हिन्दी पत्रों का इतिहास'लिख रहे हैं। २६—जब हम पूने का 'केसरी' पढ़ते हैं तब यह प्रतीत होता है कि हम पूने में ही बैठे हैं। २८—लखनऊ विश्वविद्यालय का कनवोकेशन, दश सहस्र की भीड़ थी।

(१९५३)

ता० ५ जनवरी—हरिद्वार, जयभारत संस्कृत विद्यालय में हमारे सभापतित्व में पञ्चपुरी की समस्त संस्कृत पाठशालाओं में प्रतियोगिता। ९—देहली से हैदराबाद कांग्रेस के लिये प्रस्थान ग्रैण्ड ट्रंक एक्सप्रेस से। ११—प्रातः काजीपेठ पहुँचे, हमारा भाञ्जा रामेश्वरराव मिला।

८॥ बजे नामपल्ली पहुँचे। बंगाल के सतीशचन्द्रदास यहीं मिले। प्रदर्शिनी का उद्घाटन करेंगे। हम श्री नरेन्द्र स्वागत मंत्री के अतिथि रहे। सायं समस्त नानलनगर घूमे। २००० स्वयंसेवक तथा २००० पुलिस का प्रबन्ध है। १३—गोवलकोंडे का किला देखा, मिलाप को वृत्तान्त लिखा, दूसरे दिन ही उसमें छप गया, सायं प्रदर्शिनी देखी, नानलनगर के सब कैम्प देखे, पचासों परिचित मिले। १४—प्रातः हवाई अड्डे पर श्री नेहरू जी का अपूर्व स्वागत देखा—समस्त नगर सुसज्जित। १५—स्वयंसेवकों की रैली देखी। १५,१६,१७—विषय निर्धारिणी में नेताओं के भाषण सुनें, आर्यनगर में हमारा भाषण। १७,१८-कांग्रेस खुला अधिवेशन समाप्त। १६—आर्य कनवेन्शन में हमारा भाषण। १६,२०—दो दिन नगर में परिभ्रमण, इष्ट मित्रों से मिलन। २१—उस्मानाबाद पहुंचे, २०० मील की यात्रा रही। २२,२३—उस्मानाबाद में सेठ नेमचन्द गांधी के अतिथि। २४—काजीपेठ आये, हनमकोण्डा बन्धु-बान्धवों से मिले। २५—वरंगल का किला देखा। २७—वरंगल आर्यसमाज में भाषण। २८—तेलंगाने के ग्रामों की सैर। ३१—नागपुर के लिए प्रस्थान।

ता० १ फरवरी—नागपुर स्टेशन पर अनेक सम्बन्धी मिले। २—हरिद्वार पहुँचे। पिछली डाक देखी। ८—ज्वालापुर आर्यस्कूल के शिलान्यास समारम्भ में गये। १२—ऋषीकेश गांधी मेले में भाषण दिया।

लखनऊ

१६—विधान सभा में राज्यपाल के. एम. मुन्शी का भाषण। १८—राज्यपाल को धन्यवाद देने का प्रस्ताव पास। २१—५३-५४ का बजट प्रस्तुत। २४—अध्यापकों का सत्याग्रह चल रहा है। २५—बिहार के स्वामी अभेदानन्द मिले। २७—सिंचाई बजट पास।

ता० ५ मार्च—आज शिक्षा-अनुदान पर हम बोले। सरकार की ओर से संस्कृत की शिक्षा की उपेक्षा पर दुःख प्रकट किया। मंत्री ने कहा संस्कृत विश्वविद्यालय अवश्य बनेगा। ७—लन्दन के श्री जेकब कलकत्ते आये हैं, ज्वालापुर में मिलेंगे। ८—स्वा० सत्यानन्द जी से बलरामपुर हॉस्पिटल में मिले। १६—देहरे-कालसी का डेपूटेशन चौ० चरणसिंह से मिला-डेयरी के लिये उनका ग्राम उठाया जा रहा है। मंत्री ने बात नहीं मानी। १७—हम शिक्षासमिति के सदस्य चुने गये। १८—देहरे में अमरीकन पादरियों की हत्या। २२—अध्यापकों का सत्याग्रह बल पकड़ गया। २४—बजट (५३-५४) पास। २६—शिक्षासमिति के अधिवेशन में सदस्यों से परिचय।

मसूरी

ता० ३ अप्रैल से ७—भटभेड़ इलाके का पैदल दौरा। पं० शीशराम साथ थे। ८—मसूरी में वृक्षारोपण विधि राज्यपाल द्वारा। ६—राज्यपाल का देहरा म्यु० बोर्ड की ओर से अभिनन्दन।

ज्वालापुर

११—महाविद्यालय के उत्सव का प्रथम दिन। १३—राज्यपाल का स्वागत, प्रभाव अच्छा रहा। २०—हम देहरा जिला नियोजन समिति के सदस्य चुने गये। २२—अध्यापकों का सत्याग्रह स्थगित।

देहरादून

ता० ३ मई—जेल-निरीक्षण। १९३० में हमारा लगाया हुआ आम्र वृक्ष बहुत बड़ा हो गया। देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई। ४—हर्बटपुर डॉ० लैहमैन से अक्षि-परीक्षा कराई।

भोगपुर

७—पाँच दिन भोगपुर, थानों, मालकोट, गडूड की यात्रा। १०—को डोईवाला में रहे।

ज्वालापुर

२१—बीकानेर के श्री विद्याधरशास्त्री तथा भिवानी के वसिष्ठ जी मिले। संस्कृत सम्मेलन का निमन्त्रण दे गये। २४—गुरुकुल कांगड़ी आर्यसमाज में प्रवचन। ३१—श्री नेहरू जी के सेक्रेटरी का पत्र कि श्री नेहरू जी किस किस सन् में देहरे जेल में रहे। पत्र जेलर के पास भेज दिया।

देहरादून

ता० ६ जून—श्री प्रतापसिंह कैरो का स्वागत। सरदार जगतसिंह ने पार्टी दी। ८ जून से २ जुलाई—मसूरी निवास।

हरिद्वार

ता० १२ जुलाई—स्व० श्यामाप्रसाद मुकर्जी के अस्थिसमारोह में। १५—घनानन्द कॉलेज के विषय में डायरेक्टर को लिखा। १६—ऋषिकुल हड़ताली छात्रों का डेपूटेशन मिला। २४—बापू ग्राम ऋषीकेश का डेपूटेशन मिला। २६—ज्वालापुर में गुरुपूर्णिमा सानन्द समाप्त।

लखनऊ

ता० ३ अगस्त—पार्टी मीटिंग में पन्त जी का भाषण। १०—काश्मीर के अब्दुल्ला जेल में। १५—देहरादून में झण्डोत्तोलन, भाषण आदि। स्वतन्त्रता दिवस।

ता० २४ अगस्त—नारायण-भवन लखनऊ में वृक्षारोपण-विधि, पं० रामदत्तशुक्ल के साथ। २६—विधान सभा में आगरा विश्वविद्यालय बिल। २६—गणेशगंज आर्यसमाज में भाषण। २८—असेम्बली नवम्बर में खुलेगी। ३०—मुरादाबाद में पं० शंकरदत्त शर्मा से ४ घण्टे बातचीत, कांग्रेस, महाविद्यालय आदि विषय में।

देहरादून

३१—ठाकुर बप्पा छात्रावास देखा।

ता० १ सितम्बर—धर्मपुर में जन्माष्टमी समारोह। २—सरस्वती मन्दिर का उद्घाटन

किया। ३—पछवादून के बहुत लोग मिले। ८—प्रयाग के आयुर्वेद-पंचानन पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल को हीरक जयन्ती की बधाई। १४—सहारनपुर जिले की ग्राम सभा में सम्मिलित १५० पंच आये थे। २०—देहरा नगर में चुनाव सम्बन्धी विचार। ऋषीकेश सम्बन्धी विचार। २१—श्री पन्त जी की जन्मगांठ पर तार। २८—कांग्रेस भवन में श्री गौतम जी का भाषण। म्युनिसिपल बोर्ड में भी। ३०—म्यु० बोर्ड के लिये ४० नाम चुने गये।

ता० २ अक्तूबर—गांधी जयन्ती में भाषण, कई स्थानों में। १६—शाहन्शाह आश्रम उत्सव राजपुर में भाषण। १७ से २०—ऋषीकेश में आन्दोलन, जनसंपर्क। हरिद्वार, ज्वालापुर में भी, २३—श्री लालबहादुर शास्त्री का देहरे में भाषण। २८—श्री इन्दिरेशचरणदास (१३८०० मतों से) अध्यक्ष। ३०—राजस्थान से शास्त्रार्थ के लिये बुलावा। हमको मध्यस्थ बनाना चाहते थे। निषेध कर दिया। ३१—बोर्ड चुनाव समाप्त। कांग्रेस के २५ आये।

ता० १ नवम्बर—परेड में महात्मा गांधी की मूर्ति के सामने सभा, नगरपर्यटन, दरबार में सभा भोज। आगरा-निवासी पं० हरिशंकर शर्मा मिले।

ज्वालापुर

४—महाविद्यालय में भण्डारा कराया। १०—हनमकोण्डा (वरंगल) हमारे भाञ्जों का नये घर में प्रवेश। १३—लखनऊ में छात्रों का उपद्रव। हिन्दुस्थान टाईम्स में जस्टिस शंकरसरन का एक मार्मिक लेख छपा है "स्टूडेण्टस इन रिवोल्ट"।

देहरादून

१८ से २१—आर्यसमाज देहरादून का महोत्सव। २२—श्री जयप्रकाश नारायण का स्वागत। २७—पन्त जी का पत्र जनसंपर्क बढ़ाओ। २६—सहकारी समिति अजंबपुर का उत्सव हमारी अध्यक्षता में।

ता० १ दिसम्बर—सिंचाई विभाग ने आप-पाशी बढ़ाई, जनता में घोर असन्तोष। किसानों का प्रदर्शन। ६—डॉ० युद्धवीरसिंह मिले। १०—अमरनाथ वैद्य की माता का देहावसान। ११—बड़ी परेड में नेहरू जी का भाषण।

लखनऊ

संयुक्तप्रान्तीय विशाल प्रदर्शिनी देखी। १४—आगराविश्वविद्यालय विधेयक प्रस्तुत। २३—श्री रामदत्त शुक्ल अर्द्धाङ्गवात से पीड़ित। डॉ० नित्यानन्द से मिले। २५—पार्टी मीटिंग। २६—असेम्बली बन्द।

(१९५४)

ज्वालापुर

ता० ८ जनवरी—काश्मीर के जानकीनाथ धर मिले। ११—पण्डितों से जैन ग्रन्थ सम्बन्धी विचार। देहरादून की कन्या महाविद्यालय (महादेवी पाठशाला) की आचार्या श्रीमती लीलावती झांवर एम० ए० का देहावसान। १५—ग्वालेर के डा० महावीर सिंह तथा शिवशङ्कर गौड मिले। २२—वर्षा के कारण कल्याणी कांग्रेस के दर्शकों को कष्ट रहा।

हरिद्वार

२३—हमारे सभापतित्व में सुभाष घाट पर सुभाष दिवस।

देहरादून

२६—सर्वत्र गणतन्त्र दिवस की धूम। डॉ० एम्०एन० रॉय का देहावसान। कांग्रेस भवन में हमारे सभापतित्व में गोष्ठो। २७—टाऊन हाल में एम० एन० राय के विषय में शोक सभा।

भोगपुर

३१— श्री जगमोहन सिंह नेगी द्वारा गुरु रामराय स्कूल का उद्घाटन।

ता० ३ फरवरी—श्री दास बाबू की अध्यक्षता में नगर कांग्रेस का चुनाव। एकता लाने का प्रयत्न। श्री सन्त निहालसिंह जी मिले। ४—भूदान कमेटी हमारी अध्यक्षता में। ५—राजकीय शिक्षाविद्यालय संसद् में भाषण। डी० ए० वी० स्कूल वादविवाद सम्मेलन में भाषण। ६—बाला-वाला में हमारे सभापतित्व में किसान सम्मेलन। ७—श्रद्धानन्द अनाथालय उत्सव हमारे सभापतित्व में। श्री त्यागी जी भी बोले थे। ८—ठाकुर बप्पा छात्रालय में सभा हमारे सभापतित्व में।

लखनऊ

१०—कुँवर रणञ्जयसिंह से कुम्भ की दुर्घटना का वृत्तान्त सुना। ११—विधान सभा। राज्यपाल का भाषण। १२—दिनभर प्रयाग कुम्भ की चर्चा। १४—सीतापुर समाज में दो भाषण। १६—गांधी हॉस्पिटल में श्री रामदत्त शुक्ल से मिले। २०—वित्तमन्त्री का बजट पर भाषण। २२—श्री रामदत्त शुक्ल जी को घर (शाहजहाँपुर) भेज दिया। २३—बजट पर बहस, हम भी बोले।

देहरादून

२८—डी० ए० वी० कालेज में श्री महाजनी का दीक्षान्त भाषण।

ता० २ मार्च—ऋषीकेश में भेड़-प्रदर्शिनी । ४—असेम्बली में बजट पर बहस । ५—गणेश-गंज आर्यसमाज का उत्सव, भाषण । १३—श्री राज्यपाल को लिखा संस्कृत कालेज की दशा को ठीक करें । २५—१६५४-५५ बजट - विवाद समाप्त । २६—काशी संस्कृत कालेज के प्रिन्सिपल का अकस्मात् देहावसान । ३१—श्री सर सीताराम अध्यक्ष गोसंवर्द्धन-समिति से मिले ।

ता० १ अप्रैल—कुँ० रणञ्जयसिंह निःशुल्क शिक्षा पर बोले । ४—देहरादून नगर कांग्रेस कमेटी का चुनाव १८-४-५४ को निश्चित ।

ज्वालापुर

१२—गु० कु० कांगडी के सरस्वती संमेलन के सभपाति रहे । १५—महाविद्याल का महोत्सव सानन्द समाप्त । १६—वानप्रस्थाश्रम के उत्सव में ।

लखनऊ

१६—आज कांग्रेस पार्टी में उत्तरप्रदेश पुनःनिर्माण पर विचार रहा । ऑलइण्डिया का परिपत्र कि सदस्य लोग विरोधी दल से न मिलें, अपना वक्तव्य आयोग के संमुख दे सकते हैं । ११—प्रदेश के निर्माण पर उग्र वादविवाद । प्रातः पार्टी मीटिंग में श्रीमती विजयलक्ष्मी का भाषण । २२—श्री पन्तजी का भाषण एकता पर । २५—नव जीवन, स्वतन्त्र भारत को लेख भेजे "दिल्ली के पक्ष में" २८—प्रश्नों के समय पन्त जी ने कहा उत्तर प्रदेश को कोई बांट नहीं सकता ।

ता० १ मई—चार मास की जनसंपर्क की रिपोर्ट विधान मण्डल को दी ।

देहरादून

८ से १४—देहरादून हिन्दी साहित्य सम्मेलन की तैयारी में भाग लिया ।

दिल्ली

२८—श्री वृहस्पतिशास्त्री के पुत्र विश्वपति के विवाह में ।

देहरादून

३०—डी० आई० जी० से मिले । जिले की स्थिति पर विचार ।

ता० २ जून—कलाकेन्द्र में श्री रथीन्द्रनाथ ठाकुर (कवि सम्राट् रवीन्द्रनाथ टगोर के पुत्र) का स्वागत । ४—सर सीताराम द्वारा साहित्य-कला प्रदर्शिनी का उद्घाटन । सायं ६ बजे श्री वृन्दावनलाल वर्मा सभापति हि० सा० सं० का स्वागत । सायं ७ बजे श्री अरुणाचन्द्र गूह उप वित्त-

मन्त्री भारत सरकार के भाषण में । ५—नगर में सभापति का जलूस ८ से १० प्रातः । श्री टण्डनजी चार घण्टे लेट आये २-३० की गाड़ी से । ६—श्री विश्वम्भरसहाय प्रेमी के सभापतित्व में जनपद संमेलन । हि० सा० सं० का खुला अधिवेशन रात्रि १० बजे समाप्त । ७ प्रस्ताव पास । कवि संमेलन रात्रि १॥ बजे समाप्त । ७—प्रातः हमारे सभापतित्व में पत्रकार सम्मेलन ।

भोगपुर

८ से ११—इलाके भर के लोग मिले ।

मसूरी (जोलाय भर)

१२—शिक्षा मन्त्री हरिगोविन्द सिंह पधारे । श्री दीपचन्द कुकरेती से अमरीका की यात्रा का वृत्तान्त सुना ।

देहरादून

ता० १५ अगस्त—सर्वत्र स्वतन्त्रता दिवस की धूम ।

लखनऊ

२३—गैलरी में नवयुवकों का हुड़दंग । २८—शिक्षासमिति की बैठक ।

ता० २ सितम्बर—विधान सभा में बाढ़ पर वाद-विवाद । १७—भूमि संशोधन बिल । २०—नारायण भवन में गोरक्षा विधेयक पर विचार । अनेक आर्य एम० एल० ए० उपस्थित थे । २२—गोरक्षा-विषयक चर्चा सदस्यों में । प्रयाग विश्वविद्यालय विधेयक स्वीकृत ।

देहरादून

२५—श्री किडवाई का देहवसान—शोक सभा । हमारा भाषण । २८—आर्य समाज की हीरक जयन्ती समाप्त ।

ता० २ नवम्बर—श्री पन्त जी को पत्र गोरक्षा विषय में । ३—गोपाष्टमी महोत्सव । ६—'सरस्वती' की लिपि सम्बन्धी कतरन शिक्षामन्त्री के पास भेजी । ११—गोरक्षा विषयक परिपत्र समस्त विधान-सभा के सदस्यों के पास भेजा । १४—ऋषिकेश में युवक कांग्रेस का उद्घाटन । २७—सनातन धर्म स्कूल की वाद-विवाद प्रतियोगिता में अध्यक्ष रहे । २९—रूस के प्रतिनिधि मण्डल का स्वागत ।

लखनऊ

ता० २ दिसम्बर—मसूरी डॉ० रामनारायणलाल का देहावसान । ३—पन्तजी का भाषण केन्द्र में

क्यों जा रहे हैं। ११—डॉ० सम्पूर्णानन्द पार्टी के नेता चुने गये। १२—पार्टी मीटिंग श्री नेहरू का भाषण। १८—पर्वतीय प्रदेश की जनता की ओर से पन्त जी को पार्टी। २४—लखनऊ विश्वविद्यालय दीक्षान्त समारोह में श्री चन्द्रशेखर अय्यर का भाषण, प्राच्य-प्रतीच्य पण्डित हैं। २५—मुरादाबाद में पं० शंकरदत्त शर्मा को पक्षाघात। २७—विधान सभा की ओर से पन्त जी को विदाई। २८—विधान-सभा १६५४ सत्र समाप्त। २६—पं० शंकरदत्त शर्मा का देहावसान। एकदिन मुरादाबाद ठहरे।

(१६५५)

ता० ८ जनवरी—विधान सभा के तीन वर्ष समाप्त, विचित्र अनुभव मिले। १३—शोक 'आज' के बाबूराव पराडकर चल बसे। १४—महाविद्यालय में संक्रान्ति मनाई। १८—दर्शनानन्द दिवस मनाया। २०—गोसंवर्द्धन समिति की रिपोर्ट प्रकाशित। २१—आवादी कांग्रेस का सन्देश 'नया समाजवाद'। २६—देहरादून गणतन्त्र दिवस की धूम। ३०—श्री काका कालेलकर से भेंट। जेल में हमारी अध्यक्षता में गणतन्त्र दिवस। ३१—पुराने जेलर ठा० रामबसावनसिंह मिले।

ता० ४ फरवरी—गोसंवर्द्धन समिति की रिपोर्ट पर प्रेस को वक्तव्य। चूहड़पुर में रविदास जयन्ती में भाषण। ५—डोईवाला में विकास-किसान-सम्मेलन। ६—सरकार ने गोसंवर्द्धन समिति की रिपोर्ट को स्वीकृत किया।

लखनऊ

१०—राज्यपाल की घोषणा, गोवध बन्द होगा। सर सीताराम जी को बधाई पत्र भेजा। १२—ठा० मलखानसिंह फिर कांग्रेस में। १४—ढेवर जी के स्वागत में गये। २३—बजट पर सामान्य विवाद।

ता० २ मार्च—मादक कर पर हमारा भाषण। १४—विधानसभा में रात को ६ बजे तक बैठना पड़ा। श्री आचार्य नरेन्द्रदेवजी की कड़ी टिप्पणी श्री पन्त जी के विषय में। १५—शिक्षा-समिति। २४—शिक्षा-अनुदान पर हमारा भाषण। ३१—विधानसभा स्थगित।

ता० ११ अप्रैल से १५—महाविद्यालय का महोत्सव सानन्द समाप्त। ११—अल्मोडे के श्री देवीदत्त पन्त का देहावसान, राज्यपुनरायोग के लिये वक्तव्य तैयार करके आयोग के पास तथा अन्यत्र भेज दिया। १३—हरिद्वार में श्री ढेवर जी का स्वागत। १४ से २०—भोगपुर इलाके का दौरा।

देहरादून

ता० १ मई—आयोग आया, अनेक पक्ष-विपक्ष प्रस्तुत। ५--हमारी अध्यक्षता में 'सर्वोदय शिविर' का उद्घाटन, श्री काका कालेलकर बोले। १०--सर्वोदय-शिविर का निरीक्षण। २०-प्रान्तीय कांग्रेस ने हमें जनतासम्पर्क रिपोर्ट देने से मुक्त कर दिया। २२--मसूरी में डी-लिमिटेशन कमेटी श्री चन्द्रशेखर अय्यर आये। २३--हरिद्वार में कविराज ज्ञानेन्द्रनाथ का स्वर्गवास, बड़ा अनुभवी कविराज चल बसा। २४--छोटी 'आप बीती जग बीती', छप गई, लोगों ने बहुत पसन्द किया।

जून-जौलाई मसूरी में गया

लखनऊ

ता० १७ अगस्त—४॥ मास पश्चात् विधान सभा का जमघट। ३०--विधान मण्डल के पास 'क्षेत्र को जानो' ३६ प्रश्नों के उत्तर भेजे।

ता० ५ सितम्बर—गोवधनिषेध विधेयक प्रस्तुत--३॥ दिन तक वादविवाद चलेगा। ७--बाराबङ्की के पं० भगवतीप्रसाद शुक्ल एल० एल० ए० को किन्हीं दुष्टों ने मार डाला। पूरक बजट।

दस दिन तक परवादून में जनसम्पर्क

ता० ८ अक्तूबर—गोवध निवारण विधेयक पास। १६--राज्यपुनरायोग की रिपोर्ट प्रकाशित। १७--श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी से विचार-विनिमय। २३--राजपुर शहन्शाह सत्यप्रेम मन्दिर का उद्घाटन किया। २६--विभाजन चाहने वालों का डेपूटेशन श्री नेहरू से मिला।

ता० ४ नवम्बर—देहली से बुलावा, न जा सके। ८—श्री राजकुमार रणञ्जयसिंह अकस्मात् महाविद्यालय ज्वालापुर पधारे, स्वागत किया। १०—कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने राज्यपुनरायोग पर अपनी राय प्रकट की। १५—डॉ० शिवदत्त (अमृतसरी, भू० पू० प्रधान म० वि०) का देहावसान। १६—देहरादून आर्यसमाज हंस-प्रतियोगिता में हमारा भाषण (रामराज्य और गांधी विचारधारा)।

लखनऊ

२२—राज्यपुनरायोग पर दिया हुआ संशोधन नेतासदन के कथन पर वापस लिया, पर पक्ष में खूब बोले। २३—आज अन्य सभासद भी विभाजन के पक्ष में अपने ढंग से बोले—श्री चन्द्रसिंह रावत, श्रीचन्द जी, वीरेन्द्रपति यादव, श्री दीनदयाल शास्त्री, श्री गंगाधर मैठानी, श्री बलवन्तसिंह, ख्वाजा। २५—आज भी कड़ाके का वाद-विवाद रहा, बहुमत से मुख्य मंत्री का प्रस्ताव पास हुआ।

देहरादून

ता० ३ दिसम्बर—नेहरू जी का पत्र, बधाई की स्वीकृति। श्री राष्ट्रपति को तार जन्मगांठ के उपलक्ष्य में।

लखनऊ

६—विधान सभा प्रारम्भ, श्री चौ० चरणसिंह की पुत्री के विवाह संस्कार में सम्मिलित। ७—यह सत्र फीका चल रहा है, महाराष्ट्र तथा पंजाब में हलचल मच रही है। ६—सिंचाई कर नहीं घटेगा। १२—सायं श्री अशोक मेहता का भाषण, 'पार्लियामेण्टरी डेमॉक्रेसी' १३—हमारी बहन वरंगल में अत्यन्त रुग्ण। १७—राष्ट्रपति का पत्र, बधाई स्वीकृति। १६—विधान सभा २३ को बन्द होगी और ६ जनवरी को खुलेगी। २०—रॉयल होटल में श्री परमेश्वरी सहाय जी से बातचीत राजनैतिक पीड़ितों के विषय में। २३—लोकसभा में एस० आर० सी० के विषय में श्री नेहरू के स्पष्ट विचार। २६—आगरा विश्वविद्यालय के कुलपति श्री कालकाप्रसाद चुने गये। २८—गोरखपुर के पं० गौरीशंकर चल बसे।

(१९५६)

ता० ३ जनवरी—पं० हरिनन्दशास्त्री जी की एकदम हृदयक्रिया बन्द, कुछ मिनिट पहिले मैं उनसे मिल चुका था। ४—ऋषीकेश में प्राईमरी स्कूल का उद्घाटन। ५—श्री हरिनन्दशास्त्री जी के लिये शोक सभा। ६—हमारा डेपूटेशन डी० आर० ओ० से मिला, कांग्रेस भवन के विषय में।

लखनऊ

६—ता० १५ को वर्किंग कमेटी एस० आर० सी० के विषय में अपना निश्चित मत प्रकट करेगी। ११—आज हम जौनसार बावर बिल पर बोले। १४—बहिरायच समाज में भाषण। १७—श्री नेहरू जी नये प्रदेशों के बारे में बोले। २१—अमेठी-रणवीर हायर सेकेण्डरी स्कूल के उत्सव में भाषण। २३—हरिद्वार वैद्य सम्मेलन में भाषण।

देहरादून

२६—गणतन्त्र दिवस में भाषण। श्री ढेवर भाई के साथ कालसी गये, गांधी निधन-दिन मनाया।

अमृतसर

ता० ६ फरवरी—कांग्रेस प्रदर्शिनी देखी। ७—श्री ढेवर के स्वागत में, दिन भर व्यस्त। ६, १०—चौक में झण्डा समारोह। ११—अकालियों का प्रचण्ड जलूस। कांग्रेस खुले अधिवेशन ढीले रहे, विषयनिर्धारिणी की बैठकें अच्छी रहीं।

लखनऊ

१७—सत्रारम्भ में राज्यपाल का भाषण। १६—बहादुरनगर समाज में हमारा भाषण। २०—आचार्य नरेन्द्रदेव चल बसे, दाहकर्म में १॥ लाख जनसमुदाय। २७—लोकसभा-अध्यक्ष श्री मावलंकर का देहावसान। उनके लड़के के पास समवेदना का पत्र गया।

ता० १ मार्च—बजट वाद-विवाद समाप्त। ११—शृङ्गारनगर में भाषण। १७—भारत सरकार भारत में १५ प्रदेश रक्खेगी। ७ छोटे संरक्षित प्रदेश रहेंगे। मदनमोहन सेठ का देहावसान २४—कांग्रेस डाइरेक्टरी में अपना वृत्तान्त भेजा।

हरिद्वार

२५—कुम्भी का प्रबन्ध देखा।

देहरादून

३१—झण्डे के मेले में अपार भीड़ थी। मेले में पांच घण्टे रहे।

लखनऊ

ता० २ अप्रैल—विधान सभा में होली-मिलन। ६—वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय विधेयक पर विचार। ७—नरवर के हमारे साथी श्री पं० जीवनदत्त शर्मा चल बसे।

हरिद्वार

१०—गोचित्र-प्रदर्शिनी देखी। श्री हरदेवसहायजी से वार्तालाप। ऋषिकुल में भाषण। करपात्री जी से मिले। अर्द्धकुम्भी में घूमे। १३—महाविद्यालय के महोत्सव में अनन्त शयनं पधारे। १६—महाविद्यालय महोत्सव सानन्द समाप्त। २३—देहरादून में श्री खण्डूभाई देसाई का स्वागत जैनोत्सव में। २५—से विधानसभा, १८ मई तक चलेगी। श्री कृष्णदत्त पालीवाल मिले।

ता० २० मई—बेलोन संमेलन में गये, चार दिन रहे। बड़ी हलचल रही। २४—हमारी बहन सुन्दरा बाई का देहावसान।

ज्वालापुर

जून पूरा एक मास ज्वालापुर में गया।

ता० ७ जुलाई—देहरानगर की सीट से एम्० एल० ए० के लिये मास्टर रामस्वरूप का नाम भेजा, देखें मानते हैं या नहीं!

लखनऊ

१४—आजकल सर्वत्र चुनावचर्चा, अभी चुनाव के इतने मास पड़े हैं। १८—संस्कृत विश्वविद्यालय विधेयक पर हमारा भाषण। २६—श्री देशमुख जी का त्यागपत्र। २७—नैशनल हेरल्ड के हमारे लेख पर बधाइयाँ आरही हैं। (चुनाव सम्बन्ध में लेख था, मुख्य त्रुटियां), २८—हमने सर्वत्र लिख दिया हम चुनाव में खड़े न होंगे।

ता० १० अगस्त—हरिद्वार आये। १३—देहरादून। १५—स्वतन्त्रता दिवस समारोह। २१—लखनऊ विधानसभा में। ठा० मलखान सिंह, श्री हरिश्चन्द्र अष्टाना देहरादून जिले के एम० एल० ए० के लिये नाम सुझायेंगे। २३—हिन्दी साहित्य सम्मेलन विधेयक प्रस्तुत।

ता० ३ सितम्बर—विधानसभा ४—अक्टूबर को खुलेगी, १२—को बन्द होगी। ५—रेलवे-दुर्घटना से पं० वंशीलाल व्यास का निधन (हैदराबाद का समाचार), १४—काशीनरेश ने संस्कृत विश्वविद्यालय को पांच लाख दिया।

देहरादून

१५-२०—देहरे के कार्यकर्त्ताओं से बातचीत चुनाव सम्बन्धी।

ता० २ अक्टूबर—सर्वत्र गान्धी जन्मदिन उत्सव। ५—पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट से बातचीत जिले के विषय में। सायं हरिद्वार-हरिजन सम्मेलन में सम्मिलित।

लखनऊ

७—विधान सभा में चर्चा सदस्यों में हमारे आगामी चुनाव में न खड़े होने की। ६—पूरक बजट। १७—बम्बई में चौहान लीडर चुने गये, मुरार जी देसाई केन्द्र में जायेंगे। २०—विधान सभा में श्री एटली का स्वागत।

ज्वालापुर

२८—महाविद्यालय में हमारी ओर से भण्डारा। ३०—जौनपुर कांग्रेस में श्री नेहरू द्वारा कांग्रेस की भीतरी दुर्बलताओं पर प्रकाश। ३१—श्री हीरावल्लभ त्रिपाठी का (जो चीन होकर आये हैं) ज्वालापुर में स्वागत।

ता० १ नवम्बर—विद्वत्कलापरिषद् का उत्सव समाप्त। ३—आज स्वप्न आया कि सरकारी अधिकारी मुझे फाँसी देने के लिये पकड़ कर ले जा रहे हैं, विचित्र स्वप्न है।

देहरादून

१०--जनता ने हमारे स्वेच्छा से चुनाव में न खड़े होने के वक्तव्य को बहुत पसन्द किया. ११--स्टेशन पर इथोपिया-नरेश का स्वागत. १४--नेहरू शिशु-मेले में ३००० बालकों ने भाग लिया. १६--४३१ एम्० एल्० ए० सीटों और ८६ लोकसभा की सीटों के लिये ४००० नाम गये हैं. २२--लालजीवाला (हरिद्वार) नहर विभाग के भोज में सम्मिलित. २६--स्वा० वेदानन्द चल बसे.

ता० ४ दिसम्बर--'क्या मुझे टिकिट मिल जायगा' हमारे इस वक्तव्य पर सर्वत्र चर्चा. ६--राष्ट्रपति के स्वागत में स्टेशन पर गये, फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टिटच्यूट के महोत्सव में सम्मिलित हुए. ७--राष्ट्रपति द्वारा परेड-निरीक्षण एन्० डी० ए० ।

लखनऊ

१४--विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में, डॉ० विधानचन्द्रराय का भाषण था. १६--प्रातः शिक्षा-समिति.

ज्वालापुर

२५--१८५७ के स्वागत पर यत्र-तत्र लेख भेजे ।

(१९५७)

ता० १ जनवरी—सर्वत्र श्री पं० रविशंकर शुक्ल के निधन पर शोक. ३--सर्वत्र क्रान्तिमय नव वर्ष सन्देश भेजे. ८--कुरुक्षेत्र संस्कृत विश्वविद्यालय के लिये संस्कृत में सन्देश भेजा. १३--कनखल में श्री वेणीप्रसाद जिज्ञासु के यहाँ पुराने जेल साथियों की सभा हुई.

देहरादून

२६--गणतन्त्र-दिवस समारोह. २८—मार्शल जुकोव का स्वागत. ३०—राजा हाऊस (कांग्रेस कैम्प में) कांग्रेस कार्यकर्ताओं से मिले. ३१—जिले के छात्रों ने पाकिस्तान-विरोधी प्रदर्शन किया.

ता० १ फरवरी—त्यागी जी से चुनावचर्चा दो घण्टे तक. २--कांग्रेस कैम्प में सभा तथा भाषण, जिले भर के कार्यकर्ता मिल रहे हैं. ६—कांग्रेस कैम्प में प्रारम्भिक कमेटियों के मेम्बरों

की सभा। चुनाव सम्बन्धी झगड़ों को निपटाने के लिये श्री दास बाबू, श्री हुलास वर्मा तथा मैं, तीनों की उपसमिति बनी। ६—हमने रिपोर्ट दे दी। १३—कविराज प्रतापसिंह मिले। १८—बख़्शीगुलाम मुहम्मद का भाषण, कांग्रेस के कर्णधारों में चुनाव सम्बन्धी वैमनस्य, श्री बी० बी० शरण का घोर विरोध। २५—समस्त पोलिंग स्टेशन पर गये, व्यवस्था देख आये। २६—श्री बी० बी० शरण जीत गये। २८—हरिद्वार की स्थिति देखी।

ता० २ मार्च—रेडियो की खबर कि श्री चन्द्रभानु गुप्ता श्री त्रिलोकीसिंह से हार गये। ११—संस्कृत आयोग के सम्बन्ध में सर्वत्र स्मृतिपत्र भेजा। १४—बम्बई के भू० पू० प्रधान मंत्री खेर का पूने में देहावसान। २०—जौनसार बावर के श्री गुलाबसिंह जीत गये, त्यागी जी जीते पर जिले में १००० वोट कम पड़े, अन्यत्र बहुत पड़े।

लखनऊ

२३—श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी से चुनाव चर्चा। २७—शिक्षा समिति की बैठक, सायं ४ बजे विधान सभा में सदस्यों को विदाई, सायं ५॥ बजे सम्मिलित फोटो और भोज नये स्टेडियम में।

ज्वालापुर

३०—संस्कृत कमीशन का वृत्तान्त सुना, महाविद्यालय के विषय में आयोग-सदस्यों की उत्तम धारणा।

देहरादून

३१—देहरे की पार्टियों और उत्सवों में।

ता० १ अप्रैल—आनन्दप्रभा कम्पनी के पं० रामनारायण मिश्र चल बसे। ११—उत्तर प्रदेश का नया मन्त्रिमण्डल बनगया। १३-१६—महाविद्यालय का उत्सव पिछले सब वर्षों से अच्छा रहा।

ता० १० मई—सुभाष घाट पर हमारी अध्यक्षता में १८५७ मनाया गया। ११—कई एम्० एल्० ए० महाशयों के पत्र कि आप खड़े नहीं हुए, अच्छा किया इत्यादि। १२—स्वा० सत्यदेव परिव्राजक से देश सम्बन्धी चर्चा।

देहरादून

१६ से २०—विशिष्ट कार्यकर्ताओं से बातचीत। ३१—शहन्शाह आश्रम में आये, राजपुर में। पुस्तक छपने तक यहीं रहेंगे और स्वास्थ्य भी ठीक करेंगे। यहाँ का जलवायु उत्तम है।

ता० १ जून—देहरा गैजेटियर के लिये जिले का संक्षिप्त इतिहास लिखा और ए० डी० एम० मसूरी के पास भेजा। ५—स्वामी रामतीर्थ मिशन सत्संग में हमारा भाषण। समस्त जोलाय अपनी आत्मकथा को ठीक करने में गया।

ता० ४ अगस्त—श्री देवीदास गान्धी का निधन बम्बई में। शहन्शाह आश्रम में सामुदायिक केन्द्र का उद्घाटन। ७—१५-२० दिन से देशव्यापी पोस्ट-तार विभाग की हड़ताल की चर्चा सर्वत्र, भारत सरकार हड़ताल रोकने में व्यस्त। ८—हड़ताल रुकी, सर्वत्र आनन्द। दोनों पक्षों की कुछ कुछ बात रह गई। १२—प्रसिद्ध आर्योपदेशक पं० लोकनाथ का देहावसान। १५—टाऊनहॉल देहरादून में हमारी अध्यक्षता में १८५७ धूमधाम से मनाया गया, शहीदों को श्रद्धांजलि दी गई। कलेक्टर बैनर्जी उपस्थित थे, बोले भी। टाऊनहाल खचाखच भरा था। आज प्रातः हमने शहन्शाही आश्रम में झण्डा फहराया, भाषण दिया. २१—हिन्दुस्तान दैनिक में पंजाब हिन्दी रक्षा समिति के सत्याग्रह के विषय में सुझाव दिया कि देवनागरी लिपि को मान लेंवे और झगड़ा निपट जायगा, आर्य-मित्र को भी लिखा। आन्दोलन जोरों पर है, २॥ मास होगये। २५—आजकल 'महाभारत' देख रहे हैं। बड़ा आनन्द आरहा है। ३०—फीरोजपुर जेल में भयङ्कर लाठी काण्ड, दो सत्याग्रही मारे गये, २५० जखमी होगये. ३१—देहरे पहुँचे, लोग बड़ी उत्सुकता से मिले, दो दिन रहे।

ता० ५ सितम्बर—गोपीचन्द भार्गव पंजाब के मन्त्रिमण्डल में लाये गये. स्थिति का अध्ययन कर रहे हैं। तारासिंह अड़ रहे हैं. ६—पञ्जाब हिन्दी रक्षा का काम अब आर्य सार्वदेशिक सभा ने संभाल दिया, एक कार्यालय गाजियाबाद में, एक सहारनपुर में रहेगा. ७—प्रजासमाजवादी गेंदा सिंह जी का अनशन समाप्त। १०—ए० डी० एम० महेशचन्द्र गुप्त अकस्मात् मिले. १३—श्री नेहरू जी की काश्मीर यात्रा प्रभावशाली रही। १४—श्री पन्त जी की ७०वीं वर्षगांठ पर बधाई भेजी। श्री चौथराम गिडवानी का देहावसान बम्बई में. १५—राजगोपालाचार्य कहते हैं कि कर्ज तो मिल जायगा किन्तु गौरव खो बैठोगे। १६—श्री जवाहरलाल हि० र० समिति आन्दोलन के विषय में फिर गरजे, कहते हैं बरदाश्त नहीं किया जायगा। १५० लोकसभा के सदस्यों द्वारा एक वक्तव्य भी निकला है कि आन्दोलन बन्द करो, नेहरू को पंच मानो। घनश्यामसिंह गुप्त ने निषेध कर दिया कि हम नेहरू को पंच नहीं मान सकते और जब तक हमारी मुख्य बातें नहीं मानी जायँगी, आन्दोलन भी बन्द नहीं करेंगे. १७—श्री नरेन्द्र कार्यकर्त्ता प्रधान को पत्र। २४—देहरादून, मसूरी, ऋषीकेश, चुहड़पुर, हरिद्वार, रुड़की आदि में म्युनिसिपल चुनावों की धूम. २५—बम्बई आदि में श्री सातवलेकरजी की ९० वीं वर्षगांठ धूमधाम से मनायी गई। केरल में ग्रामदान संमेलन सफल। निःशस्त्रीकरण-वार्ता भङ्ग हो गयी इसलिये यू० एन० ओ० के अधिवेशन में उदासी। २६—श्री इन्द्रजी मिले, आपका कथन है कि पंजाब में सत्याग्रह से हानि है। सुना है टण्डन जी भी यही चाहते हैं कि गुरुमुखी को मानलो। २७—गत चार मास में हमने विभिन्न समाचार पत्रों तथा विशेषाङ्कों के लिए ५० लेख लिखे। २८—नागाहिल्स असाम से पृथक हो कर संरक्षित राज्य रहेगा राष्ट्रपति के नीचे।

ता० १ अक्तूबर—शहन्शाही सत्संग तीन दिन चला। हमारा भी भाषण हुआ। ३—महाशय कृष्ण बिना शर्त छूटे, बहुत बीमार थे। ५—आनन्दभिक्षु छूटे, बालकराम छूटे। ८—श्री राधाकृष्णन् चीन होकर आये तो श्री नेहरू जापान पहुँचे, भव्य स्वागत हुआ।

हमारी आत्मकथा, आपबीती जगबीती के ५१६ पृष्ठ छप गये। इस मास के अन्त तक पूरी पुस्तक छप जायगी।

पता चला है कि अजमेर के पं० जियालालशर्मा, दिल्ली के श्री रामचन्द्र देहलवी, स्वामी अभेदानन्द (प्रधान सार्वदेशिकसभा) पाँच-पाँच सौ के जत्थे लेकर जायँगे। प्रधान स्वा० आत्मानन्दजी (हिं.रक्षा समिति) भी पाँच सौ का जत्था लेकर चण्डीगढ़ जायँगे। उन्होंने श्री नेहरू जी को पत्र द्वारा सूचना दे दी है।

किसी-किसी का मत है कि नेतृत्व ढीला है। सत्याग्रह लम्बा पड़ गया। श्री नेहरू को समझाने की बात है। तब मामला सुलझेगा।

१०—श्री नरेन्द्रजी कार्यकर्त्ता प्रधान संग्रामसमिति लिखते हैं कि सत्याग्रह की गति तेज़ की गई है। ११—परमार्थ (शाहजहाँपुर) ऋषिजीवन (वृन्दावन) विशेषाङ्कों को लेख। देहरे में बोर्ड के चुनाव के लिए रेवड का रेवड खड़ा होगया है। देखें क्या होता है। १३—नेहरू जी की सफल जापान-यात्रा, श्री कृष्णमाचारी कहते हैं, हमारी अमरीका की यात्रा से भी बहुत लाभ हुआ। लोगों के अनेक भ्रम मिटे। आज प्रातः चौधरी अमरनाथ जी की वर्षी में राजा महेन्द्रप्रताप मिले थे। १४—हैदराबाद का जत्था श्री शेषराव एडवोकेट के अधिनायकत्व में देहरे आया और चण्डीगढ़ चला गया। १८—पंजाब हिन्दी सत्याग्रह में छात्रसमूह भी कूद पड़ा इसलिए आन्दोलन तीव्र हो गया। श्री पं० रामचन्द्र देहलवी का देहली में बड़ा सत्कार, बड़ी बिदाई, १५००० रु० की थैली भेंट। ५०० का जत्था लेकर जायँगे सत्याग्रह में। इसी प्रकार अजमेर के पं० जियालाल तथा स्वामी अभेदानन्द जी प्रधान सार्वदेशिकसभा भी पाँच-पाँच सौ का जत्था ले जायँगे। श्री घनश्यामसिंह गुप्त सर्वाधिकारी भाषास्वातन्त्र्यसंग्राम समिति ने ऐलान कर दिया है कि वे तब तक आन्दोलन बन्द न करेंगे जब तक उनकी माँगें पूरी न की जायँगी। वे हीन सन्धि कभी न करेंगे। १६—पाकिस्तान में ४ पार्टियाँ मिलकर नयी गवर्नमेण्ट बनेगी। चन्द्रीगर नये मन्त्री होंगे, ये मुसलिम लीगी हैं। पाकिस्तान भी फ्रान्स बन रहा है। वहाँ स्थायी मन्त्रि-मण्डल बनने नहीं पाता। पाकिस्तान में पिछले दश वर्षों में सातवाँ उलट-फेर हुआ।

म्युनिसिपल बोर्डों का चुनाव हो गया। ऋषीकेश चूहड़पुर में कांग्रेसी बहुमत में आये। देहरा नगर में कांग्रेस हार गई। यह फूट के कारण तथा ऐसे वैसों को कांग्रेस-टिकिट देने का फल है। मसूरी से भी उलटी खबरें आरही हैं।

यू० एन० ओ० में काश्मीर के प्रश्न पर बहस हुई। श्री मेनन ने नून की खूब खबर ली। भारत ने स्पष्ट कह दिया कि विदेशी फौजों को काश्मीर की भूमि में पैर नहीं रखने दिया जायगा।

गोत्रा (पोर्तुगीज) भी भीतर से गरम हो रहा है ।

श्री नेहरू भारत सकुशल लौट आये। श्री कृष्णमाचारी ने लन्दन में कहा कि हम सभी से सहायता लेंगे, जो राजी से बिना किसी शर्त के सहायता देगा। पता चलता है ब्रिटेन और अमरीका ने अभी अपनी बात स्पष्ट नहीं कही है।

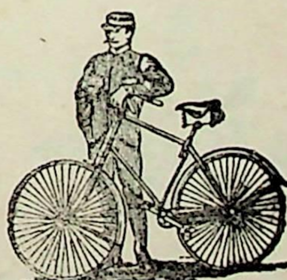
२०—आर्य समाज सत्याग्रह के कारण बड़े भारी चक्रव्यूह में फँस गया है। इसका उद्देश्य स्तुत्य है पर अभी इसकी सुनवाई नहीं हो रही। नेहरू नहीं सुनते इसलिए भारत सरकार चुप है। पंजाब का मन्त्रिमण्डल भी नहीं सुन रहा है। सिक्ख तो बात करने को भी तैयार नहीं। भार्गव जी दौड़ धूप कर रहे हैं। देखें क्या होता है। आर्यसमाज का पक्ष सत्य पर आश्रित है। सत्याग्रह सार्वदेशिक सभा के हाथ में है। इसीलिए इस सत्याग्रह का निखिल भारतीय रूप हो गया है। देखें क्या होता है। आचार्य विनोबा जी ने श्री घनश्यामसिंह गुप्त को बुलाया है। २१—दक्षिण के बड़े बड़े नेता कहने लग गये हैं कि यह बात उन-उन प्रदेशों की विधान सभा पर छोड़ दी जावे कि वे अपने यहां कब तक हिन्दी में काम काज करने लगेंगे, राजभाषा के रूप में। श्री राजगोपालाचार्य तथा के० एम्० मुन्शी भी कहने लग गये हैं कि अभी अंगरेज़ी को चलने देना चाहिए। विचित्र परिस्थिति है।

—रूस के वैज्ञानिकों ने आकाश में बाल-चन्द्रमा छोड़ा था जो अब तक पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर रहा है, अमरीका की बोलती बन्द है। वह भी अपना बालचन्द्रमा छोड़ेगा।

श्री रामचन्द्र देहलवी पकड़े गये।

श्री राष्ट्रपति हिन्दी सत्याग्रह के झगड़े में मध्यस्थ बनेंगे।

२२—दिवाली की छुट्टियाँ और इस ग्रन्थ से भी छुट्टी। शम् ॥



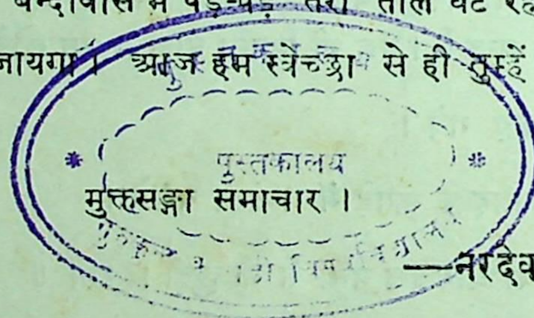
* समाप्त *

चलते-चलते, छपते-छपते

लेखक की ओर से दो शब्द

शिवास्ते पन्थानः सन्तु

हे मेरी 'आत्मकथे', हे मेरी 'आप बीती जगबीती', अब तुम हमारे हाथों से छूट रही हो, जाओ जिधर चाहो। कहीं अटकना नहीं, कहीं व्यर्थ भटकना नहीं, कहीं मचलना नहीं। सर्वत्र तेरा स्वागत हो, कहीं स्वागत न हो तो भी घबराना नहीं—चली जाओ सीधे अपने अभीष्ट मार्ग पर। बहुत दिन तुम बन्द रहीं, बन्दीवास के कष्टों को हम जानते हैं। बन्दीवास में पड़े-पड़े तेरा तोल घट रहा था, अब बाहर जाकर तेरा मोल बढ़ जायगा। आज हम स्वेच्छा से ही तुम्हें मुक्त कर रहे हैं। अब तुम मुक्त होकर,—



—नरदेवशास्त्री, वेदतीर्थ



काल का बल कितना है ?

कालस्य बलमेतावद् ,
यद्विपरीतार्थदर्शनम् ।
(महाभारत)

बस काल का बल इतना ही है कि वह कभी-कभी विपरीत परिस्थिति को भी दिखला देता है, जिसकी कि कभी आशा नहीं होती—

इसीलिए

यही कहते बनता है कि,

कालस्य सर्वं वशाः ।
(महाभारत)

सब कुछ काल के वश में है ।





* आदर्श जीवन *

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं,
नित्यतृप्तो निराश्रयः।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि,
नैव किञ्चित्करोति सः॥

न हि देहभृता शक्यम्,
त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः।
यस्तु कर्मफलत्यागी,
स त्यागीत्यभिधीयते॥

(गीता)

